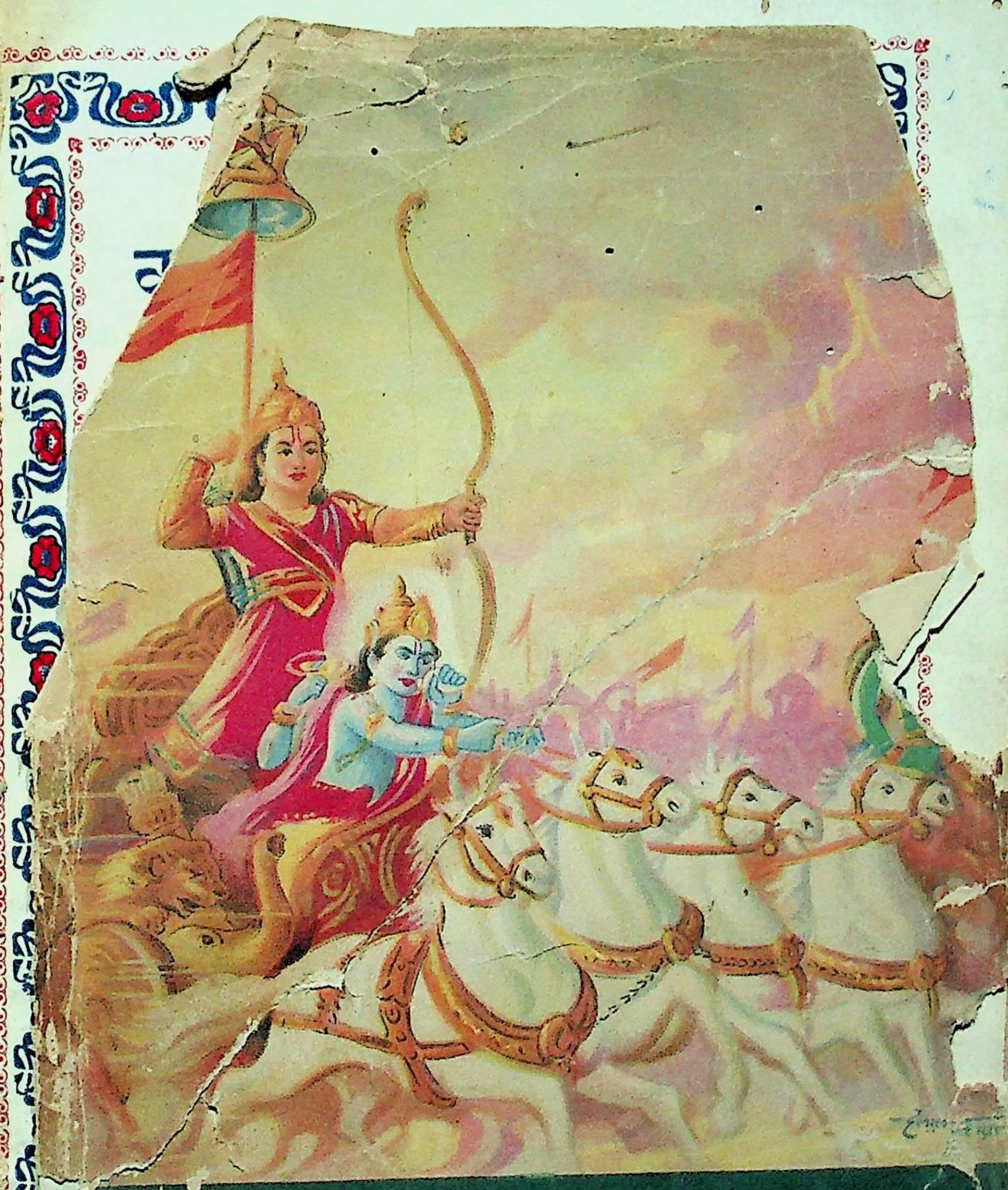


श्रीमद्भगवद्गीतारहस्य

बाल गंगाधर तिलक

वाल्मीकीय रामायण

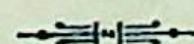
(हिन्दी-अनुवाद)

द्वितीय भाग



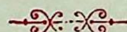
अनुवादक

चंडिकाप्रसाद अवस्थी



प्रकाशक

नवलकिशोर-प्रेस लखनऊ



PRINTED AND PUBLISHED BY K. D. SETH

AT THE

NEWUL KISHORE PRESS, LUCKNOW.

प्रथम बार] सर्वाधिकार सुरक्षित [सन् १९३४

वाल्मीकीय रामायण

सुन्दरकाण्ड

सर्ग १

महावीर हनुमान् ने सीता को ढूँढ़ने के लिए आकाशमार्ग से जाने का इरादा किया। वे दूसरों से न हो सकनेवाले इस दुष्कर काम के करने की इच्छा से सिर उठाकर साँड़ के समान शोभित हुए और वैदूर्यमणि के समान हरी घास पर घूमने लगे। छाती से वृत्तों को तोड़ते हुए महाबली हनुमान्, मृगों का विनाश करते हुए गर्वित सिंह के समान, पक्षियों को डरवाते हुए घूमने लगे। १—४। महेन्द्र पर्वत लाल, नीली, सफ़ेद, काली और कमलवर्ण की धातुओं से शोभित था। उस पर देवताओं के समान रूपवान्, कामरूपी, उत्तम वस्त्र और आभूषण पहने हुए यक्ष, किन्नर और गन्धर्व रहते थे। हनुमान् कुछ नीचे के भाग में खड़े थे, इससे तालाब में खड़े हुए हाथी के समान शोभित हुए। उन्होंने हाथ जोड़कर सूर्य, इन्द्र, ब्रह्मा, वायु और सब देवताओं को प्रणाम किया, फिर पूर्व-मुख होकर, अपने पिता पवन की स्तुति करके, रामचन्द्र के कार्य के लिए पूर्णमासी के समुद्र के समान बढ़ने लगे। ५—१०। अंगद आदि सब वानर बड़े विस्मय से उनको देखते थे। उनका शरीर बहुत बड़ा हो गया। उन्होंने हाथों और पैरों से महेन्द्र पर्वत को बड़ी मज़बूती से पकड़ा। पर्वत डगमगाने लगा, वृक्षों के फूल गिरने लगे; सुगन्धित फूलों के गिरने से वह पर्वत पुष्पमय हो गया। ११—१३। हनुमान् अपना बल प्रकट करके महेन्द्र पर्वत को पीड़ित करने लगे। हिलने के कारण पर्वत से जल बहने

लगा, जैसे मतवाले हाथी से मद बहता है। पानी की धाराओं में सोने, चाँदी और काजल की रेखाएँ देख पड़ीं। पर्वत के चारों ओर मैनसिल सहित बड़ी-बड़ी शिलाएँ गिरने लगीं। ऐसा मालूम हुआ, मानों बीच में आग जल रही है और चारों ओर उसका धुआँ फैल गया है। १४–१६। हनुमान् ने जब पर्वत को हिलाया तो उसकी गुहाओं में रहनेवाले जीव डरकर चिल्लाने लगे। वह शब्द चारों ओर फैल गया। बड़े-बड़े विषैले साँप, जिनकी फन के ऊपर अर्धचन्द्राकार चिह्न थे, क्रोध के मारे दाँतों से शिलाओं को काटने लगे। विषैले साँपों के काटने से शिलाएँ टुकड़े-टुकड़े हो गईं और आग के समान जलने लगीं। यद्यपि उस पर्वत पर साँप का विष दूर करनेवाली ओषधियाँ बहुत थीं, किन्तु वे उन साँपों के विष को शान्त न कर सकीं। पर्वत पर रहनेवाले महर्षियों ने अकस्मात् यह भयानक घटना देखकर अनुमान किया कि यह पर्वत फट रहा है, अतएव वे डर के मारे वहाँ से भागने लगे। विद्याधर पानभूमि में सुवर्णमय आसन, सोने के बरतन, सोने के कमंडलु, अनेक प्रकार की स्वादिष्ठ चटनी, अनेक प्रकार के मांस, विविध भोजन, बैलों के चमड़े से मढ़ी हुई ढाल और सोने की मूठवाले खड्ग छोड़कर डर के मारे स्त्रियों को लेकर आकाश को भाग गये। १७–२४। विद्याधरों की स्त्रियाँ हार, नूपुर, बिजायठ आदि आभूषणों से भूषित थीं, लाल चन्दन लगाये थीं, पति के साथ आकाश में जाकर हर्ष और विस्मय से यह घटना देखने लगीं। सिद्धगण आपस में कहने लगे कि पर्वताकार महावीर हनुमान् बड़े वेग से सौ योजन समुद्र लाँघेंगे। ये रामचन्द्र और वानरों का प्रिय करने के लिए, दूसरों से न हो सकनेवाले इस दुष्कर काम के लिए समुद्र के पार जाना चाहते हैं। २५–३०। सिद्धगण के यह वचन सुनकर विद्याधर बड़े विस्मय से महापराक्रमी हनुमान् को देखने लगे। इधर प्रज्वलित अग्नि के समान हनुमान् रोयें फुलाकर, देह को हिलाकर, बादल

के समान गरजे। चढ़ा-उतार गोल पूँछ उठाकर बार-बार हिलाने लगे। ऐसा मालूम हुआ, मानों पक्षिराज गरुड़ एक बड़े साँप को पकड़कर हिला रहे हैं।३१—३४। महावीर हनुमान् ने परिघ के समान भुजाओं से पर्वत को मज़बूती से पकड़ा। दोनों पैर सिकोड़कर शरीर के सब अंग समेट लिये। गर्दन और हाथ भी सिकोड़ लिया। उनका बल-वीर्य बहुत बढ़ गया। प्राणवायु रोककर आकाश को देखने लगे, और कूदने के इरादे से कान खड़े करके वानरों से बोले—देखो, आज मैं रामचन्द्र के धनुष से छूटे हुए बाण की तरह वायु के समान वेग से रावण से सुरक्षित लंका को जाता हूँ। यदि वहाँ सीता को न देखूँगा तो इसी वेग से देवलोक को चला जाऊँगा। यदि देवलोक में भी सीता का पता न चला तो राक्षसराज रावण को बाँधकर ले आऊँगा, अथवा समूची लंका उखाड़कर उठा लाऊँगा। तात्पर्य यह कि मैं सर्वथा कृत-कार्य होकर सीता को लेकर लौटूँगा। यह कहकर महावीर हनुमान् गरुड़ के समान वेग से आकाश को कूद गये। वृक्ष भी शाखाओं सहित बड़े वेग से उनके साथ ऊपर को उड़ गये। वृक्ष फूलों से शोभित थे, उन पर कोयल पक्षी बोलते थे। महावीर हनुमान् कूदते समय उन वृक्षों को साथ लेकर निर्मल आकाश को चले गये। जैसे विदेश को जानेवाले के साथ उसके कुटुम्बी कुछ दूर तक जाते हैं और जैसे सैनिक लोग राजा के पीछे चलते हैं, वैसे ही साल, ताल आदि के वृक्ष दो घड़ी तक हनुमान् के पीछे चले।३५—४८। उस समय फूलों, कलियों और अंकुरों से घिरे हुए पर्वताकार हनुमान् उसी प्रकार शोभित हुए, जैसे चारों ओर उड़ते हुए जुगुनुओं से पर्वत की शोभा होती है। वृक्षों के फूल गिर गये, इसलिए वे हलके होकर समुद्र में गिर पड़े, जैसे इन्द्र के डर से पर्वत समुद्र में गिरे थे। जिस प्रकार सुहृद् लोग विदेश जानेवाले के साथ कुछ दूर जाकर उदास होकर बैठ जाते हैं, वैसे ही वे वृक्ष समुद्र में गिर पड़े। उस समय महासमुद्र सुगन्धित विचित्र फूलों

के गिरने से बिजली से शोभित बादल, और नक्षत्रों से युक्त आकाश के समान शोभित हुआ। ४६–५४। आकाश में फैली हुई हनुमान् की भुजाएँ पर्वत पर बिल से निकले हुए पँचमुँहे साँपों के समान देख पड़ीं। महावीर हनुमान् तरंगों से युक्त महासमुद्र को और असीम आकाश को मानों पी लेने के लिए जा रहे थे। बिजली के समान चमकती हुई आँखें पर्वत के ऊपर प्रज्वलित अग्नि के समान तथा पिंगलवर्ण और गोल होने के कारण सूर्य और चन्द्रमा के समान जान पड़ती थीं। उनका लाल-लाल मुँह सन्ध्या के समय सूर्यमंडल के समान शोभित हुआ। ५५–६०। उन्होंने कूदने के समय पूँछ ऊपर को उठा ली। वह आकाश में इन्द्रध्वज के समान शोभित हुई। पूँछ को चक्राकार बना लिया, जिससे सूर्यमंडल के समान जान पड़े। उनके लाल-लाल नितंब गेरू बहते हुए पर्वत के समान देख पड़ते थे। वायु उनकी काँख में वर्षाकाल के मेघ के समान गरजता था। जैसे उत्तर दिशा से उल्का निकलती है, वैसे ही पूँछ सहित हनुमान् आकाश में देख पड़े। समुद्र में उनकी परछाईं वायु के वेग से दौड़ते हुए जहाज़ के समान शोभित हुई। महावीर हनुमान् समुद्र में जिन स्थानों से आगे चले जाते थे, वहाँ का पानी उनके चलने के वेग से खलभलाने लगता था। ६१–६८। पर्वताकार हनुमान् चौड़ी छाती से समुद्र की तरंगों को तोड़ते हुए बड़े वेग से जाते थे। ६९। वेग से उनके चलने की प्रबल वायु और मेघमंडल की वायु ने गम्भीर शब्द करनेवाले समुद्र को कँपा दिया। ७०। हनुमान् बड़े वेग से समुद्र की ऊँची तरंगों को तोड़ते हुए, मानों पृथिवी और आकाश को अलग-अलग फेंकते जाते थे। ७१। जान पड़ता था कि मेरु और मन्दराचल के समान भारी तरंगों को गिनते हुए जा रहे हों। ७२। समुद्र का जल हनुमान् के वेग से बादलों के मार्ग तक जाकर आकाश में फैले हुए बादलों के समान शोभित होता था। ७३। जैसे वस्त्र उतार

देने से मनुष्यों के सब अंग दिखाई देते हैं, वैसे ही समुद्र के जीव-जंतु देख पड़ने लगे। ७४। हनुमान् को आकाशमार्ग से जाते हुए देख कर समुद्र में रहनेवाले साँपों ने समझा कि गरुड़ जा रहे हैं। ७५। महावीर हनुमान् की छाया दस योजन चौड़ी और बीस योजन लंबी थी। बड़े वेग से जाने के कारण वह अति दर्शनीय हो गई थी। ७६। पीछे जाती हुई छाया समुद्र में स्वच्छ बादल के समान शोभित हुई। ७७। वे आकाश में पंख सहित पर्वत के समान निराधार चले जाते थे। ७८। जिस मार्ग से जाते थे, उस मार्ग में, समुद्र में लकीर बनती जाती थी। महापराक्रमी महाकाय हनुमान् कभी बादलों को उड़ाते हुए वायु के समान और कभी आकाश में उड़ते हुए गरुड़ के समान जाते थे। ७९—८१। कभी बादलों में छिप जाते थे और कभी निकल आते थे, इसलिए बादलों में छिपते और प्रकाशित होते हुए चन्द्रमा के समान शोभित होते थे। इस प्रकार वेग से जा रहे हनुमान् को देखकर देव-दानव और गन्धर्व फूल बरसाने लगे। ८२—८३। सूर्य उनके ऊपर नहीं तपते थे, हवा ठंढी चलती थी। महाबली हनुमान् को थके हुए न देखकर देवता, गन्धर्व, नाग, यक्ष, राक्षस प्रशंसा करने लगे। ८४—८६। महासमुद्र इक्ष्वाकुवंश का सम्मान करने की इच्छा से सोचने लगा कि यदि मैं कपिवर हनुमान् की सहायता न करूँगा तो संसार में मेरी निन्दा होगी। ८७—८८। इक्ष्वाकुवंशी राजा सगर ने मुझे बढ़ाया है, और यह महावीर उसी वंश का सहायक है। जिस उपाय से इनकी थकावट दूर हो सके, वह उपाय करना चाहिए। ये विश्राम करके अवशिष्ट मार्ग सुख से पार कर सकें। ८९—९०।

समुद्र ने यह निश्चय करके पानी में डूबे हुए सुवर्णमय मैनाक पर्वत से कहा—मैनाक, देवराज इन्द्र ने पातालनिवासी असुरों का मार्ग रोकने के लिए तुमको द्वार के परिघ के समान इस स्थान पर रख दिया है। महापराक्रमी दुरात्मा असुर पाताल से फिर न आ सकें,

इसलिए तुम उनका मार्ग रोके हुए हो। हे पर्वतश्रेष्ठ, तुम्हारी शक्ति बड़ी अद्भुत है। तुम जिधर चाहो, उधर बढ़ सकते हो। इसी लिए मैं तुमसे कहता हूँ, तुम शीघ्र समुद्र से उठो। वह देखो, कपि-केसरी महावीर हनुमान् रामचन्द्र का कार्य करने के लिए आकाशमार्ग से जा रहे हैं। वे बहुत थक गये हैं, अतएव तुम शीघ्र ही उठो। ९१—९५। समुद्र की यह बात सुनकर गिरिवर मैनाक वृक्षों और लताओं सहित शीघ्र समुद्र के ऊपर निकल आया। वह समुद्र के जल को चीरकर इस प्रकार ऊपर आ गया, जैसे बादलों को हटाकर सूर्य निकल आते हैं। उस पर्वत के चारों ओर समुद्र का जल शोभित था। उसके सुवर्णमय शिखरों से नीले रंग का आकाश सुवर्ण के समान चमकने लगा। उसके शिखरों पर बड़े-बड़े साँप और किन्नर दिखाई देते थे। वह पर्वत सैकड़ों सूर्य के समान शोभित था। ९६—१०१।

हनुमान् ने अपने सामने मैनाक पर्वत को सहसा उठा हुआ देखकर समझा कि मेरा मार्ग रोकने के लिए यह एक विघ्न खड़ा हो गया है। उन्होंने उस पर्वत को अपनी छाती से धक्का देकर वैसे ही हटा दिया, जैसे वायु बादल को हटा देती है। गिरिवर मैनाक उनके वेग को समझ गया और बड़े विस्मय से गरजने लगा। उसने मनुष्य का रूप धारण करके अपने शिखर पर खड़े होकर प्रसन्नता से कहा—कपिराज, तुम इस प्रकार समुद्र के पार जा रहे हो, यह बड़ा कठिन काम है। अतएव हमारे शिखर पर बैठकर थोड़ी देर विश्राम कर लो। रघुवंशी राजाओं ने ही इस महासमुद्र को बढ़ाया है, और तुम रघुवंशी रामचन्द्र के हितैषी हो, इसलिए समुद्र तुम्हारा सम्मान करना चाहता है; क्योंकि उपकारी का प्रत्युपकार करना सनातनधर्म है। १०२—१०८। तुम्हारा सम्मान करने की इच्छा से समुद्र ने बड़े आदर से मुझसे कहा है कि कपिवर हनुमान् सौ योजन समुद्र के पार आकाशमार्ग से जा रहे हैं। वे तुम्हारे शिखर पर विश्राम करके अवशिष्ट मार्ग बड़े सुख से चले

जायँगे। हे वीर, अब तुम हमारे ऊपर ठहर जाओ। हमारे शिखर पर विश्राम करके चले जाना। सुगन्धित स्वादिष्ठ कन्द-मूल-फल भी बहुत हैं, तुम इच्छानुसार भोजन करो। तुम्हारे साथ मेरा भी एक प्रकार का सम्बन्ध है, सो मैं बताऊँगा। तुम तीनों लोक में प्रसिद्ध और गुणवान् हो। संसार भर के वेगवान् वानरों में श्रेष्ठ हो। साधारण अतिथि का भी सत्कार करना धर्मात्मा पुरुषों का कर्तव्य है, फिर तुम्हारे लिए तो कहना ही क्या है। तुम देवताओं में श्रेष्ठ वायु के पुत्र हो और वेग में उन्हीं के समान हो, अतएव तुम्हारी पूजा करने से महात्मा वायु पूजित होंगे। हे वीर, जिस कारण से तुम मेरे पूजनीय हो, वह भी बताता हूँ, सुनो। सत्ययुग में पर्वतों के भी पंख थे। वे भी गरुड़ की तरह बड़े वेग से सर्वत्र घूमते थे। पर्वतों के उड़ने से देवता, महर्षि और सब प्राणी उनके गिरने की आशंका से डरा करते थे, इसलिए देवराज इन्द्र क्रुद्ध होकर वज्र से पर्वतों के पंख काटने लगे। वे एक बार वज्र उठाकर मेरे समीप आये। उस समय तुम्हारे पिता पवन ने मेरी रक्षा की। मुझे आकाश में उड़ाकर इस लवण समुद्र में फेंक दिया। इसी से मेरे पंख बच गये। हे वीर, तुम्हारे साथ मेरा यह सम्बन्ध है। तुम मेरे परम पूजनीय हो, मैं तुम्हारा सम्मान करता हूँ। १०६—१२२। तुम प्रसन्न होकर विश्राम करो, और मुझे तथा समुद्र को प्रसन्न करो। वायु के संपर्क से मैं भी तुम्हारा पूज्य हूँ, अतएव तुमको मुझसे प्रेम करना चाहिए। मैं तुमको देखकर बहुत प्रसन्न हुआ। १२३—१२४।

गिरिवर मैनाक की यह बात सुनकर हनुमान् ने कहा—मैनाक, मैं तुम्हारे अतिथि-सत्कार से बहुत प्रसन्न हुआ। मैंने जो छाती का धक्का दिया है, इसके लिए क्रोध न करना। मुझे बड़ी जल्दी है, इसलिए मैं ठहर नहीं सकता। दिन भी थोड़ा रह गया है। इसके सिवा मैंने प्रतिज्ञा की है कि इस सौ योजन के बीच में कहीं विश्राम न

करूँगा। १२५–१२६। अब मैं जाता हूँ। यह कहकर महाबली हनुमान् मैनाक पर्वत को हाथ से छूकर बड़े वेग से आगे चले। समुद्र और मैनाक पर्वत ने बड़े सम्मान से उनकी ओर देखकर समुचित वचनों से प्रशंसा करके आशीर्वाद दिया। १२७–१२८। महावीर हनुमान् उनकी ओर देखते हुए बड़े वेग से चले। देवता, सिद्ध और महर्षिगण उनका यह दुष्कर कार्य देखकर प्रशंसा करने लगे। देवराज इन्द्र ने मैनाक के इस सदाचार से प्रसन्न होकर गद्गद स्वर से कहा—मैनाक, हनुमान् भय का कारण होने पर भी निर्भय होकर सौ योजन समुद्र के पार जा रहे हैं। ये रामचन्द्र के हित के लिए जाते हैं। तुमने यथाशक्ति इनका सत्कार किया, इसलिए मैं तुम से बहुत प्रसन्न हूँ। अब मैं तुम्हारे पंख नहीं काटूँगा, तुमको अभयदान देता हूँ, तुम जहाँ चाहो वहाँ जा सकते हो। १२९–१३६। गिरिवर मैनाक इन्द्र को प्रसन्न देखकर बड़ा सन्तुष्ट हुआ। उनसे वर पाकर वह फिर समुद्र के भीतर चला गया। उसके बाद देवता, महर्षि, गन्धर्व और सिद्धगण साँपों की माता तेजस्विनी सुरसा से बड़े आदर से बोले—हे देवि, ये पवनकुमार हनुमान् समुद्र के पार जा रहे हैं। तुम पर्वताकार घोर राक्षसी का रूप धारण करके, पीली आँखें और बड़े-बड़े दाँत निकालकर इनके मार्ग में विघ्न करो। हम लोग इस वीर का पराक्रम जानना चाहते हैं। देखें, यह किस बुद्धिमानी से तुमको परास्त करता है, अथवा तुमसे डर जाता है। १३७–१४२। सुरसा ने भयानक राक्षसी का रूप धारण करके हनुमान् का मार्ग रोककर कहा—कपिराज, देवताओं ने मेरे भोजन के लिए तुमको भेजा है, आज मैं तुमको खाऊँगी, तुम मेरे मुँह में प्रवेश करो। ब्रह्मा ने मुझे वरदान दिया है। यह कहकर सुरसा मुँह फैलाकर हनुमान् के सामने खड़ी हो गई। १४३–१४६। हनुमान् ने हँसकर कहा—हे कल्याणी, राजा दशरथ के पुत्र रामचन्द्र अपने भाई लक्ष्मण और भार्या सीता के

साथ दंडक वन को आये हैं। वहाँ राक्षसों से उनकी शत्रुता हो गई है। एक दिन वे किसी काम से गये थे। उसी समय रावण उनकी भार्या यशस्विनी सीता को हर ले गया। मैं उन्हीं रामचन्द्र का दूत हूँ, उन्हीं की आज्ञा से सीता के पास जा रहा हूँ। हे राक्षसी, चराचर जगत् रामचन्द्र के अधिकार में है। तुम भी उन्हीं के राज्य में रहती हो, इसलिए तुमको भी उनकी सहायता करनी चाहिए। अथवा मैं सत्य कहता हूँ, सीता को देखकर उनका हाल रामचन्द्र से कहकर तुम्हारे पास आऊँगा, तब मुझे खा लेना। १४७—१५०। यह कह कर हनुमान् ने आगे चलने का इरादा किया। तब कामरूपिणी सुरसा उनका बल-वीर्य जानने के लिए उत्सुक होकर बोली—देखो, प्रजापति ब्रह्मा ने मुझे वरदान दिया है कि जो कोई मेरे सामने आवेगा, मैं उसे खा लूँगी। यदि तुममें शक्ति हो तो मेरे मुँह में पैठकर निकल जाओ। यह कहकर सुरसा फिर मुँह फैलाकर हनुमान् के सामने खड़ी हो गई। तब हनुमान् ने कुपित होकर कहा—अच्छा, तुम हमारे इस भारी देह के अनुरूप मुँह फैलाओ, जिसमें हम प्रवेश कर सकें। यह कहकर महावीर हनुमान् उसी के देह के समान स्वयं भी दस योजन लम्बे-चौड़े हो गये। सुरसा ने बीस योजन मुँह फैलाया। उसका भयानक मुँह मेघाकार नरक के समान हो गया। उसमें बड़ी लम्बी भयानक जीभ थी। उसे देखकर हनुमान् ने बड़े क्रोध से अपनी देह तीस योजन बढ़ाई। तब सुरसा ने चालीस योजन मुँह फैलाया। हनुमान् पचास योजन लम्बे-चौड़े हो गये। सुरसा ने साठ योजन मुँह फैलाया, हनुमान् सत्तर योजन के हो गये। सुरसा का मुँह अस्सी योजन हो गया तब हनुमान् नब्बे योजन लम्बे-चौड़े हो गये। सुरसा ने सौ योजन का मुँह कर लिया। तब महावीर हनुमान मेघाकार देह को संकुचित करके, अँगूठे के बराबर होकर सुरसा के मुँह में प्रवेश करके झट बाहर निकल गये और

आकाश में जाकर बोले—हे दाक्षायणि, मैं तुम्हारे मुँह में पैठकर निकल आया हूँ, तुमको ब्रह्मा से जो वर मिला था वह भी असत्य नहीं हुआ। तुमको प्रणाम है, अब मैं सीता के पास जाता हूँ। १५१–१६४। सुरसा राहु के मुख से निकले हुए चन्द्रमा के समान हनुमान् को देखकर अपना रूप धारण करके बोली—कपिराज, तुम कार्य सिद्धि के लिए सुख से जाओ और जिस उपाय से सीता रामचन्द्र को मिल सकें वह उपाय करो। १६५–१६६। हनुमान् का यह तीसरा कठिन काम देखकर देवता और महर्षि उनकी प्रशंसा करने लगे। हनुमान् गरुड़ के समान वेग से आकाशमार्ग से चले। आकाश में बादल घिरे थे, पक्षी उड़ते थे, नाचने-गाने के आचार्य गन्धर्व शोभित थे। अनेक रंगों से शोभित इन्द्रधनुष देख पड़ता था। सिंह और बाघ आदि के चित्रों से युक्त दिव्य विमान वेग से आते-जाते थे। आकाशमंडल स्वर्ग को जीते हुए अग्नि-तुल्य पुण्यात्मा पुरुषों से शोभित था। चन्द्रमा, सूर्य आदि ग्रहों और नक्षत्रों से अलंकृत था। महर्षि, गन्धर्व, नाग, विद्याधर और यक्ष घूमते थे। वह संपूर्ण विश्व का आधार है। कहीं गन्धर्वराज विश्वावसु और कहीं देवराज इन्द्र का हाथी ऐरावत दिखाई दिया। महावीर हनुमान् उस ब्रह्म-निर्मित सूर्य, चन्द्रमा और वायु के मार्ग से गरुड़ के समान बड़े वेग से चले। १६७–१७६। कभी बादलों में प्रवेश करते और कभी बादलों से निकलते थे। इससे बादलों की शोभा बढ़ गई थी। बादलों में प्रविष्ट होने और निकलने से वर्षाकाल के चन्द्रमा के समान शोभित हुए। जैसे पंख सहित पर्वत आकाश में उड़ता हो, वैसे ही वे चले जाते थे। उसी समय सिंहिका नाम की कामरूपिणी राक्षसी हनुमान् को देखकर मन में कहने लगी कि आज बहुत दिनों के बाद मुझे भोजन मिला। यह एक बड़ा भारी जीव आ रहा है। बहुत दिनों की भूखी हूँ। यह मेरे भाग्य से ही आया है। सिंहिका ने यह सोचकर हनुमान् की छाया पकड़ ली। तब हनुमान् की गति रुक गई, वे मन में सोचने

लगे—अनुकूल वायु न होने पर जैसे समुद्र में जहाज़ नहीं चल सकता, वैसे ही इस समय किसने हमारी गति रोक दी है? यह सोचते हुए चारों ओर देखने लगे। उन्होंने देखा कि समुद्र से एक भयानक राक्षसी निकली है। तब उन्होंनें अपने मन में कहा कि कपिराज सुग्रीव ने जिन महाकाय महापराक्रमी, छाया पकड़कर खींचनेवाले जीवों का ज़िक्र किया था, यह वही जीव होगा। बुद्धिमान् हनुमान् बरसात के बादलों की तरह बढ़ने लगे। १७७—१८६। हनुमान् को बढ़ते हुए देखकर सिंहिका ने अपना मुँह आकाश से पाताल तक फैला दिया, और बादल के समान गरजकर हनुमान् की ओर दौड़ी। वज्र के समान सुदृढ़ शरीरवाले महावीर हनुमान् राक्षसी का भयानक मुँह अपनी देह के बराबर देखकर उसके मर्मस्थलों को छिन्न-भिन्न करने का उपाय सोचने लगे। वे बड़ी शीघ्रता से अपनी देह छोटी करके उसके मुँह में घुस गये। जैसे पूर्णमासी में राहु चन्द्रमा को ग्रस लेता है, वैसे ही वह राक्षसी उनको निगल गई। महावीर हनुमान् ने उसके पेट में जाकर तीक्ष्ण नखों से पेट चीर डाला। बड़ी चतुरता और धैर्य से उसका वध करके बड़े वेग से निकल आये। फिर उन्होंने अपनी देह पहले की सी कर ली। राक्षसी सिंहिका समुद्र में गिर पड़ी और मर गई। १८७—१९३।

सिंहिका की मृत्यु देखकर आकाश से सिद्धगण कहने लगे—हे वीर, आज तुमने यह बड़ा भयानक काम किया। तुम्हारे पराक्रम से इस राक्षसी का विनाश हुआ। अब तुम निर्विघ्न अपना अभीष्ट कार्य करो। १९४—१९५। हे कपिराज, जिस पुरुष में तुम्हारे समान धैर्य, दृष्टि, बुद्धि और चतुरता ये चार गुण होते हैं, वह कभी किसी काम में विफल नहीं होता। १९६। सिद्ध पुरुषों द्वारा इस प्रकार सम्मानित होकर महावीर हनुमान् गरुड़ के समान वेग से चलकर समुद्र के पार पहुँचे। समुद्र के दक्षिण-तट पर वृक्षों की पाँति देखी।

अनेक प्रकार के वृक्ष, मलय पर्वत का उपवन, समुद्र का किनारा, तथा नदियों के संगम देखे। उनका शरीर मेघाकार था, जो आकाश को भी ढक लेता था। उन्होंने सोचा कि राक्षस हमारा यह शरीर और वेग देखकर बड़े चकित होंगे। इसलिए उन्होंने पर्वत के समान अपनी देह को संकुचित कर लिया। मोह से छूटे हुए योगी के समान उन्होंने अपना स्वाभाविक रूप धारण कर लिया। जिस प्रकार भगवान् वामन ने तीनों लोकों को नापकर अपना स्वाभाविक रूप धारण किया था, वैसे ही उस समय हनुमान् ने अपना पहले का रूप धारण किया। १९७–२०४। समुद्र के किनारे लम्ब नाम का पर्वत था। उसके शिखर बड़े रमणीय थे। उस पर्वत पर केतक, उद्दालक और नारियल आदि अनेक प्रकार के वृक्ष थे। महापराक्रमी हनुमान् उस पर्वत पर चढ़ गये। उनको देखकर मृग और पक्षी डर गये। वहाँ से इन्द्रपुरी के समान लंका-नगरी दिखाई दी। २०५–२०८।

सर्ग २

महावीर हनुमान् सौ योजन समुद्र को पार करने पर भी नहीं थके। इतना परिश्रम करने पर भी वे हाँफने नहीं लगे। सौ योजन तो साधारण बात है, इससे भी अधिक दूर जाना उनके लिए कठिन काम नहीं था। वे लम्ब पर्वत पर वृक्ष के नीचे खड़े हो गये। वृक्ष उनके ऊपर फूल बरसाने लगा। फूलों से ढककर उनकी देह मानों पुष्पमय हो गई। लम्ब पर्वत का दूसरा नाम त्रिकूट था। उसी पर लंकापुरी बसी थी। हनुमान् धीरे-धीरे आगे चले। मार्ग में एक सुन्दर वन मिला। उसमें अनेक प्रकार के वृक्ष थे और हरी घास थी। वे उसी मार्ग से लंका को चले। त्रिकूट पर्वत पर देवदारु, कर्णिकार, खजूर, प्रियाल, कुटज, केतक, प्रियंगु, कदम्ब, सप्तच्छद, असन, कोविदार, करवीर और अनेक प्रकार के वृक्ष थे। १–१०। कुछ फूलों के भार से झुके

थे और कुछ कलियों से शोभित थे। धीरे-धीरे वायु के चलने से वृक्षों के पल्लव हिलते थे। उनकी डालियों पर पक्षी मधुर स्वर से बोलते थे। अनेक प्रकार के जलाशय थे, उनमें सफ़ेद कमल फूले थे। हंस, सारस आदि पक्षी घूमते थे। क्रीड़ा-पर्वत और सुन्दर बगीचे भी बने थे। महावीर हनुमान् यह सब देखते-देखते रावण से सुरक्षित लंका में पहुँचे। लंका के चारों ओर बड़ी गहरी खाईं थी। उस खाईं में कमल फूले थे। रावण जब से सीता को हर ले गया था तब से लंका की रखवारी के लिए धनुर्धर राक्षस नियुक्त कर दिये थे। वे राक्षस लंका के चारों ओर घूमते थे। ११—१५। लंका अत्यंत रमणीय थी। उसके चारों ओर सुवर्णमय चहारदीवारी थी। बड़े ऊँचे, पर्वताकार, सफ़ेद बादलों के समान घर थे। मार्ग साफ़ थे, महलों पर ध्वजा-पताकाएँ शोभित थीं। घरों के द्वार पर लता-पंक्तियों से शोभित सुवर्णमय वन्दनवार लगे थे। उस नगरी को देवताओं के शिल्पी विश्वकर्मा ने बनाया था। जैसे पर्वत की गुहाओं में साँप रहते हैं, वैसे ही वहाँ भयानक राक्षसों का निवास था। लंका पर्वत के ऊपर बसी थी, इसलिए दूर से ऐसा जान पड़ता था, मानों आकाश में उड़ रही है। खाईं और चहारदीवारी उस नगरी के जघन, वन और जल उसके वस्त्र, तोप और शूल आदि शस्त्र तथा अटारियाँ कान के आभूषण के समान थीं। जैसे देवराज इन्द्र अमरावती को देखें, वैसे ही हनुमान् ने लंकापुरी को देखा। धीरे-धीरे चलकर लंका के उत्तर द्वार पर पहुँचे। कैलास-पर्वत के समान ऊँचा वह फाटक मानों आकाश को छू रहा था। लंका के घर भी बहुत ऊँचे, आकाश में लगे हुए थे। १६—२३।

हनुमान् ने उस फाटक की रक्षा का प्रबन्ध देखा, समुद्र पार करने की कठिनाई को सोचा और शत्रु रावण के पराक्रम का विचार किया, तो वे इस परिणाम पर पहुँचे कि पहले तो समुद्र पार करके वानरों का यहाँ पहुँचना ही कठिन है और यदि यहाँ आ भी सकें तो

कृतकार्य नहीं हो सकते। लंका को जीतना देवताओं के लिए भी कठिन है। २४–२५। लंका बहुत दुर्गम है, रामचन्द्र ही यहाँ आकर क्या करेंगे। राक्षसों से सन्धि तो हो नहीं सकती, दान और भेद से भी काम नहीं चल सकता, और युद्ध करके लंका को जीतना असम्भव जान पड़ता है। इतने वानरों में अंगद, नील, सुग्रीव और मेरे सिवा कोई वानर यहाँ तक नहीं आ सकता। २६–२८। जो हो, पहले यह देखना चाहिए कि सीता जीवित हैं या नहीं। उनको देखकर कर्तव्य का निश्चय किया जायगा। यह विचारकर वे पर्वत के शिखर पर बैठ गये और सीता को देखने का उपाय सोचने लगे। उन्होंने सोचा कि लंका के चारों ओर राक्षसों का पहरा है, इसलिए मैं इस रूप से इसमें प्रवेश न कर सकूँगा। राक्षस बड़े बलवान् हैं। सीता का पता लगाने के लिए बड़ी सावधानी से काम करना चाहिए। रात को ऐसा रूप बनाकर, जिसे कोई देखे और कोई न देख सके, किसी तरह लंका में प्रवेश करूँगा। २९–३३। देवताओं और दानवों के लिए भी अगम्य लंका को देखकर हनुमान् लम्बी साँस छोड़कर सोचने लगे—मैं दुरात्मा रावण से छिपकर किस प्रकार सीता को देखूँगा। कौन उपाय करूँ, जिससे रामचन्द्र का कार्य सिद्ध हो। किसी प्रकार सीता को एकान्त में देख सकूँ तो अच्छी बात हो। राजाओं के कार्य दूतों पर ही निर्भर होते हैं। यदि दूत सावधानी से काम नहीं करता तो देश-काल के विरुद्ध होने से सिद्ध होनेवाला काम भी वैसे ही नष्ट हो जाता है, जैसे सूर्य के उदय होने से अन्धकार का नाश होता है। कर्तव्य का निश्चय हो जाने पर भी दूत की मूर्खता से काम बिगड़ जाता है, अतएव पंडिताभिमानी दूत ही कार्य सिद्ध न होने के कारण हैं। जिस उपाय से कार्य सिद्ध हो, मुझे लोग मूर्ख न कहें, समुद्र का लाँघना व्यर्थ न हो, वह उपाय करना चाहिए। यदि राक्षसों ने मुझे देख लिया तो रामचन्द्र का कार्य नष्ट हो जायगा। ३४–४०। राक्षस का

रूप बनाकर अथवा राक्षसों से छिपकर प्रवेश करना बहुत कठिन है। कौन रूप धारण करके लंका में प्रवेश करूँ। यहाँ ऐसा कोई भी स्थान नहीं है, जहाँ राक्षसों से छिपकर कोई रह सके। औरों की तो बात ही क्या है, मेरी समझ में वायु भी यहाँ राक्षसों से छिपकर नहीं चल सकती। यदि मैं इसी रूप से यहाँ खड़ा रहूँगा तो मार डाला जाऊँगा और रामचन्द्र का कार्य नष्ट हो जायगा। मैं आज रात में छोटा रूप धारण करके लंका में प्रवेश करूँगा और सब घरों में ढूँढ़कर सीता को देखूँगा। हनुमान् यह निश्चय करके सूर्य अस्त होने की प्रतीक्षा करने लगे। ४१–४६।

जब सूर्य अस्त हो गये और रात हो गई तब हनुमान् ने अपना रूप छोटा करके बिलार के बराबर कर लिया और बड़ी शीघ्रता से लंका में प्रवेश किया। वहाँ बड़ी-बड़ी सड़कें थीं, घर बहुत ऊँचे थे, सोने के खम्भे और खिड़कियाँ थीं, सतमहले और अठमहले घर थे। घरों के आँगन सुवर्णमय थे, कहीं स्फटिक मणियों से शोभित थे। सुवर्णमय विचित्र वन्दनवार लटकती थीं। गन्धर्व-नगरी के समान लंका की शोभा देखकर उनको बड़ा दुख हुआ। किन्तु सीता को देखने की लालसा से उन्हें हर्ष भी हुआ। उसी समय हज़ार किरणों से युक्त भगवान् चन्द्रमा अपना प्रकाश फैलाकर मानों हनुमान् की सहायता के लिए उदय हुए। उनकी प्रभा शंख, दूध और मृणाल के समान थी। वे नक्षत्रों के बीच में शोभित थे। हनुमान् ने आकाश में उदय हुए चन्द्रमा को तालाब में उछलते हुए हंस के समान देखा। ४७–५५।

सर्ग ३

बुद्धिमान् हनुमान् ने बड़े साहस से लंका में प्रवेश किया। लंका मेघाकार लम्ब (त्रिकूट) पर्वत पर बसी थी। वह पर्वत बड़ा ऊँचा, मानों आकाश को छू रहा था। लंका के बग़ीचे बड़े रमणीय थे, जल

निर्मल था और घर शरदृऋतु के बादलों के समान सफ़ेद थे। राक्षस भयानक शब्द से गरजते थे। समुद्री वायु चलती थी। लंका के द्वार पर बहुत बड़ा मतवाला हाथी खड़ा था, और चारों ओर राक्षसों की सेना थी। वह नगरी भयानक साँपों से सुरक्षित भोगवती पुरी के समान थी। बिजली सहित बादलों से शोभित और ग्रह-नक्षत्रों से पूर्ण इन्द्र-पुरी के समान जान पड़ती थी। स्थान-स्थान पर पताकाएँ फहराती थीं। उनमें घंटी बज रही थीं। लंका के सब द्वार सुवर्णमय थे, वेदी वैदूर्यमणि की थी। फ़र्श पर स्फटिकमणि और मोती जड़े हुए थे। वैदूर्यमणि की सीढ़ियाँ बनी थीं। बहुत ऊँचा सभाभवन बना था, वह मानों आकाश को उड़ा जाता है। १—१०। द्वार पर मोर और क्रौंच पक्षी बोलते थे। राजहंस घूमते थे। कहीं नगाड़े बजते थे और कहीं से स्त्रियों के आभूषणों का शब्द आ रहा था। कुबेर की अलकापुरी के समान लंका को देखकर हनुमान् बड़े प्रसन्न हुए। वे सोचने लगे कि अस्त्र-शस्त्र धारण किये हुए राक्षस निरन्तर इस नगरी की रक्षा करते हैं। बलपूर्वक लंका में प्रवेश करना बहुत कठिन है। कुमुद, अंगद, सुषेण, मैन्द, द्विविद, सुग्रीव, कुशपर्वा, जाम्बवान् और मेरे सिवा अन्य कोई वानर यहाँ प्रवेश न कर सकेगा। ११—१६। फिर महाबाहु रामचन्द्र और लक्ष्मण के पराक्रम का स्मरण करके उनका उत्साह बढ़ा। उन्होंने देखा कि रावण की समृद्ध नगरी आभूषणों से अलंकृत स्त्री के समान शोभित है। समुद्र उसका वस्त्र है, गोष्ठ और घर उसके कर्ण-भूषण हैं तथा यन्त्रागार उसके स्तन हैं। वहाँ सर्वत्र प्रकाश है, अँधेरे का कहीं नाम नहीं। हनुमान् यह सब देखते हुए लंका को चले।

उसी समय लंका की अधिष्ठात्री राक्षसी ने हनुमान् को देखा। वह विकृत मुख और महाकराल रूप धारण करके हनुमान् के सामने खड़ी हो गई और गरजकर बोली—रे वानर, तू कौन है, यहाँ क्यों आया? ठीक-ठीक बतला दे, नहीं तो तुझे मार डालूँगी। निशाचर इस नगरी

के चारों ओर रक्षा करते हैं, तू यहाँ कैसे घुस आया। १७–२४। वीर हनुमान् ने कहा—तुमने जो पूछा है वह मैं बताऊँगा। किन्तु तुम पहले यह बताओ कि नगर का द्वार रोके तुम क्यों खड़ी हो और मुझे इस प्रकार क्यों डाटती हो। २५–२६। हनुमान् की यह बात सुनकर कामरूपिणी लंका कुपित होकर कठोर वचन बोली—रे वानर, मैं राक्षसराज रावण की आज्ञा से इस नगरी की रक्षा करती हूँ, तू मेरी उपेक्षा करके यहाँ प्रवेश नहीं कर सकता। मैं लंका की अधिष्ठात्री देवता हूँ। आज तू मेरे हाथ से निहत होकर पृथिवी में सोयेगा।२७–३०। लंका की यह बात सुनकर पर्वत के समान अटल और निःशंक खड़े हुए हनुमान् ने उत्तर दिया—हे कल्याणी, मैं इस नगरी को देखना चाहता हूँ। चहारदीवारी से घिरी हुई और उत्तम द्वारों से शोभित इस नगरी के वन-उपवन और अच्छे-अच्छे महल देखूँगा, इसी लिये मैं यहाँ आया हूँ। ३१–३४। लंका फिर कठोर वचन बोली—रे मूर्ख, महा प्रतापी रावण इस नगरी का राजा है। तू मुझे परास्त किये बिना इसे नहीं देख सकता। हनुमान् ने नम्रता से कहा—भद्रे, मैं इस नगरी को देखकर अपने स्थान को लौट जाऊँगा। हनुमान् का यह पक्का इरादा समझकर निशाचरी ने क्रोध से गरजकर एक थप्पड़ मारा। थप्पड़ लगते ही महाबली पवनकुमार भी गरजे। उन्होंने कुपित होकर बायें हाथ से एक घूँसा मारा। ३५–४०। लंका स्त्री थी, इसलिये हनुमान् ने अत्यन्त क्रोध नहीं किया। घूँसा के प्रहार से वह भयानक मुँह बना कर पृथिवी पर गिर पड़ी। उसकी यह दशा देखकर, स्त्री समझकर, तेजस्वी हनुमान् को दया आई। लंका बहुत घबराकर गद्गद स्वर से विनीत शब्दों में कहने लगी—हे वीर! प्रसन्न होकर मेरी रक्षा करो। वीर पुरुष शास्त्र की मर्यादा का उल्लंघन नहीं करते, अर्थात् स्त्री का वध नहीं करते। मैं इस नगरी की अधिष्ठात्री देवता हूँ। तुमने अपने पराक्रम से मुझे जीत लिया। मैं एक प्राचीन बात तुमसे कहती हूँ, सुनो।

भगवान् ब्रह्मा ने मुझसे कहा था कि हे राक्षसी, जब तुझे कोई वानर पराजित करे तब तू समझ लेना कि राक्षसों के लिये भय आ गया। हे सौम्य, जान पड़ता है कि ब्रह्मा का बताया हुआ समय आ गया है। ब्रह्मा की बात असत्य नहीं हो सकती। एक सीता के कारण दुरात्मा रावण का सब राक्षसों के साथ विनाश होगा। यह नगरी ब्रह्मा के शाप से दूषित हो गई है। अब तुम अपनी इच्छानुसार इसमें प्रवेश करके जहाँ चाहो वहाँ घूमो और सब स्थानों में सती सीता को ढूँढ़ो। ४१—५२।

सर्ग ४

महातेजस्वी हनुमान् कामरूपिणी लंका को जीतकर, द्वार से न जाकर, चहारदीवारी लाँघकर नगरी में प्रविष्ट हुए। प्रवेश करते समय पहले बायाँ पैर आगे बढ़ाया (शत्रु के नगर में बायाँ पैर पहले रखना चाहिए। वह पैर मानों शत्रु के सिर पर रक्खा जाता है) लंका की सड़कें बहुत चौड़ी थीं और अनेक प्रकार के फूलों से शोभित थीं। महावीर हनुमान् राजमार्ग से नगर में घुसे। कहीं हँसने का कोलाहल और कहीं नगाड़ों का शब्द होता था। राक्षसों के बड़े ऊँचे घर बादलों से आच्छादित आकाश के समान शोभित थे। १—५। उन घरों में मनोहर मालाएँ लटकती थीं। पद्म और स्वस्तिक आदि के चिह्न बने थे। वज्र और अंकुश के चित्र खिंचे थे। मणियों की खिड़कियाँ चमकती थीं। हनुमान् लंका की शोभा देखते हुए रामचन्द्र के कार्य के लिए चले। उनका मन बहुत प्रसन्न था। लंका की शोभा और सुंदर घर देखते जाते थे। काम के वेग से उन्मत्त सर्वाङ्ग सुंदरी स्त्रियाँ अप्सराओं की भाँति मधुर स्वर से गाती थीं। उनके नूपुर और मेखला का शब्द सुन पड़ता था। कहीं करतल ध्वनि सुन पड़ती थी। ६—१२। राक्षसों के घरों में कहीं मंत्रों के उच्चारण का शब्द और कहीं वेद पढ़ने

का शब्द होता था। राक्षस रावण की स्तुति करते हुए गरजते थे। महावीर हनुमान् राजमार्ग में यह सब सुनते हुए चले। नगर के बीच में पहुँचकर उन्होंने बहुत-से गुप्तचर देखे। कोई योगी के वेष में था, कोई जटाएँ रखाए, कोई सिर मुड़ाए, कोई गोचर्म, कोई मृगचर्म और कोई वस्त्र पहिने था। १३—१५। किसी के हाथ में मुट्ठी भर कुश थे। अग्निकुण्ड, धनुष, खड्ग, शक्ति, मुसल, वज्र, पट्टिश, पाश, परिघ और कोई वृक्ष लिए था। सब राक्षस कवच पहने थे। किसी की छाती में स्तन का एक ही चिह्न था। उनके वर्ण भी अनेक प्रकार के थे। कोई तो भयानक महाकाय, कोई बौना, कोई बहुत मोटा और कोई अत्यन्त दुबला, कोई बहुत लंबा, कोई बहुत छोटा, कोई बहुत गोरा और कोई बहुत काला, कोई कुबड़ा, कोई विरूप और कोई रूपवान् तथा तेजस्वी था। गले में उत्तम मालाएँ और अंगों में विचित्र लेप शोभित थे। सब राक्षस अनेक प्रकार के वेशभूषा से सजे हुए थे। किसी के हाथ में ध्वजा और किसी के हाथ में पताका थी। महावीर हनुमान् ने अन्तःपुर के समीप रावण द्वारा नियुक्त रक्षकों को देखा। आगे चलकर एक बड़ा रमणीय घर देखा, वह त्रिकूट पर्वत के मध्यभाग में था। उसका द्वार सुवर्ण का बना हुआ था। वहाँ उत्तम घोड़े और चार दाँतोंवाले सफ़ेद हाथी सजे खड़े थे। रथ और विमान भी देख पड़े। मृग और पक्षी बोलते थे। महामूल्य मणि और मोती जड़ी थीं। राक्षसों का पहरा लगा था। घर के चारों ओर सोने की चहारदीवारी और बड़ी गहरी खाईं थी। वह घर रावण का अन्तःपुर था। महावीर हनुमान् ने हज़ारों महाबली राक्षसों से सुरक्षित, सुवर्ण और बहुमूल्य मणि-मोतियों से भूषित, अगुरु और चन्दन से सुगन्धित रावण के अन्तःपुर में प्रवेश किया। १६—२०।

सर्ग ५

उसी समय भगवान् चन्द्रमा आकाश में अपनी किरणों द्वारा प्रकाश फैलाने लगे। उनके चारों ओर ताराएँ शोभित थीं, अतएव वे गायों के बीच में साँड़ के समान आकाश में विचरते थे। उनके शीतल प्रकाश से सबका दुःख-संताप दूर हो गया। महासमुद्र में बड़े वेग से लहरें उठने लगीं। पृथिवी पर उनका प्रकाश फैल गया। जैसी शोभा पृथिवी में मंदर पर्वत पर, संध्या के समय समुद्र में और दिन में कमल के वन में होती है, वैसी ही शोभा भगवान् चन्द्रमा में थी। जैसे हंस चाँदी के पिंजरे में, सिंह मन्दर पर्वत की गुहा में, और वीर पुरुष सफ़ेद हाथी की पीठ पर देख पड़े वैसे ही चन्द्रमा आकाश में शोभित हुए। उनके अंक में कलंक था, अतएव तीक्ष्ण सींगोंवाले बैल के समान और ऊँचे शिखरवाले श्वेत पर्वत के समान जान पड़ते थे। सूर्य के प्रकाश से उनका नैसर्गिक अन्धकार दूर हो गया था। वे प्रकाश और शोभा से युक्त होकर, पर्वत पर सिंह के समान, युद्धभूमि में सफ़ेद हाथी के समान तथा अपने राज्य में राजा के समान आकाश में प्रकाशित हुए। चन्द्रमा के उदय होने से अन्धकार नष्ट हो गया, मांसाहारी राक्षसों का घूमना-फिरना बढ़ गया, स्त्रियों का प्रणय-कलह शान्त हो गया, रात में स्वर्ग का जैसा सुख हो गया। चारों ओर वीणा का मधुर शब्द होने लगा। सती स्त्रियाँ अपने पति के साथ सो गईं। अद्भुत और भयानक काम करनेवाले निशाचर और हिंसक जीव इधर-उधर घूमने तथा विहार करने लगे। महावीर हनुमान् ने मार्ग में चलते हुए देखा कि राक्षसों के घरों में अनेक प्रकार के रथ, घोड़े, और सुवर्णमय आसन शोभित हैं। कहीं मतवाले राक्षस कोलाहल करते हैं, कहीं वीरता के गर्व से एक-दूसरे का तिरस्कार करते हैं। कोई राक्षस अपनी मोटी भुजाओं से ताल ठोक रहा है। कोई छाती ठोक रहे हैं, कोई अनेक प्रकार के वेश धारण करते हैं, कोई धनुष

चढ़ाते हैं, कोई स्त्रियों का आलिंगन करते हैं। १–१२। स्त्रियाँ अंग-राग लगा रही हैं। कोई सो रही है, कोई प्रसन्नता से हँस रही है, कोई क्रोध के मारे लम्बी साँस छोड़ रही है। हनुमान् ने कहीं तो बड़े-बड़े हाथियों के गरजने का शब्द सुना, कहीं सज्जन राक्षसों को बैठे देखा। कहीं जलाशय में फुफकारते हुए साँपों के समान वीर राक्षसों को देखा। बुद्धिमान्,श्रद्धावान्, अनेक प्रकार के वेशधारी, मधुरभाषी भी राक्षस दिखाई दिये। प्रधान राक्षसों को भी देखा। यद्यपि वे कुरूप थे, किन्तु वेशभूषा से रूपवान् के समान जान पड़ते थे। राक्षसों के रूप, गुण और गुण के अनुरूप कार्य देखकर हनुमान् बड़े प्रसन्न हुए। अलंकारों से भूषित, ताराओं के समान सुंदरी, अच्छे स्वभाव-वाली, मदिरा पीने में आसक्त विलासिनी स्त्रियों को भी देखा। लज्जा और हर्ष से उनका सौन्दर्य और भी बढ़ गया था। स्त्रियाँ अपने पति की गोद में वैसे ही विहार करती थीं, जैसे फूलों में भ्रमर। कोई सतमहले पर बैठी थी, कोई पति की गोद में प्रसन्न थी। हनुमान् ने देखा कि कोई स्त्री तपाये हुए सुवर्ण के समान, कोई चन्द्रमा के समान थी। कोई स्त्री पति के विरह में व्याकुल थी, और कोई पति के समागम से प्रसन्न थी। स्त्रियों के मुख चन्द्रमा के समान सुन्दर थे। सबके नेत्र और तिरछी भौंहें मनोहर थीं। वे फूलों की मालाएँ पहने थीं। उनके आभूषण बिजली के समान चमकते थे। उन स्त्रियों को देखकर हनुमान् बड़े प्रसन्न हुए। किन्तु फूली हुई लता के समान सुन्दरी सीता कहीं न देख पड़ीं। सीता धर्मनिष्ठ राजकुल में पृथ्वी से उत्पन्न हुई थीं। पति-व्रता थीं, सदा अपने मन में रामचन्द्र की चिन्ता करती थीं। राम के वियोग से दुःखित थीं, चिन्तित रहने के कारण उनका स्वर गद्गद हो गया था। मयूरी के समान मधुर बोलनेवाली सीता कहीं न देख पड़ीं। सीता द्वितीया के चन्द्रमा के समान, धूलि लगी हुई सोने की रेखा के समान, बाण लगे हुए घाव के चिह्न के समान और वायु से उड़ाये

हुए बादलों की रेखा के समान थीं। सीता को न देखकर हनुमान् बड़े व्याकुल हुए। १३–२७।

सर्ग ६

शीघ्रता से चलते हुए हनुमान् ने समीप ही रावण का घर देखा। सीता को न देखने से वे बड़े दुखित थे। रावण का घर सूर्य के समान चमकता था। उसके चारों ओर लाल रंग की चहारदीवारी थी। जैसे सिंह वन की रक्षा करता है वैसे ही भयानक राक्षस उस घर की रक्षा करते थे। रावण का घर देखकर हनुमान् प्रसन्न हुए। उसके द्वार पर चाँदी और सोने से चित्र बने थे। फाटक सुवर्णमय था। बड़े-बड़े आँगन और सुन्दर द्वार थे। द्वार पर हाथी खड़े थे, उन पर महावत बैठे थे। घोड़े जुते हुए हज़ारों रथ और शूर-वीर राक्षस भी खड़े थे। रथों में सिंह और बाघ के चमड़े मढ़े थे। रथ सोने, चाँदी और हाथी-दाँत के बने थे। अनेक प्रकार के रत्न, उत्तम आसन और हज़ारों मृग-पक्षी शोभित थे। द्वारों पर द्वारपाल खड़े थे। सुन्दरी स्त्रियाँ आमोद-प्रमोद करती थीं। उनके आभूषणों का शब्द सुन पड़ता था। छत्र और चँवर आदि राजाओं के उपयुक्त सामग्री रक्खी थी। चन्दन आदि की सुगन्ध आती थी। महावन में सिंह के समान प्रधान राक्षस उस घर में दिखाई दिये। शंख, मृदंग, और नगाड़े का शब्द सुन पड़ता था। अमावस-पूर्णिमा आदि पर्वों में होम होता था, प्रतिदिन इष्टदेव की पूजा होती थी। १–१२। महावीर हनुमान् हाथी, घोड़े और रथ आदि से सुसज्जित, महामूल्य रत्नों से विभूषित, वह भव्य भवन देखकर मन में सोचने लगे कि यह घर सम्पूर्ण लंका का अलंकार है। उस घर को देखते हुए, और अन्य प्रधान राक्षसों के घर और बग़ीचे देखते हुए निर्भय घूमने लगे। १३–१६। फिर वे प्रहस्त और महाबली महापार्श्व के घर में गये। वहाँ से कूदकर कुम्भकर्ण के घर में पहुँचे।

विभीषण, महोदर, विरूपाक्ष, विद्युतजिह्व, विद्युन्माली, वज्रदंष्ट्र, शुक, सारण, इन्द्रजित्, जम्बुमाली, सुमाली, रश्मिकेतु, सूर्यशत्रु, वज्रकाय, धूम्राक्ष, सम्पाति, विद्युत्रूप, घन, विघन, शुकनाभ, चक्र, शठ, कपट, ह्रस्वकर्ण, दंष्ट्र, लोमश, युद्धोन्मत्त, मत्त, ध्वजग्रीव, विद्युज्जिह्व, द्विजिह्व, हस्तिमुख, कराल, विशाल और शोणिताक्ष के घरों में गये। १७—२६। उन दिव्य घरों को देखते हुए राक्षसराज रावण के घर में पहुँचे। वहाँ उन्होंने देखा कि अनेक भयंकरी राक्षसी और महाकाय राक्षस शूल, मुद्गर, शक्ति और तोमर लिये रावण के शयन-गृह की रखवारी करते हैं। कहीं वायु के समान वेग से चलनेवाले रंग-बिरंग के घोड़े और कहीं अच्छी जाति के हाथी देख पड़े। उन दुर्धर्ष हाथियों से मद बहता था। वे बरसनेवाले बादलों और झरना झरते हुए पर्वतों के समान शोभित थे। ऐरावत के समान पराक्रमी, बादलों के समान गम्भीर शब्द से गरजनेवाले हाथी शत्रु की सेना को छिन्न-भिन्न और शत्रु के हाथियों को परास्त कर देते थे।

हनुमान् ने उस रमणीय घर में कहीं सजी हुई सेना, कहीं सुवर्णमय झरोखों से शोभित सूर्य के समान चमकती हुई शिविकाएँ, कहीं विचित्र लतागृह, कहीं क्रीड़ागृह, कहीं रतिगृह और कहीं दिन में विहार करने के गृह देखे। किसी स्थान में चित्रशाला और कहीं लकड़ी के बने हुए क्रीड़ापर्वत शोभित थे। वह रमणीय घर मन्दर पर्वत के समान जान पड़ता था। कहीं मोरों के पालने का स्थान बना था। उनमें ध्वजाएँ खड़ी थीं। कहीं अनेक प्रकार के रत्न और धन संचित था। धीर-वीर राक्षस उस खजाने की रखवारी करते थे। राक्षसराज रावण का वह घर कुबेर के भवन के समान शोभित था। रत्नों के प्रकाश से और रावण के तेज से वह सहस्ररश्मि सूर्य के समान चमकता था। २७—४०। उस घर में सुवर्णमय पलँग, आसन और मणियों के बरतन थे। मधु और आसव का कीचड़ सदा बना रहता था। स्त्रियों

के नूपुर और मेखला का शब्द तथा मृदंग का मधुर शब्द सुन पड़ता था। हनुमान् ने सुन्दर अटारियों, बड़े-बड़े आँगनों और सैकड़ों स्त्रियों से शोभित कुबेर-भवन के समान उस विशाल गृह में प्रवेश किया।४१—४४।

सर्ग ७

हनुमान् ने देखा कि रावण के घरों में सुवर्ण और वैदूर्य मणि की खिड़कियाँ हैं, पक्षी बैठे हैं, वे घर बिजली सहित बरसात के बादलों के समान शोभित हैं। शंख और अस्त्र रक्खे हैं। ऊपर के भाग में भी सुन्दर कमरे बने थे। अनेक प्रकार के रत्न रक्खे थे। देवता और दानव भी उनकी प्रशंसा करते थे। रावण ने उनको अपने बाहुबल से अधिकार में किया था। जान पड़ता था कि मयदानव ने अपनी माया से उनको बनाया है। उनके समान घर संसार में और कहीं नहीं थे। उनमें एक घर सबसे श्रेष्ठ था, उसकी उपमा नहीं दी जा सकती। वह बादलों के समान था, आकाशचारी विमान के समान मनोहर था। ऐसा मालूम होता था कि स्वर्ग पृथिवी पर उतर आया है। वह रत्नजटित घर अपनी शोभा से प्रकाशमान था। राक्षसराज रावण के प्रभाव के अनुरूप ही था। फूलों से शोभित अनेक प्रकार के वृक्ष थे। उन फूलों का पराग हवा में सब जगह फैल गया था। उस घर में, बादलों में बिजली के समान स्त्रियाँ थीं। उसी घर में पुष्पक विमान भी शोभायमान था। वह विमान धातुओं से चित्रित शैल-शिखर के समान, नक्षत्रों से शोभित आकाशमंडल के समान तथा अनेक रंगों से भूषित बादलों के समान मनोहर था। १—८। उस विमान में कृत्रिम पर्वत बने थे, उन पर्वतों पर वृक्ष लगे थे, वृक्षों में फूल थे, फूलों में कलियाँ और पराग शोभित था। ६। श्वेत गृह, फूले हुए कमलों से शोभित तालाब और मनोहर वन भी था। उस श्रेष्ठ विमान में रत्नमय पक्षी, सुवर्णमय साँप और घोड़े बने थे। जिस जाति का जो घोड़ा बनाया गया था,

उसका रूप-रंग उस जाति के अनुरूप था। १०–१२। पक्षियों के पंख छोटे थे, वे सोने और मूँगे से बनाये गये थे तथा फूलों से अलंकृत थे। उनके मुँह और पंख बड़े मनोहर बने थे। सूँड़ में कमल दबाये हुए हाथी भी बने थे। हाथ में कमल का फूल लिये देवी की मूर्ति बनी थी। १३–१४।

राक्षसराज रावण का घर इसी प्रकार और भी अनेक वस्तुओं से सजा हुआ था। वह कन्दराओं से शोभित पर्वत तथा वसन्त ऋतु में वृक्ष के समान रमणीय था। महावीर हनुमान् उस घर को देखकर बड़े विस्मित हुए। उन्होंने रावण की राजधानी लंकापुरी में बहुत ढूँढ़ा, किन्तु रामचन्द्र के गुणों की अनुरागिनी, दुःखिनी, पूजनीय सीता को कहीं न देखकर बड़े दुःखित हुए। १५–१७।

सर्ग ८

बुद्धिमान् हनुमान् वहाँ खड़े होकर पुष्पक विमान को देखने लगे। वह विमान मणि-रत्न-जटित, सुवर्ण की खिड़कियों से शोभित और मनोहर मूर्तियों से सुसज्जित था। देवशिल्पी विश्वकर्मा ने जितनी रचना की थी, उन सबमें इस विमान को ही श्रेष्ठ माना था। वह आकाश में सूर्य के मार्ग तक जा सकता था। उसके सब अंग बड़े प्रयत्न से बनाये गये थे, और महामूल्य थे। उस विमान के बनाने में जैसी निपुणता की गई थी, वैसी देवताओं के विमान में भी नहीं देख पड़ती थी। राक्षसराज रावण ने तपोबल से प्राप्त पराक्रम के प्रभाव से उस विमान को अपने अधिकार में किया था। उस पर बैठकर अपनी इच्छानुरूप वायु के समान वेग से विचरता था। उसकी कारीगरी देखकर आश्चर्य होता था। उसमें अनेक प्रकार के उत्तम पदार्थों की रचना थी। वह वायु के समान शीघ्रगामी था। महाप्रतापी यशस्वी पुण्यात्मा पुरुष ही उस पर बैठकर आकाश में विचरते थे। वह

बड़े वेग से आकाश में चल सकता था। पर्वत के शिखर के समान ऊँचा था, उसमें बहुत से घर भी बने थे। कानों में कुंडल पहने, बहुत भोजन करनेवाले, विकराल आँखोंवाले, निशाचर और भूतगण उसे चलाते थे। वह विमान वसन्त ऋतु के पुष्प के समान मनोहर और वसन्त की शोभा से भी बढ़कर शोभित था। १—८।

सर्ग ९

हनुमान् ने एक और बहुत बड़ा घर देखा, जहाँ राक्षसराज रावण रहता था। वह चार कोस लंबा और दो कोस चौड़ा था। उसके आस-पास और भी बहुत-से राजमहल थे। विशालनयनी सीता को ढूँढ़ने के लिए वे उस घर में सब जगह घूमे। तीन दाँतवाले और चार दाँत-वाले हाथी, तथा अस्त्र-शस्त्रधारी राक्षस उस विशाल भवन की रक्षा करते थे। कहीं रावण की राक्षसी स्त्रियाँ और कहीं बलपूर्वक लाई हुई राजकन्याएँ थीं। उस घर में मगर, नाक और तिमिंगिल (एक प्रकार की मछली) आदि जलजीवों के चित्र बने थे, अतएव वायु के वेग से लहरें लेते हुए समुद्र के समान मालूम होता था। कुबेर-भवन और चन्द्रमा की जैसी शोभा उस घर में सदा रहती थी। कुबेर, यम और वरुण के भवन के समान, अथवा उससे भी बढ़कर समृद्धि रावण के घर में थी। पवनतनय हनुमान् ने उसी विशाल भवन में पुष्पक विमान को देखा। उसमें मतवाले हाथियों के चित्र बने थे। १—१०। विश्वकर्मा ने अनेक प्रकार के रत्नों से अलंकृत पुष्पक नाम का जो विमान ब्रह्मा के लिए बनाया था, जिसे यक्षराज कुबेर ने कठोर तपस्या करके पितामह से प्राप्त किया था, उस विमान को राक्षसराज रावण अपने पराक्रम से कुबेर को परास्त करके छीन लाया था। उस विमान में सुवर्णमय मृग बने थे, चाँदी के खम्भे लगे थे, वह अपनी शोभा से प्रकाशमान हो रहा था। सुमेरु और मन्दर पर्वत के

समान, सूर्य और अग्नि के तुल्य, गगनस्पर्शी शिखरागार और विहारागार के समान शोभित था। जिसे विश्वकर्मा ने बड़ी निपुणता से बनाया था, जो सुवर्णमय सीढ़ियों और उत्तम वेदी से अलंकृत था, जिसमें सुवर्ण और स्फटिक मणि की खिड़कियाँ लगी थीं, इन्द्रनील, महानील और अन्य श्रेष्ठ मणियों की वेदी बनी थीं, विचित्र मूँगे, महामूल्य मणि और गोल मोती जिसकी फ़र्श में जड़ी थीं, जिसमें लाल सुगन्धित चन्दन पोत दिया गया था, सूर्य के समान प्रकाशमान उस विमान पर हनुमान् चढ़ गये और उस पर बैठकर अनेक वस्तुओं की सुगन्ध लेने लगे। सुगन्धित वायु सर्वत्र फैल रही थी; मानों वायु ने सुगन्ध का स्वरूप धारण किया था। हनुमान् ने उस सुगन्ध से अनुमान किया कि यह रावण का घर है। पुष्पक विमान से उतर कर रावण के शयन-गृह में गये। वह अत्यन्त रमणीय था। मणियों की सीढ़ियाँ और सुवर्ण की खिड़कियाँ बनी थीं। फ़र्श स्फटिक मणि की थी। मोती, मूँगा, सोने, चाँदी और हाथी-दाँत की मूर्तियाँ थीं। मणियों के बहुत ऊँचे खम्भे लगे थे। पंख के समान उन खम्भों के ऊपर मानों वह घर आकाश में उड़ रहा था। विचित्र कम्बल बिछे थे। मालूम होता था कि वह शयनगृह राष्ट्र और नगर आदि से शोभित दूसरी पृथिवी है। पक्षी बोलते थे, दिव्य सुगंध आती थी, उत्तम बिछौना बिछा था, अगुरु और धूप की सुगन्ध फैल रही थी। हंस के समान श्वेत था, पत्तों और फूलों से सुसज्जित होने से वसिष्ठ की धेनु शबला के समान विचित्र था। उसे देखकर सबका मन प्रसन्न हो जाता था। रूप, रस आदि पाँचों पदार्थों से हनुमान् की आँख, कान आदि पाँचों इन्द्रियाँ तृप्त हो गईं। ११—२०। उन्होंने समझा कि यह स्वर्ग है, अथवा वरुण लोक, या इन्द्र की अमरावती, अथवा गन्धर्वों का निवास-स्थान है। वहाँ दीपकों के प्रकाश से, आभूषणों की चमक से और रावण के तेज से बड़ा प्रकाश था। सुवर्णमय दीपक रावण के तेज से धूमिल

हो गये थे, जैसे जुआ में हारे हुए जुआरी उदास हो जाते हैं। फिर उन्होंने देखा कि अनेक प्रकार के वेश-भूषा से विभूषित, उत्तम मालाएँ पहने, हज़ारों स्त्रियाँ सोती हैं। आधी रात बीत गई थी, इसलिए वे क्रीड़ा-कौतुक बन्द करके मदिरा के नशे में सो गई थीं। उनके आभूषणों का शब्द नहीं होता था। इसलिए वह घर उस कमल-वन के समान था, जिसमें भँवरे न गूँजते हों। स्त्रियाँ आँखें मूँदे थीं, दाँत देख पड़ते थे, मुँह से कमल की जैसी सुगन्ध आती थी। उनके मुख दिन में विकसित और रात में संकुचित कमल के समान थे। स्त्रियों का मुँह देखकर हनुमान् ने अनुमान किया कि इन स्त्रियों के मुख को कमल समझकर भ्रमर प्रार्थना करते होंगे। रावण का शयन-गृह सुन्दरी स्त्रियों से वैसा ही शोभित था, जैसे शरद ऋतु में निर्मल आकाश ताराओं से शोभित होता है। राक्षसराज रावण उन स्त्रियों के बीच में, ताराओं के बीच चन्द्रमा के समान था। ३१—४२। रावण की स्त्रियाँ, आकाश से गिरी हुई ताराओं के समान थीं। ताराओं के ही समान उनका वर्ण और लावण्य था। मदिरा के नशे में उनके केश छूट गये थे, अलंकार अपने स्थानों से हट गये थे। सब स्त्रियाँ गहरी नींद में सोती थीं। किसी के माथे का तिलक बिगड़ गया था, किसी के नूपुर गिर पड़े थे, किसी का हार बग़ल में लटक रहा था, किसी की मोतियों की माला टूट गई थी, किसी की मेखला टूट गई थी और किसी का वस्त्र खिसक गया था। स्त्रियाँ नाचने-गाने में थक गई थीं और मदिरा के नशे में सो रही थीं। ४३—४७। किसी के कुंडल गिर गये थे, किसी की माला टूटकर गिर पड़ी थी। स्त्रियाँ हाथियों से तोड़ी हुई पुष्पित लताओं के समान थीं। किसी का चन्द्रमा के प्रकाश के समान उज्ज्वल मोतियों का हार स्तनों के बीच में सिमट कर सोते हुए हंस के समान जान पड़ता था, किसी का वैदूर्य-मणि का हार स्तनों के बीच में जलमुर्ग के समान शोभित था, किसी की सोने

की माला चक्रवाक के समान देख पड़ती थी। ४८–५०। स्त्रियाँ नदी के समान शोभित थीं; उनके जघन मानों नदियों के पुलिन, मेखला मानों तरंगें, आभूषण मानों कमल और विलास मानों मगर आदि जलजीव थे। किसी के सुकुमार अंगों पर और किसी के कुचों पर नखों के चिह्न आभूषण के समान शोभित थे। किसी का अंचल श्वास की वायु से बार-बार मुख के ऊपर गिरता था, मानों सुनहरे रंग की पताका फहरा रही हो। किसी का कुंडल श्वास की वायु से हिलता था। स्त्रियों के श्वास से मदिरा की गंध आती थी। ५१–५७। कोई स्त्री नशे में सौत के मुँह को रावण का मुँह समझकर चूमती थी। सब स्त्रियाँ रावण पर अत्यन्त आसक्त और अनुरक्त थीं और मदिरा के नशे में थीं। कोई स्त्री अपना हाथ सिरहाने रखकर सो रही थी, किसी ने अपना सुन्दर वस्त्र ही सिरहाने रख लिया था, कोई अपनी सौत की छाती पर सिर रक्खे थी, किसी ने सौत के हाथ पर सिर रख लिया था, कोई किसी की गोद में सोती थी, और कोई सौत के स्तनों पर सिर रखकर सो गई थी। कोई किसी की जाँघ पर, कोई किसी की बग़ल में, कोई किसी की कमर पर और कोई किसी की पीठ पर सिर रक्खे सो रही थी। सब एक-दूसरी की देह में लिपटी हुई और प्रसन्न थीं। हाथ से हाथ मिले रहने के कारण गुँथी हुई माला के समान जान पड़ती थीं। मानों वसन्त ऋतु में फूली हुई लताएँ वायु के वेग से वृक्षों में माला के समान लिपटी थीं और उन पर भ्रमर बैठे थे। परस्पर लिपटी रहने के कारण उनके अंग-प्रत्यंग, वस्त्र और आभूषण में कुछ भेद न मालूम होता था। यह नहीं जान पड़ता था कि किसका कौन वस्त्र और कौन आभूषण है। रावण भी सो गया था, अतएव सुवर्णमय दीपक निडर होकर उसकी स्त्रियों को देख रहे थे। ब्राह्मण, क्षत्रिय, दैत्य, गन्धर्व और राक्षसों की कन्याएँ रावण पर आसक्त होकर उसकी पत्नी बन गई थीं। कुछ स्त्रियों को युद्ध में जीतकर लाया था। सीता

के सिवा और कोई स्त्री रावण के अतिरिक्त दूसरे पुरुष को नहीं चाहती थी। वे सब सुन्दरी थीं और अच्छे कुल में उत्पन्न हुई थीं। अपने रूप और गुण से रावण को प्रिय थीं। यह सब देखकर हनुमान् ने अनुमान किया, यदि सीता इन राजमहिलाओं के समान भोग-विलास में आसक्त हों, तो रावण के लिए बड़े श्रेय की बात है। किन्तु वे पतिव्रता हैं, रावण छल से उनको हर लाया है, वे तो बड़े कष्ट से दिन बिताती होंगी। ५८—७४।

सर्ग १०

उसके बाद हनुमान् ने शयनगृह में स्फटिक मणि की बनी हुई एक सुन्दर वेदी देखी। उस पर अनेक प्रकार के रत्न जड़े थे। उसके ऊपर वैदूर्यमणि का एक पलँग बिछा था। पलँग के पावे हाथीदाँत के थे और सोने से मढ़े थे। उस पलँग पर महा-मूल्य बिछौना बहुत शोभित था। वह सफ़ेद पलँग अशोक की मालाओं से अलंकृत था। उसके ऊपर चन्द्रमा के समान उज्ज्वल छत्र रक्खा था। चारों ओर यन्त्र से चलती हुई पुतली चँवर डुला रही थीं। अनेक प्रकार की सुगन्ध और अगुरु-धूप से सुवासित था। भेड़ का कोमल चर्म बिछा था। उस पलँग पर राक्षसराज रावण सोता था। उसके अंगों में सुगंधित लालचंदन लगा था। वह बरसात के बादल के समान काला था। आँखें लाल थीं, कानों में सफ़ेद कुंडल पहने था, सुवर्ण के समान चमकता हुआ वस्त्र ओढ़े था और अनेक प्रकार के उत्तम आभूषण पहने था, अतएव सन्ध्या राग से रंजित बिजली चमकते हुए बादल के समान जान पड़ता था। उसे देखकर ऐसा मालूम होता था, मानों वृक्षों और लताओं से युक्त मन्दर पर्वत पृथिवी पर पड़ा है। १—६। वह कामरूपी और रूपवान् था, मदिरा पिये हुए सो रहा था, और हाथी की तरह लम्बी साँस छोड़ता था। राक्षसराज रावण

को देखकर हनुमान् को कुछ भय हुआ, वे पीछे को हट गये। उसके बाद सीढ़ियों पर चढ़कर महापराक्रमी रावण को देखने लगे। वह पलँग पर वैसे ही सो रहा था, जैसे हाथी किसी झरने में सोता हो। इन्द्र-ध्वज के समान भुजाएँ फैलाए था। परिघ और हाथी की सूँड़ के समान मोटी और सुदृढ़ भुजाओं में आभूषण पहने था। हाथों के अँगूठे, अँगुलियाँ और नख सुलक्षण थे। उसकी भुजाएँ पँच-मुँहे साँपों के समान जान पड़ती थीं। देह में ऐरावत के दाँत के प्रहार का चिह्न, और इन्द्र के वज्र तथा विष्णु के चक्र के भी प्रहार के चिह्न थे। उसकी भुजाओं में शीतल, सुगन्धित लालचन्दन लगा था। भुजाएँ मन्दर पर्वत पर पड़े हुए कुपित साँप के समान थीं। पर्वताकार रावण, शिखर के समान दो भुजाओं से अत्यन्त शोभित हो रहा था। उसके मुँह से पुन्नाग की सुगन्ध निकलती थी, और बकुल से सुवासित मदगन्धवाही साँस की वायु घर भर में फैलकर बाहर निकलती थी। कानों में कुंडल शोभित थे, सिर पर मणि-मोती जड़े हुए सुवर्णमय किरीट थे, चौड़ी छाती पर लालचन्दन लगा था और मणियों का हार पड़ा था। पीला रेशमी वस्त्र ओढ़े था। ऐसा जान पड़ता था, मानों गंगानदी में हाथी सो रहा हो।

शयन-गृह के चारों कोने में चार सुवर्णमय दीपक जलते थे। जैसे अँधेरी रात में बिजली के चमकने से काले बादल दिखाई दें, वैसे ही कृष्ण-कलेवर रावण को दीपकों के उजाले में हनुमान् ने देखा। १०—२६। स्त्रियाँ उसके पैरों के पास सोती थीं, उनके मुँह चन्द्रमा के समान सुन्दर थे, उनके कानों में नीलममणि जड़े हुए सोने के कुंडल शोभित थे, हाथों में बिजायठ थे, जिनमें हीरे जड़े थे, और गले में चमकती हुई मालाएँ शोभित थीं। स्त्रियों के मुख-सौन्दर्य से वह पलँग छिटकी हुई ताराओं से शोभित आकाश के समान जान पड़ता था। वे स्त्रियाँ नाचने-गाने में बड़ी निपुण थीं। क्रीड़ा-कौतुक में थककर

सो गई थीं। किसी की वेणी गले में लिपटी थी। उसे देखकर ऐसा मालूम होता था, मानों धारा में बहती हुई कमलिनी नाव में लिपट गई है। कोई बग़ल में डमरू दबाए थी, वह मानों बच्चे को लिये सो रही है। कोई मृदंग पर और कोई पणव पर हाथ रखकर सो गई थी। किसी के आगे और पीछे डिंडिम पड़े थे, मानों उसके साथ पति और पुत्र सोते हैं। कोई बग़ल में आडम्बर बाजा दबाए सोती थी। कोई सोने के कलस के समान स्तनों पर हाथ रखकर सो गई थी और कोई दूसरी स्त्री से लिपटी हुई सोती थी। ३०–४६।

महावीर हनुमान् ने उन स्त्रियों में रावण की प्रिय पत्नी मन्दोदरी को भी देखा। वह एक शय्या पर अलग सोती थी। मणि और मोती जड़े हुए आभूषण पहने थी, अपने सौन्दर्य से शयनगृह को शोभित करती थी। उसका रंग सोने के समान था, वह अन्तःपुर की स्वामिनी थी। हनुमान् ने मन्दोदरी को देखकर अनुमान किया कि शायद सीता यही हों। उन्हें बड़ा हर्ष हुआ। वे वानर-स्वभाव-वश आनन्द से ताली बजाने लगे, पूँछ चूमने लगे, उछलने और गाने लगे, कूदकर खम्भों पर चढ़ गये। ५०–५४।

सर्ग ११

हनुमान् ने फिर सोचा कि सीता रामचन्द्र की पतिव्रता स्त्री हैं। वे उनके वियोग में, इस प्रकार भोग-विलास में आसक्त होकर न सोवेंगी। मदिरा पीना और आभूषण पहनना भी पसन्द न करेंगी। रामचन्द्र के सिवा और किसी पुरुष की, चाहे देवराज इन्द्र भी क्यों न हों, प्रार्थना न करेंगी। क्योंकि रामचन्द्र के समान कोई देवता भी नहीं हो सकता। हनुमान् ने निश्चय किया कि यह कोई दूसरी स्त्री है। फिर उन्होंने मदिरा पीने का स्थान देखा। वहाँ भी बहुत-सी स्त्रियाँ नाच-गाकर

क्रीड़ा करके, मदिरा के नशे में सो रही थीं। कोई तो नाचते-नाचते और कोई गाते-गाते थक गई थी और कोई नशे से विह्वल हो गई थी। १—५। कोई मुरज, कोई मृदंग और कोई चेलिका आदि बाजा सिरहाने रखकर सो रही थी। स्त्रियाँ सुन्दर बिछौने पर सोती थीं। कोई स्वप्नावस्था में सौन्दर्य का वर्णन कर रही थी, कोई संगीत का अर्थ कर रही थी और कोई देश-काल के उपयुक्त बातें कहती थी। हनुमान् वहाँ से लौटकर फिर रावण के शयनगृह में आये। हज़ारों सर्वांगसुन्दरी स्त्रियाँ रति-क्रीड़ा से थककर सो रही थीं। उनके बीच में राक्षसराज रावण गायों में साँड़ के समान और हथिनियों में हाथी के समान शोभित था। ६—१२। फिर वे रावण की पानभूमि में गये, वहाँ अनेक प्रकार की खाने-पीने की वस्तुएँ देखीं। महिष, वराह और हिरन का मांस अनेक प्रकार से बनाया हुआ सोने के बर्तनों में रक्खा था। मोर और मुर्ग़ का मांस, दही और नमक से बनाया हुआ वराह तथा वार्ध्रीनस का मांस; क्रिकल, छाग, खरगोश और मछलियों का मांस रक्खा था। खाने-पीने और चाटने की अनेक प्रकार की खट्टी, मीठी और नमकीन चीज़ें रक्खी थीं। स्वादिष्ठ फल-मूल भी रक्खे थे, अनेक प्रकार के फूलों की सुगंध आ रही थी। उत्तम शय्या और आसन अग्नि के समान चमकते थे। मालाओं के ढेर लगे थे। सोने के कलस, मणि और स्फटिक के बरतन रक्खे थे। उन बरतनों में मदिरा भरी थी। वह फूल-फल और शहद से बनाई गई थी, सुगन्धित वस्तुओं से सुवासित की गई थी। किसी बरतन की आधी मदिरा पी ली गई थी, कोई बरतन बिलकुल ख़ाली कर दिया गया था और कोई भरा हुआ था। सब बरतन एक स्थान पर अच्छे ढंग से रक्खे थे। ख़ाली शय्या भी बहुत-सी थीं। स्त्रियाँ परस्पर लिपटकर सो गई थीं। किसी ने दूसरी स्त्री का वस्त्र ओढ़ लिया था। वायु शीतल-चन्दन, मधुर-मदिरा और अनेक प्रकार के फूलों तथा धूप की गन्ध लेकर

चलती थी। हनुमान् ने अन्तःपुर के सब स्थानों में देखा, किन्तु सीता कहीं न देख पड़ीं। १३—३७। फिर वे अधर्म के भय से मन में सोचने लगे—मैंने सोती हुई, वस्त्रहीन, पर-स्त्रियों को देखा है। यह अधर्म का काम हुआ। आज तक मैंने कभी पर-स्त्री को नहीं देखा था। पर-स्त्री-गामी रावण को भी मैंने देखा। फिर उन्होंने सोचा कि इन सोती हुई स्त्रियों को देखकर मेरे मन में विकार नहीं उत्पन्न हुआ। इसका कारण यह है कि मन ही इन्द्रियों को अच्छे-बुरे कामों में लगाता है, किन्तु मेरा मन मेरे वश में है, तो फिर मुझे पाप क्यों लगेगा। इसके सिवा दूसरे स्थानों में सीता का पता भी तो नहीं लग सकता; क्योंकि स्त्रियों में ही स्त्री का पता चल सकता है। चाहे जिस जाति का प्राणी हो, उसी जाति में ढूँढ़ा जाता है। क्या स्त्री मृगियों के झुण्ड में ढूँढ़ी जाती है? वहाँ कैसे मिलेगी। ३८—४५। इसी से मैंने शुद्ध-हृदय से रावण के अन्तःपुर में सब स्थानों में देखा, किन्तु सीता कहीं न देख पड़ीं। महावीर हनुमान् ने देवकन्याओं, गन्धर्वकन्याओं और नागकन्याओं में जब सीता को कहीं न देखा, तब वे वहाँ से निकलकर दूसरे स्थान को चले। चलते समय एक बार फिर बड़ी सावधानी से सब स्थान देख लिये। ४६—४९।

सर्ग १२

इस प्रकार जब उन्होंने बड़ी उत्सुकता से लताओं से आच्छादित, विचित्र चित्रों से शोभित घरों में और शयन-गृह में ढूँढ़ा, किन्तु सीता को कहीं न देखा तब उनको बड़ी चिन्ता हुई। वे सोचने लगे—मालूम होता है कि सीता जीवित नहीं हैं। क्योंकि मैंने अन्तःपुर में अच्छी तरह देखा, तो भी सीता कहीं न देख पड़ीं। सीता पतिव्रता हैं, पतिव्रत धर्म की रक्षा करना सर्वथा उनका कर्तव्य है। पातिव्रत के पवित्र मार्ग में स्थिर रहने से सज्जनों का अनिष्ट करनेवाले प्रसिद्ध

दुरात्मा रावण ने उनको मार डाला होगा। अथवा भयानक मुँह और आँखोंवाली राक्षसियों को देखकर सीता डर के मारे मर गई होंगी। सीता का पता नहीं लगा, समुद्र के लाँघने का कुछ फल न हुआ, वानरों के साथ सीता को ढूँढ़ते-ढूँढ़ते बहुत समय व्यर्थ गया, इसलिए अब मैं सुग्रीव के पास न जाऊँगा। क्योंकि बलवान् सुग्रीव अब मुझे कठोर दंड देंगे।१—५। अन्तःपुर के सब स्थान देख लिये, यहाँ पतिव्रता सीता कहीं न देख पड़ीं। सब परिश्रम व्यर्थ गया। लौटकर जाऊँगा तो सब वानर मुझसे पूछेंगे कि तुम लंका में जाकर क्या कर आये? तब मैं उनको क्या उत्तर दूँगा। अतएव प्रायोपवेशन करके प्राण त्याग देना ही मेरे लिए अच्छा है। वानरराज सुग्रीव की दी हुई अवधि बीत गई है। मैं लौटकर जाऊँगा तो अंगद और वृद्ध जाम्बवान् और अन्य सब वानर क्या कहेंगे! अथवा उत्साह ही सफलता का कारण है, उत्साह से ही सब सुख मिलते हैं, इसलिए उत्साह को न छोड़कर, जिन स्थानों को अभी नहीं देखा है, उनमें भी ढूँढ़ना चाहिए। उत्साह ही कामों में लगाता है। उत्साह के साथ जो काम किया जाता है, वह सफल होता है। मैं फिर बड़े यत्न से उत्साह के साथ अन्य स्थानों में सीता को ढूँढ़ूँ। ६—१२। मदिरा पीने के स्थानों और फूली हुई लताओं से आच्छादित घरों में सर्वत्र देखा, चित्रशाला और क्रीड़ागृह भी देखा। अन्तःपुर के बग़ीचों में भी ढूँढ़ा। इस प्रकार थोड़ी देर सोचकर महावीर हनुमान् ने तहख़ानों में, देवालयों में और घरों के दुमहलों-तिमहलों में ढूँढ़ने का निश्चय किया। वे कहीं उछलते-कूदते, कहीं ठहरते, कहीं चलते, कहीं द्वार खोलते, कहीं किवाड़ बन्द करते, कहीं घर में घुसते, कहीं बाहर निकलते और कहीं सावधान होकर ठहर जाते थे। इस प्रकार उन्होंने रावण के अन्तःपुर में चार अंगुल स्थान भी ढूँढ़ने से न छोड़ा। १३—१७। चहारदीवारी के बीच की गलियाँ, देवालयों की वेदी और छोटे-छोटे तालाबों में भी ढूँढ़ा। वहाँ भयानक राक्ष-

सियाँ ही देख पड़ीं, सीता का कहीं पता न लगा। विद्याधरों की स्त्रियों में भी देखा, वे रूप-लावण्य में सर्वश्रेष्ठ थीं। वहाँ भी सीता न देख पड़ीं। रावण की विवाहिता स्त्रियों में, बलपूर्वक लाई हुई स्त्रियों में तथा सुन्दरी नाग-कन्याओं में भी ढूँढ़ा, वहाँ भी सीता न देख पड़ीं। महाबाहु हनुमान् ने जब सीता को कहीं न देखा, तब वे बड़े दुखित हुए। जाम्बवान् आदि वानरों का उद्योग तथा समुद्र लाँघने का अपना परिश्रम व्यर्थ समझकर फिर चिन्ता करने लगे। वे शोक से व्याकुल होकर उस घर से निकल आये। १८—२५।

सर्ग १३

वीर हनुमान् रावण के अन्तःपुर से निकलकर उसी प्रकार वेग से चहारदीवारी पर कूद गये, जैसे बिजली चमक जाती है। रावण के अन्तःपुर में जब सीता कहीं न देख पड़ीं, तब वे दुखित होकर सोचने लगे— मैंने रामचन्द्र के कार्य के लिए लंका के अनेक स्थानों में ढूँढ़ा, किन्तु जनकनन्दिनी सीता का कहीं पता न चला। तालाब, नदी, नद, वन, समुद्र के तट और पर्वत आदि दुर्गम स्थानों में बार-बार ढूँढ़ा, पर सीता कहीं न देख पड़ीं। गृध्रराज सम्पाति ने तो बताया था कि सीता रावण के घर में हैं, फिर इतना ढूँढ़ने पर भी मुझे क्यों न दिखाई दीं। १—५। मालूम होता है, रावण के धमकाने पर भी उन्होंने उसकी बात नहीं मानी, इसलिए राक्षसियों ने उनको खा लिया। अथवा सम्भव है, रावण रामचन्द्र के डर के मारे सीता को लेकर बड़े वेग से भागा हो और सीता उसके हाथ से छूटकर मार्ग में कहीं गिर पड़ी हों। ६—७। अथवा जब रावण उनको लेकर आकाशमार्ग से चला हो, तब ऊपर से भयानक समुद्र को देखकर वे डर के मारे मर गई हों और समुद्र में गिर पड़ी हों। अथवा जब रावण बग़ल में दबाकर भागा हो तो कुचलकर मर गई हों। अथवा दंडक वन से लेकर रावण के भागने

पर डर के मारे रथ से गिर पड़ी हों। ८–१०। अपना पातिव्रत बचाने के लिए तपस्विनी सीता ने अनेक उपाय किये होंगे। अधम रावण ने उस सर्वांगसुन्दरी अनाथा को खा लिया होगा। अथवा रावण की दुष्ट स्त्रियों ने सौत समझकर उस कमलनयनी को खा लिया हो। अथवा पूर्णमासी के चन्द्रमा के समान सुन्दर मुखवाले रामचन्द्र के शोक में सीता स्वयं मर गई हों। हा राम, हा लक्ष्मण, हा अयोध्या, यह कहकर बार-बार विलाप करते-करते सीता ने प्राण त्याग दिये हों। अथवा सम्भव है, रावण के घर में किसी गुप्त स्थान में पिंजड़े में बन्द मैना की तरह विलाप करती हों। ११–१५। जनक की पुत्री, रामचन्द्र की भार्या, राक्षस रावण की पत्नी होकर न रहेंगी। १६। सीता चाहे स्वयं मर गई हों, अथवा रावण ने खा लिया हो, या रावण के हाथ से छूटकर समुद्र में गिर गई हों, किन्तु मैं यह हाल रामचन्द्र से न कह सकूँगा। क्योंकि वे रामचन्द्र को प्राणों से भी बढ़कर प्रिय हैं। यह हाल उनसे कहने में भी दोष है और न कहने में भी। ऐसी दशा में मुझे क्या करना चाहिए, यह कुछ समझ में नहीं आता। यह सोचकर हनुमान् बड़े दुखी हुए। फिर सोचने लगे—यदि सीता को देखे विना मैं लौटकर किष्किन्धा को जाऊँ तो मेरा कौन पुरुषार्थ है। १७–२०। समुद्र का लाँघना, लंका में आना और राक्षसों को देखना, यह सब व्यर्थ है। जब मैं किष्किन्धा को जाऊँगा, तो मुझे देखकर सुग्रीव, सब वानर और राम-लक्ष्मण क्या कहेंगे। 'सीता लंका में नहीं हैं'—यह दारुण वृत्तान्त जब मैं सुनाऊँगा, तो रामचन्द्र उसी समय प्राण त्याग देंगे। यह असह्य संवाद सुनकर वे जीवित नहीं रह सकते। २१–२४। उनके मरने पर लक्ष्मण भी जीवित न रहेंगे, क्योंकि लक्ष्मण उनके परम भक्त हैं। राम-लक्ष्मण की मृत्यु सुनकर भरत का और भरत की मृत्यु देखकर शत्रुघ्न का भी जीवित रहना असम्भव है। जब राजा दशरथ के चारों पुत्र मर जायँगे, तब

कौसल्या, सुमित्रा और केकयी कैसे जीवित रहेंगी। वानरराज सुग्रीव बड़े कृतज्ञ और सत्यवादी हैं। राम-लक्ष्मण की मृत्यु देखकर वे भी प्राण त्याग देंगे। उनकी स्त्री रुमा भी पति के शोक में मर जायँगी। तारा बालि के शोक में बड़े दुख से जीवन बिता रही हैं, सुग्रीव के भी मरने पर वे कैसे जीवित रहेंगी। २५—३०। जब सुग्रीव, तारा और रुमा की मृत्यु हो जायगी तब कुमार अंगद कैसे जी सकेगा? सुग्रीव की मृत्यु होने पर सब वानर सिर पीट-पीटकर रोवेंगे। वानरराज सुग्रीव दान, मान और आश्वासन से वानरों को प्रसन्न रखते थे। वे उनके शोक में अवश्य मर जायँगे। केवल किष्किन्धा में ही नहीं, वन-पर्वत आदि सभी स्थानों के वानर प्राण त्याग देंगे। अब वानर कहीं सम्मिलित होकर क्रीड़ा न करेंगे। वे राजा के शोक में पुत्र, स्त्री और मन्त्रियों के साथ पर्वतों से गिरकर प्राण त्याग देंगे। ३१—३५। अथवा विष पीकर, फाँसी लगाकर, आग में कूदकर, निराहार रहकर या आत्म-हत्या करके मर जायँगे। यदि मैं सीता को देखे विना लौटकर जाऊँगा, तो रोने-पीटने का हाहाकार मच जायगा। इक्ष्वाकु-वंश का और वानरों का सर्वनाश हो जायगा। अतएव मैं अब किष्किन्धा को न जाऊँगा और न सुग्रीव से मिलूँगा। यदि मैं न जाऊँ, तो सम्भव है कि धर्मात्मा राम-लक्ष्मण और बलवान् वानर मेरी प्रतीक्षा में जीते रहें। यदि सीता का पता न लगा तो मैं वानप्रस्थ होकर, हाथ में या मुँह में गिरे हुए फल खाकर, वृक्ष के नीचे निवास करूँगा। ३६—४०। अथवा समुद्र के किनारे चिता बनाकर, उसमें आग लगाकर कूद पड़ूँगा। अथवा निराहार रहकर एक स्थान में बैठा रहूँगा। जब प्राण निकल जायँगे तब कौआ और कुत्ते मेरा शरीर खा लेंगे। मरने का एक और भी अच्छा उपाय है। यदि सीता का पता न लगेगा, तो समुद्र में डूबकर मर जाऊँगा। मैंने अच्छे काम करके आज तक जितनी कीर्ति पाई थी, वह सीता को न देखने से नष्ट हो जायगी। अथवा

आत्महत्या करना निन्दित काम है, इसलिए मैं तपस्वी हो जाऊँगा, और वृक्षों के नीचे रहकर नियम से जीवन बिताऊँगा। किन्तु किष्किन्धा को न जाऊँगा। ४१—४५। यदि सीता को देखे विना लौटकर जाऊँ, तो अंगद-समेत सब वानरों की मृत्यु निश्चित है। आत्महत्या करने में बड़े दोष हैं। जो जीवित रहता है, वह कभी न कभी शुभ देखता ही है, इसलिए मैं जीवित रहूँगा। कभी कल्याण अवश्य होगा। महावीर हनुमान् इसी प्रकार बड़ी देर तक चिन्ता करते रहे। फिर उन्होंने बड़े धैर्य और साहस से निश्चय किया कि मैं दुराचारी रावण को मार डालूँगा। इस दुष्ट को मारकर सीता के हरने का बदला लूँगा। ४६—५०। अथवा इसे पकड़कर समुद्र में उछालता हुआ उसी प्रकार रामचन्द्र के पास ले जाऊँगा, जैसे पशु पशुपति की भेंट किया जाता है। इस प्रकार चिन्ता करते हुए हनुमान् ने फिर सोचा कि जब तक यशस्विनी सीता को न देखूँगा, तब तक लंका में ढूँढ़ता रहूँगा। अथवा सम्पाति के कहने के अनुसार रामचन्द्र को यहाँ लाऊँगा। किन्तु रामचन्द्र यदि सीता को यहाँ न देखेंगे, तो सब वानरों को भस्म कर देंगे। अतएव मैं नियत आहार करके जितेन्द्रिय रहकर यहीं रहूँगा। मेरे कारण नर-वानर सबकी मृत्यु क्यों हो।५१—५५। फिर उन्होंने देखा कि समीप ही बड़े-बड़े वृक्षों से शोभित अशोकवन है। मैंने इस वन में नहीं देखा, इसलिए यहाँ भी ढूँढ़ना चाहिए। अब मैं आठ वसु, ग्यारह रुद्र, बारह आदित्य, अश्विनीकुमार और मरुद्गण को नमस्कार करके इस वन में जाऊँगा। राक्षसों को जीतकर सीता को रामचन्द्र से उसी प्रकार मिलाऊँगा, जैसे तपस्वी को तपस्या की सिद्धि प्राप्त होती है। थोड़ी देर सोचकर महाबाहु हनुमान् उठ खड़े हुए। मन में रामचन्द्र, लक्ष्मण, सीता और सुग्रीव को प्रणाम किया। रुद्र, इन्द्र, यम, पवन, चन्द्रमा, अग्नि और मरुद्गण को भी प्रणाम किया। ५६—६०। चारों ओर देखते हुए अशोकवन को चले। मन में सोचते थे कि अशोकवन की रक्षा के लिए बहुत-

से राक्षस नियुक्त हैं; उसकी चहारदीवारी भी बहुत ऊँची है; बड़े-बड़े वृक्ष हैं, वहाँ वायु भी वेग से न चलती होगी। यद्यपि मैंने अपना शरीर छोटा कर लिया है, फिर भी सन्देह है कि कोई देख न ले। इस काम में देवता और ऋषिगण मेरी सहायता करें। ६१—६५। भगवान् ब्रह्मा, तपस्वी मुनि, अग्नि, वायु, इन्द्र, वरुण, सूर्य, चन्द्रमा, अश्विनीकुमार, मरुद्गण, भूतगण, भूतपति भगवान् शंकर और अन्य सब देवता, जिन्हें हम लोग नहीं देखते, वे सब मेरी सहायता करें। मैं सीता का चन्द्रमा के समान सुन्दर मुँह कब देखूँगा। जिनकी ऊँची नाक, सफ़ेद दाँत और कमल-दल के समान आँखें हैं। नीच, निठुर, अधम रावण छल से उस अबला तपस्विनी को हर लाया है। हा, मैं कौन उपाय करूँ जिससे उस पतिव्रता का दर्शन कर सकूँ। ६६—७०।

सर्ग १४

महातेजस्वी हनुमान् थोड़ी देर सोचकर, मन में सीता का स्मरण करके, अशोकवन की चहारदीवारी पर चढ़ गये। वहाँ फूले हुए वृक्षों को देखकर उनको बड़ा हर्ष हुआ। साल, अशोक, चंपक, उद्दालक, पुन्नाग, आम और फूली हुई लताओं से वह वाटिका शोभित थी। हनुमान् धनुष से छूटे हुए बाण के समान बड़े वेग से उस बाग़ में गये। वहाँ चाँदी और सोने के समान मनोहर वृक्षों पर चित्र-विचित्र पक्षी बोलते थे। अनेक प्रकार के मृग उसकी शोभा बढ़ाते थे, वृक्ष प्रातःकाल के सूर्य के समान शोभित थे। उनमें सुन्दर फल और फूल लगे थे। कोयल और भँवरे भी बोलते थे। लोग बड़े आनन्द से वहाँ घूमते थे। झुंड के झुंड पक्षी मनोहर बोली बोलते थे। राजपुत्री सीता की खोज में महावीर हनुमान् ने सोते हुए पक्षियों को जगा दिया। वे डर के मारे उड़े, उनके उड़ने से वृक्षों से फूल गिरने लगे। उन फूलों से ढककर वे ऐसे शोभित हुए, मानों अशोकवन में पुष्पमय पर्वत शोभित

है। वे एक वृक्ष पर चढ़ गये, और वहाँ से कूदकर दूसरे वृक्षों पर दौड़ने लगे। वृक्षों पर दौड़ते हुए ऐसे शोभित होते थे, मानों साक्षात् वसन्त रूप धारण करके दौड़ रहा है। उनके दौड़ने से वृक्ष काँपने लगे, फूल गिर पड़े, और बहुत-से वृक्ष भी टूटकर पृथिवी पर गिर गये। पृथिवी आभूषणों से भूषित स्त्री के समान शोभित हो गई। पत्ते, फल और पल्लव भी टूटकर गिर पड़े। जैसे जुआरी जुआ में वस्त्र और आभूषण आदि सब हार जाय, वैसे ही वहाँ के वृक्ष विना फूल और पत्तों के हो गये। १–१५। फल, फूल और पत्ते गिर जाने से पक्षी भी उन वृक्षों से उड़ गये। बलवान् हनुमान् ने वृक्षों को छिन्न-भिन्न करके अशोकवाटिका की शोभा नष्ट कर दी। वह वाटिका उस स्त्री के समान शोभाहीन हो गई, जिसका अंगराग छूट गया हो, जिसके केश बिखरे हुए हों, और जिसके अधर तथा कपोल क्षत-विक्षत कर दिये गये हों। जैसे प्रचंड वायु बादलों को छिन्न-भिन्न कर देती है, वैसे ही महावीर हनुमान् ने उस वाटिका की लताओं को नष्ट कर दिया। १६–२०। वहाँ मणियों की सीढ़ियों से शोभित बहुत-सी बावलियाँ थीं, उनमें निर्मल जल भरा था। भूमि सोना, चाँदी और मणियों के समान चमकती थी। मोती और मूँगे के समान बालू थी। उनकी दीवारें स्फटिक पत्थर की बनी थीं, उनके किनारों पर सोने के समान चमकते हुए विचित्र वृक्ष शोभित थे। फूले हुए कमलों से शोभित निर्मल जल में चक्रवाक पक्षी बैठे थे। हंस, सारस और कोयल आदि पक्षी बोलते थे। अशोक-वाटिका में कई नदियाँ भी बहती थीं, उनका जल अमृत के समान था। नदियों के किनारे बड़े-बड़े वृक्ष थे। २१–२५। वृक्षों पर फूली हुई लताएँ चढ़ी थीं। कहीं फूले हुए कनेर के वृक्ष और कहीं झाड़ियाँ थीं। एक पर्वत भी था। उसके शिखर बादल की घटाओं के समान बड़े ऊँचे थे। उस पर्वत से एक नदी बहती थी। वह ऐसी मालूम होती थी, मानों कोई स्त्री अपने पति से प्रणय-कलह

करके पृथिवी पर सो रही है। नदी के किनारे पर जो वृक्ष थे, उनकी डालियाँ झुककर पानी के बहाव को रोकती थीं। पानी उनमें टकराकर कुछ पीछे हट जाता था, जैसे कोई स्त्री अपने पति से क्रुद्ध होकर भागी जा रही हो और किसी के रोकने से फिर लौट आई हो। जैसे पति से कुपित होकर भागी हुई स्त्री को उसकी सौतें प्रसन्नता से देखती हैं, वैसे ही वृक्षों पर बैठे हुए पक्षी उस नदी को देख रहे थे। महावीर हनुमान् ने एक और बावली देखी। उसमें निर्मल जल भरा था, मणियों की सीढ़ियाँ थीं, उसकी बालू मोती के समान चमकती थी। उसके किनारे पर विचित्र वृक्ष थे। उन वृक्षों पर अनेक प्रकार के पक्षी बोलते थे। फूले और फले हुए वृक्ष, सुवर्णमय वेदी और विश्वकर्मा के बनाये हुए राजभवन शोभित थे। वीर हनुमान् ने उसके समीप ही एक बहुत बड़ा शीशम का वृक्ष देखा। उसमें पत्ते बहुत थे। लताएँ भी बहुत चढ़ीं थीं। उसके नीचे सुवर्ण की वेदी बनी थी। उसके समीप पर्वत, झरने और अग्नि के समान चमकते हुए सुवर्णमय वृक्ष भी थे। उन वृक्षों की प्रभा से वीर हनुमान् ने अपने को सुमेरु पर्वत के समान सुवर्णमय देखा। वृक्ष वायु के वेग से काँपते थे, घंटियों के शब्द के समान ध्वनि होती थी। सुन्दर फूलों और नये पल्लवों से शोभित सुवर्णमय वृक्षों को देखकर हनुमान् बड़े विस्मित हुए। २६—४०।

वे बहुत पत्तों से आच्छादित उस शीशम के पेड़ पर यह सोचकर चढ़ गये कि सीता दुःख से व्याकुल होंगी, रामचन्द्र के दर्शन की लालसा से इधर-उधर घूमकर यहाँ आवेंगी। मैं यहाँ अवश्य उनको देखूँगा, क्योंकि वन में घूमना उनको बहुत पसन्द है। यह रावण की अशोक-वाटिका है। चन्दन, चम्पक और बकुल के वृक्ष हैं। इस तालाब में कमल फूले हैं और पक्षी बैठे हैं। महारानी सीता वाटिका में घूमकर इस तालाब के निकट अवश्य आवेंगी। अशोक-वाटिका को तो वे जानती ही होंगी, इसलिए रामचन्द्र की चिन्ता में जब उनका

चित्त घबराता होगा तब यहाँ आती होंगी। सम्भव है कि वे प्रतिदिन यहाँ आती हों, क्योंकि वे मृग-पक्षी आदि का देखना बहुत पसन्द करती हैं। प्रातःकाल हो रहा है। सम्भव है कि प्रातःकाल की सन्ध्या करने के लिए इस निर्मल जलवाली नदी के घाट पर आवें। वे राजा की पुत्री और राजा की भार्या हैं। अतएव यह सुन्दर अशोक-वाटिका उनके आने के योग्य भी है। चन्द्रमुखी सीता यदि जीवित होंगी, तो निर्मल और शीतल जलवाली इस नदी में स्नान करने आती होंगी। इस प्रकार सीता की प्रतीक्षा करते हुए महावीर हनुमान् उस बहुत पत्तोंवाले शीशम के वृक्ष में छिपकर बैठे और चारों ओर देखने लगे। ४१—५२।

सर्ग १५

सीता की प्रतीक्षा में शीशम के वृक्ष पर बैठे हुए हनुमान् चारों ओर देख रहे थे। अशोक-वाटिका लताओं और वृक्षों से शोभित नन्दन वन के समान थी। सुगन्धित वायु चलती थी। सुन्दर मृग और पक्षी थे। बड़े ऊँचे राजमहल भी बने थे। वृक्षों पर कोयल मधुर शब्द बोलती थी। बावलियों में सुवर्णमय कमल फूले थे। स्थान-स्थान पर दिव्य आसन रक्खे थे, उन पर सुन्दर बिछौने बिछे थे। सब ऋतुओं में फूलने और फलनेवाले वृक्ष फलों और फूलों के भार से झुके थे। अशोक के वृक्ष फूले थे, वे सूर्य की किरणों के समान प्रभा फैला रहे थे। १—५। किसी-किसी वृक्ष पर सैकड़ों-हज़ारों पक्षी बैठे थे। वे वृक्ष पक्षियों से इस प्रकार ढक गये थे कि उनके पत्ते भी नहीं देख पड़ते थे। अशोक के वृक्ष फूलों के भार से झुककर पृथिवी को छू रहे थे। कर्णिकार, अशोक और पलाश के वृक्ष उस वाटिका को शोभित करते थे। पुन्नाग, सप्तपर्ण, चम्पक और उद्दालक के वृक्ष भी फूले थे। उनमें कोई सोने के रंग के, कोई अग्निवर्ण और कोई अंजन के समान

काले थे। ९–१०। उस वाटिका में अशोक के हजारों वृक्ष थे, इसी से उसका नाम अशोक-वाटिका था। वह देवताओं के नन्दन वन के समान, कुबेर के चैत्ररथ वन के समान, अथवा उन दोनों से भी बढ़कर रमणीय थी। वह अशोक-वन मानों दूसरा आकाश था, पुष्प मानों नक्षत्र थे। उसमें असंख्य पुष्प-रत्न थे, इसलिए पाँचवें समुद्र के समान था। सब ऋतुओं में फूलनेवाले वृक्ष उस वन की शोभा बढ़ाते थे। मृग और पक्षी मनोहर बोली बोलकर उसे और भी रमणीय बनाते थे। वायु पुष्पों की सुगन्ध लेकर चलती थी, वह उस वाटिका को और भी अधिक मनोहर बनाती थी। ११–१४। वीर हनुमान् ने कुछ दूर पर गन्धमादन के समान गन्धमय और हिमालय के समान ऊँचा एक देवमन्दिर देखा। वह कैलास-पर्वत के समान सफ़ेद था। चारों ओर हजारों खम्भे शोभित थे। मूँगों की सीढ़ियाँ और सुवर्णमय वेदियाँ बनी थीं। आकाश के समान निर्मल और बहुत ऊँचा देवालय मानों आकाश को छू रहा था। उसी समय महावीर हनुमान् ने राक्षसियों के बीच में, उपवास करने से दुर्बल, शोक के मारे लम्बी साँस छोड़ती हुई सीता को दुइज के चन्द्रमा के समान देखा। मलिन वस्त्र पहने थीं। सब अंग सुन्दर थे। धुएँ में छिपी अग्नि-शिखा के समान उनका रूप देखकर अनुमान किया कि यही सीता होंगी। १५–२०। वे एक पुराना पीला वस्त्र पहने थीं, किसी अंग में कोई आभूषण नहीं था। विना कमल के लक्ष्मी के समान थीं। पतिव्रता सीता दुःख से पीड़ित, शोक से सन्तप्त और अत्यन्त दुर्बल होने से केतु ग्रह से पीड़ित रोहिणी के समान मलिन थीं। उनकी आँखों से आँसू बह रहे थे, उनके चारों ओर राक्षसियाँ बैठी थीं, अतएव कुतियों के बीच में डरी हुई मृगी के समान व्याकुल थीं। वहाँ उनका कोई अपना न था। काले साँप के समान लम्बी वेणी पीठ पर होकर जाँघ पर पड़ी थी। उस वेणी से उनकी वैसी ही शोभा होती थी, जैसे शरदृऋतु में घने वृक्षों की पाँति

शोभित होती है। २१–२५। वे सुख-भोग के योग्य थीं, उन्होंने कभी दुःख नहीं उठाया था। उस समय शोक और दुःख से सन्तप्त होकर दुर्बल हो गई थीं। हनुमान् ने उनको देखकर, उनके विषय में सुनी हुई बातों से अनुमान किया कि सीता यही हैं। कामरूपी राक्षस जिस समय सीता को लेकर आकाशमार्ग से आ रहा था, तब मैंने जैसा रूप देखा था, वैसा ही रूप इस स्त्री का है। इसका मुँह चन्द्रमा के समान सुन्दर, स्तन गोल और आँखें कमल के समान हैं। यह देवी अपने तेज से सब दिशाओं को प्रकाशित करती है। इसका सौन्दर्य काम की स्त्री रति के समान है। यह चन्द्रमा की प्रभा के समान मनोहर है। २६–३०। यह नियम-व्रत का पालन करनेवाली तपस्विनी के समान पृथिवी पर बैठी है और जैसे डरी हुई साँपिन फुफकारती है, वैसे ही यह लम्बी साँस छोड़ रही है। शोक के मारे उदास है। इसकी दशा उस स्मृति के समान है जिसका अर्थ स्पष्ट न हो, उस ऐश्वर्य के समान है जो अन्याय से प्राप्त किया गया हो, उस श्रद्धा के समान है जो नास्तिकता से दूषित हो, उस सिद्धि के समान है, जिसमें विघ्न पर विघ्न पड़ रहे हों, उस कीर्ति के समान है जो अपवाद से कलुषित हो। यह पति के वियोग से व्यथित, और राक्षसियों के उपद्रव से पीड़ित है। मृगी के समान इसकी आँखें हैं, और डरी हुई मृगी के समान देखती भी है। ३१–३५। आँसुओं से इसका मुँह भीगा हुआ है। यह बार-बार बड़े दुःख से साँस छोड़ती है। इसका वस्त्र भी मैला है, मुँह उदास है, आभूषण पहनने के योग्य है, किन्तु इसके शरीर में एक भी आभूषण नहीं है। जैसे बरसात में बादलों से घिर जाने पर चन्द्रमा का प्रकाश मलिन हो जाता है, वैसे ही निरन्तर शोक करने से इसका मुँह उदास हो गया है। इस प्रकार अनुमान करके हनुमान् ने निश्चय किया कि सीता यही हैं। किन्तु उस समय संस्कारहीन होने से सीता को उन्होंने उसी प्रकार बड़ी कठिनता से पहचाना, जैसे व्याकरण के नियमों से

विरुद्ध होने पर शब्द का अर्थ बड़ी कठिनता से मालूम किया जाता है। उस राजपुत्री की विशाल आँखें और मनोहर रूप देखकर हनुमान् को विश्वास हुआ कि सीता यही हैं। ३६–४०। रामचन्द्र ने सीता के अंगों में जो आभूषण बताये थे, वे आभूषण भी इस स्त्री के अंगों में हैं। कानों के कुंडल, त्रिकर्ण और हाथों का आभूषण यद्यपि मैला हो गया है, पर रामचन्द्र ने जैसा बताया था वैसा ही है। जो आभूषण इनके अंगों में नहीं हैं, उनको ऋष्यमूक पर्वत पर इन्होंने फेंक दिया था। इनका सोने के समान चमकता हुआ दुपट्टा ऋष्यमूक पर्वत पर गिरा था। इनके फेंके हुए महामूल्य आभूषण भी उस पर्वत पर गिरे थे और बड़ी देर तक उनका शब्द होता रहा। ४१–४६। यद्यपि इनका यह वस्त्र मैला हो गया है, किन्तु उसी दुपट्टे के समान है। रामचन्द्र क्षण भर के लिए इनको नहीं भूले हैं। वे जिसके कारण करुणा, दया, शोक और काम से सन्तप्त हैं, वह सीता यही हैं। संकट के समय स्त्री की रक्षा न हो सकी, इसलिए करुणा; अपने आश्रित रहनेवाली की रक्षा न कर सके, इसलिए दया; स्त्री हर ली गई, इसलिए शोक और प्रिया का वियोग होने से काम उनके हृदय को जला रहा है।४७–५०। इस देवी का जैसा रूप-लावण्य है और इसके अंग-प्रत्यंग जैसे मनोहर हैं, उसी के अनुरूप ही रामचन्द्र का भी रूप है। इसी से विश्वास होता है कि यही सुन्दर नेत्रोंवाली रामचन्द्र की भार्या है। इनका मन रामचन्द्र में और रामचन्द्र का मन इनमें लगा है, इसी से यह और रामचन्द्र आज तक जीवित हैं। किन्तु इनके विरह में रामचन्द्र जीवित हैं, यह उनका बड़ा कठिन काम है। सीता को देखकर हनुमान् बड़े प्रसन्न हुए और मन ही मन रामचन्द्र के पास पहुँचकर उनकी प्रशंसा करने लगे। ५१–५४।

सर्ग १६

महावीर हनुमान् ने रामचन्द्र और सीता की प्रशंसा की, और थोड़ी देर चिन्ता करके इस प्रकार विलाप करने लगे—सीता वीर लक्ष्मण के बड़े भाई की स्त्री हैं, वे इस प्रकार का दुःख उठा रही हैं, यह काल का ही प्रभाव है, उसे कोई हटा नहीं सकता। राम-लक्ष्मण का पराक्रम यह जानती हैं, इसी से उसी प्रकार गम्भीरभाव से दिन काट रही हैं, जैसे बरसात में गंगाजी गम्भीरता से बहती हैं। इनका स्वभाव, आयु, चरित्र, कुल और लक्षण रामचन्द्र के अनुरूप हैं, अतएव रामचन्द्र और सीता में परस्पर प्रेम का होना उचित ही है।१—५। इन्हीं विशालनयनी सीता के लिए महाबली बालि, और रावण के समान बली कबन्ध मारा गया। देवराज इन्द्र ने जैसे शम्बरासुर का विनाश किया था, वैसे ही रामचन्द्र ने इन्हीं के लिए महापराक्रमी विराध को मारा। अग्नि की शिखा के समान चमकते हुए बाणों से चौदह हज़ार राक्षस इन्हीं के लिए जनस्थान में मारे गये। त्रिशिरा, खर और महातेजस्वी दूषण को भी रामचन्द्र ने इन्हीं के लिए मार डाला। ६—१०। इन्हीं के लिए महापराक्रमी बालि का वध हुआ और सुग्रीव को राज्य मिला। मैं भी इन्हीं के लिए समुद्र को पार करके यहाँ आया और लंका को देखा। इनके निमित्त यदि रामचन्द्र समूची पृथिवी को उलट दें, तो भी अनुचित नहीं है। यदि तीनों लोकों के राज्य से इनकी तुलना की जाय तो वह भी इनके समान नहीं हो सकता। ११—१४। मिथिलानरेश धर्मात्मा, महात्मा जनक की पुत्री, पतिव्रता सीता, यज्ञभूमि को हल से जोतने पर पृथिवी से निकली थीं। ये महापराक्रमी दशरथ की ज्येष्ठ पुत्रबधू हैं। धर्मज्ञ, कृतज्ञ, मनस्वी रामचन्द्र की प्रिय भार्या हैं। इस समय राक्षसियों के वश में हैं। पति के स्नेह से, सब प्रकार के भोग छोड़कर, दुःखों का ख़याल न करके निर्जन वन को चली आई हैं। वहाँ पति की सेवा में मन लगा

कर फल-मूल खाने में ही सन्तुष्ट रहतीं और वन को घर के समान समझती थीं। १५—२०। इन्होंने कभी दुःख नहीं उठाया है। सदा सुख-भोग में रही हैं, किन्तु इस समय असह्य दुःख उठाती हैं। जैसे प्यासा मनुष्य जलाशय को ढूँढ़ता है, वैसे ही रामचन्द्र इनको देखने के लिए उत्सुक हैं। जैसे छूटा हुआ राज्य फिर मिलने पर राजा प्रसन्न होता है, वैसे ही इनको पाकर रामचन्द्र प्रसन्न होंगे। यह सुख-भोग से वंचित हैं, परिवार भी छूट गया है, तो भी रामचन्द्र के मिलने की आशा से जीती हैं। यह न तो राक्षसियों की ओर देखती हैं और न फूले-फले वृक्षों की ओर इनका ध्यान जाता है। मन में रामचन्द्र का ही स्मरण करती हैं। २१—२५। स्त्रियों के लिए पति सब आभूषणों से बढ़कर है, इसी से रूपवती होने पर भी रामचन्द्र के वियोग के कारण ये शोभित नहीं होतीं। रामचन्द्र इनके विरह में जीवित हैं, यह उनका बहुत कठिन काम है। सुख के योग्य कमलनयनी सीता को इस दुःख में देखकर मुझे भी बड़ा दुःख हुआ। २६—२८। क्षमा करने में ये पृथिवी के समान हैं। जिनकी रक्षा राम-लक्ष्मण करते थे, उनको वृक्ष के नीचे भयंकरी राक्षसी घेरे बैठी हैं। दुःख पर दुःख मिलने से इनका सौन्दर्य वैसे ही नष्ट हो गया है, जैसे पाला पड़ने पर कमलिनी मुरझा जाती है। प्रातःकाल चकवा से न मिलने पर चकई की जो दशा होती है, वही दशा इस समय सीता की है। २९—३०। फूलों के भार से झुका हुआ, प्रचंड सूर्य के समान यह अशोक सीता का शोक और भी बढ़ा रहा है। चन्द्रमा भी अपनी किरणें फैलाकर, इनका शोक बढ़ाता है। शीशम के वृक्ष पर बैठे हुए हनुमान् इसी प्रकार की बातें सोचते थे। उनको यह निश्चय हो गया कि सीता यही हैं। ३१—३२।

सर्ग १७

निर्मल चन्द्रमा आकाश में उदय हुआ, जैसे जलाशय में पानी के

ऊपर हंस शोभित होता है। वह मानों सीता को देखने में हनुमान् की सहायता करने के लिए अपनी निर्मल प्रभा फैलाकर प्रकट हुआ। हनुमान् ने देखा, जैसे भारी बोझ होने से नाव पानी में डूब जाती है, वैसे ही अत्यन्त शोक से पीड़ित सीता शोक के समुद्र में डूबी जा रही हैं। उनके समीप भयंकरी राक्षसियाँ बैठी थीं। उनमें किसी के एक ही कान, किसी के एक ही आँख, किसी के कान बड़े लम्बे और किसी के कान ही नहीं थे। किसी के कान भाला के समान और किसी की नाक माथे पर थी।१—५। किसी का सिर बहुत बड़ा, किसी की गर्दन बहुत लम्बी और पतली, किसी के सिर में बहुत थोड़े बाल और किसी के एक भी बाल न था। किसी के सिर के बाल कम्बल के समान, किसी के कान बहुत लम्बे और किसी का सिर बहुत लम्बा था। किसी के स्तन बड़े लम्बे, किसी का पेट बहुत बड़ा और किसी की ठुड्ढी बहुत लम्बी थी। किसी के होंठ ठुड्ढी में लगे, किसी का मुँह बड़ा लम्बा और किसी के घुटने लम्बे थे। कोई कुबड़ी, कोई बौनी और कोई बड़ी लम्बी थी। किसी का मुँह बड़ा विकराल, कोई मुँहटेढ़ी, किसी की आँखें पीली, किसी का समूचा शरीर पीला, कोई कोयले के समान काली और कोई कर्कशा थी। कोई शूल, कोई मुद्गर, कोई कुलिश लिये थीं। किसी-किसी के मुँह सुअर, हिरन, बाघ, भैंस, बकरी और सियारिन के-से थे। किसी के पैर ऊँट के जैसे, किसी के हाथी और घोड़े के समान थे। किसी का सिर छाती में लगा था। ६—१०। किसी के एक ही हाथ, और किसी के एक ही पैर था। किसी-किसी के कान गधे, घोड़े, गाय, हाथी और सिंह के जैसे थे। किसी की नाक लम्बी, किसी की टेढ़ी और किसी के नाक ही न थी। किसी की नाक हाथी की सूँड़ के समान और किसी की नाक के छेद माथे पर थे। किसी के पैर हाथी के पैर के समान, किसी के उससे भी लम्बे और मोटे, किसी के पैर गाय के जैसे थे। किसी के पैरों में बालों का गुच्छा था, किसी का सिर,

किसी की गर्दन, किसी की आँखें, किसी के स्तन, किसी का पेट, किसी का मुँह और किसी के होंठ बहुत बड़े थे। किसी की जीभ लम्बी थी। किसी का ललाट और किसी के नख बहुत बड़े थे। किसी के सिर के बाल बहुत कड़े और धुएँ के रंग के थे। वे भयंकरी राक्षसियाँ मदिरा पिये थीं। मांस, मदिरा और रुधिर उनको बहुत प्रिय था। किसी के शरीर में मांस और रुधिर लगा भी था। महावीर हनुमान् शीशम के वृक्ष में छिपे उन भयंकरी राक्षसियों को देखते थे। ११—१७। उसी वृक्ष के नीचे सीता बैठी थीं। उनके केश मैले और बिखरे थे। वे शोक और दुःख के मारे बहुत उदास थीं। जैसे पुण्य क्षीण होने पर तारा पृथिवी में गिर पड़ी हो, वैसे ही सुन्दरी सीता वृक्ष के नीचे बैठी थीं। १८—२०। विशेष आभूषण न होने पर भी उनका पति-प्रेम ही उनकी शोभा बढ़ाता था। वहाँ उनका कोई न था। जैसे हथिनी सिंह के वश में पड़ गई हो, वैसे ही वे रावण की अशोक-वाटिका में अवरुद्ध थीं। वे शरदृतु में बादलों से घिरे हुए चन्द्रमा के समान शोभित थीं। उनके शरीर में मैल लगा था, इसलिए कीचड़ लगी हुई कमलिनी के समान हो गई थीं। हनुमान् ने विना फूल की लता के समान उनको देखा। उनके शरीर में मैल लगा है, आभूषण कोई नहीं हैं, उनकी शोभा नष्ट हो गई है, वे एक मैला वस्त्र पहने हैं, उनका मुँह उदास है, किन्तु पति के पराक्रम पर विश्वास होने से उनका मन निर्बल नहीं है। वे डरी हुई मृगी के समान देखती हैं और लम्बी साँसों से वृक्षों को मानों जला रही हैं। वे शोक की साक्षात मूर्ति हैं। उनके हृदय में शोक की तरंगें उठती हैं। सीता को देखकर हनुमान् को बड़ा हर्ष हुआ। आँखों से हर्ष के आँसू निकल आये। उन्होंने मन में रामचन्द्र को प्रणाम किया और उस वृक्ष पर पत्तों में छिपकर बैठे। २१—३२।

सर्ग १८

जब थोड़ी रात बाक़ी रही तब वेदविद् ब्रह्मराक्षस वेदपाठ करने

लगे। मंगल बाजे बजे और मंगल गान होने लगा। गाने-बजाने का शब्द सुनकर महापराक्रमी रावण भी जागा। उसकी माला टूट गई थी और वस्त्र भी खिसक गया था। वह जागते ही सीता की चिन्ता करने लगा। उसका मन सीता पर बहुत आसक्त था। उस समय काम के वेग से अधीर हो गया। १—५। वह शय्या से उठकर अच्छे वस्त्र और आभूषण पहनकर अशोक-वाटिका को चला। मार्ग में फूले-फले वृक्ष और सरोवर देखता हुआ अशोक वन में आया। वहाँ वृक्षों के नीचे फल और फूल पड़े थे, मृग घूमते थे, पक्षी बोलते थे। वह काम के वेग से बिह्वल था। उसके पीछे बहुत-सी स्त्रियाँ थीं, अप्सराओं के साथ देवराज इन्द्र के समान वहाँ आया। ६—१०। कोई स्त्री हाथ में सोने का दीपक लिये थी, कोई चवँर, और कोई पंखा लिये थी। कोई पानी से भरा सोने का कलस लिये आगे चलती थी। कोई सुवर्णमय आसन लिये उसके पीछे चली आती थी। किसी के हाथ में मदिरा से भरा हुआ रत्न का पात्र था। कोई स्त्री राजहंस के समान श्वेत वर्ण, पूर्ण चन्द्रमा के आकार का छत्र लिये थी जिसमें सोने का डंडा लगा था। स्त्रियाँ नशा के उतार में ऊँघती हुई रावण के पीछे चली आती थीं, जैसे बादल के साथ बिजली चमकती हुई चलती है। ११—१५। उनके हार और केयूर आदि आभूषण, स्थान से हट गये थे। अंगराग छूट गया था, केश-पाश भी छूट गये थे। आँखें एक तो निद्रा के मारे, दूसरे मदिरा के नशे से अलसाई हुई थीं। उनके मुख-कमल पसीने से भीगे हुए थे, उनकी मालाएँ और वेणी हिल रही थीं। वे सुन्दरी स्त्रियाँ सम्मान और प्रेम के साथ रावण के पीछे आ रही थीं। १६—१८। उनका स्वामी महापराक्रमी पापी रावण सीता पर आसक्त था। वह धीरे-धीरे अशोक-वाटिका के द्वार पर आया। महावीर हनुमान् ने उन स्त्रियों के नूपुर और मेखला का शब्द सुना और महापराक्रमी राक्षसराज को देखा। उसके आगे सुगन्धित तेल

से भरा हुआ दीपक लिये कुछ स्त्रियाँ आती थीं। हनुमान् ने दीपकों के प्रकाश में रावण को देखा। काम के वेग से, मदिरा के नशे से, और दर्प के मारे उसकी विशाल आँखें लाल हो गई थीं। वह साक्षात् कामदेव के समान था, उसके हाथ में धनुष नहीं था। १६—२३। दूध के फेन के समान सफ़ेद उत्तम वस्त्र पहने था, और फूलों की माला सीधी करता हुआ चला आता था। वह जितना ही समीप आता था उतना ही हनुमान् वृक्ष के पत्तों में छिपते जाते थे। यह कौन आ रहा है, यह जानने के लिए उत्सुक थे। २४—२५। महायशस्वी राक्षसराज सुन्दरी स्त्रियों के बीच में था। अशोक-वाटिका के द्वार पर शंकुकर्ण नाम का एक पराक्रमी राक्षस द्वारपाल था। उसने रावण को आते हुए देखा और कहा कि ताराओं के बीच में चन्द्रमा के समान महातेजस्वी राक्षसराज आ रहे हैं। राक्षसराज का नाम सुनकर हनुमान् ने सोचा कि यह वही है जिसको मैंने राजभवन में सोते हुए देखा था। महातेजस्वी हनुमान् कूदकर वृक्ष की ऊँची शाखा पर चले गये। २६—३०। वे उसका तेज न सह सके और बहुत पत्तोंवाली शाखा में छिप रहे। रावण सर्वांगसुन्दरी विशाल-नयनी सीता को देखने के लिए उनके समीप आया। ३१—३२।

सर्ग १९

राजपुत्री सीता राक्षसराज रावण को देखकर डर के मारे वैसे ही काँपने लगीं, जैसे वायु के वेग से केले का वृक्ष काँपता है। जाँघों से पेट और हाथों से दोनों स्तन मूँदकर रोने लगीं। दशानन रावण उनके पास आया, और राक्षसियों के बीच में दुःख से पीड़ित, समुद्र में डूबती हुई नाव के समान उनको देखा। वे पृथिवी पर दुःखित बैठी थीं, मानों वृक्ष की शाखा टूटकर पृथिवी पर गिरी हो। १—५।

उनकी देह में मैल लगा था। उनके शरीर में वेशभूषा नहीं था, कीचड़ लगी हुई कमलिनी के समान शोभित नहीं होती थीं। ६। वे मन-रूपी रथ में संकल्परूप घोड़े जोतकर राजसिंह रामचन्द्र के पास जा रही थीं। ७। उनका मन रामचन्द्र में लगा था, इसलिए रोती थीं, उनका शरीर दुर्बल हो गया था। रामचन्द्र के वियोग में, शोक में डूबी रहती थीं। दुःख से छुटकारा पाने का कोई उपाय नहीं देखती थीं। जैसे साँपिन मन्त्र से रोक दी गई हो, वही दशा सीता की थी। वे धूमकेतु से पीड़ित रोहिणी के समान दुःखित थीं। अच्छे कुल में उनका ज़न्म हुआ था और अच्छे घराने में ब्याही गई थीं, किन्तु उस समय उनकी ऐसी दशा थी, जैसी नीच कुल में उत्पन्न स्त्री की हो। ८—१०। उस समय निन्दित कीर्ति के समान, अपमानित श्रद्धा के समान, क्षीण बुद्धि के समान, विनष्ट आशा के समान, विध्वस्त देवालय के समान, अपमानित आज्ञा के समान, उत्पात से प्रज्वलित दिशा के समान, नष्ट की हुई पूजा के समान, मुरझाई हुई कमलिनी के समान, विना सेनापति की सेना के समान, बादलों से घिरी हुई चन्द्रमा की प्रभा के समान, थोड़े जलवाली नदी के समान, पतित से दूषित की हुई यज्ञवेदी के समान, और बुझती हुई आग के समान, राजपुत्री सीता की दशा शोचनीय थी। ११—१४। हाथी की सूँड़ से दलित और भँवरों से शून्य कमलिनी के समान थीं। पति के शोक में व्याकुल रहने से सूखी हुई नदी के समान सूख गई थीं। तेल और उबटन आदि न लगाने से कृष्णपक्ष की रात्रि के समान मलिन हो गई थीं। १५—१६। रत्नमय घरों में रहने योग्य सुकुमारी सीता शोक से सन्तप्त थीं, शीघ्र ही उखाड़ी हुई कमलनाल के समान मुरझा गई थीं। जैसे झुण्ड से बिछुड़ी हुई हथिनी खम्भे में बाँध दी गई हो, वैसे ही शोक से व्याकुल होने के कारण लम्बी साँसें छोड़ रही थीं। १७—१८। लम्बी वेणी उनकी पीठ पर, शरदृऋतु में वृक्षों की पाँति के समान शोभित थी।

उपवास, शोक, चिन्ता और भय से उनका शरीर दुर्बल हो गया था। वे तपस्विनी की तरह रहती थीं। १९–२०। मानों दुःख से व्याकुल होकर, हाथ जोड़कर, इष्ट देवता से रावण के वध की प्रार्थना करती थीं।२१। क्रोध से आँखें लाल थीं, प्रान्त भाग कुछ सफ़ेद थे। रावण को देखकर उनकी आँखों में आँसू भर आये और इधर-उधर देखने लगीं। रावण अपने विनाश के निमित्त सीता को प्रलोभन देने के लिए उनके पास आया। २२।

सर्ग २०

राक्षसराज रावण राक्षसियों से घिरी हुई तपस्विनी सीता से मधुर वचन बोला—हे सुन्दरी, तुमने मुझे देखकर स्तन और पेट मूँद लिया है, इससे जान पड़ता है कि तुम डर के मारे मुझे देखना नहीं चाहतीं।१–२। हे प्रिये, तुम मेरा सम्मान करो, मैं तुमको हृदय से चाहता हूँ। हे विशाल-नयनी, यहाँ कोई मनुष्य या कामरूपी राक्षस नहीं है, अतएव तुम भय छोड़ दो। हे भीरु, यद्यपि दूसरों की स्त्री हर लेना और परस्त्री-गमन करना राक्षसों का धर्म है, तो भी, तुम्हारी इच्छा न देखकर मैं तुम्हारा स्पर्श नहीं करता, किन्तु काम मेरे शरीर को जलाये देता है। ३–६। हे देवि, तुम भय छोड़ दो। हे प्रिये, विश्वास करके मुझसे प्रेम करो। शोक करना तुमको उचित नहीं है। पृथिवी पर सोना, चिन्ता करना, मैला कपड़ा पहनना और उपवास करना, ये काम तुम्हारे योग्य नहीं हैं। ७–८। तुम मेरी भार्या बनो, विचित्र माला, चन्दन, अगुरु, उत्तम वस्त्र और महामूल्य आभूषण धारण करो। उत्तम आसन, शय्या, नाच और गाने-बजाने का सुख भोग करो। ९–१०। तुम स्त्रियों में श्रेष्ठ हो, इसलिए तुमको ऐसी दुर्दशा में रहना उचित नहीं है। मुझे पाकर भी तुम्हारे अंगों में आभूषण का न होना बड़े खेद की बात है। तुम्हारी युवा अवस्था बीती जा रही है। जैसे नदी की धारा लौटकर

नहीं आती, वही दशा जवानी की भी है। ११–१२। जान पड़ता है कि विधाता ने तुम्हारे रूप की रचना करके अब इस काम को छोड़ दिया है, क्योंकि तुम्हारे समान सुन्दरी स्त्री संसार में नहीं है। १३। हे वैदेही, तुम रूपवती और युवती हो, तुमको पाकर पितामह ब्रह्मा का भी मन स्थिर नहीं रह सकता, तो फिर दूसरे पुरुष के लिए कहना ही क्या है। १४। हे चन्द्रमुखी, मैं तुम्हारा जो अंग देखता हूँ, उसी में मेरी आँखें गड़ जाती हैं। १५। हे मैथिली, तुम मेरी भार्या बनो, यह मोह छोड़ दो। मेरे अन्तःपुर में जितनी स्त्रियाँ हैं, उनकी स्वामिनी बनो। हे भीरु, मैं तीनों लोकों से जो रत्न हर लाया हूँ, वे सब और यह राज्य तुम्हारा है। मैं तुम्हारे लिए समूची पृथिवी जीतकर तुम्हारे पिता को दे दूँगा। संसार में मेरे समान पराक्रमी दूसरा पुरुष नहीं है, जो मुझसे युद्ध कर सके। मैंने कई बार देवताओं और दानवों को भी युद्ध में परास्त किया है, उनकी ध्वजाएँ तोड़ डाली हैं। वे युद्ध में मेरे सामने टिक नहीं सकते। १६–२०। तुम मुझसे प्रेम करो, और मैं उत्तम आभूषणों से भूषित करके तुम्हारा सुन्दर रूप देखूँ। २१–२२। हे भीरु, तुम इच्छानुसार सुख भोग करो, विहार करो और जितना चाहो, उतना धन दान करो। मेरा विश्वास करके मुझसे भोग-विलास की वस्तुएँ माँगो। मुझे आज्ञा दो। मुझसे प्रेम करके अभीष्ट प्रार्थना करोगी तो मैं तुम्हारे सुहृदों का भी पालन करूँगा। २३–२४। हे कल्याणि, हे यशस्विनी, तुम मेरी समृद्धि देखो। बल्कल वस्त्र पहनने वाले रामचन्द्र को लेकर क्या करोगी। २५। फिर उनके विजयी होने की कोई आशा भी तो नहीं है। वे वनवासी, श्रीहीन, व्रतचारी हैं, पृथिवी पर सोते हैं। अब उनके जीवित होने में भी सन्देह है। २६। हे वैदेही, यदि वे जीवित भी हों, तो भी जैसे काले बादलों में छिपी हुई चन्द्रमा की प्रभा दिखाई नहीं देती, वैसे ही वे तुमको न देख सकेंगे। २७। जैसे हिरण्यकशिपु ने इन्द्र की भार्या छीन ली थी, वैसे ही मैं तुमको हर

लाया हूँ। अब वे मेरे हाथ से तुमको नहीं पा सकते। २८। हे सुन्दरी, जिस प्रकार गरुड़ साँप को पकड़ लेता है, वैसे ही तुमने मेरा मन अपने वश में कर लिया। २९। यद्यपि तुम एक पुराना रेशमी वस्त्र पहने हो, दुबली भी हो गई हो, तुम्हारे शरीर में कोई वेशभूषा नहीं है तो भी तुमको देखकर अपनी स्त्रियों में मेरा मन नहीं लगता। ३०। हे देवि, मेरे अन्तःपुर में जितनी सुन्दरी और गुणवती स्त्रियाँ हैं, उन सब पर तुम्हारा प्रभुत्व होगा। ३१। वे उसी प्रकार तुम्हारी सेवा करेंगी, जैसे अप्सराएँ लक्ष्मी की सेवा करती हैं। ३२। हे सुन्दरी, तुम मेरे साथ रहकर कुबेर का सब धन-रत्न और तीनों लोकों का सुख भोगो। ३३। हे देवि! धन, बल, तपस्या, पराक्रम, तेज और यश में, कहाँ तक कहें, किसी बात में भी रामचन्द्र मेरी बराबरी नहीं कर सकते। तुम मदिरा पियो, विहार करो, विविध भोग भोगो और जितना चाहो, उतना धन दान करो। हे प्रिये, मैं तुम्हारी और तुम्हारे भाई-बन्धुओं की भी सब इच्छाएँ पूरी करूँगा। ३४–३५। हे भीरु, तुम सोने का हार पहनकर, मेरे साथ समुद्र के तट पर, भँवरे गूँजते हुए फूले वृक्षों से शोभित उपवनों में विहार करो। ३६।

सर्ग २१

भयानक रावण की ये बातें सुनकर तपस्विनी सीता डर के मारे काँपने लगीं। वे बड़े दुःख से रामचन्द्र का स्मरण करने लगीं, अपने और उसके बीच में एक तृण रखकर बोलीं—रावण, तुम मुझसे अपना मन हटाकर अपनी स्त्रियों में लगाओ। जैसे पापी मनुष्य सिद्धि नहीं पाता, वैसे ही तुम मुझे नहीं पा सकते। मैं पतिव्रता हूँ, यह निन्दित काम कदापि न करूँगी। १–४। मेरा जन्म अच्छे कुल में हुआ है, और अच्छे वंश में ब्याही गई हूँ। यह कहकर सीता ने मुँह फेर लिया और रावण की ओर पीठ करके कहा—मैं तुम्हारी भार्या नहीं हो सकती। मैं पतिव्रता हूँ। ५–६।

तुम धर्म की ओर देखो, सज्जनों का आचरण करो। जैसे अपनी स्त्रियों को समझते हो, वैसे ही पराई स्त्रियों की भी रक्षा करो। ७। हे निशाचर, तुम अपनी स्त्रियों के साथ विहार करो और राक्षसों में आदर्श बनो। जो अपनी स्त्रियों में सन्तुष्ट नहीं रहता, वह चंचल-बुद्धि मूर्ख पुरुष पराई स्त्रियों से अपमानित होता है। ८। तुम्हारे दुराचार और तुम्हारी विपरीत-बुद्धि देखकर जान पड़ता है कि यहाँ सज्जन पुरुष नहीं हैं। अथवा हैं भी, तो तुम उनका आदर नहीं करते। दूरदर्शी पुरुष यदि तुमको समझाते भी होंगे, तो तुम राक्षसकुल के विनाश के लिए उनकी बात न मानते होगे। तुम मिथ्याभिमानी हो, किसी का उपदेश क्यों मानोगे। ९—१०। तुम्हारे समान अन्यायी राजा को पाकर समृद्धिशाली राष्ट्र और नगर नष्ट हो जाते हैं। रत्नों से परिपूर्ण यह लंका भी तुम्हारे अपराध से शीघ्र ही नष्ट हो जायगी। ११—१२। हे रावण, अदूरदर्शी पापी पुरुष अपने कर्मों के दोष से मारा जाता है, उस पापी के विनाश होने पर सबको आनन्द होता है। लोग कहते हैं कि इस दुष्ट को कर्मों का फल मिला। १३—१४। ऐश्वर्य और धन का प्रलोभन देकर तुम मुझे नहीं लुभा सकते। जैसे सूर्य की प्रभा सूर्य के ही साथ रहती है, वैसे ही मैं रामचन्द्र के सिवा अन्य पुरुष को स्वीकार न करूँगी। १५। उन लोकनाथ की सुन्दर भुजा को सिरहाने रखकर अब मैं किसी अन्य पुरुष की भुजा पर सिर रखकर शयन न करूँगी। १६। जैसे व्रतधारी ब्राह्मण का ब्रह्मविद्या के ऊपर, वैसे ही रामचन्द्र का मेरे ऊपर अधिकार है। १७। हे रावण, जैसे बिछुड़ी हुई हथिनी हाथी से मिलकर प्रसन्न होती है, वैसे ही तुम मुझ दुःखिनी को रामचन्द्र से मिलाकर प्रसन्न करो। १८। यदि तुम लंका की, और सपरिवार अपनी रक्षा करना चाहते हो तो पुरुषश्रेष्ठ रामचन्द्र के साथ मित्रता करो। धर्मज्ञ रामचन्द्र शरणागत की रक्षा करते हैं। उनसे मित्रता करने से ही जीवित बच सकते हो। १९—२०। रामचन्द्र को प्रसन्न करो और

मुझे उनको सौंप दो। यदि अपना कल्याण चाहते हो तो नम्रता के साथ ऐसा करो, नहीं तो बड़ी विपत्ति उठाओगे। इन्द्र के वज्र से चाहे बच भी जाओ, यमराज चाहे कुछ दिन बचा भी रक्खें, किन्तु लोकनाथ रामचन्द्र को कुपित करके जीवित नहीं बचोगे। शीघ्र ही वज्र के समान रामचन्द्र के धनुष का शब्द सुनोगे। राम और लक्ष्मण के नाम से अंकित, साँपों के समान फुफकारते हुए तीक्ष्ण बाण शीघ्र ही इस लंका पर बरसेंगे और राक्षसों का संहार करेंगे। २१—२६। जैसे गरुड़ साँपों को लेकर उड़ जाते हैं, वैसे ही रामचन्द्र के बाण राक्षसों को उड़ा देंगे, और जैसे विष्णु भगवान् ने वामन का रूप धारण करके असुरों के हाथ से लक्ष्मी का उद्धार किया था, वैसे ही शत्रुनाशन रामचन्द्र तुम्हारे हाथ से मेरा उद्धार करेंगे। हे राक्षस, तुम मुझे बलपूर्वक नहीं लाये हो। रामचन्द्र ने जनस्थान के सब राक्षसों को जब मार डाला, तब तुम उनसे युद्ध करने में अपने को अशक्त समझकर मुझे चुरा लाये हो। रामचन्द्र और लक्ष्मण उस समय आश्रम पर नहीं थे। आश्रम को शून्य पाकर तुम मुझे हर लाये। २७—३०। जैसे कुत्ता बाघ की गन्ध पाकर भाग जाता है, वैसे ही तुम राम-लक्ष्मण के भय से भाग जाओगे। ३१। और यदि उनसे युद्ध करोगे तो जैसे वृत्रासुर को इन्द्र ने मार डाला था, वैसे ही तुम्हारा भी विनाश होगा। जैसे क्षुद्र जलाशय सूर्य की किरणों से शीघ्र ही सूख जाते हैं, वैसे ही तुम राम-लक्ष्मण के बाणों से शीघ्र ही मारे जाओगे। चाहे कैलास पर्वत पर भाग जाओ, चाहे वरुणलोक में छिपो, किन्तु रामचन्द्र के बाणों से वैसे ही तुम्हारा विनाश होगा जैसे वज्र के गिरने से वृक्ष टूट जाता है। ३२—३४।

सर्ग २२

सीता की यह कठोर बातें सुनकर राक्षसराज रावण गरजकर बोला— पुरुष स्त्री का जितना आदर करता है, स्त्री उतना ही उससे प्रेम करती है।

किन्तु मैं तुमसे जितने ही प्रिय वचन करता हूँ, तुम उतनी ही मेरी निन्दा करती जाती हो। १—२। फिर भी तुम्हारे ऊपर मुझे क्रोध नहीं आता। जैसे सारथि मार्ग से बाहर जानेवाले घोड़े को रोक लेता है, वैसे ही तुम्हारे प्रति उत्पन्न हुआ काम मेरा क्रोध शान्त कर देता है। ३। काम प्राणियों का शत्रु है, वह जिसे पीड़ित करता है, वह क्रोधी होने पर भी दया और स्नेह का रूप बन जाता है। ४। हे सुन्दरी, इसी कारण मैं तुम्हारा वध नहीं करता, किन्तु तुम अनादर करने और मार डालने के योग्य हो। ५। तुम जैसी निठुरता से कठोर वचन कहती हो, उनको सुनकर तुम्हारा वध करना ही उचित है। क्रोध से रावण की आँखें लाल हो गईं, वह सीता को धमकाकर बोला—मैं दो महीने का समय देता हूँ, यदि दो महीने के अन्दर मेरी शय्या पर न आओगी, मुझे अपना पति न बनाओगी, तो रसोइयाँ प्रातःकाल के भोजन के लिए तुम्हारे शरीर के टुकड़े-टुकड़े कर डालेंगे। ६—६। रावण की यह बातें सुनकर देवताओं और गन्धर्वों की स्त्रियों को बड़ा दुःख हुआ। किसी-किसी ने होंठ, आँख और मुँह के संकेत से सीता को आश्वासन दिया। सीता को पतिव्रत-धर्म का बल था, वे फिर निडर होकर कहने लगीं—जान पड़ता है कि लंका में तुम्हारा हितैषी कोई नहीं है, यदि होता तो तुमको इस निन्दित काम से अवश्य रोकता। १०—१३। मैं इन्द्र की पत्नी शची के समान धर्मात्मा रामचन्द्र की धर्मपत्नी हूँ। तुम्हारे सिवा संसार में ऐसा दुरात्मा पुरुष कोई न होगा, जो मुझसे ऐसी बातें कहे। १४। रे अधम राक्षस, महातेजस्वी रामचन्द्र की भार्या को ऐसी बातें कहता है! तीनों लोक में कहीं भी भाग जाने से तू जीवित न बचेगा। १५। रे नीच, जैसे ख़रगोश हाथी से युद्ध करना चाहे, वैसे ही तू रामचन्द्र से युद्ध करने का मिथ्या साहस करता है। जब तक रामचन्द्र तुझे नहीं देखते तब तक उनकी निन्दा कर ले। हाय, तू मुझे कुदृष्टि से देखता है, और बिल्ली की जैसी तेरी आँखें पृथिवी पर गिर नहीं पड़तीं! १६—१८। रे पापी,

मैं धर्मात्मा रामचन्द्र की पत्नी और दशरथ की पुत्रवधू हूँ। मुझसे ऐसी बातें कहते हुए तेरी जीभ कटकर क्यों नहीं गिर पड़ती! १६। रे दशानन, मुझमें इतना तेज है कि यदि मैं चाहूँ तो तुझे अभी भस्म कर दूँ, पर एक तो रामचन्द्र की आज्ञा नहीं है, दूसरे मैं तपस्या का व्रत पालन कर रही हूँ। इसी कारण मैं तुझे भस्म नहीं करती। २०। यदि रामचन्द्र आश्रम पर होते तो तू मुझे नहीं ला सकता था, किन्तु विधाता ने तेरे वध के लिए ऐसा उपाय रचा है। तू पराक्रमी और कुबेर का भाई है, फिर क्यों मायारूपी मृग के द्वारा रामचन्द्र को आश्रम से हटाकर मुझे चुरा लाया। २१—२२।

सीता की बातें सुनकर रावण बड़े क्रोध से उनको देखने लगा। वह बरसात के बादलों के समान काला था। उसकी गर्दन और भुजाएँ लम्बी और मोटी थीं। सिंह के समान वेग से चलता था। उसकी आँखें और जीभ का अग्रभाग चमकता था। उसके मुकुट हिलते थे, गले में विचित्र माला, अंगों में अनेक प्रकार के लेपन और आभूषण धारण किये था। कमर में मोटी मेखला थी, जिससे वह वैसा ही जान पड़ता था जैसे समुद्र मथने के समय मन्दर पर्वत शेष नाग से बाँधा गया था। २३—२६। उसकी भुजाएँ मन्दर पर्वत के शिखर के समान थीं। कानों में प्रातःकाल के सूर्य के समान चमकते हुए कुंडल पहने था। उनसे ऐसा मालूम होता था, मानों पर्वत के ऊपर अशोक फूला है। वेश-भूषा से कल्पवृक्ष और मूर्तिमान् वसन्तऋतु के समान था, किन्तु श्मशान के वृक्ष के समान भयानक था। वह क्रोध से आँखें लाल करके सीता की ओर देखकर साँप की तरह लम्बी साँस छोड़कर बोला—तुम जिस व्रत का पालन करती हो, वह निरर्थक और नीति के विरुद्ध है। जैसे सूर्य अन्धकार का नाश करते हैं, वैसे ही मैं आज तुम्हारा विनाश करूँगा। २७—३१। सीता से यह कहकर उसने राक्षसियों की ओर देखा। उन राक्षसियों में किसी के कान लम्बे, किसी के गाय के कान के समान, किसी के हथिनी के कान

के समान, और किसी के कान ही न थे। किसी-किसी के पैर हथिनी, घोड़ी और गाय के जैसे थे और किसी के बहुत छोटे थे। किसी के एक आँख, किसी के एक पैर, किसी के बहुत मोटे दो पैर, और किसी के पैर ही न थे। किसी की गर्दन लम्बी और सिर बहुत बड़ा, किसी के स्तन और पेट बहुत भारी, किसी की आँखें, मुँह, जीभ और नख बहुत बड़े थे। किसी के नाक नहीं थी, किसी-किसी का मुँह सिंह, गाय और सुअर का जैसा था। रावण उन राक्षसियों से बोला—सीता जिस उपाय से मेरे वश में आवें वह उपाय शीघ्र करो। समझाने, धमकाने, धन-रत्न देने, फुसलाने, अथवा दंड देने से, जिस उपाय से हो सके, इनको हमारे अनुकूल करो। २२—२७। राक्षसियों को यह आज्ञा देकर, काम और क्रोध के वश रावण सीता को डाटने लगा। तब धान्यमालिनी नाम की राक्षसी ने उसका हाथ पकड़कर कहा—महाराज, आप मेरे साथ विहार कीजिए। यह मनुष्य है, उदास और मलिन भी रहती है, इसे लेकर क्या कीजिएगा। आपके बाहुबल से संचित भोग-विलास की उत्तम सामग्री इसे नहीं बदी है। इसके भाग्य में सुख-भोग नहीं लिखा है। जो स्त्री जिसे नहीं चाहती, उससे प्रेम करनेवाला पुरुष हमेशा जला करता है। इसलिए जो प्रेम करती हो, उसी से प्रेम करना चाहिए। परस्पर प्रेम होने से ही सुख मिलता है। वह इस प्रकार समझाकर रावण को हटा ले गई। राक्षसराज रावण हँसता हुआ चला गया। वह पृथिवी को कँपाता हुआ, सूर्य के समान प्रकाशमान राजभवन को गया। देवताओं, नागों और गन्धर्वों की स्त्रियाँ भी उसके साथ चली गईं। २८—४६।

सर्ग २३

रावण इस प्रकार सीता को डाटकर और राक्षसियों को आज्ञा देकर जब चला गया तब राक्षसियाँ सीता को धमकाने लगीं—तुम महात्मा रावण की बात क्यों नहीं मानती हो? उनका जन्म पुलस्त्य-वंश में हुआ

है। संसार में प्रसिद्ध हैं; उनकी भार्या होना तुम्हारे लिए बड़े सम्मान की बात है। १—४। एकजटा नाम की राक्षसी क्रोध से आँखें लाल करके बोली—पुलस्त्य ब्रह्मा के पुत्र हैं, वे चौथे प्रजापति के नाम से विख्यात हैं। उनके पुत्र महातेजस्वी महर्षि विश्रवा हुए। हे विशालाक्षी, राक्षसराज रावण उन्हीं विश्रवा के पुत्र हैं। तुम इनकी भार्या होने के योग्य हो। हे सुन्दरी, मैं तुम्हारे हित की बात कहती हूँ, तुम क्यों नहीं मानती हो। उसके बाद बिल्ली की जैसी आँखोंवाली हरिजटा नाम की राक्षसी क्रोध से आँखें दिखाकर कहने लगी—महाराज रावण ने तेंतिस कोटि देवताओं समेत देवराज इन्द्र को भी युद्ध में परास्त कर दिया है। उनके समान पराक्रमी संसार में दूसरा नहीं है। युद्ध में वे कभी पीछे नहीं हटे। ऐसे महापराक्रमी की भार्या होना तुम क्यों नहीं पसन्द करती हो? वे सब स्त्रियों में श्रेष्ठ प्रिय भार्या मन्दोदरी को छोड़कर तुमसे प्रेम करेंगे। उनके अन्तःपुर में हज़ारों सुन्दरी स्त्रियाँ हैं, किन्तु उन सबको छोड़कर वे तुम्हारे वश में हो जायँगे। ५—१३। उसके बाद विकटा नाम की राक्षसी बोली—जिन्होंने अपने पराक्रम से युद्ध में कई बार गन्धर्वों और दानवों को परास्त कर दिया है, वही राक्षसराज रावण तुम्हारे पास आये थे। हे मूर्खे, तूने उन राक्षसेश्वर महात्मा रावण की भार्या होना क्यों नहीं स्वीकार किया? उसके बाद दुर्मुखी नाम की राक्षसी ने कहा—जिसके भय से सूर्य नहीं तपते, वायु वेग से नहीं चलता, जिसकी इच्छा होते ही वृक्ष फूल बरसाते हैं, बादल पानी बरसाते हैं। हे भामिनि, उन राक्षसराज की भार्या होना तुम क्यों नहीं पसन्द करती हो? हे देवि, मैं तुमको समझाये देती हूँ, यदि मेरी बात न मानोगी तो जीवित बचना बहुत कठिन है। १४—१६।

सर्ग २४

उसके बाद सब राक्षसियाँ एक साथ सीता को धमकाने लगीं—

हे सीते, राक्षसराज के अन्तःपुर में महामूल्य शय्या पर सोने की तुम्हारी इच्छा क्यों नहीं होती ? क्या तुम मनुष्य की भार्या होने में ही अपना सम्मान समझती हो ? अब राम से अपना मन हटा लो, किसी उपाय से वे तुमको नहीं मिल सकते। राक्षसेश्वर रावण तीनों लोकों का ऐश्वर्य भोग रहे हैं, उनको अपना पति बनाकर सुख से विहार करो। तुम मनुष्य हो, इसी से राम को चाहती हो। किन्तु उनका राज्य छूट गया है, शोक से व्याकुल हैं, उनको लेकर क्या करोगी ? राक्षसियों की ये बातें सुनकर सीता रोती हुई बोलीं—यह पापकर्म करने की मैं इच्छा भी न करूँगी। मानुषी स्त्री राक्षस की भार्या नहीं हो सकती। तुम लोग चाहे मुझे खा लो, किन्तु मैं तुम्हारी बात नहीं मानूँगी। १—८। दीन हों अथवा राज्यहीन हों, मेरे भर्ता ही मेरे पूज्य हैं। जैसे सुवर्चला सूर्य पर आसक्त है, वैसे ही मैं रामचन्द्र से प्रेम करती हूँ। जैसे शची इन्द्र की, अरुन्धती वसिष्ठ की, रोहिणी चन्द्रमा की, लोपामुद्रा अगस्त्य की, सुकन्या च्यवन की, सावित्री सत्यवान् की, श्रीमती कपिल की, मदयन्ती सौदास की, केशिनी सगर की और दमयन्ती नल की पतिव्रता स्त्री हैं, वैसे ही मैं इक्ष्वाकुवंशी रामचन्द्र की पतिव्रता भार्या हूँ। ९—१२। हनुमान् शीशम के वृक्ष में छिपे राक्षसियों की डाट-डपट सुनते थे। सीता डर के मारे काँपती थीं। राक्षसियाँ उनके चारों ओर बैठ गईं और बड़े-बड़े होंठ दाँतों से दबाकर, परशु उठाकर कहने लगीं—यह राक्षसराज की भार्या होने के योग्य नहीं है। सीता शोक से व्याकुल थीं, आँसू पोंछती हुई शीशम के वृक्ष के नीचे चली गईं। वहाँ भी राक्षसियों ने जाकर उनको घेर लिया, और डाटने लगीं। १३—१९। विनता नाम की राक्षसी बड़े क्रोध से बोली—तुमने राम के प्रति जो प्रेम दिखाया, वह यथेष्ट हो चुका। हे भद्रे, अति सर्वत्र वर्जित है। अति दुःख का कारण हो जाती है। २०—२१। तुम्हारा पति-प्रेम देखकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। तुम्हारा कल्याण हो; मनुष्य

का जो कर्तव्य है, वह तुमने किया। अब मैं तुम्हारे हित की जो बात कहती हूँ, वह करो। राक्षसराज रावण को अपना पति बनाओ। वे देवराज इन्द्र के समान रूपवान्, बलवान्, दानी, गुणग्राही, और प्रियवादी हैं। दीन मनुष्य राम को छोड़कर रावण के आश्रय में रहो। २२—२४। उनकी भार्या होकर आज ही से दिव्य अंगराग लगाओ, दिव्य आभूषण पहनो और सबकी स्वामिनी बनो। २५। स्वाहा और इन्द्राणी के समान तीनों लोकों की पूज्य हो जाओगी। दीन और अल्पायु राम को लेकर क्या करोगी? यदि मेरी बात न मानोगी, तो हम लोग तुमको खा लेंगी। उसके बाद लम्बे स्तनोंवाली विकटा नाम की राक्षसी घूँसा तानकर डाटने लगी—हे मूर्खे, तुमने बहुत-सी अयोग्य बातें कही हैं, हम लोग दया करके, तुम्हारी बातें सहती हैं। यदि हमारी बात न सुनोगी तो तुम्हारे लिए अच्छा नहीं है। हे मैथिलि, तुम समुद्र के पार लाई गई हो, रावण के अन्तःपुर में बन्द हो और हम लोग तुम्हारी रखवारी करती हैं, अतएव साक्षात् इन्द्र भी तुमको बचा नहीं सकते। मैं तुम्हारे हित की बात कहती हूँ, इसे मान लो। २६—३२। रोने का कोई प्रयोजन नहीं है, शोक करना व्यर्थ है। दीनता छोड़कर रावण से प्रेम करो और आनन्द उठाओ। ३३। हे सीते, राक्षसराज के साथ सुख से विहार करो। युवा अवस्था सदा नहीं रहती, इसी से कहती हूँ कि जब तक यह अवस्था है, तब तक सुख कर लो। मनोहर बग़ीचों में, पर्वत के उपवनों में, राक्षसराज के साथ विहार करो। हे देवि, हज़ारों सुन्दरी स्त्रियाँ तुम्हारे वश में रहेंगी। ३४—३६। यदि मेरी बात न मानोगी तो तुम्हारा कलेजा निकालकर खा लूँगी। उसके बाद चण्डोदरी नाम की निशाचरी भयानक शूल घुमाकर कहने लगी—मैं गर्भवती हूँ। राक्षसराज डर से काँपती हुई इस मृगनयनी को जब हर लाये थे, तभी से मेरी इच्छा है कि मैं इसका यकृत, प्लीहा, मोटी भुजाएँ, कलेजा और सिर आदि

सब अंग खाऊँ।३७—४०। फिर प्रघसा नाम की राक्षसी ने कहा—तुम क्यों बकती हो, मैं अभी इसका गला दबाकर मार डालूँगी और राजा से कह दूँगी कि वह मर गई। तब राजा यही आज्ञा देंगे कि तुम लोग उसे खा लो।४१—४२। अजामुखी नाम की राक्षसी ने कहा—मुझे यह विवाद पसन्द नहीं है, इसके टुकड़े-टुकड़े करके बराबर बाँट लो।४३—४४। इसे खाकर शीघ्र ही पीने के लिए मदिरा और पहनने के लिए मालाएँ लाओ। उसके बाद सूर्पणखा नाम की राक्षसी बोली—अजामुखी की बात मुझे भी पसन्द है। मदिरा शीघ्र लाओ। हम लोग इसका मांस खाकर निकुम्भिला देवी के मन्दिर में नाचेंगी। राक्षसियों के इस प्रकार धमकाने पर देवकन्या के समान सुन्दरी सीता अधीर होकर रोने लगीं।४५—४८।

सर्ग २५

सीता डर के मारे गद्गद स्वर से बोलीं—मानुषी स्त्री राक्षस की पत्नी नहीं हो सकती। तुम्हारी इच्छा है तो मुझे खा लो, किन्तु मैं तुम्हारी बात नहीं मानूँगी।१—३। रावण द्वारा अपमानित होने और राक्षसियों के धमकाने से देवकन्या के समान सुन्दरी सीता शोक से व्याकुल हो गईं। जैसे बाघ के सामने मृगी डर के मारे काँपने लगती है, वैसे ही सीता भयभीत हुईं। फूले हुए अशोक की डाल पकड़कर रामचन्द्र का स्मरण करने लगीं।४—६। रोते-रोते उनके स्तन भीग गये, और शोक से छुटकारा पाने का कोई उपाय न देख पड़ा। डर के मारे केला के पेड़ के समान काँपने लगीं। मुँह उदास हो गया, शरीर के काँपन से लम्बी वेणी भी हिलने लगी, मानों साँपिन पृथ्वी पर लोट रही हो। शोक से व्याकुल होकर अचेत-सी हो गईं; लम्बी साँसें छोड़ने लगीं; राम, लक्ष्मण, कौसल्या और सुमित्रा का नाम लेकर विलाप करने लगीं और मन में सोचने लगीं कि काल के

विना किसी की मृत्यु नहीं हो सकती। राक्षसियाँ मुझे डाटती हैं, रामचन्द्र के वियोग से दुःखित हूँ, तो भी मेरे प्राण नहीं निकलते। मैं बड़ी अभागिन हूँ। बोझ से लदी नाव के समान शोक के समुद्र में डूब रही हूँ, अनाथ स्त्री की तरह नष्ट हो रही हूँ। ७—१४। पति के वियोग से और राक्षसियों के वश में होने से, मुझे शोक और सन्ताप वैसे ही पीड़ित कर रहा है, जैसे पानी के वेग से नदी के कूल नष्ट हो जाते हैं। जो लोग कमलनयन, सत्यवादी, सिंह के समान चलनेवाले रामचन्द्र को देखते होंगे, वे धन्य हैं। जैसे विष पीने से जीवित रहना कठिन है, वैसे ही यशस्वी रामचन्द्र के वियोग में मेरा जीवन असम्भव है। मैंने पूर्व जन्म में न जाने कौन पाप किया है जिसका यह फल मिला। मैं चाहती हूँ कि मेरी मृत्यु हो जाय, किन्तु प्राण नहीं निकलते। पराधीनता को धिक्कार है, इस मनुष्य-देह को भी धिक्कार है, इच्छा होने पर इसका त्यागना बहुत कठिन है। १५—२०।

सर्ग २६

रोते-रोते सीता का मुँह आँसुओं से भीग गया। बड़े दुःख से विलाप करने लगीं। थकी हुई घोड़ी की तरह पृथिवी पर लोट गईं और शोक से व्याकुल हो गईं। उद्भ्रान्त और उन्मत्त-सी होकर कहने लगीं—मायावी मारीच माया करके रामचन्द्र को आश्रम से दूर ले गया, और रावण मौक़ा पाकर मुझे हर लाया। मैं राक्षसियों के वश में हूँ, ये मुझे डाटती हैं, अतएव अब मुझे जीने की इच्छा नहीं है। धन, रत्न और आभूषण लेकर क्या करूँगी। १—५। मेरा हृदय पत्थर का है, अथवा अजर अमर है, ऐसा दुःख होने पर भी यह विदीर्ण नहीं होता। रामचन्द्र के विना मुहूर्त भर भी मेरा जीवन पापमय है। मुझ अनार्या और असती को धिक्कार है। निशाचर रावण को मैं अपना पति न बनाऊँगी, मैं तो बायें पैर से भी उसका स्पर्श न करूँगी। ६—८।

मैं बार-बार उसका तिरस्कार करती हूँ, किन्तु वह दुरात्मा इस अपमान को भी कुछ नहीं समझता। वह अपने कुल और मान-अपमान की कुछ परवा नहीं करता। ऐसा दुष्ट है कि बार-बार मुझसे प्रार्थना करता है। हे राक्षसियो, तुम लोग मुझे चाहे रत्ती-रत्ती काट डालो, पीस डालो अथवा जलती हुई आग में झोंक दो, किन्तु मैं रावण की भार्या नहीं हो सकती। ६-१०। बुद्धिमान्, दयालु, सदाचारी, रामचन्द्र इस समय मेरे दुर्भाग्य से मुझे भूले हुए हैं। जनस्थान में चौदह हज़ार राक्षसों का उन्होंने विनाश कर दिया है, तो क्या अब मेरा उद्धार न करेंगे? इस दुर्बल रावण ने मुझे छिपा रक्खा है, किन्तु रामचन्द्र युद्ध में इसे अवश्य मारेंगे। जिन्होंने दंडक वन में विराध को मार डाला, वे क्या मेरा उद्धार न करेंगे? यद्यपि लंका समुद्र के बीच में बसी है, यहाँ आना औरों के लिए कठिन है, किन्तु रामचन्द्र के बाणों के लिए कोई रोक न होगी। वे महापराक्रमी हैं, मैं उनकी प्रिय भार्या हूँ, किन्तु न जाने क्यों अभी तक मेरी उपेक्षा कर रहे हैं। सीता लंका में हैं, यह खबर उनको न मिली होगी, नहीं तो मेरी यह दुर्दशा वे सहन न करते। उनको खबर कैसे मिले, गृध्रराज जटायु पहले ही मार डाले गये। यदि वे जीवित होते तो रामचन्द्र को बतलाते कि रावण सीता को हर ले गया है। ११-१८। जटायु ने बड़े साहस का काम किया। वे वृद्ध थे, तो भी मुझ पर दया करके उन्होंने रावण से युद्ध किया। 'सीता लंका में हैं' यह समाचार यदि रामचन्द्र को मिलेगा, तो वे उसी दिन पृथिवी भर के राक्षसों को मार डालेंगे। लंका को भस्म कर देंगे, महासमुद्र को सुखा देंगे, इस निशाचर रावण की कीर्ति धूलि में मिला देंगे, इसका नाम-निशान न रक्खेंगे। १६-२१। उस समय राक्षसियाँ अनाथ होकर मेरी तरह विलाप करेंगी। राक्षसियों के रोने का समय शीघ्र ही आवेगा। रामचन्द्र और लक्ष्मण लंका में आकर राक्षसों को ढूँढ़-ढूँढ़कर मारेंगे। उनके सामने आने पर शत्रु एक मुहूर्त

भी जीवित न बचेंगे। शीघ्र ही चिताओं के जलने से लंका की सड़कों पर धुआँ फैल जायगा और गिद्ध मड़रायँगे। लंका शीघ्र ही श्मशान के समान हो जायगी। मेरा मनोरथ सफल होगा। मेरी बातें तुम लोगों को उलटी समझ पड़ती होंगी, किन्तु मैं बताये देती हूँ, तुम लोगों का यह दुराचार तुम्हारे अमंगल का लक्षण है। लंका में जो अशकुन देख पड़ते हैं, उनसे विदित है कि इस नगरी का शीघ्र ही विध्वंस होगा। पापी रावण के मरने पर लंका विधवा स्त्री के समान हो जायगी। जिस लंका में बड़े समारोह से उत्सव होते हैं, वह शीघ्र ही पतिहीन स्त्री के समान हो जायगी। राक्षसों की स्त्रियों का रोना मैं शीघ्र ही सुनूँगी। जिस दिन रामचन्द्र सुन पावेंगे कि सीता लंका में हैं, उसी दिन बाणों से लंका को भस्म कर देंगे; एक भी राक्षस जीवित न बचेगा। २२—३१। दुष्ट रावण ने मुझे मार डालने का जो समय निर्दिष्ट किया है, वह शीघ्र ही आ रहा है। मांसाहारी राक्षस उचित-अनुचित का विचार नहीं करते, धर्म का नाम भी नहीं जानते; इसलिए मुझे अवश्य मार डालेंगे। रावण मुझे प्रातःकाल का भोजन बनावेगा। रामचन्द्र के विना मैं बड़े दुःख से प्राण त्यागूँगी। उनके वियोग में शीघ्र मर जाना ही अच्छा है। ३२—३६। मैं अभी तक जीवित हूँ, यह रामचन्द्र न जानते होंगे, नहीं तो वे दोनों भाई पृथिवी भर में मुझे ढूँढ़ते। ३७। अथवा मेरे शोक में शरीर त्यागकर देवलोक को चले गये हों। देवता, गन्धर्व, सिद्ध और महर्षि धन्य हैं, जो राजीव-लोचन रामचन्द्र का दर्शन करते होंगे। ३८—३९। अथवा रामचन्द्र आत्मज्ञानी, जीवनमुक्त, राजर्षि हैं, उनको स्त्री से क्या प्रयोजन, इसी से वे हमको नहीं ढूँढ़ते। ४०। लोग कहते हैं कि देखने से ही प्रेम होता है, देखे विना स्नेह नहीं रहता, किन्तु यह कृतघ्न मनुष्यों के लिए है, रामचन्द्र ऐसा नहीं करेंगे। ४१। अथवा मुझमें कोई अवगुण होंगे, या मेरे भाग्य का दोष होगा। रामचन्द्र के वियोग में अब मर

जाना ही अच्छा है।४२–४३। अथवा पुरुषश्रेष्ठ रामचन्द्र और लक्ष्मण अस्त्र-शस्त्र त्यागकर मुनियों की तरह रहते होंगे। ४४। अथवा दुरात्मा रावण ने छल से दोनों भाइयों को मार डाला होगा। ४५। मैं प्राण त्यागना चाहती हूँ, किन्तु ऐसे असह्य दुःख में भी मेरी मृत्यु नहीं होती।४६। आत्मज्ञानी पुरुष धन्य हैं। उनको प्रिय और अप्रिय कोई नहीं है। उनको प्रिय के वियोग का दुःख और अप्रिय के कारण सन्ताप नहीं होता। उन महात्माओं को मैं प्रणाम करती हूँ। ४७–४८। मैं पापी रावण के वश में हूँ, रामचन्द्र ने मेरा स्नेह छोड़ दिया, इसलिए प्राण त्यागने में ही मेरा कल्याण है। ४६।

सर्ग २७

सीता के यह कठोर वचन सुनकर कुछ राक्षसियाँ कुपित होकर दुरात्मा रावण से उनकी बातें कहने के लिए दौड़ीं, और कुछ सीता के समीप जाकर फिर डाटने लगीं—रे पापिन, आज राक्षसियाँ तेरा मांस खायँगी। राक्षसियों के यह कठोर वचन सुनकर, त्रिजटा नाम की वृद्धा राक्षसी जागी और उनसे कहने लगी—तुम लोग अपना मांस खाओ, जनक की पुत्री और दशरथ की पुत्रवधू सीता को नहीं खा सकती। मैंने आज बड़ा खराब स्वप्न देखा है। उसका स्मरण आने पर रोंगटे खड़े हो जाते हैं। जान पड़ता है कि राक्षसों का विनाश और सीता के पति की विजय होगी। १–६। यह सुनकर राक्षसियाँ उससे पूछने लगीं, तुमने क्या स्वप्न देखा है? त्रिजटा ने कहा—मैंने देखा है कि सफ़ेद माला और सफ़ेद वस्त्र पहने रामचन्द्र और लक्ष्मण आये हैं, वे हाथी-दाँत के बने हुए दिव्य विमान पर, जिसमें हज़ार घोड़े जुते हैं, बैठे हैं। फिर मैंने देखा कि क्षीर समुद्र में, श्वेत पर्वत पर रामचन्द्र बैठे हैं, और सीता भी सूर्य की प्रभा के समान उनके पास विराजमान हैं। और भी देखा कि राम और लक्ष्मण पर्वताकार चार दाँतवाले हाथी

पर सवार हैं। उसके बाद सूर्य के समान तेजस्वी दोनों भाई सफ़ेद कप
और सफ़ेद मालाएँ पहने सीता के पास आये हैं। कमलनयनी सीत
रामचन्द्र की गोद में बैठ गई हैं। ७—१५। फिर मैंने देखा कि सीत
दोनों हाथों से सूर्य और चन्द्रमा को पकड़े हुए हैं। उसके बाद व
हाथी, सीता और दोनों राजकुमारों को पीठ पर लिये हुए लंका
ऊपर आकाश में आया है। फिर मैंने देखा कि सफ़ेद मा
और सफ़ेद कपड़े पहने रामचन्द्र और लक्ष्मण आठ सफ़ेद बै
के रथ पर सवार हैं। फिर देखा कि महाबली रामचन्द्र और लक्ष्म
सूर्य के समान चमकते हुए दिव्य पुष्पक विमान पर सीता को बैठा
उत्तर दिशा को चले गये हैं। मैंने एक बड़ा अशुभ स्वप्न देखा है। राव
सिर मुड़ाये, तेल लगाये, लाल कपड़े पहने, मदिरा पी रहा है। औ
भी देखा कि रावण सिर मुड़ाये, काले कपड़े और लाल कनेर के फू
की माला पहने पुष्पक विमान से पृथिवी पर गिर पड़ा है, स्त्रियाँ उ
को खींच रही हैं। रावण लाल फूलों की माला पहने, लालचंदन लगा
गधों के रथ पर सवार है। फिर मैंने देखा कि रावण तेल पीता है, भ्रां
होने के कारण हँसता और नाचता है। गधे पर सवार होकर दक्षि
दिशा को चला गया है। १६—२३। उसके बाद देखा कि वह डर के मा
गधे पर से मुँह के बल गिर पड़ा है। फिर झट उठा और चकित-सा होक
नंगा भागा जा रहा है। उन्मत्त की तरह कुछ अंटशंट बकता भी जात
है। २४—२५। वह दुर्गन्धमय अन्धकार नरक के समान, विष्ठा
भरे हुए कुंड में गिरकर डूब गया है। २६। उसके बाद दक्षिण दिश
में जाकर एक कुंड में, जिसमें कीचड़ नहीं है, पैठ गया है। वहाँ ए
काली स्त्री लाल वस्त्र पहने देह भर में कीचड़ लगाये देख पड़ी। व
रावण के गले में रस्सी बाँधकर खींच रही है। महाबली कुम्भक
और रावण के पुत्रों को भी मैंने स्वप्न में देखा कि वे सिर मुड़ाये औ
तेल से नहाये हैं। फिर देखा कि रावण सूअर पर, मेघनाद शिशुमार प

और कुम्भकर्ण ऊँट पर चढ़कर दक्षिण दिशा को चले गये हैं। विभीषण के ऊपर श्वेत छत्र है और चार मन्त्रियों के साथ आकाश में बैठे हैं, उनकी सभा में गाना-बजाना हो रहा है। लंका के और सब राक्षस लाल वस्त्र और लाल मालाएँ पहने तेल पी रहे हैं। यहाँ के फाटक और दरवाज़े गिर पड़े हैं। हाथी, घोड़े और रथों सहित समूची लंका समुद्र में डूब गई है। २७—३२। फिर देखा कि लंका के ऊपर धूलि छाई है, राक्षसों की स्त्रियाँ तेल पीती हैं और उन्मत्त होकर हँसती हैं। ३३। कुम्भकर्ण आदि सब राक्षस लाल कपड़े पहने गोबर के कुंड में पैठ गये हैं। अतएव तुम लोग यहाँ से भागो। शीघ्र ही सीता को रामचन्द्र मिलेंगे। वे क्रुद्ध होकर राक्षसों के साथ तुम लोगों को भी मार डालेंगे। सीता उनकी प्रिय भार्या हैं, दुःख की परवा न करके उनके साथ वन को आई हैं। तुम लोग इनका अपमान करती और डाटती हो। तुम्हारी ये बातें रामचन्द्र न सह सकेंगे। ३४—३६। अब सीता को कठोर वचन न कहो, इनको आश्वासन दो, इनसे प्रार्थना करके क्षमा माँगो। जिस दुःखित के लिए ऐसा स्वप्न देखा जाता है, वह शीघ्र दुःख से छूट जाता है। सीता शीघ्र इस दुःख से छूटकर अपने पति से मिलेंगी। ३७—३८। यह विश्वास रक्खो कि राक्षसों के लिए महाभय उपस्थित है। यदि सीता प्रार्थना करने से प्रसन्न हो जायँ, तो इस भय से तुम लोगों की रक्षा करेंगी। ३९—४०। देखो, इनके शरीर में कोई अशुभ चिह्न नहीं हैं। इनका मुँह उदास है, इससे इनके दुःख का अनुमान किया जाता है। यह देवी दुःख पाने के योग्य नहीं है। मैंने स्वप्न में इनको आकाश में बैठी हुई देखा है, इसलिए मुझे विश्वास है कि इनका मनोरथ सफल होगा। रावण का विनाश होगा और रामचन्द्र विजयी होंगे। ४१—४३। यह देखो, यह शुभ स्वप्न सुनने के लिए इनकी कमल के समान बाईं आँख, बाईं भुजा और हाथी की सूँड़ के समान चढ़ा-उतार जाँघ फड़कती है। यह सब शुभ शकुन इनको बता

रहे हैं कि रामचन्द्र शीघ्र यहाँ आवेंगे। ४४–४६। वह देखो, पक्षी बड़े हर्ष से घोंसलों में मनोहर बोली बोलकर इनके कल्याण की सूचना देते हैं। ४७। त्रिजटा की यह बातें सुनकर सीता प्रसन्न होकर बोलीं—यदि तुम्हारी बात सत्य होगी, तो मैं तुम लोगों की रक्षा करूँगी। ४८।

सर्ग २८

शोक से पीड़ित सीता रावण की बातों का स्मरण करके सिंह से डरी हुई हथिनी की तरह व्याकुल हुईं। रावण अपमान कर गया था, राक्षसियाँ चारों ओर बैठी हुई कठोर वचन कह रही थीं, इसलिए वे निर्जन वन में अकेली बालिका के समान दुःखित होकर विलाप करने लगीं। काल के विना मृत्यु नहीं होती, यह बात बिलकुल सत्य है; नहीं तो इसप्रकार रावण के अपमान करने पर मैं क्यों जीवित रहती! मुझ पापिन का हृदय अजर और अमर है; नहीं तो आज वज्र से आहत पर्वत के समान इसके हज़ारों टुकड़े हो जाते। दुष्ट रावण के हाथ से मृत्यु होने की अपेक्षा आत्महत्या कर लेना अच्छा है। मुझे वह मार भले ही डाले, पर जैसे ब्राह्मण शूद्रों को मन्त्र की दीक्षा नहीं देते, वैसे ही मैं उसे अपना मन नहीं दे सकती। यदि दो मास के भीतर रामचन्द्र न आवेंगे तो जैसे इन्द्र ने दिति का गर्भ नष्ट किया था, वैसे ही राक्षस रावण पैने बाणों से मुझे मार डालेगा। एक तो पति के वियोग में दुःखी हूँ, दूसरे अब वध का असह्य दुःख उठाना पड़ेगा। यह दो महीने उसी प्रकार शीघ्रता से बीत जायँगे, जैसे फाँसी का दंड पाने वाले की रात बीत जाती है। हा राम, हा लक्ष्मण, हा सुमित्रा, हा कौसल्या, हा मेरी माता, मैं बड़ी अभागिन हूँ। वायु के वेग से डूबती हुई नाव के समान इस विपत्ति में डूब रही हूँ। १–८। जान पड़ता है कि बिजली के समान चमकते हुए मृगरूप राक्षस ने सिंह के समान बलवान्

दोनों राजकुमारों को मार डाला है। मृगरूपधारी काल ने मेरी बुद्धि हर ली थी। इसी कारण मैंने आर्यपुत्र रामचन्द्र और लक्ष्मण को उसके पीछे भेज दिया। हा राम, हा सत्यव्रत, हा दीर्घबाहो, हा पूर्णचन्द्रमुख, हा प्राणियों के हितैषी और प्रिय, राक्षस मुझे मार डालेगा, यह बात तुमको नहीं मालूम है। मैं पतिव्रता हूँ, मैंने पति के सिवा और किसी देवता को भी नहीं जाना। पृथिवी पर सोती हूँ, धर्म और नियम का पालन करती हूँ, यह सब मेरे सदाचार, कृतघ्न के साथ किये हुए उपकार के समान निष्फल हो गये। ६—१२। मैं तुम्हारे वियोग में दुःखित हूँ, दुबली हो गई हूँ। तुम पिता की आज्ञा का पालन करके वनवास का समय बिताकर वन से लौट गये होगे, और निर्भय तथा कृतार्थ होकर विशाल-नयनी स्त्रियों के साथ क्रीड़ा करते होगे। किन्तु हे रामचन्द्र, मैं अपने विनाश के लिए तुमसे प्रेम करती हूँ। मेरा तप और व्रत विफल हुआ। मुझ अभागिन के जीवन को धिक्कार है। मैं विष पीकर अथवा तीक्ष्ण शस्त्र से आत्महत्या करके अपना शरीर त्यागना चाहती हूँ। किन्तु यहाँ राक्षस के घर में मुझे विष अथवा अस्त्र देनेवाला कोई नहीं है। १३—१६। इसी प्रकार बहुत विलाप करके रामचन्द्र का स्मरण करती हुई और डर के मारे काँपती हुई शीशम के पास गईं और लम्बी वेणी हाथ में लेकर कहने लगीं—इसी से गला बाँधकर आत्महत्या करूँगी। यह निश्चित करके शीशम की डाल पकड़कर खड़ी हो गईं और राम-लक्ष्मण तथा अपने पितृकुल का स्मरण करने लगीं। उसी समय उनके अंगों में शुभ निमित्त सूचित हुए। वे सोचने लगीं, धनुष तोड़ने के समय जो शुभ निमित्त देख पड़े थे, वही इस समय भी देख पड़ते हैं। १७—२०।

सर्ग २९

शोक-सन्ताप से पीड़ित पतिव्रता सीता व्याकुल होकर जब आत्म-

हत्या करने पर उतारू हुईं, तब उसी प्रकार शुभ शकुन उनको देख पड़े जैसे धनवान् पुरुष के सेवक उसके सामने खड़े रहते हैं। जैसे मछली का धक्का लगने से लाल कमल काँपने लगे, वैसे ही उनकी बाईं आँख फड़कने लगी। मोटी, गोल, सुन्दर बाईं भुजा भी फड़क उठी। हाथी की सूँड़ के समान मोटी और चढ़ा-उतार बाईं जाँघ भी काँपने लगी और यह सूचित करने लगी कि रामचन्द्र बहुत शीघ्र आवेंगे। सुवर्ण के समान चमकता हुआ रेशमी वस्त्र कुछ खिसक गया। १—५। जैसे धूप और हवा से सूखा हुआ बीज वर्षा होने पर उगता है, वैसे ही इन शुभ निमित्तों को देखकर सीता प्रसन्न हुईं। बिम्बफल के समान अधर, मोरपंख के तारक के समान सुन्दर नेत्र, सफ़ेद दाँत और सुन्दर केशों से शोभित मुँह, राहु से मुक्त चन्द्रमा के समान प्रकाशित हुआ। शोक-सन्ताप दूर हुआ, चित्त प्रसन्न हो गया और जैसे चन्द्रमा के प्रकाश से रात की शोभा होती है, वैसे ही सीता का मुँह प्रसन्न हो गया। ६—८।

सर्ग ३०

शीशम के पेड़ में छिपे हुए हनुमान् राक्षसियों की धमकी, त्रिजटा का स्वप्न और सीता का विलाप सुनते थे। वे सोचने लगे——जिनको ढूँढ़ने के लिए हजारों वानर सब दिशाओं को गये हैं, वे सीता यही हैं। मैंने दूत का यथोचित काम किया। शत्रु का बल जानने के लिए लंका में घूमकर सब स्थान देखे। रावण का ऐश्वर्य और प्रभाव भी देखा। अब सीता को समझाना चाहिए। इन्होंने कभी दुःख नहीं उठाया, और इस दुःख से शीघ्र छुटकारा भी नहीं मिलता। शोक के मारे इनकी चेतना नष्ट हो रही है। यदि मैं इनको ढाढ़स दिये बिना चला जाऊँगा तो अपनी रक्षा का कोई उपाय न देखकर प्राण त्याग देंगी। १—६। जिस प्रकार सीता को देखने के लिए उत्सुक महाबाहु रामचन्द्र को आश्वासन दिया जाता है, वैसे ही इनको भी समझाना

चाहिए। किन्तु राक्षसियों के सामने बातें करना ठीक नहीं है। कैसे बातें करूँ, समझ में नहीं आता। यदि इनको आश्वासन न दूँगा तो यह निःसन्देह प्राण त्याग देंगी। रामचन्द्र पूछेंगे कि सीता ने कुछ कहा है, तो क्या उत्तर दूँगा। और यदि सीता का सन्देश लिये विना लौटकर जाऊँगा तो रामचन्द्र क्रोध करेंगे। युद्ध के लिए सेना के साथ सुग्रीव का यहाँ आना व्यर्थ हो जायगा; क्योंकि सीता तो उनके आने के पहले ही मर जायँगी। इसलिए राक्षसियों के हटने पर शोक-सन्ताप से पीड़ित सीता को आश्वासन देना चाहिए। मैं छोटा-सा वानर होकर भी ब्राह्मणों की शुद्ध संस्कृत भाषा में बातें करूँगा, किन्तु संस्कृत भाषा बोलने से सीता रावण समझकर डर न जायँ। वे समझेंगी कि वानर संस्कृत भाषा नहीं बोल सकता। यह वानर नहीं है, राक्षस रावण वानर का रूप धरकर आया है। अतएव मुझे साधारण मनुष्यों की बोली में अर्थयुक्त बातें कहनी चाहिए। १०–१९। रावण सीता को धमका गया है, इसलिए वानररूप देखकर और संस्कृत भाषा सुनकर सीता मुझे दुरात्मा कामरूपी रावण समझेंगी, तब वे डर के मारे अपनी रक्षा के लिए चिल्लाने लगेंगी। उनका चिल्लाना सुनकर राक्षसियाँ अस्त्र लेकर दौड़ेंगी। और भयानक राक्षस भी अस्त्र-शस्त्र लेकर दौड़ेंगे। मुझे पकड़ने या मारने का उद्योग करेंगे। तब मैं इस वृक्ष से उस वृक्ष पर कूदने लगूँगा। मुझे देखकर राक्षसियाँ डरेंगी। शूल, शक्ति और तलवार आदि अस्त्र-शस्त्र लेकर राक्षस आवेंगे और मुझे घेर लेंगे। यदि मैं उनकी सेना का संहार करूँगा तो फिर थक जाने पर समुद्र के पार लौटना कठिन हो जायगा। अथवा राक्षसों ने मुझे पकड़ लिया तो मैं बँध जाऊँगा और सीता मेरे आने का प्रयोजन भी न जानेंगी। राक्षस बड़े हत्यारे हैं; सम्भव है, वे सीता को ही मार डालें। तब तो रामचन्द्र और सुग्रीव का कार्य ही नष्ट हो जायगा। २०–३०। सीता राक्षसों की नगरी में, गुप्त स्थान में हैं। इस नगरी के चारों ओर समुद्र है, यहाँ

आने का कोई मार्ग नहीं है। यदि राक्षसों ने मुझे मार डाला तो फि ऐसा कोई वानर नहीं है, जो रामचन्द्र के कार्य के लिए सौ योजन समुद्र लाँघकर यहाँ आ सके। मैं हज़ारों राक्षसों का विनाश कर सकता हूँ, किन्तु उसके बाद समुद्र पार करने की शक्ति मुझमें न रहेगी। इसके सिवा युद्ध में हार-जीत का भी तो कोई निश्चय नहीं है। अतएव सन्दिग्ध काम न करना चाहिए। सीता से बातें करता हूँ तो बड़े उपद्रव का भय है, और यदि बातें किये विना लौटता हूँ तो सीता जीवित न रहेंगी। सिद्ध होनेवाला काम भी मूर्ख दूत के हाथ में जाने से वैसे ही बिगड़ जाता है, जैसे सूर्य के उदय होने पर अन्धकार नष्ट होता है। मन्त्रियों से निर्णय किया हुआ काम मूर्ख दूत के दोष से बिगड़ जाता है। अपने को बुद्धिमान् समझनेवाला मूर्ख दूत ही कार्य के विनाश का कारण होता है। मैं कौन उपाय करूँ, जिससे काम न बिगड़े, मूर्खता न साबित हो, समुद्र का लाँघना व्यर्थ न हो और सीता निर्भय होकर मेरी बातें सुनें। बुद्धिमान हनुमान् ने यह सब सोचकर निश्चय किया कि रामचन्द्र इनको परम प्रिय हैं, उन्हीं में इनका मन लगा है। यदि मैं उनका हाल कहूँगा तो इनको कुछ भी घबराहट न होगी। मनस्वी, जितेन्द्रिय, धर्मात्मा रामचन्द्र का हाल अपने-आप कहने लगूँगा और मधुर वचनों से इनको अपना विश्वास दिलाऊँगा। ३१—४४।

सर्ग ३१

महावीर हनुमान् बड़ी देर तक सोचकर, सीता के सिवा और कोई न सुने, इसलिए धीरे-धीरे मधुर वचन बोले—दशरथ नाम के एक पुण्यात्मा राजा थे। वे राजाओं में श्रेष्ठ, गुणवान्, सरलस्वभाव, महायशस्वी, इन्द्र के समान पराक्रमी, दयावान्, ऋषियों के समान तपस्वी और सत्यपराक्रमी थे। इक्ष्वाकु-वंश में उनका जन्म हुआ था, वे संसार में

प्रसिद्ध थे। उनके चार पुत्र हुए, जिनमें धनुर्धर रामचन्द्र अपने भाइयों में ज्येष्ठ हैं। उनका मुख चन्द्रमा के समान सुन्दर है, वे धर्मात्मा, शत्रुनाशन और सबके रक्षक हैं। सत्यवादी वृद्ध पिता की आज्ञा से अपनी स्त्री और भाई के साथ वन को आये हैं। वन में उन्होंने बड़े-बड़े पराक्रमी कामरूपी राक्षसों को मार डाला है। खर-दूषण का भी विनाश करके जनस्थान का विध्वंस कर दिया। खर-दूषण की मृत्यु सुनकर राक्षसराज रावण बड़ा कुपित हुआ। वह मायारूपी मृग के द्वारा रामचन्द्र को धोखा देकर सीता को हर लाया है। १–१०। रामचन्द्र सीता को ढूँढ़ते-ढूँढ़ते ऋष्यमूक पर्वत पर आये। वहाँ सुग्रीव नाम के वानर से उन्होंने मित्रता की। फिर बालि को मारकर वानरों का राज्य सुग्रीव को दिया। अब सुग्रीव की आज्ञा से हज़ारों कामरूपी वानर सीता को ढूँढ़ने के लिए सब दिशाओं को गये हैं। मैं सम्पाति के बताने से सीता को देखने के लिए सौ योजन समुद्र लाँघकर यहाँ आया हूँ। सीता का जैसा रूप, रंग और सौन्दर्य रामचन्द्र से सुना था, वैसा ही देखा। ११–१५।

यह कहकर वीर हनुमान् चुप हो गये, और सीता को बड़ा आश्चर्य हुआ। डरी हुई सीता अलकें हटाकर शीशम के वृक्ष को, जिधर से वह आवाज़ आई थी, देखने लगीं। रामचन्द्र का स्मरण करती हुई सीता को बड़ा हर्ष हुआ। उन्होंने चारों ओर देखकर वृक्ष के ऊपर प्रातःकाल के सूर्य के समान पवनकुमार बुद्धिमान् हनुमान् को देखा। १६–१९।

सर्ग ३२

सफ़ेद वस्त्र पहने हुए हनुमान् को शीशम के पेड़ में छिपे देखकर सीता बहुत डरीं। उनकी आँखें तपाये हुए सोने के समान चमकती थीं और देह अशोक के फूलों के समान लाल थी। उनका भीमरूप देख

कर दुःखित सीता 'हा राम, हा लक्ष्मण' कहने और रोने लगीं। रोने का शब्द कहीं राक्षस न सुन लें, इस डर से धीरे-धीरे रोती थीं। विनीत हनुमान् धीरे-धीरे वृक्ष से उतर आये। उनको समीप आते देखकर डर के मारे सीता को मूर्च्छा आ गई। होश आने पर उन्होंने सोचा, स्वप्न में वानर का देखना बड़ा अशुभ है। आज मैंने यह बड़ा दुःस्वप्न देखा। हे ईश्वर, राम-लक्ष्मण और पिता राजा जनक का कल्याण हो। मन में सोचती थीं—क्या मैं स्वप्न देख रही हूँ! किन्तु मैं तो पूर्ण चन्द्रमा के समान मुखवाले रामचन्द्र के वियोग में शोक और दुःख से पीड़ित हूँ। मुझे किसी समय शान्ति और सुख नहीं मिलता। नींद तो आती ही नहीं, फिर स्वप्न कैसे देखूँगी! निरन्तर रामचन्द्र का ही स्मरण करती हूँ। मुँह से भी उन्हीं की बातें कहती हूँ। जान पड़ता है, एकाग्रचित्त से निरन्तर चिन्ता करने के कारण उन्हीं का रूप मेरे मन में उदय हुआ और मुझे उनकी बातें सुनने का भ्रम हुआ। यह वानर मेरे मन की कल्पना है। किन्तु मैं बहुत ध्यान देकर देखती हूँ, तो भी यह दिखाई दे रहा है। मन की कल्पित वस्तु का रूप नहीं होता, किन्तु इसका रूप स्पष्ट दिखाई देता है। यह बोलता भी है। बृहस्पति को नमस्कार, वज्रधारी इन्द्र को नमस्कार, ब्रह्मा और अग्नि को नमस्कार। इस वानर ने जो बातें कही हैं, वे सत्य हों। १—१४।

सर्ग ३३

पवनकुमार हनुमान् ऊपर से उतरकर नीचे की शाखा पर आये और विनीत भाव से प्रणाम करके हाथ जोड़कर मधुर वचन बोले—हे कमलनयनी, तुम कौन हो? तुम्हारे सब अंग बहुत सुन्दर हैं, तुम मैला रेशमी वस्त्र पहने इस पेड़ की डाल पकड़े क्यों खड़ी हो? तुम रोती क्यों हो? जैसे कमल के पत्ते से पानी की बूँदें टपकती हैं, वैसे ही तुम्हारी आँखों से आँसू टपक रहे हैं। हे सुन्दरी, तुम किसी देवता की

अथवा दानव, नाग, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस या किसी किन्नर की कन्या हो। अथवा रुद्रगण, मरुद्गण, या वसुगण की कन्या हो। जान पड़ता है कि तुम कोई देवी हो। ताराओं में श्रेष्ठ रोहिणी तो नहीं हो, क्या चन्द्रमा के वियोग से आकाश से गिर पड़ी हो? हे कल्याणी, तुम अरुन्धती तो नहीं हो? कोप या मोह के कारण वसिष्ठ को कुपित करके यहाँ चली आई हो? हे सुन्दरी, क्या तुमको पिता, पुत्र, भाई अथवा पति के वियोग का शोक है? १—१०। तुम रोती हो, लम्बी साँसें छोड़ती हो, पृथिवी पर गिर पड़ती हो और बार-बार रामचन्द्र का नाम लेती हो, इसलिए जान पड़ता है कि देवी नहीं हो। तुम्हारे लक्षणों से मालूम होता है कि तुम किसी राजा की पत्नी और राजपुत्री हो। यदि तुमको रावण जनस्थान से हर लाया हो और तुम सीता हो, तो मुझसे बोलो, तुम्हारा कल्याण हो। तुम्हारी दीनता, तुम्हारा रूप, तुम्हारा वेश और तुम्हारा दुःख देखकर मुझे विश्वास होता है कि तुम रामचन्द्र की भार्या सीता हो। ११—१४।

हनुमान् के यह कहने पर और उनके मुँह से रामचन्द्र का नाम सुनकर सीता प्रसन्न होकर बोलीं—मैं राजाओं में श्रेष्ठ, शत्रुओं का विनाश करनेवाले महाराज दशरथ की पुत्रवधू, विदेहराज महात्मा जनक की पुत्री और रामचन्द्र की भार्या हूँ। मेरा नाम सीता है। मैंने अपने ससुर राजा दशरथ के घर में बारह वर्ष सब प्रकार के सुख भोग किये, तेरहवें वर्ष उन्होंने पुरोहित महर्षि वसिष्ठ की सलाह से रामचन्द्र का राज्याभिषेक करने का निश्चय किया। अभिषेक का हाल सुनकर उनकी सौतेली माता कैकयी ने अपने पति से कहा—यदि तुम रामचन्द्र का अभिषेक करोगे तो मैं अन्न-जल छोड़ दूँगी और आत्महत्या कर लूँगी। यह अभिषेक मेरे जीवन का अन्त होगा। महाराज, आपने मुझे वरदान देने को कहा था, उस बात को यदि मिथ्या न करना चाहें तो रामचन्द्र को वनवास की आज्ञा दें। सत्यवादी राजा दशरथ दुष्टा कैकयी

की यह अप्रिय बात सुनकर और वरदान का स्मरण करके मोहित हो गये। वे सत्यवादी, धर्मात्मा और वृद्ध थे। उन्होंने रोकर रामचन्द्र से सब हाल कहा। रामचन्द्र ने पिता की आज्ञा मन और वचन से स्वीकार की। सत्यपराक्रमी रामचन्द्र दान देते हैं, लेते कदापि नहीं; सत्य में उनकी निष्ठा है, मिथ्या कभी नहीं बोलते। उन्होंने उसी समय महामूल्य वस्त्र त्यागकर, राज्य का लोभ छोड़कर वन को आने की तैयारी की, और मुझे अपनी माता कौसल्या के पास रहने की आज्ञा दी। १५–२७। किन्तु मैंने कहा कि आपके वियोग में मुझे स्वर्ग में भी रहना पसन्द नहीं है। मैं भी उनके साथ आने को तैयार हुई। महाभाग लक्ष्मण वल्कल वस्त्र पहने भाई के साथ आने के लिए पहले से ही तैयार थे। इस प्रकार हम लोग महाराज दशरथ की आज्ञा से भयानक वन को चले आये। महातेजस्वी रामचन्द्र दंडक वन में आकर रहने लगे। दुरात्मा रावण जनस्थान से मुझे हर लाया। अब उसने दो महीने का समय दिया है। उसके बाद मुझे प्राण त्यागना पड़ेगा। २८–३२।

सर्ग ३४

कपिवर हनुमान् दुःख से पीड़ित सीता को समझाने लगे—हे देवि, मैं रामचन्द्र का दूत हूँ। उनका सन्देश लेकर आपके पास आया हूँ। हे वैदेही, रामचन्द्र कुशल से हैं। वे विद्वानों में श्रेष्ठ, वेदों के विद्वान् और ब्रह्म-अस्त्र के जानकार हैं। उन्होंने तुम्हारी कुशल पूछी है। भाई के प्रिय अनुगामी, शोक से सन्तप्त, महातेजस्वी लक्ष्मण ने सिर झुकाकर तुमको प्रणाम कहा है। १–४। राम-लक्ष्मण की कुशल सुनकर सीता प्रसन्न हुईं और हनुमान् से बोलीं—मनुष्य जीवित रहने से सौ वर्ष बाद भी कभी न कभी सुख पाता है—यह कहावत आज मुझे सत्य मालूम हुई। राम और लक्ष्मण के मिलने से सीता को जो

आनन्द होता, वही आनन्द हनुमान् की बातें सुनकर उन्हें हुआ। सीता को प्रसन्न जानकर महावीर हनुमान् और नीचे उतरे। हनुमान् को समीप आते देखकर सीता को फिर सन्देह हुआ कि यह रावण की माया है। मैंने इस दुष्ट से बातें करके बड़ा अनुचित किया। अब यह वानर का रूप धारण करके आया है।५–१०। यह सोचकर वे वृक्ष की शाखा छोड़कर पृथिवी पर बैठ गईं। हनुमान् ने सीता को प्रणाम किया, किन्तु डर के मारे उन्होंने उनकी ओर नहीं देखा। वे लम्बी साँस छोड़कर मधुर स्वर से बोलीं—यदि तुम मायावी रावण हो और अपनी माया से मुझे फिर पीड़ित करना चाहते हो, तो यह काम अच्छा नहीं है। तुम संन्यासी के रूप में जनस्थान में गये थे, तुम वही रावण हो।११–१५। हे कामरूपी निशाचर, मैं बहुत दुःखित हूँ, उपवास करने से दुर्बल हो गई हूँ, तुम मुझे क्यों पीड़ित करते हो? तुम्हारा यह काम अच्छा नहीं है। अथवा मेरा सन्देह व्यर्थ हो, क्योंकि तुमको देखकर मेरा मन प्रसन्न है। हे वानरश्रेष्ठ, यदि तुम रामचन्द्र के दूत हो तो तुम्हारा कल्याण हो। मैं रामचन्द्र का हाल पूछती हूँ, तुम उनके गुणों का बखान करो। हे सौम्य, तुमको देखकर मेरा मन प्रसन्न हुआ। क्या मैं स्वप्न में रामचन्द्र के दूत को देखकर सुख का अनुभव करती हूँ? १६–२०। मैं वीर रामचन्द्र और लक्ष्मण को यदि स्वप्न में भी देखूँ, तो भी मुझे बड़ी प्रसन्नता है। किन्तु यह स्वप्न नहीं जान पड़ता; क्योंकि स्वप्न में वानर का देखना अशुभ है, पर मैं तो इस समय सुख पा रही हूँ। फिर क्या यह चित्तभ्रम, वायु का विकार, उन्माद अथवा मृगतृष्णा है? उन्माद तो हो नहीं सकता; क्योंकि उन्माद में बुद्धि नष्ट हो जाती है। मेरी बुद्धि नष्ट नहीं हुई। मैं इस वानर का और अपना अनुभव करती हूँ। इसी तरह अनेक प्रकार के तर्क-वितर्क करके, राक्षस और वानर का बलाबल विचारकर, सीता ने उनको रावण ही समझा। क्योंकि वह जानती थीं कि राक्षस जैसा चाहते हैं, वैसा रूप

धारण कर लेते हैं। २१—२५। फिर वे हनुमान् से नहीं बोलीं। सीता को चिन्तित देखकर हनुमान् उनको प्रसन्न करने के लिए अनुकूल वचन बोले। रामचन्द्र सूर्य के समान तेजस्वी, चन्द्रमा के समान सबको प्रिय, कुबेर के समान सब लोकों के राजा, विष्णु के समान पराक्रमी, बृहस्पति के समान बुद्धिमान्, महायशस्वी, और मधुरभाषी हैं। कामदेव के समान उनका रूप है। वे क्रोध के स्थान में ही क्रोध करते हैं। प्रसिद्ध महारथी हैं। संसार उन्हीं महात्मा के बाहु-बल के आश्रित है। राक्षस मृगरूप छल करके उनको आश्रम से दूर हटा ले गया, तब रावण तुमको हर लाया। वह अपने कुकर्म का फल शीघ्र पावेगा। महापराक्रमी रामचन्द्र प्रज्वलित अग्नि के समान बाणों से उसे मार डालेंगे। मैं उनका दूत हूँ, उनकी आज्ञा से तुम्हारे पास आया हूँ। तुम्हारे वियोग से वे दुःखित हैं। उन्होंने तुम्हारी कुशल पूछी है। २६—३५। हे देवि, वानरों के राजा सुग्रीव रामचन्द्र के मित्र हैं। उन्होंने भी तुम्हारी कुशल पूछी है। रामचन्द्र, लक्ष्मण और सुग्रीव निरन्तर तुम्हारा स्मरण करते हैं। हे वैदेही, बड़े भाग्य की बात है जो तुम राक्षसियों के वश में रहकर भी जीवित हो। तुम शीघ्र ही रामचन्द्र, लक्ष्मण और करोड़ों वानरों के साथ महातेजस्वी सुग्रीव को देखोगी। मैं सुग्रीव का मन्त्री हूँ, मेरा नाम हनुमान् है। मैं समुद्र को पार करके अपने बल से दुरात्मा रावण के सिर पर पैर रखकर तुमको देखने के लिए आया हूँ। हे देवि, मुझे मायावी रावण न समझो, अपना सन्देह दूर करो, मेरे कहने का विश्वास करो। ३६—४१।

सर्ग ३५

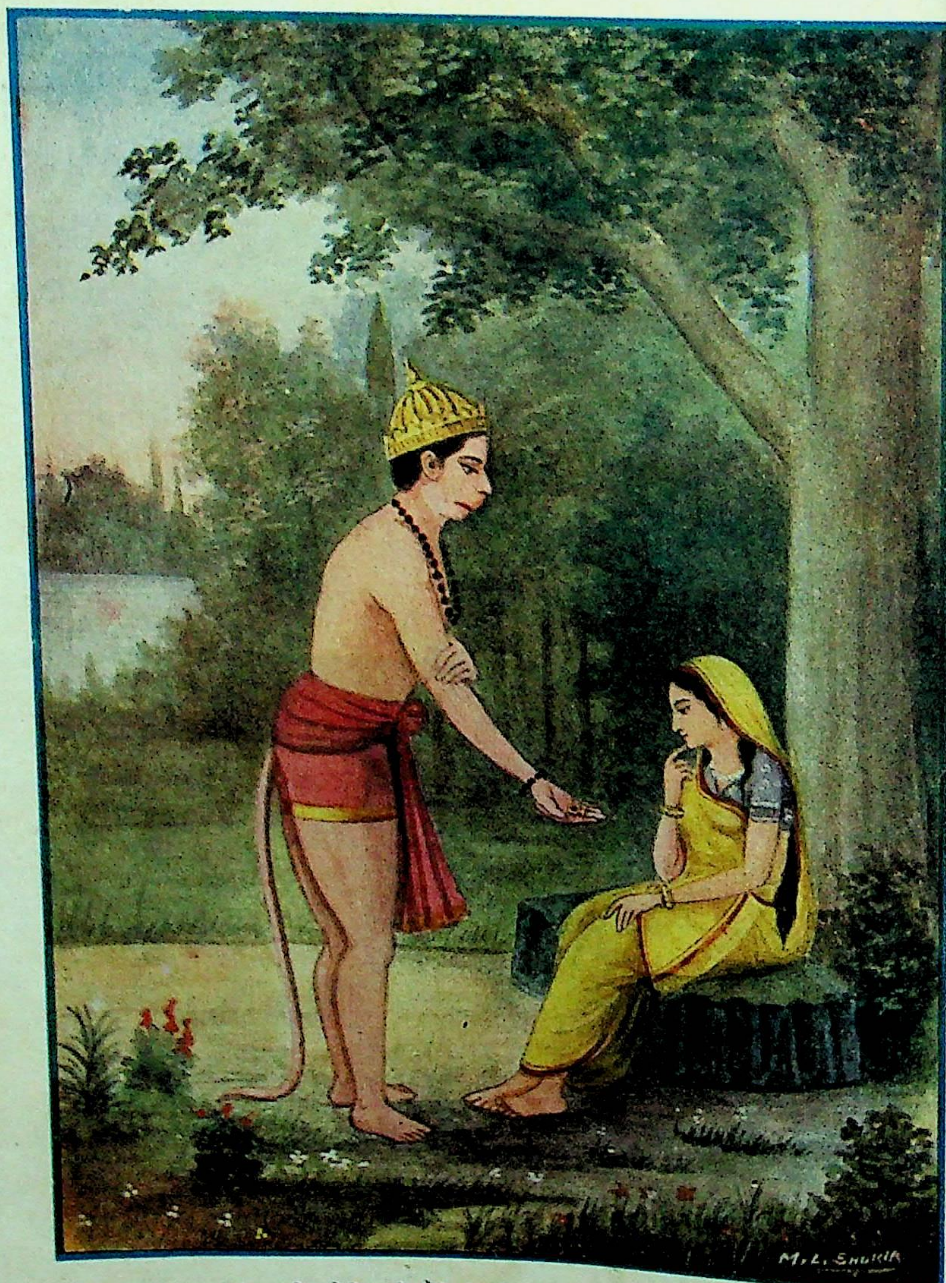
हनुमान् के मुँह से रामचन्द्र का हाल सुनकर सीता मधुर वचन बोलीं—रामचन्द्र और लक्ष्मण को तुम कैसे जानते हो? वानर और मनुष्य का समागम कैसे हुआ? हे वानर, उनके लक्षण फिर से कहो,

जिसमें मेरा शोक दूर हो। दोनों भाइयों के रूप का बखान करो। सीता के यह कहने पर हनुमान् रामचन्द्र के रूप का वर्णन करने लगे—हे वैदेही, बड़े भाग्य की बात है, जो आपने मेरा विश्वास करके मुझसे अपने पति और देवर के लक्षण पूछा। हे विशालाक्षि, मैंने उनके जो चिह्न देखे हैं उनका बखान करता हूँ। रामचन्द्र की आँखें कमल के समान और मुँह पूर्ण चन्द्रमा के समान हैं। हे जनकनन्दिनी, वे सर्वथा रूप और गुण लेकर उत्पन्न हुए हैं। तेज में सूर्य के समान, क्षमा में पृथिवी के समान, बुद्धि में बृहस्पति के समान और यश में इन्द्र के तुल्य हैं। वे सुहृदों और सब प्राणियों के तथा धर्म और सदाचार के रक्षक हैं। १—१०। हे भामिनि, वे चारों वर्णों और संसार की मर्यादा के भी रक्षक हैं। सूर्य के समान तेजस्वी और पूजित हैं। गृहस्थ धर्म में रहकर ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं। उपकार को नहीं भूलते। कार्य में अत्यन्त निपुण हैं। विनीत और नीतिज्ञ हैं। ब्राह्मणों का सम्मान करते हैं। बुद्धिमान् और सुशील हैं। यजुर्वेद के विद्वान् हैं और वेदविद् पंडितों में पूज्य हैं। वेद, वेदांग और धनुर्वेद के ज्ञाता हैं। उनके कन्धे मोटे, भुजाएँ लम्बी, ग्रीवा शंख के समान, मुँह सुन्दर, गले की हड्डी मांस में छिपी हुई, और आँखें कुछ लाल हैं। स्वर गम्भीर और वर्ण स्निग्ध है। प्रतापी रामचन्द्र के सब अंग सुडौल हैं। उनका रंग साँवला है। छाती, मणिबन्ध (कलाई) और मुष्टि ये तीन अंग अत्यन्त कठिन; भौंहें, अंडकोष और बाहु ये तीन अंग लम्बे; केशाग्र, अंडकोष और जाँघें ये तीन अंग समान; नाभि का अभ्यन्तर भाग, कोख और छाती ये तीनों अंग ऊँचे; आँखों के किनारे, नख, पैर और हथेली लाल; पैर की रेखाएँ, लिंग और केश चिकने; स्वर, नाभि और गति (चाल) गम्भीर; पेट और गले में तीन-तीन रेखाएँ; पैरों के तलवे के मध्यभाग, कुचाग्र और पैर की रेखाएँ अवनत; पीठ और जाँघें छोटी; सिर में बालों के तीन आवर्त (भँवर); अँगूठे की जड़ में चार

रेखाएँ; माथे पर, पैरों में और हाथों में चार-चार रेखाएँ; देह की लम्बाई चार हाथ; बाहु, जानु, उरु और गंड ये चार अंग समान; भौंहें, नाक के छेद, आँखें, कान, होंठ, कुचाग्र, कोहनी, कलाई, जाँघें, अंडकोष, कमर, हाथ, पैर और नितम्ब ये चौदह अंग समान; दोनों ओर नीचे-ऊपर चार-चार दाढ़ें; सिंह, बाघ, हाथी और बैल की-सी चाल; होंठ और ठुड्डी मांसल; नाक लम्बी और ऊँची; बाल, आँखें, दाँत, त्वचा और पैर के तलवे ये पाँच अंग चिकने; पीठ, देह, हाथों और पैरों की अंगुलियाँ, दोनों हाथ, नाक, आँखें और कान ये अंग दीर्घ; चेहरा, आँखें, मुँह, जीभ, होंठ, तालु, स्तन, नख, हाथ और पैर ये दस अंग कमल के समान; छाती, माथा, गला, बाहु, नाभि, पैर, पीठ और कान ये दस अंग विशाल; तेजस्वी, यशस्वी और श्रीमान्; उनका पितृकुल और मातृकुल पवित्र; छाती, नाक, कन्धे, माथा, कत्त, और कुक्षि ये छः अंग ऊँचे; तथा अँगुलियों के पोर, बाल, रोयें, नख, त्वचा, लिंग, दाढ़ी, दृष्टि और बुद्धि ये नव सूक्ष्म हैं। ११—२०। वे सत्यवादी और धर्मात्मा हैं। समय का विभाग करके धर्म, अर्थ और काम तीनों वर्गों की उपासना करते हैं। प्रिय वचन बोलते हैं, देशकाल जानते हैं। उनके सौतेले भाई लक्ष्मण रूप और गुण में उन्हीं के समान हैं, और उनके बड़े भक्त हैं। तुमको ढूँढ़ते हुए दोनों भाई ऋष्यमूक पर्वत पर आये। वहाँ वानरराज सुग्रीव रहते थे। सुग्रीव को उनके बड़े भाई बालि ने घर से निकाल दिया था। उसके डर से अनेक देशों में घूम-फिरकर ऋष्यमूक पर्वत पर रहने लगे थे। हम लोग सुग्रीव के मन्त्री हैं। मुनि के वेश में धनुर्धर दोनों भाइयों को देखकर सुग्रीव डर के मारे पर्वत के शिखर पर चढ़ गये। वहाँ से राम-लक्ष्मण के पास मुझे भेजा। मैं उनके पास गया और हाथ जोड़कर उनका परिचय पूछा। उनका परिचय पाकर मुझे हर्ष हुआ। मैंने दोनों भाइयों को पीठ पर चढ़ाकर महात्मा सुग्रीव के पास ले गया। रामचन्द्र और सुग्रीव से बातचीत हुई, वे लोग प्रसन्न

हुए और अपना-अपना हाल कहकर एक-दूसरे को आश्वासन देने लगे। लक्ष्मण ने आपका हाल सुग्रीव से कहा। सुग्रीव यह सुनकर उदास हो गये। राक्षस जब आपको लेकर आ रहा था, और आपने अपने आभूषण फेंक दिये थे, तो उनको उठाकर हम लोगों ने रख लिया था, किन्तु यह नहीं मालूम था कि वह किसे कहाँ लिये जा रहा है। लक्ष्मण के बताने पर हम लोगों ने अनुमान किया कि शायद सीता वही होंगी, जिन्होंने आभूषण फेंके थे। सुग्रीव ने रामचन्द्र को आभूषण दिये। उनको देखकर वे बहुत दुःखित हुए और गोद में रखकर रोने लगे। उनका शोक और भी बढ़ गया। शोक से व्याकुल होकर पृथिवी पर गिर पड़े। हमने मधुर वचनों से समझाकर उनको उठाया। उन्होंने बार-बार देखकर और लक्ष्मण को दिखाकर सुग्रीव को दे दिया। २१—४३। हे देवि, आपके वियोग में रामचन्द्र शोक से पीड़ित रहते हैं। शोक और चिन्ता के मारे उनको नींद नहीं आती। हे राजपुत्री, वे मनोहर वनों में, नदियों और झरनों के किनारे घूमते हैं, किन्तु आपको देखे विना कहीं उनका चित्त प्रसन्न नहीं होता। पुरुषसिंह रामचन्द्र शीघ्र ही रावण का सपरिवार विनाश करके आपको ले जायँगे। ४४—४८। रामचन्द्र ने वालि को मारने और सुग्रीव ने आपको ढूँढ़ने की प्रतिज्ञा की। सुग्रीव दोनों राजकुमारों के साथ किष्किन्धा को गये। रामचन्द्र ने वालि को मारकर रीछों और वानरों का राज्य सुग्रीव को दिया। ४९—५१। इस प्रकार सुग्रीव से रामचन्द्र की मित्रता हुई। मैं उनका दूत हूँ। मेरा नाम हनुमान् है। आपके पास आया हूँ। सुग्रीव ने आपको ढूँढ़ने के लिए सब दिशाओं में वानरों को भेजा है। पर्वत के समान बड़े-बड़े वानर आपको ढूँढ़ने के लिए पृथिवी भर में घूम रहे हैं। ५२—५५। वालि के पुत्र महापराक्रमी अंगद भी वानरों के साथ आये हैं। मैं उन्हीं के साथ आया हूँ। हम लोग विन्ध्याचल के एक बिल में पैठ गये। वहाँ बड़ा अँधेरा था, कहीं कुछ सूझता न था। वहाँ से निकलने का कोई मार्ग

न सूझ पड़ा। शोक से व्याकुल थे, बहुत दिनों तक उस बिल से बाहर न निकल सके। किसी उपाय से बाहर आये, किन्तु लौटने का जो समय नियत था वह उसी बिल में बीत गया। समय तो बीत गया, किन्तु आपका कहीं पता न लगा, तब सुग्रीव के डर के मारे हम लोग प्राण त्यागने को उद्यत हुए। हे देवि, प्रायोपवेशन करने पर अंगद को बड़ा शोक हुआ। वे आपके न मिलने का, वालि की मृत्यु का, हम लोगों के प्रायोपवेशन और जटायु के वध का उल्लेख करके बड़े दुःखित हुए। ५६—६१। उसी समय एक बलवान् पक्षी वहाँ आया। वह गृध्रराज जटायु का भाई सम्पाति था। अपने भाई की मृत्यु सुनकर बड़े क्रोध से बोला—जटायु को किसने कहाँ मारा है? हे वानरो, ठीक-ठीक बताओ। अंगद ने जटायु की मृत्यु का हाल कहा। जिस प्रकार रावण आपको हर लाया और जटायु आपको बचाने के लिए युद्ध में मारे गये, वह सब बताया। ६२—६५। सम्पाति को बड़ा दुःख हुआ। उसने कहा कि सीता लंका में हैं। ६६। आपका पता मिलने से हम लोगों को बड़ा हर्ष हुआ। विन्ध्याचल से उठकर समुद्र के तट पर आये। समुद्र को देखकर वानरों को फिर बड़ी चिन्ता हुई। उनको दुःखित देखकर मैंने उनका भय दूर किया, सौ योजन समुद्र लाँघकर यहाँ आया। मैंने रात में लंका में प्रवेश किया। पहले रावण को देखा, फिर शोक से व्याकुल आपको भी देखा। हे देवि, मैं सब हाल आपसे कह चुका, अब आप मेरा विश्वास करके अपना हाल बताइए। मैं पवन का पुत्र, सुग्रीव का मन्त्री और रामचन्द्र का दूत हूँ। आपको ढूँढ़ने के लिए यहाँ आया हूँ। मुनि के वेश में धनुर्धर रामचन्द्र और उनके भाई लक्ष्मण कुशल से हैं। मैं आपके पति महापराक्रमी रामचन्द्र का हितैषी हूँ। सुग्रीव की आज्ञा से आपको ढूँढ़ता हुआ यहाँ आया हूँ। ६७—७६। हे देवि, आपका पता न लगने से वानर बहुत व्याकुल हैं। शीघ्र लौटकर आपका हाल कहूँगा और उनका शोक दूर करूँगा। मैं जब लौटकर



वीर हनुमान् सीता से बोले—हे वैदेही, मेरा विश्वास करने के लिए राम-नाम से अंकित रामचन्द्र की यह अँगूठी देखिए।

जाऊँगा तब वानर मेरी प्रशंसा करेंगे और महापराक्रमी रामचन्द्र शीघ्र ही रावण को मारकर आपको ले जायँगे। ७७–७९।

हे वैदेही, माल्यवान् नाम का एक बड़ा पर्वत है। मेरे पिता केसरी उस पर्वत पर रहते थे, फिर वहाँ से गोकर्ण पर्वत पर चले गये। उन्होंने देवर्षियों की आज्ञा से समुद्र के तट पर शाम्बसादन असुर को मार डाला था। मैं केसरी का क्षेत्रज पुत्र हूँ, और वायु से उत्पन्न हुआ हूँ। मेरा नाम हनुमान् है, मेरा पराक्रम संसार में प्रसिद्ध है। हे वैदेही, आपको विश्वास दिलाने के लिए मैंने रामचन्द्र के गुणों का बखान किया। वे शीघ्र ही आपको ले जायँगे, इसमें सन्देह नहीं है। ८०–८३।

सीता को हनुमान् की बातों से विश्वास हुआ। रामचन्द्र का दूत जानकर बड़ी प्रसन्न हुईं। उनकी आँखों से आनन्द के आँसू बहने लगे। बड़ी-बड़ी आँखों से शोभित सीता का मुँह राहु से मुक्त चन्द्रमा के समान प्रसन्न हो गया। उनके मन में हनुमान् के प्रति जो सन्देह था वह दूर हो गया। उसके बाद हनुमान् फिर बोले—हे वैदेही, आपने जो पूछा था वह मैंने बताया, अब आप मेरा विश्वास करें। मैं शीघ्र ही रामचन्द्र के पास जाऊँगा। अतएव जो कुछ कहना चाहती हों सो मुझसे कहें, और मेरा जो कर्तव्य हो सो भी बतावें। मैं वायु का पुत्र हूँ, मेरा प्रभाव वायु के समान है। आप जो आज्ञा देंगी, वह मैं अपने पराक्रम से करूँगा। ८४–८९।

सर्ग ३६

वीर हनुमान् सीता को विश्वास दिलाते हुए फिर बोले—हे वैदेही, मैं यथार्थ में वानर हूँ और बुद्धिमान् रामचन्द्र का दूत हूँ। मेरा विश्वास करने के लिए उनके नाम से अंकित यह अँगूठी देखिए। इसे महात्मा रामचन्द्र ने आपके विश्वास के लिए दिया है। अब आप धैर्य रखिए और अपने दुःखों का अन्त समझिए। १–३। जनक-

नन्दिनी सीता अपने स्वामी की अँगूठी देखकर ऐसी प्रसन्न हुई, मानो उनके पति का समागम हुआ। विशाल नेत्रों से शोभित उनका सुन्दर मुख राहुमुक्त चन्द्रमा के समान प्रसन्न हो गया। ४—५। वे बड़े आदर से हनुमान् की प्रशंसा करने लगीं—हे वानरोत्तम, तुम देश-काल के अनुसार कार्य करने में निपुण, सब शास्त्रों के मर्मज्ञ और वीर हो इसी से तुम राक्षसों की नगरी लंका में आ सके हो। सौ योजन समुद्र गोपद के समान लाँघ आये हो। तुम्हारा पराक्रम प्रशंसनीय है। तुम समुद्र को देखकर नहीं डरे और रावण से तुमको भय नहीं हुआ, इससे जान पड़ता है कि तुम साधारण वानर नहीं हो। फिर रामचन्द्र तुम्हारा पराक्रम जाने बिना और परीक्षा किये बिना तुमको हमारे पास क्यों भेजते! धर्मात्मा रामचन्द्र और महातेजस्वी लक्ष्मण हमारे भाग्य से सकुशल हैं न? वीर रामचन्द्र यदि कुशल से हैं तो उन्होंने हमारे लिए प्रलयकाल की अग्नि के समान कुपित होकर समुद्र पर्यन्त पृथिवी को भस्म क्यों नहीं कर दिया? अथवा पृथिवी को भस्म करना तो साधारण काम है, वे तो देवताओं को भी क़ैद कर सकते हैं। किन्तु हमारे दुःख के नाश का समय नहीं आया, इसी से वे चुप बैठे हैं। ६—१४।

सीता फिर बोलीं—हे कपिवर, पुरुषश्रेष्ठ रामचन्द्र शोक से व्यथित न होकर, धैर्य के साथ, हमको इस दुःख से छुड़ाने का उपाय करते हैं या नहीं? घबराकर मोहित तो नहीं होते? शत्रु को जीतने की इच्छा से मित्रों के साथ दान तथा शत्रुओं के साथ भेद और दंड नीति वर्तते हैं न? मित्रों के साथ उपकार करते और उनसे प्रत्युपकार की इच्छा करते हैं? देवताओं से प्रार्थना करते हैं तथा पुरुषत्व और भाग्य दोनों का भरोसा करते हैं न? मेरा स्नेह तो नहीं छोड़ दिया? वे मुझे इस दुःख से छुड़ावेंगे या नहीं? १५—२०। वे हमेशा सुख में रहे हैं, कभी दुःख नहीं उठाया, अतएव लगातार दुःख मिलने से घबरा तो नहीं गये? कौसल्या, सुमित्रा और भरत के कुशल-समाचार मिलते

रहते हैं या नहीं ? हमारे वियोग के शोक से दुःखित और उदास तो नहीं रहते ? क्या हमको इस दुःख से उबारेंगे ? क्या भ्रातृवत्सल भरत, हमारे उद्धार के लिए मन्त्रियों से सुरक्षित एक अक्षौहिणी सेना भेजेंगे ? क्या वानरराज सुग्रीव वानरों की सेना लेकर हमारे लिए यहाँ आवेंगे ? । २१—२५ । क्या वीर लक्ष्मण पैने बाणों से राक्षसों का संहार करेंगे ? क्या रामचन्द्र अमोघ बाणों से सपरिवार रावण का विनाश करेंगे और मैं शीघ्र ही उनको देखूँगी ? जैसे पानी के विना कमल सूख जाता है, वैसे ही कमल के समान सुन्दर रामचन्द्र का मुख हमारे वियोग में सूख गया होगा ? जो धर्म के लिए राज्य छोड़कर भी दुःखित नहीं हुए, जिन्होंने पैदल वन में आकर वनवास के क्लेश का अनुभव नहीं किया, वे रामचन्द्र धैर्य रखते हैं न ? उनको माता-पिता आदि किसी का भी हमसे बढ़कर स्नेह नहीं है । हे दूत, जब तक रामचन्द्र की प्रवृत्ति नहीं मालूम होती, तभी तक मैं जीवित हूँ । यदि रामचन्द्र मेरा उद्धार न करेंगे, तो मैं प्राण त्याग दूँगी ।२६—३०। सीता इस प्रकार मधुर, गम्भीर और अर्थयुक्त वचन कहकर फिर रामचन्द्र के हाल सुनने के लिए चुप हो गईं । ३१ ।

हनुमान् हाथ जोड़कर बोले—हे देवि, आप लंका में हैं, यह बात रामचन्द्र नहीं जानते, इसी कारण आपको अभी तक दुःख उठाना पड़ा । मुझसे आपका पता सुनकर रीछों और वानरों की सेना के साथ शीघ्र यहाँ आवेंगे और राक्षसों का विनाश करेंगे । ३२—३५ । देवता, असुर और काल भी यदि उनके मार्ग में विघ्न डालेंगे तो उनका भी विनाश कर देंगे । हे आर्ये, रामचन्द्र आपके वियोग में सिंह से पीड़ित हाथी के समान दुःखित रहते हैं । हे देवि ! मन्दर, मलय, विन्ध्य, मेरु, और दर्दुर पर्वत तथा फल और मूल की शपथ करके मैं कहता हूँ कि आप सुन्दर कुंडलों से भूषित, बिम्ब के समान लाल होंठों से शोभित रामचन्द्र का मनोहर मुख पूर्णचन्द्रमा के समान शीघ्र देखेंगी । हे वैदेही, आप

ऐरावत पर सवार इन्द्र के समान, प्रस्रवण पर्वत पर रामचन्द्र का दर्शन शीघ्र करेंगी। ३६–४०। रामचन्द्र ने मधु और मांस त्याग दिया है, केवल संन्ध्या के समय फल-मूल खाते हैं। आपकी चिन्ता में इतने व्याकुल रहते हैं कि देह पर बैठे हुए मच्छरों को भी भगाने की उन्हें सुध नहीं रहती। उनको और कोई चिन्ता नहीं होती, केवल आपकी ही चिन्ता करते रहते हैं। उनको नींद बहुत कम आती है। किसी तरह जब नींद आती है तो 'सीता' कहकर जाग पड़ते हैं। फल-फूल या स्त्रियों की कोई वस्तु देखकर 'हा प्रिये' कहते और लम्बी साँस छोड़ते हैं। ४१–४५। हे देवि, किसी से बातें करते समय भी आपके शोक से व्याकुल रहते हैं, और आपको पाने की आशा से यत्न करते हैं। रामचन्द्र के शोक का हाल सुनकर सीता को शोक हुआ, किन्तु उनके कुशल-समाचार मिले थे, इसलिए बादल से निकले हुए चन्द्रमा से प्रकाशित, शरदृऋतु की रात्रि के समान प्रसन्न भी हुईं। ४६–४७।

सर्ग ३७

चन्द्रमुखी सीता हनुमान् के यह वचन सुनकर फिर बोलीं—हे वानर, तुम्हारे वचनों में अमृत और विष मिला है। रामचन्द्र हमारी चिन्ता करते हैं यह अमृत के समान मधुर, और शोक से व्याकुल हैं यह विष के समान कटु है। दैव बड़ा बलवान् है, उसका अतिक्रम कोई नहीं कर सकता। मनुष्य चाहे ऐश्वर्यवान् हो और चाहे विपत्ति में पड़ा हो, दैव सभी के ऊपर आक्रमण करता है। हम लोग इस समय विपत्ति में हैं। नाव के डूबने पर जैसे तैरकर कोई समुद्र पार करे, वैसे ही रामचन्द्र इस विपत्ति से छुटकारा पावेंगे। १–५। राक्षसों समेत रावण को मारकर लंका का विध्वंस करके मुझे कब देखेंगे? एक वर्ष तक मैं यहाँ जीवित रह सकूँगी, अतएव यह वर्ष पूरा होने के पहले ही तुम उनको यहाँ लाओ। अब दसवाँ महीना बीत रहा है, केवल दो महीने बाकी हैं।

निठुर रावण ने मुझे इतना ही समय दिया है। विभीषण ने रावण को बहुत समझाया कि सीता को वापस कर दो। किन्तु उसने विभीषण की बात नहीं मानी। वह मुझे लौटाना नहीं चाहता, क्योंकि वह काम के वश है और उसकी मृत्यु उसे खींच रही है। ६–१०। विभीषण की बड़ी लड़की कला मेरे पास आई थी वह यह हाल बता गई है। उस ने यह भी बताया कि अविन्ध्य नाम का एक वृद्ध राक्षस है, वह बड़ा धैर्यवान्, सुशील, विद्वान् और बुद्धिमान् है। उसने भी रावण को बहुत समझाया और कहा कि यदि सीता को नहीं लौटाओगे तो रामचन्द्र राक्षसों का विनाश कर देंगे। किन्तु उसने उसकी भी बात नहीं सुनी। हे कपिवर, मुझे आशा है कि रामचन्द्र शीघ्र मेरा उद्धार करेंगे, क्योंकि मैं उनका प्रभाव जानती हूँ। उत्साह, पौरुष, बल, सरलता, कृतज्ञता आदि अनेक गुण रामचन्द्र में हैं। उन्होंने जनस्थान में अकेले चौदह हज़ार राक्षसों को मार डाला। उनसे कौन शत्रु नहीं घबराता। जैसे शची इन्द्र का प्रभाव जानती हैं वैसे ही मैं रामचन्द्र का प्रभाव जानती हूँ। राक्षसों के साथ रामचन्द्र की तुलना करना अनुचित है। जैसे सूर्य अपनी किरणों से पानी सोख लेते हैं, वैसे ही रामचन्द्र बाणों से राक्षसों का विनाश करेंगे। ११–१८।

शोक से व्याकुल और रोती हुई सीता के यह कहने पर महावीर हनुमान् बोले—हे देवि, आपका समाचार पाकर रामचन्द्र रीछों और वानरों की सेना के साथ शीघ्र आवेंगे। अथवा हे अनिन्दिते, आप मेरी पीठ पर बैठ जाइए, मैं आज ही आपको इस दुःख से छुड़ा दूँ। आप को लेकर समुद्र तैर जाना तो कोई बात ही नहीं, मैं रावण के सहित इस लंका को भी ले जा सकता हूँ। १९–२२। हे मैथिलि, जैसे हवन किये हुए पदार्थ को अग्नि इन्द्र के पास पहुँचा देता है, वैसे ही मैं आपको लेकर प्रस्रवण पर्वत पर रामचन्द्र को सौंप दूँगा। दैत्यों का वध करनेवाले विष्णु के समान रामचन्द्र को आप आज ही देखेंगी। २३–२४।

हे देवि, आपको देखने के लिए उत्सुक रामचन्द्र प्रस्रवण पर्वत के शिखर पर इन्द्र के समान बैठे हैं, यदि आपकी इच्छा हो तो मेरी पीठ पर बैठिए, और जैसे रोहिणी चन्द्रमा से, सुवर्चला सूर्य से और शची इन्द्र से मिलती हैं वैसे ही आकाशमार्ग से समुद्र के पार चलकर रामचन्द्र से मिलिए। २५—२७। हे देवि, मैं जब आपको लेकर चलूँगा, तब कोई राक्षस मेरा पीछा न कर सकेगा। २८। आप देखेंगी कि मैं जिस प्रकार आकाशमार्ग से यहाँ आया हूँ, उसी प्रकार आपको पीठ पर बैठाकर भी आकाशमार्ग से ही चलूँगा, इसमें सन्देह नहीं। २६

हनुमान् के यह अद्भुत वचन सुनकर हर्ष से सीता के सब अंग पुलकित होगये। वे बड़े आश्चर्य से बोलीं—तुम अपनी पीठ पर बैठा कर मुझे इतनी दूर कैसे ले जा सकोगे? तुम्हारा जो रूप देखती हूँ, इससे तुमको साधारण वानर समझती हूँ। हे वानर-वीर, तुम छोटे-से वानर होकर मुझे रामचन्द्र के पास कैसे ले चलोगे?। ३०—३२। हनुमान् ने अपने मन में सोचा कि सीता मेरा प्रभाव और बल नहीं जानतीं, इसी से मेरा निरादर करती हैं। मैं अपनी इच्छा से जैसा रूप धारण कर सकता हूँ, वह इनको दिखाऊँ। यह सोचकर उन्होंने शत्रुओं का विनाश करनेवाला रूप दिखाया। ३३—३५। उस पेड़ से कूद पड़े और सीता को विश्वास दिलाने के लिए अपनी देह बढ़ाने लगे। अग्नि के समान प्रकाशित होकर मेरु और मन्दर पर्वत के समान ऊँचे हो गये। उनका मुँह लाल तथा दाँत और नख वज्र के समान हो गये। वे पर्वत के समान रूप धारण करके बोले—हे देवि, पर्वत, वन, प्राकार, तोरण और रावण समेत इस लंका को ले जाने की शक्ति मुझ में है। इसलिए आप सन्देह न कीजिए। मेरी सामर्थ्य का विश्वास करके मेरी पीठ पर बैठिए और चलकर राम-लक्ष्मण का शोक दूर कीजिए। ३६—४०।

पर्वत के समान हनुमान् को देखकर कमलनयनी सीता ने कहा—

हे कपिवर ! तुम्हारा बल, तुम्हारी बुद्धि, वायु के समान तुम्हारी गति और अग्नि के समान अद्भुत तुम्हारा तेज मैं पहले ही जान गई हूँ। साधारण वानर इस अपार समुद्र को पार करके यहाँ कैसे आ सकता है ? मैं जानती हूँ कि तुम मुझे लेकर यहाँ से जा सकते हो, किन्तु कार्य कैसे सिद्ध होगा, इसका विचार कर लेना चाहिए। तुम वायु के समान वेग से आकाश मार्ग से चलोगे, मैं उस वेग में मोहित हो जाऊँगी, बेहोश होकर तुम्हारी पीठ से समुद्र में गिर पड़ूँगी और समुद्र के जीव मुझे खा लेंगे। ४१—४७। इसके सिवा तुमको देखकर दुरात्मा रावण की आज्ञा से महापराक्रमी राक्षस दौड़ेंगे। अस्त्र-शस्त्र लेकर तुमको घेर लेंगे, तुम्हारे भी प्राण संकट में पड़ जायँगे। तुम अकेले हो, अस्त्र-शस्त्र भी तुम्हारे पास नहीं हैं। इसलिए राक्षसों से घिर जाने पर तुम कैसे जा सकोगे और मुझे कैसे बचाओगे ? जब राक्षसों से युद्ध करने लगोगे तब मैं डरकर तुम्हारी पीठ से गिर पड़ूँगी। अथवा हे वानरश्रेष्ठ, राक्षस बड़े बलवान् हैं। यदि उन्होंने युद्ध में तुम्हें जीत लिया, अथवा युद्ध करते समय तुम्हारा ध्यान मेरी रक्षा की ओर न रहा तो मैं तुम्हारी पीठ से गिर पड़ूँगी और पापी राक्षस मुझे पकड़ लावेंगे। युद्ध में हार-जीत का भी कोई विश्वास नहीं, न जाने कौन जीते। हे कपिवर, यदि राक्षसों ने मुझे छीन लिया या मैं समुद्र में गिरकर मर गई तो तुम्हारा प्रयत्न व्यर्थ हो जायगा। ४८—५६। इसके सिवा एक बात और भी है। यद्यपि तुम राक्षसों का वध कर सकते हो; किन्तु तुम्हारे द्वारा राक्षसों का विनाश होने पर रामचन्द्र की कीर्ति न होगी। और यदि राक्षस तुमसे छीन लेंगे, तो फिर मुझे कहीं ऐसे गुप्त स्थान में रक्खेंगे जहाँ कोई मेरा पता न लगा सके। तब तुम्हारा सब परिश्रम व्यर्थ हो जायगा। इसलिए जब रामचन्द्र तुम्हारे साथ आयेंगे, तभी काम बनेगा। हे महाबाहु, रामचन्द्र का जीवन मेरे अधीन है, यदि मैं मर जाऊँगी तो वे और उनके भाई प्राण त्याग देंगे। कुल का विनाश हो जायगा। राम-

लक्ष्मण के न रहने पर सब वानर और रीछ भी प्राण त्याग देंगे। हे वानरश्रेष्ठ, एक बात और भी है। मैं पतिव्रता हूँ, किसी दूसरे पुरुष का स्पर्श करना नहीं चाहती। रावण मुझे बलपूर्वक हर लाया है। उसने पकड़कर रथ पर बैठा लिया। उस समय मैं क्या कर सकती थी। ५७–६३। जब रामचन्द्र राक्षसों के साथ रावण का विनाश करके मुझे ले जायँगे, तभी उनके योग्य काम होगा। युद्ध में शत्रुओं का विनाश करनेवाले महात्मा रामचन्द्र का पराक्रम मैंने सुना है और देखा भी है। देवता, गन्धर्व, नाग और राक्षस कोई भी युद्ध में उनकी समानता नहीं कर सकते। ६४–६५। इन्द्र-तुल्य पराक्रमी, विचित्र धनुष धारण करनेवाले रघुनन्दन राम-लक्ष्मण को वायु से प्रज्वलित अग्नि के समान देखकर उनका प्रभाव कौन सह सकता है। ६६। मतवाले दिग्गज के समान दोनों भाई जब युद्धभूमि में विचरेंगे तब उनका तेज प्रलयकाल के सूर्य के समान असह्य होगा। ६७। हे वीर, तुम राम-लक्ष्मण को वानरों की सेना के साथ शीघ्र यहाँ लाओ और शोक से पीड़ित मुझे प्रसन्न करो। ६८।

सर्ग ३८

बोलने में चतुर वीर हनुमान् ने प्रसन्न होकर कहा—हे देवि, आप पतिव्रता हैं, आपके वचन स्त्रियों के स्वभाव के अनुसार हैं, विनीत और युक्तिसंगत हैं। आपने जो कहा कि दूसरे पुरुष का स्पर्श करना मैं नहीं चाहती, यह पतिव्रत-धर्म के अनुरूप है, और हमारी पीठ पर बैठकर सौ योजन समुद्र के पार जाने का साहस न होना स्त्रियों के स्वभाव के अनुरूप है। आप महात्मा रामचन्द्र की भार्या हैं, ऐसा क्यों न कहें। हे देवि, ऐसी विपत्ति के समय आपके सिवा दूसरी कौन स्त्री ऐसा कह सकती है। १–५। मैं आपकी कही हुई सब बातें बड़े स्नेह से रामचन्द्र से कहूँगा और वे उत्सुक होकर सुनेंगे। सौ योजन समुद्र

पार करके लंका में आना दूसरों के लिए बहुत कठिन है, इसलिए मैंने अपनी सामर्थ्य आपसे कही। मैं रामचन्द्र के स्नेह और भक्ति से आपको आज ही अपने साथ ले जाना चाहता था; किन्तु हे अनिन्दिते यदि आप मेरे साथ चलना पसन्द नहीं करतीं, तो रामचन्द्र के विश्वास के लिए अपना कोई चिह्न मुझे दीजिए। हनुमान् की यह बात सुनकर हर्ष से सीता का गला रुँध गया। वे गद्गद स्वर से मधुर वचन बोलीं—हे वीर, रामचन्द्र से कहना कि चित्रकूट पर्वत के उत्तर-पूर्व में मन्दाकिनी के समीप फल-मूल और सुगन्धित पुष्पों से शोभित वनों में विहार और जल-क्रीड़ा करके जब आप मेरी गोद में बैठ गये थे, तब मांसलोलुप एक कौआ वहाँ आया। मैंने पत्थर फेंककर उसे भगाना चाहा, किन्तु वह नहीं भागा। तब मैं क्रोध में आकर उसको भगाने के लिए दौड़ी। मेरा वस्त्र कमर से नीचे खिसक गया, यह देखकर आप बहुत हँसे। आपके हँसने पर मुझे क्रोध और लज्जा आई। मैं लौटकर आपकी गोद में बैठ गई, रोने और आँसू पोंछने लगी। मुझे क्रुद्ध देखकर आपने बहुत समझाया, किन्तु मेरा क्रोध नहीं गया। मैं आपकी गोद में सो गई। जब मेरी नींद खुली तब आप सो गये। आपको सोते देखकर वह कौआ फिर वहाँ आया और मेरी छाती में चोंच मारकर भागा। उसी समय आपकी नींद खुली। मेरी वह दशा देखकर आप बड़े क्रोध से विषैले साँप की तरह साँस छोड़कर बोले—तुम्हारी छाती में किसने घाव कर दिया है? वह कौन है, जो पँचमुँहे क्रुद्ध साँप के साथ खेलता है? जब आपने दूसरी ओर देखा तो वह कौआ दिखाई दिया। उसके नखों में रुधिर लगा था और वह मेरी ओर देख रहा था। वह कौआ इन्द्र का पुत्र था, उसकी गति वायु के समान थी। आपने क्रोध से लाल आँखें करके एक कुश उठाया और ब्रह्मास्त्र मन्त्र से अभिमन्त्रित करके धनुष पर रखकर कौए पर चलाया। धनुष उठाते देखकर कौआ भागा और आपका अभिमन्त्रित किया हुआ कुश प्रलयकाल की अग्नि के

समान उसके पीछे चला। ६—३०। वह अपनी रक्षा के लिए स
लोकों में घूमा, पर उसे कहीं शरण न मिली। उसके पिता इन्द्र भ
उसकी रक्षा न कर सके। देवता और ऋषि-मुनि कोई भी उसे न बच
सके। जब उसे कहीं शरण न मिली तो वह आपकी शरण में आया
यद्यपि वह कौआ वध करने के योग्य था, किन्तु आप शरणागत के
रक्षक हैं, आपने उसे छोड़ दिया। जब दुःखित होकर वह आपके चरण
पर गिरा, तब आपने कहा कि यह अभिमन्त्रित ब्रह्मास्त्र निष्फल नह
हो सकता; बताओ तुम्हारा क्या नष्ट करें? उसने कहा कि मुझे प्राणों
न मारिए, मेरी एक आँख फोड़ दीजिए। तब आपने उसकी दाहिन
आँख फोड़ दी और उसे जीवित छोड़ दिया। वह आपको और आप
पिता को प्रणाम करके चला गया। मेरी ओर से रामचन्द्र से कहन
हे राजन्, थोड़ा अपराध करने पर भी आपने उस कौए पर ब्रह्मास्त्र चलाय
था, किन्तु यह राक्षस मुझे हर लाया है, इसे आप क्यों क्षमा करते हैं
हे पुरुषश्रेष्ठ, मुझ पर कृपा कीजिए। हे नाथ, आपके समान स्वाम
पाकर, सनाथ होने पर भी मैं अनाथ के समान हूँ। मैंने आपके मुँह
सुना है कि दया के समान और कोई धर्म नहीं है, फिर आप मुझपर क्य
दया नहीं करते? मैं जानती हूँ कि आप समुद्र के समान गम्भीर, धैर्यवान
उत्साही, अस्त्र-शस्त्र जाननेवालों में श्रेष्ठ, और इन्द्र-तुल्य पराक्रमी हैं
फिर राक्षसों पर अस्त्र क्यों नहीं उठाते? ३१—४१। यह कहते-कहत
सीता का गला भर आया, कुछ सुस्थ होकर फिर बोलीं—हे वीर! देवता
दानव, गन्धर्व, नाग और मरुद्गण भी युद्ध में रामचन्द्र का पराक्र
नहीं सह सकते। वे यदि मेरा आदर करते हैं, तो तीक्ष्ण बाणों से राक्षस
कुल का विनाश क्यों नहीं करते? शत्रुनाशन महाबली लक्ष्मण
भाई की अनुमति लेकर मेरी रक्षा क्यों नहीं करते? वायु और इन्द्र के
समान तेजस्वी रामचन्द्र और लक्ष्मण देवताओं से भी अजेय हैं,
मेरी उपेक्षा क्यों करते हैं? यह मेरा दुर्भाग्य है। ४२—४६

महातेजस्वी हनुमान् ने कहा—हे देवि, मैं सत्य की शपथ करके कहता हूँ, रामचन्द्र आपके वियोग में बहुत दुःखित हैं। उनका शोक देखकर लक्ष्मण को भी बड़ा दुःख होता है। बड़े कष्ट से मैंने आपको देखा है, अब शीघ्र ही आपके दुःख दूर होंगे, इसलिए अब शोक करने का समय नहीं है। रामचन्द्र और लक्ष्मण बड़े उत्साह से राक्षसों का विनाश करेंगे। ४७–५०। हे विशालाक्षि, दुरात्मा रावण का सपरिवार विनाश होगा। आपको शीघ्र अयोध्या को ले जायँगे। अब आप जो सन्देश कहना चाहती हों, वह कहिए। हनुमान् के यह कहने पर सीता बोलीं—मेरी ओर से रामचन्द्र की कुशल पूछना और सिर से उनको प्रणाम करना। और, सुमित्रा जिनको उत्पन्न करके सुपुत्रवती हुई हैं; जो दुर्लभ ऐश्वर्य, स्त्री और धन-रत्न त्यागकर, पिता-माता को प्रणाम और प्रसन्न करके, सब प्रकार के सुख छोड़कर, अपने भाई के अनुगामी होकर उनके साथ वन में आये हैं; जिनके कन्धे सिंह के समान हैं; जो महाबाहु रामचन्द्र को पिता के समान और मुझे माता के समान मानते हैं; उन प्रियदर्शन वीर लक्ष्मण को उस समय मेरे हरने का हाल नहीं मालूम हुआ। वे मितभाषी हैं, वृद्धों की सेवा करते हैं, गुणों में मेरे ससुर के समान हैं और रामचन्द्र को मुझसे भी बढ़कर प्रिय हैं। जिनको देखकर रामचन्द्र पिता का दुःख भूल जाते हैं। तुम मेरी ओर से उनकी कुशल पूछना। हे वानरश्रेष्ठ! ऐसा उपाय करो, जिसमें रामचन्द्र के प्रिय, शान्तप्रकृति, कार्यकुशल लक्ष्मण मुझे इस दुःख से छुड़ाने का संकल्प करें। जिस उपाय से यह काम सिद्ध हो, वही उपाय करो। तुम्हारे उत्साहित करने पर रामचन्द्र मेरे लिए उद्योग करेंगे। इस कार्य को सिद्ध करनेवाले तुम्हीं हो। वीर रामचन्द्र से मेरी ओर से बार-बार कहना कि अब मैं केवल एक मास और जी सकती हूँ। मैं सत्य कहती हूँ; यदि वे इस महीने में न आये तो मैं प्राण त्याग दूँगी। रामचन्द्र मेरी रक्षा करने में वैसे ही समर्थ हैं, जैसे वराहरूप

भगवान् विष्णु पाताल से पृथिवी को लाये थे। ५१—६५। उसके बाद सीता ने अपनी चूड़ामणि हनुमान् को दी और कहा कि इसे रामचन्द्र को देना। महावीर हनुमान् ने उस उत्तम मणि को लेकर अपनी अँगुली में पहनना चाहा, किन्तु प्रकाश की आशंका से नहीं पहना। उसके बाद वे सीता को प्रणाम और प्रदक्षिणा करके विनीतभाव से खड़े हुए। सीता को देखकर उनका चित्त बहुत प्रसन्न हुआ। वे मन में रामचन्द्र और लक्ष्मण का स्मरण करने लगे। जैसे पर्वत के शिखर पर आँधी के वेग से बचकर मनुष्य सुखी होता है, वैसे ही हनुमान् प्रसन्न हुए और चलने के लिए तैयार हुए। ६६—७०।

सर्ग ३९

हनुमान् को मणि देकर सीता फिर बोलीं—रामचन्द्र इस मणि को अच्छी तरह पहचानते हैं। इसे देखकर वे मेरा, अपनी माता कौसल्या का और राजा दशरथ का स्मरण करेंगे। हे कपिवर, मैं तुमको फिर उत्साहित करती हूँ; अब क्या करना चाहिए, यह सोचो। इस काम के अगुवा तुम्हीं हो, इसलिए ऐसा उपाय करो कि मुझे इस दुःख से छुटकारा मिले। महापराक्रमी हनुमान् ने उनकी बात स्वीकार की और उनको प्रणाम करके चलने की तैयारी की। १—५। यह देखकर सीता फिर गद्गद स्वर से बोलीं—रामचन्द्र, लक्ष्मण, मन्त्री सुग्रीव और वृद्ध वानरों से कुशल पूछना और जिस उपाय से रामचन्द्र इस दुःख से मेरी रक्षा करें, वैसा उद्योग करना। ६—९। उनसे इस प्रकार समझा कर कहना कि मेरे जीते-जी मेरा उद्धार करें। ऐसा करने से तुमको वाचिक धर्म होगा। १०। रामचन्द्र उत्साही हैं, मेरा सन्देश पाकर उनका पौरुष बढ़ेगा। तुम्हारे मुँह से मेरा सन्देश सुनते ही वीर रामचन्द्र पराक्रम प्रकट करने का विचार करेंगे। ११—१२। हनुमान् ने हाथ जोड़कर कहा—हे देवि, रामचन्द्र शीघ्र ही बलवान् वानरों और

रीछों के साथ आकर शत्रुओं का विनाश करके आपका दुःख दूर करेंगे। १३—१४। उनके बाणों के सामने देवता, दानव, मनुष्य और राक्षस कोई भी नहीं ठहर सकता। १५। सूर्य, इन्द्र और यम भी उनके बाण नहीं सह सकते। हे जनकनन्दिनी, वे आपके लिए समुद्र पर्यन्त पृथिवी को जीत सकते हैं। १६—१७। हनुमान् के युक्तिसंगत वचन सुनकर सीता ने उनकी बातों का सम्मान किया। फिर बार-बार उनकी ओर देखकर बोलीं—हे वीर, यदि तुम उचित समझो तो कहीं गुप्त स्थान में एक दिन ठहर जाओ; आज विश्राम करके कल चले जाना। तुमको देखने से मेरा दुःख कम हो जाता है। किन्तु एक दिन ठहरने से फिर आने में देर तो न होगी, यह सन्देह होता है। यदि तुम्हारे न आने का सन्देह हुआ तो मेरे प्राण न रहेंगे। तुम्हारे चले जाने पर मेरा शोक और बढ़ेगा। मुझे सन्देह होता है कि तुम्हारे सहायक वानर और रीछ इस अपार समुद्र को पार करके यहाँ कैसे आवेंगे। रामचन्द्र और लक्ष्मण ही कैसे आ सकेंगे! गरुड़, वायु और तुम्हारे सिवा और कोई महासागर पार करने की शक्ति नहीं रखता। १८—२६। अतएव हे वीर, इस कठिन काम के करने का क्या उपाय सोचते हो? तुम कार्य-कुशल हो। २७। अथवा हे शत्रुनाशन, यदि तुम अकेले ही इस काम को कर सकते हो तो तुम्हीं यश प्राप्त करो। २८। किन्तु यदि महात्मा रामचन्द्र सेना के साथ यहाँ आकर युद्ध में रावण का विनाश करके मुझे अपने साथ अयोध्या को ले जायँ तो उनके योग्य काम हो। २९—३१। हे वीर, जिस तरह उन महात्मा के अनुरूप काम हो सके, वैसा ही उपाय करो। सीता के यह युक्तिसंगत वचन सुन कर हनुमान् ने उत्तर दिया—वानरों और रीछों के राजा पराक्रमी सुग्रीव ने आपका उद्धार करने की प्रतिज्ञा की है। वे असंख्य वानर लेकर शीघ्र आवेंगे। मन के समान वेग से चलनेवाले, महाबली, बड़े साहसी, करोड़ों वानर उनकी आज्ञा में हैं। वे सर्वत्र जा सकते हैं। उनकी

गति कहीं नहीं रुकती। वे बड़े उत्साही हैं। बड़े-बड़े कठिन काम कर सकते हैं। ३२–३६। वे अनेक बार आकाशमार्ग से समुद्र और पर्वतों समेत पृथिवी की प्रदक्षिणा कर चुके हैं। सुग्रीव की आज्ञा में मेरे समान और मुझसे भी बढ़कर बहुत वानर हैं। ३७–३८। मैं तो एक साधारण वानर हूँ। जब मैं यहाँ आ सका, तो महाबली वानरों के लिए क्या कहना है। यह भी सोचिए कि साधारण व्यक्ति ही दूत का काम करने के लिए भेजा जाता है, प्रधान नहीं भेजे जाते। इसलिए खेद न करो, शोक छोड़ दो। वे सब वानर एक ही कुलाँच में समुद्र लाँघकर लंका में आवेंगे। ३९–४०। वीर रामचन्द्र और लक्ष्मण मेरी पीठ पर बैठ कर सूर्य और चन्द्रमा के समान यहाँ आवेंगे और बाणों से लंका का विध्वंस करेंगे। सपरिवार रावण का विनाश करके आपको लेकर अयोध्या को जायँगे। इसलिए धैर्य रखिए, आपका कल्याण होगा। थोड़े दिन और प्रतीक्षा कीजिए, शीघ्र ही अग्नि के समान तेजस्वी रामचन्द्र के दर्शन होंगे। पुत्र, मन्त्री तथा बान्धवों समेत रावण का विनाश होगा और आप वैसे ही रामचन्द्र को मिलेंगी, जैसे रोहिणी चन्द्रमा को मिलती है। ४१–४५। हे देवि, शीघ्र ही आपका शोक दूर होगा, आप देखेंगी कि रामचन्द्र ने रावण का विनाश कर दिया है। ४६। हनुमान् इस प्रकार सीता को समझाकर चलने की तैयारी करके फिर बोले—हे देवि, आप शीघ्र ही देखेंगी कि शत्रुओं का नाश करनेवाले विजयी राम-लक्ष्मण धनुष लिये लंका के द्वार पर खड़े हैं। सिंह के समान पराक्रमी, गजराज के समान महाकाय, नख और दाँत ही जिनके अस्त्र हैं, ऐसे वीर वानरों के साथ लंका में आये हैं, और पर्वत तथा बादलों के समान झुंड के झुंड वानर लंका के ऊपर गरज रहे हैं। ४७–५०। रामचन्द्र आपके वियोग में दुःखित हैं, आप को देखे विना किसी प्रकार उनको शान्ति नहीं मिलती। ५१। हे देवि, अब शोक न कीजिए, भय का भी कोई कारण नहीं है। आप शीघ्र

ही रामचन्द्र को मिलेंगी, जैसे शची इन्द्र को मिली थीं। ५२। रामचन्द्र और लक्ष्मण से बढ़कर वीर कौन है, जो उनसे युद्ध कर सके? वे दोनों भाई तेज में अग्नि के समान और वेग में वायु के समान हैं। वही आपका आश्रय हैं। ५३। हे देवि, अब आप अधिक दिनों तक राक्षसों के वश में न रहेंगी। शीघ्र ही रामचन्द्र आवेंगे। जब तक मैं उनके पास नहीं पहुँचता तब तक आप और सहन कीजिए। ५४।

सर्ग ४०

महात्मा हनुमान् की बातें सुनकर सीता फिर बोलीं--हनुमान्, जैसे सूखते हुए धान के खेत पानी बरसने से हरे हो जाते हैं, वैसे ही तुमको देखकर मुझे हर्ष हुआ। अब मुझ पर कृपा करके शीघ्र ऐसा उपाय करो कि मैं रामचन्द्र से मिलूँ। हे कपिवर, रामचन्द्र को यह चूड़ामणि देना, दूसरा चिह्न कौए की आँख फोड़ने का स्मरण कराना, तीसरा चिह्न यह बतलाना कि एक बार मेरे माथे का तिलक बिगड़ गया था, तब आपने मैनसिल से तिलक लगाया था, उसका स्मरण कीजिए। १--५। रामचन्द्र इन्द्र और वरुण के समान पराक्रमी हैं। मुझे राक्षस हर लाया, मैं राक्षस के घर में हूँ, इसे वे किस प्रकार सहन करते हैं। मैंने बड़े यत्न से इस दिव्य चूड़ामणि की रक्षा की है। दुःख के समय इसे देखकर रामचन्द्र का दर्शन पाने के समान हर्ष होता है। इसे अपने चिह्न के लिए उनके पास भेजती हूँ। यदि वे एक मास के भीतर न आवेंगे तो मैं जीवित न रह सकूँगी। असह्य दुःख, मर्मभेदी बातें और राक्षसों के बीच में निवास, यह सब उन्हीं के लिए सह रही हूँ। हे शत्रुनाशन, मैं एक मास और जीती हूँ। यदि एक महीने के भीतर वे न आये तो मैं प्राण त्याग दूँगी। ६--१०। राक्षस रावण बड़ा दुष्ट है, वह कुदृष्टि से मुझे देखता है। यदि उनके आने में विलम्ब हुआ तो मेरी मृत्यु निश्चित है।

रोती हुई सीता के दीन वचन सुनकर महावीर हनुमान् बोले—देवि, मैं सत्य की शपथ करके कहता हूँ, आपके शोक में रामचन्द्र सब कामों में उदासीन रहते हैं। रामचन्द्र को शोक से व्याकुल देखकर लक्ष्मण को भी सन्ताप होता है। दुर्भाग्य से आपको बड़े कष्ट मिले, किन्तु अब शोक करने का समय नहीं है। आप बहुत शीघ्र अपने दुःखों का अन्त देखेंगी। दोनों राजकुमार आपके लिए लंका को भस्म कर देंगे। ११–१५। युद्ध में सेना और परिवार सहित रावण का विनाश करके आपको अयोध्या को ले जायँगे। हे अनिन्दिते, रामचन्द्र को विश्वास दिलाने के लिए, और अधिक प्रेम होने के लिए और भी कोई ऐसा चिह्न दीजिए, जिसे वे पहचानते हों। सीता ने कहा—हे वीर, मैंने बहुत अच्छा चिह्न दिया है, इसे देखते ही रामचन्द्र को विश्वास हो जायगा। १६–१९। उसके बाद हनुमान् सीता को प्रणाम करके चलने को तैयार हुए। उन्होंने कूदने के लिए बड़े वेग से अपनी देह बढ़ाई। यह देखकर सीता फिर रोकर बोलीं—हे हनुमान्, सिंह के समान पराक्रमी रामचन्द्र, लक्ष्मण, सुग्रीव और उनके मन्त्रियों की कुशल मेरी ओर से पूछना। महाबाहु रामचन्द्र शीघ्र मुझे इस शोक-सागर से उबारें, ऐसा उपाय करना। मेरा असह्य दुःख और रावण की डाट-फटकार रामचन्द्र को बतलाना। हे वीर, तुम्हारा कल्याण हो। महावीर हनुमान् राजपुत्री सीता का सन्देश लेकर बड़े हर्ष से चले। उन्होंने सोचा कि थोड़ा काम और बाक़ी है, इसलिए उत्तर की ओर गये। २०–२५।

सर्ग ४१

चलते समय सीता ने मधुर वचनों से हनुमान् का सम्मान किया। हनुमान् वहाँ से चलकर मन में सोचने लगे—सीता का दर्शन तो हो गया, अब शत्रु को अपना पराक्रम दिखाना चाहिए। वह काम साम

दान अथवा भेद से नहीं होगा, दंड से ही हो सकता है। क्योंकि राक्षस समझाने से नहीं मानेंगे, इसलिए साम उपाय व्यर्थ होगा। वे धन-सम्पन्न हैं, इसलिए दान का भी कोई फल नहीं हो सकता। बलवान् पुरुषों में भेद उपाय का भी सुयोग मिलना कठिन होता है, अतएव पराक्रम दिखाना ही उचित है। पराक्रम दिखाने के सिवा शत्रुओं का बल जानने का और कोई उपाय नहीं है। युद्ध में कुछ वीर मारे जायँ तो सम्भव है कि राक्षसों का अभिमान कुछ कम हो।१—४। मुख्य काम हो जाने पर यदि उसके विरुद्ध न हों, तो दूसरे भी काम करना अनुचित नहीं होता। बल्कि मुख्य काम के अनुकूल अन्य भी काम करनेवाला दूत योग्य समझा जाता है। ५। जो दूत बहुत यत्न करने पर थोड़ा काम कर सकता है वह श्रेष्ठ नहीं कहाता, जो सरलता से काम सिद्ध कर लेता है वही श्रेष्ठ दूत है। सीता का पता लगाना मुख्य कार्य था। वह हो गया। अब यदि राक्षसों के बल का भी अन्दाज़ा हो जाय तो और भी अच्छा है। इस काम के लिए क्या उपाय करना चाहिए? रावण के सैनिकों के साथ कैसे युद्ध हो और रावण अपने सैनिकों के बल से मेरे बल की नाप-तोल कैसे करे? ६—८। राक्षसों से युद्ध करके उनका बल और अभिप्राय समझ कर किस प्रकार यहाँ से प्रस्थान करूँ? ९। फिर उन्होंने यह निश्चय किया कि रावण का यह उपवन नन्दन वन के समान सुन्दर, अनेक वृक्षों और लताओं से शोभित है, इसे मैं वैसे ही नष्ट कर दूँगा, जैसे सूखे वन को अग्नि जला देती है। अशोक-वन के नष्ट होने पर रावण बड़ा कुपित होगा। वह मुझसे युद्ध करने के लिए राक्षसों की सेना भेजेगा। सेना में हाथी, घोड़े और रथ होंगे। राक्षस अनेक प्रकार के अस्त्र लेकर आवेंगे, तब मैं अपने पराक्रम से बलवान् राक्षसों को युद्ध में मारकर चला जाऊँगा यह सोचते हुए महावीर हनुमान् को बड़ा क्रोध आया। वे वायु के समान बड़े वेग से वृक्षों को तोड़ने लगे। थोड़ी ही देर में वृक्षों

और लताओं से शोभित अशोक-वन को नष्ट कर दिया। १०–१५
वृक्षों के तोड़ डालने से, जलाशयों के घाट तोड़ देने से, पर्वतों के
शिखर गिरा देने से, अनेक पक्षियों से शोभित जलाशयों का जल
मथ डालने और नये पल्लवों से शोभित लताओं तथा वृक्षों के
छिन्न-भिन्न हो जाने से, दावानल से भस्म हुए वन के समान उस वन
की शोभा नष्ट हो गई। टूटी हुई लताएँ, आभूषण और वस्त्रहीन स्त्रियों
के समान हो गईं। १६–१८। लतागृह, शिलागृह और चित्रगृह नष्ट
हो गये। मृग, पक्षी और साँप आदि वन में रहनेवाले जीव दुःखित
हुए। उपवन का सौन्दर्य जाता रहा। इस प्रकार महाकपि हनुमान्
महात्मा रावण का अप्रिय कार्य करके बलवान् राक्षसों से युद्ध करने
के लिए अशोक-वन के फाटक पर खड़े हो गये। १९–२१।

सर्ग ४२

वृक्षों के तोड़ने और पक्षियों के चिल्लाने का शब्द सुनकर लंका
के निवासी राक्षस बहुत डरे। पशु-पक्षी डर के मारे इधर-उधर भागने
और छिपने लगे। राक्षसों को अनेक प्रकार के अशकुन हुए। १–२
अशोक-वाटिका में रहनेवाली राक्षसियाँ सो रही थीं, वे जाग पड़ीं।
उनको डराने के लिए महाबाहु हनुमान् ने भयानक रूप धारण किया।
पर्वत के समान हनुमान् को देखकर राक्षसियों ने सीता से पूछा—
यह कौन है, किसका दूत है, कहाँ से किसलिए आया है? यह तुमसे
क्यों बातें करता था? हे विशालाक्षि, मुझे बताओ, तुमको कोई डर
नहीं है। इसने तुमसे क्या कहा है? ३–७। पतिव्रता सीता ने उत्तर
दिया—कामरूपी राक्षस इच्छानुसार रूप धारण कर सकते हैं, मैं उनको
कैसे जान सकती हूँ। यह कौन है और क्या करेगा, यह तो तुम्हीं लोग
जान सकती हो, क्योंकि साँप के पैर साँप ही जानता है। ८–९। मैं भी
बहुत डर गई हूँ। मुझे तो मालूम होता है कि यह कामरूपी राक्षस है

माया से वानर का रूप धारण करके यहाँ आया है। राक्षसियाँ डरकर भागीं। कुछ तो उसी वन में कहीं छिप रहीं और कुछ यह हाल सुनाने के लिए रावण के पास दौड़ गईं। १०–११। राक्षसियों ने कहा—हे राजन्, अशोक-वन में एक बड़ा पराक्रमी वानर आया है। उसने सीता से कुछ बातें की हैं। हमने सीता से बार-बार उस वानर के विषय में पूछा; किन्तु उन्होंने कुछ नहीं बताया। वह चाहे इन्द्र का दूत हो, चाहे कुबेर का, अथवा रामचन्द्र ने सीता को ढूँढ़ने के लिए उसे भेजा हो। १२–१५। जो हो, उसने अशोक-वाटिका उजाड़ दी है। ऐसा कोई स्थान नहीं, जिसका विनाश न किया हो। जहाँ सीता रहती हैं, उस स्थान को छोड़ दिया है। नहीं मालूम थक जाने के कारण, अथवा सीता की रक्षा करने के लिए उस स्थान का विनाश नहीं किया। किन्तु जब उसने इतना बड़ा वन उजाड़ दिया तो उसे उस स्थान के उजाड़ने में कौन बड़ा परिश्रम था। इससे जान पड़ता है कि सीता की रक्षा के ही लिए उसे छोड़ दिया है। १६–१८। सुन्दर पल्लवों और पत्तों से शोभित जिस शीशम के पेड़ के नीचे सीता बैठी हैं, उसी वृक्ष को उसने नहीं तोड़ा। जिस भयानक वानर ने सीता से बातें की हैं और अशोक-वन को नष्ट कर दिया है, उसे आप उचित दंड देने की आज्ञा दीजिए। क्योंकि हे राक्षसराज, जिन सीता को आपने मन से ग्रहण कर लिया है, उनसे बातें करके जीवित कौन बच सकता है। १९–२१। राक्षसियों से यह हाल सुनकर रावण क्रोध के मारे चिता की आग के समान जल उठा। जैसे जलते हुए दीपक से तेल की बूँदें गिरें, वैसे ही क्रोधसे जलते हुए रावण की आँखों से आँसू निकल आये। उसने हनुमान् को पकड़ने के लिए अपने समान वीर किंकर नामक राक्षसों को आज्ञा दी। २२–२४। उसकी आज्ञा पाते ही अस्सी हज़ार किंकर मुद्गर आदि अस्त्र लेकर चले। उन भयानक बलवान् राक्षसों के पेट भारी, दाँत लम्बे और बड़े थे। वे हनुमान् को पकड़ने के लिए उसी प्रकार झपटे, जैसे

आग की ओर पतंगे दौड़ते हैं। वीर हनुमान् अशोक-वन के फाटक पर खड़े थे। राक्षसों ने चारों ओर से घेरकर सूर्य के समान चमकते हुए बाण, परिघ, मुद्गर, गदा, पट्टिश, शूल, प्रास और तोमर आदि अस्त्रों का प्रहार किया। २५–२६। पर्वताकार हनुमान् भी अपनी पूँछ पटककर गरजने लगे। उनके गरजने का शब्द लंका में फैल गया। उड़ते हुए पक्षी डरकर गिर पड़े। हनुमान् ने गरजकर कहा—महाबली रामचन्द्र, लक्ष्मण और सुग्रीव की जय। हम अयोध्या के राजा रामचन्द्र के दूत हैं। हमारा नाम हनुमान् और हमारे पिता का नाम पवन है। हम शत्रु की सेना का विनाश कर देते हैं। हम युद्ध में जब वृक्षों और शिलाओं का प्रहार करेंगे तब हज़ारों रावण भी हमारा सामना न कर सकेंगे। ३०–३५। राक्षसों के देखते ही देखते लंका का विध्वंस कर देंगे और सीता को प्रणाम करके चले जायँगे। हनुमान् को सन्ध्या के समय उठी हुई बादलों की घटा के समान देखकर और उनके गरजने का शब्द सुनकर राक्षस डर गये। किन्तु रावण की आज्ञा कैसे टाल सकते थे, इसलिए हनुमान् के ऊपर अस्त्र चलाने लगे। ३६–३८। महावीर हनुमान् ने फाटक के पास रक्खा हुआ एक लोहमय परिघ उठाया और राक्षसों का विनाश करते हुए उसी प्रकार दौड़े, जैसे गरुड़ साँप को लिये हुए आकाशमार्ग से जा रहे हों। ३९–४०। जैसे इन्द्र वज्र से दानवों का विनाश करते हैं, वैसे ही वीर हनुमान् परिघ से राक्षसों को मारने लगे। ४१। राक्षसों का वध करके वे फिर उसी फाटक पर खड़े हो गये। जो राक्षस डरकर भाग गये थे, उन्होंने रावण के पास जाकर कहा कि आपके भेजे हुए राक्षसों को उस वानर ने मार डाला। अपनी सेना का विनाश सुनकर राक्षसराज रावण को बड़ा क्रोध आया। उसने युद्ध में दुर्जय, प्रहस्त के पुत्र, महापराक्रमी जम्बुमाली को भेजा। ४२–४४।

सर्ग ४३

राक्षसों को मारकर हनुमान् ने सोचा कि वन तो उजाड़ दिया, किन्तु राक्षसों का देवमन्दिर नहीं तोड़ा। इसे भी गिरा देना चाहिए। फिर वे मेरुपर्वत के समान ऊँचे देवमन्दिर पर चढ़ गये और अपने तेज से सूर्य के समान प्रकाशमान हुए। १—४। मन्दिर को गिराने के लिए पूँछ पटक कर गरजने लगे। उनके गरजने का शब्द लंका में फैल गया। उस शब्द को सुनकर उड़ते हुए पक्षी गिर पड़े और मन्दिर के रक्षक मूर्च्छित हो गये। हनुमान् गरजकर कहने लगे—अस्त्र-विद्या के जानकार रामचन्द्र, महाबली लक्ष्मण और राजा सुग्रीव की जय। हम अयोध्या के राजा रामचन्द्र के दूत, पवन के पुत्र, और शत्रु की सेना का विनाश करने-वाले हनुमान् हैं। ५—९। जब हम युद्ध में वृक्षों और शिलाओं का प्रहार करेंगे तब हज़ारों रावण हमारा सामना न कर सकेंगे। १०। हम राक्षसों के देखते ही देखते लंका का विध्वंस कर देंगे और सीता को प्रणाम करके चले जायँगे। यह कहकर देवमन्दिर पर बैठे हुए महाकाय हनुमान् राक्षसों को डराते हुए गरजने लगे। मन्दिर के रक्षकों ने चारों ओर से घेरकर खड्ग, परशु, गदा, परिघ और सूर्य के समान चमकते हुए बाण आदि अस्त्रों का प्रहार किया। वीर हनुमान् ने कुपित होकर भयानक रूप धारण करके सुवर्णमय खम्भा उखाड़ लिया और उसे बड़े वेग से घुमाकर दूसरे खम्भों पर इतने ज़ोर से पटका कि उससे अग्नि उत्पन्न हो गई और वह मन्दिर जलने लगा। ११—१८। राक्षसों ने हनुमान् पर आक्रमण किया और हनुमान् ने उस खम्भे से राक्षसों को उसी प्रकार मार डाला, जैसे इन्द्र ने वज्र से दानवों का संहार किया था। फिर वे आकाश में जाकर कहने लगे—हमारे समान हज़ारों महाबली वानर सुग्रीव की आज्ञा से संसार भर में घूम रहे हैं। उनमें कोई दस हाथियों के समान, कोई सौ हाथियों के समान, कोई हज़ार हाथियों के समान और कोई दस हज़ार हाथियों के समान

बलवान् हैं। कोई-कोई वानर वायु के समान पराक्रमी हैं और बहुत-
वानरों के बल की उपमा नहीं है। दाँत और नख ही जिनके आयु
हैं, ऐसे असंख्य वानरों के साथ वानरराज सुग्रीव तुम लोगों का
विनाश करने के लिए आवेंगे। लंका का विध्वंस कर देंगे, राक्षसों
का विनाश करके सपरिवार रावण को भी मार डालेंगे। तुम लोगों
ने अपने विनाश के ही लिए महात्मा रामचन्द्र से विरोध किया
है। १६—२५।

सर्ग ४४

उधर राक्षसराज रावण की आज्ञा से प्रहस्त का पुत्र महाबली
जम्बुमाली हनुमान् को पकड़ने के लिए चला। वह लाल कपड़े,
लाल रंग के कुंडल और लाल ही माला पहने था। उस दुर्जय महाकाय
राक्षस की बड़ी-बड़ी आँखें भी क्रोध के मारे लाल हो गई थीं।
उसका धनुष इन्द्रधनुष के समान था। धनुष के टंकार का शब्द वज्र
के शब्द के समान आकाश और सब दिशाओं में फैल गया। १—४।
वह गधों के रथ पर सवार था। उसे देखकर हनुमान् बड़े हर्ष से गरजने
लगे। उनको अशोक-वन के फाटक पर खड़े देखकर जम्बुमाली पैने
बाण चलाने लगा। एक अर्धचन्द्र बाण उनके मुँह पर, एक अंकुश
बाण सिर में और दस बाण हाथों में मारे। ५—७। उनका मुँह
स्वभावतः रक्तवर्ण था, बाण लगने से वैसे ही शोभित हुआ जैसे शरद्
ऋतु में सूर्य की किरणें पड़ने से लाल कमल शोभित हो। बाण लगने
से हनुमान् को बड़ा क्रोध आया। उन्होंने समीप हीं पड़ी हुई पर्वत
की एक शिला उठाकर बड़े वेग से जम्बुमाली पर चलाया, किन्तु
उसने बाणों से उस शिला को बीच में ही गिरा दिया। ८—११।
उस प्रहार को विफल देखकर हनुमान् ने एक साल का वृक्ष उखाड़
कर घुमाया। महाबली जम्बुमाली ने बहुत-से बाण चलाये। चार

बाणों से उस वृक्ष को काटकर गिरा दिया, पाँच बाण हनुमान् की भुजाओं में मारा, एक बाण छाती में और दस बाण स्तनों के बीच में मारा। १२—१४। तब हनुमान् ने क्रुद्ध होकर परिघ उठाया और उसे घुमाकर जम्बुमाली के ऊपर दे मारा। उसका सिर फट गया, भुजाएँ और जाँघें टूट गईं, रथ, घोड़े, धनुष और बाण सब नष्ट हो गये। महारथी जम्बुमाली आँधी से टूटे हुए वृक्ष के समान पृथिवी पर गिरा और मर गया। जम्बुमाली की मृत्यु सुनकर क्रोध के मारे रावण की आँखें लाल हो गईं। उसने अपने मन्त्रियों के महापराक्रमी पुत्रों को युद्ध में जाने की आज्ञा दी। १५—२०।

सर्ग ४५

रावण की आज्ञा से मन्त्रियों के सात पुत्र हनुमान् को पकड़ने के लिए चले। वे सूर्य के समान तेजस्वी और महापराक्रमी थे। सब अस्त्र-शस्त्र जानते थे। उनके सुवर्णमय रथों में अच्छे घोड़े जुते थे, पताकाएँ फहराती थीं। रथों के चलने का शब्द बादलों के गरजने के समान होता था। वे धनुष का टंकार करते हुए, महती सेना के साथ हनुमान् को पकड़ने के लिए चले। उनकी माताओं ने सुना था कि उस वानर ने किंकर नामक राक्षसों को मार डाला है, इसलिए उनको अपने पुत्रों के लिए बड़ा शोक हुआ, वे रोने लगीं। १—५। मन्त्रियों के पुत्र परस्पर स्पर्धा करते हुए अशोक-वन के फाटक पर गये। वहाँ हनुमान् को देखा। जैसे वर्षाऋतु में बादल पानी बरसाते हैं, वैसे ही वे बाण बरसाने लगे। बाणों से उनको आच्छादित कर दिया। हनुमान् बड़े वेग से ऊपर को उछलकर राक्षसों के बाणों से बच गये। उन धनुर्धर राक्षसों के साथ उसी प्रकार खेल-सा करने लगे, जैसे आकाश में इन्द्रधनुष से युक्त बादलों के साथ वायु क्रीड़ा करता है। वे गरजकर बड़े वेग से राक्षसों की ओर झपटे; थप्पड़, लात और टिहुनी से मारकर, नख से घायल

करके और किसी को छाती का धक्का देकर गिरा दिया। बहुत-से राक्षस उनके गरजने का शब्द सुनकर डर के मारे भाग गये। जब मन्त्रियों के सातों पुत्र मारे गये तो उनकी सेना भाग गई। हाथी घायल होकर चिल्लाने लगे; घोड़े पृथिवी पर लोटने लगे; टूटी हुई ध्वजाओं, छत्रों और रथों से पृथिवी ढक गई। युद्धभूमि में रुधिर की नदी बह चली। लंका में सर्वत्र कोलाहल मच गया। ६–१६। महाप्रतापी हनुमान उन राक्षसों को मारकर अन्य राक्षसों के आने की प्रतीक्षा करते हुए उसी फाटक पर खड़े हुए। १७।

सर्ग ४६

महात्मा हनुमान् ने मन्त्रियों के पुत्रों का विनाश कर दिया, यह सुन कर रावण को बड़ी चिन्ता हुई। उसने विरूपाक्ष, यूपाक्ष, दुर्धर, प्रघस और भास्कर, इन पाँच महापराक्रमी, वायु के समान वेगवान्, सेनापतियों को आज्ञा दी कि तुम लोग चतुरंगिणी सेना लेकर जाओ और उस वानर को पकड़ लाओ। वह कोई महापराक्रमी पुरुष है। उसके काम देखकर हम उसे वानर नहीं मान सकते। जान पड़ता है, इन्द्र ने तपोबल से इसे उत्पन्न किया है और हमको मारने के लिए भेजा है। अथवा हमारी आज्ञा से तुम लोगों ने यक्ष, गन्धर्व, देवता, दैत्य और महर्षियों को परास्त किया है, उन लोगों ने हमारा अपकार करने के लिए भेजा हो। १–१०। अतएव तुम उसे बाँधकर लाओ। उसे साधारण वानर न समझो। वह कोई महाप्रतापी पुरुष है। हाथी, रथ और घोड़ों समेत महती सेना लेकर जाओ। हमने महापराक्रमी बालि, तेजस्वी सुग्रीव, महापराक्रमी जाम्बवान्, सेनापति नील और द्विविद आदि वेगवान् वानरों को देखा है, किन्तु उनमें ऐसा तेज, पराक्रम, बुद्धि, बल और उत्साह नहीं है। अतएव इसे वानररूपी महापुरुष समझकर सावधानी से इसके पकड़ने का प्रयत्न करो। यद्यपि तुम लोगों के साथ देवता,

दानव, मनुष्य और इन्द्र समेत तीनों लोक भी युद्ध नहीं कर सकते, किन्तु विजय चाहनेवाले नीतिज्ञ पुरुष को बड़े यत्न से अपनी रक्षा करनी चाहिए; क्योंकि युद्ध में विजय पाने का कुछ निश्चित नहीं रहता। ११—१८। रावण की यह आज्ञा पाकर अग्नि के समान तेजस्वी महाबली राक्षस बड़े वेग से चले। रथ, मतवाले हाथी, बड़े वेग से चलनेवाले घोड़े, तीक्ष्ण अस्त्र-शस्त्र और महती सेना उनके साथ चली। महावीर हनुमान् अपने तेज से प्रकाशित करते हुए फाटक पर उसी प्रकार खड़े थे, जैसे उदयाचल पर सूर्य उदय होते हैं। उनका भयानक रूप देखकर राक्षस डर के मारे दूर ही खड़े हो गये और चारों ओर से घेरकर अस्त्र चलाने लगे। दुर्धर नामक राक्षस ने पाँच बाण हनुमान् के सिर में मारे। मर्मभेदी तीक्ष्ण बाणों के लगने से हनुमान् गरजकर आकाश को कूद गये। १९—२४। रथ पर सवार वीर दुर्धर बाणों से हनुमान् को मारने लगा, किन्तु जैसे वायु शरदृतु के बादलों को उड़ा देता है, वैसे ही वीर हनुमान् उसके बाणों को नष्ट कर देते थे। २५—२६। दुर्धर ने बहुत बाण मारे, किन्तु हनुमान् पीड़ित न हुए। वे गरजकर अपना रूप बढ़ाकर उसके रथ पर वैसे ही कूद पड़े, जैसे पर्वत पर वज्र गिरता है। २७—२८। उनके कूदने से रथ चूर्ण हो गया, घोड़े घायल हो गये और दुर्धर मर गया। यह देखकर वीर राक्षस विरूपाक्ष और यूपाक्ष बड़े क्रोध से हनुमान् को मारने दौड़े। दोनों राक्षसों ने उनकी छाती पर मुद्गर का प्रहार किया, किन्तु महावीर हनुमान् गरुड़ के समान बड़े वेग से पृथिवी पर कूद पड़े और उस प्रहार से बच गये। २९—३२। फिर उन्होंने साल का एक बहुत बड़ा वृक्ष उखाड़ कर दोनों राक्षसों को मार डाला। ३३। तीन सेनापति मारे गये, तब महाबली प्रघस मुसकराता हुआ दौड़ा। भास्कर भी कुपित होकर हाथ में शूल लेकर दूसरी ओर से झपटा। ३४—३५। प्रघस ने पट्टिश और भास्कर ने शूल का प्रहार किया। शूल और पट्टिश लगने से हनुमान्

के अंगों से रुधिर बहने लगा, जिससे वे प्रातःकाल के सूर्य के समान शोभित हुए। उन्होंने पशु-पक्षियों, वृक्षों और शिखरों समेत एक पर्वत उखाड़कर उन राक्षसों के ऊपर दे मारा। पर्वत के गिरने से दोनों राक्षस चूर्ण हो गये। ३६–३८। जब पाँचों सेनापति मारे गये, तब बची हुई सेना भागी, किन्तु वीर हनुमान् ने घोड़ों के ऊपर घोड़े, हाथियों पर हाथी, रथों पर रथ और राक्षसों पर राक्षस पटक-पटककर समूची सेना विनष्ट कर दी। जैसे इन्द्र असुरों को मारते हैं, वैसे ही हनुमान् ने राक्षसों का विनाश कर दिया। ३९–४०। घोड़े, हाथी और राक्षसों की लाशों से तथा टूटे हुए रथों से मार्ग रुँध गये। वीर हनुमान् सेना का विनाश करके, प्रलयकाल के काल के समान उसी फाटक पर फिर बैठ गये। ४१–४२।

सर्ग ४७

राक्षसराज रावण ने सेनापतियों की मृत्यु सुनकर सामने बैठे हुए, युद्ध में जाने के लिए उत्सुक, कुमार अक्ष को आज्ञा दी कि तुम उस वानर को पकड़ लाओ। प्रतापवान् अक्ष रावण की आज्ञा पाते ही स्वर्णजटित धनुष लेकर, ब्राह्मणों द्वारा दी हुई आहुति से प्रज्वलित अग्नि के समान उठ खड़ा हुआ और सूर्य के समान चमकते हुए रथ पर सवार होकर हनुमान् को पकड़ने के लिए चला। उसका रथ तपाये हुए सोने से मढ़ा हुआ था, रत्नजटित ध्वज और पताका लगी थी। मन के समान वेगवान् आठ घोड़े जुते थे, देवताओं और दानवों से भी अजेय था, दुर्गम मार्गों में भी जा सकता था। बिजली के समान चमकता था, आकाशमार्ग से भी चल सकता था। तूणीर, खड्ग, शक्ति, तोमर आदि अस्त्र-शस्त्र और युद्ध की अन्य सब सामग्री रक्खी थी। देव-तुल्य पराक्रमी कुमार अक्ष उस रथ पर सवार होकर हाथी, घोड़े और पैदल सेना के साथ रथ की घरघराहट से सब दिशाओं को प्रतिध्वनित करता हुआ हनुमान् के सामने पहुँचा।

महावीर हनुमान् अशोक-वन के फाटक पर बैठे थे। १—७। कुमार अक्ष प्रलयकाल के अग्नि के समान, हनुमान् के समीप जाकर बड़े आश्चर्य से, सिंह की जैसी भयानक दृष्टि से उनको देखने लगा। महात्मा हनुमान् के पराक्रम और अपनी शक्ति का विचार करके उसका तेज प्रलयकाल के सूर्य के समान बढ़ने लगा। उसने स्थिर होकर सावधानी से तीक्ष्ण बाणों का प्रहार किया। ८—१०। महापराक्रमी अक्ष और महावीर हनुमान् का युद्ध होने लगा। उस युद्ध को देखकर सब प्राणी भयभीत हुए, देवता और दानव भी डर गये। सूर्य का तेज मलिन हो गया, वायु की गति रुक गई, पर्वत डगमगाने लगे, आकाश में कोलाहल मच गया, समुद्र में बड़े वेग से तरंगें उठने लगीं। धनुष पर बाण चढ़ाने, छोड़ने और निशाना लगाने में निपुण वीर अक्ष ने विषैले साँपों के समान सुवर्णपुंख, सुमुख और पतत्रि बाण हनुमान् के सिर में मारा। उनके सिर से रुधिर बहने लगा, आँखें चौंधिया गईं, देह रुधिर से लथ-पथ हो गई। वे प्रातःकाल के सूर्य के समान रक्तवर्ण हो गये, बाणरूपी किरणों से युक्त सूर्य के समान शोभित हुए। ११—१५। उन्होंने अपनी देह बढ़ाई, उनका बल, वीर्य और क्रोध भी बढ़ा। वे मन्दर पर्वत पर स्थित सूर्य के समान अशोक-वन के फाटक पर खड़े थे। बड़े क्रोध से कुमार अक्ष को देखा, मानों उसे भस्म कर देंगे। जैसे बादल पर्वत पर पानी बरसाते हों और इन्द्रधनुष भी दिखाई देता हो, वैसे ही धनुष लिये हुए राक्षस हनुमान् पर बाणों की वर्षा करने लगे। राक्षस बड़े पराक्रमी और तेजस्वी थे, उनके बाण बड़े पैने थे। उनको बाण चलाते देखकर वीर हनुमान् बड़े हर्ष से मेघ के समान गरजे। अभिमानी कुमार अक्ष बालकपन के कारण क्रुद्ध होकर हनुमान से युद्ध करने के लिए आगे बढ़ा, जैसे मतवाला हाथी तृण से ढके हुए कुएँ में गिर पड़े। १६—२०। वह हनुमान् पर बाण चलाने लगा। पवनकुमार हनुमान् भयानकरूप धारण करके बड़े उत्साह

से आकाश को उछल गये और बादलों के समान गरजने लगे। आका
में गरजते हुए हनुमान् को महारथी अक्ष बाणों से मारने लगा।
महापराक्रमी, मन के समान वेगवान्, महावीर हनुमान् ने उन बा
को तोड़ डाला और वायु के समान वेग से विचरने लगे। कुमार अ
ने पैने बाणों से आकाश को भर दिया। उसकी यह वीरता देख
हनुमान् ने अपने मन में उसकी प्रशंसा की और उसे आदर की दृष्टि
देखा। अक्ष ने हनुमान् की छाती में कई बाण मारे। हनुमान् ने सोच
कि यह बड़ा वीर है, बालक होने पर भी युवा पुरुष के समान युद्ध क
रहा है। बाण चलाने में बड़ा निपुण है, इसलिए इसका वध करने
मेरी इच्छा नहीं होती। इस महापराक्रमी, युद्ध-कुशल, क्लेश सहने
वाले गुणवान्, अक्ष का; नाग, यक्ष और महर्षिगण निस्सन्देह आद
करते होंगे। भय और शंका छोड़कर बड़े उत्साह और पराक्रम से मे
ओर देख रहा है। बड़ा फुर्तीला है। इसका पराक्रम देखकर देवता औ
दानव भी काँपते होंगे। किन्तु यदि हम इसकी उपेक्षा करेंगे तो य
मुझे परास्त कर देगा, क्योंकि इसकी वीरता बढ़ती जाती है। बढ़ती
हुई आग की उपेक्षा करना उचित नहीं है। इसलिए इसे मार डालन
चाहिए।२१—२९। यह सोचकर महाबली हनुमान् ने शीघ्र उसको मा
डालने का निश्चय किया। एक लात मारकर रथ के आठों घोड़े मा
डाले। उसका रथ भी टूट गया और वह पृथिवी पर गिर पड़ा। फि
वह धनुष और तलवार लेकर उसी प्रकार आकाश को चला गया, जैसे
तपस्वी महर्षि शरीर त्यागकर देवलोक को जाते हैं। ३०—३३। गरुड़
वायु और सिद्ध पुरुषों के मार्ग में विचरते हुए कुमार अक्ष को देखक
वायु के समान वेगवान् हनुमान् ने उसके दोनों पैर उसी प्रकार पकड़
लिये, जैसे गरुड़ साँप को पकड़ लेता है। फिर उसे हजारों बार घुमाय
और युद्धभूमि में पटक दिया। उसके सब अंगों से रुधिर बहने लगा।
देह के सब जोड़ उखड़ गये, हड्डियाँ चूर-चूर हो गईं, आँखें निकल आईं

महाकपि हनुमान् ने अक्ष को मारकर राक्षसराज रावण को अत्यन्त भयभीत कर दिया। उसके मारे जाने पर महर्षि, यक्ष, गन्धर्व, भूत, नाग और इन्द्र आदि देवता आकर बड़े विस्मय से हनुमान् को देखने लगे। महावीर हनुमान् अन्य राक्षसों से युद्ध करने की इच्छा से उसी फाटक पर प्रलयकाल की अग्नि के समान फिर जा बैठे। ३४—३८।

सर्ग ४८

कुमार अक्ष के मारे जाने पर राक्षसराज रावण ने शोक को रोककर धैर्य के साथ देवतुल्य पराक्रमी इन्द्रजित् से कहा—तुम सब अस्त्र जानते हो, शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ हो, देवता और दानवों को भी तुमने जीत लिया है। इन्द्र आदि देवता तुम्हारा पराक्रम देख चुके हैं। तुमने ब्रह्मा को प्रसन्न करके ब्रह्मास्त्र प्राप्त किया है। इन्द्र और पवन आदि कोई भी देवता युद्ध में तुम्हारे सामने नहीं ठहर सके। तीनों लोकों में ऐसा कोई नहीं है, जो तुमसे युद्ध करके सुख से चला गया हो। तुम अपनी तपस्या के प्रभाव से और भुजाओं के बल से सदा अपनी रक्षा कर सकते हो। देश-काल के जानकार और बुद्धिमान् हो। ऐसा कोई काम नहीं, जिसे तुम न कर सको। ऐसी कोई बात नहीं, जिसे तुम न समझ सको। तीनों लोकों में ऐसा कोई वीर पुरुष नहीं, जो तुम्हारा पराक्रम और अस्त्र-बल न जानता हो। १—५। तुम पराक्रम, तपस्या और अस्त्र-बल में हमारे समान हो। इसी से तुमको युद्ध में भेजकर हमको किसी प्रकार की चिन्ता नहीं होती। ६। देखो, इस वानर ने किंकर नामक राक्षसों को मार डाला। जम्बुमाली, पाँच सेनापति और मन्त्रियों के सात पुत्र भी मारे गये। घोड़े, हाथी और रथों की महती सेना और तुम्हारा भाई कुमार अक्ष भी मारा गया। किन्तु हे शत्रुनाशन, ये जितने राक्षस मारे गये हैं, वे तुम्हारे समान पराक्रमी नहीं थे। तुम अपना बल और शत्रु का पराक्रम देखकर सावधानी से ऐसा काम

करो, जिसमें तुम्हारी सेना का विनाश न हो और शत्रु परास्त हो जाय।७—१०। अपने साथ सेना न ले जाओ, वज्रतुल्य अस्त्र-शस्त्र भी न ले जाओ, क्योंकि वह वानर महापराक्रमी है, अस्त्रों से उसका वध नहीं हो सकता। मैं जो कहता हूँ, इसे भली भाँति विचार कर प्रयत्न करो। तुम दिव्य अस्त्र जानते हो, उनका स्मरण करो और अपनी रक्षा के लिए सावधान हो जाओ। यद्यपि तुमको ऐसे संकट में भेजना उचित नहीं है, किन्तु राजधर्म और क्षत्रियधर्म का विचार करके मैं तुमको भेजता हूँ। शत्रु की योग्यता देखकर काम करना पड़ता है। जो पुरुष संग्राम में विजय चाहता हो, उसे इन बातों का जानना अति आवश्यक है। ११—१४।

देवतुल्य प्रभावशाली इन्द्रजित् अपने पिता की ये बातें सुनकर उसी दम युद्ध में जाने के लिए तैयार हो गया। उसने पिता की प्रदक्षिणा की। वह युद्ध में जैसा पराक्रमी था, वैसा ही उत्साही भी था। उसे युद्ध के लिए तैयार देखकर सब लोग उसकी प्रशंसा करने लगे। पक्षिराज गरुड़ के समान वेगवान्, तीक्ष्ण दाँतोंवाले चार भुजंग जोतकर उसका रथ लाया गया। उस पर सवार होकर वह उस स्थान पर गया, जहाँ वीर हनुमान् बैठे थे। हनुमान् उसके रथ की घरघराहट और धनुष की ज्या का शब्द सुनकर बड़े हर्ष से गरजने लगे।१५—२०। इन्द्रजित् धनुष, बाण और अन्य पैने अस्त्र-शस्त्र धारण किये था। उसके चलने पर सब दिशाएँ मलिन हो गईं। पशु-पक्षी डर के मारे भागने लगे। नाग, यक्ष, महर्षि और सिद्धगण चिन्तित हुए। पक्षी आकाश में उड़ने लगे। धनुर्धर इन्द्रजित् वज्र के समान धनुष की ज्या का टंकार करने लगा। हनुमान् और इन्द्रजित् का युद्ध आरम्भ हुआ। दोनों वीर महापराक्रमी, अत्यन्त वेगवान् और युद्ध में निर्भय थे। महाकपि हनुमान् ने अपना रूप बढ़ाकर महारथी इन्द्रजित् के बाणों को विफल कर दिया। इन्द्रजित् क्रुद्ध होकर बाणों की वर्षा करने लगा। उस

बाण बहुत लम्बे, तीक्ष्ण, सुवर्णजटित और वज्र के समान वेगवान् थे। २१–२७। मृदंग, भेरी और पटह आदि युद्ध के बाजा बजते थे। धनुष की ज्या का शब्द होता था। हनुमान् आकाश को कूद गये। इन्द्रजित् लगातार बाण बरसाता रहा और हनुमान् उसके बाणों को विफल करते रहे। महावीर हनुमान् दोनों हाथ फैलाकर उसके चलाये हुए बाणों को पकड़कर तोड़ डालते थे। दोनों वीरों ने बड़ी बुद्धिमानी से अपनी रक्षा करते हुए ऐसा युद्ध किया कि देखनेवालों का मन आकर्षित हो गया। इन्द्रजित् यह न समझ सका कि हनुमान् किस उपाय से अपने को बचा लेते हैं और हनुमान् को भी इतनी शीघ्रता से बाण चलाते देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ। जब अमोघ बाणों का लगातार प्रहार करने पर भी हनुमान् पीड़ित न हुए तब इन्द्रजित् को बड़ी चिन्ता हुई। फिर सोचकर उसने निश्चय किया कि इस वानर को हम मार नहीं सकते। किसी उपाय से पकड़कर राक्षसराज के पास ले चलना चाहिए। तब उसने पितामह ब्रह्मा का दिया हुआ ब्रह्मास्त्र चलाया और उस अस्त्र के द्वारा हनुमान् को बाँध लिया। २८–३७। ब्रह्मास्त्र से बँध जाने पर वीर हनुमान् पृथिवी पर गिर पड़े, किन्तु ब्रह्मा के वरदान से उनको किसी प्रकार का क्लेश नहीं हुआ। उन्होंने सोचा कि तीनों लोकों के पूज्य ब्रह्मा के दिये हुए इस ब्रह्मास्त्र को मैं विफल नहीं कर सकता, इसलिए थोड़ी देर इस बन्धन में अवश्य रहना पड़ेगा। ब्रह्मा, इन्द्र और वायु सदा हमारी रक्षा करते हैं, अतएव ब्रह्मास्त्र से बँध ज़ाने पर भी हमको कोई भय नहीं है। ये राक्षस मुझे बाँधकर रावण के सामने ले जायँगे, तब उससे बातें करने का मौक़ा मिलेगा। इसलिए बँध जाना अच्छा हुआ। ३८–४४। यह सोचकर वे चुपचाप पृथिवी पर पड़े रहे। राक्षस जब उनको धमकाने लगे, तब वे बड़े गम्भीर शब्द से गरजे। राक्षसों ने रस्सी से बाँध लिया। राक्षसराज रावण यदि कौतूहलवश मुझे देखना चाहेगा तो

उससे बातें करने का अच्छा मौका मिलेगा, यह सोचकर हनुमान् ने राक्षसों की डाट-डपट सह ली। रस्सी से बाँधे जाने पर महाबली हनुमान् ब्रह्मास्त्र के बन्धन से छूट गये, क्योंकि दूसरे बन्धन से बाँध लेने पर ब्रह्मास्त्र का बन्धन व्यर्थ हो जाता है। वीर इन्द्रजित् हनुमान् को रस्सी में बँधा हुआ और ब्रह्मास्त्र से मुक्त देखकर चिन्ता करने लगा कि राक्षसों ने मन्त्र के प्रभाव को न समझने के कारण हमारे परिश्रम को नष्ट कर दिया, क्योंकि यह वानर रस्सी को तोड़ डालेगा। ब्रह्मास्त्र निष्फल होने पर अब किसी अस्त्र का प्रयोग भी नहीं हो सकता, इसलिए अब बड़ा कठिन है। ४५–५०। किन्तु हनुमान् ने ब्रह्मास्त्र से छूट जाने पर भी राक्षसों को अपना पराक्रम नहीं दिखाया; इसलिए राक्षस उनको मज़बूती से बाँधकर खींचने लगे और घूँसे मारते-मारते रावण के पास ले गये। रावण अपने मन्त्रियों के साथ सभा में बैठा था। इन्द्रजित् हनुमान् को उसके पास ले गया। राक्षसों ने दिग्गज के समान हनुमान् का पराक्रम रावण से बताया। सभा में बैठे हुए राक्षस आपस में कहने लगे कि यह कौन है, कहाँ से और किस प्रयोजन से यहाँ आया है? कुछ राक्षसों ने क्रुद्ध होकर कहा, इसे मार डालो या जला दो, अथवा खा लो। महात्मा हनुमान् ने राजभवन में जाकर सूर्य के समान महातेजस्वी, महाबली राक्षसराज को देखा। रावण ने भी देखा कि भयानक राक्षस हनुमान् को बाँध लाये हैं। उनको देखते ही क्रोध के मारे रावण की आँखें लाल हो गईं। उसने मन्त्रियों को हनुमान् से सब हाल पूछने की आज्ञा दी। मन्त्रियों ने पूछा—तुम कौन हो, किस प्रयोजन से यहाँ आये हो? हनुमान् ने उत्तर दिया—हम कपिराज सुग्रीव के दूत हैं, उनकी आज्ञा से यहाँ आये हैं। ५१–६१

सर्ग ४९

महातेजस्वी वीर रावण महामूल्य, सुवर्णमय, रत्नजटित, चमकते

हुए किरीट धारण किये था। उसके दिव्य आभरणों में हीरा और अन्य बहुमूल्य रत्न जड़े थे। लाल चन्दन लगाये था, बहुमूल्य विचित्र रेशमी वस्त्र पहने था। उसकी लाल-लाल आँखें बड़ी भयानक थीं, उसके बड़े-बड़े दाँत होंठ के बाहर निकले थे। पर्वताकार रावण के दस सिर थे, अतएव अनेक शिखरों से युक्त मन्दराचल के समान जान पड़ता था। उसकी छाती में हार शोभित था, उसका मुँह पूर्ण चन्द्रमा के समान था, वह प्रातःकाल उदय हुए सूर्य के समान तेजस्वी था। उसकी भुजाएँ पँचमुहे साँप के समान भयानक थीं, उनमें चन्दन लगा था। भुजाओं में कंकण और विजायठ शोभित थे। वह रत्नजटित स्फटिक मणि के आसन पर बैठा था। सुन्दरी स्त्रियाँ पंखा और चँवर लिये खड़ी थीं। १–१०। दुर्धर, प्रहस्त, महापार्श्व और निकुम्भ ये चार मन्त्री उसके पास बैठे थे, अतएव चार समुद्रों से घिरे हुए भूमंडल के समान शोभित था। ११–१२। जैसे देवता इन्द्र के पास बैठे हों, वैसे ही वह अपने मन्त्रियों के साथ बैठा था। वह काजल के समान अथवा बरसात के बादलों के समान काला था। हनुमान् बड़े क्रोध और आश्चर्य से उसको देखने लगे। उसका तेज और प्रभाव देखकर उन्होंने मन में कहा—इसका कैसा अद्भुत रूप है! पराक्रम, सौन्दर्य, तेज और धैर्य प्रशंसनीय है। इसकी देह में सब शुभ लक्षण हैं। यदि ऐसा अधर्मी न होता तो इन्द्र के साथ देवलोक का राज्य करने के योग्य था। यह लोकनिन्दित, क्रूर और नृशंस काम करता है, इसी से देवता, दानव और सब लोक इससे डरते हैं। यह महापराक्रमी है, क्रुद्ध होकर सम्पूर्ण जगत् का विनाश कर सकता है। १३–२०।

सर्ग ५०

हनुमान् को देखकर महाबाहु रावण को बड़ा क्रोध आया। उसके मन में सन्देह हुआ कि यह कोई महातेजस्वी पुरुष है, वानर का रूप

धारण करके आया है। सम्भव है कि यह नन्दी हो! एक बार मैं
कैलास पर्वत पर उसका वानर का-सा मुँह देखकर उपहास किया था
उसी से क्रुद्ध होकर, वानर का रूप धारण करके आया है। अथवा य
वानर बलि का पुत्र बाण है? यह सोचकर उसने क्रोध से लाल-ला
आँखें करके प्रधान मन्त्री प्रहस्त से कहा—इस दुष्ट से पूछो, यह क
से आया है? इसने अशोक-वन को क्यों उजाड़ दिया और राक्षसों
क्यों मार डाला? इस मूर्ख से यह भी पूछो कि इस दुर्गम नगरी
आने का इसका क्या प्रयोजन है? १—६।

प्रहस्त ने हनुमान् से कहा—हे वानर, तुम सावधानी से हमा
बातों का उत्तर दो, डरने की कोई बात नहीं है। तुम्हारा कल्याण हो
तुम सत्य बताओ, क्या तुमको देवराज इन्द्र ने भेजा है? अथवा कुबे
यम या वरुण के दूत हो? क्योंकि तुम्हारा रूप तो वानर का है, कि
पराक्रम वानर का-सा नहीं है। सत्य बताओगे तो छोड़ दिये जाओगे
और यदि झूठ बोलोगे तो तुमको प्राण-दंड दिया जायगा। प्रहस्त
यह पूछने पर महावीर हनुमान् ने रावण से कहा—मैं इन्द्र, यम, वरुण
कुबेर अथवा विष्णु का दूत नहीं हूँ, मैं वानर हूँ। यह मेरा स्वाभावि
रूप है। तुमको देखने के लिए यहाँ आया हूँ, इसी प्रयोजन से मैं
अशोक-वन उजाड़ दिया है। जो राक्षस मुझसे युद्ध करने गये, उन
अपनी रक्षा के लिए मैंने युद्ध किया। देवता और दानव भी मुझे अस्त्र
पाश से नहीं बाँध सकते, पितामह ब्रह्मा ने मुझे यह वर दिया है।
तुमको देखने के लिए अपनी इच्छा से अस्त्र-पाश में बँध गया हूँ
हे राक्षसराज, मैं महातेजस्वी रामचन्द्र का दूत हूँ। यह आप विश्वा
कीजिए। अब मैं आपके हित की बातें कहता हूँ, उन्हें सुनिए। ७—१६

सर्ग ५१

महापराक्रमी रावण को देखकर हनुमान् को भय नहीं हुआ,

निडर होकर बोले—राजन्, वानरों के राजा सुग्रीव की आज्ञा से मैं तुम्हारे पास आया हूँ। उन्होंने मित्रभाव से तुम्हारी कुशल पूछी है। तुम्हारे ऐहिक और पारलौकिक कल्याण के लिए जो धर्म-युक्त सन्देश उन्होंने भेजा है, वह सुनो। महाराज दशरथ अयोध्या के राजा थे। वे इन्द्र के समान तेजस्वी थे। उनके पास चतुरंगिणी सेना थी। वे पुत्र के समान प्रजा का पालन करते थे। महाबाहु महातेजस्वी रामचन्द्र उनके ज्येष्ठ पुत्र हैं। पिता की आज्ञा से छोटे भाई और स्त्री के साथ दंडक वन को आये हैं। वे धर्मात्मा हैं, उनकी प्रिय पत्नी सीता को जनस्थान से कोई हर ले गया है। १—७। वे दोनों राजकुमार सीता को ढूँढ़ते-ढूँढ़ते ऋष्यमूक पर्वत पर आकर सुग्रीव से मिले। सुग्रीव ने सीता का पता लगाने की प्रतिज्ञा की और रामचन्द्र ने सुग्रीव को वानर-राज्य दिलाने की। राजकुमार रामचन्द्र ने बालि को मारकर सुग्रीव को वानरों का राजा बना दिया। महाबलवान् बालि को तुम अच्छी तरह जानते हो, महात्मा रामचन्द्र ने एक ही बाण से उनको मार डाला। ८—११। सुग्रीव ने सीता को ढूँढ़ने के लिए झुंड के झुंड वानर सब दिशाओं में भेजे हैं। उनकी आज्ञा से लाखों-करोड़ों वानर पृथिवी, आकाश और पाताल पर्यंत सीता को ढूँढ़ रहे हैं। १२—१३। उन वानरों में कोई गरुड़ के समान और कोई वायु के समान शीघ्रगामी हैं। सब वानर महापराक्रमी और वेगवान् हैं, उनकी गति कहीं नहीं रुकती। १४। उन्हीं में से एक मैं भी हूँ। मैं पवन का पुत्र हूँ, मेरा नाम हनुमान् है। सीता को ढूँढ़ने के लिए सौ योजन समुद्र पार करके यहाँ आया हूँ। यहाँ मैंने सीता को देखा। १५—१६। हे महाप्राज्ञ, तुमने धर्म-शास्त्र पढ़ा है। तपोबल से महान् ऐश्वर्य प्राप्त किया है। तुमको दूसरे की स्त्री हरण करना उचित नहीं है। यह बड़े अनर्थ का कारण है, धर्म के विरुद्ध है, इससे समूल विनाश हो जाता है, ऐसा काम तुम्हारे-जैसे बुद्धिमान् पुरुषों को न करना चाहिए। १७—१८। इसके सिवा रामचन्द्र और

लक्ष्मण महापराक्रमी हैं, देवता और दानव भी उनके बाणों के साम
नहीं ठहर सकते। तीनों लोकों में ऐसा कोई नहीं है, जो रामच
का अप्रिय करके सुख से रह सके। १६–२०। अतएव तुम सीता
दे दो। मैं जो कहता हूँ, वह शास्त्र और धर्म के अनुकूल है, इसलि
मेरी बात मानो। मैंने सीता को तुम्हारे घर में देखा है। जो का
दुर्लभ था, वह सिद्ध हो गया। अब जो करना है, उसे रामच
करेंगे। २१–२२। सीता शोक से व्याकुल हैं। उनको अपने घ
में पँचमुँही साँपिन के समान समझो। सब देवता और दानव मि
कर भी उनको छिपा नहीं सकते, जैसे विष मिला हुआ अन्न कोई न
पचा सकता। तुमने तप करके दीर्घायु और ऐश्वर्य प्राप्त किया है,
दूसरे की स्त्री हरण-रूप अधर्म करके नष्ट न करो। तुम देवताओं औ
दानवों से अवध्य हो, यह भी तपोबल का ही प्रभाव है। किन्तु हे राज
कपिराज सुग्रीव देवता, यक्ष अथवा राक्षस नहीं हैं। वे वानर जा
हैं और रामचन्द्र मनुष्य हैं; अतएव तुम उनसे अपने प्राणों की र
कैसे कर सकते हो? धर्म का फल सुख और अधर्म का फल दुःख
पूर्वकृत धर्म से अधर्म का नाश नहीं होता, अधर्म का फल अव
मिलता है। तुमने जो तप किया था उसका फल मिला। अब दू
की स्त्री हरण करके जो अधर्म किया है, उसका भी फल शीघ्र
मिलेगा। २३–२६। जनस्थान में राक्षसों के वध का, बालि के वध
तथा रामचन्द्र से और सुग्रीव की मित्रता का स्मरण करके तुम अप
हित की बात सोचो। मैं अकेला ही समूची लंका का विनाश कर सकत
हूँ, किन्तु रामचन्द्र ने मुझे यह आज्ञा नहीं दी है। उन्होंने सीता
हरण करनेवाले शत्रु को अपने हाथ से मारने की प्रतिज्ञा की है। साक्षा
इन्द्र भी रामचन्द्र का अपकार करके सुख से नहीं रह सकते, फिर तुम-जै
लोगों की क्या गिनती है। तुम सीता को काल-रात्रि समझो। वे समू
लंका का विनाश कर देंगी। ३०–३४। अतएव सीता-रूप काल

पाश अपने गले में न बाँधो। अपनी रक्षा का उपाय सोचो। सीता के तेज और रामचन्द्र के क्रोध से लंका भस्म हो जायगी। अपने दोष से मित्र, मन्त्री, भाई-बन्धु, पुत्र, स्त्री, हितैषी, सुख-भोग और लंकापुरी का विनाश न कराओ। हे राक्षसेन्द्र, ! मैं वानर हूँ, रामचन्द्र का दूत और किंकर हूँ। मैं सत्य कहता हूँ, मेरी बात का विश्वास करो। महापराक्रमी रामचन्द्र सब लोकों का संहार करके फिर सृष्टि कर सकते हैं। ३५—३९। देवता, दानव, यक्ष, राक्षस, गन्धर्व, विद्याधर, नाग, किन्नर, सिद्ध और पशु-पक्षी आदि कोई भी प्राणी उनके साथ युद्ध नहीं कर सकता। वे विष्णु के समान पराक्रमी हैं। तुमने उनका अप्रिय किया है, अतएव तुम्हारा जीवन बहुत दुर्लभ है। ब्रह्मा, रुद्र और देवराज इन्द्र भी उनसे युद्ध करने में समर्थ नहीं हैं। महावीर हनुमान् ने निर्भय होकर यह अप्रिय वचन कहे, तब दशानन रावण को बड़ा क्रोध आया। उसने मन्त्रियों को आज्ञा दी कि इस वानर को मार डालो। ४०—४५।

सर्ग ५२

राक्षसराज रावण ने महात्मा हनुमान् की बातों से कुपित होकर जब उनको मार डालने की आज्ञा दी, तब विभीषण ने यह सोचकर उसकी बात का अनुमोदन नहीं किया कि हनुमान् ने अपने को दूत बताया है, दूत का वध करना उचित नहीं है। विभीषण सोचने लगे कि अब क्या करना चाहिए। वे शत्रुविजयी, पूजनीय, बड़े भाई रावण से सम्मानपूर्वक हितकर वचन बोले—हे राक्षसेन्द्र, क्रोध त्याग कर मेरी बात सुनिए। दूरदर्शी राजा दूत का वध नहीं करते। १—५। इस वानर का वध करना धर्म के विरुद्ध है; सभ्यता के भी विरुद्ध है। यह काम आपके करने योग्य नहीं है। आप धर्मज्ञ, राजनीतिज्ञ और दूरदर्शी हैं। यदि आपके समान बुद्धिमान् पुरुष भी क्रोध में आकर

ऐसा काम करने लगेंगे तो शास्त्र का पढ़ना ही व्यर्थ हो जायगा। श
केवल परिश्रममात्र रह जायगा। ६–८। हे शत्रुनाशन, आप प्रस
होकर उचित-अनुचित का विचार करके दूत को दंड दीजिए। विभीष
की यह बात सुनकर रावण ने बड़े क्रोध से उत्तर दिया——अपराधि
को मारने से कोई पाप नहीं होता, इसलिए हम इस वानर
मार डालेंगे। बुद्धिमान् विभीषण यह धर्म-विरुद्ध बात सुनकर
विनीत वचन बोले——हे लंकेश्वर, हे राक्षसेन्द्र, प्रसन्न होकर धर्म
विषय सुनिए। स्वामी की आज्ञा से काम करनेवाले दूत का वध न
किया जाता, यह विद्वानों का वचन है। यद्यपि यह वानर आप
बलवान् शत्रु है, किन्तु विद्वानों के वचनों के प्रमाण से दूत
वध उचित नहीं है। इसी से दूतों के लिए अनेक दंड बताये ग
हैं। कोड़े लगाना, सिर मुड़ा देना और विरूप कर देना, इनमें से ए
अथवा यह सब दंड दूत को देना चाहिए। ९–१५। आपके सम
विचारवान्, धर्म और अर्थ के जानकार, विनीत पुरुष क्रोध नहीं करते
क्रोध करना महानुभाव पुरुषों का काम नहीं है। हे वीर, धार्मि
विषय में, शिष्टाचार में और शास्त्र का अर्थ समझने में, आपके सम
दूसरा कोई पुरुष नहीं है। आप सब देवताओं और दानवों से श्रेष्ठ
पराक्रमी, उत्साही और मनस्वी हैं। देवता और दैत्य भी आप
परास्त नहीं कर सकते। आपकी तुलना किसी से नहीं की जा सकती
आपने युद्ध में अनेक बार सब राजाओं और देवताओं को ज
लिया है। कोई भी वीर पुरुष यदि आपका अनिष्ट करने की इ
करे, उसे तो प्राण-दंड दिया ही जा सकता है, फिर इस वानर
जो दूत होकर आया है, वध न करने से क्या बिगड़ता है? मैं
इसका वध करने में कोई गुण नहीं देखता। जिसने इसे भेजा है, उ
प्राणदंड देना चाहिए। १६–२०। यह दुर्जन हो या सज्जन, शत्रु
भेजने से यहाँ आया है। यह पराधीन है, जो सन्देश इससे कहा गया

वह इसने कह दिया। इसलिए इसका वध करना उचित नहीं है। हे राजन्, इस वानर के मारे जाने पर दूसरा कोई वानर समुद्र पार करके यहाँ नहीं आ सकेगा और यदि रामचन्द्र सीता का पता न पावेंगे, तो वे यहाँ क्यों आवेंगे। इसलिए इसे जीवित छोड़ दीजिए, जिसमें शत्रु राम-लक्ष्मण का आप विनाश कर सकें। इन्द्र आदि देवताओं के वध का उपाय करना आपका कर्तव्य है; क्योंकि वे आपके बलवान् शत्रु हैं। इस दूत के मारे जाने से आपके शत्रु, दुर्विनीत राम-लक्ष्मण को युद्ध के लिए कौन उत्साहित करेगा ? राक्षस युद्ध के अभिलाषी हैं, इसलिए आप उनकी इच्छाओं का विनाश न कीजिए। करोड़ों योद्धा आपके अधीन हैं, वे सब महाबलवान्, शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ और क्रोधी हैं। कुछ राक्षस आपकी आज्ञा से आज ही चले जायँ और उन मूर्ख राजकुमारों को पकड़ लावें। राक्षसराज रावण ने कुछ सोचकर विभीषण की यह बात मान ली। २१—२७।

सर्ग ५३

महात्मा विभीषण के समयोचित वचन सुनकर रावण ने उत्तर दिया तुम ठीक कहते हो, दूत का वध करना निन्दित काम है। किन्तु इसे कोई दंड अवश्य देना चाहिए। वानरों को पूँछ बहुत प्रिय होती है और वही उनके शरीर का आभूषण भी है, इसलिए इसकी पूँछ जला दी जाय। जब विना पूँछ का यह जायगा तो इसका स्वामी, इसके भाई-बन्धु, मित्र और सजातीय सब देखेंगे कि इसे अंगहीन कर दिया गया है। विभीषण से यह कहकर रावण ने राक्षसों को आज्ञा दी कि इसकी पूँछ में आग लगाकर इसे नगर में घुमाओ। १—५। आज्ञा पाते ही राक्षसों ने हनुमान् की पूँछ में कपड़े लपेट दिये। वीर हनुमान् ने उसी प्रकार अपनी देह बढ़ाई जैसे सूखा ईंधन पाकर आग बढ़ती है। राक्षसों ने उनकी पूँछ पर तेल छोड़कर आग लगा दी। तब हनुमान् जलती

हुई पूँछ से राक्षसों को मारने लगे। क्रोध के मारे उनका मुँह प्रात
काल के सूर्य के समान तेजस्वी हो गया। राक्षसों ने उनको फि
मज़बूती से बाँधा। हनुमान् को देखकर बूढ़े, बच्चे और स्त्रियाँ बहुत प्रस
हुईं। वीर हनुमान् ने सोचा कि बँधे रहने पर भी राक्षस मेरा कुछ बिगा
नहीं सकते। मैं बन्धन तोड़कर इन सबको मार सकता हूँ। मैं अके
ही इन सबका विनाश कर सकता हूँ, किन्तु रामचन्द्र के काम
लिए यह सब सह रहा हूँ। ६—१३। मैंने रात में लंका को अच्छी त
नहीं देखा, इसलिए नगर में घूमकर सब स्थानों को देखने का यह अ
मौक़ा है। महाबली हनुमान् को नगर में घुमाने के लिए राक्षस
चले। उनके पीछे शंख, तुरही और नगाड़े आदि बाजे बजते थे। उन
नगर भर में घुमाया गया, हनुमान् ने लंका के बड़े ऊँचे घर, आँग
मणियों से जड़े हुए चबूतरे, चौराहे, गलियाँ, बड़ी-बड़ी सड़कें औ
घरों के गुप्त द्वार देखे। १४—२१। कुछ राक्षस यह पुकारते हुए आ
चलते थे कि यह वही चोर है, जिसने अशोक-वन उजाड़ दिया है
हनुमान् की पूँछ में जब आग लगा दी गई तब कुछ राक्षसियों ने सी
के पास जाकर यह अप्रिय समाचार कहा। जिस वानर से तुमने ब
की थीं, उसकी पूँछ में आग लगाकर राक्षस नगर में घुमा रहे हैं
यह सुनकर सीता को बड़ा दुःख हुआ। उन्होंने हनुमान् के कल्या
के लिए एकाग्रचित्त होकर अग्निदेव से प्रार्थना की—हे हुताश
यदि मैंने पति की सेवा और कुछ तपस्या की हो और मैं पतिव्रता हूँ
तो तुम हनुमान् के लिए शीतल हो जाओ। सीता की यह प्रार्थ
सुनकर अग्निदेव प्रज्वलित हो उठे; मानों सीता को उन्होंने विश्वा
दिलाया कि हनुमान् को कष्ट न होगा। पूँछ में अग्नि प्रदीप्त होने प
भी वायु शीतल मालूम हुई। तब हनुमान् सोचने लगे कि आग
प्रकार प्रदीप्त होकर भी मुझे क्यों नहीं जलाती, हमारी पूँछ में
क्यों लगती है! २२—३०। यह रामचन्द्र का प्रभाव है। समुद्र प

करते समय उन्हीं के प्रभाव से मैनाक पर्वत मिला था, उन्हीं के प्रभाव से अग्नि भी शीतल हो गई है। जब समुद्र और मैनाक ने रामचन्द्र का सम्मान किया तो उनके हित के लिए अग्नि क्यों न शीतल हो। सीता के सदाचार से, रामचन्द्र के प्रभाव से और पिता पवन की कृपा से अग्नि मुझे भस्म नहीं करती। उसके बाद हनुमान् ने सोचा कि मेरे समान पराक्रमी पुरुष को अधम राक्षसों ने बाँध लिया है, बन्धन तोड़ कर इनका प्रतिकार करना चाहिए। उन्होंने पहले अपनी देह बढ़ाकर पर्वत के समान रूप धारण किया, फिर बहुत छोटा रूप धारण करके बन्धन से निकल गये। बन्धन से छूटने पर वे फिर पर्वताकार हो गये, और गरजकर पर्वत के समान ऊँचे फाटक पर कूद गये। फाटक पर एक लोहमय परिघ रक्खा था, उसे लेकर वहाँ के सब राक्षसों को मार डाला। पूँछ में अग्नि प्रज्वलित होने से उस समय वे सूर्य के समान प्रकाशित हुए। ३१—४०।

सर्ग ५४

हनुमान् का कार्य सीता को देखना था, वह हो गया था, इसलिए उनका उत्साह भी बढ़ा हुआ था। वे लंका की ओर देखकर सोचने लगे कि अब और क्या काम करना चाहिए, जिससे राक्षसों को और भी सन्ताप हो। अशोक-वन उजाड़ दिया है, प्रधान राक्षसों और सैनिकों को मार डाला है। अब क़िला का विनाश करना बाक़ी है। क़िले का भी विध्वंस कर दें, तो पूर्णरूप से मेरा परिश्रम सफल हो। १—४। मेरी पूँछ में आग जल रही है, इन घरों को भस्म करके इसे भी तृप्त कर देना चाहिए। यह सोचकर महावीर हनुमान् जलती हुई पूँछ उठाकर, घरों के ऊपर दौड़ने लगे, जैसे बिजली चमकते हुए बादल बड़े वेग से दौड़ते हैं। पहले प्रहस्त के घर पर कूद गये। उसके घर में चारों ओर से आग लगाकर महापार्श्व के घर पर चढ़ गये। वहाँ भी

प्रलयकाल की अग्नि के समान प्रचंड आग लगा दी। फिर क्रम
बज्रदंष्ट्र, शुक, सारण, इन्द्रजित, जम्बुमाली, सुमाली, रश्मके
सूर्यशत्रु, ह्रस्वकर्ण, दीर्घदंष्ट्र, रोमश, युद्धोन्मत्त, मत्त, ध्वजग्री
हस्तिमुख, कराल, विशाल, शोणिताक्ष, कुम्भकर्ण, मकराक्ष, नरान्त
कुम्भ, निकुम्भ, यज्ञशत्रु और ब्राह्मणशत्रु आदि राक्षसों के घर में आ
लगा दी। ५—१५। विभीषण का घर छोड़कर और सब राक्षसों
घर जला दिये। राक्षसों के महामूल्य घरों को धन-सम्पत्ति सहि
हनुमान् ने भस्म कर दिये। फिर वे राजभवन के ऊपर चढ़ गये।
मेरु और मन्दर पर्वत के समान ऊँचा था, वहाँ अनेक प्रकार के
तथा मंगल-पदार्थ थे। वीर हनुमान् जलती हुई पूँछ से उस घर
आग लगाकर प्रलयकाल के बादलों के समान गरजने लगे। १६—२
वायु की सहायता से वह अग्नि बड़े वेग से बढ़ी, प्रलयकाल की अग्नि
के समान प्रचंड हो गई। सुवर्णमय गवाक्षों से शोभित, महामूल्य र
से भूषित, ऊँचे घरों को भस्म करके पृथिवी पर गिराने लगी। पुण्य-क्षी
होने पर जैसे सिद्ध लोगों के विमान आकाश से गिरें वैसे ही राक्ष
के घर जलकर गिरने लगे। राक्षसों का उत्साह भंग हो गया,
अपनी सम्पत्ति छोड़कर रोते हुए भागे। राक्षस कहते थे कि अग्नि
वानर का रूप धारण करके लंका को भस्म करने के लिए आ
है। २१—२५। स्त्रियाँ बच्चों को लेकर भागीं। कुछ स्त्रियाँ जलते हु
ऊँचे घरों से कूद पड़ीं। वे आकाश से गिरती हुई बिजली के समा
शोभित हुईं। हीरा, मूँगा, वैदूर्यमणि, मोती और चाँदी आदि अने
धातुवें पिघलकर बहने लगीं। जैसे आग सूखे तृण और काठ
जलाकर भी तृप्त नहीं होती, वैसे ही हनुमान् बहुत-से राक्षसों को मार
भी सन्तुष्ट नहीं हुए। अधजले राक्षसों से पृथिवी आच्छादित ह
गई। जैसे रुद्र ने त्रिपुर को भस्म किया था वैसे ही महात्मा हनुमा
ने लंका को भस्म कर दिया। २६—३०। लंका त्रिकूट पर्वत

बसी थीं, प्रज्वलित आग उस पर्वत के शिखरों पर फैल गई, और वायु की सहायता से प्रलयकाल की अग्नि के समान प्रचंडरूप धारण करके आकाश का स्पर्श करने लगी। करोड़ों सूर्य के समान प्रकाशित, प्रचंड अग्नि का भयानक शब्द होने लगा। धुआँ एकत्र होकर नीले बादलों के समान और शिखा पलाश के फूल के समान आकाश में शोभित हुई। राक्षस आपस में कहने लगे—यह वानर या तो देवराज इन्द्र है, अथवा यम, वरुण, पवन, रुद्र, अग्नि, सूर्य, कुबेर, या चन्द्रमा है; अथवा काल वानर का रूप धारण करके आया है, अथवा पितामह ब्रह्मा का कोप है, वानर का रूप धारण करके राक्षसों का विनाश करने के लिए आया है। ३१–३६। अथवा अनन्त, अव्यक्त, अचिन्त्य, विष्णु का तेज है; राक्षस-कुल का संहार करने के लिए अपनी माया से वानर का रूप धारण करके आया है। घोड़े, हाथी और पशु-पक्षियों सहित लंका भस्म हो गई। सर्वत्र रोने-चिल्लाने का शब्द होने लगा। हा तात, हा पुत्र, हा कान्त, हा मित्र, हा प्राणनाथ, हम लोग घोर विपत्ति में पड़ गये, हम लोगों के पुण्य क्षीण हो गये। इसी भाँति अनेक प्रकार से विलाप होने लगा। लंका हनुमान् के कोप से शापग्रस्त के समान हो गई। ३७–४१। घबराये और डरे हुए राक्षसों से, चारों ओर प्रज्वलित अग्नि के फैलने से, लंका की वैसी ही शोचनीय दशा हो गई, जैसे प्रलय के समय रुद्र के कोप से पृथिवी की हो जाती है। वीर हनुमान् ने वन को उजाड़कर, राक्षसों को मारकर और समूची लंका को जलाकर, रामचन्द्र का स्मरण किया। देवता प्रसन्न होकर उनकी स्तुति करने लगे। उनका यह काम देखकर महर्षि, गन्धर्व, नाग और विद्याधर बड़े प्रसन्न और विस्मित हुए। ऊँचे घरों के ऊपर कूदते हुए वीर हनुमान् जलती हुई पूँछ से सूर्य के समान शोभित होते थे। उन्होंने लंका को भस्म करके पूँछ की आग समुद्र में बुझा दी। ४२–५०।

सर्ग ५५

लंका भस्म हो गई, यह देखकर हनुमान् को बड़ा भय हुआ। उन्होंने सोचा कि मैंने लंका को भस्म करके बड़ा अनर्थ किया; क्योंकि सीता भी जल गई होंगी। वे महात्मा पुरुष धन्य हैं, जो क्रोध को बुद्धि से उसी भाँति रोक लेते हैं जैसे पानी से आग बुझा दी जाती है। क्रोधी मनुष्य कौन पाप नहीं कर सकता, गुरुजनों की भी हत्या कर डालता है, कठोर वचन कहकर सज्जनों का अपमान करता है, क्रोध में उचित-अनुचित का ज्ञान नहीं रहता। वह यह नहीं सोचता कि कौन बात कहनी चाहिए और कौन न कहनी चाहिए। क्रोधी के लिए न कोई काम अनुचित है और न कोई बात कहने के अयोग्य है। १—५। जैसे साँप पुरानी केंचुल को छोड़ देता है वैसे ही जो पुरुष क्रोध को त्याग सकता है वही यथार्थ पुरुष है। मैं निर्लज्ज, दुर्बुद्धि और पापी हूँ। मुझे धिक्कार है। मैंने विना सोचे लंका में आग लगाकर सीता को जला दिया और अपने स्वामी का कार्य नष्ट किया। जब समूची लंका भस्म हो गई तो सीता अवश्य जल गई होंगी। जिस काम के लिए इतना उद्योग किया, उसे अपनी ही मूर्खता से नष्ट कर दिया। लंका को जलाते समय सीता की रक्षा नहीं की। जिसके लिए लंका को जलाया था, उसे भी अपनी मूर्खता से भस्म कर दिया। सीता को देखना ही मेरा काम था, किन्तु क्रोध में आकर उस काम के मूल का भी विनाश कर दिया। ६—१०। सीता अवश्य जल गई होंगी, क्योंकि लंका में ऐसा कोई स्थान नहीं जो भस्म न हुआ हो। इसलिए मैं यहीं प्राण त्याग दूँगा। आग में कूद पड़ूँगा या बड़वानल में गिरकर मर जाऊँगा। अथवा समुद्र में कूदकर जल के जीवों को अपना शरीर अर्पण कर दूँगा, क्योंकि अब सुग्रीव और राम-लक्ष्मण के पास कैसे जाऊँ। वानरों का स्वभाव चंचल होता है, इस बात को मैंने सत्य करके दिखा दिया। ११—१५। ऐसे स्वभाव को धिक्कार है। मैंने इसी स्वभाव के कारण, विना विचारे यह

अनर्थ किया। मैं सीता की रक्षा कर सकता था, किन्तु इस स्वभाव के कारण क्रोध के वश में होकर सीता की रक्षा करना भूल गया। अब सीता के मर जाने से दोनों भाई रामचन्द्र और लक्ष्मण भी प्राण त्याग देंगे। राम-लक्ष्मण के मरने पर सुग्रीव भी सपरिवार मर जायँगे। धर्मात्मा भरत और शत्रुघ्न ही कैसे जी सकेंगे। भरत के मरने पर प्रजा को बड़ा दुःख होगा। मेरे दोष से ही यह अनर्थ हुआ। मैंने धर्म और अर्थ का नाश कर दिया। १६—२०। हनुमान् इस प्रकार सोच रहे थे, इतने में शुभ शकुन देख पड़े। वैसे ही शकुन पहले भी उन्होंने देखा था। तब उन्होंने सोचा कि सर्वांगसुन्दरी सीता अपने तेज से सुरक्षित हैं, उनका विनाश कैसे हो सकता है, क्योंकि जब रामचन्द्र के प्रभाव से और सीता के पुण्य से मैं जलने से बच गया, तो सीता क्यों जली होंगी। यद्यपि आग का काम जला देना है, जो उसमें पड़ेगा वह जल जायगा, किन्तु रामचन्द्र के प्रभाव से जब हमारी पूँछ आग में नहीं जली, तो सीता क्यों जलेंगी। जब समुद्र और पर्वत रामचन्द्र का हित करते हैं तो क्या अग्नि उनका प्रिय न करेगी। सीता अपने पातिव्रत, तपस्या और सत्य के प्रभाव से स्वयं अग्नि को जला सकती हैं, तो अग्नि से उनकी रक्षा होने में क्या सन्देह है। २१—२८। हनुमान् यह सोच रहे थे, उसी समय चारणगण कहने लगे—हनुमान् ने जो काम किया है, यह दूसरे से नहीं हो सकता। इन्होंने निशाचरों के घर जला दिये, समूची लंका को भस्म कर दिया, किन्तु सीता को नहीं जलाया। यह अद्भुत काम करके हम लोगों को विस्मित कर दिया। अमृत के समान ये वचन सुनकर हनुमान् को बड़ा हर्ष हुआ। चारणगण के यह वचन सुने और शुभ शकुन भी देख पड़े, इससे उनको विश्वास हुआ कि सीता सुरक्षित हैं। तब उन्होंने सोचा कि सीता को फिर देखकर यहाँ से लौटना चाहिए। २९—३५।

सर्ग ५६

उसके बाद हनुमान् सीता के पास गये और प्रणाम करके बोले- देवि, बड़े भाग्य से आपके दर्शन मिले। कोई कष्ट तो नहीं हुआ? हनुमान् को लौटने के लिए तैयार देखकर सीता मधुर वचन बोलीं- हे शत्रुनाशन, तुम आज किसी गुप्त स्थान पर विश्राम करके कल चले जाना। जितनी देर यहाँ रहोगे उतनी ही देर के लिए इस अभागिनी का शोक दूर हो जायगा। हे वीर, तुम जाते तो हो, किन्तु तुम्हारे लौटने पर मैं जीवित रहूँगी या नहीं, इसमें सन्देह है। मेरा चित्त बहुत खिन्न है, मुझे बड़ा दुःख है। तुम्हारे चले जाने से वह दुःख और भी बढ़ेगा। मुझे सन्देह होता है कि वानरराज सुग्रीव वानरों की सेना लेकर कैसे इस अपार समुद्र के पार आवेंगे। राजकुमार रामचन्द्र और लक्ष्मण ही कैसे आ सकेंगे। गरुड़ और वायु के सिवा केवल तुम्हीं में समुद्र लाँघने की शक्ति है, अतएव इस कठिन काम के लिए क्या उपाय सोचते हो? हे शत्रुनाशन, यदि तुम अकेले ही शत्रु का विनाश करोगे तो तुम्हारी ही कीर्ति होगी, किन्तु यदि रघुनन्दन रामचन्द्र सेना लेकर आवें और शत्रुओं को मारकर मुझे ले जायँ, तभी उनके अनुरूप काम हो सकता है। अतएव जिस उपाय से महात्मा रामचन्द्र का पराक्रम प्रकट हो, वह उपाय करो।

वीर हनुमान् ने उत्तर दिया— हे देवि, रीछों और वानरों के राजा सत्यवादी सुग्रीव ने आपका उद्धार करने की प्रतिज्ञा की है। १-१५

हे वैदेही, वानरराज सुग्रीव करोड़ों वानर लेकर आवेंगे। पुरुषश्रेष्ठ राम-लक्ष्मण भी उनके साथ आकर लंका का विनाश करेंगे। सपरिवार रावण को मारकर, शीघ्र ही आपको लेकर अयोध्या को लौट जायँगे। आप धैर्य रक्खें, शीघ्र ही देखेंगी कि रामचन्द्र ने रावण को मार डाला है। मन्त्रियों और बन्धु-बान्धवों सहित रावण के मरने पर आप रामचन्द्र से वैसे ही मिलेंगी जैसे रोहिणी चन्द्रमा से मिलती है। १६-२०

सीता को इस प्रकार समझाकर वीर हनुमान् ने उनको प्रणाम किया और रामचन्द्र के दर्शन के लिए बड़ी उत्सुकता से अरिष्ट पर्वत पर चढ़ गये। वह पर्वत बहुत ऊँचा था, काले बादलों और वृक्षों की पंक्तियों से शोभित था। उसके शिखर बादलों से ढके थे, अतएव मानों वही उसके वस्त्र थे। सूर्य की किरणें मानों बड़े प्रेम से उसे जगा रही थीं। अनेक प्रकार की धातुवें उस पर्वत के नेत्र थे। पानी गिरने का ऐसा गम्भीर शब्द होता था मानों वह पर्वत पढ़ रहा था। झरनों से धीरे-धीरे अस्पष्ट शब्द होता था, जान पड़ता था मानों पर्वत गा रहा है। देवदारु के ऊँचे वृक्ष ऐसे मालूम होते थे मानों वह पर्वत अपनी भुजाएँ उठाये है। २१—२६। सर्वत्र पानी की धाराओं के गिरने का शब्द होता था। सप्तपर्ण के वृक्ष हवा से काँप रहे थे। बाँस के वन से जो शब्द निकलता था, वह मानों पर्वत का शब्द था। विषैले साँपों की साँसें मानों उस पर्वत की साँसें थीं। उसकी कन्दराएँ बरफ़ से ढकी हुई थीं, इसलिए मालूम होता था, मानों वह समाधि लगाये हुए था। उस पर्वत पर बादलों के समान छोटी-छोटी शिलाएँ देख पड़ती थीं, इसलिए जान पड़ता था मानों वह चल रहा है। ३०—३२। उसके शिखर आकाश तक ऊँचे थे, मानों वह पर्वत जम्हाई ले रहा है। ऊँचे शिखर सब दिशाओं में फैले हुए थे। कन्दराएँ और छोटी-छोटी शिलाएँ भी बहुत थीं। साल, ताल, अश्वकर्ण, बाँस तथा अनेक प्रकार की फूली हुई लताओं से शोभित था। ३३—३४। झुंड के झुंड मृग घूमते थे, तरह-तरह की धातुवें बहती थीं, झरने झरते थे और बड़ी-बड़ी शिलाओं के ढेर लगे थे। ३५। उस पर्वत पर महर्षि, यक्ष, गन्धर्व, किन्नर और साँप रहते थे, वृक्षों की घनी पाँति और लताएँ भी थीं। उसकी कन्दराओं में सिंह और बाघ गरजते थे। ३६। वृक्षों के फल बहुत स्वादिष्ठ थे, बहुत-से वृक्ष फूले हुए थे। वीर हनुमान् रामचन्द्र के पास जाने की इच्छा से बहुत शीघ्र उस पर्वत पर

चढ़ गये। उनके चढ़ने से उस पर्वत की शिलाएँ चूर-चूर होकर गि
पड़ीं; उनके गिरने का भारी शब्द हुआ। वीर हनुमान् ने समु
के पार आने के लिए अपनी देह बढ़ाई। ३७—४०। पर्वत के ऊँ
शिखर पर चढ़कर उन्होंने समुद्र की ओर देखा। वायु के समान शीघ्र
गामी हनुमान् के चलने से वह पर्वत पीड़ित हो गया। ४१—४२
वहाँ के सब जीव-जन्तु डर के मारे चिल्लाने लगे। शिखर डगमगा
लगे और वृक्ष गिर पड़े। पर्वत पृथिवी में धँस गया। फूले हुए वृ
टूटकर पृथिवी पर गिर पड़े, मानों उन पर वज्र गिरा। ४३—४४
कन्दराओं में रहनेवाले सिंह गरजने लगे। उनके गरजने का ब
भयानक शब्द हुआ। विद्याधरों की स्त्रियाँ डर के मारे आकाश क
भागीं, उनके वस्त्र और आभूषण खिसक गये। पर्वत की शिला
गिरने से बड़े-बड़े साँप कुचल गये। किसी का सिर फूट गया, किसी
की गर्दन कुचल गई। ४५—४७। किन्नर, नाग, गन्धर्व, यक्ष औ
विद्याधर पर्वत छोड़कर आकाश को भाग गये। पर्वत पीड़ित होक
ऊँचे शिखरों और वृक्षों सहित रसातल को चला गया। वह दस योज
विस्तृत और तीस योजन ऊँचा था। धँसकर पृथिवी के बराबर हो
गया। ४८—५१।

सर्ग ५७

आकाश गम्भीर समुद्र के समान था; उसमें गन्धर्व मानों कमल के
समान, चन्द्रमा कुमुद के समान, सूर्य कारण्डव के समान, पुष्य और
श्रवण नक्षत्र हंस के समान, बादल सेवार के समान, पुनर्वसु बड़े मत्स्य
के समान, मंगल ग्रह उस समुद्र का महाग्राह, ऐरावत उस समुद्र का
महागज, वायु का वेग उसकी तरंगें और चन्द्रमा की किरणें उसका
शीतल जल था। १—४। वीर हनुमान् आकाशमार्ग से चले। महावेग
से चलने पर ऐसा मालूम हुआ, मानों वे आकाश को लील लेंगे

चन्द्रमा को टुकड़े-टुकड़े कर देंगे। आकाश में कई रंग के बादल शोभित थे। महावीर हनुमान् चन्द्रमा के समान कभी उनमें छिपते और कभी प्रकट होते थे। ५—८। समुद्र के बीच में आकर मैनाक पर्वत को देखा, उसे हाथ से छूकर धनुष से छूटे हुए बाण के समान बड़े वेग से चले। जब महेंद्र पर्वत के पास पहुँचे तो उसे देखकर सिंह के समान गरजने लगे। उनके गरजने का शब्द सब दिशाओं में फैल गया। बादलों के समान गरजते हुए महावीर हनुमान् अपने साथियों को देखने की इच्छा से बहुत शीघ्र महेन्द्र पर्वत पर पहुँच गये। उनके गरजने के शब्द से सूर्य के सहित आकाश मानों फटा जा रहा था। समुद्र के इस पार जो बलवान् वानर हनुमान् की प्रतीक्षा कर रहे थे उनको बादलों के गरजने के समान शब्द सुन पड़ा। वे समझ गये कि हनुमान् आ रहे हैं, उनको देखने के लिए उत्सुक हुए। ९—२१। वानरों में श्रेष्ठ जाम्बवान् ने प्रसन्न होकर कहा—हनुमान् कार्य सिद्ध करके लौटे हैं। यदि कार्य सिद्ध न होता तो इस प्रकार न गरजते। सब वानर उनको देखने के लिए बड़े हर्ष से शिखरों और वृक्षों के ऊपर कूदने लगे। हर्ष के मारे वृक्षों की शाखा पर खड़े हो गये और अपने वस्त्र हिलाने लगे। २२—२६। जैसे पर्वत की कन्दरा में वायु का शब्द होता है वैसे ही वीर हनुमान् गरज रहे थे। आकाश में बादलों के समान हनुमान् को देखकर सब वानर हाथ जोड़कर खड़े हो गये। उनके देखते ही देखते वृक्षों से शोभित महेन्द्र पर्वत के शिखर पर वे कूद पड़े। पंख कटे हुए पर्वत के समान जब वे आकाश से कूदे तो सब वानर बड़े हर्ष से उनको घेरकर खड़े हो गये। उनके बैठने के लिए वृक्षों की शाखाएँ तोड़कर आसन बनाया और फल-मूल लाकर उनके सामने रक्खा। हनुमान् ने जाम्बवान् आदि बूढ़े वानरों को और कुमार अंगद को प्रणाम किया। उन्होंने भी उनका यथोचित सम्मान किया। हनुमान् ने कहा—मैं सीता को देख आया हूँ। २७—२९। यह शुभ संवाद सुनकर सब वानर बड़े प्रसन्न

हुए। हनुमान् कुमार अंगद का हाथ पकड़कर रमणीय स्थान में
गये और उनके पूछने से लंका का हाल कहने लगे। हनुमान् ने कहा
सीता लंका में अशोक-वन में बैठी हैं, मैं उनको देख आया हूँ
राक्षसियाँ उनकी रखवारी करती हैं। वे एक वेणी धारण किये हैं और
रामचन्द्र की ही चिन्ता करती हैं। उपवास करते-करते बहुत दुबली हो
गई हैं। उनके वस्त्र बहुत मैले हो गये हैं। अमृत के समान यह वच
सुनकर अंगद आदि सब वानर बड़े प्रसन्न हुए। कोई हर्ष के म
गरजने लगा, कोई किलकिलाने लगा और कोई पूँछ उठाकर हँस
लगा। ३७—४२। अंगद ने हनुमान् से कहा—हे वीर, बल और वी
में तुम्हारे समान और कोई नहीं है; तुम समुद्र को लाँघकर फिर लौ
आये हो। तुम हम लोगों के जीवनदाता हो, तुम्हारी ही कृपा से ह
लोग सफल-मनोरथ होकर रामचन्द्र के पास चलेंगे। तुम्हारा पराक्रम
धैर्य और तुम्हारी स्वामि-भक्ति प्रशंसनीय है। तुम बड़े भाग्य
यशस्विनी सीता को देख आये हो। अब रामचन्द्र का सीता के वियो
का शोक दूर हो जायगा। हनुमान्, अंगद और जाम्बवान् के चा
ओर सब वानर हाथ जोड़े हुए बैठे थे। वे सीता का हाल सुनने के लि
बड़ी उत्सुकता से हनुमान् का मुख देखते थे। ४३—५३।

सर्ग ५८

जाम्बवान् ने प्रसन्न होकर हनुमान् से पूछा—तुमने किस प्रका
सीता को देखा? वे लंका में किस तरह रहती हैं और दुरात्मा राव
उनके साथ कैसा बर्ताव करता है? हे वीर, यह सब वृत्तान्त हम लोगों
से कहो। सीता का पता कैसे लगा, उन्होंने तुमसे क्या कहा, यह
सुनकर आगे का कर्तव्य सोचेंगे। रामचन्द्र से कहने योग्य अथ
न कहने योग्य सब बातें ठीक-ठीक हमसे कहो। १—६। जाम्बवान्
यह पूछने पर हर्ष से हनुमान् का शरीर पुलकित हो गया। हि

झुकाकर मन में सीता को प्रणाम करके बोले—समुद्र के पार जाने के लिए मैं आप लोगों के सामने ही महेन्द्र पर्वत से आकाश को कूद गया था। मैं समुद्र के ऊपर जा रहा था, अकस्मात् सुवर्णमय शिखरों से शोभित एक पर्वत समुद्र से निकल आया। वह मार्ग रोककर खड़ा हो गया। मैंने उसे एक विघ्न समझा; उसको डराने के लिए अपनी पूँछ उस पर पटक दी। पूँछ के प्रहार से सूर्य के समान चमकते हुए उस पर्वत का एक शिखर टूट गया। तब वह पर्वत मनुष्य का रूप धारण करके मधुर वाणी से मुझे प्रसन्न करता हुआ बोला—मैं वायु का मित्र हूँ, इसलिए तुम मुझे अपना चाचा समझो। ७–१३। मेरा नाम मैनाक है, मैं समुद्र के भीतर रहता हूँ। प्राचीन समय में पर्वतों के पंख थे, इस कारण वे अनेक प्रकार के उत्पात करते हुए इच्छानुसार पृथिवी भर में घूमते थे। देवराज इन्द्र ने वज्र से हज़ारों पर्वतों के पंख काट डाले, किन्तु तुम्हारे पिता महात्मा पवन ने मेरी रक्षा की। उन्होंने मुझे समुद्र में ढकेल दिया। हे शत्रुनाशन, रामचन्द्र धर्मात्माओं में श्रेष्ठ हैं, पराक्रम में इन्द्र के समान हैं, अतएव उनकी सहायता करना मेरा कर्तव्य है। महात्मा मैनाक की यह बात सुनकर मैंने उनसे अपना कार्य बताया। मेरा मन शीघ्र जाने के लिए चंचल हो रहा था। तब मैनाक ने मुझे जाने की आज्ञा दी। उसके बाद वह अन्तर्धान हो गया, मनुष्य-शरीर के सहित समुद्र के भीतर चला गया। १४–२०। फिर मैं बड़े वेग से आगे बढ़ा। कुछ ही दूर आगे साँपों की माता सुरसा मिली। उसने भी मेरा मार्ग रोककर कहा—हे वीर, देवताओं ने मेरे भोजन के लिए तुमको भेजा है; मैं तुम्हें खाऊँगी। मैंने हाथ जोड़कर नम्रता से कहा—शत्रुनाशन रामचन्द्र भाई लक्ष्मण और भार्या सीता के साथ दंडक वन को आये हैं। दुरात्मा रावण सीता को हर ले गया है। मैं रामचन्द्र की आज्ञा से सीता को ढूँढ़ने के लिए जाता हूँ। तुम रामचन्द्र के राज्य में रहती हो, इसलिए तुमको उनकी सहायता करनी

चाहिए। अथवा यदि तुम्हारी यही इच्छा है, तो मैं प्रतिज्ञा करता हूँ
सीता को देखकर और उनका हाल रामचन्द्र से कहकर मैं स्वयं तुम्
मुँह में पैठ जाऊँगा। कामरूपिणी सुरसा ने उत्तर दिया--मुझे वरद
मिला है, कोई प्राणी मुझसे बचकर नहीं जा सकता। उसने यह
कर दस योजन में अपना मुँह फैला दिया। तब मैंने अपनी देह उस
मुँह से भी अधिक बढ़ाई। यह देखकर उसने अपना मुँह और बड़ा किय
तब मैं अँगूठे के बराबर अपनी देह करके, फुर्ती से उसके मुँह में पैठक
बाहर निकल गया। यह देखकर सुरसा अपना रूप धारण करके मुझ
बोली--हे सौम्य, तुम सुख से जाओ, सीता को देखकर उनका हा
रामचन्द्र से कहो। मैं तुमसे बहुत प्रसन्न हुई। यह हाल देखकर सि
गण मेरी प्रशंसा करने लगे। २१-३४। उसके बाद जब मैं गरुड़
समान वेग से आगे चला, तब किसी ने मेरी छाया पकड़ ली। मु
कोई देख न पड़ा, किन्तु मेरी गति रुक गई। मैं चारों ओर देखने लग
यह न मालूम कर सका कि मेरी गति किसने रोक दी। जब मेरी दृ
नीचे को गई तो समुद्र के भीतर एक भयंकरी राक्षसी देख पड़ी। किन्तु उ
देखकर मुझे कुछ भय न हुआ। ३५-३८। वह हँसकर कठोर वचन बोली-
हे महाकाय, मुझे बहुत दिनों से भोजन नहीं मिला, मैं बहुत भू
हूँ। तुम मेरा भोजन बनकर मुझे तृप्त करो। मैं तुमको खाऊँगी। ३६-४
मैंने उसकी बात स्वीकार कर ली और अपना शरीर उसके मुँह से
बड़ा कर लिया। उसने अपना मुँह और भी फैलाया। वह मेरा पराक्र
नहीं जानती थी। मैंने अपनी देह बढ़ाई थी, उसे भी वह न जा
सकी। फिर मैंने अपना विशाल शरीर संकुचित करके, उसके मुँह
पैठकर, उसके प्राण निकाल लिये। वह पर्वताकार राक्षसी दोनों हा
फैलाकर समुद्र में गिर पड़ी। आकाश में महात्मा सिद्ध पुरु
ने कहा कि हनुमान् ने सिंहिका राक्षसी को बड़ी शीघ्रता से म
डाला। मैं अपने कार्य को सोचता हुआ आगे चला। बहुत

जाकर पर्वतों से शोभित समुद्र के दक्षिण तट पर लंका में पहुँचा। सूर्यास्त होने पर छिपकर राक्षसों की नगरी को चला। फाटक पर पहुँचते ही प्रलयकाल के बादलों के समान काली एक राक्षसी हँसती हुई मेरे सामने आई। वह बड़ी भयानक थी, उसके सिर के बाल अग्नि की शिखा के समान चमकते थे। वह गरजकर मुझे मारने दौड़ी, तब मैंने एक घूँसा मारकर उसे गिरा दिया। वह भयभीत होकर बोली—हे वीर, मैं लंका की अधिष्ठात्री हूँ। तुमने अपने पराक्रम से मुझे परास्त कर दिया, इसलिए तुम सब राक्षसों को जीत लोगे। मैंने सन्ध्या के समय लंका में प्रवेश किया और रात भर लंका में ढूँढ़ता रहा। रावण के अन्तःपुर में भी ढूँढ़ा, किन्तु सीता कहीं न देख पड़ीं। तब मुझे बड़ा शोक हुआ, और कोई उपाय न सूझा। उसी समय अन्तःपुर के समीप ही एक बाग़ देख पड़ा। उसके चारों ओर बड़ी ऊँची चहारदीवारी है। मैं कूदकर, उस चहारदीवारी पर चढ़ गया और उस बाग़ को देखने लगा। उसमें अनेक प्रकार के वृक्ष हैं; उसका नाम अशोक-वाटिका है। अशोक-वाटिका में शीशम का एक बहुत बड़ा वृक्ष है। उसके पास केले के भी बहुत-से पेड़ हैं। सीता शीशम के पेड़ के पास बैठी हैं, उनको मैंने देखा। उनकी आँखें कमल के समान सुन्दर हैं, किन्तु शोक के मारे मुँह सूख गया है। उपवास करते-करते बहुत दुबली हो गई हैं। केवल एक वस्त्र पहने हैं, वह भी बहुत मैला हो गया है। बालों में धूलि लगी है, शोक के मारे बहुत उदास रहती हैं, और रामचन्द्र का स्मरण किया करती हैं। भयंकरी राक्षसियाँ उसी प्रकार उनको घेरे बैठी रहती हैं, जैसे बाघिनें मृगी को घेरे हों। जैसे जाड़े में कमलिनी सूख जाती है, वैसे ही पति की चिन्ता में सीता दुर्बल हो गई हैं। वे केवल एक वेणी धारण किये हैं और पृथिवी पर उदास बैठी हैं। ४१—६०। रावण उनका अपमान करता है, इसलिए उन्होंने प्राण त्याग देने का निश्चय कर लिया है। रावण के प्रति

उनकी प्रवृत्ति नहीं है। मैं किसी तरह सीता के पास पहुँचा। उन
देखकर उसी शीशम के वृक्ष में छिपकर बैठ गया।

थोड़ी देर बाद रावण के घर के समीप स्त्रियों के आभूषणों का श
सुन पड़ा। तब मैं बहुत घबराया, अपनी देह संकुचित करके पक्षी
तरह घने पत्तों के बीच में छिप गया। ६१—६४। महाबली रावण स्त्रि
के साथ सीता के पास आया। उसे देखकर वे बहुत डरीं। हाथों से स्त
को ढककर सिकुड़कर बैठ गईं। ६५—६६। डर के मारे इधर-उ
देखने लगीं, किसी को अपना रक्षक न देखकर काँपने लगीं। ६७
दशानन रावण परम दुःखिनी सीता से बोला—हे भामिनि, मैं तुम्हारे
पर सिर रखकर प्रार्थना करता हूँ, तुम मुझे सम्मानित करो। यदि तु
गर्व के वश होकर मुझे प्रसन्न न करोगी, तो हे सीते, दो महीने
बाद हम तुम्हारा रुधिर पियेंगे। ६८—६९। यह सुनकर सीता
क्रोध से बोलीं—रे अधम राक्षस, मैं महातेजस्वी रामचन्द्र की भा
और महाराज दशरथ की पुत्रवधू हूँ। तू ऐसी अनुचित बात मुझ
कहता है, तेरी जीभ फटकर क्यों नहीं गिर पड़ती। रे नीच, रे पा
तेरे पराक्रम को धिक्कार है। महात्मा रामचन्द्र आश्रम पर नहीं थे, उ
समय तू मुझे हर लाया है। तू रामचन्द्र की समता नहीं कर सकता। समा
होने की कौन कहे, तू उनका सेवक होने के योग्य भी नहीं है। ७०—७
महात्मा रामचन्द्र सत्यवादी, शूर, युद्ध में अजेय और प्रशंसनीय हैं। सी
की कठोर बातें सुनकर रावण क्रोध के मारे चिता की आग के सम
प्रज्वलित हो उठा। वह आँखें घूरकर, घूँसा तानकर, उनको मारने दौड़ा
तब उसकी स्त्रियाँ हाहाकार करने लगीं। उस दुरात्मा की एक राक्ष
स्त्री धान्यमालिनी ने उस कामातुर को मधुर वचनों से समझाया
हे स्वामिन्, आप सीता को लेकर क्या करेंगे। मुझसे बढ़कर
सुन्दरी नहीं है, आप मेरे साथ विहार कीजिए, अथवा हे प्रभो! देव
गन्धर्व और यक्षों की स्त्रियों के साथ क्रीड़ा कीजिए। आपको सी

से क्या प्रयोजन है। ७४—७९ इस प्रकार समझाकर उसे घर को ले गई। जब रावण स्त्रियों के साथ चला गया तब भयंकरी राक्षसियाँ कठोर वचनों से सीता को डाटने लगीं। किन्तु सीता ने उनकी बातों की कुछ भी परवा न की, राक्षसियों का धमकाना व्यर्थ हो गया। तब वे रावण के पास गईं और सीता की यह बातें उससे कह आईं। फिर सब राक्षसियाँ सो गईं और सीता दुःखित होकर रोने लगीं। थोड़ी देर में त्रिजटा नाम की राक्षसी जागी। उसने राक्षसियों से कहा—तुम सीता को नहीं खा सकतीं, आपस में ही एक-दूसरी को खाओ। आज मैंने एक भयानक स्वप्न देखा है, जिससे जान पड़ता है कि राक्षसों का विनाश होगा और इनके पति विजयी होंगे। उस समय सीता ही हम लोगों की रक्षा कर सकें। इसलिए आओ, हम लोग अपनी रक्षा के लिए इनसे प्रार्थना करें। इनके दुःखित होने पर ऐसा स्वप्न देख पड़ा है, इसलिए इन दुःखों से इनको छुटकारा अवश्य मिलेगा। हम लोग प्रणाम करके इनको प्रसन्न करें। यही हम लोगों को विपत्ति से बचावेंगी। त्रिजटा की यह बातें सुनकर सीता प्रसन्न होकर बोलीं—यदि तुम्हारी बात सत्य हुई तो मैं तुम लोगों की रक्षा करूँगी।

सीता की यह दशा देखकर मुझे बड़ी चिन्ता हुई। मेरा मन किसी तरह शान्त न हुआ। मैं सोचने लगा कि इनसे किस तरह बातें करूँ। फिर मैंने यह निश्चय किया कि इनको सुनाकर इक्ष्वाकुवंश की प्रशंसा करनी चाहिए। मैं ऐसा ही करने लगा। इक्ष्वाकुवंशी राजाओं की प्रशंसा सुनकर सीता आँखों में आँसू भरकर मुझसे बोलीं—तुम कौन हो, किसने तुमको भेजा है और यहाँ कैसे आये हो? तुमसे और रामचन्द्र से कैसे मित्रता हुई? यह सब मुझसे कहो। मैंने उत्तर दिया—हे देवि, वानरों के राजा महापराक्रमी सुग्रीव रामचन्द्र के सहायक हैं। ८०—८७। मेरा नाम हनुमान् है। रामचन्द्र की आज्ञा से मैं यहाँ

आया हूँ। उन्होंने चिह्न-स्वरूप अपनी अँगूठी आपको दी है, और आपकी जो आज्ञा हो वह करूँ। क्या आपको राम-लक्ष्मण के पास ले चलूँ। ९८—१००। सीता ने मुझे रामचन्द्र का दूत जानकर उत्तर दिया—रामचन्द्र स्वयं यहाँ आवें और रावण का विनाश करके मुझे ले चलें। १०१। तब मैंने प्रणाम करके रामचन्द्र के लिए उनसे कोई चिह्न माँगा। तब सीता ने यह मणि देकर मुझसे कहा—रामचन्द्र इस मणि को देखकर तुम्हारा सम्मान करेंगे। फिर सीता ने कुछ और सन्देश कहा। १०२—१०४। उसके बाद मैंने लौटने का इरादा करके उनको प्रणाम किया और एकाग्रचित्त से उनकी प्रदक्षिणा की। सीता आँखों में आँसू भरकर फिर बोलीं—हे वीर, मेरा हाल रामचन्द्र से ऐसे शब्दों में कहना, जिसमें वीर राम-लक्ष्मण सुग्रीव के साथ शीघ्र ही यहाँ आवें। यदि दो महीने के अन्दर नहीं आवेंगे तो मैं अनाथ की तरह मर जाऊँगी और वे मुझे न देख सकेंगे। उनके यह करुण वचन सुनकर मुझे बड़ा क्रोध आया, मैं सोचने लगा कि अब मुझे क्या करना चाहिए। क्रोध के मारे मेरा शरीर बढ़कर पर्वत के समान हो गया और मैं युद्ध करने की इच्छा से अशोक-वन को उजाड़ने लगा। १०५—११०। वन के विध्वंस होने से मृग और पक्षी व्याकुल होकर इधर-उधर भाग गये, राक्षसियाँ जाग पड़ीं, मुझे देखकर रावण के पास दौड़ी गईं। उन्होंने रावण से कहा—राजन्, एक वानर अशोक-वन को उजाड़ रहा है। वह बड़ा मूर्ख है, आपका पराक्रम नहीं जानता, इसी से आपका यह अप्रिय करता है। आप उसे मार डालने की आज्ञा दीजिए, जिसमें फिर कभी उसकी आशंका न रहे। १११—११४। राक्षसराज रावण ने किंकर नामक दुर्जय राक्षसों को भेजा। वे अस्सी हजार राक्षस शूल और मुद्गर लेकर अशोक-वन में आये। मैंने एक परिघ उठाकर उनका विनाश कर दिया। कुछ राक्षस भाग गये, उन्होंने रावण से यह हाल कहा। फिर मैंने एक मन्दिर को तोड़ डाला

और उसका एक खम्भा उखाड़कर वहाँ के राक्षसों को मार डाला। रावण ने प्रहस्त के पुत्र जम्बुमाली को भेजा। मैंने उसी परिघ से उस महाबली राक्षस को भी उसकी सेना सहित मार डाला। तब रावण ने पैदल सेना के साथ मन्त्रियों के पुत्रों को भेजा। मैंने उनका भी उसी परिघ से विनाश किया। रावण की आज्ञा से महापराक्रमी पाँच सेनापति मुझसे युद्ध करने के लिए आये। मैंने उनका भी विनाश कर दिया। उसके बाद रावण ने राक्षसों की बहुत बड़ी सेना के साथ अपने पुत्र महाबली अक्ष को भेजा। वह मन्दोदरी का पुत्र था, युद्ध में कुशल और महावीर था। उसे आकाशमार्ग से आते देखकर मैंने उसके दोनों पैर पकड़कर सौ बार घुमाया और पृथ्वी में पटक दिया। ११५–१२६। उसकी मृत्यु हो गई। यह सुनकर रावण बड़ा क्रुद्ध हुआ, और अपने दूसरे पुत्र महापराक्रमी इन्द्रजित् को युद्ध करने की आज्ञा दी। इन्द्रजित् के साथ जो सेना आई थी उसे मैंने मार डाला और इन्द्रजित् को भी व्यथित कर दिया। मुझे बड़ा हर्ष हुआ। रावण ने महाबली इन्द्रजित् को बड़े विश्वास से भेजा था। इन्द्रजित् ने अपनी सेना का विनाश और मेरा असह्य पराक्रम देखकर ब्रह्मास्त्र से मुझे बाँध लिया। उसके बाद राक्षस रस्सी में बाँधकर मुझे रावण के पास ले गये। दुरात्मा रावण ने मुझसे पूछा—तुम यहाँ क्यों आये, और तुमने राक्षसों को क्यों मारा? मैंने उत्तर दिया कि सीता के लिए मैंने यह सब काम किया है। मैं सीता को देखने के लिए आया हूँ; पवन का पुत्र, रामचन्द्र का दूत और सुग्रीव का मित्र हूँ; मेरा नाम हनुमान् है। उन्होंने जो सन्देश तुमसे कहा है वह कहता हूँ, सुनो—हे राक्षसराज, वानरों के राजा सुग्रीव ने तुम्हारी कुशल पूछी है और तुम्हारे हित के लिए धर्मार्थयुक्त यह कहा है कि जब मैं ऋष्यमूक पर्वत पर रहता था तब महापराक्रमी रामचन्द्र से मेरी मित्रता हुई। उन्होंने मुझसे कहा कि सीता को राक्षस हर ले गया है। तुम मेरी सहायता करने की प्रतिज्ञा करो। फिर

उन्होंने अपने भाई लक्ष्मण के साथ अग्नि को साक्षी करके मुझसे मित्र
की और एक ही बाण से बालि को मारकर मुझे वानरों का राजा ब
दिया। उनकी सहायता करना मेरा भी कर्तव्य है, इसलिए धर्म
अनुसार हनुमान् को तुम्हारे पास भेजता हूँ। तुम शीघ्र रामचन्द्र
उनकी स्त्री लौटा दो; नहीं तो वानरों की सेना लंका का विनाश करेगी
वानरों का प्रभाव कौन नहीं जानता। देवता भी अपनी सहायता
लिए उनको बुलाते हैं। वानरराज सुग्रीव का यह सन्देश मैंने आपसे कहा

मेरी बातें सुनकर दुरात्मा रावण बड़े क्रोध से इस प्रकार मुझे देख
लगा, मानों भस्म कर देगा। उसने भयानक राक्षसों को आज्ञा
कि इस वानर को मार डालो।१२७–१४६। तब उसके भाई बुद्धिमा
विभीषण ने मेरे लिए उससे प्रार्थना की—हे राक्षसराज, दूत का
करना उचित नहीं है। आपने इसे जो दंड देने की आज्ञा दी है वह रा
नीति के विरुद्ध है। राजनीति में दूत का वध करने की व्यवस्था न
है। दूत का तो काम ही है कि वह अपने स्वामी का सन्देश नि
होकर कह दे। हे अतुलविक्रम, दूत चाहे जैसा अपराध करे, कि
शास्त्र में उसे प्राणदंड देने की आज्ञा नहीं है। उसे विरूप कर देने
ही नियम है।१४७–१५०। विभीषण के समझाने पर रावण ने राक्ष
को मेरी पूँछ जलाने की आज्ञा दी। उसकी आज्ञा पाते ही कवच प
हुए महापराक्रमी राक्षसों ने घूँसों से मुझे मारा। सन, वल्कल, रेश
और सूती कपड़े लपेटकर मेरी पूँछ में आग लगा दी। राक्षसों
बाँधने और पीटने पर भी मुझे कुछ क्लेश नहीं हुआ; बल्कि उन
ऐसा करने पर मुझे दिन में लंका को देखने का मौक़ा मिला; क्योंकि
लंका को अच्छी तरह देखना चाहता था। राक्षस मुझे बाँधकर न
में घुमाने लगे। मेरा परिचय भी पुकारकर कहते जाते थे। जब नगर
फाटक पर गये, तब मैं अपनी विशाल देह को संकुचित करके बंधन
निकल आया। साधारण रूप धारण कर लिया और लोहे का एक भा

परिघ लेकर उन राक्षसों को भी मार डाला। फिर मैं नगर के फाटक पर चढ़ गया और जलती हुई पूँछ से नगर के द्वार से लेकर राजभवन तक समूची लंका को उसी प्रकार भस्म कर दिया जैसे प्रलयकाल की अग्नि प्रजा को भस्म कर देती है। १५१–१५८। समूची लंका भस्म हो जाने पर मुझे बड़ी चिन्ता हुई कि लंका में ऐसा कोई स्थान नहीं जो भस्म न हुआ हो, इसलिए सीता भी उसी के साथ जल गई होंगी। लंका में आग लगाकर मैंने बड़ा अनर्थ किया, सब कार्य नष्ट हो गया। मैं इसी शोक में था, इतने में चारण लोगों का यह शुभ वचन सुन पड़ा कि सीता जलने से बच गई हैं। यह सुनकर मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। चारण लोगों के यह वचन सुने और बहुत-से शुभ शकुन भी देखे, जिससे मुझे विश्वास हुआ कि सीता नहीं जलीं। मेरी पूँछ में जो कपड़े लपेटे गये थे वह तो जल गये, किन्तु मेरी पूँछ नहीं जली। उस समय मेरा चित्त बहुत प्रसन्न था, सुगन्ध वायु भी चलती थी, यह शुभ निमित्त देखकर और ऋषियों के वचन सुनकर मुझे बड़ा हर्ष हुआ। उसके बाद मैं फिर सीता को देखकर वहाँ से चला। १५९–१६५। समुद्र को लाँघने के लिए अरिष्ट पर्वत पर चढ़ गया, तुम लोगों को देखने की इच्छा से वायु, चन्द्रमा, गन्धर्व और सिद्ध पुरुषों से सेवित आकाशमार्ग से आकर तुम लोगों को देखा। रामचन्द्र की कृपा से, तुम लोगों के प्रभाव से, सुग्रीव के कार्य के लिए मैंने ये काम किये। अब जो काम बाकी हैं वह तुम लोग करो। १६६–१६९।

सर्ग ५९

हनुमान् ने कहा—सीता का स्वभाव देखकर मेरा चित्त बहुत प्रसन्न हुआ। रामचन्द्र का उद्योग और सुग्रीव का उत्साह भी सफल हुआ। पतिव्रता साध्वी स्त्री का जैसा चरित्र होना चाहिए, सीता वैसी ही सच्चरित्रा हैं। वे अपनी तपस्या के प्रभाव से तीनों लोकों को धारण

कर सकती हैं और कुपित होकर सब लोकों को भस्म भी कर सकती हैं। रावण बड़ा तपस्वी है, इसी से वह सीता का स्पर्श करने पर भी भस्म नहीं हुआ। अग्नि की शिखा का स्पर्श करके चाहे बच भी जाय किन्तु सीता के कोप से बचना बहुत कठिन है ।१—५। जो कुछ काम हुआ, वह मैंने आप लोगों को बताया। अब जाम्बवान् आदि प्रधान वानरों की आज्ञा से सीता को लाकर राजकुमार राम-लक्ष्मण से मिला देना चाहिए। ६। यद्यपि मैं अकेला ही सब राक्षसों को मार कर लंकापुरी और राक्षसराज रावण का विनाश कर सकता हूँ; फिर आप लोगों के समान बलवान्, सब कुछ करने में समर्थ, अस्त्र चलाने में निपुण, वीर पुरुष जब मेरे साथ हैं तो कहना ही क्या है।७—८। यद्यपि इन्द्रजित् के ब्राह्म, रौद्र, वायव्य और वरुण आदि अस्त्र युद्ध में असह्य हैं, किन्तु मैं उन सबको नष्ट करके राक्षस-कुल का समूल विनाश कर दूँगा। ९—११। आप लोगों की आज्ञा के बिना मैंने अपना पराक्रम नहीं दिखाया। मेरे बाहुबल से फेंके हुए पर्वत, निशाचरों की तो गिनती ही क्या है, देवताओं का भी विनाश कर सकते हैं। केवल आप लोगों की अनुमति न पाने से ही मैंने राक्षसों का वध नहीं किया।१२—१३। समुद्र चाहे अपनी मर्यादा का उल्लंघन करे, मन्दर पर्वत चाहे डगमगाने लगे, किन्तु जाम्बवान् को शत्रु की सेना युद्ध में विचालित नहीं कर सकती। १४। बालि-तनय अंगद अकेले ही राक्षसों का संहार कर सकते हैं। १५। महात्मा नील के वेग से मन्दर पर्वत भी चूर-चूर हो सकता है, तो बेचारे राक्षसों की क्या गिनती है। १६। देवता, दानव, यक्ष, गन्धर्व, साँप और पक्षियों में भी ऐसा कोई नहीं, जो मैन्द और द्विविद से युद्ध कर सके। ये दोनों बलवान् वानर अश्विनीकुमार के पुत्र हैं। १७—१८। मैंने अकेले ही अशोक-वन को उजाड़ दिया, लंका को भस्म कर दिया, अपना और आप लोगों का नाम पुकार कर सबको सुना दिया। महापराक्रमी

रामचन्द्र और लक्ष्मण की जय, रामचन्द्र द्वारा सुरक्षित राजा सुग्रीव की जय। मैं रामचन्द्र का दूत और वायु का पुत्र हूँ, मेरा नाम हनुमान् है। इसी प्रकार लंका भर में पुकारकर अपना नाम कह आया हूँ। १६–२१। मैंने दुरात्मा रावण की अशोक-वाटिका में देखा है, पतिव्रता सीता शीशम के पेड़ के नीचे उदास बैठी हैं। शोक-सन्ताप से पीड़ित होने और राक्षसियों के घेरे रहने से उनके शरीर की कान्ति बादलों से घिरे हुए चन्द्रमा की प्रभा के समान मलिन हो गई है। २२–२३। सीता पतिव्रता हैं, इसलिए रावण को तृण के समान समझती हैं। दुरात्मा रावण ने अपने बल के गर्व से उनको क़ैद कर रक्खा है, किन्तु जैसे शची एकमात्र इन्द्र पर अनुरक्त हैं वैसे ही सीता रामचन्द्र का स्मरण करती हैं। २४–२५। उनकी देह में मैल लगा है, केवल एक वस्त्र पहने हैं, राक्षसियाँ उनको घेरे बैठी हैं, और बार-बार डाटती हैं। वे पृथिवी पर सोती हैं और पति के वियोग में केवल एक वेणी धारण करती हैं। जैसे जाड़े में कमलिनी सूख जाती है वैसे ही सीता सूख गई हैं। उन्होंने मरने का निश्चय कर लिया है। रावण के प्रति उनकी रत्ती भर भी प्रवृत्ति नहीं है। २६–२८। मैंने उस मृग-नयनी को विश्वास दिलाया और समझा दिया है। रामचन्द्र से सुग्रीव की मित्रता का हाल सुनकर वे बड़ी प्रसन्न हुईं। उनका सदाचार और पातिव्रत जो रावण का विनाश नहीं कर देता, इससे जान पड़ता है कि महात्मा रावण बड़ा तपस्वी है; किन्तु वह मुर्दे के समान हो रहा है। रामचन्द्र उसका वध करने में केवल निमित्तमात्र होंगे। २९–३१। एक तो सीता स्वभावतः दुबली हैं, दूसरे पति के वियोग में वे और भी दुबली हो गई हैं। जैसे प्रतिपदा को पाठ करने से विद्या दुर्बल हो जाती है, वैसे ही इस समय सीता दुबली हो गई हैं। सीता बड़े शोक से दिन बिता रही हैं। इस विषय में अब आप लोग जो उचित समझिए वह कीजिए। ३२–३३।

सर्ग ६०

अंगद ने कहा—अश्विनीकुमार के पुत्र ये दोनों वानर ब
बलवान् और वेगवान् हैं। पितामह ब्रह्मा से वर पाकर इनको बल
और भी अधिक गर्व हो गया है। लोकपितामह ब्रह्मा ने अश्विनी
कुमार का सम्मान करने के लिए इनको वरदान दिया है कि तुम
कोई न मार सकेगा। यह वर पाकर इन्होंने देवताओं को परा
करके अमृत पी लिया है। यह दोनों बलवान् कुपित होकर हाथ
घोड़े और रथों सहित लंका का विनाश कर सकते हैं। मैं अकेला
अपने पराक्रम से राक्षसों सहित समूची लंका और दुरात्मा रावण
विनाश कर सकता हूँ, और जब आप लोगों के समान बलवान् वा
मेरे साथ हैं तो राक्षसों का वध करना कौन बड़ी बात है। आप लो
सुन चुके हैं कि अकेले हनुमान् ने लंका को भस्म कर दिया है।१-
अतएव रामचन्द्र के पास चलकर, आप लोगों के समान प्रसि
पराक्रमी वीरों को यह कहना उचित नहीं है कि सीता को देख आ
किन्तु ले नहीं आये। हे वानरवीरो, देवता और दानव भी पराक्रम
तुम लोगों की समता नहीं कर सकते। अतएव हम लोग राक्षसों सहि
रावण को मारकर, सीता को लेकर रामचन्द्र के पास चलेंगे। जो राक्ष
हनुमान् से बच गये हैं, उनको मारकर सीता को लाने के सिवा औ
अधिक काम ही क्या है। दूसरे वानरों को कष्ट देने की क्या आवश्यक
है। राक्षसों को मारकर ही राम-लक्ष्मण और सुग्रीव का दर्श
करना चाहिए। ८—१३।

जाम्बवान् ने प्रसन्न होकर कहा—यह उचित नहीं है, क्योंि
रामचन्द्र और सुग्रीव ने हम लोगों को सीता को ढूँढ़ने की ही आज्ञा दी
है। इसके सिवा रामचन्द्र ने वानरों के सामने सीता का उद्धार कर
की प्रतिज्ञा की है। वे अपनी प्रतिज्ञा कैसे मिथ्या करेंगे। अतएव य
हम लोग सीता को ले चलेंगे, तो वे प्रसन्न न होंगे। इसलिए ऐसे

व्यर्थ काम न करना चाहिए। १४–१८। हे वीरो, तुम लोग जो पराक्रम दिखाओगे, उसका कुछ फल न होगा। इसलिए महातेजस्वी राम-लक्ष्मण और सुग्रीव के पास चलो, उनसे यह सब हाल बताओ, वे जो आज्ञा दें, वह करो। १९–२०।

सर्ग ६१

जाम्बवान् की बात सबने मान ली। हनुमान् को आगे करके सब वानर महेन्द्र पर्वत से कूदते-फाँदते हुए आकाश-मार्ग से चले। वे सब महाकाय और महाबली थे। वेगवान् महावीर हनुमान् को वे मानों आँखों पर लेकर चले। सब वानर रामचन्द्र के लिए युद्ध करना चाहते थे और सबको यश पाने का लोभ था। सीता का पता लगाने से सबका मन प्रसन्न था १–५। रामचन्द्र को प्रिय संवाद सुनाने के लिए उत्सुक थे, सबको युद्ध करने का उत्साह था। वे लोग आकाश में उछलते-कूदते हुए बड़ी शीघ्रता से सुग्रीव के मधुवन में पहुँचे। वह उपवन नन्दनवन के समान मनोहर था। सुग्रीव के मामा महावीर दधिमुख उसकी रखवारी करते थे। मधु के समान पिंगलवर्ण वानरों ने मधुवन को देखकर कुमार अंगद से मधु पीने की आज्ञा माँगी। बुद्धिमान् अंगद ने जाम्बवान् आदि वृद्ध वानरों की सम्मति लेकर उनको आज्ञा दे दी। सब वानर बड़े प्रसन्न हुए और भँवरे गूँजते हुए वृक्षों पर चढ़कर सुगन्धित मधुर फल खाने लगे। मधु पीकर और फल खाकर वे उन्मत्त हो गये। कोई गाने लगा, कोई हँसने लगा, कोई नाचने लगा, कोई पढ़ने लगा, कोई दौड़ने लगा, कोई कूदता था, कोई बकता था, और कोई वृक्षों से पृथिवी पर कूदता था, कोई बड़े वेग से वृक्षों पर चढ़ जाता था। कोई रोते थे और कोई रोनेवालों की नक़ल करते थे, और कोई गरजते थे। फल खाते थे; पत्ते, फूल और वृक्षों को तोड़ते थे। यह देखकर दधिमुख ने उनको रोका, किन्तु उन्मत्त वानरों ने कुछ परवा न की। उलटे दधिमुख

को ही डाटने लगे। वीर दधिमुख ने उनको बहुत समझाया, किसी
धमकाया और किसी को थप्पड़ मारा। किन्तु उनको रोक न सके
वानरों ने यह समझकर कि इस समय यदि हम लोग दधिमुख
पीटेंगे तो सुग्रीव हमको दंड न देंगे। इसलिए निडर होकर दधिमुख
भी पीटने लगे। किसी ने दाँतों से काटा, किसी ने थप्पड़ मारा, कि
ने लात मारी, किसी ने नखाघात करके दधिमुख को पृथिवी पर गि
दिया। ६—२४।

सर्ग ६२

हनुमान् ने कहा—हे वानरो, तुम लोग निडर होकर मधु पि
और फल खाओ। जो कोई धावा करेगा, उसे मैं रोकूँगा। यह सुन
अंगद ने कहा—वानरो, तुम लोग मधु पियो। हनुमान् यदि का
को न सिद्ध कर आते तो भी इनकी आज्ञा का पालन करना हमा
कर्तव्य था, किन्तु अब तो ये कार्य कर आये हैं, इसलिए अब कहना
क्या है। कुमार अंगद के यह वचन सुनकर सब वानर उनकी प्रशं
करने लगे और बड़े प्रसन्न हुए। जैसे नदी का वेग वृक्षों को गि
देता है, वैसे ही वानरों ने रोकनेवालों को परास्त कर दिया, औ
निर्भय होकर मधुर फल खाने लगे। १—७। कोई फल खाता था, को
मधु पीता था, कोई इधर-उधर फेंकता था, कोई उन्मत्त होकर उच्छि
मधु और फलों से आपस में मारपीट करते थे। कोई वृक्ष की शा
पकड़े हुए खड़ा था, कोई थककर पत्ते बिछाकर सो गया था। कोई उन्म
की तरह दूसरे वानरों पर झपटता था, कोई गिर पड़ता था, कोई प
की-सी बोली बोलता था, कोई हर्ष से गरजता था, कोई पृथिवी
सो गया था, कोई बड़ी ढिठाई से दूसरे की हँसी उड़ाता था, कोई रो
था, कोई अपना अपराध दूसरे को लगा देता था, कोई बातों का कु
और ही अर्थ लगाता था। दधिमुख ने जिन वानरों को वन की र

के लिए भेजा था, उन सबको अंगद आदि वानरों ने मारकर भगा दिया। कुछ वानरों को लातों से मारा। बहुतों को उठाकर ऊपर को फेंक दिया। सब भागकर दधिमुख के पास गये और घबराकर बोले—वानरों ने हनुमान् के कहने से मधुवन को उजाड़ दिया है और हम लोगों को लातों से मारकर उठाकर फेंक दिया है। ८—१८। यह सुनकर और मधुवन को उजड़ा हुआ देखकर दधिमुख ने कहा कि चलो, बलपूर्वक उनको रोकेंगे। १९—२०। दधिमुख एक बहुत बड़ा वृक्ष लेकर बड़े वेग से झपटे। दूसरे वानर भी शिला और वृक्ष लेकर बड़े क्रोध से उनके साथ दौड़े। अंगद ने क्रुद्ध होकर दधिमुख के दोनों हाथ पकड़ लिए और पृथिवी पर पटक दिया। अंगद उस समय उन्मत्त थे, उन्होंने यह न सोचा कि दधिमुख मेरे पिता के मामा हैं, इनको न मारना चाहिए। महावीर दधिमुख रुधिर से लथपथ होकर थोड़ी देर पृथिवी पर पड़े रहे। फिर अपने सेवकों से बोले—चलो, सुग्रीव और रामचन्द्र के पास चलें और राजा सुग्रीव से अंगद का यह हाल कहें। वे क्रुद्ध होकर इनको दंड देंगे। २१—३१। यह उपवन महात्मा सुग्रीव को बहुत प्रिय है, देवता भी यहाँ नहीं आने पाते। राजा सुग्रीव इन वानरों को सपरिवार मार डालेंगे। ३२—३३। इन दुष्टों ने राजा की आज्ञा का उल्लंघन किया है, इसलिए अवश्य मारने योग्य हैं। जब इनको प्राण-दंड मिलेगा, तभी हम लोगों का क्रोध शान्त होगा। ३४। महाबली दधिमुख वन के रक्षकों के साथ बड़े वेग से आकाश-मार्ग से चलकर सुग्रीव के पास पहुँचे और हाथ जोड़कर बड़ी दीनता से उनको प्रणाम किया। ३२—३९।

सर्ग ६३

दधिमुख को प्रणाम करते देखकर सुग्रीव ने घबराकर कहा—उठो-उठो, तुम हमारे पैरों पर क्यों गिरते हो। हम तुमको अभयदान

देते हैं। सत्य-सत्य बताओ, किसके डर से यहाँ आये हो। तुम कहना चाहते हो, सो कहो। मधुवन के ऊपर किसी ने आक्रमण नहीं किया, सब कुशल है न? महात्मा सुग्रीव के समझाने पर बुद्धिम दधिमुख बोले—राजन्, जिस मधुवन की ऋच्छराज और बा ने रक्षा की, आप भी जिसकी रक्षा करते हैं, उस वन को हनुमान् आ वानरों ने उजाड़ दिया। १—५। मैंने उनको बहुत रोका, किन्तु कुछ परवा न करके मधुवन का मधु पी रहे हैं। रक्षकों ने जब उन रोका तब उन्होंने रक्षकों को पीटा और बाहर निकाल दिया। इ किसी के हाथ टूट गये और किसी की जाँघें टूटीं। किसी को उठा ऊपर को फेंक दिया। आपके रहते हुए ये सब वानर इस तरह मारे और अंगद आदि इच्छानुसार मधुवन का मधु पी रहे हैं। ६—१ दधिमुख की ये बातें सुनकर लक्ष्मण ने सुग्रीव से पूछा—राज क्या यह वानर किसी वन का रक्षक है। यह आपसे क्या कह है? सुग्रीव ने उत्तर दिया—हे आर्य, ये वीर दधिमुख कहते हैं अंगद आदि वानर मधुवन का मधु पी रहे हैं। इससे जान पड़ता कि ये लोग सीता को देख आये। वन के रक्षकों ने जब उनको रो तब उन लोगों ने इनको लातों से मारा। वीर दधिमुख का भी उन लो ने तिरस्कार किया। ये बलवान् दधिमुख मधुवन के अध्यक्ष मैंने इनको वहाँ नियुक्त किया है। हनुमान् सीता को देख आये हों उनके सिवा और कोई यह काम नहीं कर सकता। उनमें बुद्धि, ब कार्य-कुशलता, उद्योग और चतुरता सब कुछ है। अंगद आदि वी ने सीता को ढूँढ़ लिया है, इसी से हर्ष के मारे मधुवन के फल खा हैं। बलवान् दधिमुख यही कहते हैं। हे महाबाहु, यह निश्चि है कि वे लोग सीता को देख आये। सीता को देखे विना मधुवन उजाड़ने का साहस न करते। यह सुनकर धर्मात्मा रामचन्द्र औ लक्ष्मण बड़े प्रसन्न हुए। १३—२८। फिर सुग्रीव ने दधिमुख से कहा—

उन लोगों ने सीता का पता लगाया है, इसलिए मधुवन को नष्ट करने पर भी हमें क्रोध नहीं आया, बल्कि यह सुनकर बड़ा हर्ष हुआ। उनके ये सब काम क्षमा करने योग्य हैं। अब आप शीघ्र जाकर उनको मेरे पास भेज दीजिए। हम लोग उनसे सब हाल पूछेंगे, सीता को लाने का क्या उपाय करना चाहिए, यह भी उनसे सुनेंगे। सुग्रीव की यह बात सुनकर हर्ष से रामचन्द्र और लक्ष्मण की आँखें प्रफुल्लित हो गईं। वानरराज सुग्रीव को भी कार्य की सफलता जानकर हर्ष के मारे रोमांच हो आया। २९—३२।

सर्ग ६४

सुग्रीव के यह कहने पर दधिमुख प्रसन्न होकर रामचन्द्र, लक्ष्मण और सुग्रीव को प्रणाम करके अपने साथियों के साथ आकाशमार्ग से चले। मधुवन में जाकर देखा कि वे लोग अब उन्मत्त नहीं हैं। वीर दधिमुख हाथ जोड़कर अंगद से मधुर वचन बोले—हे सौम्य, वन के रक्षकों ने विना समझे आपको मधु खाने से रोका है, उसके लिए आप क्रोध न कीजिए। आप बहुत दूर से आये हैं, इसलिए विश्राम कीजिए। आप हम लोगों के युवराज और इस वन के स्वामी हैं; अपनी इच्छानुसार मधु पीजिए। १—७। हे महाबल, हम लोगों की मूर्खता से जो आपको क्रोध आया है, उसे क्षमा कीजिए। आपके पिता वालि जिस प्रकार वानरों के राजा थे, वैसे ही सुग्रीव और आप वानरों के स्वामी हैं। मैं सुग्रीव के पास गया था, आप लोगों के आने का समाचार कह आया हूँ। उन्होंने मधुवन के नष्ट होने की बात सुनकर क्रोध न करके बड़े हर्ष से कहा कि उन लोगों को शीघ्र यहाँ भेज दो। दधिमुख के यह मधुर वचन सुनकर बोलने में चतुर अंगद ने हनुमान् आदि अपने साथियों से कहा कि रामचन्द्र को हम लोगों के आने की खबर हो गई है, इसलिए अब यहाँ ठहरना उचित नहीं है। तुम लोगों ने

यथेष्ट फल भी खा लिया है, अब सुग्रीव के पास चलना चाहिए। ८-१
आप लोग जो निश्चित करें वही किया जाय; क्योंकि मैं कार्य
विषय में आप लोगों के अधीन हूँ। यद्यपि मैं युवराज हूँ, किन्तु आ
लोगों को आज्ञा नहीं दे सकता; क्योंकि आप लोग कार्य सि
करके आये हैं। १६—१७। यह सुनकर हनुमान् आदि वानरों ने उ
दिया——राजन्, प्रभु होकर ऐसी बात आपके सिवा और कोई न
कह सकता। स्वामी अपने ऐश्वर्य के मद से आत्माभिमानी हो जा
हैं। आप ऐसे विनीत हैं, इसलिए आपका ऐश्वर्य बढ़ेगा, इसमें सन्दे
नहीं। हम लोग महात्मा सुग्रीव के पास चलने के लिए उत्सुक
किन्तु आपकी आज्ञा के विना कोई काम नहीं कर सकते। १८—२
अंगद ने कहा—अच्छा, अब हम लोग चलें। यह कहकर वे आका
मार्ग से चले और हनुमान् आदि भी यन्त्र से फेंके हुए पत्थरों
समान कूदकर उनके पीछे चले। अंगद और हनुमान् को आगे क
वायु के वेग से उड़ते हुए बादलों की तरह वे सब वानर गरजने लगे
उनको आते हुए देखकर सुग्रीव ने रामचन्द्र से कहा——आपका कल्या
हो। आप प्रसन्न हों। सीता का पता लग गया है, इसमें सन्देह न
क्योंकि इन लोगों को जो समय दिया गया था, वह बीत गया
इसलिए सीता को देखे विना ये लोग नहीं आ सकते थे। अंगद
सहर्ष गरजने से और भी विश्वास होता है। कार्य न होने पर युवरा
अंगद मेरे पास नहीं आ सकते थे। यदि ये वानर कार्य न होने
मधुवन को उजाड़ देते तो अंगद का मुँह उदास और चित्त अप्रस
होता। २३—३०। सीता को देखे विना सुरक्षित मधुवन को ये ल
नहीं उजाड़ सकते थे। आप धैर्य रखिए; हनुमान् सीता को देख आ
हैं। हनुमान् के सिवा और कोई वानर इस काम को नहीं कर सकता
हनुमान् ने ही सीता को देखा होगा, यह मुझे विश्वास है; क्यों
बुद्धि, बल, वीरता और चतुरता, सब गुण हनुमान् में हैं। युवराज अं

और जाम्बवान् जिसके नायक हों और हनुमान् भी उनके साथ हों वह वानरों का दल कार्य किये बिना नहीं लौटेगा। हे अमितविक्रम, अब आप चिन्ता न कीजिए। देखिए, ये लोग बड़े हर्ष और गर्व से चले आ रहे हैं। ३१—३६। वन उजाड़ने और मधु पीने से ही मुझे विश्वास हो गया था कि काम सिद्ध हो गया। उसी समय वानरों के किलकिलाने का शब्द सुन पड़ा। हनुमान् बड़े गर्व से गरजते थे। ३७—३८। वानरों के गरजने का शब्द सुनकर सुग्रीव ने प्रसन्न होकर अपनी पूँछ उठाई। अंगद और हनुमान् सबसे आगे थे, बड़े गर्व और हर्ष के साथ वे लोग रामचन्द्र और सुग्रीव के समीप आकाश से उतरे। ३९—४१। महाबाहु हनुमान् ने सिर झुकाकर रामचन्द्र को प्रणाम किया और हाथ जोड़कर कहा—महाराज, मैं सीता को देख आया हूँ; वे कुशल से हैं। अमृत के समान यह वचन सुनकर रामचन्द्र और लक्ष्मण को बड़ा हर्ष हुआ। दोनों भाई सम्मान की दृष्टि से सुग्रीव को देखने लगे। ४२—४५।

सर्ग ६५

प्रस्रवण पर्वत पर बैठे हुए महाबली रामचन्द्र, लक्ष्मण और सुग्रीव को प्रणाम करके हनुमान् सीता का हाल कहने लगे—सीता जिस प्रकार रावण के अन्तःपुर में बैठी थीं, राक्षसियाँ जिस तरह उनको डाटती थीं, रावण ने दो महीने के बाद उनको मार डालने का जो संकेत किया था और रामचन्द्र में उनका जैसा प्रेम था, वह सब हनुमान् ने रामचन्द्र से कहा। सीता की कुशल सुनकर रामचन्द्र ने पूछा—सीता कहाँ हैं और वे मेरे प्रति कैसा भाव रखती हैं, यह सब मुझसे कहो। १—५। हनुमान् मन में सीता को प्रणाम करके, उनकी दी हुई दिव्य मणि रामचन्द्र को देकर, जिस प्रकार सीता को देखा था हाथ जोड़कर वह कहने लगे। मैं सीता को ढूँढ़ने के लिए दक्षिण

दिशा को गया, सौ योजन समुद्र लाँघकर दुरात्मा रावण की न
में पहुँचा । वहाँ रावण के अन्तःपुर में सीता को देखा । ६–१
पतिव्रता सीता आपमें ही मन लगाये हुए किसी तरह जीवित
भयंकरी राक्षसियाँ उनको घेरे रहती हैं और बार-बार डाटती हैं। हे
आपके साथ सुख करने योग्य सीता भयंकरी राक्षसियों के बीच रा
के अन्तःपुर के बग़ीचे में दुःख भोगती हैं। वे एक वेणी धारण कि
हैं, निरन्तर आपकी ही चिन्ता करती हैं, वे पृथिवी पर सोती हैं
जैसे जाड़े में कमलिनी मुरझा जाती है, वैसे ही उदास रहती हैं। राव
के प्रति उनकी रत्ती भर भी श्रद्धा नहीं है। वे आपमें ही चित्त लगा
रहती हैं। हे निष्पाप, मैंने किसी प्रकार सीता को ढूँढ़कर उनका दर्श
किया। उनको विश्वास दिलाने के लिए इक्ष्वाकुवंश का वर्णन क
लगा। तब उन्होंने मुझसे बातें कीं। आपकी सुग्रीव से मित्र
सुनकर उनको बड़ा हर्ष हुआ। आपमें ही उनकी भक्ति है और उन
पातिव्रत धर्म अटल है। १२–१८। हे महाभाग, मैंने तपस्विनी सी
को इस प्रकार देखा। उन्होंने चिह्नस्वरूप यह मणि देकर मुझसे क
कि हे पवनकुमार, चित्रकूट में एक कौआ मेरी छाती में चोंच मार
भागा था, वह जब बहुत व्याकुल होकर रामचन्द्र की शरण में आ
तब उन्होंने जीवित छोड़ दिया। उसका स्मरण दिलाना। उन्होंने मेरे म
में मैनासिल का तिलक किया था, उसकी भी याद दिलाना। ये बातें सुग्री
के सामने कहना। १९–२३। उनकी इस अँगूठी को देखकर उन
देखने के समान मुझे प्रसन्नता होगी। मैं राक्षसों के वश में हूँ, ए
महीना और जीवित रहूँगी, यदि रामचन्द्र इस महीने में न आये, तो मे
जीवन असम्भव है। २४–२५। हे रघुनन्दन, सीता ने रोकर इस त
मुझसे कहा है। मैं उनको देख आया हूँ, उनका सन्देश मैंने आ
निवेदन किया। अब आप समुद्र उतरने का प्रयत्न कीजिए। २६–२

सर्ग ६६

रामचन्द्र सीता की दी हुई मणि को हृदय से लगाकर रोने लगे। फिर बार-बार उसे देखकर कपिराज सुग्रीव से बोले—जैसे बछड़े को देखकर गाय को स्नेह होता है, वैसे ही इस मणि को देखकर मेरे हृदय में सीता का स्नेह बढ़ गया। यह मणि राजा जनक ने विवाह के समय सीता को दी थी। वे इसे सिर में धारण करती हैं। समुद्र से उत्पन्न, देवताओं से पूजित, इस मणि को इन्द्र ने यज्ञ में प्रसन्न होकर राजा जनक को दी थी। १—५। इसे देखकर महाराज दशरथ और जनक का मुझे स्मरण हुआ। मैं इस समय मानों सीता को ही देख रहा हूँ। हे सौम्य, सीता ने क्या कहा है, तुम वह फिर मुझसे कहो। जैसे मूर्च्छित मनुष्य के ऊपर पानी छिड़ककर होश दिलाया जाता है, वैसे ही सीता ने सन्देश भेजकर मुझ पर वचन-रूपी जल छिड़का है। हे लक्ष्मण, मैं सीता के विना इस मणि को देख रहा हूँ, इससे बढ़कर और क्या दुःख होगा। हे वीर, सीता यदि एक महीना और जीवित रहें तो समझना चाहिए कि वे बहुत दिन जियेंगी। मैं सीता के विना एक क्षण भी नहीं जी सकता। हनुमान् ने सीता को जहाँ देखा है, मुझे शीघ्र वहीं ले चलो। अब मैं एक क्षण भी यहाँ नहीं रहना चाहता। ६—११। डरपोक सीता भयानक राक्षसों के बीच में कैसे रहती होंगी। शरद्-ऋतु के निर्मल चन्द्रमा के समान सुन्दर उनका मुँह अब शोभित न होता होगा। हे हनुमान्, सीता ने क्या कहा है, वह बार-बार मुझसे कहो। जैसे रोगी औषध के बल से जीवित रहता है, वैसे ही मैं सीता का हाल सुनकर अपने प्राण धारण करूँगा। बताओ, उस मधुर-भाषिणी ने क्या कहा है, और दुःख पर दुःख सहती हुई वह कैसे जीवित रहती है। १२—१५।

सर्ग ६७

रामचन्द्र के पूछने पर हनुमान् सीता का सन्देश फिर कहने लगे-हे पुरुषश्रेष्ठ, पहले चित्रकूट पर्वत पर जो घटना हुई थी सीता ने चि स्वरूप आद्योपान्त इस प्रकार उसका वर्णन किया—हे रामचन्द्र, दिन सीता आपके साथ सुख से सोकर आपसे पहले ही उठ बैठी उसी समय एक कौआ उड़ता हुआ उनके पास आया और उन छाती में पंजे मारकर भाग गया। उसके पंजे लगने से सी की छाती में घाव हो गया। उस समय आप उनकी गोद में सिर कर सो गये थे। जब आपके ऊपर उनकी छाती से रुधिर गिरा, औ वह कौआ बार-बार उनको पीड़ित करता रहा, तब सुख से सोते आपको उन्होंने जगाया। १–६। हे शत्रुनाशन, सीता की छा में घाव देखकर आप साँप के समान क्रुद्ध होकर बोले—हे भी तुम्हारी छाती में किसने पंजा मारा है। वह कौन है जो क्रु पँचमुँहे साँप के साथ खेल करता है। यह कहकर जब आपने दूस ओर देखा, तो पंजों में रुधिर लगाये, सीता की ओर मुँह किये, उ कौए को आपने देखा। पवन के समान चलनेवाला वह कौआ इ का पुत्र था। वह बड़े वेग से आकाश से उतरकर पृथिवी पर आ था। ७–१०। हे महाबाहु, उसे देखते ही आपने क्रोध से आँखें घूर उसे मार डालने का विचार किया। आपने उसी दम कुशासन से ए कुश निकालकर ब्राह्म मन्त्र पढ़कर कौए पर चलाया। वह कु प्रलयकाल की अग्नि के समान प्रज्वलित होकर कौए की ओर च और कौआ डरकर भागा। वह भागता हुआ अपनी रक्षा के लि देवताओं के पास गया, किन्तु डर के मारे देवताओं ने उसकी रक्षा न की। वह तीनों लोकों में घूमा, पर उसे कहीं भी शरण न मिली हे शत्रुनाशन, तब वह आपकी शरण में आया और आपके पैरों पर गि पड़ा। यद्यपि वह मार डालने योग्य था, किन्तु आपने कृपा करके उ

प्राण दान दिया। आप उस अमोघ अस्त्र को व्यर्थ नहीं कर सकते थे, इसलिए आपने उसकी दाहिनी आँख फोड़ दी। तब वह आपको और राजा दशरथ को प्रणाम करके आपकी आज्ञा पाकर अपने स्थान को गया। आप इस प्रकार के अस्त्र जाननेवालों में श्रेष्ठ, महापराक्रमी और शीलवान् होकर भी राक्षसों पर अस्त्र क्यों नहीं उठाते। हे रामचन्द्र! देवता, दानव, गन्धर्व, असुर, और मरुद्गण भी युद्ध में आपके सामने नहीं ठहर सकते। आप बलवान् हैं, यदि आप मेरा कुछ भी सम्मान करते हैं, तो शीघ्र युद्ध में तीक्ष्ण बाणों से रावण को मार डालिए। भाई की आज्ञा लेकर शत्रुनाशन, पुरुषश्रेष्ठ लक्ष्मण ही मेरी रक्षा क्यों नहीं करते? वे दोनों भाई वायु और अग्नि के समान तेजस्वी हैं।११-२२। देवता भी उनको नहीं जीत सकते, फिर वे मेरी उपेक्षा क्यों करते हैं? हे शत्रुनाशन, राम-लक्ष्मण समर्थ होकर भी जो मेरी रक्षा नहीं करते, इससे मैं समझती हूँ कि मैंने कोई बड़ा भारी अपराध किया है। सीता के ये करुण वचन सुनकर मैंने फिर उनसे कहा—देवि, मैं सत्य की शपथ करके कहता हूँ कि आपके शोक से रामचन्द्र का मन किसी काम में नहीं लगता। रामचन्द्र के दुःखित रहने से लक्ष्मण को भी बड़ा दुःख रहता है। मैंने किसी तरह आपको देख लिया है, इसलिए अब शोक करने का समय नहीं है। २३-२६। हे भामिनि, आप इसी क्षण से दुःखों का अन्त देखेंगी। पुरुषश्रेष्ठ शत्रुनाशन दोनों राजकुमार आपको देखने के लिए बड़े उत्साह से लंका को भस्म कर देंगे। वे युद्ध में भयानक रावण को सपरिवार मारकर आपको अयोध्या को ले जायँगे। हे अनिन्दिते, आप भी अपना कोई ऐसा चिह्न दीजिए, जिसे रामचन्द्र पहचानते हों और जिसको देखने से उन्हें हर्ष हो। तब उन्होंने चारों ओर देखकर, अपनी वेणी में गूँथने की यह उत्तम मणि वस्त्र से खोलकर मुझे दे दी। हे रघुनन्दन, मैंने आपके लिए दोनों हाथों से इसे ले ली और उनको प्रणाम करके चलने की तैयारी की। मुझे

चलने के लिए तैयार और समुद्र लाँघने के लिए बढ़ते हुए देख शोक से व्याकुल सीता ने आँसू बहाकर गद्गद स्वर से मुझसे कहा—हे वीर, तुम बड़े भाग्यवान् हो, इसी से तुम कमललोचन महाबाहु रामचन्द्र और मेरे देवर यशस्वी लक्ष्मण का दर्शन करोगे हो।२७—३५। सीता की यह बात सुनकर मैंने कहा—देवि, आप मेरी पीठ पर बैठ जाइए, मैं आपको आज ही राम-लक्ष्मण और सुग्रीव को दिखाऊँगा। सीता ने उत्तर दिया—हे कपिवर, मेरा यह धर्म नहीं है कि मैं अपनी इच्छा से तुम्हारी पीठ पर बैठूँ। राक्षस रावण ने जो मुझे स्पर्श किया है, उस समय मैं विवश थी। वह बलपूर्वक मुझे लाया, मैं उसका क्या कर सकती थी। ३६—३९। हे वीर, अब तुम राजकुमार राम-लक्ष्मण के पास जाओ। यह कहकर उन्होंने सन्देश और कहा—हे हनुमान्, सिंह के समान पराक्रमी राम-लक्ष्मण और उनके मन्त्री सुग्रीव से मेरी कुशल कहना। तुम मेरी ओर से इस प्रकार कहना, जिसमें महाबाहु रामचन्द्र इस दुःख-सागर से मेरा उद्धार करें। ४०—४२। हे कपिवीर, तुम रामचन्द्र के पास जाकर मेरे शोक का वेग और राक्षसियों की यह डाट-फटकार कहना। मार्ग में तुम्हारा कल्याण हो। ४३। राजन्, सीता ने बड़े शोक से यह सन्देश कहा है। वे कुशल से हैं; आप इस बात का विश्वास कीजिए। ४४।

सर्ग ६८

हे पुरुषश्रेष्ठ, उसके बाद आपके स्नेह-वश सीता देवी ने दुःख से घबराकर आदर के साथ फिर मुझसे कहा—तुम इसी तरह अनेक प्रकार से रामचन्द्र को समझाना, जिसमें वे शीघ्र युद्ध में रावण को मारकर मुझे प्राप्त हों। हे वीर, यदि तुम उचित समझो तो किसी स्थान में छिपकर आज विश्राम करो, कल चले जाना। तुम जितनी देर यहाँ रहोगे उतनी ही देर मुझ अभागिन का शोक शान्त रहेगा। तुम्हारे चले जाने

मैं तुम्हारे फिर आने की प्रतीक्षा करूँगी, किन्तु तब तक मेरे प्राण रहेंगे, या नहीं, इसमें सन्देह है।१–५। मैं बड़ी दुर्दशा में हूँ और दुःख भोग रही हूँ। अब फिर तुमको देखूँगी या नहीं, यह डर मुझे लगा हुआ है। इसलिए तुम्हारे चले जाने के बाद और भी अधिक दुःख होगा। हे वीर, तुम्हारे सहायक वानरों और रीछों के विषय में मुझे यह सन्देह है कि वे लोग इस अपार समुद्र के पार कैसे आवेंगे। वे दोनों राजकुमार भी कैसे समुद्र को पार करेंगे। ६–८। हे निष्पाप, समुद्र के लाँघने में गरुड़, पवन और तुम तीन ही व्यक्ति समर्थ हैं। अतएव हे वीर, इस कठिन काम के करने का क्या उपाय स्थिर करते हो? ६–१०। हे शत्रुनाशन, यद्यपि तुम अकेले ही इस काम को कर सकते हो, किन्तु उससे तुम्हारी ही कीर्ति होगी। रामचन्द्र यदि सेना सहित रावण को मारकर, विजयी होकर, मुझे साथ लेकर अयोध्या को लौटें, तब उनकी कीर्ति हो। ११–१२। रावण उनकी भार्या (मुझ) को छल से हर लाया है, अतएव उसका वध करना ही रघुनन्दन रामचन्द्र को उचित नहीं है। शत्रु-सेना का नाश करनेवाले रामचन्द्र सेना लेकर लंका में आवें और शत्रु को मारकर मुझे अयोध्या को ले जायँ तभी उनके अनुरूप काम होगा। अतएव जो काम उन वीर महात्मा के सदृश हो, और जिससे तुम्हारा भी पराक्रम प्रकट हो, तुम वैसा ही करो। १३–१५।

उनके युक्तिसंगत, सार्थक और विनीत वचन सुनकर मैंने उत्तर दिया—हे देवि, रीछों और वानरों के राजा बलवान् सुग्रीव ने आपका उद्धार करने की प्रतिज्ञा की है। उनकी आज्ञा में बड़े साहसी, महा-पराक्रमी, मन के समान वेगवान् असंख्य वानर हैं। उन वानरों की गति कहीं भी नहीं रुकती। वे आकाश, पाताल और समुद्र आदि सब स्थानों में जा सकते हैं। किसी काम में नहीं थकते; उनके बल की थाह नहीं है। वे वायु के समान वेग से अनेक बार पृथिवी की प्रदक्षिणा कर चुके हैं। १६–२०। सुग्रीव के साथ जितने वानर हैं, वे मेरे समान

और मुझसे बढ़कर हैं। कोई भी वानर ऐसा नहीं है जो किसी बा मुझसे कम हो। अतएव जब मैं इस अपार समुद्र को पारकर आ तब उन बलवानों के लिए कहना ही क्या है। इसके सिवा यह तो देखिए, प्रधान व्यक्ति कभी कहीं नहीं भेजा जाता, साधारण व्य ही सब कामों में भेजे जाते हैं। २१—२२। हे देवि, अब शोक क का समय नहीं है, इसलिए शोक त्याग दीजिए। वे सब वानर ही छलाँग में समुद्र लाँघ आवेंगे। हे महाभागे, पुरुषश्रेष्ठ राम और लक्ष्मण मेरी पीठ पर बैठकर उदय हुए सूर्य और चन्द्रमा के सम आपके पास आवेंगे। २३—२४। आप शीघ्र देखेंगी कि सिंह के सम पराक्रमी शत्रुनाशन रामचन्द्र और लक्ष्मण धनुष लिये हुए लंका द्वार पर खड़े हैं। आप शीघ्र ही सुनेंगी, बादलों और पर्वतों के सम बड़े-बड़े वीर वानर लंका में मलय पर्वत के ऊपर गरज रहे हैं। आ शीघ्र ही सुनेंगी, नख और दाँत ही जिनके अस्त्र हैं, वे सिंह और के समान बलवान् वानर शीघ्र लंका में आवेंगे। आप शीघ्र ही देखें कि शत्रुनाशन रामचन्द्र वनवास से लौटकर अयोध्या में आपके राजसिंहासन पर शोभित होंगे। आपके शोक से पीड़ित सीता मुँह से यह अभीष्ट बातें सुनकर बहुत प्रसन्न हुई। किसी तरह उन शोक शान्त हुआ। २५—२६।

वाल्मीकीय रामायण

युद्धकाण्ड

सर्ग १

हनुमान् के मुँह से सीता का हाल सुनकर रामचन्द्र ने प्रसन्न होकर कहा—हनुमान् जो काम कर आये हैं, वह और किसी से नहीं हो सकता। १—२। गरुड़, वायु और हनुमान् के सिवा और कोई समुद्र को नहीं लाँघ सकता। रावण की राजधानी लंका में देवता, दानव, गन्धर्व, नाग और यक्ष भी नहीं जा सकते। यदि कोई साहस करके चला भी जाय तो उसका जीवित लौटना बहुत कठिन है। सुग्रीव के दूत को जैसा काम करना चाहिए, वैसा ही इन्होंने किया, और अपनी असाधारण वीरता का परिचय दिया। ३—६। स्वामी जिस काम की आज्ञा देता है, उसके साथ ही और भी उसका प्रिय काम जो कर आता है, वह दूत श्रेष्ठ है; और जो जिस काम के लिए भेजा जाय उसके सिवा और कोई प्रिय काम न करे, वह मध्यम है; और समर्थ होने पर भी जो बताये हुए काम की उपेक्षा करे, वह नीच है। ७—९। जो हो, हनुमान् ने केवल स्वामी की आज्ञा का ही पालन नहीं किया, बल्कि राक्षसों का अनादर करके सुग्रीव को प्रसन्न कर दिया है, और शत्रु के सामने अपने को बलवान् साबित कर दिया है। सीता का समाचार लाकर मेरी, लक्ष्मण की और सब रघुवंशियों की रक्षा की है। जैसा मुझे प्रसन्न किया है, उसके अनुरूप मैं इनको इस समय प्रसन्न नहीं कर सकता, यह मुझे खेद है। हृदय से लगाना सब कुछ

देने के समान है, अतएव मैं इन महात्मा को इस समय व
दूँगा । १०—१३ । रामचन्द्र ने यह कहकर बड़े हर्ष से हनुमान् क
छाती से लगा लिया । उसके बाद थोड़ी देर सोचकर वानरराज सुग्री
से बोले—मित्र, आपने सीता का पता तो लगा लिया, किन्तु स
लाँघने की बात सुनकर मैं निराश हो गया हूँ । क्योंकि अगाध स
के पार उतरना बहुत कठिन है । वानरों की सेना लंका को कैसे
सकेगी । १४—१७ । हनुमान् ने सीता का हाल तो सुनाया, कि
वानर समुद्र के पार कैसे जायँगे, इसका क्या उपाय बताते हैं ? रामच
को फिर शोक हुआ, वे इस बात की चिन्ता करने लगे । १८—१

सर्ग २

रामचन्द्र को चिन्तित देखकर सुग्रीव उनका शोक दूर करनेवा
बातें कहने लगे—हे वीर, आप साधारण मनुष्यों की तरह शोक
अधीर क्यों होते हैं । जैसे कृतघ्न मनुष्य उपकार को भुला देता
वैसे ही आप शोक को त्याग दीजिए । जब सीता का पता लग ग
है, शत्रु का नगर भी देख लिया गया है, तब शोक करने का
प्रयोजन । हे रामचन्द्र, आपने शास्त्र का अध्ययन किया है, पं
और बुद्धिमान् हैं, अतएव उत्साह नष्ट करनेवाली साधारण बुद्धि
त्याग दीजिए । १—४ । आप विश्वास रखिए, मैं समुद्र के पार जा
लंका में घुसकर आपके शत्रु का विनाश करूँगा । जो शोक से पीड़ि
रहता है, उत्साह और उद्योग छोड़ देता है, उसके सब काम नष्ट
जाते हैं और उसे बड़ी विपत्ति उठानी पड़ती है । ५—६ । जिन वान
को आप देख रहे हैं, ये बड़े वीर और पराक्रमी हैं, आपके काम
लिए बड़े उत्साह से आग में भी कूद सकते हैं । ७ । इनको प्रस
देखकर मुझे विश्वास है कि ये अपने पराक्रम से रावण को मार
सीता को लावेंगे । अब वह उपाय सोचना चाहिए, जिससे पा

रावण मारा जाय। जिस उपाय से समुद्र में सेतु बाँधा जाय और हम लोग लंका को देखें। सेतु बाँधे विना देवता और दानव भी लंका में पैर नहीं रख सकते। ८—१२। सेतु बँधते ही वानरों की सेना लंका में पहुँचेगी और आपकी विजय होगी। इन स्वेच्छाचारी वीर वानरों को युद्ध में कोई नहीं जीत सकता। इनका उत्साह देखकर मुझे विश्वास है कि आपकी विजय होगी। आप शोक न कीजिए, शोक करने से बल और वीर्य नष्ट हो जाता है। १३—१४। वीर पुरुषों की वीरता ही उनका आभूषण है। इसलिए युद्ध में वीरता दिखाइए। महात्मा पुरुष खोई हुई वस्तु का शोक नहीं करते, क्योंकि शोक सब कामों के विनाश का कारण है। आप सब शास्त्र जानते हैं, बुद्धिमान् और पंडित हैं, मैं आपका मन्त्री हूँ, आप अवश्य विजयी होंगे। १५—१७। जब आप धनुष लेकर युद्ध में खड़े होंगे तो तीनों लोकों में ऐसा कौन है, जो आपका सामना कर सके। आप वानरों को जिस काम की आज्ञा देंगे, उसमें हताश न होना पड़ेगा। शीघ्र ही समुद्र के पार उतरकर सीता को देखेंगे। आप शोक त्याग कर क्रोध कीजिए। क्रोध न करने से क्षत्रियों का प्रभाव नष्ट हो जाता है और वे उत्साहहीन हो जाते हैं। क्रोधी मनुष्य से सब लोग डरते हैं। १८—२०। हम लोगों के साथ समुद्र के पार उतरने का उपाय सोचिए और यह विश्वास रखिए कि जब हमारी सेना समुद्र के पार पहुँच जायगी, तो विजय अवश्य होगी। क्योंकि इच्छानुसार रूप धारण करनेवाले वीर वानर युद्ध में शिलाओं और वृक्षों से शत्रुओं को मार डालेंगे। किसी उपाय से हम लोग समुद्र के पार उतर जायँ फिर तो शत्रुओं को मरा हुआ समझिए। अब अधिक कहना व्यर्थ है, आप सर्वथा विजयी होंगे। शकुन भी ऐसे ही देख पड़ते हैं, इसलिए मेरा मन बहुत प्रसन्न है। २१—२५।

सर्ग ३

सुग्रीव के युक्तिसंगत वचन सुनकर रामचन्द्र ने हनुमान् से कहा—हे वीर, मैं अपनी तपस्या के बल से समुद्र में सेतु बाँधकर अथवा उसको सुखाकर उसके पार जा सकता हूँ। अब यह बताओ कि उस दुर्ग लंका में कितने क़िले हैं? रावण की सेना कितनी है? वहाँ के फाटक चहारदीवारी और राक्षसों के घर कैसे हैं? तुमने लंका को अच्छी तरह देखा है, तुम बड़े बुद्धिमान् हो। जैसा तुमने देखा है, वैसा ही कहो।१—५। रामचन्द्र की यह बात सुनकर हनुमान् बोले—मैं आपकी आज्ञा से लंका का हाल कहता हूँ, सुनिए—लंका जैसी दुर्गम और सुरक्षित है, राक्षस जैसे राजभक्त हैं, रावण की सेना जिस प्रकार विभक्त है, लंका की जैसी समृद्धि है और समुद्र जैसा भयानक है, वह सब कहता हूँ। लंका में हाथी, घोड़े और रथ बहुत हैं। बड़े मज़बूत चार फाटक हैं। उनमें बड़े मज़बूत परिघ भी लगे हैं। फाटकों पर बाण, पत्थर और यन्त्र रक्खे हैं। शत्रु की सेना वहाँ पहुँचते ही भगा दी जाती है। लोहमय बड़ी भयानक सैकड़ों तोपें भी लगी हैं। लंका के चारों ओर सुवर्णमय चहारदीवारी है, उसमें मणि, मूँगा, मोती और वैदूर्य जड़े हैं। उसी के किनारे बड़ी गहरी खाईं है। उसमें अथाह पानी भरा है और मगर, घड़ियाल आदि बड़े-बड़े जलजीव हैं।६—१५। प्रत्येक द्वार पर एक-एक पुल बना है और यन्त्र से उसकी रक्षा की जाती है। शत्रु की सेना जब उस पुल पर जाती है तो यन्त्र द्वारा खाईं में फेंक दी जाती है। उस खाईं में एक और बड़ा मज़बूत सुवर्णमय पुल बना है, उसमें सोने के खम्भे लगे हैं और वेदियाँ भी बनी हैं।१६—१८। हे रामचन्द्र, राक्षसराज रावण युद्ध करने के लिए सदा तैयार रहता है। वह बड़ा धैर्यवान् और सावधान है। वह स्वयं अपनी सेना की देख-रेख करता है। लंका बड़े ऊँचे पर्वत पर बसी है; उस पर चढ़ने का कोई साधन भी नहीं है, इसलिए वहाँ पहुचना बहुत कठिन

है। देवता भी कठिनता से वहाँ जा सकते हैं। उसके चारों ओर पर्वत, वन, नदियाँ और क़िले हैं, इसलिए वह सब प्रकार से सुरक्षित है। १९—२०। लंका यहाँ से बहुत दूर समुद्र के उस पार है। समुद्र में नाव नहीं चल सकती, लंका में जाने का किसी ओर से रास्ता नहीं है। वह पर्वत के शिखर पर बसी है, इसलिए अमरावती के समान दुर्गम है। वहाँ हाथी, घोड़े, रथ और सेना बहुत है, कोई शत्रु विजय नहीं पा सकता। अनेक प्रकार के यन्त्रों, असंख्य तोपों और बड़ी गहरी खाई से सुरक्षित है। पूर्व फाटक पर दस हज़ार राक्षस बाण और खड्ग आदि अस्त्र-शस्त्र लिये युद्ध के लिए दिन-रात तैयार खड़े रहते हैं। दक्षिण के फाटक पर एक लाख राक्षसों की चतुरंगिणी सेना रहती है। पश्चिम के फाटक पर युद्ध में कुशल सब अस्त्र-शस्त्र लिये हुए दस लाख राक्षस रहते हैं। २१—२६। उत्तर के फाटक पर एक करोड़ घोड़सवार और उतने ही रथी नियुक्त हैं। वे सब रावण के वंशज और प्रतिष्ठित हैं। वहाँ असंख्य घोड़सवार और रथी राक्षस रहते हैं। २७—२८। हे रामचन्द्र, मैंने लंका के पुल तोड़ दिये, खाईं पाट दी, चहारदीवारी गिरा दी और समूची लंका को जला दी है। अब हम लोग किसी प्रकार से समुद्र पार करके लंका में पहुँच जायँ तो मुझे विश्वास है कि वानरों की सेना निस्सन्देह विजय करेगी। २९—३०। सेना के पहुँचने पर तो कहना ही क्या है, केवल अंगद, द्विविद, मैन्द, जाम्बवान्, पनस, नल और सेनापति नील के चलने से ही काम हो जायगा। इसलिए सेना ले चलने का कोई प्रयोजन नहीं है। अंगद आदि वानर वन और पर्वत से शोभित लंका का विध्वंस कर देंगे। उसकी चहारदीवारी, फाटक, खाईं और घर नष्ट कर देंगे, सपरिवार रावण का विनाश करके सीता को ले आवेंगे। यदि आप वानरों की सेना ले चलना चाहते हों तो शीघ्र सैनिकों को आज्ञा दीजिए और शुभ मुहूर्त में प्रस्थान कीजिए। ३१—३३।

सर्ग ४

हनुमान् की बातें सुनकर महातेजस्वी रामचन्द्र ने कहा—भयान राक्षस की जिस नगरी का तुम बखान करते हो, मैं सत्य कहता शीघ्र ही उसका विध्वंस कर दूँगा। हे सुग्रीव, यह दोपहर का स है। इस मुहूर्त में यात्रा करने से विजय होती है, इसलिए इ मुहूर्त में प्रस्थान करना चाहिए। दुष्ट रावण सीता को हर ले ग है, वह भागकर कहीं भी जाय, किन्तु उसे अवश्य मार डालूँगा जिस प्रकार मरणासन्न रोगी औषध पीकर जीवन की आशा क है; वैसे ही सीता मेरी यात्रा का हाल सुनकर जीने की आ करेंगी। १—४। आज उत्तराफाल्गुनी है, कल हस्त नक्षत्र होगा इसलिए इसी मुहूर्त में सेना लेकर प्रस्थान करना चाहिए। इस स मेरी दाहिनी आँख की पलक फड़क रही है, इसलिए विश्वास है विजय अवश्य होगी। रावण को मारकर सीता को ले आऊँगा।५- यह सुनकर वानरराज सुग्रीव और लक्ष्मण उनकी प्रशंसा करने ल धर्मात्मा रामचन्द्र ने फिर कहा—महावीर नील बलवान् वानरों लेकर मार्ग देखते हुए आगे चलें। फिर उन्होंने नील से कहा— वीर, जिस मार्ग में फल-मूल, मधु और ठंढा पानी मिल सके, स वन हों, उसी मार्ग से सेना ले चलो। ८—१०। दुष्ट राक्षस मार्ग फल-मूल नष्ट कर देंगे, पानी आदि खराब कर डालेंगे, इसलि सावधानी से मार्ग की रक्षा करना बहुत आवश्यक है। घने वनों और खाई-खन्दकों में वानर देखते हुए चलें कि शत्रु की सेना कहीं छि तो नहीं बैठी है। कुछ थोड़ी सेना यहाँ रहने दो और सब ले चल क्योंकि यह काम बड़ा कठिन है और बड़े पराक्रम से सफल हो सकेगा हजारों बलवान् यूथप सेना लेकर समुद्र के वेग के समान चले पर्वताकार गज, महाबली गवय और गवाक्ष उसी प्रकार सैनि के आगे चलें जैसे बैलों के आगे साँड़ चलता है। ११—१५। आ

सेना की दाहिनी ओर और वेगवान् गन्धमादन सेना की बाईं ओर रक्षा करते हुए चलें। मैं हनुमान् के कन्धे पर बैठकर सैनिकों को उत्साहित करता हुआ सेना के बीच में उसी प्रकार चलूँगा, जैसे इन्द्र ऐरावत हाथी पर सवार होकर चलते हैं। यम के समान क्रोधी लक्ष्मण अंगद के कन्धे पर चढ़कर चलें, जैसे सार्वभौम हाथी पर सवार होकर कुबेर चलते हैं। महाबाहु जाम्बवान्, सुषेण और वेगदर्शी सेना के पीछे उसकी रक्षा करते हुए चलें। १६—२०। रामचन्द्र की यह आज्ञा सुन कर वानरराज सुग्रीव ने वानरों को चलने की आज्ञा दी। तब महा-पराक्रमी वानर पर्वतों के शिखरों से कूदने और कन्दराओं से निकलने लगे। इस प्रकार धर्मात्मा रामचन्द्र सेना लेकर दक्षिण दिशा को चले। उनके आगे और पीछे वानरों की बहुत बड़ी सेना चली। सुग्रीव से सुरक्षित सब वानर बड़े हर्ष से कूदते-फाँदते और गरजते हुए, सुगन्धित फल और मधु खाते-पीते हुए दक्षिण दिशा को चले। कोई वानर बड़े गर्व से फूले हुए वृक्षों को उखाड़ लेते थे और आपस में एक-दूसरे पर फूल आदि फेंकते थे। कोई किसी पर कूद पड़ता था, कोई किसी को गिरा देता था। वे गरजकर रामचन्द्र के सामने कहते थे, सब राक्षसों सहित रावण को मारना है। २१—२६। महावीर ऋषभ, नील और कुमुद बड़ी सेना के साथ मार्ग साफ़ करते हुए आगे चले। कपिराज सुग्रीव रामचन्द्र और लक्ष्मण के साथ सेना के बीच में थे। सेना में शत्रुओं का विनाश करनेवाले असंख्य पराक्रमी वानर थे। महापराक्रमी शतबलि दस करोड़ वानरों के साथ सेना की रक्षा करता था। ३०—३२। केसरी, पनस, गज और बलवान् अर्क सौ करोड़ वानरों के साथ सेना की बाईं ओर रक्षा करते हुए चले। सुषेण और जाम्बवान् बहुत-से रीछों की सेना के पीछे रक्षा करते हुए चले। सेनापति नील वानरों के उपद्रवों को रोकता हुआ सेना की सब ओर देखभाल करता था। ३३—३५। दरीमुख, प्रजंघ, जम्भ और रभस सेना को शीघ्र चलने के लिए उत्साहित

करते थे। चलते-चलते सैकड़ों पर्वतों के बीच में अनेक प्रकार
वृक्षों से शोभित सह्य पर्वत मिला। उस पर्वत पर फूले हुए कमलों
शोभित तालाब थे। समुद्र के समान बहुत दूर में फैली हुई, वानरों
सेना, महाक्रोधी रामचन्द्र के उग्र शासन से नगरों और देशों में कि
प्रकार का उपद्रव नहीं करती थी। जान पड़ता था, भयानक स
बड़े वेग से चला जा रहा है। जैसे घोड़ा चाबुक लगने से बड़ी फु
से चलता है, वैसे ही वे वानर बड़े वेग से चले जाते थे। हनुमान
कन्धे पर रामचन्द्र, और अंगद के कन्धे पर लक्ष्मण, शुक्र और बृहस्प
के साथ चन्द्रमा और सूर्य के समान जान पड़ते थे। ३६—४२। च
और शुभ निमित्त देखकर लक्ष्मण ने रामचन्द्र से कहा—आप शी
ही रावण का विनाश करके सीता को लेकर अयोध्या को लौटें
हे रघुनन्दन, इस समय अनेक प्रकार के शुभ शकुन देख पड़
हैं। ४३—४६। मन्द-सुगन्ध-शीतल वायु सेना के अनुकूल चलती
मृग और पक्षी मधुर बोली बोलते हैं। सब दिशाएँ स्वच्छ हैं, सूर्य
प्रकाश निर्मल है, शुक्र आपके पीछे उदय हैं, ध्रुव नक्षत्र पूर्णरूप
प्रकाशित है। सप्तर्षि भी बहुत निर्मल देख पड़ते हैं और ध्रुव
प्रदक्षिणा कर रहे हैं। हम लोगों के पूर्वज राजर्षि त्रिशंकु अपने पुरोहि
विश्वामित्र के साथ प्रकाशमान हैं। इक्ष्वाकुवंशियों का विशा
नक्षत्र निर्मल उदय हुआ है; उसके साथ कोई क्रूर ग्रह नहीं है। राक्ष
का नक्षत्र मूल धूमकेतु ग्रह से पीड़ित है, इसलिए राक्षसों का विना
अवश्य होगा। राक्षसों के विनाश के ही लिए मूल नक्षत्र के सा
धूमकेतु का संयोग हुआ है। ४७—५३। पानी बहुत साफ़ और स्वादि
है, वन फूले-फले हैं, जितनी वायु अच्छी लगती है, उतनी ही चल र
है। इस ऋतु में जिन वृक्षों को फूलना-फलना चाहिए, वे स
फूले-फले हैं। ५४। हे प्रभो, जैसे तारकासुर के युद्ध में देवता
की सेना सुसज्जित हुई थी, वैसे ही इस समय वानरों की से

शोभित होती है। हे आर्य, इसे देखकर आप प्रसन्न हों। ५५–५६।

वानरों की सेना चलने से धूलि उड़कर आकाश में छा गई, सब दिशाओं में अँधेरा हो गया, सूर्य की प्रभा विलुप्त हो गई। जिस प्रकार बादल आकाश को ढक देते हैं, वैसे ही वानरों की सेना ने पर्वत, वन और आकाश में फैलकर दक्षिण दिशा को भर दिया। निरन्तर चलने से सेना ऐसी मालूम हुई, मानों नदी का प्रवाह उलटा बह रहा है। निर्मल जलवाले तालाबों, फूले-फले वृक्षों से शोभित पर्वतों, फले हुए वनों और समतल स्थानों में विश्राम करती हुई चली। वह तिरछे, सीधे, ऊँचे-नीचे मार्गों से चली जाती थी। वानर बड़ी प्रसन्नता से पवन के समान वेग से चलते थे। वे रामचन्द्र के कार्य के लिए अपना पराक्रम दिखाने को उत्सुक थे। युवा अवस्था के गर्व से मार्ग में क्रीड़ा करते हुए जाते थे। कोई वेग से दौड़ते थे, कोई उछलते-कूदते थे, कोई किलकिलाते थे, कोई पूँछ पटकते थे, कोई बड़े गर्व से पृथिवी पर पैर पटकते थे, कोई वृक्ष और पर्वत उखाड़कर पटक देते थे, कोई ऊँचे पर्वतों के शिखर पर चढ़ जाते थे। कोई सिंहनाद करते थे, कोई पैरों से लताओं को रौंद डालते थे, कोई शिला और वृक्ष उखाड़कर खेल करते थे। इस प्रकार असंख्य वानरों की सेना रात-दिन बराबर चली जाती थी ५७–७०

वानर बड़े प्रसन्न थे, सबको युद्ध की अभिलाषा थी और सीता का उद्धार करना ही सबका उद्देश्य था। चलते-चलते अनेक वृक्षों से शोभित सह्य पर्वत के समीप पहुँचे और उस पर चढ़ गये। महात्मा रामचन्द्र सह्य और मलय पर्वत के विचित्र वन, नदी और झरने देखते हुए चले जाते थे। वानरों की सेना उन पर्वतों पर चम्पक, तिलक, आम, सिन्दुवार, तिनिश, करवीर, अशोक, करंज, पाकर, बरगद, जामुन और पुन्नाग आदि वृक्षों को तोड़ती हुई चली जाती थी। वायु के झकोरों से वृक्ष हिलते और पर्वत की रमणीय शिलाओं पर फूल बरसाते थे। शीतल-मन्द-सुगन्ध वायु चलती थी। उस वायु से वानरों को सुख

मिलता था। वनों में भँवरे गूँजते थे। सह्य पर्वत धातुओं से शो
था। वायु के साथ धातुओं की धूलि उड़ती थी और वानरों को
देती थी। उस पर्वत पर केतकी, सिन्दुवार, वासन्ती, माधवी
कुन्द की लताएँ फूली थीं। करंज, महुआ, वंजुल, बकुल, रंजक, तिल
पुन्नाग, आम्र, पाटल, कोविदार, मुचुकुन्द, अर्जुन, शीशम, कु
हिन्ताल, तिनिश, चूर्णक, कदम्ब, नीप, नील, अशोक, सरल, अं
और पद्मक के वृक्ष फूले हुए शोभित थे।७१-८३। वानरों ने उन
के फूल और शाखाएँ तोड़ डालीं। उस पर्वत पर सुन्दर जलाशय भी
उनमें चक्रवाक, कारंडव, प्लव और क्रौंच आदि पक्षी मधुर बोली बो
थे। वन में मृग और वराह आदि घूमते थे। सिंह, बाघ, रीछ
भयानक साँप आदि हिंसक जीव भी बहुत थे। ८४-८६। ताला
में फूले हुए सुगन्धित कमल और कुमुद शोभित थे। पर्वत के शि
पर अनेक प्रकार के पक्षी बोलते थे। वानर उन तालाबों में नहा
और पानी पीकर क्रीड़ा करने लगे। वे पर्वत पर चढ़ जाते थे
एक-दूसरे को तालाब में ढकेल देते थे। अमृत के समान मधुर
और सुगन्धित फूल तोड़कर फेंक देते थे। उन वृक्षों में नाँद के सम
बड़े-बड़े शहद के छत्ते लटके थे। वानर शहद पीकर बड़े प्रसन्न हु
वे उन्मत्त होकर वृक्ष तोड़ डालते थे, लताओं को पकड़कर खींचते
पर्वतों को हिलाते, वृक्षों से कूदते और गरजते थे। जैसे पके हुए धा
से पृथिवी की शोभा होती है, वैसे ही उस समय वानरों से पृथि
शोभित हुई। ८७-९३।

महाबाहु रामचन्द्र सह्य और मलय पर्वत के आगे चलकर मह
पर्वत पर पहुँचे। उस पर्वत के शिखर पर चढ़कर जलजीवों से शो
समुद्र को देखा। फिर वहाँ से उतरकर लक्ष्मण और सुग्रीव के स
समुद्र के किनारे के वन में गये। समुद्रतट की शिलाएँ तर
के लगने से स्वच्छ हो गई थीं। समुद्र के तट पर पहुँचकर राम

ने सुग्रीव से कहा—हे सुग्रीव, हम लोग समुद्र के तट पर पहुँच गये। हम लोगों को जिस बात की चिन्ता हुई थी, वह सामने आ गई। किसी उपाय के विना इसके पार नहीं पहुँच सकते। ९४—१००। अतएव यहाँ ठहरकर पार उतरने का उपाय सोचिए। सीता के विरह से दुःखित रामचन्द्र ने सुग्रीव से कहा कि हे कपिवर, सेना को ठहरने की आज्ञा दो और समुद्र के पार चलने का उपाय सोचो। कोई यूथप अपना यूथ छोड़कर कहीं न जाय। कुछ वीर वानर सेना के चारों ओर घूमते रहें, यहाँ हम लोगों को राक्षसों से डर है। रामचन्द्र की आज्ञा से लक्ष्मण और सुग्रीव ने समुद्र के किनारे सेना ठहरा दी। वानरों की सेना समुद्र के तट पर दूसरे समुद्र के समान शोभित हुई। १०१—१०६। समुद्र के किनारे बैठकर सब लोग पार उतरने का उपाय सोचने लगे। वानरों के किलकिलाने का ऐसा शब्द हुआ कि समुद्र का शब्द उसी में विलीन हो गया। वानरों की सेना तीन भागों में विभक्त होकर वहाँ ठहरी। समुद्र की लहरों को देखकर वानर बड़े प्रसन्न हुए। उनके सामने भयानक समुद्र था, उसका कहीं पार नहीं दिखाई देता था। समुद्र में अनेक प्रकार के जलजीव देख पड़ते थे। सन्ध्या के समय फेन निकालता हुआ वह मानों हँसता था। तरंगें ऐसी मालूम होती थीं, मानों वह नाच रहा था। चन्द्रमा के उदय होने पर बाढ़ आती थी और चन्द्रमा का प्रतिविम्ब उसमें शोभित होता था। तिमि और तिमिंगिल आदि जलजन्तु वायु के समान प्रचंड वेग से दौड़ते थे। बड़ी भयानक फनवाले बड़े-बड़े साँप रहते थे। कहीं-कहीं पर्वत भी थे। १०७—१२४। समुद्र में अगाध जल था, मगर और घड़ियाल रहते थे, तरंगें उठती और गिरती थीं, जल हिलता था, साँप इस प्रकार चमकते थे, मानों अंगार चमक रहे हैं। मणियों के होने से समुद्र आकाश के समान, और आकाश नक्षत्रों के होने से समुद्र के समान जान पड़ता था। आकाश में कोई विशेषता

नहीं देख पड़ती थी। आकाश में बादल थे और समुद्र में तरंगें थीं, इ
लिए आकाश में समुद्र और समुद्र में आकाश भासित होता था।
वेग से उठी हुई तरंगों के शब्द आकाश में नगाड़ों के शब्द के सम
सुन पड़ते थे। ११५—१२०। समुद्र में अनेक प्रकार के रत्न थे।
के वेग से पानी खलभलाता था, जल-जन्तु उछलते थे, इसलिए
क्रुद्ध के समान जान पड़ता था। वायु के वेग से तरंगें ऊपर को उठती
इसलिए जान पड़ता था, मानों वह आकाश से कुछ कह रहा है। वा
बड़े आश्चर्य से उसे देखने लगे। १२१—१२३।

सर्ग ५

सेनापति नील ने समुद्र के उत्तर तट पर वानरों की सेना ठहरा
मैन्द और द्विविद सेना की रक्षा करते हुए उसके चारों ओर घूम
लगे। रामचन्द्र ने समीप बैठे हुए लक्ष्मण से कहा—यद्यपि शो
दूर होने का समय समीप आ रहा है, यह मैं जानता हूँ, किन्तु सी
के वियोग का दुःख उत्तरोत्तर बढ़ता ही जाता है। सीता बहुत दूर
इसका मुझे दुःख नहीं; राक्षस उन्हें हर ले गया है, इसका भी शो
नहीं; किन्तु शोक इस बात का है कि उनका जीवन क्षीण हो रहा है
हे पवन, तुम सीता के अंगों का स्पर्श करके मेरा स्पर्श करो, ऐ
करने से मुझे शान्ति मिलेगी। चन्द्रमा को सीता भी देखती हैं औ
मैं भी देखता हूँ, इस दृष्टि-समागम से मुझे सुख मिलता है। हे लक्ष्मण
जब राक्षस उनको हरे लिये जाता था, तब उन्होंने 'हा नाथ' कहक
पुकारा था। वह मुझे विष के समान दुःख देता है। कामाग्नि दि
रात मेरे अंगों को भस्म करती है। प्रिया का वियोग उस अग्नि क
ईंधन और उनकी चिन्ता उसकी शिखा है। हे लक्ष्मण, मैं तुम
छोड़कर समुद्र में कूद पड़ूँगा, तब कामाग्नि मुझे न जला सकेगी
सीता और मैं एक ही पृथिवी पर रहता हूँ, यही कारण है, जो मैं उन

वियोग में भी जीवित हूँ ।१–१०। जैसे पानी से भरे हुए खेत की सर्दी से उसके पासवाला खेत भी कुछ हरा रहता है, वैसे ही मैं भी सीता को जीवित सुनकर जी रहा हूँ। युद्ध में शत्रुओं को जीतकर लक्ष्मी के समान कमलनयनी सीता को न जाने कब देखूँगा। रोगी मनुष्य को रसायन मिलने के समान, मैं न जाने कब सुन्दर होंठ और दाँतों से शोभित, कमल के समान सीता के मुँह का चुम्बन करूँगा। मुसकराती हुई सीता न जाने कब मेरा आलिंगन करेंगी ।११–१४। हा, मैं जिनका नाथ हूँ, वह आज अनाथ की तरह दिन बिता रही हैं। जनकराज की पुत्री, महाराज दशरथ की कुलवधू और मेरे जीवन की सर्वस्व सीता राक्षसियों के बीच में कैसे सोती होंगी। जैसे शरद् ऋतु में चन्द्रमा की ज्योति बादलों को भेदकर प्रकाशित होती है, वैसे ही सीता मेरे बाहुबल से दुष्ट राक्षसों का विनाश करके कब मुझे मिलेंगी। वे एक तो स्वभाव से ही दुबली हैं, किन्तु अब शोक और उपवास के कारण और भी अधिक दुबली हो गई होंगी। न जाने कब रावण की छाती में बाण मारकर अपना शोक दूर करूँगा और देवकन्या के समान साध्वी सीता न जाने कब प्रसन्न होकर मेरा आलिंगन करके आनन्द के आँसू बहावेंगी। १५–२०। उनके वियोग का यह शोक मैले वस्त्र के समान न जाने कब छोड़ूँगा। बुद्धिमान् रामचन्द्र इस प्रकार विलाप करने लगे। देखते ही देखते दिन बीत गया, सूर्य तेजहत होकर अस्ताचल को चले गये। रामचन्द्र सीता के शोक से बहुत दुःखित थे। लक्ष्मण के समझाने पर किसी तरह उनको धैर्य हुआ, तब उन्होंने सन्ध्योपासना की। २१–२३।

सर्ग ६

उधर इन्द्र के समान पराक्रमी महात्मा हनुमान् लंका में भयानक

काम करके जब चले आये तब राक्षसराज रावण लज्जा के मारे
झुकाकर राक्षसों से कहने लगा—देखो, वह दुष्ट वानर दुर्गम लं
नगरी में घुस आया और सीता को देखकर चला गया। उसने
मन्दिर को नष्ट कर दिया, बलवान् राक्षसों को मार डाला और आ
लगाकर लंका को व्याकुल कर दिया। अब क्या करना चाहिए,
लोग जो उचित समझें और जिसे हम कर सकें, वह बताइए। मन्त्रि
से सलाह करके काम करने से ही विजय होती है, इसलिए आप लो
की सलाह से ही मैं कर्तव्य का निश्चय करूँगा। उत्तम, मध्यम
अधम तीन प्रकार के मनुष्य होते हैं। जो मनुष्य हितैषी मन्त्रि
समानार्थी मित्रों और भाई-बन्धुओं से सलाह करके काम करता
और दैव पर भी भरोसा रखकर यत्न करता है, वह उत्तम पुरुष है। १-
जो किसी से सलाह किये विना अकेला ही कर्तव्य का निश्च
करता है, और अकेला ही काम भी करता है वह मध्यम पुरुष है
और जो गुण-दोषों का विचार न करके, दैव की भी परवा न कर
'मैं स्वयं इस काम को कर लूँगा' यह समझकर दूसरों की उपे
करता है, वह अधम मनुष्य है। ६—१०। जैसे उत्तम, मध्यम
अधम तीन प्रकार के मनुष्य होते हैं, वैसे ही तीन प्रकार की मन्त्र
भी होती हैं। एकमत के कई मन्त्री एकत्र होकर नीति-शास्त्र के अनु
जो सलाह करते हैं, वह उत्तम मन्त्रणा है। जहाँ पहले तो बहुमत हो
है, किन्तु बाद में एकता हो जाती है, वह मन्त्रणा मध्यम कहाती
किन्तु जहाँ राय नहीं मिलती वह अधम मन्त्रणा है। हे मन्त्रि
आप लोग बुद्धिमान् हैं, सलाह करके निश्चय कीजिए और
कर्तव्य हो, वह मुझे बताइए। ११—१५। रामचन्द्र वानरों की बड़
बड़ी सेना लेकर लंका को घेरने के लिए आ रहे हैं। वे अपने भा
मन्त्रियों और सैनिकों के साथ समुद्र भी उतर आवें तो कोई सन्देह नहीं
वे अपने पराक्रम से समुद्र को सोख लेंगे, अथवा किसी भी उपाय

उतर आवेंगे। आप लोग ऐसा उपाय बतावें जिससे लंका का, सेना का और मेरा हित हो।११—१८।

सर्ग ७

रावण के यह कहने पर महाबली राक्षस शत्रु के बल का कुछ विचार न करके हाथ जोड़कर नीति के विरुद्ध वचन बोले—राजन्, आप खेद क्यों करते हैं; हमारे पास सेना और अस्त्र-शस्त्रों की कमी नहीं है। परिघ, शक्ति, ऋष्टि, शूल, पट्टिश और कुन्तल आदि अस्त्र-शस्त्र और बहुत बड़ी सेना हमारे पास है। आपने भोगवती नगरी में जाकर नागों को परास्त कर दिया था। यक्षराज कुबेर महापराक्रमी लोकपाल हैं, महादेव से उनकी मित्रता है। आपने कैलास-शिखर पर जाकर उनको भी परास्त किया और उनका पुष्पक-विमान भी छीन लिया। १—६। हे राक्षसराज, मय दानव ने डर के मारे आपसे मित्रता करने के लिए अपनी कन्या आपको दे दी। दानवों के राजा महापराक्रमी मधु को भी आपने अपने अधीन कर लिया। ७—८। हे महाबाहु, रसातल में जाकर आपने वासुकि, तक्षक, शंख और जटी आदि नागों को भी जीत लिया। ब्रह्मा से वर पाये हुए बलवान् दानवों से आपने एक वर्ष तक युद्ध किया और उनको परास्त करके उनकी माया भी अपने अधीन कर ली। आपने वरुण के बलवान् शूर-वीर पुत्रों को चतुरंगिणी सेना समेत जीत लिया। यमराज का पराक्रम महासमुद्र के समान है, उनका दंड महाग्राह के समान, कालपाश तरंगों के समान और उनके अनुचर साँपों के समान हैं। आपने उस महासमुद्र में पैठकर, मृत्यु पर भी विजय प्राप्त की। अधिक क्या कहें, आपके युद्ध से तीनों लोक सन्तुष्ट हो गये हैं। ६—१५। पूर्व समय में इन्द्र के समान पराक्रमी क्षत्रिय पृथिवी पर थे। रामचन्द्र बल-वीर्य और उत्साह में उनके समान नहीं हैं। आपने उन दुर्जय क्षत्रियों को परास्त कर दिया था, फिर

रामचन्द्र से क्या डर है। महाराज, आपको कष्ट उठाने की आवश्य
नहीं। आप बैठे रहें, अकेले इन्द्रजित् वानरों की सेना का विना
कर देंगे। इन्होंने यज्ञ करके महादेव से दुर्लभ वर प्राप्त किया है।
समुद्र के समान देवताओं की सेना को मथकर देवराज इन्द्र को बां
लाये थे। शक्ति और तोमर उस सेना-समुद्र के मत्स्य थे, खड्ग आदि अ
शस्त्र उसकी सेवार, हाथी उसके कछुए, घोड़े उसके मेंढक, आदि
और रुद्र उसके मगर और घड़ियाल, मरुत् और वसुगण उस
भयानक साँप; हाथी, घोड़े और रथ आदि उसका अगाध जल, त
पैदल सेना उसका तट था। १६-२२। राजन्, ब्रह्मा के कहने
इन्होंने शम्बर और वृत्रासुर को मारनेवाले देवताओं के पूज्य इ
को छोड़ दिया था। तब वे स्वर्गलोक को चले गये थे। महारा
आप इन्द्रजित् को इस काम के लिए भेज दीजिए। वे वानरों
सेना सहित रामचन्द्र को मार डालेंगे। साधारण मनुष्य से
साधारण विपत्ति की ओर ध्यान देना आपको उचित नहीं है
रामचन्द्र अवश्य मारे जायँगे, इसमें सन्देह न कीजिए। २३-२५

सर्ग ८

सेनापति प्रहस्त हाथ जोड़कर बोला—महाराज, मैं युद्ध में देव
दानव, गन्धर्व, पिशाच, पक्षी और नागों को भी परास्त कर सक
हूँ, तो फिर मनुष्यों की क्या गिनती है। जब हनुमान् लंका में आ
अशोक-वाटिका को उजाड़ गया है उस समय हम लोग निश्चि
होकर भोग-विलास कर रहे थे। यदि सावधान होते तो हनुमान् य
से जीवित न जाने पाता। जो हुआ सो हुआ, अब यदि आप मुझे आ
दें तो मैं पृथिवी भर के वानरों का विनाश कर दूँ। राजन्, मैं अके
ही राक्षसों की रक्षा करूँगा। आप निश्चिन्त रहें, सीता को हर ला
के कारण आपको कुछ भी दुःख न मिलेगा। १-५। उसके बाद दु

नाम का राक्षस कुपित होकर बोला—हनुमान् ने हम लोगों का जो अनादर किया है उसे हम सह नहीं सकते। उस वानर ने इस नगरी का, आपका और आपके अन्तःपुर का अपमान किया है, अतएव मैं अकेला ही जाकर वानरों को मार डालूँगा। समुद्र, आकाश अथवा रसातल में छिपने पर भी जीवित न छोड़ूँगा। ६—८। महापराक्रमी वज्रदंष्ट्र मांस और रुधिर लगा हुआ परिघ उठाकर बड़े क्रोध से बोला—राम, लक्ष्मण और सुग्रीव को जीवित छोड़कर बेचारे हनुमान् को मारने से क्या लाभ है? आज मैं परिघ लेकर अकेला ही लक्ष्मण और सुग्रीव समेत रामचन्द्र को मारकर वानर सेना को तितर-बितर करके लौटूँगा। राजन्, मेरी बात सुनिए, जो पुरुष उपाय करने में कुशल होता है, वही शत्रुओं को परास्त करता है। अतएव इच्छानुसार रूप धारण करनेवाले हज़ारों वीर राक्षस मनुष्य का रूप धारण करके रामचन्द्र के पास जायँ और उनसे कहें कि आपके भाई भरत ने हम लोगों को युद्ध में सहायता के लिए आपके पास भेजा है। तब रामचन्द्र उन लोगों को लेकर लंका को चल देंगे। वे मार्ग में ही उन पर आक्रमण करें और आकाश में जाकर अस्त्र-शस्त्र तथा पत्थर आदि बरसाकर वानरों की सेना को मार डालें। यदि राम और लक्ष्मण छल करके इस तरह लाये जायँ तो अवश्य उनका वध किया जा सकता है। ६—१८। उसके बाद कुम्भकर्ण का पुत्र महापराक्रमी निकुम्भ कुपित होकर कहने लगा—तुम लोग महाराज के पास निश्चिन्त बैठे रहो; मैं अकेला ही राम, लक्ष्मण, सुग्रीव, हनुमान् और अन्य सब वानरों को मार डालूँगा। पर्वताकार वज्रहनु नाम का राक्षस क्रोध के मारे होंठ काटता हुआ बोला—तुम लोग निश्चिन्त होकर अपना काम करो; वारुणी मदिरा पियो और क्रीड़ा करो। मैं अकेला ही राम, लक्ष्मण, सुग्रीव, अंगद और हनुमान् आदि वानरों को मारूँगा और उनकी सेना को खा लूँगा। १६—२४।

———

सर्ग ९

उसके बाद महाबलवान् निकुम्भ, रभस, सूर्यशत्रु, सुप्तघ्न, यज्ञको महापार्श्व, महोदर, अग्निकेतु, दुर्धर, रश्मिकेतु, इन्द्रशत्रु, प्रहस्त विरूपाक्ष, वज्रदंष्ट्र, धूम्राक्ष, निकुंभ और दुर्मुख राक्षस, अस्त्र-शस्त्र लेकर बड़े क्रोध से खड़े हुए और रावण से कहने लगे--राजन्, आज हम लोग राम-लक्ष्मण और सुग्रीव को मार डालेंगे, लंका का अपमान करनेवाला हनुमान् भी जीवित न बचेगा। तब बुद्धिमान् विभीषण ने उन सबको समझाकर बैठाया और हाथ जोड़कर रावण से कहा--हे तात ! साम, दान और भेद, इन तीन उपायों से जब काम न चले तब पंडितों ने युद्ध करने का निर्देश किया है। जिस समय शत्रु असावधान हो, दैव के कोप से किसी विपत्ति में पड़ा हो, अथवा शत्रुओं ने उस पर आक्रमण किया हो, उस समय उस शत्रु पर पराक्रम दिखाना चाहिए। किन्तु रामचन्द्र असावधान नहीं हैं। वे बलवान् दुराधर्ष, क्रोध को जीते हुए और विजयाभिलाषी हैं। तुम लोग कैसे उनको जीतने की आशा करते हो। १--१०। विचार कर देखो, हनुमान् अपार समुद्र को लाँघकर यहाँ चला आया; पहले कौन इस बात का अनुमान कर सकता था। हे राक्षसो, रामचन्द्र का बल अपरिमित है, बिना समझे किसी की उपेक्षा करना बुद्धिमान् पुरुषों का काम नहीं है। देखो, रामचन्द्र ने राक्षसराज का क्या अपकार किया है, ये जनस्थान से उनकी स्त्री को क्यों हर लाये ? उद्दंड राक्षस खर ने राम के साथ जैसा उत्पात किया वैसा उसे फल मिला; इसमें रामचन्द्र का क्या दोष है ? सभी लोग अपनी शक्ति भर प्राणों की रक्षा करते हैं। खर के मारने से ही राक्षसराज को रामचन्द्र के ऊपर क्रोध आया और उनकी स्त्री को हर लाये, किन्तु यह काम बहुत निन्दनीय है। इनके इस दोष से हम लोगों का सर्वनाश हो जायगा। मैं बारम्बार कहता हूँ, सीता को वापस कर देना ही अच्छा है। रामचन्द्र बलवान्

और धर्मात्मा हैं, अकारण उनसे शत्रुता करना उचित नहीं है। इस लिए उनकी स्त्री उनको दे देना चाहिए। ११–१६। जब तक रामचन्द्र तीक्ष्ण बाणों से घोड़े-हाथी और रत्नों से परिपूर्ण लंका का विध्वंस नहीं कर देते, जब तक वानरों की सेना लंका को घेर नहीं लेती, उसके पहले ही उनकी स्त्री उनको दे दीजिए। नहीं तो शूर-वीर राक्षसों और लंका नगरी का विनाश हो जायगा। मैं आपका भाई हूँ, आपसे प्रार्थना करता हूँ; सत्य और हित की बात कहता हूँ, मेरी बात मान लीजिए। जब तक रामचन्द्र आपके वध के लिए शरदृऋतु के सूर्य की किरणों के समान चमकते हुए तीक्ष्ण अमोघ बाण नहीं छोड़ते, उसके पहले ही उनकी स्त्री उनको दे दीजिए। महाराज, सुख और धर्म का विनाश करनेवाला क्रोध शीघ्र त्याग दीजिए और जिस काम के करने से सुख और कीर्ति मिले, तथा हम लोग पुत्र और बान्धवों सहित जीवित रहें, वह काम कीजिए। विभीषण की यह बातें सुनकर राक्षसराज रावण सबको बिदा करके अन्तःपुर को चला गया। १७–२३।

सर्ग १०

दूसरे दिन प्रातःकाल धर्मात्मा विभीषण फिर रावण के घर गये। राजभवन पर्वत के शिखर के समान ऊँचा और बड़े भारी पर्वत के समान विस्तृत था। उसमें कई भाग थे, प्रधान राक्षस वहाँ रहते थे। बुद्धिमान् और विश्वस्त राक्षस उसकी रक्षा करते थे। शंख और नगाड़े बजते थे। राजभवन का द्वार सुवर्णमय-उत्तम आभूषणों से भूषित था। १–५। देवताओं और गन्धर्वों के घर के समान सुन्दर था। अनेक प्रकार के रत्नों से शोभित होने के कारण नागलोक के समान जान पड़ता था। ६। जैसे सूर्य बादलों में प्रवेश करते हैं, वैसे ही महातेजस्वी विभीषण राजभवन को गये। वहाँ अपने भाई की विजय के लिए वेदवित् ब्रह्म-राक्षसों से उच्चारित पुण्याहवाचन सुना, और देखा कि वेद के जाननेवाले

ब्राह्मण घी, अक्षत और दही से पूजित हुए हैं। राक्षसों ने विभी
का समुचित सत्कार किया और विभीषण ने आसन पर बैठे हुए कु
के छोटे भाई रावण को प्रणाम किया। ७–१०। रावण ने संके
विभीषण को बैठने की आज्ञा दी और विभीषण बड़ी सभ्यता
सुवर्णमय आसन पर बैठे। वहाँ मन्त्रियों के सिवा और कोई न था
बुद्धिमान् विभीषण रावण को प्रसन्न करके अर्थयुक्त हितकर व
बोले—महाराज, जब से सीता लंका में आई हैं तब से अनेक प्र
के अशकुन देख पड़ते हैं। मन्त्र पढ़कर आहुति देने पर अ
प्रज्वलित नहीं होती। जब आग जलाई जाती है तब चिनगारियाँ उ
लगती हैं और धुवाँ बहुत होता है। पाकशाला और होम करने
वेद पढ़ने के स्थान में साँप रेंगते देख पड़ते हैं। होम की सामग्री
चींटी दिखाई देती हैं। गायें दूध नहीं देतीं। हाथियों के मद न
बहता। घोड़ों को यद्यपि हरी घास दी जाती है, तो भी वे बड़े दुः
हिनहिनाते रहते हैं। गधे, ऊँट और खच्चर रोयें खड़े किये आँसू ब
रहते हैं; दवा करने पर भी स्वस्थ नहीं होते। ११–१८। झुंड के
कौवे सब ओर काँव-काँव करते रहते हैं। विमानों के ऊपर कौवों
झुंड मड़राते हैं। घरों के ऊपर गिद्ध उदास बैठे रहते हैं। सुबह
शाम को लंका के इर्द-गिर्द सियारिनें बोलती हैं।१९–२०। कुत्ते
सियार लंका के फाटक पर चिल्लाते हैं। उनका शब्द बड़ा कठोर हो
है। हे वीर, इन अशकुनों की शान्ति का एक यही उपाय है
रामचन्द्र को उनकी स्त्री दे दीजिए।२१–२२। महाराज, यदि लोभ
मोह से कोई विरुद्ध बात मुँह से निकल गई हो तो उसे क्षमा कीजि
यह जो अशकुन देख पड़ते हैं, इनका फल लंका के राक्षसों
राक्षसियों को भोगना पड़ेगा। २३–२४। यद्यपि आपके मन्त्रि
में कोई भी ऐसी सलाह नहीं देता, किन्तु मैं जैसा देखता और सुन
हूँ, उसी के अनुसार कहता हूँ। अब आप जो उचित समझिए

कीजिए। विभीषण ने मन्त्रियों के साथ बैठे हुए रावण से इस प्रकार हित की बातें कहीं। किन्तु वह उनकी बातें सुनकर क्रोध से अधीर होकर बोला—मैं तुम्हारी तरह डर की कोई भी बात नहीं देखता। रामचन्द्र किसी उपाय से भी सीता को नहीं पा सकते। यदि देवराज इन्द्र और सब देवता भी उनकी सहायता करें, तो भी वे युद्ध में मेरे सामने ठहर नहीं सकते। महापराक्रमी रावण ने यह कहकर विभीषण को वहाँ से चले जाने की आज्ञा दी। २५–२६।

सर्ग ११

राक्षसराज रावण अपने कुकर्म के कारण दिन-दिन दुर्बल होता जाता था। वह एक तो सीता पर आसक्त था, दूसरे उसके भाई-बन्धु उसका निरादर करते थे। वह रात-दिन सीता की ही चिन्ता किया करता था। यद्यपि वह जानता था कि युद्ध होने में अभी देर है, किन्तु मन्त्रियों और मित्रों से सलाह किया करता था। एक दिन मणि-जटित सुवर्णमय उत्तम रथ पर बैठकर सभा-भवन को चला। उसका रथ बादलों के गरजने के समान घरघराता था। रथ के आगे ढाल-तलवार लिए हुए बहुत-से राक्षस चले। उसके आगे-पीछे बड़े बलवान् राक्षस अनेक प्रकार के आभूषण पहने, गदा, परिघ, शक्ति और तोमर आदि अस्त्र-शस्त्र लिये घोड़ों पर सवार होकर चले। शंख और नगाड़े बजने लगे। महारथी रावण के सिर पर पूर्णमासी के चन्द्रमा के समान उज्ज्वल छत्र शोभित था। दाहिनी और बाईं ओर मणि-जटित सुवर्णमय चँवर शोभित थे। मार्ग में राक्षसों ने सिर झुकाकर और हाथ जोड़कर रावण को प्रणाम किया। उसकी स्तुति की, और विजय के लिए आशीर्वाद दिया। इस प्रकार राक्षसराज रावण सभा-भवन में पहुँचा। १–१४। वहाँ सुनहले और रुपहले बिछौने बिछे थे। विश्वकर्मा ने बड़ी निपुणता से उसे बनाया था। छः सौ पिशाच उसकी

रक्षा के लिए नियुक्त थे। रावण के बैठने का सिंहासन वैदूर्य-मणि
बना था और उस पर प्रियक मृग का चर्म बिछा था। रावण उस
आसन पर बैठकर दूतों से बोला—मन्त्रियों और अन्य सब प्र
राक्षसों को बुला लाओ, शत्रुओं के साथ युद्ध करने के लिए परा
करना है। दूतों ने राजा का सन्देश उन लोगों से कहा। जो रा
सोते थे, विहार करते थे, बग़ीचों में घूमते थे, उनको भी निडर हो
बुला आये। राजा की आज्ञा पाते ही राक्षस लोग हाथी, घोड़े
रथों पर सवार होकर सभा में आने लगे। बहुत-से राक्षस पैदल
चल दिये। उस समय हाथी, घोड़े और रथों से लंका ऐसी शो
हुई जैसे पक्षियों के उड़ने से आकाश की शोभा होती है। सभा
द्वार पर पहुँचकर, सवारियों से उतरकर, वे लोग उसी प्रकार सभा
गये जैसे सिंह पर्वत की गुहा में घुसें। राक्षसों ने रावण को प्र
किया, और रावण ने बड़े सम्मान से सबको बैठने की आज्ञा
सब लोग यथोचित आसन पर बैठ गये।१५—२४। बुद्धिमान्, नीति
गुणवान् सैकड़ों मन्त्री सभा में आये। विभीषण भी अच्छे घोड़े
हुए सुवर्णमय रथ पर बैठकर आये। उन्होंने अपना नाम लेकर रा
को प्रणाम किया। शुक और प्रहस्त भी आकर यथोचित आसन
बैठे। सब राक्षस सुवर्ण और मणियों के आभूषण तथा दिव्य
पहने थे। अगर, चन्दन और पुष्प-मालाओं की सुगन्ध चारों ओर
गई। सब लोग चुपचाप बैठे रावण की ओर देखते थे। जैसे
देवताओं के बीच में शोभित हों, वैसे ही राक्षसराज रावण रा
की सभा में शोभित हुआ। २५—३१।

सर्ग १२

रावण एक बार सब मन्त्रियों की ओर देखकर सेनापति प्रहस्त
बोला—हे वीर, हमारी चतुरंगिणी सेना युद्ध-विद्या में सुशिक्षित

तुम उसे आज्ञा दो कि सावधानी से नगर की रक्षा करे। प्रहस्त रावण की आज्ञा से लंका के बाहर और भीतर स्थान-स्थान पर सेना नियुक्त की और फिर रावण के सामने आकर बोला—राजन्, मैंने आपकी आज्ञा से नगर के बाहर और भीतर सेना नियुक्त कर दी है। आप निश्चिन्त होकर अभीष्ट काम कीजिए। १—५। राज्य के हितैषी प्रहस्त की बात सुनकर रावण ने मन्त्रियों से कहा—देखो, विपत्ति के समय प्रिय-अप्रिय, सुख-दुःख, हानि-लाभ, और हित-अहित का ध्यान रखना तुम लोगों का कर्तव्य है। तुम लोग हमेशा से आपस में सलाह करके काम करते आये हो। तुम्हारी सम्मति से किया हुआ काम कभी निष्फल नहीं हुआ। हम तुम्हीं लोगों की सहायता से राज्य-लक्ष्मी का भोग करते हैं। अपना अभिप्राय तुम लोगों से कहना चाहते थे, किन्तु शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ महावीर कुम्भकर्ण छः महीने से सोते थे, इसी से हमने कुछ नहीं कहा। अब वे जागे हैं, इसलिए अब कहते हैं—हम जनस्थान से रामचन्द्र की स्त्री सीता को हर लाये हैं। वह अलसगामिनी हमारी शय्या पर नहीं आना चाहती; उसके समान सुन्दरी स्त्री तीनों लोकों में नहीं है। उसकी कमर पतली, नितम्ब भारी, मुँह शरदृतु के चन्द्रमा के समान और रंग तपाये हुए सुवर्ण के सदृश है। वह मय की बनाई हुई माया के समान सुन्दरी है। उसके पैर के तलवे, हथेली और नख लाल हैं। पैर बहुत चिकने और सुन्दर हैं, उसे देखकर हम काम के वश हो जाते हैं। वह अग्नि और सूर्य की प्रभा के समान है। उसकी ऊँची नाक, सुन्दर मुख और मनोहर आँखें देखकर हम उसके वशीभूत हो जाते हैं। काम उत्तेजित होकर क्रोध और हर्ष को एक समान करके शोक और सन्ताप से हमारा मन व्याकुल कर देता है। उस विशालनयनी ने रामचन्द्र की प्रतीक्षा में एक वर्ष का समय हमसे माँगा और हमने उसकी बात मान ली। किन्तु अब हम काम से व्याकुल होकर, थके हुए घोड़े के समान शिथिल

हो गये हैं। हम नहीं समझते कि वानरों की सेना लेकर मनुष्य राम और लक्ष्मण कैसे अपार समुद्र के पार आवेंगे। अथवा जब एक वानर लंका में आकर इतना उत्पात कर गया तो वानरों की सेना के बल का अन्दाज़ा कैसे लगाया जा सकता है। इस विषय में आप लोग भी अपनी सलाह दीजिए। यद्यपि मनुष्यों से हमको कोई डर नहीं है, तो भी हम आप लोगों से सम्मति लेना उचित समझते हैं। ६—२२। हम आप लोगों की सहायता से देवताओं और दानवों के युद्ध में भी विजयी हुए हैं, तो फिर साधारण मनुष्यों से हमको क्या डर है। मालूम हुआ है कि दूत के मुँह से सीता की खबर पाकर राजकुमार राम-लक्ष्मण सुग्रीव आदि वानरों के साथ समुद्र के उत्तर किनारे पर आ गये हैं। २३—२४। जिस उपाय से सीता को न देना पड़े और दोनों राजकुमार मारे जायँ, वह उपाय तुम लोग बताओ। २५। मैं संसार में ऐसा किसी को नहीं देखता, जो वानरों की सेना के साथ समुद्र के पार आकर हमको परास्त कर सके; इसलिए हमारी विजय में कोई सन्देह नहीं है। काम के वशीभूत रावण का यह रोना सुनकर कुम्भकर्ण कुपित होकर बोला—भाई, जब आपने सीता को बलपूर्वक हरने का इरादा किया था, तब हम लोगों से सलाह क्यों नहीं ली, अब सलाह करने से क्या होता है। २६—२८। महाराज, दूसरों की स्त्री हर लाना आपको उचित नहीं है। जो राजा मन्त्रियों से सलाह करके न्याय से राज्य-कार्य करता है, उसे कभी पछताना नहीं पड़ता, और यदि मन्त्रियों से सलाह न करके न्याय के विरुद्ध काम किया जाता है तो वह अपवित्र यज्ञ की आहुति के समान व्यर्थ होता है। २६—३१। जो राजा किसी काम का पूर्वापर नहीं सोचता, वह नीतिशास्त्र से अनभिज्ञ है। जिसका स्वभाव चंचल होता है, वह चाहे बलवान भी हो, किन्तु शत्रु उसके छिद्र ढूँढ़ लेते हैं। ३२—३३। तुमने बिना विचारे यह काम किया है। तुम रामचन्द्र के हाथ से मारे नहीं

यही बड़े भाग्य की बात है; क्योंकि विष मिला हुआ अन्न खाने से कोई बच नहीं सकता। ३४। यद्यपि तुमने बड़ा अनुचित काम किया है, किन्तु हे निष्पाप! मैं तुम्हारे शत्रुओं को मारकर तुम्हारी घबराहट दूर करूँगा। इन्द्र, सूर्य, अग्नि, वायु, कुबेर और वरुण भी यदि तुमसे शत्रुता करें, तो मैं उनको भी युद्ध में परास्त करूँगा।३५—३६। मेरी देह पर्वत के समान है और दाँत पैने हैं। जब मैं परिघ लेकर गरजता हुआ निकलूँगा, तो मुझे देखकर इन्द्र भी डर जायँगे। ३७। तुम धैर्य रक्खो, रामचन्द्र एक बाण चलाकर जब तक दूसरा बाण निकालेंगे तब तक मैं उनका रुधिर पी लूँगा। राम-लक्ष्मण को मारकर वीर वानरों को खा लूँगा। ३८—३९। तुम चिन्ता न करो, सुख से मदिरा पियो, भोग करो और अपने हित के काम करो। जब राम मेरे हाथ से मारे जायँगे, तब सीता बहुत दिनों के लिए तुम्हारे वश में हो जायँगी। ४०।

सर्ग १२

उसके बाद महापार्श्व हाथ जोड़कर बोला—जो मनुष्य हिंसक जीवों से भरे हुए वन में जाकर भी मधु नहीं पीता वह निरा मूर्ख है। १—२। हे शत्रुनाशन! आप सबके प्रभु हैं, आपका प्रभु कौन हो सकता है। आप शत्रुओं के सिर पर पैर रखकर सीता के साथ विहार कीजिए! मुर्ग़ की तरह बलपूर्वक पकड़कर भोग कीजिए। जब आपकी इच्छा पूरी हो जायगी तो किसका भय है? बाद में जो भय आवेगी, उसके दूर करने का उपाय किया जायगा। ३—५। महाबली कुम्भकर्ण और इन्द्रजित् हम लोगों के साथ वज्रधारी इन्द्र को भी परास्त कर सकते हैं। ६। नीति-शास्त्र के जानकारों ने कार्य की सिद्धि के लिए साम, दान, भेद और दंड चार उपाय बताये हैं। उनमें चौथा ही उपाय हम लोगों को पसन्द है। जब आपके शत्रु यहाँ आवेंगे तब हम लोग

शस्त्र के प्रभाव से उनको वश में कर लेंगे। ७-८। महापार्श्व की यह बात सुनकर रावण उसकी प्रशंसा करके बोला—हे वीर, मैं अपनी एक बहुत पुरानी गुप्त बात तुमसे कहता हूँ, सुनो। एक दिन पुंजिकस्थली नाम की अप्सरा ब्रह्मा के पास जा रही थी। आकाश में अग्नि की शिखा के समान उसे देखकर मैंने बलपूर्वक पकड़ लिया और वस्त्र उतारकर उसके साथ भोग किया। वह कमलिनी के समान काँपती हुई ब्रह्मा के पास गई। उसके मुँह से सब हाल सुनकर पितामह ने बड़े क्रोध से मुझे यह शाप दिया—रे दुष्ट, तू अब यदि किसी स्त्री के साथ बलात्कार करेगा तो तेरे सिर के सौ टुकड़े हो जायँगे; इसमें सन्देह नहीं। ९-१४। हे वीर, मैं ब्रह्मा के शाप से डरता हूँ, इसी से सीता को बलपूर्वक अपनी शय्या पर नहीं ले जाता हूँ। हमारी गति वायु के समान और वेग समुद्र के समान है। हमारा पराक्रम रामचन्द्र नहीं जानते, इसी से लंका पर चढ़ाई कर रहे हैं। क्योंकि पर्वत की कन्दरा में सोये हुए, काल के समान कुपित सिंह को जगाने का साहस कौन करेगा? १५-१७। हमारे धनुष से छूटे हुए दो जीभवाले साँपों के समान बाणों को रामचन्द्र ने कभी नहीं देखा। इसी से वे लंका पर आक्रमण करने आ रहे हैं। जैसे लुकेठे फेंक-फेंककर मतवाला हाथी जला दिया जाता है, वैसे ही वज्र के समान बाणों से रामचन्द्र को भस्म कर दूँगा। जैसे सूर्य के उदय होने पर नक्षत्रों का तेज नष्ट हो जाता है, वैसे ही मैं सेना के साथ जाकर रामचन्द्र की सेना का विनाश कर दूँगा। इन्द्र और वरुण भी मुझे नहीं जीत सकते। मैंने कुबेर से सुरक्षित इस लंका पुरी को अपने बाहुबल से जीत लिया है। १८-२१

सर्ग १४

राक्षसराज रावण की यह बातें और कुम्भकर्ण का गरजना सुनकर विभीषण अर्थयुक्त और हितकर वचन बोले—राजन्, सीता

भयानक साँप के समान हैं। उनका वक्षःस्थल साँप की देह, चिन्ता साँप का विष, हँसी पैने दाँत, हाँथों की अँगुलियाँ पाँच सिर हैं। तुम उस काल-रूप साँप को अपने गले में क्यों बाँधे हो? जो हो, पैनी दाढ़ें और पैने नखवाले वानर जब तक लंका को घेर नहीं लेते, उसके पहले ही रामचन्द्र को उनकी सीता दे दो। जब तक वायु के समान वेग से चलनेवाले रामचन्द्र के वज्र-तुल्य बाण राक्षसों के सिर नहीं उड़ा देते, उसके पहले ही उनको उनकी स्त्री दे दो। १—४। कुम्भकर्ण, इन्द्रजित्, महापार्श्व, महोदर, निकुम्भ, कुम्भ अथवा अतिकाय कोई भी युद्ध में रामचन्द्र के सामने नहीं ठहर सकता। ५। चाहे सूर्य और उनचासों पवन भी तुम्हारी रक्षा करें, तुम इन्द्र की गोद में जा छिपो, मृत्यु भी तुम्हारी रक्षा करे, आकाश या पाताल को कहीं भी भाग जाओ, किन्तु राम के हाथ से अवश्य मारे जाओगे। ६। विभीषण की यह बातें सुनकर प्रहस्त बोला— हम युद्ध में किसी देवता और दानव से भी नहीं डरते। यक्ष, गन्धर्व, साँप और पक्षियों से भी हमको कोई डर नहीं है, तो फिर रामचन्द्र हमारा क्या बिगाड़ सकते हैं, वे तो मनुष्य हैं। ७—८। प्रहस्त का यह वचन सुन कर रावण का हित चाहनेवाले विभीषण फिर बोले— हे प्रहस्त! कुम्भकर्ण, महोदर, तुम और राजा, जो कुछ रामचन्द्र के विषय में कहते हो यह उसी तरह असम्भव है, जैसे अधर्मी मनुष्य स्वर्ग को नहीं जा सकता। ६—१०। जैसे जहाज़ के विना समुद्र के पार जाना असम्भव है, वैसे ही हम तुम अथवा सब राक्षस मिलकर भी रामचन्द्र को नहीं मार सकते। ११। धर्मात्मा रामचन्द्र महारथी हैं, देवता भी उनको परास्त नहीं कर सकते। १२। हे प्रहस्त, रामचन्द्र के कंकपत्र बाण तुम्हारे शरीर को भेदकर अभी निकल नहीं गये, इसी से तुम ऐसी बातें कहते हो। १३। उनके तीक्ष्ण बाण वज्र के समान हैं, तुम लोगों के प्राणान्त कर देंगे। राक्षसराज रावण, बलवान् त्रिशिरा, तुम, कुम्भकर्ण का पुत्र निकुम्भ, इन्द्रजित्, अथवा कोई भी राक्षस, इन्द्र के समान पराक्रमी

रामचन्द्र से युद्ध नहीं कर सकता। देवान्तक, नरान्तक, अतिका
अतिरथ और अकम्पन भी युद्ध में उनके सामने नहीं
सकते। १४–१६। राक्षसराज तो व्यसनी हैं, ये अपनी बुद्धि
विचारकर काम नहीं करते और तुम लोग इनके मित्ररूपी शत्रु
तुम्हारी सलाह में चलने से राक्षसों का विनाश होगा। १७। राम
से विरोध करना हज़ार फनवाले शेषनाग से घिर जाने के समान
तुम लोग उस नागपाश से इनको बचाओ। १८। हम लोगों
राजा रामरूपी समुद्र में डूबे जा रहे हैं, रामरूपी पाताल में गिरे जा रहे
अतएव तुम लोग मिलकर इनकी रक्षा करो। मैं अपनी सलाह
देता हूँ, राजकुमार रामचन्द्र को उनकी सीता दे दें; इसी में राजा
राक्षसों का, मन्त्रियों का और इस नगरी का कल्याण है। जो अ
पक्ष और शत्रुपक्ष के बलाबल का विचार करके हानि-लाभ को दे
राजा को सलाह देता है, वही योग्य मन्त्री है। १६–२२।

सर्ग १५

बृहस्पति के समान बुद्धिमान् विभीषण की ये बातें सुनकर राक्ष
श्रेष्ठ इन्द्रजित् बोला—आप डरपोक की तरह यह निरर्थक बातें
बकते हैं? जो राक्षसों के कुल में नहीं जन्मा है, वह भी ऐसी का
की बातें न कहेगा। इस वंश में उत्पन्न सब राक्षस बलवान्, परा
शूर-वीर, धैर्यवान् और तेजस्वी हैं। ये गुण केवल आपमें ही नहीं
हे डरपोक, हम लोगों के सामने मनुष्य रामचन्द्र की क्या गिनती है।
साधारण राक्षस भी रामचन्द्र को मार सकता है। तुम इस तरह
लोगों को क्यों डराते हो। १–४। तुम जानते हो कि देवराज
तीनों लोकों के राजा हैं, हम उनको पकड़कर पृथिवी पर ले आ
यह देखकर देवता डर के मारे इधर-उधर भाग गये। हमने गरज
ऐरावत को भी पृथिवी पर गिराकर उसके दो दाँत उखाड़ लिये

देवताओं को भयभीत कर दिया था। जिसने देवताओं और दानवों का गर्व नष्ट कर दिया, वह साधारण मनुष्य राम-लक्ष्मण को क्यों नहीं मार सकेगा? इन्द्रजित् की यह बात सुनकर विभीषण ने उत्तर दिया—बेटा! तुम बालक हो, अभी तुम्हारी बुद्धि इन बातों को समझने के योग्य नहीं हुई, इसलिए तुम सलाह देने के योग्य नहीं हो। अपने विनाश के लिए निरर्थक बातें क्यों बकते हो।५–६। तुम रावण के पुत्र होकर भी इनके शत्रु के समान हो; क्योंकि इस विपत्ति के समय भी मोह के वश होकर ऐसी सलाह देते हो। तुम वध करने के योग्य हो, जो मूर्ख यह सलाह देने के लिए तुमको यहाँ लाया है, वह भी वध करने के योग्य है। तुम बालक, मूर्ख, अभिमानी, अविनीत, दुरात्मा और उग्र-स्वभाव हो, इसी से भले-बुरे का विचार न करके ऐसी बातें कहते हो। १०–१२। मैं तुमसे पूछता हूँ, रामचन्द्र के ब्रह्मदंड और यमदंड के समान बाण जब काल के समान छूटेंगे, तो कौन उनको सह सकेगा? हे राजन्, मैं आपसे निवेदन करता हूँ, धन-रत्न के साथ सीता को दे आइए, तभी हम लोग लंका में सुख से रह सकेंगे।१३–१४।

सर्ग १६

विभीषण के यह वचन सुनकर कालप्रेरित रावण कठोर वचन बोला—शत्रु के साथ अथवा कुपित साँप के साथ रहना तो अच्छा, पर जो व्यक्ति शत्रुओं से मिला हो और प्रकट में मित्र बना रहता हो, उसके साथ कभी न रहना चाहिए। हे राक्षस, मैं सजातीय लोगों का स्वभाव भली भाँति जानता हूँ। जब किसी के ऊपर कोई आपत्ति आती है, तो उसकी जातिवाले उसे विपत्ति में फँसा देखकर बड़े प्रसन्न होते हैं। जिस जाति में जो व्यक्ति प्रधान, धर्मात्मा, राज्य करने योग्य, विद्वान् और शूर-वीर होता है, उस जातिवाले लोग उसका अपमान करते हैं और मौक़ा पाकर उसे परास्त भी करते हैं। उन दुष्टों के हृदय में कपट भरा रहता है; वे

बनावटी प्रसन्नता दिखाते हैं, किन्तु उनके अन्तःकरण शुद्ध नहीं हो
इसलिए जातिवालों से हमेशा भय रहता है। १–५। सुना जात
कि पद्म वन में फँसाने की रस्सी लिये हुए मनुष्यों को देखकर हाथि
ने कहा था कि हम अग्नि, अस्त्र और पाश से उतना नहीं
जितना स्वार्थी जातिवालों से; क्योंकि हमारी जातिवाले ही हम
फँसाने में सहायक होते हैं। इसी से मैं कहता हूँ कि जातिवाले
सब प्रकार के भय और कष्ट के कारण हैं। गायों में दूध, जाति
से भय, स्त्रियों में चंचलता और ब्राह्मणों में तपस्या अवश्य ह
है। ६–९। हे विभीषण, हमारा सम्मान तीनों लोकों में है, ह
पास अतुल सम्पत्ति है, हमने तीनों लोकों को विजय कर लिया
जान पड़ता है कि तुम हमारा यह अभ्युदय देख नहीं सकते।
समझते हैं कि जैसे कमल के पत्ते पर पानी की बूँदें नहीं ठहरतीं,
ही दुष्ट पुरुषों में मित्रभाव नहीं रहता। जैसे शरद्ऋतु में बादलों
गरजने और बरसने से पृथिवी नहीं भीगती वैसे ही दुष्टों की मि
हल्की होती है।१०–१२। जैसे भ्रमर फूल का रस पीकर उस पर
नहीं रहता, वैसा ही स्वभाव तुम्हारा भी है। दुष्टों की मित्रता ऐसी ह
ही है। जिस प्रकार भ्रमर कास के फूल पर बैठने से रस नहीं पा
वैसे ही दुष्टों की मित्रता से कोई लाभ नहीं है। जैसे हाथी नह
अपनी देह पर धूलि झोंक लेता है, वैसे ही दुष्ट लोग मित्रता को
कर देते हैं।१३–१५। रे कुलकलंक, यदि और कोई ऐसी बातें क
तो मैं अभी उसे मार डालता। तुझे धिक्कार है, और अधिक क्या कहूँ।

रावण के यह कहने पर न्याय की बात कहनेवाले विभीषण
लेकर चार राक्षसों के साथ उठ खड़े हुए और आकाश में जाकर
क्रोध से बोले—राजन्, तुम मेरे बड़े भाई हो, इसलिए पिता के स
माननीय हो। मुझे जो चाहो कह लो, पर तुम्हारी बुद्धि धर्म में
नहीं है। इसलिए मैं तुम्हारे इन कठोर वचनों को नहीं सह सक

हे दशानन, मैंने तुम्हारे हित के लिए नीति की बातें कही थीं, किन्तु जो काल के वश होता है, वह हित की बातें नहीं सुनता।१७–२०। हे राजन्, मीठी बातें कहनेवाले बहुत मिलते हैं, किन्तु हित की कड़वी बात कहने और सुननेवाले दुर्लभ हैं।२१। जैसे घर में आग लगने पर बुझाने का उद्योग किया जाता है, वैसे ही कालपाश में बँधे हुए तुमको विनष्ट होते देखकर मैंने तुम्हारे हित की बात कही। तुम रामचन्द्र के सुवर्णभूषित, जलती हुई आग के समान, तीक्ष्ण बाणों से मारे जाओगे। मैं तुम्हारी यह दशा देखना नहीं चाहता। जो काल के वश होते हैं, वे बलवान्, शूर-वीर, अस्त्रविद्या में निपुण होने पर भी बालू के पुल के समान नष्ट हो जाते हैं। २२–२४। तुम बड़े भाई हो, इसी से मैंने तुम्हारे हित की बात कही थी। उसे क्षमा करो और राक्षसों की, लंका की और अपनी सर्वथा रक्षा करो। तुम्हारा कल्याण हो, मैं जाता हूँ, अब तुम सुख से रहो। मैंने तुम्हारे हित के लिए कहा था, किन्तु मेरी बातें तुम्हें अच्छी नहीं लगीं। इसमें तुम्हारा कोई दोष नहीं है; क्योंकि जिसके मरने के दिन निकट आते हैं वह मित्रों की कही हुई हित की बातें नहीं सुनता। २५–२६।

सर्ग १७

रावण को यह कठोर वचन कहकर विभीषण राम-लक्ष्मण के पास चले आये। वानरों ने मेरु पर्वत के शिखर और बिजली के समान उनको आकाश में आते हुए देखा। १–२। विभीषण का आकार बादलों और पर्वतों के समान था। उनकी देह का तेज वज्र के समान था। वे अच्छे **अस्त्र-शस्त्र** धारण किये थे और दिव्य आभूषण पहने थे। उनके साथ जो महापराक्रमी चार अनुचर थे, वे भी उत्तम आभूषण और कवच पहने थे और अस्त्र लिये थे। उन पाँच राक्षसों को देखकर वानरराज सुग्रीव और अन्य सब वानरों को बड़ी चिन्ता

हुई। सुग्रीव ने हनुमान् आदि वानरों से कहा—यह जो राक्षस अ
शस्त्र लिये चार राक्षसों के साथ आ रहा है, यह हम लोगों को म
के ही लिए आता होगा। ३–७। वानरों ने वृक्ष और पर्वत उठा
कहा—राजन्, इन दुष्टों को मारने के लिए हम लोगों को आ
दीजिए। हम अभी इनको मारकर पृथिवी पर गिरा दें। ८-
वानर आपस में यह कह रहे थे, इतने में विभीषण समुद्र के उत्तर कि
पर आ गये। वे सुग्रीव और सब वानरों को देखकर आकाश से
बोले—लंका में राक्षसों का राजा दुराचारी रावण रहता है, मैं उ
छोटा भाई हूँ, मेरा नाम विभीषण है। रावण जटायु को मारकर ज
स्थान से जनक की पुत्री सीता को हर ले गया है। सीता इस स
अनाथ स्त्री की तरह रावण के अन्तःपुर में दीनभाव से रहती हैं
राक्षसियाँ उनकी रक्षा करती हैं। मैंने हित की बातें कहकर रावण
अनेक प्रकार से समझाया। बार-बार उससे कहा कि रामचन्द्र
सीता उनको दे दो, किन्तु उसने मेरी एक भी न सुनी। जो मनु
मरने पर होता है, उसे औषध देने से कोई लाभ नहीं होता, वैसे
मेरी कही हुई बातों का रावण के ऊपर कोई प्रभाव न हुआ। उ
मुझे कठोर वचन कहे और दास की तरह मेरा अपमान किया।
कारण मैं पुत्र, स्त्री और परिवार को त्यागकर रामचन्द्र की शरण
आया हूँ। महात्मा रामचन्द्र सबकी रक्षा करते हैं। तुम शीघ्र जा
उनसे निवेदन करो। १०–१७। यह सुनकर वानरराज सुग्रीव
लक्ष्मण के पास गये और बड़े क्रोध से बोले—मुझे जान पड़ता
कि शत्रु-पक्ष का यह राक्षस हमारी सेना में इसलिए आना चाह
है कि जैसे उल्लू पक्षी मौक़ा पाकर कौओं को मार डालता है, वैसे
यह हम लोगों को मार डाले। इस समय अपने पक्ष और श
पक्ष के कामों का विचार करना, सेना को उचित स्थान पर ठहरा
नीति से काम लेना और गुप्तचर नियुक्त करना हम लोगों का वि

कर्तव्य है। जिसमें वानरों का और आपका कल्याण हो। मेरा विश्वास है कि यह राक्षस रावण का गुप्तचर है। ये लोग बड़े बलवान् हैं और मनमाना रूप भी धारण कर लेते हैं। गुप्तरूप से छिपे रहते हैं और मौक़ा पाकर अनिष्ट करते हैं। इसलिए इनका विश्वास न करना चाहिए। यह रावण का दूत है, यहाँ रहेगा, तो हम लोगों में वैमनस्य करा देगा, अथवा विश्वासपात्र बनकर, मौक़े से हम लोगों पर आक्रमण करेगा। यद्यपि इस समय हमको मित्रों की वृद्धि और सेना का संचय करना आवश्यक है, किन्तु शत्रु-पक्ष के लोगों का संग्रह करना उचित नहीं है। यह राक्षस है, रावण का भाई है; हम शत्रु का कैसे विश्वास करें। इसका नाम विभीषण है, यह चार राक्षसों को साथ लेकर आपकी शरण में आया है। यह बात मैंने उसी के मुँह से सुनी है। हे प्रभो, मेरी समझ में यह रावण का भेजा हुआ है, इसलिए इसे मार डालना चाहिए। यदि आप इसका विश्वास करेंगे तो यह मौक़ा पाकर छल से आपको मार डालेगा। अतएव इसे और इसके साथियों को मार डालना ही उचित है। सुग्रीव बड़े क्रोध से यह कहकर चुप हो गये। १८—२०। तब महापराक्रमी रामचन्द्र समीप बैठे हुए हनुमान् आदि वानरों से बोले—कपिराज सुग्रीव ने विभीषण के विषय में जो कुछ कहा है, वह तुम लोगों ने भी सुना। किसी विषय में सन्देह होने पर मित्रों से सलाह करना उचित होता है। इसलिए तुम लोगों से हम पूछते हैं, अपनी-अपनी सम्मति बताओ। वानर रामचन्द्र का हित चाहते थे, वे सावधानी से बोले—हे रघुनन्दन, तीनों लोकों में ऐसी कोई बात नहीं है, जिसे आप न जानते हों। हम लोगों से आपने जो पूछा है, वह केवल हम लोगों का सम्मान करने के लिए। आप सत्य-व्रत, शूर-वीर, धर्मात्मा, महापराक्रमी और बुद्धिमान् हैं, सोच-समझ कर काम करते हैं और मित्रों का विश्वास करते हैं। बुद्धिमान् अंगद ने कहा कि विभीषण की परीक्षा कर लेनी चाहिए। यह आपके शत्रु

का भाई है, सहसा इसका विश्वास कर लेना उचित नहीं है। दुष्ट
अपना भाव छिपाकर घूमा करते हैं और मौक़ा पाकर प्रहार करते
शत्रु का विश्वास करना अनर्थ का कारण है। हित-अहित का वि
करके काम करना चाहिए। गुण देखकर ग्रहण करे और दोष दे
त्याग दे। महाराज, यदि विभीषण में दोष देख पड़ें तो विना वि
उसे त्याग दीजिए और यदि उसमें बहुत-से गुण हों, तो ग्र
कीजिए। ३१–४२। उसके बाद बहुत सोच-विचारकर शरभ ना
वानर बोला——हे पुरुषश्रेष्ठ, विभीषण की परीक्षा के लिए एक बुद्धि
दूत भेजिए। वह उसकी परीक्षा कर आवे, तब जो उचित हो
कीजिए। बुद्धिमान् जाम्बवान् ने कहा——पापी रावण आपका
है, जब आप उससे युद्ध करने के लिए जा रहे हैं, तब यह आ
शरण में आया है, इसलिए इसका विश्वास करना उचित
है। ४३–४६। नीति के जानकार मैन्द ने कहा——महाराज, मधुर
में इससे बातें करना चाहिए और इसका अभिप्राय पूछना चाहिए। इ
मन का भाव समझकर जो उचित हो, वह करना चाहिए। दुष्ट जान पड़े
त्याग दीजिए और सज्जन हो तो ग्रहण कर लीजिए। ४७–४६। उ
बाद मन्त्रियों में श्रेष्ठ बुद्धिमान् हनुमान् मधुर वचन बोले—
बुद्धिमान् और समर्थ हैं। बोलने में बृहस्पति भी आपसे बढ़कर नहीं
राजन्, मैं स्पर्धा से, बोलने की चतुरता से, बुद्धिमत्ता से, अथवा किसी
की भी इच्छा से नहीं, केवल कार्य-सिद्धि के लिए यथार्थ बात कहता
मन्त्रियों ने विभीषण के गुण-दोष की परीक्षा लेने की जो बात
है, वह मुझे ठीक नहीं जँचती। क्योंकि इतनी जल्दी परीक्षा कैसे
सकती है। जब तक आप उसे ग्रहण नहीं करते तब तक उसकी परी
नहीं हो सकती और परीक्षा किये विना ग्रहण कर लेना भी उचित नहीं
क्योंकि सहसा ऐसे काम करने में अनर्थ का भय रहता है। परीक्षा
लिए दूत भेजने से भी कोई प्रयोजन सिद्ध नहीं हो सकता। जाम्ब

ने जो उसके विषय में देश-काल के अनुरूप बात कही है, उस पर भी मुझे कुछ कहना है। आपके गुण और रावण के दोष देखकर विभीषण ने अधर्मी रावण को त्याग दिया, और आपको धर्मात्मा समझ कर आपके पास चले आये, यह देश और काल के अनुकूल ही है। गुप्तचर भेजकर भी उसकी परीक्षा लेना उचित नहीं है, क्योंकि जब कोई अपरिचित पुरुष आकर परिचय पूछने लगता है तो मन में आशंका उत्पन्न होती है। किसी के मन का भाव इतनी जल्दी मालूम नहीं किया जा सकता। इसलिए विभीषण को यहाँ बुलवाइए, बातचीत करने पर उनके मन का भाव खुल जायगा। मुझे तो उनकी बातों से उनका भाव बुरा नहीं जान पड़ता। उनका मुँह प्रसन्न है। जिसके मन में दुष्टता होती है, वह स्वस्थ और अशंकित नहीं रहता। उनकी बातों में दुष्टता नहीं है, इसलिए मुझे उन पर सन्देह नहीं होता। कोई अपनी चेष्टा किसी तरह भी छिपाये, पर वह छिपी नहीं रह सकती। मन का भाव अवश्य प्रकट हो जाता है। विभीषण का आपकी शरण में आना देश-काल के विरुद्ध नहीं है; इससे उनका शीघ्र ही उपकार होगा। रावण का दुराचार और आपका उद्योग देखकर तथा बालि का विनाश और सुग्रीव का अभिषेक सुनकर विभीषण राज्य पाने की इच्छा से यहाँ आये हैं। इसलिए इनको अपने साथ लेना उचित है। मैं विभीषण का सरल-स्वभाव देखकर ऐसा कहता हूँ, अब आप जो उचित समझिए वह कीजिए। ५०—६८।

सर्ग १८

रामचन्द्र प्रसन्न होकर बोले—तुम लोग हमारे हितैषी हो, जो कुछ कहते हो, वह हमारे हित के ही लिए कहते हो। विभीषण के विषय में हमारी सम्मति भी सुनो, उसके बाद फिर अपनी राय बताओ। विभीषण में चाहे कुछ दोष भी हों, किन्तु वह मित्र-भाव से आया है,

इसलिए उसका त्याग करना उचित नहीं है; क्योंकि शरणागत की रक्षा करना सज्जनों का कर्तव्य है। १—३। तब सुग्रीव ने कहा कि जो पुरुष विपत्ति के समय अपने भाई को छोड़ दे, वह दोषी हो अथवा निर्दोष, उसका ग्रहण करना कभी उचित नहीं है। क्या वह विपत्ति के समय हम लोगों को न छोड़ भागेगा? यह बात सुनकर रामचन्द्र वानरों की ओर देखने लगे और मुसकराकर लक्ष्मण से बोले— सुग्रीव ने जो बात कही है, वह नीति-शास्त्र पढ़े बिना और वृद्धों की संगति किये बिना कोई कह नहीं सकता। इस विषय में बहुत सूक्ष्म बात जो मेरी समझ में आती है, वह कहता हूँ। राजाओं के यहाँ भाइयों के विरोध के विषय में प्रत्यक्ष और लौकिक दो तरह की बातें देखी जाती हैं। शत्रु दो तरह के होते हैं—सजातीय और पड़ोसी। वे लोग मौक़ा पाकर अपने शत्रु को मार डालते हैं। विभीषण अनिष्ट के डर से भागकर यहाँ आये हैं। यद्यपि सजातीय लोग परस्पर मित्र भी होते हैं, एक-दूसरे का हित भी चाहते हैं, किन्तु राजा उनका भी विश्वास नहीं करते। ४—११। हे सुग्रीव, तुमने जो शत्रु-पक्ष के लोगों का संग्रह करना दूषित बताया है, उसका मैं शास्त्र के अनुसार उत्तर देता हूँ, सुनो। हम लोग विभीषण के सजातीय नहीं हैं और विभीषण राज्य पाने की इच्छा करते हैं, इसलिए वे हम लोगों के शत्रु न होंगे। राज्य पाने की इच्छा से ही हमसे मित्रता करना चाहते हैं। अतएव विभीषण को मित्र बनाना उचित है। जब सजातीय लोग निर्भय और सन्तुष्ट रहते हैं तो उनमें सद्भाव रहता है, नहीं तो परस्पर वैमनस्य हो जाता है। विभीषण को लंका में युद्ध होने का डर है, रावण से विरोध भी है, इसी से वे चले आये हैं। हे सखे, भरत के समान भाई, मेरे समान पुत्र और तुम्हारे समान मित्र सबको नहीं मिलते। १२—१५।

रामचन्द्र की यह बातें सुनकर सुग्रीव हाथ जोड़कर बोले—

हे निष्पाप, यह राक्षस रावण का भाई है, उसी की आज्ञा से यहाँ आया है, इसलिए मैं तो इसका वध करना ही उचित समझता हूँ। यह हम लोगों का विश्वासपात्र बनकर छल से यहाँ रहेगा और मौक़ा पाकर आपको, लक्ष्मण को अथवा मुझको मार डालेगा। इसलिए इसे और इसके साथियों को मार डालना ही अच्छा है। यह कहकर सुग्रीव चुप हो गये। उसके बाद रामचन्द्र फिर कहने लगे—हे मित्र, विभीषण दुष्ट हो या सज्जन, मेरा कुछ बिगाड़ नहीं सकता। पिशाच, दानव, यक्ष और पृथिवी भर के राक्षसों का विनाश मैं कर सकता हूँ। सुना जाता है कि एक बहेलिया वन में रात हो जाने के कारण किसी पेड़ के नीचे ठहरा था। उस पेड़ पर कबूतर का एक जोड़ा रहता था। यद्यपि बहेलिये ने कबूतरी को मार डाला था, किन्तु कबूतर ने उसे अपना अतिथि मानकर, अपना मांस देकर उसका सत्कार किया। हे वानरराज, जब पक्षी भी शरण में आये हुए शत्रु का ऐसा सत्कार करते हैं, तो मेरे समान पुरुष शरणागत की उपेक्षा कैसे कर सकता है। १६–२५। महर्षि कण्व के पुत्र सत्यवादी कण्डु ने इस विषय में जो बात कही थी, वह तुमसे कहता हूँ, सुनो। उन्होंने कहा था, चाहे शत्रु भी हाथ जोड़कर शरण में आवे, उसे भी अभयदान देना धर्मात्मा पुरुष का कर्तव्य है। वह शत्रु भयभीत हो, और चाहे अभिमानी, यदि किसी के डर से भागकर शरण में आया हो तो अपने प्राण देकर भी उसकी रक्षा करनी चाहिए। जो पुरुष भय से, मोह से अथवा काम से शरणागत की रक्षा नहीं करता, वह पाप का भागी होता है और सर्वत्र उसकी निन्दा होती है। यदि शरण में आया हुआ पुरुष रक्षक के सामने मारा जाता है, तो वह रक्षक का सब पुण्य लेकर चला जाता है और अपने वध का पाप उसको दे जाता है। २६–३०। शरणागत की रक्षा न करने में बड़े दोष हैं। नरक में जाना पड़ता है, संसार में निन्दा होती है और बल-वीर्य का नाश होता है। मैं महर्षि

कण्डु का वचन मानूँगा। वह धर्म, यश और स्वर्ग देनेवाला है। मेरा यह नियम है कि जो कोई दुःखित होकर 'मैं तुम्हारी शरण में हूँ' ऐसा एक बार भी कहता है, उसे मैं सब प्राणियों से अभय कर देता हूँ। अतएव हे वानरराज, मैंने इसे अभयदान दिया। वह विभीषण हो, चाहे स्वयं रावण हो, उसे मेरे पास ले आओ। ३१-३४

रामचन्द्र की यह बात सुनकर सुग्रीव मित्र-भाव से बोले—हे धर्मज्ञ, आपका ऐसा कहना कोई आश्चर्य की बात नहीं है; क्योंकि आप सदाचारी और धर्मात्मा हैं। हनुमान् ने बहुत सोच-समझकर विभीषण के विषय में राय दी है। मेरी अन्तरात्मा भी कहती है कि विभीषण का भाव शुद्ध है। धार्मिक विभीषण बुद्धिमान् हैं, वे भी हम लोगों की तरह आपके मित्र हों। और हम लोगों से भी उनकी मित्रता हो। ३५-३८

सर्ग १९

रामचन्द्र के अभयदान देने पर बुद्धिमान् धर्मात्मा विभीषण अपने अनुचरों के साथ पृथिवी की ओर देखकर आकाश से उतरे। उन्होंने रामचन्द्र को प्रणाम किया और हाथ जोड़कर कहा—मैं राक्षसराज रावण का छोटा भाई हूँ। रावण ने मेरा अपमान किया है, इसी से मैं आपकी शरण में आया हूँ। आप सबके रक्षक हैं। मैंने अपना नगर और धन और परिवार सब कुछ त्याग दिया है। मेरा जीवन, सुख और राज्य सब आपकी कृपा पर निर्भर है। विभीषण की यह बात सुनकर रामचन्द्र ने स्नेह से उनकी ओर देखा और समझाकर उनसे पूछा—हे विभीषण, तुम मुझे राक्षसों का बलाबल ठीक-ठीक बताओ। १-८

रामचन्द्र के पूछने पर विभीषण रावण का पराक्रम बताने लगे—हे राजकुमार, ब्रह्मा के वरदान से रावण को गन्धर्व, सर्प, और पक्षी आदि कोई प्राणी भी नहीं मार सकते। रावण से छोटा और मुझसे बड़ा भाई कुम्भकर्ण है। वह बड़ा तेजस्वी और पराक्रमी है; युद्ध

इन्द्र के समान है। ८—१०। हे रामचन्द्र, शायद आपने सुना हो, रावण का सेनापति प्रहस्त है। उसने कैलास पर्वत पर मणिभद्र (महादेव के गण) को परास्त किया था। रावण के ज्येष्ठ पुत्र का नाम इन्द्रजित् है। वह अभेद्य कवच और गोह के चमड़े के अंगुलित्र पहनता है। छिपकर युद्ध करता है। युद्ध में अन्तर्धान हो जाता है और शत्रुओं का विनाश कर देता है। ११—१३। इनके सिवा महोदर, महापार्श्व और अकम्पन भी रावण के सेनापति हैं। यह भी युद्ध में लोकपालों के समान पराक्रमी हैं। १४। लंका में रुधिर और मांस खानेवाले, मनमाना रूप धारण करनेवाले दस सहस्र कोटि राक्षस रहते हैं। दुष्ट रावण ने इन राक्षसों को लेकर इन्द्र, वरुण, यम और कुबेर आदि देवताओं से युद्ध किया। देवता परास्त होकर अपने स्थान छोड़कर भाग गये। १५—१६। विभीषण के मुँह से रावण का पराक्रम सुनकर रामचन्द्र कुछ सोचकर बोले—विभीषण, तुमने रावण की वीरता के जो काम बताये हैं, उनको मैं भी अच्छी तरह जानता हूँ। मैं तुमसे सत्य कहता हूँ, युद्ध में प्रहस्त, रावण और उसके पुत्रों को मारकर तुमको लंका का राजा बनाऊँगा। रावण चाहे रसातल को भाग जाय, चाहे पाताल में छिपे, और चाहे ब्रह्मा की शरण में जाय; मैं उसे जीवित न छोड़ूँगा। १७—२०। मैं अपने तीनों भाइयों की शपथ करके कहता हूँ, रावण को परिवार सहित युद्ध में मारे विना अयोध्या को न जाऊँगा। २१। रामचन्द्र की यह प्रतिज्ञा सुनकर विभीषण उनको प्रणाम करके बोले—मैं जब तक जीवित रहूँगा, राक्षसों का वध और लंका का विनाश कराने में आपकी सहायता करूँगा। रामचन्द्र ने प्रसन्न होकर विभीषण को छाती में लगा लिया और लक्ष्मण से कहा—हे वीर, समुद्र से जल लाओ और बुद्धिमान् विभीषण का अभिषेक करो। मैं इनके स्वभाव से बहुत प्रसन्न हूँ, इनको राक्षसों का राजा बनाऊँगा। रामचन्द्र की आज्ञा से लक्ष्मण ने वानरों के सामने

विभीषण का अभिषेक किया। विभीषण के ऊपर यह कृपा देखकर
वानर महात्मा रामचन्द्र की प्रशंसा करने लगे। २२–२७। उसके
हनुमान् और सुग्रीव ने विभीषण से पूछा—हम लोग किस तरह
महासागर के पार उतरें? वानरों की सेना लेकर जिस उपाय से
के पार जा सकें वह उपाय बताओ। २८–२९। धर्मात्मा विभीषण
कहा—रघुनन्दन रामचन्द्र समुद्र की शरण में जायँ। सूर्यवंशी महा
सगर ने ही इस अपार समुद्र को खोदवाया है। रामचन्द्र इसकी शरण
जायँगे तो यह इनका काम कर देगा। बुद्धिमान् विभीषण के यह कह
पर सुग्रीव ने राम-लक्ष्मण के पास जाकर विभीषण की यह सला
उनसे कही। यह बात धर्मात्मा रामचन्द्र को भी पसन्द आई। उन्हों
मुसकराकर लक्ष्मण और सुग्रीव से कहा—विभीषण की सलाह मु
उचित जान पड़ती है। हे सुग्रीव, तुम बुद्धिमान् और मन्त्रणा क
में चतुर हो। लक्ष्मण की सम्मति लेकर जो उचित समझो वह मु
बताओ। ३०–३६। वीर लक्ष्मण और सुग्रीव ने बड़े आदर से उ
दिया—हे पुरुषश्रेष्ठ, विभीषण ने जो परामर्श दिया है उसे हम लो
भी उचित समझते हैं। समुद्र में सेतु बाँधे विना देवताओं के साथ इ
भी लंका को नहीं जा सकते। विभीषण ने उचित कहा है, जि
उपाय से हम लोग रावण से सुरक्षित लंका में सेना सहित जा सकें
वह उपाय समुद्र से पूछिए। देर करने का काम नहीं है। तब राम
समुद्र के किनारे कुश बिछाकर वेदी में स्थापित अग्नि के समान
गये। ३७–४१।

सर्ग २०

राक्षसराज रावण का दूत शार्दूल नाम का एक बलवान् राक्षस
के इस पार आया और सुग्रीव से सुरक्षित वानरों की सेना देख
रावण के पास जाकर कहने लगा—महाराज, वानरों और रीछों

सेना, जो समुद्र के समान अगाध और अपरिमित है, लंका की ओर आ रही है। राजा दशरथ के पुत्र अत्यन्त रूपवान् रामचन्द्र और लक्ष्मण सीता के लिए आ रहे हैं। वे इस समय समुद्र के किनारे ठहरे हैं। १—५। मैंने देखा है, उनकी सेना चालीस कोस के गिर्द में ठहरी है। महाराज, आप शीघ्र ठीक-ठीक उसका पता लगाइए। दूत भेजकर साम-दान आदि जिस उपाय से काम सिद्ध हो सके, वह उपाय कीजिए। रावण थोड़ी देर सोचकर शुक नामक बुद्धिमान् राक्षस से बोला—हे शुक, तुम शीघ्र सुग्रीव के पास जाओ और हमारी ओर से वानरों के राजा सुग्रीव से कहो। दबना नहीं, हमारा सन्देश कोमल और मधुर वाणी से इस प्रकार कहना—हे वानरराज, तुम बलवान् हो, श्रेष्ठ कुल में तुम्हारा जन्म हुआ है, ऋक्षराज के पुत्र हो। हमसे न तुम्हारी शत्रुता है और न तुम्हारा कोई प्रयोजन है। तुमको हम भाई के समान मानते हैं। हम रामचन्द्र की स्त्री हर लाये हैं, इसमें तुम्हारी क्या हानि हुई। तुम किष्किन्धा को लौट जाओ। यह विश्वास रक्खो कि वानर लंका पर आक्रमण नहीं कर सकते। जब देवताओं और गन्धर्वों का यहाँ कुछ प्रभाव नहीं पड़ा, तो नर-वानरों की कौन गिनती है। ६—१२। रावण की आज्ञा पाकर शुक पक्षी का रूप धारण करके बड़ी शीघ्रता से आकाशमार्ग से चला। समुद्र के ऊपर-ऊपर बड़ी दूर चलकर उत्तर किनारे पर पहुँचा और आकाश में ही ठहरकर दुरात्मा रावण का सन्देश सुग्रीव से कहा। उसके मुँह से रावण का सन्देश सुनते ही वानर आकाश को कूद गये और उसे घूँसों से मारकर पकड़ लाये। वानरों की मार से व्याकुल होकर उसने रामचन्द्र से कहा—हे रघुनन्दन, दूत कहीं मारे नहीं जाते, इसलिए आप वानरों को मना कीजिए। जो दूत स्वामी के सन्देश के सिवा अपने मन से कुछ कहते हैं, वह मारने के योग्य होते हैं। मैंने ऐसा नहीं किया, फिर ये लोग मुझे क्यों मारते हैं। १३—१८। शुक के दीन वचन कहने पर रामचन्द्र ने वानरों को रोका। १९। जब वानरों ने

उसे छोड़ दिया, तब वह डर के मारे लघु रूप धारण करके आका
को चला गया और वहाँ से फिर बोला—हे सुग्रीव, तुम महापराक्र
हो। अब यह बताओ कि मैं रावण से तुम्हारा कौन सन्देश कहूँ? २०-२
सुग्रीव ने उत्तर दिया कि रावण से कहना—हे राक्षसराज, तुम हम
प्रिय अथवा उपकारी नहीं हो। तुम्हारे ऊपर दया करने का
कारण नहीं है। तुम रामचन्द्र के शत्रु हो, इसलिए हमारे भी शत्रु
और बालि की तरह वध करने के योग्य हो। हे राक्षसराज, हम अप
सेना के साथ लंका में आकर तुम्हारे पुत्रों, भाई-बन्धुओं, और सब राक्ष
के साथ तुम्हारा विनाश करेंगे। लंका को भस्म कर देंगे। तुम
इन्द्र आदि देवताओं की शरण में जाओ, सूर्य के मार्ग में छि
पाताल को भाग जाओ, महादेव के चरणों में शरण लो, कि
रामचन्द्र तुमको जीवित नहीं छोड़ेंगे। पिशाच, राक्षस, गन्धर्व,
असुर कोई भी तुम्हारी रक्षा नहीं कर सकता। तुम बूढ़े गृध्रराज जट
को मारकर वीरता का अभिमान करते हो। यह नहीं जानते कि
राम-लक्ष्मण के सामने आओगे तब तुम्हारी क्या दशा होगी।
सीता को हर ले गये हो, जानते हो वह कौन हैं। जो रामचन्द्र महा
और पराक्रमी हैं, जिनको देवता भी परास्त नहीं कर सकते, उन
तुम अभी तक नहीं जान सके। वही तुम्हारे जीवन का अ
करेंगे। २२—२८। उसी समय अंगद ने सुग्रीव से कहा—हे महारा
यह दूत बड़ा चतुर है, केवल सन्देश कहने नहीं आया है। यह
लोगों के बल की परीक्षा कर रहा है। इसने हमारी सेना का अन्दा
कर लिया है, इसलिए इसे पकड़ लेना चाहिए और लंका को न जा
देना चाहिए। २९—३०। तब सुग्रीव की आज्ञा से वानरों ने कूद
उसे फिर पकड़ लिया। जब वानरों ने बहुत पीड़ित किया, तो वह रा
महात्मा रामचन्द्र को पुकारने लगा—हे रामचन्द्र, वानरों ने मेरे
उखाड़ लिये और आँखें फोड़ दीं। यदि वानर मुझे मार डालेंगे, तो

जीवन भर का किया हुआ पाप आपके सिर होगा। उसका यह रोना सुनकर रामचन्द्र ने वानरों से कहा—यह दूत है, इसे न मारो। ३१–३५।

सर्ग २१

रामचन्द्र समुद्र के किनारे कुश बिछाकर भुजा को सिरहाने रखकर पूर्वमुख लेट गये। जो भुजा सुवर्ण के आभूषणों से भूषित रहती थी, जिसमें लाल चन्दन और अगुरु आदि सुगन्ध लगी रहती थी; जो प्रातःकाल के सूर्य के समान शोभित होती थी; साँप के समान लम्बी और मोटी थी; शय्या पर सीता के सिरहाने शोभित होती थी; युद्ध में यमदंड के तुल्य शत्रुओं का शोक बढ़ानेवाली और मित्रों को आनन्द देनेवाली थी; जिसके ऊपर ज्या की रगड़ के चिह्न बने थे; जो परिघ के समान लम्बी और मोटी थी; जिसने हज़ारों गोदान किये थे, उस भुजा पर सिर रखकर रामचन्द्र समुद्र के किनारे लेट गये। उन्होंने समुद्र के पार जाने, अन्यथा प्राण त्यागने की प्रतिज्ञा की। १–६। जब तीन दिन तक समुद्र की उपासना करते रहे और मन्दमति समुद्र ने उनको दर्शन न दिया, तब कुपित होकर समीप बैठे हुए लक्ष्मण से बोले—हे लक्ष्मण, समुद्र गर्व के मारे मेरे पास नहीं आया। शान्ति, क्षमा और प्रिय भाषण सज्जनों के गुण हैं, दुष्टों के साथ बर्तने से निष्फल जाते हैं। दुष्ट, उद्दंड और अपनी प्रशंसा करनेवाले के लिए दंड का विधान किया गया है। ऐसे पुरुषों को समझाने-बुझाने से कीर्ति नहीं होती। अतएव हे लक्ष्मण, आज हम बाणों से समुद्र के जीवों का विनाश कर देंगे। समुद्र का पानी रोक देंगे, बड़े-बड़े साँपों और मगरों का विनाश हो जायगा। शंख, सीप, मगर और मछलियों सहित समुद्र को सुखा देंगे। समुद्र ने हमको निर्बल समझ लिया है। ऐसे दुष्टों पर क्षमा करना उचित नहीं है, ऐसी

क्षमा को धिक्कार है। १०—२०। हे लक्ष्मण, हमारा धनुष और विषैले साँपों के समान बाण लाओ। हम समुद्र को सुखा देंगे और वानरों की सेना उस पार जायगी। २१—२२। आज हम लहरों से चंचल अपार समुद्र को सोख लेंगे। बड़े-बड़े दानवों से भरे हुए महासमुद्र को कँपा देंगे। २३—२४। यह कहते हुए रामचन्द्र बड़े क्रोध से धनुष लेकर, प्रलयकाल की अग्नि के समान दुर्धर्ष हो गये। और धनुष की ज्या चढ़ाकर संसार को कँपाकर तीक्ष्ण बाण छोड़ने लगे। अग्नि के समान प्रज्वलित बाणों से समुद्र में रहनेवाले साँप डर गये। प्रचण्ड वायु चलने लगी, जल-जीव कोलाहल करने लगे, बड़े वेग से उठती हुई लहरों का भयानक शब्द होने लगा, लहरों में शंख उछलने लगे, धुआँ-सा छा गया, साँप फन उठाकर चारों ओर देखने लगे, पाताल में रहनेवाले महापराक्रमी दानव भी डर गये; मगर, घड़ियाल और मछली आदि बड़े-बड़े जल-जीव उछलने लगे, विन्ध्याचल और मन्दराचल के समान ऊँची हजारों लहरें उठने लगीं; घबराये हुए जल-जीवों और लहरों का भयानक शब्द होने लगा। २५—३२। लक्ष्मण ने बाण छोड़ते हुए रामचन्द्र के पास जाकर उनका धनुष पकड़ लिया और कहा कि हे वीर, समुद्र का विनाश किये बिना भी आपका काम हो जायगा। आपके समान सज्जन पुरुष इस प्रकार क्रोध नहीं करते। आकाश से ब्रह्मर्षि और देवर्षिगण भी रामचन्द्र को निवारण करने लगे। ३३—३५।

सर्ग २२

लक्ष्मण के समझाने पर भी रामचन्द्र का क्रोध शान्त नहीं हुआ। उन्होंने समुद्र से कहा—हे समुद्र, आज हमारे बाणों से तुम्हारा जल सूख जायगा और जल के सब जीव मर जायँगे। पानी की जगह धूल उड़ेगी और वानरों की सेना पैदल उस पार जायगी। तुम हमारे

पराक्रम नहीं जानते। आज हमारे बाणों का प्रभाव देखोगे। १—४। महाबली रामचन्द्र ने यह कहकर ब्रह्मदंड के समान बाण निकाला और ब्रह्मास्त्र मन्त्र पढ़कर धनुष पर रक्खा। धनुष खींचते ही आकाश और पृथिवी में हलचल मच गई, समुद्र काँप उठे, सब लोकों में अन्धकार छा गया, पृथिवी डगमगाने लगी, तालाबों और नदियों का पानी खलभलाने लगा, सूर्य, चन्द्रमा और नक्षत्रों ने अपना मार्ग छोड़ दिया, सूर्य की किरणों से प्रकाशमान आकाश अन्धकारमय हो गया, उल्का गिरने लगी, गरजते हुए वज्र गिरने लगे, प्रचंड वायु चली, वृक्ष टूट कर गिर पड़े, बादल बड़े वेग से उड़ने लगे, वायु के वेग से पर्वतों के शिखर टूटकर गिर पड़े, चारों ओर बिजली की अग्नि उत्पन्न हो गई, डर के मारे सब प्राणी घबरा गये। समुद्र में बड़े वेग से लहरें उठने लगीं, उनमें साँप, राक्षस और अनेक प्रकार के जल-जीव उछलने लगे, समुद्र का पानी सीमा के बाहर चार कोस तक चला गया, किन्तु इतनी हलचल होने पर भी शत्रुनाशन रामचन्द्र का क्रोध शान्त नहीं हुआ। तब समुद्र देह धारण करके निकला, जैसे उदयाचल से सूर्य निकलते हैं। उसके साथ बड़े विषधर साँप थे। समुद्र का रंग वैडूर्यमणि के समान और उसके आभूषण सुवर्णमय थे। वह लाल वस्त्र और लाल माला पहने था, उसकी आँखें कमल के समान थीं। वह सब प्रकार के फूलों से बनी हुई माला सिर पर धारण किये था। उसके सुवर्णमय आभूषणों में समुद्र से उत्पन्न रत्न जड़े थे। ५—२०। धातुओं से शोभित हिमालय पर्वत के समान समुद्र उठती हुई लहरें से शोभित था। गंगा और सिन्धु आदि बड़ी-बड़ी नदियाँ आकर उसमें मिली थीं। समुद्र रामचन्द्र के पास आया और हाथ जोड़कर बोला—हे रघुनन्दन! पृथिवी, वायु, आकाश, जल और अग्नि, ये सदा प्रकृति के नियमानुसार ही रहते हैं। अगाध और दुर्लंघ्य रहना ही हमारा स्वभाव है। यदि हम अगाध न रहें और जो चाहे आसानी से पार उतर जाय, तो यह प्रकृति के विरुद्ध है।

हे राजकुमार ! हम किसी कामना, लोभ अथवा भय से, मगर औ
घड़ियाल आदि जल-जीवों से युक्त जल को स्तम्भित नहीं कर सक
किन्तु हे प्रभो, हम आपको उपाय बतावेंगे, उस उपाय से आप पार उ
वह हम सहने को तैयार हैं। जब आपकी सेना उतरेगी, तब जल-जं
उनका भक्षण नहीं करेंगे। रामचन्द्र ने कहा—हे समुद्र, यह ब्रह्मा
निष्फल नहीं हो सकता, इसे तुम्हारे किस स्थान पर छोड़ें ? समुद्र ने
भयानक बाण को देखकर उत्तर दिया—संसार में जैसी आपकी ख्याति
वैसे ही हमारे उत्तर-तट पर द्रुमकुल नामक पुण्यवान् स्थान प्रसिद्ध है
वहाँ उग्र स्वभाव के बड़े पापी आभीर आदि दस्युगण रहते हैं। वे हमा
जल पीते हैं, और हमको उन दुष्टों का पापरूप स्पर्श सहन नहीं है
इसलिए हे रामचन्द्र, यह अमोघ बाण वहीं छोड़ दीजिए। २१-३
समुद्र की यह बात सुनकर रामचन्द्र ने ब्रह्मास्त्र छोड़ दिया। जि
स्थान पर वज्र-तुल्य वह बाण गिरा, वह स्थान मरुकान्तार नाम
प्रसिद्ध हुआ। पृथिवी बाण से पीड़ित होकर काँपने लगी। बड़ा भयान
शब्द हुआ। बाण पृथिवी में धँस गया, उस मार्ग से जल निक
आया। जिस मार्ग से जल निकला, उसका नाम व्रणकूप हुआ
इतना जल निकला कि वह दूसरे समुद्र के समान दिखाई दिया। ३२-३
पहले जो जल वहाँ था वह सूख गया। वह स्थान मरुकान्तार नाम
प्रसिद्ध है। देवतुल्य पराक्रमी रामचन्द्र ने उस देश को वरदान दि
कि इस देश में पशुओं के लिए घास बहुत हो, रोग कम हों, फल-मू
रस, तेल, घी, और दूध बहुत हो, अनेक प्रकार की सुगन्धित ओषधि
और अन्य उत्तम वस्तुएँ उत्पन्न हों। रामचन्द्र के वरदान से वह ब
अच्छा देश हो गया। उसके बाद सब शास्त्रों के जानकार रामचन्
समुद्र ने फिर कहा—हे सौम्य, नल नाम का वानर विश्वकर्मा का
है। विश्वकर्मा ने इसे वरदान दिया है। यह हमारे ऊपर सेतु बाँध स
है। यह सेतु बनावे, हम उसे अपने ऊपर धारण करेंगे। समुद्र यह

कर अन्तर्धान हो गया । नल खड़े होकर महापराक्रमी रामचन्द्र से बोले—समुद्र ने ठीक कहा है, मैं पिता की कृपा से इस अपार समुद्र में सेतु बाँध सकता हूँ । ३९—४४ । संसार में दंड ही सब उपायों से श्रेष्ठ है । कृतघ्न पुरुषों पर क्षमा, दान और शान्त वचन का प्रभाव नहीं पड़ता । देखिए, यह अगाध समुद्र रामचन्द्र के दंड के भय से सेतु बाँधने का उपाय बता गया । जो हो, आज समुद्र के मुँह से यह बात सुनकर मुझे पुरानी बात याद आ गई । मेरे पिता ने मेरी माता को वरदान दिया था कि तुम हमारे अनुरूप पुत्र प्राप्त करोगी ।४५—४७। मैं विश्वकर्मा का पुत्र हूँ और उन्हीं के समान शिल्पी हूँ । किसी के पूछे विना अपना गुण अपने मुँह से नहीं कह सका । मैं पिता की कृपा से समुद्र में सेतु बाँध सकता हूँ । अब सेतु बाँधने में विलम्ब न करना चाहिए, वानर सामान इकट्ठा करें । ४८—४९ ।

तब रामचन्द्र की आज्ञा से हज़ारों वानर सब ओर दौड़ गये । पर्वतों पर जाकर बड़े-बड़े वृक्ष उखाड़ लाये और समुद्र में फेंकने लगे । साल, अश्वकर्ण, धव, बाँस, कुटज, अर्जुन, ताल, तिलक, तिनिश, बेल, सप्तपर्ण, कर्णिकार, आम और अशोक आदि के वृक्षों से समुद्र को भर दिया । कोई वृक्षों को जड़ से उखाड़कर इन्द्रकेतु के समान उठा लाया और कोई ऊपर से ही तोड़ लाया । ताल, अनार, नारियल, बहेड़ा, करील, बकुल और नींब आदि के पेड़ लाकर समुद्र में छोड़ने लगे ५०—५५। महाबली वानरों ने पर्वत की शिलाएँ भी लाकर समुद्र में छोड़ दीं । समुद्र काँपने लगा । पर्वतों के फेंकने से समुद्र का पानी बड़े ज़ोर से आकाश को उछलता और गिरता था । सेतु की सिधान के लिए बहुत से वानर सौ योजन लम्बा सूत पकड़कर खड़े हो गये । नल सेतु बाँधने लगे और हज़ारों वानर उनकी सहायता करने लगे । तृण, काठ और पर्वतों की शिलाओं से समुद्र को भर दिया । किसी ने फले-फूले वृक्षों को उखाड़कर समुद्र में डाल लिया । बहुत-से वानर

पर्वत, शिला और बड़े-बड़े शिखर लिये दौड़ते हुए दानवों के समान देख पड़ते थे। पर्वत और शिलाओं के फेंकने से समुद्र में भयानक शब्द होता था। शीघ्र काम करनेवाले वानरों ने पहले दिन चौदह योजन, दूसरे दिन बीस योजन, तीसरे दिन इक्कीस योजन, चौथे दिन बाइस योजन और पाँचवें दिन तेइस योजन सेतु बाँधा। विश्वकर्मा के पुत्र बलवान् नल ने पाँच दिन में समुद्र में सेतु बाँध दिया। वे अपने पिता के समान इस काम में निपुण थे। उनका बनाया हुआ सुन्दर सेतु समुद्र में वैसे ही शोभित हुआ जैसे आकाश में स्वाती-पथ शोभित होता है। उसे देखने के लिए देवता, गन्धर्व, सिद्ध और ऋषि लोग आकाश में आये। सेतु दस योजन चौड़ा और सौ योजन लम्बा था। नल के बनाये हुए सेतु को देखकर देवता और गन्धर्व बड़े विस्मित हुए। वानर प्रसन्न होकर उछलने, कूदने और गरजने लगे। समुद्र में सेतु बाँधना बड़ा अद्भुत काम था; उसे देखकर सभी प्राणी चकित हो गये। असंख्य वानरों ने सेतु बाँधकर उस पार जाने का निश्चय किया। वह सेतु समुद्र की सीमा के समान शोभित हुआ। सबसे पहले विभीषण अपने चारों मन्त्रियों के साथ समुद्र के उस पार जाकर खड़े हो गये। ५६—७६। तब सुग्रीव ने रामचन्द्र से कहा—आप हनुमान् की पीठ पर और लक्ष्मण अंगद की पीठ पर बैठ लें। ये दोनों वीर बहुत शीघ्र उस पार पहुँचा देंगे। मार्ग लम्बा है, आपको पैदल चलने में बहुत समय लगेगा। ७७—७८। धर्मात्मा रामचन्द्र और लक्ष्मण धनुष-बाण लेकर सुग्रीव के साथ चले। सेना उनके पीछे चली। कुछ सेतु के ऊपर, कुछ समुद्र में तैरते हुए, और कोई गरुड़ के समान आकाश मार्ग से चले। सेना का कोलाहल समुद्र के शब्द से मिलकर और भी अधिक भयानक हो गया। वानरों की सेना समुद्र के उस पार जाकर ऐसे स्थान में ठहरी, जहाँ मूल-फल और पानी मिल सकता था। रामचन्द्र का यह प्रभाव देखकर देवता, सिद्ध, चारण और महर्षियों ने

आकर शुद्ध जल से उनका अभिषेक किया, और आशीर्वाद दिया कि हे राजन्, आप शत्रुओं को जीतें और समुद्र पर्यन्त पृथिवी का बहुत दिनों तक पालन करें। ७६—८५।

सर्ग २३

वानरों की सेना समुद्र के उस पार पहुँच गई। वहाँ अनेक प्रकार के अशकुन देखकर रामचन्द्र ने लक्ष्मण से कहा—हे लक्ष्मण, वानर और रीछ वन के फल खाकर और ठंढा पानी पीकर सेना की व्यूह बना लें। भयानक अशकुन देख पड़ते हैं। शीघ्र ही राक्षसों और वानरों का युद्ध होगा। वायु प्रतिकूल चलती है, पृथिवी काँप रही है, पर्वत हिल रहे हैं, वृक्ष टूटकर गिर रहे हैं, बादल गरजते हैं और रुधिर मिला हुआ पानी बरसाते हैं। १—५। सन्ध्या लाल चन्दन के समान रूप धारण करके भयानक हो गई है। सूर्य की किरणें अग्नि-वर्ण हो गई हैं, सियार और गिद्ध सूर्य की ओर मुँह किये हुए बोल रहे हैं, ये महाभय उत्पन्न करते हैं। चन्द्रमा का प्रकाश लाल और काले रंग का हो गया है; मानों वह संसार का विनाश करने के लिए उदय हुआ है। सूर्य के चारों ओर लाल मंडल देख पड़ता है। हे लक्ष्मण! देखो, सूर्य-मंडल में एक काला चिह्न भी दिखाई देता है। धूलि के मारे नक्षत्र छिप गये हैं, यह भी महाप्रलय का चिह्न है। ६—१०। कौआ, बाज और गिद्ध अकस्मात् ऊपर से गिर पड़ते हैं। सियारिनें भयानक शब्द बोलती हैं, जिसे सुनकर डर मालूम होता है! इन लक्षणों से सूचित होता है कि वानरों और राक्षसों के चलाये हुए शूल, खड्ग और पर्वतों से पृथिवी भर जायगी; मांस और रुधिर का कीचड़ हो जायगा। ११—१२। अब शीघ्र ही वानरों की सेना लेकर रावण से सुरक्षित लंका को चलना चाहिए। लक्ष्मण से यह कहकर शत्रुनाशन रामचन्द्र ने धनुष लेकर लंका को चलने की तैयारी की। विभीषण, सुग्रीव और अन्य सब वानर शत्रुओं का वध करने के लिए गरजते

हुए चले। वीर वानरों का यह उत्साह देखकर रामचन्द्र को बड़ा हर्ष हुआ। १३–१६।

सर्ग २४

सुग्रीव की अध्यक्षता में वानरों की सेना वैसी ही शोभित हुई, जैसे शरद्-पूर्णिमा की रात में निर्मल चन्द्रमा के साथ नक्षत्रों की शोभा होती है। समुद्र के समान सेना के चलने से पृथिवी काँपने लगी। वानरों ने लंका में बजते हुए मृदंग और नगाड़े का भयानक शब्द सुना। वह शब्द वानर न सह सके और प्रसन्न होकर बड़े ज़ोर से गरजने लगे। राक्षसों ने आकाश में गरजते हुए, बादलों के समान, वानरों के गरजने का शब्द सुना। चित्र-विचित्र ध्वज-पताकाओं से शोभित लंका को देखकर रामचन्द्र को सीता का स्मरण हुआ। मन में सोचने लगे कि इसी लंका में मृगशावकनयनी सीता को रावण ने क़ैद कर रक्खा है। जैसे रोहिणी को मंगल ग्रह दुःख देता है, वैसे ही इस सीता को रावण दुःख दे रहा है। वे लम्बी और गरम साँस छोड़-कर लक्ष्मण से समय के अनुकूल वचन बोले—हे लक्ष्मण! देखो, पर्वत के ऊपर विश्वकर्मा की बनाई लंकापुरी मन की कल्पना के समान शोभित है। जान पड़ता है, मानों किसी ने आकाश में चित्रकारी की है। लंका छोटी होने पर भी बड़े-बड़े ऊँचे घरों से शोभित है, मानों सफ़ेद बादलों से आकाश ढका हुआ है। १–१०। यहाँ बहुत-से सुन्दर बग़ीचे चित्ररथ वन के समान हैं। वृक्ष फूलों और फलों से शोभित हैं, उन पर अनेक प्रकार के पक्षी बोलते हैं। देखो, पक्षी कैसे प्रसन्न बैठे हैं, फूलों में भ्रमर छिपे हैं, कोयल बोलती है और ठंढी हवा चल रही है। ११–१२। फिर उन्होंने वानरों की सेना को कई भागों में बाँट दिया और सैनिकों को आज्ञा दी—महाबली अंगद और नील अपनी सेना लेकर बीच में ठहरें; महाबलवान् ऋषभ अपनी सेना के साथ सेना के दाहिनी ओर रहें और मतवाले हाथी के समान दुर्धर्ष गन्धमादन

अपनी सेना लेकर सेना के बाईं ओर रक्षा करें। हम और लक्ष्मण सावधानी से सेना के पीछे रहेंगे। जाम्बवान्, सुषेण और वेगदर्शी, ये तीन बलवान् वानर सेना की कुक्षि की रक्षा करें। कपिराज सुग्रीव अंगद और नील के पीछे रहें। जैसे वरुण लोक के पश्चिम भाग की रक्षा करते हैं, वैसे ही सुग्रीव सेना के पीछे के भाग की रक्षा करें। १३–१८। सेना इस प्रकार विभक्त होकर आकाश में बादलों के समान शोभित हुई। वानर पर्वतों के शिखर और बड़े-बड़े वृक्ष लेकर युद्ध के लिए खड़े हो गये। १९–२०। वानरों ने पर्वत के शिखर फेंककर या घूँसों से तोड़कर लंका का विध्वंस करना चाहते थे। महातेजस्वी रामचन्द्र ने सुग्रीव से कहा—हे सखे, सेना नियुक्त कर दी गई है, अब शुक को छोड़ दो। रामचन्द्र की आज्ञा से सुग्रीव ने रावण के दूत शुक को छोड़ दिया। वानरों से पीड़ित और डरा हुआ शुक राक्षसराज रावण के पास गया। रावण ने मुसकराकर उससे पूछा—तुम्हारे पंख क्या हुए? तुमको चंचल वानरों ने पकड़ तो नहीं लिया? रावण के यह पूछने पर घबराया और डरा हुआ शुक अपना हाल कहने लगा—मैं आपकी आज्ञा से समुद्र के उत्तर के किनारे पर गया और मधुर वचनों से आपका सन्देश कहने लगा। देखते ही वानरों ने क्रुद्ध होकर मुझे पकड़ लिया। वे घूँसों से मारने और मेरे पंख उखाड़ने लगे। वानरों ने न मुझसे कुछ पूछा और न मुझे कुछ कहने दिया; वे स्वभाव से ही क्रोधी हैं। मैं केवल इतना ही मालूम कर सका कि विराध, कबन्ध और खर का वध करनेवाले धनुर्धर रामचन्द्र सुग्रीव के साथ सीता को लेने के लिए आये हैं। वे समुद्र में सेतु बाँधकर समुद्र के इस पार उतर आये और राक्षसों का संहार करने के लिए लंका के निकट ठहरे हैं। उनके साथ असंख्य वानरों और रीछों की सेना है। बादलों और पर्वतों के समान सेना लंका के किनारे पड़ी है। २१–३२। जैसे देवताओं और दानवों में सन्धि नहीं हुई थी, वैसे ही वानरों और राक्षसों में सन्धि नहीं हो सकती।

वानरों की सेना लंका की चहारदीवारी के पास आ गई है। अब आप या तो रामचन्द्र की सीता उनको दे दीजिए, अथवा उनसे युद्ध कीजिए। ३३—३४। शुक की यह बात सुनकर क्रोध के मारे रावण की आँखें लाल हो गईं। वह उसे मानों भस्म किये देता था। रावण बड़े गर्व से बोला—देवता, गन्धर्व और दानव भी यदि हमसे युद्ध करें, तीनों लोकों का यदि भय हो, किन्तु हम सीता को नहीं देंगे। वह समय कब आवेगा, जब हमारे बाण रामचन्द्र के ऊपर उसी प्रकार दौड़ेंगे, जैसें फूले हुए वृक्षों की ओर भ्रमर दौड़ते हैं। जैसे जलती हुई मशालों से हाथी को भयभीत किया जाता है, वैसे ही हम रामचन्द्र को बाणों से पीड़ित करके कब भयभीत करेंगे। जैसे सूर्य उदय होते ही नक्षत्रों का तेज नष्ट कर देते हैं, वैसे ही हम राक्षसों की सेना लेकर रामचन्द्र की सेना का कब विनाश करेंगे। हमारा वेग समुद्र के समान और बल पवन के समान है; यह रामचन्द्र नहीं जानते, नहीं तो हमसे युद्ध करने की इच्छा न करते। ३५—४०। हमारे बाणों को, जो विषैले साँपों के समान हैं, रामचन्द्र ने कभी नहीं देखा इसी से हमारे साथ हमसे युद्ध करना चाहते हैं। उन्होंने युद्ध में हमारा बल कभी नहीं देखा, हमारे धनुष की ज्या का शब्द कभी नहीं सुना, जिसे सुनकर निर्बल पुरुष डर जाते हैं। मैं शीघ्र ही शत्रु-पक्ष की सेना में पैठकर धनुष की भेरी बजाऊँगा। मुझे इन्द्र, वरुण, यम और कुबेर भी युद्ध में पराजित नहीं कर सकते। ४१—४४।

सर्ग २५

उसके बाद रावण अपने मन्त्री शुक और सारण से बोला—समुद्र बहुत विस्तृत और अथाह है, उसमें सेतु बाँधना और वानरों की सेना का इस पार उतरना असम्भव है। मुझे इस बात का विश्वास नहीं होता। खैर, जो कुछ हो, तुम गुप्तरूप से वानरों की सेना में जाओ और वानरों

को गिन आओ। जो वानर रामचन्द्र और सुग्रीव के मन्त्री हों; बलवान् और अगुआ हों; जिस तरह समुद्र में सेतु बाँधा गया हो; जहाँ वानरों की सेना पड़ी हो, यह सब देख आओ। रामचन्द्र और लक्ष्मण का बल-वीर्य, उद्योग और अस्त्र चलाने की निपुणता मालूम करो।१—८। रावण की आज्ञा से शुक और सारण वानर का रूप धारण करके वानरों की सेना में गये। सेना को देखकर उनको बड़ा भय हुआ। वे वानरों की गिनती न कर सके। वानरों की सेना पर्वत के शिखरों पर, झरनों के किनारे, कन्दराओं में और समुद्र के तट पर पड़ी हुई थी। बहुत-से वानर समुद्र उतर रहे थे, बहुत उतर आये थे। वे भयानक शब्द से गरजते थे। शुक और सारण ने वानरों की सेना को अविचल समुद्र के समान देखा। ९—१२। वे सेना को देखते हुए घूमते थे, उसी समय महातेजस्वी विभीषण ने उनको देखा और पकड़ लिया। रामचन्द्र के सामने ले जाकर विभीषण ने कहा—हे शत्रुनाशन, ये दो निशाचर लंका में रहते हैं, राक्षसराज रावण के मन्त्री हैं; एक का नाम शुक और दूसरे का सारण है। हमारी सेना का भेद लेने के लिए आये हैं। १३—१४। रामचन्द्र को देखते ही शुक और सारण बहुत डरे, वे अपने जीवन से निराश हो गये। हाथ जोड़कर रामचन्द्र से बोले—हे सौम्य, मुझे रावण ने भेजा है, मैं आपकी सेना देखने के लिए आया हूँ। १५—१६। करुणानिधान रामचन्द्र ने मुसकराकर उत्तर दिया—देखो, हम युद्ध के लिए तैयार हैं। तुमने यदि हमारी सेना को देख लिया हो, यदि तुम्हारा काम हो गया हो, तो स्वाधीनता से लौट जाओ और यदि समूची सेना न देख सके हो, तो हमारे मित्र विभीषण तुमको दिखा दें। १७—१९। तुम अपने प्राणों का सन्देह न करो। दूत यदि अस्त्र-शस्त्र लेकर भी आवे, तो भी हम उसका वध करना उचित नहीं समझते। हे विभीषण, यद्यपि शुक और सारण कपट-वेश से हमारी सेना में घुस आये हैं, तो भी इनके साथ अन्याय

न करो। ये निर्विघ्न लंका में जाकर रावण से हमारा यह सन्देश कहें कि तुम जिस बल के गर्व से सीता को हर लाये हो वह अपना, अपने भाई-बन्धुओं और सेना का बल हमको दिखाओ। हम कल प्रातःकाल लंका की चहारदीवारी और फाटक को बाणों से ढक देंगे और राक्षसों का विनाश कर देंगे। २०—२४। जैसे इन्द्र ने कुपित होकर दानवों पर वज्र चलाया था, वैसे ही हम तुम्हारी सेना पर बाणों की वर्षा करेंगे। २५। रामचन्द्र के यह कहने पर शुक और सारण रामचन्द्र की जय कहकर रावण के पास गये और उससे कहने लगे—हे राक्षसेश्वर, वानरों की सेना में प्रवेश करते ही विभीषण ने हमको देख लिया और पकड़कर मार डालने के लिए रामचन्द्र के पास ले गये। किन्तु दयालु रामचन्द्र को दया आई; उन्होंने हम लोगों को छोड़ दिया। लोकपाल के समान अतुल पराक्रमी रामचन्द्र, लक्ष्मण, विभीषण और सुग्रीव ये चारों महात्मा एक स्थान पर बैठे थे। अन्य वानरों का कोई काम ही नहीं है; यही चारों वीर समूची लंका का विध्वंस कर सकते हैं। हमने रामचन्द्र का जो रूप देखा है, उनके बाणों का जो परिचय सुना है, उससे तो हमारा यह अनुमान है कि लक्ष्मण, विभीषण और सुग्रीव की भी कोई आवश्यकता नहीं, अकेले रामचन्द्र ही लंका का विनाश कर देंगे। २६—३२। जिस सेना के सेनापति सुग्रीव हैं, राम और लक्ष्मण जिसके रक्षक हैं, उसे देवता और दानव भी परास्त नहीं कर सकते। जो हो, वानरों की सेना युद्ध के लिए उत्सुक खड़ी है, वह बलवान् है, अपने शत्रु को परास्त करना चाहती है, अतएव उससे अकारण विरोध न करके रामचन्द्र को उनकी सीता दे दीजिए। ३३—३४।

सर्ग २६

सारण की यह बातें सुनकर रावण बोला—दूसरों की तो बातें

क्या है, यदि देवता, दानव और गन्धर्व भी हमसे युद्ध करने के लिए आवें, तो भी हम उनके भय से सीता को नहीं देंगे। हे सौम्य, वानरों ने तुमको बहुत पीड़ित किया है। तुम उनसे डर गये हो, इसी से सीता को दे देना उचित समझते हो। सारण को यह कठोर वचन कहकर वानरों की सेना देखने के लिए रावण घर के कोठे पर चढ़ गया और शुक-सारण को भी अपने साथ ले गया। उसने देखा कि समुद्र, पर्वत और वन, वानरों की सेना से भरा हुआ है। वह शुक और सारण से पूछने लगा—इनमें कौन वानर प्रधान और बलवान् हैं? कौन बड़े उत्साह से युद्ध के लिए अग्रसर होते हैं? सुग्रीव किसकी बात सुनते हैं और कौन यूथपति हैं? १—६। यदि तुम जानते हो तो वानरों का प्रभाव ठीक-ठीक बताओ। राक्षसराज के यह पूछने पर सारण प्रधान वानरों का परिचय देने लगा। यह जो लंका की ओर मुँह किये गरज रहा है, यह एक लाख वानरों का यूथपति है। इसके गरजने से चहारदीवारी और फाटक सहित समूची लंका काँप उठती है। सुग्रीव का सेनापति यही है, इसका नाम नील है। यह जो बलवान् वानर ताल ठोंकता हुआ घूम रहा है, जिसका मुँह लंका की ओर है, क्रोध के मारे जिसकी दृष्टि कुटिल है, जिसका आकार पर्वत के शिखर के समान और रंग कमल की रज के समान है, क्रोध के मारे बार-बार पूँछ पटकता है और जिसकी पूँछ पटकने का शब्द सब दिशाओं में फैल गया है, यह युवराज अंगद है। यह आपको युद्ध के लिए ललकार रहा है। यह बालि का पुत्र, अपने पिता के समान बलवान् है। सुग्रीव का आज्ञाकारी और प्रिय है। जैसे इन्द्र के लिए वरुण युद्ध की तैयारी करते हैं, वैसे ही रामचन्द्र के लिए इसने युद्ध का आयोजन किया है। १०—१८। रामचन्द्र के हितैषी हनुमान् ने सीता को देखने के लिए यहाँ आकर लंका की जो दुर्गति की थी, वह इसी की बुद्धि का प्रभाव था। यह बलवान् वानर असंख्य वानरों का नायक होकर आपका विनाश करने के लिए आया

है। १६–२०। यह जो अंगद के पीछे खड़ा है, इसी ने समुद्र में से
बाँधा है, इसका नाम नल है। यह बहुत बड़ी सेना के साथ युद्ध की
प्रतीक्षा कर रहा है।२१। ये जो असंख्य वानर रोयें फुलाये बड़े उत्सा
से गरज रहे हैं, क्रोध के मारे जिनका रूप भयानक हो गया है, वे स
इसी के सैनिक हैं। यह वानर लंका का विनाश कर देना चाह
है। इसकी देह वज्र के समान और इसका पराक्रम असह्य है
यह बुद्धिमान् वानर तीनों लोकों में प्रसिद्ध है। देखो, यह जो बड़े ह
से सेना के विभाग करता हुआ फुर्ती से सुग्रीव के पास जाता औ
फिर लौट आता है। २२–२४। यह गोमती के किनारे संरोच
पर्वत पर राज्य करता है, इसका नाम कुमुद है। जिसकी लम्बी पूँछ
रंग-बिरंगे लम्बे बाल छिटके हुए हैं, जिसके साथ एक लाख वानर है
यह सदा प्रसन्न रहता है और युद्ध की इच्छा किया करता है। इसक
नाम चंड है। यह भी अपनी ही सेना से लंका का विनाश करन
चाहता है। २५–२८। यह जो सिंह के समान वानर है, जिसक
गर्दन पर बड़े-बड़े बाल हैं, बार-बार लंका की ओर इस तरह देखत
है, मानों दृष्टि से ही इसे भस्म कर देगा। यह विन्ध्याचल, नीलगिरि
सह्य और सुदर्शन पर्वत पर रहता है। इसका नाम रम्भ है। इसके सा
तीस करोड़ महापराक्रमी वानर हैं। यह भी अपनी ही सेना से लंक
का विध्वंस करना चाहता है। २६–३२। यह जो बार-बार का
सिकोड़ता और जँभाई लेता है, इसे मृत्यु का भी डर नहीं है। यह सेन
की सहायता भी नहीं चाहता। क्रोध के मारे काँप रहा है, बार-बा
तिरछी निगाह से देखता है। देखिए, यह महाबली वानर अपनी पूँ
किस प्रकार घुमा रहा है। यह साल्वेम पर्वत पर रहता है। इसका ना
शरभ है। राजन्, चालीस लाख यूथप वानर इसके साथ हैं। ३३–३
यह जो सेना के बीच में देख पड़ता है, देवताओं के बीच में इन्द्र के
समान अथवा आकाश को घेरे हुए मेघ के समान है। जिसका श

नगाड़े के समान सुन पड़ता है; युद्ध की इच्छा से वानरों के बीच में गरजता है, यह पारियात्र पर्वत पर रहता है। इसके साथ युद्ध करना बहुत कठिन है। इसका नाम पनस है। पचास लाख यूथप वानर इसके साथ रहते हैं, जिनके यूथ अलग-अलग हैं। ३७–४०। जिसकी सेना समुद्र के किनारे दूसरे समुद्र के समान देख पड़ती है, इसका नाम विनत है। यह वेणा नदी के किनारे रहता है। इसके साथ साठ लाख वानर हैं। ४१–४३। यह जो युद्ध के लिए आपको ललकार रहा है, इसका नाम क्रथन है। इसकी सेना कई यूथों में बँटी हुई है। इसके सैनिक बड़े बलवान् हैं। ४४। यह जो गेरू के समान लाल रंग का वानर अपने बल के गर्व से सब वानरों का निरादर करता है, इसका नाम गवय है। यह बड़ा तेजस्वी और क्रोधी है। क्रोध से आपका नाम लेकर इधर दौड़ता है। इसके साथ साठ लाख वानर हैं। यह अपनी ही सेना से लंका का विध्वंस करना चाहता है।४५–४६। हे राक्षसेश्वर! इन वीर और दुर्धर्ष वानरों की गिनती नहीं की जा सकती। प्रत्येक यूथपति की सेना में बहुत-से यूथ हैं। ४७।

सर्ग २७

मैंने जिन वीर यूथपों को देखा है, जो रामचन्द्र के लिए अपने प्राणों की रक्षा नहीं करते, उनका बखान करता हूँ, सुनिए। यह जो वानर सूर्य की किरणों के समान चमकता है, जिसकी पूँछ में लाल, पीले, काले और सफ़ेद कई रंग के बाल हैं; जो बहुत लम्बा है; जिसके चलने से पृथिवी काँपती है, इस यूथपति का नाम हर है। इसके पीछे एक लाख वानर वृक्ष लिये हुए लंका पर चढ़ाई करने के लिए तैयार हैं। इस सेना का प्रत्येक यूथपति अपने पराक्रम से लंका का विनाश करना चाहता है। ये सब सुग्रीव के आज्ञाकारी हैं। ये जो बादलों के समान काले वानर आप देखते हैं, जिनका रंग काजल के समान है, इनकी

संख्या नहीं की जा सकती। यह पर्वतों पर और नदियों के किनारे रहते हैं। १–६। इनका सेनापति इन्हीं के बीच में है। जैसे बादलों से घिरा हुआ आकाश शोभित होता है, वैसे ही यह यूथपति अपनी सेना के बीच में शोभित है। देखिए, इस महाकाय वानर की आँखें कैसी भयानक हैं! यह ऋक्षवान् पर्वत पर रहता है और नर्मदा का पानी पीता है। इस यूथपति का नाम धूम्र है। पर्वत के समान इसके भाई को भी देखिए। इसका आकार और पराक्रम धूम्र के ही समान है, इसका नाम जाम्बवान् है। ७–१०। यह गुरुजनों का आज्ञाकारी और बहुत शान्त है। युद्ध में इसका पराक्रम कोई नहीं सह सकता। देवराज इन्द्र ने इससे मित्रता की है। देवासुर-संग्राम में इसे कई वरदान मिले हैं। इसके सैनिक बड़ी-बड़ी शिलाएँ फेंकते हैं, वे मृत्यु से भी नहीं डरते। इन वानरों की देह में राक्षसों और पिशाचों के समान बड़े-बड़े बाल हैं। ये अग्नि के समान तेजस्वी हैं। इनकी संख्या नहीं की जा सकती। ११–१४। राजन्, यह जो बड़ा फुर्तीला वानर आपके सामने देख पड़ता है, जिसकी ओर बहुत-से वानर देख रहे हैं, यह बलवान् यूथप दम्भ है। यह इन्द्र की उपासना करता है। यह महाकाय वानर एक योजन ऊँचा और इतना ही मोटा है। चौपायों में इसके समान लम्बा-चौड़ा कोई जानवर आज तक नहीं देखा गया। सुनते थे कि वानरों के पितामह सन्नादन ने एक बार इन्द्र से युद्ध किया था। इन्द्र उसे परास्त नहीं कर सके थे। यह वही यूथपों का यूथपति सन्नादन है। १५–१६। यह जो इन्द्र के समान पराक्रमी वानर आप देखते हैं, यह अग्नि का पुत्र है और गन्धर्व की कन्या से उत्पन्न हुआ है। इसने देवासुर-संग्राम में देवताओं की सहायता की थी। आपके भाई कुबेर जिस पर्वत पर रहते हैं, जहाँ किन्नरों का निवास है, उसी कैलास पर्वत पर यह वानर भी रहता है। युद्ध में इसके समान पराक्रमी दूसरा कोई नहीं है। इसका नाम क्रथन है। इसके साथ असंख्य वानर हैं।

यह अपनी सेना से ही लंका का विनाश करना चाहता है।२०—२४। यह जो वानर लंका की ओर देख रहा है, यह हाथियों और वानरों के वैर का स्मरण करके हाथियों के यूथपों को भयभीत करता हुआ गंगा के किनारे रहता है, और जंगली हाथियों से युद्ध करता है। इसके साथ दस करोड़ वानर हैं, वे सब बड़े पराक्रमी और योद्धा हैं। इसका नाम प्रमाथी है। जैसे वायु बादलों को उड़ा देती है, वैसे ही यह शत्रुओं को भगा देता है। यह जो वायु के साथ धूलि उड़ती हुई आप देख रहे हैं, यह इसी की सेना से उड़ रही है।२५—३१।राजन्, यह जो काले मुँहवाले भयानक पराक्रमी लंगूरी वानर आप देखते हैं, इनका यूथपति गवाक्ष है। इसकी सेना में एक करोड़ वानर हैं। यह अपने पराक्रम से ही लंका का विध्वंस करना चाहता है।३२—३३। जहाँ सब ऋतुओं में वृक्ष फलते हैं, जहाँ भ्रमर हमेशा गूँजते हैं, जिस पर्वत का रंग सूर्य के तेज के समान है, और उसी रंग के पक्षी भी हैं; जहाँ महात्मा-ऋषिगण सदा निवास करते हैं, उस स्थान को कभी नहीं छोड़ते ; जहाँ वृक्ष हमेशा फूलते-फलते और सबकी कामनाएँ पूरी करते हैं और जिस श्रेष्ठ पर्वत पर मधु बहुत होती है, उस मेरु पर्वत पर यह वानरश्रेष्ठ यूथपति केसरी रहता है। जैसे राक्षसों में आप श्रेष्ठ हैं, वैसे ही साठ हज़ार पर्वतों में मेरु पर्वत श्रेष्ठ है। वहाँ पैने दाँत और नखवाले सफ़ेद, लाल, पीले और भूरे रंग के बहुत-से वानर रहते हैं। उनके सिंह के जैसे चार-चार दाँत हैं और बाघ के समान बलवान् हैं। वे सब साँप के समान क्रोधी और मतवाले हाथी के समान बलवान् हैं। उनकी लम्बी पूँछ में बाल बहुत हैं। बादलों के समान गरजते हैं और पर्वतों के समान दृढ़ हैं। इनकी आँखें गोल और पीली हैं। यह लंका की ओर ऐसी भयानक दृष्टि से देखते हैं, मानों दृष्टि से ही इसे विध्वंस कर देंगे।३४—४२। यह जो बहुत बड़ी सेना के बीच में महाबली वानर देख पड़ता है, यह बुद्धिमान् वानर सूर्य का

उपासक है। इसका पराक्रम संसार में प्रसिद्ध है; इसका नाम शतब[illegible]
है। यह भी अपनी सेना से ही लंका को नष्ट करना चाहता है। [illegible]
बलवान् वानर रामचन्द्र का प्रिय करने के लिए अपने प्राण पर [illegible]
दया नहीं करता। ४३—४५। राजन्! गय, गवाक्ष, गवय, नल और
नील नामक प्रत्येक यूथपति के साथ दस-दस करोड़ महाबली वानर
हैं। इनके सिवा विन्ध्याचल पर रहनेवाले और भी असंख्य फुर्तीले
वानर हमने देखे हैं; किन्तु उनकी गिनती नहीं कर सके। महाराज
ये सब वानर पर्वताकार और महापराक्रमी हैं। दम भर में बड़े-बड़े
पर्वतों समेत पृथिवी को विदीर्ण कर सकते हैं। ४६—४८।

सर्ग २८

उसके बाद शुक बोला—राजन्, मतवाले हाथियों के समान,
बरगद के पेड़ों के समान, गंगा के निकटवर्ती साल-वृक्षों के समान जिन
वानरों को आप देखते हैं, ये बड़े बलवान्, अपनी इच्छानुसार रूप धारण
करनेवाले दानवों के समान महाबली और युद्ध में देवताओं के समान
पराक्रमी हैं। महाराज, सुग्रीव की सेना की गिनती नहीं की जा सकती।
उनके मन्त्री देवताओं और गन्धर्वों के पुत्र हैं। १—५। यह जो देवतुल्य
दो वानर देख पड़ते हैं, इनमें एक का नाम द्विविद और दूसरे का नाम
मैन्द है। इनके साथ युद्ध कोई नहीं कर सकता। ब्रह्मा की कृपा से इन्होंने
अमृत प्राप्त हुआ है। यह अपने पराक्रम से ही लंका का विनाश
करना चाहते हैं। ६—७। यह जो मतवाले हाथी के समान वानर
देख पड़ता है, जो कुपित होकर समुद्र को भी कँपा सकता है, यही
सीता को देखने के लिए लंका में आया था। इसे आप देख चुके हैं।
देखिए, यह फिर लंका में आया। यह केसरी का पुत्र है। सुनते हैं
कि यह पवन का भी पुत्र कहलाता है। इसका नाम हनुमान् है। [illegible]
मनमाना रूप धारण कर सकता है; बलवान् और रूपवान्

जैसे पवन की गति कोई नहीं रोक सकता, वैसा इसका भी पराक्रम है। यह जहाँ चाहता है, वहाँ चला जाता है। जब यह बालक था, एक दिन सूर्य को उदय होते देखकर, फल समझकर, उनको पकड़ने के लिए तीन हज़ार योजन ऊपर को कूद गया। किन्तु सूर्य को कौन पकड़ सकता है, देवता, दानव और राक्षस भी उनके पास तक जाने का साहस नहीं करते। यह तीन हज़ार योजन ऊपर से उदयाचल पर गिर पड़ा। मुँह के बल गिरने से इसकी हनु (ठुड्डी) कुछ टूट गई, इसी से इसका नाम हनुमान् पड़ा। हम वानरों की सेना में इसी का सच्चा हाल जानते हैं, किन्तु इसका बल और प्रभाव हम नहीं बता सकते। यह अकेला ही लंका को विध्वंस करना चाहता है। ८—१६। जो वीर वानर लंका में आग लगा गया था, क्या उसे आप भूल गये? इसी के पास जो वीर पुरुष खड़ा है, जिसका रंग साँवला और आँखें कमल के समान हैं, यही इक्ष्वाकुवंशियों में प्रसिद्ध वीर रामचन्द्र हैं। जो धर्म से कभी नहीं डिगते; जो धर्म का उल्लंघन कभी नहीं करते; जो वेद और ब्रह्मास्त्र के जानकार तथा वेद जाननेवालों में श्रेष्ठ हैं; जो बाणों से आकाश और पृथिवी को विदीर्ण कर सकते हैं; जिनका क्रोध मृत्यु के समान और पराक्रम इन्द्र के समान है; जिनकी स्त्री सीता को जनस्थान से आप हर लाये हैं; राजन्, यह वही रामचन्द्र हैं। आपसे युद्ध करने के लिए आये हैं। १७—२१। इनकी दाहिनी ओर जो वीर पुरुष देख पड़ता है; जिसका रंग तपाये हुए सोने के समान है; जिसकी छाती चौड़ी, सिर के बाल काले और आँखें लाल-लाल हैं, यह रामचन्द्र के प्राणों के समान प्रिय छोटे भाई लक्ष्मण हैं। यह शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ, नीतिशास्त्र और युद्ध में बड़े कुशल हैं। यह बड़े क्रोधी, बलवान् और युद्ध में अजेय हैं, इनको कोई जीत नहीं सकता। यह रामचन्द्र के दाहिने हाथ हैं और प्राणों के समान उनके प्रिय हैं। उनके लिए अपने प्राणों की रक्षा नहीं करते। युद्ध में अकेले ही सब

राक्षसों का वध करना चाहते हैं। २२—२५। यह जो रामचन्द्र के बाईं ओर बैठे हैं; जिनको राक्षसों ने यहाँ से निकाल दिया है, यह राजा विभीषण हैं। रामचन्द्र ने इनको लंका का राजा बनाया है, अब यह आपसे युद्ध करना चाहते हैं। २६—२७। यह जो सेना के बीच में पर्वत के समान अचल वानर देख पड़ता है, यही सब वानरों का राजा सुग्रीव है। यह तेज, यश, बुद्धि और बल में सब वानरों से बढ़कर है; पर्वतों में हिमालय के समान सब वानरों में श्रेष्ठ है तथा दुर्गम पर्वतों और वृक्षों से घिरी हुई किष्किन्धा में वीर यूथपों के साथ रहता है। इसके गले में सोने और कमल की माला शोभित है। देवता और मनुष्य जिस लक्ष्मी को चाहते हैं, वह इसकी माला में निवास करती है। रामचन्द्र ने बालि को मारकर उसकी स्त्री, यह माला और वानरों का राज्य सुग्रीव को दिया है। २८—३२। सौ लाख का एक करोड़, लाख करोड़ का एक शंकु, लाख शंकु का एक महाशंकु, लाख महाशंकु का एक वृन्द, लाख वृन्द का एक महावृन्द, लाख महावृन्द का एक पद्म, लाख पद्म का एक महापद्म, लाख महापद्म का एक खर्ब, लाख खर्ब का एक समुद्र, और लाख समुद्र का एक महौघ होता है। वानरराज सुग्रीव एक हज़ार करोड़, सौ शंकु, हज़ार महाशंकु, सौ वृन्द, हज़ार महावृन्द, सौ पद्म, हज़ार महापद्म, सौ खर्ब, सौ समुद्र और सौ महौघ वानर सेना लेकर वीर विभीषण और अपने मन्त्रियों के साथ आपसे युद्ध करने के लिए तैयार खड़े हैं। इनके बल और पराक्रम की थाह नहीं है। महाराज प्रज्वलित अग्नि के समान वानरों की सेना को देखिए और इनसे युद्ध करने का यत्न कीजिए, जिससे आपकी विजय हो, शत्रुओं से परास्त न होना पड़े। ३३—४२।

सर्ग २९

राक्षसराज रावण शुक के बताये हुए वानर-यूथप, महापराक्रमी

लक्ष्मण, रामचन्द्र के पास बैठे हुए अपने भाई विभीषण, वानरों के राजा सुग्रीव, बालिपुत्र अंगद, वीर हनुमान्, दुर्जय जाम्बवान्, सुषेण, कुमुद, नील, नल, गज, गवाक्ष, शरभ, मैन्द और द्विविद को देखकर, कुछ उदास और क्रुद्ध होकर शुक और सारण को डाटने लगा। १—५। वे दोनों मन्त्री डर के मारे रावण को प्रणाम करके, सिर झुकाकर, खड़े हो गये। रावण कुपित होकर कठोर वचन बोला—तुम दोनों मन्त्री बनाने के योग्य नहीं हो। जिनकी जीविका राजा के अधीन होती है, वे उसके सामने ऐसी अप्रिय बातें नहीं कहते। तुम युद्ध के लिए आये हुए हमारे शत्रुओं की प्रशंसा करते हो, यह बहुत अनुचित बात है। नीति-शास्त्र के अनुसार जीविका का उपाय तुम नहीं जानते। आचार्य, गुरु और वृद्धों की सेवा से तुमको कुछ भी शिक्षा नहीं मिली। अथवा तुमने जो कुछ सीखा भी था, उसे भूल गये हो। तुम-जैसे मूर्ख मन्त्रियों के होते हुए भी हम अपने भाग्य से राज्य कर रहे हैं। ६—१०। हम शासक हैं, हमारे मुँह से दूसरों का शुभ-अशुभ होता है, फिर भी तुमको ऐसी अप्रिय बातें कहने में मृत्यु का भय नहीं हुआ? दावानल का स्पर्श होने पर वन का वृक्ष चाहे किसी तरह बच भी जाय, किन्तु राजा का अपराध करने पर अपराधी राजदंड से नहीं बच सकता। तुम शत्रु की प्रशंसा करते हो, कृतघ्न और पापी हो। तुम्हारे उपकारों का स्मरण करके हम तुम्हारा वध नहीं करते। खैर, जो हुआ सो हुआ, अब यहाँ से हट जाओ। ११—१४। रावण के यह कहने पर शुक और सारण लज्जित हो गये, और 'आपकी जय हो' कहकर वहाँ से चले गये। उसके बाद रावण समीप बैठे हुए महोदर से बोला—दूतों को शीघ्र बुलाओ। महोदर ने दूतों को बुला भेजा। राजा की आज्ञा से दूत आये और हाथ जोड़कर सामने खड़े हुए। रावण ने दूतों को आज्ञा दी—तुम लोग रामचन्द्र के पास जाओ और वह क्या उद्योग कर रहे हैं, यह पता लगाओ। उनके मन्त्रियों के भी उद्योग देख आओ। कैसे सोते हैं,

कैसे जागते हैं, क्या करनेवाले हैं, यह सब देख-सुनकर जल्दी लौट आओ। १५—२०। दूतों से सब हाल जानकर बुद्धिमान् राजा थोड़े प्रयत्न से ही शत्रु को भगा देते हैं। शार्दूल नाम का राक्षस दूतों का प्रधान था। दूत बड़े हर्ष से रावण की प्रदक्षिणा करके रामचन्द्र के समीप गये। सुवेल पर्वत के समीप ठहरे हुए सुग्रीव और विभीषण के साथ राम-लक्ष्मण को गुप्त-रूप से देखा। वानर-सेना को देखकर वे डर गये। धर्मात्मा विभीषण ने दूतों को देखा और सबको पकड़ लिया। शार्दूल को रामचन्द्र के पास ले जाकर कहा—यह रावण का दूत है, हमारी सेना का भेद लेने के लिए आया है। वानर उसे बाँधकर पीटने लगे, किन्तु रामचन्द्र ने उसे छुड़ा दिया। रामचन्द्र की आज्ञा से और भी सब दूत छोड़ दिये गये। चंचल वानरों ने उनको खूब पीटा। वे लम्बी साँसें छोड़ते हुए लंका को भाग गये। २१—२६।

सर्ग ३०

दूतों ने रामचन्द्र की सेना का हाल रावण से कहा। रावण कुछ घबराकर शार्दूल से बोला—तुम्हारा मुँह क्यों उदास है, तुम दुःखित जान पड़ते हो। कुपित शत्रुओं ने तुमको पकड़ तो नहीं लिया? रावण के पूछने पर घबराया हुआ शार्दूल धीरे से बोला—राजन्, वानरों की सेना का हाल दूतों से नहीं मिल सकता। एक तो वानर स्वयं बड़े पराक्रमी हैं, फिर रामचन्द्र उनकी रक्षा करते हैं। १—५। उनसे कोई दूत बातें नहीं कर सकता, फिर पूछ क्या सकता है। पूछने की कौन कहे, वहाँ तक पहुँचना ही बहुत कठिन है; क्योंकि पर्वताकार वानर सब ओर से मार्ग रोके पड़े हैं। हम लोग किसी तरह सेना में पहुँच गये, किन्तु वहाँ पहुँचते ही विभीषण ने सबको पकड़ लिया। वानरों ने लात, घूँसे और थप्पड़ों से खूब पीटा, बाँधकर इधर-उधर घुमाया और दाँतों से काटा। जब रामचन्द्र के पास ले गये, उस समय

लोगों की देह से रुधिर बह रहा था। मार से व्याकुल हो गये थे और डर के मारे काँप रहे थे। हम लोगों ने हाथ जोड़कर रामचन्द्र से प्रार्थना की, तब उन्होंने बचाया। ६–१०। रामचन्द्र पर्वतों और शिलाओं से समुद्र में सेतु बाँधकर इस पार आये हैं और लंका के फाटक पर अस्त्र-शस्त्र लिये हुए ठहरे हैं। वानरों की सेना का गरुड़व्यूह बनाया है और लंका को घेर लिया है। वे चहारदीवारी के पास आ गये हैं। महाराज, अब या तो उनकी सीता उनको दे दीजिए, अथवा युद्ध कीजिए। ११–१३। राक्षसराज रावण कुछ सोचकर शार्दूल से बोला—यदि देवता, गन्धर्व, दानव सब मिलकर भी हमसे युद्ध करें, संसार भर हमारा शत्रु हो जाय, तो भी हम सीता को नहीं लौटावेंगे। यह कहकर दूतों से फिर पूछा—तुमने सेना तो देख ही ली होगी; बताओ, वानर कैसे शूर-वीर हैं? कौन वानर कैसा पराक्रमी और तेजस्वी है? वे किसके पुत्र और पौत्र हैं? उनका बलाबल जानकर हम उनसे युद्ध करेंगे, क्योंकि युद्ध करने के पहले शत्रु का पराक्रम अवश्य जान लेना चाहिए। शार्दूल ने कहा—राजन्, सुग्रीव ऋक्षराज का पुत्र, जाम्बवान् गदगद का पुत्र, गदगद का दूसरा पुत्र धूम्र भी है। केसरी बृहस्पति का पुत्र और हनुमान् केसरी का पुत्र है। इसी ने लंका में आकर बहुत-से राक्षसों को मार डाला था। सुषेण धर्म का पुत्र, दधिमुख चन्द्रमा का पुत्र, बड़े वेगवान् सुमुख और दुर्मुख ब्रह्मा के पुत्र, नील अग्नि का पुत्र, यही वानर-सेना का सेनापति है। अंगद इन्द्र का पौत्र, मैन्द और द्विविद अश्विनीकुमार के पुत्र, कालान्तक के समान गज, गवाक्ष, गवय, शरभ और गन्धमादन ये पाँच यम के पुत्र हैं। १४–२५। इनके सिवा और दस करोड़ वीर वानर देवताओं के पुत्र हैं। वानरों की कुल संख्या हम नहीं जानते। खर, दूषण, त्रिशिरा, विराध और यम के समान पराक्रमी कबन्ध का वध करनेवाले रामचन्द्र महाराज दशरथ के पुत्र हैं। वे बड़े बलवान् और गुणवान् हैं। धर्मात्मा

लक्ष्मण उनके छोटे भाई हैं, उनसे युद्ध करके इन्द्र भी जीवित नहीं बच सकते, फिर दूसरों की क्या गिनती है। ज्योतिर्मुख सूर्य का पुत्र, हेमकूट वरुण का पुत्र, महाबली नल विश्वकर्मा का पुत्र और पराक्रमी दुर्धर वसुओं का पुत्र है। आपके भाई विभीषण को रामचन्द्र ने लंका का राजा बनाया है; वे अब रामचन्द्र का हित चाहते हैं। राजन्, वानरों की सेना का जो कुछ हाल हमें मालूम हुआ, वह हमने आपसे निवेदन किया। सेना सुवेल पर्वत पर ठहरी है। अब आप जो उचित समझिए, वह कीजिए। २६—३५।

सर्ग ३१

इस प्रकार दूतों ने रामचन्द्र का और उनकी सेना का हाल रावण से बताया। रावण घबराकर राक्षसों से बोला—हमारे सब मन्त्री बहुत शीघ्र यहाँ आवें, यह समय मन्त्रणा करने का है। रावण की आज्ञा से सब मन्त्री बुलाये गये। उनसे सलाह करके सबको जाने की आज्ञा देकर रावण अपने घर को चला गया। १—५। फिर उसने मायावी विद्युज्जिह्व को बुलाया और उससे कहा—चलो, हम लोग सीता के पास चलें और माया से उनको मोहित करें। तुम माया से रामचन्द्र का सिर और उनका धनुष बनाकर ले चलो। 'अच्छा, ऐसा ही करेंगे' यह कहकर विद्युज्जिह्व रामचन्द्र का सिर और धनुष-बाण बना लाया। रावण देखकर बहुत प्रसन्न हुआ और उसे एक आभूषण इनाम में दिया। फिर वह अशोक-वाटिका में सीता के पास गया। सीता बड़े दुःख और शोक से सिर झुकाये, पृथिवी पर बैठी, अपने स्वामी का स्मरण करती थीं। उनके पास भयानक राक्षसियाँ बैठी थीं। रावण बड़े हर्ष से उनके पास गया और अपना नाम बताकर बड़ी ढिठाई से बोला—हे कल्याणी, तुम जिसके बल पर हमारी प्रार्थना नहीं सुनती थीं, वह तुम्हारा पति युद्ध में मारा गया। हमने तुम्हारी जड़ काट दी, तुम्हारा

गर्व धूलि में मिला दिया। अब तुम अपने आप हमारी स्त्री बनोगी। अब अपना विचार बदलो, मरे हुए रामचन्द्र को क्या करोगी। हे सीते, अब हमारी सब स्त्रियों की स्वामिनी बनो। जैसे वृत्रासुर युद्ध में मारा गया था, वैसे ही तुम्हारा पति मारा गया है। तुम्हारे रामचन्द्र हमको मारने के लिए सुग्रीव के साथ वानरों की बहुत बड़ी सेना लेकर, समुद्र के उत्तर किनारे पर, आये थे। सन्ध्या के समय समुद्र-तट पर पहुँचे, मार्ग की थकी हुई सेना सो गई। हमारे दूत जाकर सब हाल ले आये। आधी रात के समय हमारे सेनापति प्रहस्त बहुत बड़ी सेना लेकर गये और उनकी सेना का विनाश कर आये। हमारे सैनिकों ने पट्टिश, परिघ, चक्र, ऋष्टि, दंड, वाण, शूल, मुद्गर, लट्ठ, तोमर, प्रास और मुसल आदि अस्त्रों से वानरों को मार डाला। प्रहस्त ने सोते हुए रामचन्द्र का सिर तलवार से काट लिया। विभीषण को राक्षसों ने पकड़ लिया। बचे हुए वानर और लक्ष्मण डर के मारे भाग गये। ६—२५। हे सीते, वानरों के राजा सुग्रीव भी राक्षसों के हाथ से मारे गये और वानरों के साथ यमलोक को गये। हनुमान् की दाढ़ी तोड़कर राक्षसों ने मार डाला। जाम्बवान् ने कुछ युद्ध किया था, अन्त को राक्षसों ने उनकी जाँघें तोड़कर वृक्ष की तरह काट डाला। वानरों में श्रेष्ठ मैन्द और द्विविद रुधिर से लथपथ होकर लम्बी साँसें छोड़ते और रोते थे। राक्षसों ने तलवार से उनके सिर अलग कर दिये। पनस नाम का वानर भी मारा गया। वह कटहल की तरह पृथिवी पर पड़ा है। बाणों से मारा हुआ दरीमुख पर्वत की कन्दरा में सो रहा है। महातेजस्वी कुमुद को भी राक्षसों ने मार डाला। २६—३०। बेचारे अंगद के सब अंग काट डाले गये। वह रुधिर का वमन करता हुआ पृथिवी पर गिर पड़ा। बहुत-से वानर हाथियों के पैर से दबकर, घोड़ों की टापों से कुचलकर, और रथों की पहियों के नीचे दबकर मर गये। जैसे वायु के वेग से बादल उड़ जाते हैं, वैसे ही बचे-खुचे वानर न जाने कहाँ भाग गये। अधमरे वानर डर

के मारे उसी तरह भागे, जैसे सिंह के डर से हाथी भागते हैं।३१-३३। बहुत तो समुद्र में गिर पड़े, कुछ आकाश को कूद गये और कुछ वृक्षों पर छिप रहे। समुद्र के किनारे, पर्वतों और वृक्षों के ऊपर, जो जहाँ मिले उनको वहीं भयानक राक्षसों ने मार डाला। ३४-३५। इस तरह वानरों की सेना और तुम्हारे पति रामचन्द्र मारे गये। यदि तुमको विश्वास न हो तो देखो, रुधिर और धूलि लगा हुआ उनका सिर मौजूद है। फिर वह सीता को सुनाता हुआ राक्षसियों से बोला—विद्युज्जिह्व को बुलाओ। युद्धभूमि से रामचन्द्र का सिर वही लाया है। ३६-३८। यह कहते ही विद्युज्जिह्व रामचन्द्र का नकली सिर और धनुष-बाण लेकर आया और रावण को प्रणाम करके सामने खड़ा हो गया। रावण ने उससे कहा—रामचन्द्र का सिर सीता को दिखाओ। यह अपने पति की दुर्दशा अच्छी तरह देखें। ३९-४१। विद्युज्जिह्व ने वह सिर सीता के आगे रख दिया और वहाँ से हट गया। रावण रामचन्द्र का सुवर्णमय धनुष सीता के आगे फेंककर बोला—लो, यह तुम्हारे पति का धनुष है, पहचानती हो न? प्रहस्त रात में उनका सिर काट लाया है, अब तुम हमारी भार्या बनो। ४२-४५।

सर्ग ३२

रामचन्द्र का सिर और धनुष देखकर सीता व्याकुल हो गईं। उनकी आँखें, मुँह का रंग, सिर के बाल और चूड़ामणि देखकर विश्वास हो गया कि यह सिर रामचन्द्र का ही है। सुग्रीव से रामचन्द्र की मित्रता का हाल भी हनुमान् से मालूम हुआ था। ये दुःखित होकर केकयी को कोसती हुई कुररी की तरह रोने लगीं—हे केकयी, अब तुम्हारा मनोरथ पूरा हुआ। रघुकुलश्रेष्ठ रामचन्द्र मारे गये। तुम्हारे कर्कश स्वभाव से ही कुल का नाश हुआ। रामचन्द्र ने तुम्हारा क्या अपकार किया था, जो उनको चीर पहनाकर घर से निकलवा दिया। १-५। दुःखिनी

सीता कटे हुए केले की तरह काँपकर पृथिवी पर गिर पड़ीं और मूर्च्छित हो गईं। ६। थोड़ी देर बाद जब होश आया, तो वह रामचन्द्र के नक़ली सिर को हाथ में लेकर रोने लगीं—हा महाबाहु, मैं मर गई, आपने मुझे विधवा कर दिया। स्त्री के पहले पति का मरना बड़े अनर्थ का कारण है। आप मेरी रक्षा करने आये थे, सो आप ही मारे गये। ६—१०। आप कौसल्या के बड़े प्यारे थे। उनकी वही दशा हुई, जो बछड़े के मरने पर गाय की होती है। हे रघुनन्दन, ज्योतिषियों ने आपकी आयु बहुत बताई थी, पर उन लोगों की बात झूठ निकली। ११—१२। अथवा ज्योतिषियों की बात झूठ न होगी, यह हमारी बुद्धि का दोष होगा जो आपका कटा हुआ सिर देखती हूँ। आप बुद्धिमान् थे, नीति जानते थे, दुःखों को हटाने का उपाय भी जानते थे, फिर आप अकस्मात् कैसे मारे गये। आपकी मृत्यु का कारण मैं ही हूँ, मुझ भयानक, कालरात्रि को गले लगाने से ही आपकी मृत्यु हुई। १३—१५। हे महाबाहु, मुझ तपस्विनी को छोड़कर आपने पृथिवी का आलिंगन किया। हे वीर, मैं आपके सुवर्णमय धनुष की गन्ध और मालाओं से पूजा करती थी। हे निष्पाप, आप धर्मात्मा पिता की आज्ञा का पालन करते थे। मुझे छोड़कर विमान पर बैठकर स्वर्ग में इक्ष्वाकुवंशी राजर्षियों (अपने पितरों) से जा मिले। मेरी ओर क्यों नहीं देखते, मुझसे क्यों नहीं बोलते। मैं आपकी धर्मपत्नी हूँ। १६—२०। आपने पाणिग्रहण के समय मुझे अपने साथ रखने की प्रतिज्ञा की थी। उसका स्मरण कीजिए और मुझ दुःखिनी को भी अपने साथ ले चलिए। हा नाथ, मुझे छोड़कर कहाँ चले गये। २१—२२। मैं आपकी देह में चन्दन और सुगन्ध लगाती थी, उस देह को सियार और गिद्ध घसीटते होंगे। आपने बहुत दक्षिणा देकर अग्निष्टोम आदि यज्ञ किये थे, किन्तु आपकी देह का अग्निसंस्कार भी न हो सका। २३—२४। अब अकेले लक्ष्मण अयोध्या को जायँगे। कौसल्या जब उनसे

आपको पूछेंगी, तो वे यही उत्तर देंगे कि रात में राक्षसों ने आकर रामचन्द्र, उनके मित्र सुग्रीव और वानरों की सेना को मार डाला। २५—२६। हे रघुनन्दन, कौसल्या आपकी मृत्यु और मुझे राक्षस के घर में सुनकर प्राण त्याग देंगी। हा, मुझ अभागिन के लिए आप समुद्र पार करके लंका में आये और यहाँ गाय के खुर में भरे हुए पानी में डूब गये! मेरे कारण आपकी मृत्यु हुई, मैंने रघुकुल का विनाश किया, मुझ अभागिन के साथ आपने विवाह क्यों किया? मैंने पूर्वजन्म में कुछ दान नहीं किया था, इसी कारण मेरी यह दशा हुई। २७—३०। हे रावण, तुम मुझे भी मार डालो, मैं अपने पति के पास पहुँच जाऊँ; तुम्हारा कल्याण हो। तुम मेरा सिर रामचन्द्र के सिर से और मेरे अंग उनके अंगों से मिला दो; मैं अपने महात्मा पति की गति पाऊँ। सीता इस प्रकार रो रही थीं, उसी समय एक राक्षस रावण के पास आया और हाथ जोड़कर बोला—हे आर्यपुत्र, आपकी जय हो। सेनापति प्रहस्त आये हैं। उनके साथ सब मन्त्री भी हैं, आपका दर्शन करना चाहते हैं। महाराज, राज्यसम्बन्धी कुछ आवश्यक काम है, आप उनको दर्शन दीजिए। उस राक्षस की बात सुनकर रावण अशोक-वाटिका से चला गया। वहाँ मन्त्रियों की सलाह से युद्ध की तैयारी करने लगा। रावण के चले जाने पर रामचन्द्र का सिर और धनुष, जो माया से बना था, गायब हो गया। रावण अपने सेनापतियों से बोला—बहुत शीघ्र सेना तैयार करो, किन्तु इसका कारण किसी को न मालूम हो। सेनापतियों ने युद्ध के लिए सेना को तैयार रहने की आज्ञा दी और रावण के पास आकर कहा—महाराज, आपकी आज्ञा का पालन किया गया। ३१—४४।

सर्ग ३३

सीता को दुःखित देखकर सरमा नाम की राक्षसी उनके पास आई

सरमा सीता की प्रिय सखी थी और उनका हित चाहती थी। वह उनको मधुर वचनों से समझाने लगी। इसे रावण ने सीता की रक्षा के लिए नियुक्त किया था। सीता से इसकी मित्रता हो गई थी। यह उनके ऊपर बड़ी दया करती थी। दुःख से व्याकुल सीता को पृथिवी पर मूर्च्छित पड़ी देखकर सरमा उनको समझाने लगी—हे सीते, रावण ने जो तुमसे कहा और तुमने जो उत्तर दिया, वह सब वृक्ष की आड़ से मैं सुनती थी। तुम्हारे लिए मैं रावण से नहीं डरती। वह जिस लिए यहाँ आया और तुमसे जो कुछ कह गया, मैं उसका ठीक ठीक पता लगा लाई हूँ। १—७। पुरुषश्रेष्ठ रामचन्द्र राक्षसों का स्वभाव जानते हैं। वे हमेशा सजग रहते हैं, उनको सोते में कोई नहीं मार सकता। वृक्ष और पर्वत जिनके अस्त्र-शस्त्र हैं, उन वानरों का भी इस तरह संहार करना असम्भव है। जैसे इन्द्र देवताओं की रक्षा करते हैं, वैसेही रामचन्द्र वानरों के रक्षक हैं। जिनकी भुजाएँ लम्बी और मोटी हैं, छाती चौड़ी है; जो धनुष और कवच धारण करते हैं; जिनका पराक्रम संसार में प्रसिद्ध है; जो दूसरों की भी रक्षा कर सकते हैं; शत्रुओं की असंख्य सेनाका नाशकर सकते हैं, वे महापराक्रमी धर्मात्मा रामचन्द्र और लक्ष्मण नहीं मारे गये। जो सिर और धनुष, तुमको दिखाया गया है, यह मायावी राक्षसों की माया है। तुमको मोहित करने के लिए यह माया रची गई है। अब तुम्हारे दुःख के दिन बीत गये। शीघ्र ही तुम्हारा कल्याण होगा। हमारी बात का विश्वास करो। तुम्हारा कल्याण होने में देर नहीं है। रामचन्द्र वानरों की सेना लेकर समुद्र उतर आये हैं। सेना समुद्र के किनारे पड़ी है। मैं रामचन्द्र और लक्ष्मण को देख आई हूँ। समुद्र-तट से लेकर लंका की चहारदीवारी तक वानरों की बहुत बड़ी सेना ठहरी हुई है। रावण ने बहुत-से दूत भेजे थे। वे भी यही खबर लाये हैं कि रामचन्द्र समुद्र उतर आये। ८—१७। हे विशालाक्षि! यह खबर सुनकर रावण मन्त्रियों से सलाह कर रहा है। सरमा सीता से यह कह

रही थी, उसी समय रावण की सेना का भयानक शब्द सुन पड़ा। सेना में नगाड़ा बजाया गया। उसे सुनकर सरमा सीता से बोली— सुनो, सेना की तैयारी के लिए यह नगाड़ा बज रहा है। बादल के गरजने के समान तुरही भी बजती है। मतवाले हाथी तैयार किये जा रहे हैं, रथों में घोड़े जोते जाते हैं। वह देखो, हज़ारों घोड़सवार हाथ में भाला लिये चले जाते हैं। बड़ी सड़कों पर सेना तैयार खड़ी है। सुनो, समुद्र के भयानक शब्द के समान राक्षसों की सेना का कोलाहल होता है। राक्षस कवच पहनकर, अस्त्र-शस्त्र लेकर तैयार हो गये हैं। घोड़े हिनहिनाते हैं, हाथी चिघरते हैं और राक्षस गरज रहे हैं। धूप में अस्त्र-शस्त्र ऐसे चमकते हैं, मानों वन में आग लगी है। १८—२६। हे सीते, घंटा का शब्द और रथों के चलने का शब्द सुनो। राक्षसों की सेना को देखकर भय मालूम होता है। किन्तु इससे रामचन्द्र को कोई डर नहीं है। तुम्हारा कल्याण होगा और शोक दूर होगा। राक्षसों के लिए भय आ गया है। जैसे इन्द्र ने दानवों का विनाश किया था, वैसे ही कमल-नयन महापराक्रमी रामचन्द्र रावण को मारेंगे और बहुत शीघ्र तुमसे मिलेंगे। जैसे विष्णु के साथ इन्द्र ने अपने शत्रुओं को परास्त किया था, वैसे ही लक्ष्मण के साथ रामचन्द्र राक्षसों को जीतेंगे। बहुत शीघ्र तुम्हारा मनोरथ सिद्ध होगा। रावण का विनाश होने पर रामचन्द्र के पास बैठी हुई, तुमको मैं देखूँगी। २७—३२। हे सीते, तुम बहुत शीघ्र रामचन्द्र से मिलोगी और आनन्द के आँसू बहाओगी। हे देवि, रामचन्द्र का पूर्णमासी के चन्द्रमा के समान सुन्दर मुख देखकर तुम हर्ष के आँसू बहाओगी, रावण को युद्ध में मारकर रामचन्द्र सुखी होंगे। महात्मा रामचन्द्र के विजयी होने पर तुम वैसे ही प्रसन्न होगी, जैसे अच्छी वर्षा होनेपर पृथिवी प्रसन्न होती है। हे देवि, अब तुम सुमेरु पर्वत की प्रदक्षिणा करनेवाले, घोड़े की चाल के समान मंडलाकार चलनेवाले सूर्यनारायण की उपासना करो, वही सब प्राणियों के सुख-दुःख के कारण हैं। ३३—

सर्ग ३४

दुःख और शोक से पीड़ित सीता सरमा की बातों से वैसे ही प्रसन्न हुईं, जैसे तपी हुई पृथिवी पानी बरसने से प्रसन्न होती है। सीता का हित चाहनेवाली प्रिय सखी सरमा हँसकर समय के अनुकूल फिर बोली— हे सीते, यदि तुम कहो तो मैं रामचन्द्र के पास जा सकती हूँ और रावण ने जो तुमसे कहा है, वह रामचन्द्र से कहकर और तुम्हारी कुशल बताकर लौट आ सकती हूँ। जब मैं आकाश में चलती हूँ तो गरुड़ और पवन भी मेरे वेग को नहीं पहुँच सकते। १-४। सीता प्रसन्न होकर बोलीं— सखी, मैं जानती हूँ तुम आकाश और पाताल में अपनी इच्छानुसार जा सकती हो और मेरे हित के लिए सब कुछ कर सकती हो। यदि तुम मेरा प्रिय करना चाहती हो तो सावधानी से रावण के पास चली जाओ और यह मालूम कर आओ कि मेरे विषय में वह क्या करना चाहता है। मायावी रावण मुझे मोहित करना चाहता है। उसकी आज्ञा से भयानक राक्षसियाँ घेरे बैठी रहती हैं, डरवाती और डाटती हैं। मेरा मन किसी समय स्वस्थ नहीं रहता, शोक और चिन्ता क्षण भर के लिए भी दूर नहीं होती। रावण के डर से घबराहट बनी रहती है। तुम उसके पास जाओ और मेरे विषय में उसका जो विचार हो, मालूम करो। तुम्हारी बड़ी कृपा होगी। यह कहते-कहते सीता रोने लगीं। सरमा उनके आँसू पोंछकर बोली—मैं अभी जाती हूँ, शत्रु का अभिप्राय समझकर शीघ्र लौट आऊँगी। ५-१३। सीता से यह कहकर सरमा रावण के पास गई, और रावण ने मन्त्रियों से सलाह करके जो निश्चय किया था उसे सुनकर अशोक-वाटिका को लौट आई। सीता उसकी बाट जोहती थीं, उसे बड़े आदर से आसन पर बैठाकर पूछने लगीं—सखी, तुम रावण का अभिप्राय ठीक-ठीक बताओ। रावण के डर से काँपती हुई सीता की यह बात सुनकर सरमा कहने लगी—हे सीते, रावण की माता और एक बूढ़े मन्त्री ने तुमको छोड़ने के लिए उसे बहुत समझाया कि रामचन्द्र का पराक्रम सुन

चुके हो। उन्होंने जनस्थान में खर, दूषण, त्रिशिरा और चौदह हज़ार राक्षसों का विनाश किया है। इसलिए तुम सम्मान के साथ सीता को ले जाकर उनको दे आओ। हनुमान् समुद्र लाँघकर यहाँ आये और राक्षसों का वध किया, यह भी तुम देख चुके हो। उसकी माता और मन्त्रियों ने भी बहुत समझाया; पर जैसे कंजूस आदमी धन नहीं सकता, वैसे ही वह तुमको छोड़ना नहीं चाहता। १४–२३।

उसने मन्त्रियों से सलाह करके यही निश्चय किया है। रावण और उसके मन्त्रियों की मृत्यु आ गई है, वह तुमको छोड़ने नहीं देती। उसकी मृत्यु रामचन्द्र के हाथ है, यदि तुमको छोड़ दे, तो वह सब राक्षसों के साथ युद्ध में कैसे मारा जाय। रामचन्द्र बहुत शीघ्र पैने बाणों से रावण को मारकर तुमको अयोध्या को ले जायँगे। सरमा सीता से यह कह रही थी, उसी समय तुरही और शंख आदि बाजों का शब्द सुन पड़ा। राक्षसों की सेना चलने से पृथिवी काँपने लगी। उधर वानरों के गरजने का शब्द भी सुनाई दिया। उसे सुनकर राक्षस काँप उठे। उन्होंने सोचा कि दुष्ट रावण के दोष से हम लोग मारे गये। २४–३४।

सर्ग ३५

राक्षसों की सेना में शंख और नगाड़े का शब्द सुनकर महाबाहु रामचन्द्र ने भी युद्ध की तैयारी की। वानरों का गरजना सुनकर रावण थोड़ी देर सोचकर मन्त्रियों से बोला। पहले तो रामचन्द्र के बल और समुद्र उतरने की निन्दा की। फिर मन्त्रियों से कहा कि आप लोगों ने रामचन्द्र की जो प्रशंसा की, वह हमने सुना। हमको मालूम हो गया कि आप लोग रामचन्द्र के पराक्रम से डर गये हैं और एक-दूसरे का मुँह ताक रहे हैं। रावण की यह बात सुनकर उसका नाना बुद्धिमान् माल्यवान् बोला—राजन्, जो राजा सब विद्याओं में निपुण होता है, नीति के अनुसार चलता है, मौक़ा देखकर शत्रुओं से सन्धि और

युद्ध करता है तथा अपना बल बढ़ाने का उपाय करता है वह शत्रुओं को वश में रखता और ऐश्वर्य का भोग करता है। जो राजा शत्रु से निर्बल हो अथवा शत्रु के बराबर हो, उसे सन्धि कर लेनी चाहिए और शत्रु से बलवान् हो तो युद्ध करना चाहिए। शत्रु बलवान् हो या निर्बल, उसकी उपेक्षा कभी न करे। इसलिए हे रावण, जिस सीता के लिए यह विरोध हुआ है, उसे रामचन्द्र को दे दो। १–१०। देवता, ऋषि और गन्धर्व सब रामचन्द्र की विजय चाहते हैं। उनके साथ विरोध न करो, सन्धि कर लेना ही अच्छा है। भगवान् ब्रह्मा ने देवता-दानव और धर्म-अधर्म दो पक्ष बनाये हैं। धर्म-पक्ष देवताओं का और अधर्म दानवों तथा राक्षसों का है। जब सत्ययुग लगता है तब धर्म की वृद्धि और अधर्म का नाश होता है, और जब कलियुग आता है तब अधर्म की वृद्धि और धर्म का लोप होता है। तुमने धर्म का नाश कर दिया और अधर्म स्वीकार कर लिया, इसीसे हमारे शत्रु बलवान् हो गये। ११–१५। तुम्हारे दोष से ही अधर्म की वृद्धि हुई, वही अधर्म हम लोगों का विनाश करेगा। यह देवताओं के अनुकूल हुआ और उनके पक्ष की वृद्धि हो रही है। तुमने विषयों में आसक्त होकर, अनेक प्रकार के उपद्रव करके, अग्नितुल्य ऋषियों को सताया। वे सदा धर्म की वृद्धि में लगे रहते हैं, तपस्या से उनकी आत्माएँ पवित्र हो जाती हैं, उनका प्रभाव प्रज्वलित अग्नि के समान होता है। वे अग्निष्टोम आदि यज्ञ, विधिपूर्वक हवन और वेदपाठ करते हैं। वे राक्षसों के उपद्रव से तंग आकर ग्रीष्म-ऋतु के बादलों की तरह इधर-उधर भाग गये हैं। वे राक्षसों के डर से भागकर अब जिन देशों में बसे हैं, वहाँ भी कठोर तपस्या करते हैं और उनकी तपस्या से राक्षस पीड़ित हैं। ब्रह्मा के वरदान से देवता, दानव और यक्ष तुमको नहीं मार सकते, किन्तु मनुष्य और वानरों से अवध्य होने का वरदान तुमको नहीं मिला है। १६–२२। महापराक्रमी मनुष्य और वानरों की सेना गरज रही है। अनेक प्रकार के भयानक उत्पात

भी देख पड़ते हैं, इससे जान पड़ता है कि राक्षसों के विनाश का समय आ गया। बादल गरजते हैं और लंका में रुधिर मिला हुआ पानी बरसाते हैं। हाथी और घोड़ों की आँखों से आँसू बहते हैं। सब ओर धूलि उड़ती है, नगर में उदासी छाई है। लंका पहले की तरह शोभित नहीं है। सियार और गिद्ध भयानक शब्द बोलते हैं और लंका के बगीचों में आकर इकट्ठा होते हैं। स्वप्न में पीले दाँतवाली काली स्त्रियाँ घर की वस्तुओं से बातें करती और हँसती हैं। २३—२८। हवन के लिए जो हव्य तैयार की जाती है, उसे कुत्ते खा जाते हैं। गायों से गधे और नेवलों से चूहे पैदा होते हैं। बाघों के साथ बिलार, कुत्तों के साथ सुअर, राक्षसों और मनुष्यों के साथ किन्नर बैठते-उठते हैं। २६—३०। लाल पैरवाले पीले कबूतर काल की प्रेरणा से राक्षसों के विनाश के लिए लंका में घूमते हैं। सारिका पिंजरों में चीं-चीं किया करती हैं। जंगली चिड़िया आकर उनसे लड़ती हैं और मारकर पिंजरे में गिरा देती हैं। ३१—३२। मृग और पक्षी सूर्य की ओर मुँह करके रोते हैं। एक काले रंग का भयानक पुरुष मूड़ मुड़ाये प्रतिदिन सुबह-शाम राक्षसों के घरों में घूमता है और सबको दिखाई देता है। इसी प्रकार के और भी बहुत अशकुन देख पड़ते हैं। ३३—३४। हम लोग महापराक्रमी रामचन्द्र को मनुष्य का रूप धारण किये साक्षात् विष्णु मानते हैं। वे साधारण मनुष्य नहीं हैं। उन्होंने समुद्र में सेतु बाँध दिया, वह बड़ा अद्भुत काम है। राजन्, तुम महाराज रामचन्द्र से सन्धि कर लो। उनके कठिन कामों पर ध्यान देकर ऐसा काम करो जिससे भविष्य में कल्याण हो। राक्षसों में श्रेष्ठ महाबली माल्यवान् यह कहकर, रावण की ओर देखने लगा और उसके मन का भाव समझ कर चुप हो गया। ३५—३८।

सर्ग ३६

मालयवान् की कही हुई हित की बातें काल के वश दुरात्मा रावण न सह सका। वह क्रोध से भौंहें चढ़ाकर माल्यवान् से बोला—तुमने हमारे हित के लिए जो कठोर बातें कहीं और शत्रु की प्रशंसा की, उन पर मैंने कुछ ध्यान नहीं दिया। जिसे पिता ने घर से निकाल दिया, जो वन में मारा-मारा फिरता है, जिसने वानरों की शरण ली, उस राम को तुमने बलवान् कैसे समझ लिया, और राक्षसों के राजा देवताओं को भयभीत करनेवाले, सब प्रकार से पराक्रमी हमको निर्बल कैसे समझा। १-५। तुम वैर-भाव से, शत्रु के पक्षपात से हमको ऐसे कठोर वचन कहते हो। हमको भयभीत करते हो, जिसमें शत्रु से युद्ध न करें। जो पुरुष बुद्धिमान् होगा और शास्त्र भी जानता होगा, वह राजा को ऐसे कठोर वचन कभी न कहेगा। कमल की शोभा के समान सुन्दरी सीता को अपने घर में लाकर रामचन्द्र के डर से हम क्यों लौटा दें। ६—८। इन करोड़ों वानरों के साथ सुग्रीव, लक्ष्मण और रामचन्द्र को तुम मरे हुए देखोगे। जिस रावण से देवता भी युद्ध नहीं कर सकते, उसे मनुष्य और वानरों से क्या डर है।९—१०।चाहे हमारी देह के टुकड़े-टुकड़े उड़ जायँ, किन्तु हम किसी से झुककर न चलेंगे, यह हमारा स्वाभाविक गुण है। स्वभाव बड़ी कठिनता से बदलता है। समुद्र में सेतु बाँधना कौन आश्चर्य की बात है। यह देखकर तुम लोग क्यों डर गये। रामचन्द्र वानरों की सेना लेकर समुद्र उतर आये, यही उनकी बड़ी वीरता है? अब लौटकर चले जायँ, तो हम वीर समझें। रावण को कुपित देखकर माल्यवान् बहुत लज्जित हुआ, कुछ उत्तर न दे सका। 'आपकी जय हो' कहकर उसकी आज्ञा से अपने घर चला गया। ११—१५। उसके बाद रावण मन्त्रियों से सलाह करके लंका की रक्षा का प्रबन्ध करने लगा। पूर्व के फाटक पर सेनापति प्रहस्त को, दक्षिण के फाटक पर महापराक्रमी महापार्श्व और महोदर को,

पश्चिम के फाटक पर बहुत बड़ी सेना के साथ अपने पुत्र मायावी इन्द्रजित को और उत्तर के फाटक पर, जिधर रामचन्द्र की सेना घेरे पड़ी थी, शुक और सारण दो मन्त्रियों को सेना के साथ जाने की आज्ञा दी। रावण ने शुक और सारण से कहा—हम भी उत्तर के फाटक पर आवेंगे। महाबली विरूपाक्ष को बहुत-से राक्षसों के साथ बीच लंका में नियुक्त किया। १६—२०। इस प्रकार लंका की रक्षा का प्रबन्ध करके राक्षसराज रावण ने अपने को कृतकृत्य समझा; क्योंकि वह काल के वश था इसलिए उसे किसी का भय नहीं था। मन्त्रियों को नगर की रक्षा के लिए सावधान रहने की आज्ञा देकर बिदा किया, और वह भी अपने घर को गया। २१—२२।

सर्ग ३७

इधर पुरुषश्रेष्ठ रामचन्द्र वानरराज सुग्रीव, पवन-कुमार हनुमान, ऋक्षराज जाम्बवान्, राक्षसराज विभीषण, बालिपुत्र अंगद, लक्ष्मण, शरभ, सुषेण, मैन्द, द्विविद, गज, गवाक्ष, कुमुद, नल और पनस से सलाह करने लगे। रामचन्द्र ने कहा—देखो, इस लंका नगरी को देवता, दैत्य, नाग और गन्धर्व भी नहीं जीत सके। राक्षसों का राजा रावण बड़ी सावधानी से इसकी रक्षा करता है। अब तुम लोग सलाह करके यह निश्चय करो कि किस उपाय से युद्ध किया जाय। १—५। विभीषण ने कहा—अनल, पनस, सम्पाति और प्रमति ये हमारे चारों मन्त्री लंका में घूमकर अभी आये हैं। पक्षियों का रूप धारण करके शत्रु की सेना में गये थे। रावण ने युद्ध की जो तैयारी की है, उसे देख आये हैं। वह हम आपसे कहते हैं, सुनिए। पूर्व के फाटक पर सेनापति प्रहस्त, दक्षिण के फाटक पर महाबली महापार्श्व और महोदर; पश्चिम के फाटक पर बहुत बड़ी सेना के साथ इन्द्रजित् भेजा गया है। इन्द्रजित् के साथ हज़ारों वीर राक्षस पट्टिश, तलवार, धनुष, शूल, मुद्गर आदि अस्त्र-शस्त्र

लेकर आये हैं। उत्तर के फाटक पर राक्षसराज रावण स्वयं आया है; उसके साथ बहुत बड़ी सेना है। विरूपाक्ष अपनी सेना के साथ लंका के बीच में नियुक्त किया गया है। ६—१५। दस हज़ार हाथी, दस हज़ार रथ, बीस हज़ार घोड़े और एक करोड़ बलवान् राक्षस, जो युद्ध में पीछे नहीं हटते, रावण के साथ आये हैं। इन करोड़ राक्षसों में हरएक का परिवार हज़ारों की संख्या में है, युद्ध के समय वह सब एकत्र हो जाता है। रामचन्द्र के हित के लिए विभीषण ने लंका में अपने दूतों को भेजकर यह पता लगाया और रामचन्द्र को बता दिया। १६—२०। फिर उन्होंने कहा कि जब दुरात्मा रावण ने कुबेर से युद्ध किया था तब साठ लाख राक्षस उसके साथ थे। वे सब बल, वीर्य, तेज और गर्व में रावण के समान हैं। आप मेरी इन बातों को सुनकर क्रोध न कीजिएगा। मैं आपको कुपित करने या डराने के लिए नहीं कहता हूँ। आपको भय किसका है। आप अपने पराक्रम से देवताओं को भी परास्त कर सकते हैं। २१—२३। उसके बाद रामचन्द्र अपने मन्त्रियों से बोले—वानरों की बहुत बड़ी सेना लेकर सेनापति नील लंका के पूर्व फाटक पर जायँ और प्रहस्त से युद्ध करें। अंगद वानरों की सेना लेकर दक्षिण फाटक पर जायँ, महापार्श्व और महोदर का वध करें। पवनकुमार महापराक्रमी हनुमान् सेना के साथ पश्चिम के फाटक पर जाकर इन्द्रजित् से युद्ध करें। २४—२८। देवता, दानव और महात्मा ऋषियों का अपकार करनेवाले, वरदान के मद से मदान्ध, जिससे सब लोकों के प्राणी पीड़ित हैं, उस दुरात्मा रावण का वध करने के लिए हम और लक्ष्मण उत्तर फाटक पर जायँगे। वानरराज सुग्रीव, ऋक्षराज जाम्बवान् और राक्षसराज विभीषण सेना के मध्य में रहें। २९—३२। युद्ध में कोई वानर मनुष्य का रूप न धारण करे। वानरों का चिह्न वानर ही रहे। महापराक्रमी लक्ष्मण, मित्र विभीषण, इनके चार मन्त्री और हम, ऐसे सात पुरुष मनुष्य का रूप धारण किये हुए युद्ध करेंगे। ३३—३५। उसके बाद रामचन्द्र ने सुवेल पर्वत के सुरम्य शिखर पर चढ़ने का

विचार किया। वानरों की सेना से पृथ्वी को आच्छादित करके बड़े हर्ष से आगे चले। ३६—३८।

सर्ग ३८

रामचन्द्र ने सुग्रीव और धर्मज्ञ विभीषण से कहा—आज हम लोग सुवेल पर्वत पर चलें और रात में वहीं रहकर लंका नगरी को देखें। जो दुरात्मा अपनी मृत्यु के लिए हमारी स्त्री को हर लाया है, जिसने धर्म, कुल और सदाचार की परवा न करके राक्षसी बुद्धि से यह निन्दित काम किया है, उस रावण का घर देखें। १—५। मन्त्रियों के साथ रामचन्द्र सुवेल पर्वत के विचित्र शिखर पर गये। उनके पीछे धनुष बाण धारण किये पराक्रमी लक्ष्मण, सुग्रीव, मन्त्रियों के साथ विभीषण और पवन के समान वेगवान् सैकड़ों वानर शीघ्रता से चढ़ गये। ६—९। त्रिकूट पर्वत के शिखर पर बसी हुई, अतएव मानों आकाश में लटकी हुई, लंका को देखने लगे। उसके फाटक बहुत सुन्दर थे, चारों ओर चहारदीवारी थी। उसके ऊपर राक्षसों की सेना दूसरी चहारदीवारी के समान जान पड़ती थी। राक्षसों को देखकर सब वानर गरजने लगे। १०—१२। इतने में सूर्य अस्त हो गये, सन्ध्या की लालिमा छा गई, उसके बाद पूर्ण चन्द्रमा से प्रकाशित रात आ गई। उस रात को विभीषण से सम्मानित रामचन्द्र, लक्ष्मण, सुग्रीव और वानरों के यूथप सुवेल पर्वत पर सुख से ठहरे। १३—१४।

सर्ग ३९

वहाँ से लंका के वन-उपवन देखने लगे। बड़े लम्बे-चौड़े, रमणीय, देखने में सुहावने बग़ीचों को देखकर वानरों को बड़ा विस्मय हुआ। चम्पक, अशोक, बकुल, साल, ताल, तमाल, कटहल, नागबेलि, हिंताल, अर्जुन, कदम्ब, सप्तपर्ण, तिलक, कर्णिकार और पाटल आदि फूले

वृक्षों, वृक्षों में लिपटी हुई लताओं, विचित्र फूलों, लाल कोमल पल्लवों, वन-पंक्तियों और हरी-हरी घास से लंका नगरी इन्द्र की अमरावती के समान शोभित थी। १—६। वृक्ष सुगन्धित सुन्दर फूल-फल वैसे ही धारण किये थे जैसे मनुष्य आभूषण पहनते हैं। चैत्ररथ और नन्दन वन के समान मनोहर, सब ऋतुओं में रमणीय उन बग़ीचों में भौंरे गूँजते थे। झरनों के किनारे चक्रवाक, जलमुर्ग, बगुला, नाचते हुए मोर और कोयल की बोली सुन पड़ती थी। इच्छानुसार रूप धारण करनेवाले महापराक्रमी वानर उन बग़ीचों में चले गये। सुगन्धित वायु चलती थी। कुछ यूथप वानरों के यूथ से निकलकर सुग्रीव की आज्ञा से पताका फहराती हुई लंका को गये। ७—१३। गरजकर लंका को कँपाते हुए, पशु-पक्षियों और हाथियों को डराते हुए, पैरों से पृथ्वी को पीड़ित करते हुए बड़े वेग से चले। धूलि आकाश में छा गई। उनके गरजने के शब्द से डरकर सिंह, हाथी, मृग और पक्षी इधर-उधर भागे। १४—१६। त्रिकूट का एक शिखर आकाश का स्पर्श करता था, चाँदी के समान चमकता था; चारों ओर फूलों से ढका था; सौ योजन विस्तीर्ण, देखने में सुन्दर और बहुत निर्मल था। वह इतना ऊँचा था कि वहाँ पक्षी भी कठिनता से जा सकते थे। मनुष्य तो वहाँ पहुँचने की कल्पना भी नहीं कर सकते थे। उस शिखर पर दस योजन चौड़ी, बीस योजन लम्बी, रावण से सुरक्षित लंका बसी थी। चारों ओर सोने और चाँदी की चहारदीवारी बादलों के समान शोभित थी। ऊँचे घरों से ऐसी मालूम होती थी, जैसे असाढ़ में बादलों से आकाश शोभित होता है। हज़ार खंभों के ऊपर बना हुआ राजभवन कैलास-शिखर के समान आकाश का स्पर्श करता था। एक देवस्थान उस नगरी का आभूषण था। एक सौ राक्षस उसकी रक्षा करते थे। पर्वतों से शोभित, सुवर्णमय, स्वर्ग के समान समृद्ध लंका को देखकर महापराक्रमी रामचन्द्र को बड़ा आश्चर्य हुआ। १७—२७।

सर्ग ४०

रामचन्द्र, सुग्रीव और अन्य वानर-यूथपों ने सुवेल पर्वत के एक शिखर से विश्वकर्मा की बनाई हुई रमणीय लंका नगरी को देखा। फाटक पर राक्षसराज रावण खड़ा था। उसके सिर पर विजय-छत्र शोभित था, वह लाल चंदन लगाये था और लाल ही आभूषण पहने था। काले बादलों के समान काला था। उसकी छाती में ऐरावत हाथी के दाँतों से घाव हुए थे, उनके चिह्न बने थे। खरगोश के रुधिर के समान लाल रंग का वस्त्र ओढ़े था। जैसे सन्ध्या के समय बादलों का रंग हो जाता है, वैसे ही रावण शोभित था। १—६। रामचन्द्र उसे देखते थे, उसी समय सुग्रीव बड़े क्रोध से उस फाटक के ऊपर चढ़ गये और निर्भय होकर बोले—हे राक्षस, हम लोकनाथ रामचन्द्र के मित्र और सेवक हैं। उनके प्रभाव से तुमको जीवित न छोड़ेंगे। ७—१० यह कहकर उसके सिर पर चढ़ गये और मुकुट उतारकर पृथ्वी में गिरा दिया। सुग्रीव की यह फुर्ती देखकर रावण बोला—हे सुग्रीव, तुम्हारी मृत्यु आ गई है, राक्षस अभी तुम्हारा सिर काट लेंगे। यह कहकर बड़ी शीघ्रता से सुग्रीव को पकड़कर पृथ्वी पर पटक दिया। सुग्रीव ने भी भट उठकर रावण को पृथ्वी पर गिरा दिया। रावण और सुग्रीव का युद्ध होने लगा। दोनों की देह से पसीना निकला। रुधिर से सब अंग भीग गये, दोनों वीर थककर शिथिल हो गये। रुधिर से भीगने के कारण फूले हुए ढाक और सेमर के वृक्ष के समान शोभित हुए। लात, घूँसे और थप्पड़ों से एक-दूसरे को मारते हुए युद्ध करते थे। बड़ी देर तक लंका के फाटक पर रावण और सुग्रीव का युद्ध हुआ। लड़ते-लड़ते दोनों वीर खाई में गिर पड़े। बड़ी कठिनता से खाई से निकले और दो घड़ी तक लंबी साँसें छोड़ते रहे। फिर झपटकर युद्ध करने लगे। युद्ध के सब दाँव-पेंच लगाये गये। दोनों वीर बलवान् सिंह के समान अथवा हाथी के बच्चों के समान युद्ध करते थे। परस्पर के प्रहार से फिर एक

साथ पृथ्वी पर गिर पड़े। फिर जल्दी से उठे और प्रहार करने लगे। बड़े दाँव-पेंच से दोनों की कुश्ती हुई, किन्तु थका कोई भी नहीं। हाथी की सूँड़ के समान चढ़ा-उतार भुजाओं से दोनों वीर अपने को बचाते और मतवाले हाथी के समान प्रहार करते थे। युद्ध करते हुए मंडलाकार घूमते थे। दोनों वीर कभी मंडल[१], कभी स्थान[२], कभी गोमूत्रक[३] गति, कभी गतप्रत्यागत, कभी तिर्यक् गति, कभी वक्रगति, कभी प्रहारसे बचते या उसे व्यर्थ करते और कभी दौड़ते थे। कभी अभिद्रवण[४], कभी आप्लावन[५], कभी अविग्रह अवस्थान[६], कभी परावृत्त[७], कभी अपावृत्त[८], कभी अपद्रुत[९], कभी अवप्लुत[१०], कभी उपन्यास[११] और अपन्यास[१२], ये सब युद्ध की कलाएँ दिखाते हुए लड़ते थे। उसके बाद रावण माया के बल से युद्ध करने लगा। यह देखकर सुग्रीव आकाश को कूद गये। बड़े हर्ष से वानरों की सेना में रामचन्द्र के समीप पहुँचे। उनको देखकर रामचन्द्र को बड़ा हर्ष हुआ, युद्ध के लिए उत्साह बढ़ा, वानरों ने उन का सम्मान किया। ११—३०।

---

१. मंडल के चार भेद हैं—चारि, करण, खंड और महामंडल। एक पैर से चलने का नाम चारिमंडल, दोनों पैरों से चलने का नाम करणमंडल, चारि और करण, के संयोग से खंडमंडल और तीन वा चार खंड के संयोग से महामंडल होता है।
२. दोनों पैरों का पूर्वापर विक्षेप और टेढ़ी चाल का नाम स्थान है। उसके छः भेद हैं—वैष्णव, समपाद, वैशाख, मंडल, प्रत्यालीढ और अनालीढ।
३. रेखाकार कुटिलगति।
४. सामने शीघ्रता से दौड़ना।
५. धीरे-धीरे चलना।
६. युद्ध बन्द करके सामने खड़ा रहना।
७. पीछे की ओर चलना।
८. सिकुड़कर बगल से निकल जाना।
९. जाँघ पकड़ने के लिए झुककर दौड़ना।
१०. लात मारने के लिए नीचे मुँह करके झपटना।
११. शत्रु को पकड़ने के लिए भुजाएँ फैलाना।
१२. शत्रु पकड़ न ले, इस मतलब से अपने हाथ फेंकते रहना।

सर्ग ४१

सुग्रीव की देह में युद्ध के चिह्न देखकर रामचन्द्र ने उनको हृदय से लगाकर कहा—हे मित्र, हमसे सलाह किये विना तुम अकेले लंका को चले गये, यह तुमने बड़ा अनुचित किया। राजाओं को ऐसा काम न करना चाहिए। तुमने विभीषण को, मुझे और वानरों की सेना को चिन्ता में डाल दिया था, अब कभी ऐसा काम न करना। यदि तुम्हारी मृत्यु हो जाती तो मुझे सीता को प्राप्त करने का उत्साह न रहता। यद्यपि तुम इन्द्र और वरुण के समान पराक्रमी हो, मैं तुम्हारा बल जानता हूँ किन्तु जब तक तुम लौटकर नहीं आये तब तक मेरे मन में अनेक प्रकार के विचार होते रहे। मैं युद्ध में रावण को उसके पुत्रों और सैनिकों सहित मारकर, विभीषण को लंका का राज्य और भरत को अयोध्या का राज्य देकर, तुम्हारे वियोग में प्राण त्याग देता। रामचन्द्र के कहने पर सुग्रीव ने उत्तर दिया—हे रघुनन्दन, आपकी भार्या को हरने वाले रावण को देखकर मैं अपना क्रोध सम्हाल न सका। १—६। सुग्रीव की यह बात सुनकर रामचन्द्र ने उनकी प्रशंसा की और लक्ष्मण से कहा—हे लक्ष्मण, जहाँ ठंढा पानी और फल मिल सकें वहाँ सेना को ठहराओ। भयानक अशकुन देख पड़ते हैं। वानरों और राक्षसों के विनाश के लक्षण दिखाई देते हैं। १०—१२। वायु बड़े वेग से चलता है, पृथिवी काँपती है, पर्वत के शिखर हिलते हैं, उनका शब्द सुन पड़ता है। बादल मांसाहारी जीवों की तरह कठोर शब्द से गरजते और रुधिर मिला हुआ जल बरसाते हैं। संध्या के समय बादल लाल चन्दन के समान हो जाते हैं। मृग और पक्षी सूर्य की ओर मुँह करके दीन स्वर से चिल्लाते हैं, जिसे सुनकर लोगों को भय मालूम होता है। रात में चन्द्रमा का प्रकाश निर्मल और शीतल नहीं होता। चन्द्रमा के इर्द गिर्द लाल और काली रेखाएँ देख पड़ती हैं। सूर्य के चारों ओर छोटा लाल मंडल देख पड़ता है और उस में काले दाग दिखाई देते हैं। आजकल नक्षत्र भी बहुत कम देख पड़ते

हैं। यह सब प्रलय के लक्षण हैं। कौआ, बाज और गिद्ध घोंसलों से गिर पड़ते हैं। सियारिनें कठोर अशुभ शब्द बोलती हैं। १३—२०। जान पड़ता है कि वानरों और राक्षसों के चलाये हुए पर्वत, शूल और खड्ग से मांस और रुधिर का कीचड़ हो जायगा। रावण से सुरक्षित लंकापुरी को वानरों की सेना लेकर शीघ्र घेर लेना चाहिए। वीर रामचन्द्र लक्ष्मण से यह कहते हुए उस पर्वत से उतर आये। फिर उन्होंने सुग्रीव के द्वारा वानरों को आज्ञा दी कि युद्ध के लिए तैयार हो जायँ। २१—२५। धर्मात्मा महाबाहु रामचन्द्र धनुष-बाण लेकर सेना के साथ लंका की ओर चले। लक्ष्मण, विभीषण, सुग्रीव, हनुमान्, जाम्बवान्, नल और नील उनके पीछे चले। वानरों और रीछों की बहुत बड़ी सेना दूर तक फैली हुई थी। हाथियों के समान वानर और रीछ पर्वतों के शिखर और बड़े-बड़े वृक्ष लेकर चले। बड़ी शीघ्रता से सब लोग लंका के समीप पहुँच गये। २६—३०। वहाँ पताकाएँ फहराती थीं, मनोहर बगीचों से वह पुरी शोभित थी, उसकी चहारदीवारी बड़ी ऊँची थी, इसलिए लंका में प्रवेश करना कठिन था। देवता भी कठिनता से वहाँ जा सकते थे। वानर रामचन्द्र की आज्ञा पाकर लंका में घुस गये। उसका उत्तर-द्वार पर्वत के शिखर के समान ऊँचा था। धनुर्धर रामचन्द्र और लक्ष्मण ने उस द्वार को रोक लिया। उत्तर-द्वार पर रावण स्वयं आया था, इसलिए रामचन्द्र उस द्वार पर गये। ३१—३५। रावण से सुरक्षित होने के कारण वह द्वार वरुण से सुरक्षित समुद्र के समान भयानक था। अस्त्र-शस्त्र धारण किये भयंकर राक्षस उसकी रक्षा करते थे। साधारण पुरुषों के लिए तो वह दानवों से सुरक्षित पाताल के समान अगम्य था। उस फाटक पर अनेक प्रकार के अस्त्र-शस्त्र रक्खे थे। कवच भी बहुत देख पड़ते थे। सेनापति नील पूर्व के द्वार पर गये। बलवान् मैन्द और द्विविद भी उनके साथ थे। महापराक्रमी अंगद दक्षिण के फाटक पर गये। उनके साथ ऋषभ, गवाक्ष, गज और गवय भी थे। महावीर हनुमान्

प्रजंघ और तरस आदि वानरों के साथ पश्चिम के फाटक पर युद्ध करने के लिए गये। वानरराज सुग्रीव गरुड़ और पवन के समान वेगवा छत्तीस करोड़ वानरों के साथ सेना के मध्य में थे। ३६—४२। रामच की आज्ञा से लक्ष्मण और विभीषण जिस फाटक पर आवश्यक समझते थे, वहाँ करोड़ों वानर भेजते थे। सुषेण और जाम्बवा रामचन्द्र के पीछे बहुत बड़ी सेना के साथ खड़े थे। सिंह की जै दाढ़ोंवाले सब वानर हाथों में वृक्ष और शिलाएँ लेकर बड़े ह से युद्ध के लिए खड़े हो गये। ४३—५४। बड़े क्रोध से अपनी पूँ हिलाते थे। नख और दाँत उनके अस्त्र थे। उनमें कोई दस हाथि का, कोई सौ हाथियों का और कोई एक हजार हाथियों का बल रख था। कोई-कोई तो उनसे सौगुना बलवान् थे। बहुतों के बल का अनुमा नहीं किया जा सकता था। जैसे टीड़ी-दल की गिनती नहीं की सकती, वैसे ही वानरों की संख्या करना असम्भव था। लंका के द्वारों कूदते-फाँदते वानरों से पृथिवी और आकाश भर गया था। ४६—५ करोड़ों वानर और रीछ लंका के फाटक घेरकर युद्ध के लिए खड़े हो गये हाथों में वृक्ष लिए हुये वानरों ने लंका को इस प्रकार घेर लिया कि दू की कौन कहे, वायु भी वहाँ नहीं जा सकती थी। इन्द्र-तुल्य परा वानरों का यह काम देखकर, राक्षसों को बड़ा आश्चर्य हुआ। बड़े समुद्र के समान वानर-सेना का भयानक शब्द होने लगा। ५१—५ वह शब्द लंका में सर्वत्र फैल गया। राम-लक्ष्मण और सुग्रीव सुरक्षित सेना को देवता और दानव भी जीत नहीं सकते थे। रामच ने इस प्रकार सेना को नियुक्त करके विभीषण की सम्मति से अंगद बुलाकर कहा—हे सौम्य, तुम रावण के पास जाकर उससे हमारा सन्दे कहो—निर्भय चले जाओ, और उस मूर्ख से कहो—हे निशाचर! तुम ऋषियों, देवताओं, गन्धर्वों, अप्सराओं, यक्षों, नागों और राजा का जो अपकार किया है उसका फल भोगने का समय अब आ गय

ब्रह्मा से वर पाकर तुमको दर्प हुआ है, वह अब नष्ट होनेवाला है। हम अपराधियों को दंड देते हैं, तुम हमारी स्त्री को हर लाये हो, इससे तुमको भी दंड देंगे। हमने लंका को चारों ओर से घेर लिया है।५६—६४। तुमने महर्षियों, देवताओं और राजाओं को मारकर जिस गति को पहुँचाया है, यदि तुम युद्ध में मेरे सामने आओगे तो तुमको भी वही गति मिलेगी। हे राक्षसाधम, जिस बल से हमारा निरादर करके, धोका देकर, सीता को हर लाये हो, वह बल हमको दिखाओ। यदि तुम सीता को लाकर हमारी शरण में नहीं आते, तो हम पैने बाणों से सब राक्षसों का विनाश कर देंगे। राक्षसों में श्रेष्ठ धर्मात्मा विभीषण, जो हमारे पास आये हैं, लंका का अकंटक राज्य पावेंगे। पापी मूर्ख राक्षसों की सहायता से अब तुम राज्य न कर सकोगे। अब दिल मजबूत करके अपनी वीरता दिखाओ और हमारे बाणों से प्राण त्यागकर यमलोक को जाओ। ६५—७०। यदि तुम पक्षी का रूप धारण करके तीनों लोकों में कहीं भी भाग कर जाओगे तो भी हम ढूँढ़कर तुमको मार डालेंगे। हम तुम्हारे हित की बात कहते हैं, अब तुम परलोक के लिए जो कुछ करना चाहो कर लो, लंका को अच्छी तरह देख लो, तुम्हारा जीवन हमारे अधीन है। ७१—७२। रामचन्द्र के यह कहने पर अंगद मूर्तिमान् अग्नि के समान आकाश-मार्ग से चले। क्षणभर में रावण के राजभवन में पहुँच कर मन्त्रियों के साथ सावधान बैठे हुए रावण को देखा, और उसके समीप जाकर बैठ गये। उन्होंने रामचन्द्र का सन्देश उन्हीं के शब्दों में रावण को सुनाया। अंगद ने कहा—मैं अयोध्या के राजा रामचन्द्र का दूत हूँ। मेरे पिता का नाम बालि और मेरा नाम अंगद है। शायद तुमने सुना भी हो। रामचन्द्र ने तुमसे कहा है कि अब लंका से निकल कर युद्ध करो। अपना पराक्रम दिखाओ। यदि सम्मान के साथ सीता को नहीं दोगे तो पुत्र, बन्धु-बान्धव और मन्त्रियों सहित तुमको मार डालेंगे। तुम्हारे मारे जाने पर तीनों लोक निर्भय होंगे। तुम देवता,

दानव, यक्ष, गन्धर्व, नाग, राक्षस और ऋषियों के कंटक हो। तुम्हारा
विनाश अवश्य करेंगे। तुम्हारे मारे जाने पर लंका का ऐश्वर्य विभीषण
को मिलेगा।७३—८१। अंगद के यह कठोर वचन सुनकर राक्षसराज
बड़ा कुपित हुआ। उसने मन्त्रियों से कहा—इस मूर्ख को पकड़कर
मार डालो। रावण की आज्ञा से राक्षसों ने अग्नि के समान तेजस्वी
अंगद को पकड़ लिया। ८२—८४। वीर अंगद राक्षसों को अपना
बल दिखाना चाहते थे, इसलिए पहले कुछ न बोले। दो-दो राक्षसों ने
अंगद के हाथ पकड़ लिये। तब वे उन राक्षसों को लेकर पर्वत के समान
ऊँचे राजमहल पर कूद गये। राक्षस कुछ दूर ऊपर जाकर पृथिवी पर
गिर पड़े। ८५—८७। अंगद ने पर्वत के शिखर के समान ऊँचे राज-
भवन के ऊपर जाकर उसका वह भाग गिरा दिया। जैसे वज्र के प्रहार से
हिमालय का शिखर गिर पड़े, वैसे ही अंगद की लात से राजभवन का
वह भाग पृथिवी पर गिर पड़ा। फिर उन्होंने गरजकर अपना नाम
सबको सुनाया और आकाश-मार्ग से चल दिये। राक्षसों को पीड़ित
करके वानरों को प्रसन्न करते हुए रामचन्द्र के समीप आये। ८८—९१।
राजभवन के गिरने से रावण बड़ा कुपित हुआ। वह क्रोध के मारे लम्बी
साँस छोड़ने लगा। वानर बड़े हर्ष से गरजे। रामचन्द्र शत्रु से युद्ध
करने के लिए तैयार हुए। महापराक्रमी पर्वताकार सुषेण सुग्रीव की आज्ञा
से कामरूपी वानरों की सेना लेकर लंका के सब द्वारों पर घूमने लगे,
जैसे नक्षत्रों के साथ चन्द्रमा आकाश में घूमता है। ९२—९५। वानरों
की सैकड़ों अक्षौहिणी सेना लंका को घेरे थी। उसे देखकर राक्षसों को
बड़ा आश्चर्य हुआ। बहुत-से राक्षस डर गये और कुछ युद्ध में वानरों को
हर्षित देखकर प्रसन्न हुए। ९६—९७। वानरों की सेना लंका की
चहारदीवारी बन गई थी। बेचारे राक्षस डर के मारे हाहाकार करने लगे।
भयानक कोलाहल होने लगा। वीर राक्षस युद्ध के लिए प्रसन्न हुए, अस्त्र
शस्त्र लेकर प्रलयकाल के पवन के समान विचरने लगे। ९८—१००

सर्ग ४२

राक्षसों ने रावण के पास जाकर 'वानरों की सेना के साथ रामचन्द्र ने लंका को घेर लिया है' यह समाचार कहा। यह सुनकर रावण को बड़ा क्रोध हुआ। लंका की रक्षा के लिए सेना को आज्ञा देकर वह बड़े ऊँचे मकान की छत पर चढ़ गया। वहाँ से देखा कि युद्ध चाहनेवाले असंख्य वानरों ने वन-उपवन और पर्वत सहित लंका को चारों ओर से घेर लिया है। लंका के इर्द-गिर्द की भूमि नहीं दिखाई देती। वह सोचने लगा कि इतनी बड़ी सेना का विनाश कैसे किया जायगा। थोड़ी देर सोचकर फिर धैर्य के साथ आँखें फैलाकर रामचन्द्र और वानर-यूथपों को देखने लगा। १—५। रामचन्द्र सेना के साथ लंका की चहारदीवारी के पास आये। उन्होंने राक्षसों से सुरक्षित, चित्र-विचित्र ध्वज-पताकाओं से शोभित लंका को देखा। सीता का स्मरण करके उनको बड़ा दुःख हुआ। वे मन में सोचने लगे, मृगशावक-नयनी सीता हमारे ही कारण शोक से पीड़ित रहती हैं, दुर्बल हो गई हैं और पृथिवी पर सोती हैं। धर्मात्मा रामचन्द्र ने क्रुद्ध होकर वानरों को शत्रुओं का विनाश करने की आज्ञा दी। वानर बड़ी स्पर्धा से सिंह की तरह गरजने लगे। ६—१०। उन्होंने पर्वत के शिखरों और घूँसों से लंका को विध्वंस करने का निश्चय किया। वे पर्वतों के बड़े-बड़े शिखर और वृक्ष लेकर खड़े हो गये। राक्षसराज के देखते ही देखते वानरों की सेना रामचन्द्र का प्रिय करने के लिए लंका की चहारदीवारी पर चढ़ गई। सोने के समान चमकते हुए लाल मुँहवाले वानर वृक्ष और पर्वत लेकर, मरने का भय न करके, लंका में घुसने के लिए चहारदीवारी और फाटक तोड़ने लगे। ११—१५। घास-फूस, लकड़ी, मिट्टी और पत्थर छोड़कर निर्मल जल से भरी हुई खाईं को पाटने लगे। वानरों के हजारों करोड़ों यूथ और यूथप लंका की चहारदीवारी पर चढ़ गये। कैलास के शिखर के समान ऊँचे सुवर्णमय फाटक तोड़ डाले। हाथियों के समान

बड़े-बड़े वानर कूदते-फाँदते और गरजते हुए, महापराक्रमी रामचन्द्र लक्ष्मण और सुग्रीव की जय बोलते हुए, लंका की चहारदीवारी पर दौड़ने लगे। १९—२१। वीरबाहु, सुबाहु, नल और पनस नाम के यूथप चहारदीवारी पर खड़े थे और रावण की सेना को पीड़ित करते थे। पूर्व के द्वार पर बलवान् कुमुद दस करोड़ वानरों के साथ गया। उसकी सहायता के लिए पनस और प्रसभ नाम के वानर भी बहुत से वानरों के साथ गये। दक्षिण के फाटक पर वीर शतबलि बीस करोड़ वानरों को लेकर युद्ध करने के लिए गया। २२—२५। पश्चिम के फाटक पर तारा का पिता बलवान् सुषेण करोड़ों वानरों के साथ गया। उत्तर के फाटक पर रामचन्द्र लक्ष्मण और सुग्रीव के साथ युद्ध करने गये। महाकाय गवाक्ष एक करोड़ वानरों के साथ रामचन्द्र की दाहिनी ओर खड़ा हुआ। महाक्रोधी, शत्रुओं का नाश करनेवाला रीछों का स्वामी धूम्र एक करोड़ रीछों के साथ रामचन्द्र की बाईं ओर खड़ा था। रामचन्द्र के पास ही अपने मन्त्रियों के साथ महाबली विभीषण हाथ में गदा लिये युद्ध के लिए तैयार खड़े थे। २६—३०। गज, गवाक्ष, गवय, शरभ, और गन्धमादन सब ओर दौड़-दौड़कर सेना की रक्षा करते थे। उधर राक्षसराज ने भी कुपित होकर अपनी सेना को युद्ध के लिए शीघ्र जाने की आज्ञा दी। रावण की आज्ञा पाते ही राक्षस गरजने लगे। राक्षसों ने सोने के डंडों से चन्द्रमा के समान श्वेत बड़े-बड़े नगाड़े बजाये। राक्षसों की सेना में सैकड़ों हज़ारों शंख भी बजने लगे। काले राक्षस सफ़ेद शंख मुँह में लगाये बगुलों की पाँति के साथ वर्षा के बादलों के समान शोभित हुए। ३१—३६। रावण की आज्ञा से राक्षसों की सेना प्रसन्न होकर पूर्णमासी के समुद्र के समान बड़े वेग से चली। उधर वानरों की सेना गरजती थी, जिसका शब्द मलय पर्वत की कन्दराओं और शिखरों पर सर्वत्र फैल गया था। राक्षसों की सेना में शंख और नगाड़े का शब्द होता था, और वानर सिंह के

तरह गरजते थे। वह शब्द पृथिवी, आकाश और समुद्र, सब स्थानों में फैल गया। हाथियों के चिंघरने, घोड़ों के हिनहिनाने, रथों के घर-घराने और राक्षसों के गरजने का शब्द सर्वत्र फैल गया। ३७–४०। दोनों सेनाओं का परस्पर युद्ध आरम्भ हुआ। वह युद्ध देवताओं और दानवों के युद्ध के समान था। राक्षस अपना पराक्रम बताकर वानरों पर गदा, शक्ति, शूल और परशु का प्रहार करने लगे। पर्वताकार महाबली वानरों ने भी राक्षसों पर वृक्षों और शिलाओं की वर्षा की, और दौड़-दौड़कर नखों और दाँतों से काटा। वानरों की सेना में 'राजा सुग्रीव की जय' का शब्द हुआ। भयानक राक्षस भी लंका की चहारदीवारी पर चढ़ आये, वानरों को भिन्दिपाल और शूल आदि अस्त्रों से मारने लगे। वानर भी बड़े क्रोध से कूद-कूदकर राक्षसों को मारकर गिराने लगे। बड़ा अद्‌भुत युद्ध हुआ, पृथिवी पर मांस और रुधिर का कीचड़ हो गया। ४१–४७।

सर्ग ४३

इस प्रकार युद्ध करते-करते वानरों और राक्षसों को बड़ा क्रोध आया। वीर राक्षस सोने के आभूषण पहने हुए घोड़ों, अग्नि की शिखा के समान श्वेत हाथियों, सूर्य के समान चमकते हुए रथों पर सवार, सुन्दर कवच पहने, रावण की विजय के लिए गरजते हुए युद्ध करते थे। वानरों की सेना रामचन्द्र की विजय के लिए राक्षसों की ओर दौड़ी। राक्षसों और वानरों का घोर युद्ध हुआ। १–५। इन्द्रजित् अंगद के साथ उसी प्रकार युद्ध करने लगा, जैसे अन्धकासुर ने महादेव से युद्ध किया था। दुर्धर्ष सम्पाति नाम का यूथप प्रजंघ राक्षस से लड़ने लगा। जम्बुमाली से हनुमान् का युद्ध आरम्भ हुआ। वेगवान् शत्रुघ्न नाम का राक्षस विभीषण से युद्ध करने लगा। महाबली गज तपन राक्षस से और महातेजस्वी सेनापति नील निकुम्भ से युद्ध

करने लगे। वानरराज सुग्रीव से प्रघस और श्रीमान् लक्ष्मण से विरूपाक्ष का युद्ध होने लगा।९—१०। अग्निकेतु, रश्मिकेतु, मित्रघ्न और यज्ञकोप, यह चारों राक्षस रामचन्द्र से युद्ध करने लगे। वज्रमुष्टि नाम का राक्षस मैन्द से और अशनिप्रभ राक्षस द्विविद से लड़ने लगा। दुर्धर्ष प्रतपन नाम का भयानक राक्षस नल से युद्ध करने लगा। धर्म के पुत्र बलवान् सुषेण विद्युन्माली राक्षस से युद्ध करने लगे। इसी प्रकार और भी बलवान् वानरों और भयानक राक्षसों का द्वन्द्वयुद्ध आरम्भ हुआ।

वीर वानर और राक्षस अपने-अपने पक्ष की विजय चाहते थे। भयानक रोमांचकारी युद्ध हुआ। रुधिर की नदियाँ बह चलीं। उन नदियों में वानरों और राक्षसों के बाल सेवार के समान और लाशें बहते हुए काठ के समान जान पड़ती थीं। इन्द्रजित् ने कुपित होकर वीर अंगद पर उसी प्रकार गदा का प्रहार किया, जैसे इन्द्र वज्र का प्रहार करते हैं। वेगवान् अंगद ने अपने ऊपर आती हुई गदा को पकड़ लिया और उसी से इन्द्रजित् के घोड़ों को मार डाला, विचित्र रथ भी तोड़ डाला और सारथि का भी विनाश कर दिया। प्रजंघ राक्षस ने सम्पाति वानर को तीन बाण मारे। तब सम्पाति ने अश्वकर्ण का एक वृक्ष उखाड़कर प्रजंघ को मार डाला।११—२०। रथ पर सवार महाबली जम्बुमाली ने बड़े क्रोध से हनुमान् की छाती में एक शक्ति मारी। हनुमान् कुपित होकर उसके रथ पर चढ़ गये और लातों से मारकर उसका विनाश कर दिया और उसका रथ भी तोड़ डाला। प्रतपन नाम का राक्षस गरजकर नल की ओर दौड़ा और बड़ी फुर्ती से तीक्ष्ण बाण मारकर उनको घायल कर दिया। नल ने क्रुद्ध होकर उसकी आँखें निकाल लीं। प्रघस राक्षस ऐसा भयानक था, मानों वानरों की सेना को खा जायगा। सुग्रीव ने सप्तपर्ण के एक वृक्ष से उसे मार डाला। लक्ष्मण ने महाभयानक राक्षस विरूपाक्ष को एक ही बाण से

कर दिया। २१—२५। अग्निकेतु, रश्मिकेतु, मित्रघ्न और यज्ञकोप, ये चारों राक्षस रामचन्द्र पर बाण बरसाते थे। रामचन्द्र ने क्रुद्ध होकर अग्नि की शिखा के समान चमकते हुए चार बाणों से उन चारों के सिर काट डाला। मैन्द ने वज्रमुष्टि राक्षस को एक ऐसा घूँसा मारा कि वह रथ और घोड़ों सहित पृथिवी पर गिर पड़ा। सेनापति नील को निकुम्भ राक्षस ने तीक्ष्ण बाणों से वैसे ही घायल किया, जैसे सूर्य की प्रचंड किरणें बादलों को भेद देती हैं। वह बड़ी फुर्ती से सौ बाण मारकर हँसने लगा। २६—३०। नील ने कुपित होकर रथ की पहिया से निकुम्भ और उसके सारथि का सिर उसी प्रकार तोड़ डाला, जैसे विष्णु ने चक्र से दैत्यों के सिर काटा था। द्विविद ने अग्निप्रभ राक्षस के ऊपर पर्वत का एक शिखर चलाया और उसने वज्र-तुल्य बाणों से द्विविद को घायल कर दिया। तब द्विविद ने क्रुद्ध होकर साल के वृक्ष से रथ और घोड़े सहित उसे मार डाला। ३१—३४। रथ पर सवार विद्युन्माली सुषेण पर सुवर्णभूषित बाणों का प्रहार करके गरजने लगा। सुषेण ने पर्वत का एक शिखर उसके ऊपर दे मारा। उसका रथ चूर-चूर हो गया। तब विद्युन्माली गदा लेकर बड़ी फुर्ती से कूदकर पृथिवी पर खड़ा हो गया। वानरों में श्रेष्ठ सुषेण पर्वत की शिला लेकर बड़े क्रोध से विद्युन्माली की ओर दौड़े। उस राक्षस ने सुषेण की छाती में गदा का प्रहार किया, किन्तु उन्होंने उस प्रहार की कुछ परवा न करके उसकी छाती पर वह शिला दे मारी। उसकी छाती फट गई और वह प्राणहीन होकर पृथिवी पर गिर पड़ा। इस प्रकार वीर वानरों ने राक्षसों का विनाश किया, जैसे देवताओं ने दैत्यों का संहार किया था। भाला, गदा, शक्ति, तोमर और बाणों से, टूटे हुए रथों और युद्ध में मरे हुए घोड़ों से, मरे हुए हाथियों, राक्षसों और वानरों से, रथों की पहिया, जुआ और टूटे हुए डंडों से, पृथिवी भयानक हो गई। युद्धभूमि में सियार घूमने लगे। देवासुर-संग्राम की तरह इस युद्ध में भी कबन्ध उठकर दौड़ने लगे।

रुधिर से लथपथ राक्षस बड़े वेग से युद्ध करते थे और सूर्य के अस्त होने की राह देखते थे, क्योंकि रात में राक्षसों का बल बढ़ जाता है। ३५—४६।

सर्ग ४४

इस प्रकार राक्षसों और वानरों का घोर युद्ध हुआ। सूर्य अस्त हो गये प्राण हरनेवाली रात आ गई। अपनी-अपनी विजय चाहनेवाले वानर और राक्षस रात में भी युद्ध करते रहे। अँधेरी रात में 'तुम राक्षस हो' यह कहकर वानर मारते थे और 'तुम वानर हो' यह कहकर राक्षस प्रहार करते थे। मारो, काटो, आओ, क्यों भागे जाते हो, इस प्रकार के शब्द युद्धभूमि में होते थे। अँधेरी रात में राक्षसों के सोने के कवच वैसे ही चमकते थे, जैसे वन में ओषधियाँ चमकती हैं। १-५। भयानक राक्षस कुपित होकर उस घोर अन्धकार में वानरों की सेना पर कूद पड़े और उनको खाने लगे। राक्षसों के रथों में विषधर साँपों के समान ध्वजाएँ लगी थीं, उनके घोड़े सोने के आभूषण पहने थे। वानर बड़े क्रोध से कूदकर रथों पर चढ़ गये और पैने दाँतों से राक्षसों को नोच डाला। महाबली वानरों ने राक्षसों की सेना को विचलित कर दिया। हाथियों के सवारों को और ध्वज-पताका सहित रथों को खींच-खींचकर पृथिवी पर पटक दिया और राक्षसों को दाँतों से काट डाला। राक्षस छिपकर भी युद्ध करते थे। रामचन्द्र और लक्ष्मण विषैले साँपों के समान बाणों से उनको मारने लगे। घोड़ों की टापों और रथों की पहियों से उठी हुई धूलि वानरों और राक्षसों की आँखों और कानों में भर गई। बड़ा भयानक रोमांचकारी युद्ध हुआ, रुधिर की नदियाँ बहने लगीं। ६—११। नगाड़ा, मृदंग, पणव, शंख और रथ की पहियों का अद्भुत शब्द होता था। घोड़ों के हिनहिनाने, राक्षसों के गरजने, शस्त्रों के चलने और वानरों के किलकिलाने का

शब्द हुआ। शक्ति, शूल और परशु आदि से मारे हुए वानरों से; घूँसों, वृक्षों, और पर्वतों से मारे हुए कामरूपी राक्षसों से और फूलों के समान गिरे हुए अस्त्रों से युद्धभूमि ढक गई। मांस और रुधिर का कीचड़ हो गया। १२—१५। वानरों और राक्षसों के प्राण हरनेवाली वह रात कालरात्रि के समान भयानक हो गई। घोर अन्धकार में सब राक्षस केवल रामचन्द्र के ऊपर बाण बरसाने लगे। क्रोध से रामचन्द्र पर झपटते हुए राक्षसों के गरजने का शब्द प्रलय के समय सातों समुद्रों के शब्द के समान हुआ। रामचन्द्र ने अग्नि की शिखा के समान चमकते हुए छः बाणों से यज्ञशत्रु, महापार्श्व, महोदर, वज्रदंष्ट्र, शुक और सारण, छः राक्षसों को मारकर भगा दिया। वे रामचन्द्र के तीक्ष्ण बाणों से मर्माहत होकर युद्ध से भाग गये।१६—२१। महारथी रामचन्द्र ने चमकते हुए बाणों से सब दिशाओं को प्रकाशित कर दिया। जो राक्षस रामचन्द्र के सामने आये वे उसी तरह नष्ट हुए, जैसे पतंग आग में जल मरते हैं। रामचन्द्र के सुवर्णपुंख बाणों से वह रात उसी प्रकार विचित्र हो गई, जैसे शरदृऋतु की रात में जुगुनू चमकते हैं। राक्षसों के गरजने और नगाड़ों के बजने से भयानक मालूम होती थी।२२—२५। उस शब्द से त्रिकूट पर्वत प्रतिध्वनित होता था। काले रंग के बड़े-बड़े गोलांगूल वानर राक्षसों को पकड़कर मारने लगे। अंगद और इन्द्रजित् का युद्ध होता था। अंगद ने उसके सारथि और घोड़ों को मार डाला। तब इन्द्रजित् अन्तर्धान हो गया। अंगद का यह प्रशंसनीय काम देखकर देवता और महर्षि प्रशंसा करने लगे। युद्ध में इन्द्रजित् का प्रभाव सब लोग जानते थे, इसलिए अंगद से उसकी पराजय देखकर देवता और महर्षि प्रसन्न हुए। सुग्रीव, विभीषण और सब वानर भी प्रसन्न होकर अंगद की प्रशंसा करने लगे। अंगद से हारकर पापी इन्द्रजित् बड़ा कुपित हुआ और अदृश्य रहकर राम-लक्ष्मण पर वज्रतुल्य तीक्ष्ण सर्पमय बाण बरसाने लगा। माया के बल से कपट-युद्ध करनेवाले

इन्द्रजित् ने दोनों भाइयों को बाणों से मूर्च्छित करके नागपाश में बाँध लिया। यह देखकर सब वानर चकित हो गये। दुरात्मा इन्द्रजित् जब सामने युद्ध करके राम-लक्ष्मण का कुछ बिगाड़ न सका तब उसने कपट-युद्ध करके दोनों भाइयों को बाँध लिया। २६—३८।

सर्ग ४५

रामचन्द्र ने सेनापति नील, अंगद, वेगवान् शरभ, द्विविद, हनुमान्, महाबली सानुप्रस्थ, ऋषभ, ऋषभस्कंध और सुषेण के दो पुत्रों को इन्द्रजित् को ढूँढ़ने की आज्ञा दी। वे बड़े हर्ष से वृक्ष लेकर आकाश को गये और सब दिशाओं में उसे ढूँढ़ने लगे। अस्त्र चलाने में निपुण इन्द्रजित् ने तीक्ष्ण बाणों से उन वेगवान् वानरों का वेग रोक दिया। १—५। वे वानर घायल हो गये, और घोर अन्धकार में छिपे हुए इन्द्रजित् को बादलों में ढके हुए सूर्य के समान न देख सके। समर-विजयी इन्द्रजित् ने पैने बाणों से रामचन्द्र और लक्ष्मण के अंग-प्रत्यंग घायल कर दिये थे। उनकी देह में तिलभर भी ऐसा स्थान नहीं था, जहाँ इन्द्रजित् ने बाण न मारे हों। देह से रुधिर बहता था। उनके शरीर फूले हुए ढाक के पेड़ के समान हो गये थे। काजल के ढेर के समान काला इन्द्रजित् लाल-लाल आँखें करके अदृश्य रहकर बोला—अदृश्य रूप से युद्ध करते हुए मुझे देवराज इन्द्र भी नहीं देख सके थे और न मेरा कुछ बिगाड़ ही सके थे, तो फिर तुम दोनों भाई क्या कर सकते हो। ६—११। बाण-जाल में फँसे हुए तुमको मैं अभी यमपुर को भेजता हूँ। यह कहकर उसने धर्मज्ञ राम-लक्ष्मण को तीक्ष्ण बाणों से घायल कर दिया और हर्ष से गरजा। १२—१५। बाण-जाल में बँधे हुए राम-लक्ष्मण इन्द्रजित् को न देख सके। उनके सब अंग घायल हो गये और वे इन्द्र की ध्वजा के समान काँपने लगे। मर्मस्थलों में बाण लगने से व्याकुल होकर पृथिवी पर गिर पड़े। पैर की अँगुलियों से लेकर सिर

तक सब अंग बाणों से वेधे हुए थे। १९—२०। इच्छानुसार रूप धारण करनेवाले क्रूर राक्षस इन्द्रजित् ने दोनों भाइयों को व्यथित कर दिया। उसके बाण धूलि के समान आकाश में छा गये। नाराच, अर्धनाराच, भल्ल, वत्सदन्त, सिंहदंष्ट्र और क्षुर बाणों से घायल होकर रामचन्द्र वीर-शय्या पर सो गये। उनके धनुष की डोरी भी कट गई, हाथ से धनुष छूट गया। धनुष पकड़ने की शक्ति हाथ में न रह गई थी। २१—२४। लक्ष्मण बहुत घबराए। युद्ध में शत्रुओं को परास्त करनेवाले, शरणागत की रक्षा करनेवाले कमलनयन रामचन्द्र की यह दशा देखकर सब वानर दुःखित होकर रोने लगे। २५—२८।

सर्ग ४६

जैसे बादल पानी बरसाकर रुक जाते हैं, वैसे ही इन्द्रजित् ने सर्प-मय बाणों से राम-लक्ष्मण को बाँधकर बाण चलाना बन्द कर दिया। सुग्रीव, विभीषण, नील, द्विविद, मैन्द, सुषेण, कुमुद, अंगद और हनुमान् आदि सब वानर राम-लक्ष्मण को अचेत, धीरे-धीरे साँसें छोड़ते, रुधिर से लथपथ, बाण-जाल में बँधे, शर-शय्या पर सोते, साँप की तरह फुफकारते, बेहोश, धूलि में सोने की ध्वजा के समान पड़े हुए देखकर बड़े दुःखित हुए। आकाश में इधर-उधर देखने लगे, पर मायावी इन्द्रजित् कहीं न देख पड़ा। १—८। विभीषण ने जब राक्षसी माया के बल से देखा तब इन्द्रजित् सामने खड़ा दिखाई दिया। देवता-दानव कोई भी उसे युद्ध में जीत नहीं सकते थे। तेजस्वी, यशस्वी, पराक्रमी इन्द्रजित् वरदान के प्रभाव से अदृश्य रहकर युद्ध करता था। ९—१०। राम-लक्ष्मण को पृथिवी पर घायल पड़े हुए देखकर इन्द्रजित् सब राक्षसों को प्रसन्न करता हुआ अपनी प्रशंसा करने लगा—देखो, महाबली खर-दूषण को मारनेवाले राम-लक्ष्मण मेरे बाणों से घायल पड़े हैं। अब इनको देवता, दानव, महर्षि कोई भी बाण-जाल से छुड़ा नहीं

सकता। जिसके कारण चिन्ता करते-करते मेरे पिता को रात को नींद नहीं आती थी, शय्या पर नहीं सोते थे, तीन पहर रात यों ही बीत जाती थी, जिसके कारण लंका नगरी वर्षाकाल में नदी के समान व्याकुल थी, हमने उस अनर्थ की जड़ को काट दिया, और सबको शान्त कर दिया। ११—१५। जैसे शरदृऋतु में बादल निष्फल हो जाते हैं वैसे ही राम-लक्ष्मण और सब वानरों का पराक्रम निष्फल हुआ। यह कहकर इन्द्रजित् सब राक्षसों के समक्ष वानर-यूथपों पर भी प्रहार करने लगा। नील के नव बाण और मैन्द-द्विविद के तीन-तीन बाण मारे। जाम्बवान् की छाती में एक बाण, हनुमान् के दस बाण, गवाक्ष और शरभ के दो-दो बाण मारे। १६—२०। फिर बड़ी फुर्ती से धूम्र और अंगद को अग्नि की शिखा के समान चमकते हुए बाणों से पीड़ित करके गरजने लगा। वानरों को पीड़ित और भयभीत करके हँसकर राक्षसों से बोला—हे राक्षसो ! सुनो, हमने भयानक बाणों से राम-लक्ष्मण को बाँध लिया है। कपट-युद्ध करनेवाले राक्षस बड़े प्रसन्न और विस्मित थे। राम-लक्ष्मण को मरा हुआ समझकर इन्द्रजित की प्रशंसा करके बादलों की तरह गरजे। युद्ध में विजयी इन्द्रजित बड़ा प्रसन्न था। सब राक्षसों को प्रसन्न करता हुआ वह लंका को चला गया। २१—२८। इधर राम-लक्ष्मण की देह भर में बाण लगे हुए देखकर सुग्रीव बहुत घबराए। भय और क्रोध से व्याकुल होकर रोने लगे। तब विभीषण ने उनसे कहा—हे सुग्रीव, डरो मत; रोने का काम नहीं है। इन मायावी राक्षसों की विजय का कुछ ठीक नहीं रहता। ये लोग माया से भी ऐसे काम दिखाते हैं। हे वीर, यदि हम लोगों का भाग्य होगा, तो महाबली महात्मा राम-लक्ष्मण इस मोह को छोड़ देंगे। इसलिए आप प्रसन्न होकर मुझ अनाथ को भी प्रसन्न कीजिए। २९—३२। यह कहकर विभीषण ने सुग्रीव की आँखें धोईं और समय के अनुसार इस प्रकार उनसे कहा—हे वानरराज, यह समय व्याकुल होने का नहीं

है, ऐसे समय में अत्यन्त स्नेह करना भी उचित नहीं होता। इसलिए सब कामों का विनाश करनेवाली व्याकुलता को छोड़कर, जब तक राम-लक्ष्मण को होश न आवे, तब तक सेना की रक्षा कीजिए। जब इनकी मूर्च्छा जागेगी तब हम लोगों का भय दूर होगा। ३३—३८। बाण-जाल में बँध जाने से रामचन्द्र का कुछ नहीं बिगड़ेगा, इनकी मृत्यु नहीं होगी। इनके मुँह पर मृत्यु के लक्षण नहीं दीखते। मुँह की कान्ति मलिन नहीं हुई, जैसी कि आयु समाप्त होने पर हो जाती है। इसलिए आप धैर्य रखिए और सेना को भी समझाइए। मैं भी सैनिकों को आश्वासन देता हूँ। डर के मारे वानर आँखें निकाले हुए आपस में काना-फूसी कर रहे हैं। हम लोगों को प्रसन्न देखकर उनका डर जाता रहेगा। राक्षसों में श्रेष्ठ विभीषण ने इस प्रकार सुग्रीव और सब वानरों को समझाया। ३९—४३। उधर मायावी इन्द्रजित् अपनी सेना लेकर लंका को लौट गया और रावण के पास जाकर, हाथ जोड़कर प्रणाम करके प्रिय वचन बोला—पिताजी, मैंने राम-लक्ष्मण को मार डाला। ४४—४५। राक्षसों की सभा में बैठा हुआ रावण अपने शत्रुओं का वध सुनकर बड़े हर्ष से उठकर इन्द्रजित् को हृदय से लगा लिया। फिर उसका सिर सूँघा और बड़े हर्ष से युद्ध का हाल पूछने लगा। इन्द्रजित् ने जिस प्रकार राम-लक्ष्मण को बाण-जाल में बाँधकर अचेत कर दिया था, वह सब हाल कहा। रावण बड़ा प्रसन्न हुआ। रामचन्द्र के कारण उसे जो विकलता थी, वह दूर हो गई। अपने पुत्र की प्रशंसा करने लगा। ४६—४९।

सर्ग ४७

इन्द्रजित् अपनी विजय समझकर लंका को चला गया था और इधर वानर चारों ओर से घेरकर रामचन्द्र की रक्षा करने लगे। हनुमान्, अंगद, नील, सुषेण, कुमुद, नल, गज, गवाक्ष, पनस, सानुप्रस्थ,

जाम्बवान्, सुन्द, रम्भ, शतवलि और पृथु, ये सब वानर सेना की व्यूह रचना करके, वृक्ष लेकर, सब ओर देखते हुए, राम-लक्ष्मण की रक्षा करने लगे। कहीं तिनका भी हिलता था, तो राक्षसों के आने का सन्देह करते थे। १–४। उधर रावण ने बड़े हर्ष से इन्द्रजित् को बिदा किया और सीता की रक्षा करनेवाली राक्षसियों को बुलाया। उसकी आज्ञा से त्रिजटा नाम की राक्षसी के साथ सब राक्षसियाँ आईं। रावण बड़े हर्ष के साथ उनसे बोला—तुम लोग सीता से बताओ कि इन्द्रजित् ने राम-लक्ष्मण को मार डाला है, और सीता को पुष्पक विमान पर युद्धभूमि में ले जाकर मारे हुए दोनों भाइयों को दिखा भी दो। ५–७। जिन रामचन्द्र के बल पर सीता को गर्व था और हमको कुछ नहीं समझती थीं, वे रामचन्द्र अपने भाई के साथ युद्ध में मारे गये। अब उनके मिलने की आशा त्यागकर हमारे पास आवें। राम-लक्ष्मण मार डाले गये हैं, इसलिए और किसी की शरण न देखकर, विवश होकर स्वयं हमारे वश में रहेंगी। ८–१०। दुरात्मा रावण की आज्ञा से राक्षसियाँ पुष्पक विमान लेकर अशोक-वाटिका में गईं और सीता को विमान पर बैठाकर ले चलीं। रावण ने लंका में ढिंढोरा पिटा दिया कि इन्द्रजित् के हाथ से राम-लक्ष्मण मारे गये। ११–१५। सीता त्रिजटा के साथ विमान पर बैठकर युद्धभूमि में गईं। उन्होंने देखा कि वानरों की सेना मरी पड़ी है, राक्षस बड़े प्रसन्न हैं। वानर राम-लक्ष्मण के पास बड़े दुःखित खड़े हैं। राम-लक्ष्मण बाणों से पीड़ित और अचेत होकर शर-शय्या पर पड़े हैं। उनके कवच टूट गये हैं, धनुष पृथिवी पर पड़े हैं, बाणों से उनके सब अंग घायल हो गये हैं, उनकी देह में बाण ही बाण देख पड़ते हैं। सीता उनकी यह दशा देखकर बड़ी दीनता से रोने लगीं, और उनकी मृत्यु के विषय में तर्क-वितर्क करती हुई इस प्रकार कहने लगीं। १६–२३।

सर्ग ४८

देह के लक्षण जाननेवाले पंडितों ने मुझे बताया था कि मैं पुत्रवती हूँगी और जीवन भर सधवा रहूँगी। ज्योतिषियों ने कहा था कि रामचन्द्र बहुत-से अश्वमेध यज्ञ करेंगे और मैं उनकी पटरानी हूँगी। मुझे कल्याणी और पति से सम्मान पानेवाली बताया था। आज रामचन्द्र के मारे जाने से उन लोगों के वचन असत्य हुए। जिन ज्योतिषियों ने मुझे जीवनभर सधवा रहने की बात बताई थी, उनकी बात भी आज असत्य हुई। १—५। जिन कुलीन स्त्रियों के पैरों में पद्म-चिह्न होते हैं, वे अपने पति के साथ राज्य-सिंहासन पर अभिषिक्त होती हैं। मेरे पैरों में पद्म भी हैं। जिन लक्षणों से स्त्रियाँ विधवा और अभागिन होती हैं, वे लक्षण मेरी देह में नहीं हैं। ६—७। सामुद्रिक जाननेवाले पंडितों ने स्त्रियों के जो शुभ लक्षण बताये हैं, आज रामचन्द्र के मारे जाने से उनकी सब बातें असत्य हुईं। मेरे सिर के बाल सूक्ष्म, काले और समान हैं; भौंहें एक में जुटी नहीं हैं; जाँघें गोल हैं और उनमें रोयें नहीं हैं; दाँत बिरल नहीं हैं, कनपटी बैठी नहीं हैं, आँखें, हाथ, पैर, घुटने और जाँघें समान हैं। अँगुलियाँ स्निग्ध और बराबर हैं; नख गोलाकार और लाल हैं। स्तन कठोर और कुचाग्र गहरे हैं। नाभि गहरी और उसके किनारे ऊँचे हैं। छाती चौड़ी और पार्श्व भरी हुई हैं। देह की कान्ति मणि के समान चमकती है, रोयें कोमल हैं, पैरों की अँगुलियाँ और तलवे ज़मीन से उठे नहीं रहते। अँगुलियों के पोरों पर जौ के समान चिह्न हैं। अँगुलियाँ घनी हैं, हथेली और तलवे लाल हैं। मन्द मुसकान है। इन सब लक्षणों से ज्योतिषियों ने पति के साथ राज्य-सिंहासन पर हमारा अभिषेक बताया था, उनकी बात असत्य हुई। ८—१४। जनस्थान से ढूँढ़ते-ढूँढ़ते दोनों भाई हमारा पता लगा कर, समुद्र को पार करके लंका में आ गये, किन्तु यहाँ गाय के खुर में भरे हुए जल में डूब गये। वारुण, आग्नेय, ऐन्द्र, वायव्य और

ब्रह्मशिर अस्त्र भी राम-लक्ष्मण को परास्त कर नहीं सकता था। मा
के बल से छिपकर इन्द्रजित् ने मुझ अनाथा के नाथ रामचन्द्र को मा
डाला। चाहे मन के समान वेगवान् भी क्यों न हो, किन्तु युद्ध
रामचन्द्र के सामने आकर कोई जीवित नहीं लौट सकता था। १५-१
किन्तु काल के लिए कुछ भी कठिन नहीं है, यही कारण है कि राम
लक्ष्मण युद्ध में मारे गये। महारथी राम-लक्ष्मण के लिए, अथ
अपने लिए, या अपनी माता के लिए उतना शोक नहीं है, जितन
अपनी सास के लिए मुझे दुःख है। तपस्विनी कौसल्या प्रति
यही सोचती होंगी कि वनवास का समय बिताकर रामचन्द्र सीत
और लक्ष्मण के साथ कब आवेंगे और कब उन्हें देखूँगी। १६-२१
इस प्रकार रोती हुई सीता को राक्षसी त्रिजटा समझाने लगी। हे देवि
तुम शोक न करो, तुम्हारे स्वामी जीवित हैं। जिन कारणों से मैं राम
लक्ष्मण को जीवित समझती हूँ, सो सुनो। जब सेना का स्वामी मा
जाता है, तब सैनिकों के चेहरे पर क्रोध और हर्ष नहीं प्रकट होता
एक और भी विशेष बात इनके जीवित रहने का विश्वास दिलाती है
यदि ये जीवित न होते तो यह दिव्य पुष्पक विमान तुमको अपने ऊ
न बैठाता; क्योंकि विधवा स्त्री इस पर नहीं बैठ सकती। जब से
का प्रधान मारा जाता है, तब सैनिकों का उद्यम और उत्साह नष्ट
जाता है। जैसे केवट के बिना नाव पानी में इधर-उधर बहती फिरती है, व
दशा सेना की हो जाती है। किन्तु वानरों की सेना घबराई हुई न
है, सावधानी से राम-लक्ष्मण की रक्षा करती है। इससे भी जान पड़ता
कि राम-लक्ष्मण मरे नहीं हैं। तुम विश्वास करो और राम-लक्ष्मण
जीवित समझो। मैं तुम्हारे स्नेह से यह बात कहती हूँ। २२-२
मैंने कभी तुमसे झूठ नहीं कहा और न कहूँगी। तुम अपने स्व
और आचरण से मेरे मन में बस गई हो। इन दोनों भाइयों
इन्द्र आदि देवता और दानव भी युद्ध में जीत नहीं सकते;

बेचारे राक्षस इनका क्या बिगाड़ सकेंगे। यह सब विचारकर मैंने यह बात कही है। २९—३०। हे वैदेही! देखो, यह कितने बड़े आश्चर्य की बात है कि बेहोश होने पर भी इनके मुँह की कान्ति मलिन नहीं हुई। प्रायः देखा गया है कि जब मनुष्य मर जाते हैं तो उनके चेहरे पर बहुत बड़ा विकार हो जाता है। ३१—३२। हे जनकनन्दिनी, तुम शोक, दुःख और मोह छोड़ दो, राम-लक्ष्मण मरे नहीं हैं। त्रिजटा की यह बात सुनकर देवकन्या के समान सुन्दरी सीता हाथ जोड़कर बोलीं—तुम्हारा वचन सत्य हो। ३३—३४। उसके बाद मन के समान चलने-वाला पुष्पक विमान दुःखित सीता को लेकर अशोक-वाटिका को लौट गया। सीता त्रिजटा के साथ विमान से उतरीं। राक्षसराज रावण की विहारभूमि, अनेक प्रकार के वृक्षों से शोभित, अशोकवाटिका में जाकर सीता राम-लक्ष्मण की चिन्ता में बड़ी दुःखित हुईं। ३५—३७।

सर्ग ४९

इधर बाण-जाल से बँधे हुए, साँप की तरह लम्बी साँसें छोड़ते हुए, रुधिर से भीगे हुए, शर-शय्या पर सोते हुए, राम-लक्ष्मण के समीप सुग्रीव आदि महाबली वानर शोक से व्याकुल खड़े थे। इतने में महा-पराक्रमी धैर्यवान् रामचन्द्र की मूर्च्छा दूर हुई, वे सोते हुए की तरह जाग पड़े। लक्ष्मण को रुधिर से लथपथ, बेहोश देखकर दीनभाव से रोने लगे—जब युद्ध में लक्ष्मण मारे गये, तो मैं सीता को लेकर क्या करूँगा। मुझे अपने जीवन से भी प्रयोजन नहीं है। सीता के समान स्त्री चाहे मिल भी जाय, पर लक्ष्मण के समान भाई, मन्त्री और योद्धा नहीं मिल सकता। १—६। यदि लक्ष्मण मर गये, तो मैं भी वानरों के सामने ही अपने प्राण त्याग दूँगा। लक्ष्मण के विना अयोध्या में जाकर अपनी माता कौसल्या और केकयी से क्या कहूँगा। अपने पुत्र को देखने की आशा करती हुई सुमित्रा से क्या बताऊँगा। वे पुत्र के

वियोग में कुररी की तरह विलखती होंगी, मैं उनको कैसे समझाऊँगा।
लक्ष्मण मेरे साथ वन को आये थे, मैं उनके विना अयोध्या
में जाकर यशस्वी भरत और शत्रुघ्न से क्या कहूँगा। ७–१०। सुमित्रा
का विलाप मुझसे न सहा जायगा, इसलिए मैं यहीं शरीर त्याग
दूँगा। लक्ष्मण के विना मैं जीवित रहना नहीं चाहता। मुझ पापी
और असभ्य को धिक्कार है। मेरे ही कारण लक्ष्मण शर-शय्या पर
मृतक के समान सो रहे हैं। ११–१२। हे लक्ष्मण, जब मुझे कोई
दुःख होता था, तब तुम समझाते थे, किन्तु आज मैं इतना दुःखित हूँ
और तुम मुझसे नहीं बोलते। जिस पृथिवी पर तुम्हारे मारे हुए बहुत
से राक्षस पड़े हैं, उसी पर तुम भी बाणों से घायल होकर पड़ रहे हो।
तुम्हारे सब अंगों में रुधिर लगा है, तुम बाणों की शय्या पर सोते हो।
अस्त होते हुए सूर्य के समान तुम्हारी दशा हो गई है। तुम्हारे मर्म
स्थलों में बाण लगे हैं, इससे तुम बोल नहीं सकते। तुम्हारी आँखों
से भी मालूम होता है कि तुम बहुत पीड़ित हो। १३–१६। वन को
चलते समय जिस तरह हमारे पीछे चले आये थे, वैसे ही हम भी आज
तुम्हारे पीछे अपने प्राण त्यागकर चले जायँगे। लक्ष्मण ने कभी क्रोध
क्रोध में भी कठोर अप्रिय वचन मुँह से नहीं निकाले। कार्तवीर्य एक
ही वेग में पाँच सौ बाण चलाता था, किन्तु धनुर्धर लक्ष्मण उससे
भी बढ़कर थे। १७–२०। इन्द्र के अस्त्रों को भी अपने बाणों से काट
सकते थे। मायावी राक्षस सम्मुख युद्ध करके इनको परास्त नहीं कर
सकता था, उसने माया के बल से युद्ध किया। वीर लक्ष्मण
बहुमूल्य शय्या पर सोने के योग्य थे, वे इस समय पृथिवी पर पड़े हैं।
मैंने प्रतिज्ञा की थी कि विभीषण को राक्षसों का राजा बनाऊँगा, वह
प्रतिज्ञा मिथ्या हो रही है। यह शोक मुझे और भी जलाये देता है।
हे सुग्रीव, अब मैं असत्यवादी हुआ। अब तुम किष्किन्धा को लौट
जाओ, नहीं तो रावण तुमको परास्त कर देगा। अंगद और नल

नील आदि यूथपों को लेकर समुद्र उतर जाओ। ऋक्षराज जाम्बवान्, अंगद, मैन्द, द्विविद, केसरी, सम्पाति, गवय, गवाक्ष, शरभ, गज और अन्य वानरों ने युद्ध में जो वीरता की है, उससे मैं बहुत सन्तुष्ट हूँ। इन लोगों ने अपने जीवन की आशा छोड़कर हमारे लिए युद्ध किया। हे सुग्रीव, भाग्य में जो बदा होता है, उसे कोई हटा नहीं सकता। तुम धर्मात्मा हो तुमने मित्र और सुहृद् के कर्तव्य का पालन किया। हे वानरो, तुम लोगों ने भी मित्र-कार्य अच्छी तरह से किया। अब हमारी आज्ञा से अपने-अपने स्थान को चले जाओ। २१—२९। रामचन्द्र का यह रोना सुनकर वानर भी रोने लगे। रोते-रोते वानरों की आँखें लाल हो गईं। उसी समय सैनिकों को उचित स्थान पर नियुक्त करके विभीषण हाथ में गदा लिये रामचन्द्र के पास आये। काजल के ढेर के समान काले विभीषण को आते देखकर, उनको इन्द्रजित् समझकर वानर भागने लगे। ३०—३२।

सर्ग ५०

वानरों को भागते देखकर वानरराज सुग्रीव ने कहा—यह क्या कारण है कि प्रचंड वायु से बहती हुई नाव की तरह हमारी सेना भाग रही है। अंगद ने उत्तर दिया, क्या आप नहीं देखते, महारथी वीर राम-लक्ष्मण घायल होकर रुधिर से भीगे हुए शर-शय्या पर पड़े हैं! सुग्रीव ने कहा—सेना के भागने का यह कारण नहीं है, किसी के डर से भाग रही है। १—४। वानरों ने अस्त्र फेंक दिये हैं, डर के मारे उनकी आँखें चंचल हो गई हैं और उदास होकर भागे चले जा रहे हैं। एक दूसरे को देखकर लज्जित नहीं होते, पीछे फिरकर कोई नहीं देखता, दूसरों को भागने के लिए आकर्षित करते हैं। जो गिर पड़ते हैं, उनको नाँघते चले जाते हैं। ५—६। सुग्रीव यह कह ही रहे थे, उसी समय हाथ में गदा लिये हुए वीर विभीषण आये। उन्होंने 'रामचन्द्र और

सुग्रीव की जय' कहकर आशीर्वाद दिया। विभीषण को देखकर और यह समझकर कि इन्हीं के डर से वानर भाग रहे हैं, सुग्रीव ने समीप बैठे हुए जाम्बवान् से कहा--विभीषण आये हैं, इन्हीं को देखकर इन्द्रजित् की आशंका से वानर भागे जाते हैं। आप शीघ्र जाकर इन भागते हुए वानरों से कहिए कि इन्द्रजित् नहीं है, विभीषण हैं। सुग्रीव की आज्ञा से जाम्बवान् ने भागते हुए वानरों को समझाकर लौटाया। जाम्बवान् के कहने से और विभीषण को देखकर वानर निडर होकर लौट आये। धर्मात्मा विभीषण को राम-लक्ष्मण की दशा देखकर बड़ा दुःख हुआ। उन्होंने हाथ में पानी लेकर दोनों भाइयों की आँखें धोईं, और शोक से पीड़ित होकर विलाप करने लगे। ७-१४।
हाय, महापराक्रमी वीर राम-लक्ष्मण को माया से युद्ध करनेवाले राक्षसों ने इस दशा को पहुँचाया। यह दोनों भाई सरल पराक्रमी हैं, कपट-युद्ध नहीं करते। दुरात्मा इन्द्रजित् ने राक्षसी कुटिलता से इनके साथ घाट किया। ये बाणों से घायल होकर पृथिवी पर सो रहे हैं। देह भर में चुभे हुए बाणों से साही के समान देख पड़ते हैं। १५-१७।
जिनके पराक्रम के बल से मैंने अपनी प्रतिष्ठा चाही थी, वे दोनों पुरुषश्रेष्ठ अपना शरीर त्यागने के लिए पृथिवी पर सो रहे हैं। आज मेरा जीवन संकटमय हुआ, राज्य पाने का मनोरथ नष्ट हो गया। अब हमारे शत्रु की प्रतिज्ञा पूरी होगी, उसका मनोरथ सफल होगा। इस तरह विलाप करते हुए विभीषण को महापराक्रमी सुग्रीव ने छाती में लगा लिया और उनसे कहा—हे धर्मज्ञ, रावण अपने पुत्रों के साथ मारा जायगा, उसके मनोरथ सफल नहीं होंगे और आप लंका का राज्य पावेंगे, इसमें सन्देह नहीं है। गरुड़ आकर राम-लक्ष्मण को सर्पमय बन्धन से छुड़ा देंगे, और ये मोह छोड़कर युद्ध में सेना सहित रावण को मारेंगे। इस प्रकार विभीषण को समझाकर सुग्रीव ने समीप बैठे हुए अपने ससुर सुषेण से कहा—राम-लक्ष्मण

को जब होश आजाय, तब आप वीर वानरों के साथ इन्हें किष्किन्धा को ले जाइए। मैं रावण को उसके पुत्रों और बान्धवों सहित मारकर सीता को उसी प्रकार ले आऊँगा, जैसे नष्ट हुई राज्यलक्ष्मी को इन्द्र ने प्राप्त किया था। १८—२५। सुग्रीव की यह बात सुनकर सुषेण ने कहा—देवासुर-संग्राम में जब दानवों ने बाण चलाने में निपुण देवताओं को बाणों से घायल कर दिया था, उनमें बहुत-से मूर्च्छित और बहुतेरे मर भी गये थे, तब बृहस्पति ने मन्त्रयुक्त विद्याओं और ओषधियों से उनकी चिकित्सा की थी। उन ओषधियों को लाने के लिए सम्पाति और पनस आदि वानर शीघ्र क्षीरसमुद्र के निकट जायँ। ये वानर उन दोनों ओषधियों को पहचानते हैं। एक का नाम संजीवनी है और दूसरी का विशल्या। २६—३०। जहाँ अमृत मथा गया था, वहाँ क्षीरसमुद्र के किनारे चन्द्र और द्रोण नाम के दो पर्वत हैं। उन्हीं पर्वतों पर ये ओषधियाँ हैं। उन पर्वतों को देवताओं ने वहाँ स्थापित किया है। अथवा केवल हनुमान् ही चले जायँ और उन ओषधियों को ले आवें। सुषेण यह कह ही रहे थे, उसी समय बड़े ज़ोर से वायु चलने लगी, बादल घिर आये, बिजली चमकने लगी, समुद्र में ज़ोर से लहरें आने लगीं, पर्वत डगमगाने लगे, प्रचंड वायु से समुद्रतट के वृक्ष टूट कर समुद्र में गिर पड़े। समुद्र में रहनेवाले साँप डर के मारे जल के भीतर चले गये। थोड़ी ही देर के बाद प्रज्वलित अग्नि के समान तेजस्वी महाबली गरुड़ आते हुए दिखाई दिये। जिन साँपों ने बाण-रूप होकर राम-लक्ष्मण को बाँधा था, वे गरुड़ को देखकर भाग गये। गरुड़ ने राम-लक्ष्मण की पीठ पर हाथ फेरा। चन्द्रमा के समान सुन्दर उनके मुँह पर भी हाथ फेरकर उनको प्रसन्न किया। गरुड़ के स्पर्श करते ही राम-लक्ष्मण के सब घाव भर गये। दोनों भाइयों के शरीर का रंग पहले का-सा सुन्दर और स्निग्ध हो गया। तेज, वीर्य, बल, ओज, उत्साह, गुण, सौन्दर्य, बुद्धि और स्मरणशक्ति पहले से भी दुगुनी हो

गई। ३१—४०। इन्द्रतुल्य तेजस्वी गरुड़ ने राम-लक्ष्मण को उठाकर छाती में लगा लिया। रामचन्द्र ने प्रसन्न होकर गरुड़ से कहा—इन्द्रजित् के बाणों से जो पीड़ा हमको हुई थी, वह आपकी कृपा से दूर हो गई। आपने हम दोनों भाइयों को फिर बलवान् कर दिया। आपको देखकर हमको वैसा ही हर्ष हुआ, जैसा अपने पिता और पितामह को देखकर होता। अब यह बताइए कि दिव्य फूलों की माला पहने, दिव्य चन्दन लगाये, स्वच्छ वस्त्र धारण किये, दिव्य आभूषणों से भूषित रूप-सम्पन्न आप कौन हैं? महातेजस्वी, महाबली, पक्षिराज गरुड़ ने प्रसन्न होकर कहा—हे रामचन्द्र, हम आपके प्राणों के समान प्रिय मित्र हैं, हमारा नाम गरुड़ है, आपकी सहायता के लिए यहाँ आये हैं। ४१—४६। माया के बल से दुरात्मा इन्द्रजित् ने जिन भयानक बाणों से आपको बाँध दिया था, उस बन्धन से हमारे सिवा महापराक्रमी दानव, महाबली वानर, गन्धर्व, देवता और इन्द्र भी नहीं छुड़ा सकते थे। कद्रू के पुत्र, महाविषधर साँप, राक्षस की माया से बाणरूप होकर आपको बाँधे हुए थे। इसी लिए हम आये हैं। अब आप सावधानी से रहें, क्योंकि युद्ध में माया करना राक्षसों की स्वाभाविक बात है, और आप दोनों भाई, सरल और शुद्धस्वभाव हैं। युद्ध में राक्षसों का विश्वास न कीजिएगा। सब राक्षस इन्द्रजित् के समान मायावी हैं। ४७—५४। महाबली गरुड़ ने रामचन्द्र को फिर छाती से लगाकर कहा—शत्रुओं पर भी दया करनेवाले हे रामचन्द्र! अब मुझे आज्ञा दीजिए, मैं जाऊँगा। मेरी मित्रता के विषय में कुछ आश्चर्य न कीजिए। जब रावण को मारकर आप कृतकार्य हो जायँगे, तब आपको हमारी मित्रता भी मालूम हो जायगी। बालक और बूढ़े राक्षसों को छोड़कर लंका के सब राक्षसों का विनाश कीजिए। आप शत्रु रावण का वध करके सीता को प्राप्त करेंगे। यह कहकर महापराक्रमी गरुड़ रामचन्द्र की प्रदक्षिणा करके, उनको हृदय से लगाकर, आकाश-मार्ग

पवन के समान वेग से चले गये। ५५—६०। रामचन्द्र को स्वस्थ देखकर सब वानर सिंह के समान गरजने और पूँछ हिलाने लगे। वानर जिस तरह पहले कूदते-फाँदते थे, वैसे ही फिर प्रसन्न होकर कूदने-फाँदने लगे। हाथों में पर्वत और वृक्ष लेकर युद्ध के लिए खड़े हो गये। गरजकर राक्षसों को भयभीत करते हुए लंका के द्वारों पर जा पहुँचे। जैसे बरसात में आधीरात के समय बादलों के गरजने का शब्द भयानक होता है, वैसा ही वानर-यूथपों के गरजने का शब्द होने लगा। ६१—६५।

सर्ग ५१

वानरों का गरजना सुनकर रावण अपने मन्त्रियों से बोला—देखो, वानर बड़े हर्ष से बादलों के समान गरज रहे हैं। जान पड़ता है कि ये बहुत प्रसन्न हैं। इनके सिंहनाद से समुद्र काँप उठता है। १—४। राम-लक्ष्मण दोनों भाई तो सर्पमय बाणों से बँधे पड़े हैं और वानर इस तरह गरजते हैं, इससे हमको बड़ी आशंका होती है। राक्षसराज रावण मन्त्रियों से यह कहकर समीप बैठे हुए राक्षसों से बोला—तुम लोग शीघ्र जाकर मालूम करो कि शोक के समय वानरों के हर्ष का क्या कारण है? ५—७। रावण की आज्ञा पाकर राक्षसों ने लंका की चहारदीवारी पर चढ़कर महात्मा सुग्रीव से सुरक्षित वानरों की सेना देखी। भाग्यवान् राम-लक्ष्मण दोनों भाई बन्धन से छूट गये थे। उनको देखकर राक्षसों को बड़ा दुःख हुआ। वे भयभीत होकर चहारदीवारी से उतर आये और उदास होकर रावण के पास गये। बोलने में चतुर राक्षसों ने वह अप्रिय समाचार इस प्रकार रावण से निवेदन किया—इन्द्रजित् ने युद्ध में जिन दोनों भाइयों को सर्पमय बाणों से बाँध दिया था, जिनको हाथ हिलाने की भी शक्ति नहीं थी, वे इस समय बन्धन से छूटे हुए दिखाई देते हैं। गजराज के समान पराक्रमी दोनों भाई बन्धन

काटकर उठ बैठे हैं। ८–१३। राक्षसों की यह बात सुनकर महाबली राक्षसराज का मुँह चिन्ता और क्रोध के मारे उदास हो गया। कहने लगा कि इन्द्रजित् को वरदान मिला है उसने विषधर साँपों के समान, सूर्य की तरह चमकते हुए, अमोघ बाणों से परास्त करके राम लक्ष्मण को बाँध लिया था। यदि ऐसे बन्धन से भी हमारे शत्रु छूट गये तो अब हमको सन्देह है कि हम ठीक-ठीक उनका बल नहीं समझ सके थे। अग्नि के समान बाण निष्फल हुए और हमारे शत्रु जीवित बच गये। १४–१७। रावण यह कहकर क्रोध के मारे साँप की तरह लम्बी साँस छोड़ता हुआ धूम्राक्ष नामक राक्षस से बोला—हे भीमविक्रम तुम राक्षसों की बहुत बड़ी सेना लेकर वानरों के साथ रामचन्द्र को मारने के लिए शीघ्र जाओ। राक्षसराज की आज्ञा से धूम्राक्ष उसकी प्रदक्षिणा करके राजभवन से चला। १८–२०। उसने सेनापति से कहा कि सेना शीघ्र तैयार करो। सेनापति ने रावण की आज्ञा से सेना को जाने की आज्ञा दी। भयानक राक्षस बड़े हर्ष से गरजने लगे। शूल, मुद्गर, गदा, पट्टिश, दंड, मुसल, परिघ, भिन्दिपाल, भाला, पाश और परशु आदि अनेक प्रकार के अस्त्र-शस्त्र लेकर बादलों के समान गरजते हुए चले। बहुत-से राक्षस कवच पहनकर, ध्वजा, पताका और आभूषणों से सजे हुए रथ पर चढ़कर चले। उनके रथों में गधे जुते थे। बहुत-से राक्षस तेज़ घोड़ों और मतवाले हाथियों पर सवार होकर चले। धूम्राक्ष भी गधों के रथ पर सवार होकर गरजता हुआ चला। वह अपनी सेना लेकर पश्चिम के द्वार पर गया, जिस द्वार पर हनुमान् हँसते हुए खड़े थे। आकाश में उड़ते हुए अशुभ पक्षी धूम्राक्ष को रोकने लगे। एक गिद्ध उसके रथ पर कूद पड़ा। मांस खानेवाले पक्षी पाँति बाँधकर ध्वजा के ऊपर गिरने लगे। सफ़ेद रंग का एक बड़ा भारी कबन्ध, रुधिर से भीगा हुआ और बड़े ज़ोर का शब्द करता हुआ धूम्राक्ष के सामने गिरा। भूकम्प आया, और बादल

से रुधिर मिला हुआ पानी बरसा। वायु बड़े ज़ोर से हहराती हुई सामने से चलने लगी। सब दिशाओं में अन्धकार छा गया। प्रकाश किसी ओर न रहा। राक्षसों के लिए यह भयानक उत्पात देखकर धूम्राक्ष बहुत घबराया। आगे चलनेवाले राक्षस सहसा मूर्च्छित हो गये। इस प्रकार राक्षसों की सेना के साथ बलवान् धूम्राक्ष युद्धभूमि में गया और रामचन्द्र से सुरक्षित, व्यूहरचित, वानरी सेना को उसने देखा। २१—३६।

सर्ग ५२

भीमपराक्रमी धूम्राक्ष को आते हुए देखकर वानर युद्ध की इच्छा से प्रसन्न होकर गरजे। शूल, मुद्गर आदि अस्त्रों से प्रहार करनेवाले राक्षसों और वृक्षों से मारनेवाले वानरों का युद्ध होने लगा। राक्षसों ने वानरों को अस्त्रों से मारा और वानरों ने राक्षसों को वृक्षों से मार कर पृथिवी को आच्छादित कर दिया। राक्षसों ने कुपित होकर सीधे चलनेवाले कंकपत्र लगे हुए बाण, भयानक गदा, शूल, पट्टिश, मुद्गर, परिघ और त्रिशूल से वानरों को व्यथित किया। महाबली वानर भी राक्षसों की मार से व्याकुल होकर बड़े हर्ष से युद्ध करने लगे। बाण और त्रिशूल आदि शस्त्रों से घायल वानर वृक्षों और शिलाओं से राक्षसों को मारने और गरजने लगे। १—८। बड़ा अद्भुत युद्ध हुआ। बहुत-से राक्षस रुधिर की वमन करने लगे। बहुत-से राक्षस शिलाओं से चूर्ण कर दिये गये और बहुतों को वानरों न दाँतों से नोच डाला। किसी की ध्वजा, किसी का खड्ग और किसी का रथ तोड़ डाला। वानरों की मार से राक्षस बहुत पीड़ित हुए। पर्वताकार हाथियों, घोड़ों और उनके सवारों से युद्धभूमि भर गई। महापराक्रमी वानरों ने बड़ी फुर्ती से कूद-कूदकर पैने नखों से राक्षसों के मुँह नोच डाले और सिर के बाल उखाड़ लिये। राक्षस घायल होकर पृथिवी पर गिरने लगे। ९—१५। जो राक्षस मरने से बचे, वे कुपित होकर वानरों को

वज्र के समान थप्पड़ों से मारने दौड़े। वानरों ने भी बड़ी फुर्ती से दाँतों से काटकर; लातों, घूसों और वृक्षों से मारकर राक्षसों को पृथिवी पर गिरा दिया। बचे हुए राक्षस भाग खड़े हुए। अपनी सेना को भागती हुई देखकर धूम्राक्ष बड़े क्रोध से वानरों को मारने लगा। बहुत-से वानर बाणों से घायल होकर गिर पड़े, उनके अंगों से रुधिर बहने लगा। मुद्गर, परिघ, भिन्दिपाल, पट्टिश आदि अस्त्रों के प्रहार से घायल हुए। बहुत-से वानर मर गये और बहुत-से राक्षसों की मार के भय से भाग गये। १९—२१। किसी की छाती फट गई, कोई घायल होकर करवँट लेट गया। किसी-किसी के पेट त्रिशूल से फाड़ डाले गये, उनकी आँतें निकल आईं। इस प्रकार वानरों और राक्षसों का भयानक युद्ध हुआ। २२—२३। युद्धभूमि संगीतशाला के समान होगई। धनुष की डोरी का शब्द बीणा बजने के समान, घायल वीरों की हिचकी ताल के समान और वीरों के कराहने का शब्द गाने के समान होता था। धनुर्धर धूम्राक्ष ने बाणों की वर्षा से वानरों को तितर-बितर कर दिया। २४—२५। अपनी सेना को व्याकुल देखकर हनुमान् एक शिला लेकर बड़े क्रोध से धूम्राक्ष की ओर दौड़े। पवन के समान पराक्रमी हनुमान् की आँखें क्रोध के मारे पहले से दुगुनी लाल हो गईं। उन्होंने वह शिला धूम्राक्ष के रथ पर दे मारी। शिला को आती हुई देखकर धूम्राक्ष गदा लेकर पृथिवी पर कूद पड़ा। उस शिला से धूम्राक्ष का रथ चूर-चूर हो गया। रथ की पहिया, ध्वजा और धनुष-बाण सब नष्ट हो गये। फिर हनुमान् उसे छोड़कर वृक्षों से अन्य राक्षसों को मारने लगे। २६—३०। राक्षसों के सिर फूट गये, वे रुधिर से भीगकर पृथिवी पर गिर पड़े। इस प्रकार राक्षसों को मारकर वे फिर पर्वत का एक शिखर लेकर धूम्राक्ष की ओर दौड़े। उनको सामने आते देखकर महाबली धूम्राक्ष भी गदा उठाकर गरजता हुआ दौड़ा। उसने क्रुद्ध होकर वह गदा, जिसमें बहुत-से काँटे लगे थे, हनुमान् के सिर पर

मारी। पवन के समान महाबली हनुमान् ने उस प्रहार की कुछ भी परवा न की। उन्होंने पर्वत का एक शिखर उठाकर धूम्राक्ष के सिर पर दे मारा। उस शिखर के लगने से उसके सब अंग टूट-फूट गये, वह फटे हुए पर्वत की तरह पृथिवी पर गिर पड़ा। धूम्राक्ष को मरा हुआ देखकर बचे हुए राक्षस वानरों के डर से लंका को भाग गये। हनुमान् ने शत्रुओं को मारकर उनके रुधिर की नदी बहा दी। वानर उनका पराक्रम देखकर उनकी प्रशंसा करने लगे और हनुमान् शत्रुओं के मारने का श्रम दूर करके प्रसन्न हुए। ३१—३८।

सर्ग ५३

धूम्राक्ष का वध सुनकर राक्षसराज रावण क्रोध के मारे साँप की तरह लम्बी साँस छोड़ने लगा। थोड़ी देर के बाद वह महाबली वज्रदंष्ट्र से बोला—हे वीर, राक्षसों की सेना लेकर तुम शीघ्र जाओ और वानरों के साथ सुग्रीव तथा रामचन्द्र को मार डालो। मायावी राक्षस वज्रदंष्ट्र 'बहुत अच्छा' कहकर राक्षसों की सेना के साथ चला। १—४। उसकी सेना में हाथी, घोड़े, गधे और ऊँट भी थे। रथ ध्वजा-पताकाओं से शोभित थे। राक्षस वज्रदंष्ट्र बिजायठ बाँधे था, सिर पर किरीट थे, वह कवच पहनकर, धनुष लेकर बड़ी तेज़ी से युद्ध के लिए निकला। तपाये हुए सोने से अलंकृत रथ पर पताका फहराती थी। ऋष्टि, तोमर, मुसल, भिन्दिपाल, धनुष, शक्ति, पट्टिश, खड्ग, चक्र, गदा और परशु आदि शस्त्र रक्खे थे। सेनापति वज्रदंष्ट्र रथ की प्रदक्षिणा करके उस पर सवार होकर चला। ५—८। बहुत-से राक्षस चित्र-विचित्र वस्त्र पहन कर, अनेक प्रकार के अस्त्र-शस्त्र लेकर पैदल चले। पर्वताकार मतवाले हाथी भी चले, उनके ऊपर भाला और अंकुश लिये हुए, युद्ध में कुशल महाबली राक्षस बैठे थे। राक्षसों की सेना वर्षाकाल के उन बादलों के समान शोभित हुई, जो गरजते हों और उनमें बिजली भी चमकती हो।

सेना दक्षिण के फाटक की ओर चली, जहाँ वानरों के साथ अंगद थे। सेना के चलते समय अनेक प्रकार के अशकुन हुए। बादल के बिना आकाश से उल्कापात हुआ। सियारिनें ऊपर को मुँह करके चिल्लाने लगीं। मृग भी राक्षसों के वध की सूचना देने लगे। चलते हुए वीर राक्षस अकस्मात् गिर पड़े। इतने उत्पात देखकर भी महाबली वज्रदंष्ट्र युद्ध की इच्छा से आगे बढ़ता ही गया। ६—१६। राक्षसों को आते हुए देखकर वानर बड़े हर्ष से गरजे। उनके गरजने का शब्द सारी दिशाओं में फैल गया। परस्पर विजय चाहनेवाले राक्षसों और वानरों का युद्ध होने लगा। दोनों ओर के वीर बड़े उत्साह से युद्ध करते थे। सैनिकों के हाथ-पैर और सिर कट गये। रुधिर से सब अंग भीग गये और पृथिवी पर गिर पड़े। परिघ के समान लम्बी भुजाओंवाले वीर अनेक प्रकार के अस्त्र-शस्त्र चलाते थे और युद्ध से भागते नहीं थे। १७—२० वृक्षों, शिलाओं और शस्त्रों का भयानक शब्द होता था, जिसे सुनकर कायरों के हृदय विदीर्ण हो जाते थे। रथों की पहियों का, धनुष के टंकार का, शंख, नगाड़ा और मृदंग बजने का भयानक शब्द होने लगा। बहुत से वीर अस्त्र छोड़कर बाहु-युद्ध करने लगे। थप्पड़, लात, घूँसों और वृक्षों से मारने लगे। लातों की मार से राक्षसों के हाथ-पैर टूट गये। शिला की मार से राक्षस चूर-चूर हो गये। २१—२४। राक्षसों की यह दशा देखकर वज्रदंष्ट्र हाथ में पाश लेकर काल के समान दौड़ा। अस्त्र चलाने में निपुण, बलवान् राक्षस क्रुद्ध होकर वानरों को मारने लगा। यह देखकर अंगद को बड़ा क्रोध आया। वे प्रलयकाल के पवन के समान बड़े वेग से वृक्ष उखाड़कर राक्षसों को मारने लगे। क्रोध के मारे उनकी आँखें लाल हो गईं। जैसे सिंह छोटे पशुओं को मार डालता है वैसे ही इन्द्रतुल्य पराक्रमी अंगद ने राक्षसों का संहार कर दिया। अंगद ने बलवान् राक्षसों के सिर काट डाले, कटे हुए पेड़ की तरह वे पृथिवी पर गिर पड़े। राक्षसों, वानरों और घोड़ों की लाशों से, विशाल

विचित्र ध्वजा, रथ और रुधिर की नदी से युद्धभूमि भयानक हो गई। चमकते हुए हार, बिजायठ, वस्त्र और छत्र से युद्धभूमि शरदृऋतु की रात के समान शोभित हुई। जैसे वायु के वेग से बादल उड़ जाते हैं, वैसेही अंगद की मार से राक्षसों की सेना भाग खड़ी हुई।२५—३२।

सर्ग ५४

अंगद के पराक्रम से अपनी सेना का विनाश होते देखकर महाबली वज्रदंष्ट्र को बड़ा क्रोध आया। वह इन्द्र के वज्र के समान चमकता हुआ धनुष चढ़ाकर वानरों की सेना पर बाण बरसाने लगा। और भी प्रधान-प्रधान राक्षस रथों पर चढ़कर अनेक प्रकार के शस्त्रों से युद्ध करने लगे। वानर भी शिलाएँ लेकर सब ओर से राक्षसों को मारने लगे।१—४। राक्षसों ने प्रधान वानरों पर हज़ारों अस्त्र चलाये। मतवाले हाथियों के समान शूर-वीर वानरों ने राक्षसों के ऊपर वृक्षों और शिलाओं के प्रहार किये। युद्ध से न भागनेवाले वीर राक्षसों ने घोर युद्ध किया। किसी के सिर फट गये, किसी के हाथ-पैर कट गये, उनकी देह से रुधिर बहने लगा। राक्षस और वानर प्राणहीन होकर पृथिवी पर गिरने लगे और झुंड के झुंड कौआ, गिद्ध और सियार उनकी लाशें नोचने लगे। डरपोकों को डरानेवाले कबन्ध उठकर दौड़े। बहुत-से वानर और राक्षस हाथ, भुजा, सिर और धड़ कट जाने से पृथिवी पर गिर पड़े। वानरों की मार से व्याकुल होकर राक्षसों की सेना वज्रदंष्ट्र के देखते ही देखते भाग खड़ी हुई। राक्षसों को भयभीत देखकर प्रतापवान् वज्रदंष्ट्र क्रोध के मारे लाल-लाल आँखें करके, हाथ में धनुष लेकर, वानरों को डरवाता हुआ उनकी सेना में घुस गया। उसने कंकपत्र लगे हुए, सीधे चलनेवाले बाणों से वानरों को छिन्न-भिन्न कर दिया। वह एक-एक बाण से पाँच-पाँच, सात-सात, आठ-आठ, नव-नव वानरों को घायल करने लगा। महाप्रतापी वज्रदंष्ट्र

ने जब कुपित होकर इस प्रकार वानरों को घायल किया, तब वानर घबराकर अंगद की शरण में गये, जैसे विपत्ति पड़ने पर प्रजा प्रजापति की शरण में जाती है । ५—१५ । अंगद वानरों को घायल देखकर बड़े क्रोध से वज्रदंष्ट्र की ओर देखने लगे । वज्रदंष्ट्र और अंगद का युद्ध आरम्भ हुआ । दोनों वीर महाक्रोधी सिंह और मतवाले हाथी के समान भिड़ गये । वज्रदंष्ट्र ने बलवान् अंगद के मर्मस्थलों में अग्नि की शिखा के समान चमकते हुए बाण मारे ।१६—१८। अंगद के सब अंगों से रुधिर बहने लगा । उन्होंने एक वृक्ष उखाड़कर वज्रदंष्ट्र के ऊपर चलाया । उसने बड़ी सावधानीसे उस वृक्षको बाणों से टुकड़े-टुकड़े करके गिरा दिया । उसका यह पराक्रम देखकर अंगद ने गरजकर एक पर्वत उसके ऊपर चलाया । यह देखकर महापराक्रमी वज्रदंष्ट्र गदा लेकर रथ से कूद पड़ा और सावधान होकर पृथिवी पर खड़ा हो गया । अंगद के फेंके हुए पर्वत से उसका रथ टूट गया, और घोड़े मर गये ।१६—२३। अंगद ने वृक्षों सहित एक और शिखर लेकर वज्रदंष्ट्र के सिर पर चलाया। उस शिखर के लगने से वज्रदंष्ट्र मूर्च्छित हो गया । उसके मुँह से रुधिर बहने लगा । वह दो घड़ी तक छाती में गदा लगाये हुए लम्बी साँसें छोड़ता हुआ बेहोश पड़ा रहा । जब उसे होश आया तो उसने क्रुद्ध होकर अंगद की छाती में गदा मारी । फिर वह गदा छोड़कर घूँसे मारने लगा । अंगद भी घूँसों और लातों से मारने लगे । लड़ते-लड़ते दोनों वीरों के अंगों से रुधिर बह चला । वे मंगल और बुध ग्रह के समान शोभित हुए ।२४—२८। उसके बाद महातेजस्वी अंगद एक वृक्ष लेकर खड़े हो गये । वज्रदंष्ट्र ने भी ऋषभ के चमड़े की ढाल और किंकिणी लगी हुई तलवार हाथ में ले ली । दोनों वीर पैंतड़े बदलने लगे और गरजकर एक-दूसरे को मारने लगे । २६—३१। दोनों वीरों के अंगों से रुधिर बहता था, वे फूले हुए ढाक के पेड़ के समान शोभित थे । लड़ते-लड़ते जब थक गये तब दोनों वीर टिहुनी के बल पृथिवी पर बैठ गये।

अंगद ताड़ित साँप के समान क्रोध से लाल-लाल आँखें करके झट उठ खड़े हुए, और बड़ी फुर्ती से उसकी तलवार छीनकर उसका सिर काट डाला। उसकी देह के दो खंड हो गये, आँखें उलट गईं। वज्रदंष्ट्र को मरा हुआ देखकर बचे हुए राक्षस वानरों के डर से लंका को भाग गये। वे बड़े लज्जित और दुःखित हुए। बलवान् अंगद को बड़ा हर्ष हुआ। वे वानरी सेना में देवताओं के साथ इन्द्र के समान शोभित हुए।३२—३८।

सर्ग ५५

अंगद ने वज्रदंष्ट्र को मार डाला, यह सुनकर रावण अपने सेनापति से बोला—सब अस्त्र-शस्त्र जाननेवाले अकम्पन के साथ भीमपराक्रमी राक्षस शीघ्र युद्ध के लिए जायँ। अकम्पन सेना का अच्छा शासक और रक्षक है। वह हमारा ऐश्वर्य चाहता है और युद्ध भी उसे प्रिय है। वह राम-लक्ष्मण और सुग्रीव को परास्त करेगा और अन्य वानरों को मार डालेगा।१—४। रावण की आज्ञा से सेनापति ने राक्षसों को युद्ध के लिए जाने की आज्ञा दी। वे अस्त्र लेकर युद्ध के लिए चले। मेघवर्ण मेघाकार अकम्पन सुवर्णभूषित रथ पर सवार होकर मेघों के समान गरजता हुआ सेना के साथ चला। युद्ध में उसे देवता भी नहीं कँपा सके थे, इसी से उसका नाम अकम्पन था। जब सूर्य के समान तेजस्वी अकम्पन कुपित होकर युद्ध के लिए चला तब अनेक प्रकार के अशकुन होने लगे। रथ में जुते हुए घोड़े उदास हो गये। अकम्पन की बाईं आँख फड़कने लगी, उसका चेहरा उतर गया, स्वर धीमा पड़ गया। बादल घिर आये, आँधी चलने लगी, अच्छा-भला दिन दुर्दिन हो गया।५—११। सियार, कौआ आदि क्रूर पशु-पक्षी बोलने लगे। सिंह के समान कन्धोंवाला, बाघ के समान पराक्रमी अकम्पन उन उत्पातों की परवा न करके युद्धभूमि की ओर चलता ही गया। वह बड़े ज़ोर से गरजता था। उसका शब्द सुनकर समुद्र काँपने लगा

और वानरों की सेना डर गई। १२—१४। वृक्षों और पर्वतों से प्रहार करनेवाले वानरों और राक्षसों का युद्ध होने लगा। रामचन्द्र की विजय के लिए वानर और रावण की विजय के लिए राक्षस जीवन की आशा छोड़कर लड़ने लगे। वे एक-दूसरे का विनाश चाहते थे। युद्धभूमि में दोनों दलों के वीरों का शब्द होने लगा। धूलि उड़कर सब दिशाओं में छा गई। दिशाएँ लाल हो गईं। सब ओर अन्धकार छा गया। ध्वजा, पताका, ढाल, तलवार, घोड़े, रथ और अस्त्र-शस्त्र कुछ भी नहीं दिखाई देता था। वानरों और राक्षसों के गरजने और दौड़ने का शब्द ही सुन पड़ता था। १५—२२। उस घोर अन्धकार में राक्षस राक्षसों को और वानर वानरों को भी मारने लगे। बड़ा भयानक युद्ध हुआ। पृथिवी रुधिर से भीग गई, रुधिर का कीचड़ हो गया। तब रुधिर से सींची हुई पृथिवी से धूलि का उड़ना बन्द हुआ। युद्धभूमि लाशों से भर गई। वानर और राक्षस वृक्ष, शिला, शक्ति, गदा, प्रास, परिघ और तोमर आदि से, बड़ी शीघ्रता से और बड़े वेग से युद्ध करते थे। वानर परिघ के समान मोटी भुजाओं से पर्वताकार राक्षसों को मारते थे। २३—२६। राक्षस भी क्रुद्ध होकर प्रास-तोमर आदि शस्त्रों से वानरों का विनाश करते थे। अकम्पन बलवान् राक्षसों को ललकारता था। वानर बड़े-बड़े वृक्षों और शिलाओं से राक्षसों को मारकर उनके शस्त्र छीन लेते थे। महावीर कुमुद, नल और मैन्द ने बड़े वेग से राक्षसों पर प्रहार किया। उनके प्रहार से बहुत-से राक्षस मर गये। २७—३१।

सर्ग ५६

वानरों की यह वीरता देखकर अकम्पन को बड़ा क्रोध आया। वह अपना धनुष घुमाता हुआ अपने सारथि से बोला—ये बलवान् वानर राक्षसों को मार रहे हैं, तुम हमारा रथ वहीं ले चलो। देखो

हमारे सामने ये कैसा युद्ध करते हैं। इनको हम अभी मार डालेंगे, इन्होंने राक्षसों की सेना का बहुत विनाश किया है।१—५। अकम्पन की आज्ञा से सारथि ने घोड़ों को हाँका और अकम्पन दूर से ही वानरों पर बाण बरसाने लगा। उसकी मार के सामने वानर खड़े भी न हो सके। तितर-बितर होकर सब भागने लगे। यह देखकर महाबली हनुमान् दौड़े। सब वानरों में फिर साहस हुआ, क्योंकि उनको महापराक्रमी हनुमान् का आश्रय मिल गया था। ६—१०। हनुमान् को सामने देखकर अकम्पन उसी प्रकार बाण बरसाने लगा, जैसे इन्द्र पानी बरसाते हैं। हनुमान् ने उसके बाणों की कुछ परवा न करके उसे मार डालने का निश्चय किया। वे हँसते हुए उसकी ओर दौड़े। उनके दौड़ने से पृथिवी काँपने लगी। गरजकर बड़े वेग से दौड़ते हुए हनुमान् का रूप प्रज्वलित अग्नि के समान दुर्धर्ष हो गया। उन्होंने अपने हाथ में कोई अस्त्र न देखकर बड़ी फुर्ती से एक पर्वत उखाड़ लिया। उसे घुमाते हुए उसी प्रकार अकम्पन की ओर दौड़े, जैसे इन्द्र वज्र लेकर नमुच की ओर झपटे थे।११—१७। अकम्पन ने देखा कि हनुमान् बड़ा भारी पर्वत लिये दौड़े आ रहे हैं, तो उसने अर्धचन्द्राकार बाणों से पर्वत के टुकड़े-टुकड़े कर दिया। तब हनुमान् को बड़ा क्रोध आया। उन्होंने बड़ी फुर्ती से पर्वत के समान ऊँचा अश्वकर्ण का एक पेड़ उखाड़ लिया। उस वृक्ष को लेकर बड़े क्रोध से दौड़े। उनके वेग से बहुत-से वृक्ष टूट गये और पृथिवी काँपने लगी। उस वृक्ष से उन्होंने रथ के सहित रथियों को, हाथी के सहित हाथी के सवारों को और पैदल राक्षसों को मार डाला।१८—२३। हनुमान् को कुपित यमराज के समान आते देखकर राक्षस भाग खड़े हुए। अकम्पन भी घबराकर गरजने लगा। उसने बड़े पैने चौदह बाण हनुमान् के अंगों में मारे। उनकी देह से रुधिर बह चला। देह में चुभे हुए बाणों से वीर हनुमान् शिखरों सहित पर्वत के समान देख पड़े। उस समय वे फूले हुए अशोक वृक्ष के

समान, अथवा बिना धुएँ की आग के समान शोभित हुए।२४-२८
फिर उन्होंने बड़े वेग से एक वृक्ष उखाड़कर अकम्पन के सिर पर दे मारा।
अकम्पन गिर पड़ा और मर गया। उसे मरा हुआ देखकर राक्षस डर
के मारे वैसे ही काँपने लगे, जैसे भूकम्प आने पर वृक्ष काँपते हैं। वानरों
ने उनको ललकारा, किन्तु वे अस्त्र-शस्त्र फेंककर लंका को भागे। वे
भागते-भागते पसीने से सराबोर हो गये। बार-बार पीछे देखते हुए, एक-
दूसरे को पिछाड़ते हुए, भागकर लंका में घुस गये। उनका गर्व नष्ट हो
गया। २६—३४। राक्षसों के भाग जाने पर सब वानर एकत्र होकर
हनुमान् की प्रशंसा करने लगे। हनुमान् ने भी बूढ़े वानरों का यथोचित
सम्मान किया। वानर अपनी विजय से प्रसन्न होकर गरजने लगे, और
जो राक्षस घायल पड़े थे उनको पकड़कर घसीटने लगे। महावीर हनुमान्
राक्षसों को मारकर वैसे ही शोभित हुए, जैसे विष्णु भगवान् दैत्यों
को मारकर शोभित हुए थे। देवता उनकी प्रशंसा करने लगे। रामचन्द्र,
लक्ष्मण, सुग्रीव और विभीषण ने भी उनकी प्रशंसा की। ३५-३८

सर्ग ५७

अकम्पन का वध सुनकर रावण बड़ा कुपित हुआ और उदास होकर मन्त्रियों की ओर देखने लगा। थोड़ी देर चिन्ता करके मन्त्रियों से सलाह किया और दूसरे दिन प्रातःकाल अपनी सेना की व्यूह-रचना देखने के लिए गया। उसने देखा कि ध्वज-पताका से शोभित लंका के चारों ओर सेना की व्यूह-रचना करके राक्षस उसकी रक्षा कर रहे हैं। यह देखकर वह अपने हितैषी, युद्ध में निपुण सेनापति प्रहस्त से बोला—हे युद्धविशारद, शत्रुओं ने लंका को घेर लिया है। अब युद्ध के सिवा और कोई उपाय तो है ही नहीं, सो युद्ध भी अब साधारण राक्षसों के मान का नहीं है। तुम, कुम्भकर्ण, इन्द्रजित् अथवा निकुम्भ ही यह भार उठा सकेंगे। इसलिए अब तुम सेना लेकर विजय

के लिए शीघ्र जाओ। राक्षसों का गरजना सुनकर और तुमको देख कर वानरों की सेना भाग जायगी। क्योंकि वानर अशिक्षित और चंचल होते हैं। जैसे हाथी सिंह का गरजना नहीं सह सकते, वैसे ही वानर तुम्हारा गरजना सुनकर ठहर नहीं सकेंगे। जब सेना भाग जायगी, तब राम-लक्ष्मण असहाय होकर तुम्हारे अधीन हो जायँगे। १-१०। युद्ध में मृत्यु का सन्देह तो रहता ही है, किन्तु तुम्हारी विजय अवश्य होगी। तुम्हारी भी यही धारणा है या इससे विपरीत? जिसमें हमारा हित समझो, वह काम करो। रावण की बात सुनकर सेनापति प्रहस्त बोला—राजन्, इस विषय में हम लोगों ने बुद्धिमान् मन्त्रियों से पहले ही सलाह की थी। मतभेद होने के कारण परस्पर विवाद भी हुआ था। सीता को देने से ही कल्याण है, न देने से युद्ध होगा, यही निश्चय हुआ था। अब वही बात सामने आ गई। आप धन, मान और सान्त्वना आदि से हमारा सत्कार करते आये हैं, फिर हम आपका प्रिय कैसे न करेंगे। ११-१५। हम आपके हित के लिए पुत्र, स्त्री, धन और अपने प्राण भी त्याग सकते हैं। आप देखिए, हम युद्ध में आपके लिए अपने प्राण होम करते हैं। रावण से यह कहकर सेनापति प्रहस्त ने सामने खड़े हुए सेनाध्यक्ष से कहा—हमारे साथ चलने के लिए राक्षसों की सेना शीघ्र तैयार करो। आज युद्धभूमि में हमारे बाणों से मरे हुए वानरों का मांस खाकर सियार और गिद्ध तृप्त हो जायँगे। प्रहस्त की आज्ञा से सेना तैयार हुई। अस्त्र-शस्त्र धारण किये हुए राक्षसों से मुहूर्त भर में लंका भर गई। राक्षसों ने अग्नि में हवन और ब्राह्मणों को नमस्कार किया। मन्त्रों से अभिमन्त्रित मालाएँ पहनीं। वायु में सुगन्ध आने लगी। इस प्रकार राक्षस बड़े हर्ष से युद्ध के लिए तैयार हुए। १६-२२। धनुष लेकर, कवच पहनकर, रावण को प्रणाम करके प्रहस्त के चारों ओर खड़े हो गये। सेनापति प्रहस्त रावण की आज्ञा लेकर रथ पर सवार

हुआ। उसके रथ में बड़े वेग से चलनेवाले घोड़े जुते थे। वह सूर्य और चन्द्रमा के समान चमकता था, साँप के समान ध्वजा लगी थी; उसके चलने का शब्द बादलों के गरजने के समान होता था। उस सुवर्णमय सुन्दर रथ पर सवार होकर प्रहस्त बहुत बड़ी सेना के साथ युद्ध के लिए चला। शंख और नगाड़ा आदि युद्ध के बाजा बजाये गये। उनका शब्द बादलों के गरजने के समान हुआ। वह शब्द चारों ओर फैल गया। महाकाय राक्षस प्रहस्त के आगे गरजते हुए चले। नरान्तक, कुम्भहनु, महानाद और समुन्नत, ये प्रहस्त के चार मन्त्री भी उसके साथ चले। २३-३० वीर प्रहस्त हाथियों के दल के समान राक्षसी सेना के साथ पूर्व के फाटक पर गया। उसकी सेना समुद्र के समान जान पड़ती थी। वह यमराज के समान कुपित होकर युद्ध के लिए चला। उस समय अनेक प्रकार के अशुभ निमित्त सूचित हुए। मांस खानेवाले पक्षी प्रहस्त के रथ के ऊपर मंडल बाँधकर उड़ने लगे। सियारिनें आग की ज्वाला सी उगलती हुई बोलने लगीं। उल्कापात हुआ। बड़े ज़ोर से आँधी चलने लगी। ग्रहों में युद्ध हुआ और उनका प्रकाश नष्ट हो गया। बादल गरजकर प्रहस्त के रथ के ऊपर रुधिर बरसाने लगे। रथ की ध्वजा के ऊपर गिद्ध बैठ गया और दक्षिण की ओर मुँह करके बोलने लगा। उसकी बोली सुनकर सेनापति प्रहस्त को बड़ी चिन्ता हुई। युद्ध से न भागनेवाले सारथि के हाथ से चाबुक गिर पड़ा। रथ के घोड़े गिर पड़े। सेना में उदासी छा गई। प्रसिद्ध वीर प्रहस्त को आते देखकर वानर अपने अस्त्र लेकर सामने खड़े हो गये। ३१-४०। पर्वत और वृक्ष उखाड़ने का शब्द होने लगा। एक-दूसरे का विनाश चाहनेवाले बलवान् वानरों और राक्षसों के गरजने और ललकारने का शब्द सुनाई दिया। दोनों ओर की सेना प्रसन्न हुई। जैसे पतंगे मरने के लिए आग में कूदते हैं, वैसे ही मूर्ख प्रहस्त वानरों को जीतने के लिए उनकी सेना की ओर बढ़ा। ४१-४४।

सर्ग ५८

प्रहस्त को आते देखकर रामचन्द्र ने विभीषण से पूछा—हे महाबाहु, बड़ी भारी सेना के साथ यह कौन महाकाय राक्षस बड़े वेग से आ रहा है। इस बलवान् निशाचर का पराक्रम मुझसे कहो। विभीषण ने उत्तर दिया—यह रावण का सेनापति प्रहस्त है। उसकी सेना के तीसरे भाग का यह अध्यक्ष है। यह वीर अस्त्रविद्या में बड़ा निपुण और प्रसिद्ध पराक्रमी है। १—४। बलवान् प्रहस्त को सेना के साथ गरजते हुए देखकर वानरों की सेना भी गरजने लगी। राक्षस खड्ग, शक्ति, ऋष्टि, शूल, बाण, मुसल, गदा, परिघ, प्रास, परशु और धनुष आदि अस्त्र-शस्त्र लेकर विजय की इच्छा से वानरों की ओर दौड़े। वानरों ने भी फूले हुए वृक्ष और बड़े-बड़े पर्वत उखाड़ लिये। युद्ध होने लगा, शिलाओं और बाणों की वर्षा आरम्भ हुई। शूल, परिघ और परशु आदि से मारे हुए वानर पृथिवी पर गिरने लगे। बाणों से बहुतों की छाती फट गईं। किसी की पसली टूट गई, कुछ तलवार से काट डाले गये और दो खंड होकर पृथिवी पर गिर पड़े। इसी प्रकार कुपित वानरों ने भी पर्वतों और वृक्षों से राक्षसों को मारकर पृथिवी पर गिरा दिया। ५—१५। वज्र के समान लातों, थप्पड़ों और घूँसों से मार डाला। राक्षस रुधिर की वमन करने लगे। उनके मुँह टूट गये और आँखें फूट गईं। दोनों दलों में गरजने और रोने-पीटने का शब्द होने लगा। वानर और राक्षस बड़ी वीरता और निर्भयता से युद्ध करते थे। नरान्तक, कुम्भहनु, महानाद और समुन्नत, प्रहस्त के ये चारों मन्त्री बड़ी शीघ्रता से दौड़-दौड़कर वानरों को मारते थे। द्विविद ने पर्वत का एक शिखर फेंककर नरान्तक को मार डाला। दुर्मुख ने बहुत बड़ा वृक्ष लेकर बड़े फुर्तीले समुन्नत का विनाश किया। महातेजस्वी जाम्बवान् ने कुपित होकर एक बड़ी भारी शिला महानाद की छाती पर दे मारी। तार नामक वानर ने एक वृक्ष से बलवान् कुम्भहनु को

मारा। उसके भी प्राण निकल गये। प्रहस्त अपने मन्त्रियों का विना
न सह सका, वह पैने बाणों से वानरों को मारने लगा। १६-२४।
युद्धभूमि में महासागर का-सा शब्द हुआ। प्रहस्त ने क्रुद्ध होक
बहुत-से वानरों को मार डाला। वानरों और राक्षसों की लाशें पर्वत
के समान पृथिवी पर ढेर हो गईं। जैसे वैशाख मास में फूले हुए ढा
के पेड़ों से पृथिवी की शोभा होती है, वैसे ही रुधिर से भीगी हुई युद्ध
भूमि शोभित हुई। युद्धभूमि नदी के समान हो गई। लाशें उस नदी
के तट, टूटे हुए अस्त्र किनारों पर के वृक्ष, रुधिर की धारा उसका जल
प्लीहा और यकृत् उसका कीचड़, तैरती हुई आँतें उसकी सेवार, वीरों
के विना सिर के धड़ उसकी मछलियाँ, कटे हुए हाथ-पैर उसकी घास
गिद्ध उसके हंस, चील्ह उसके सारस, चरबी उसका फेना और घायलों
का कराहना उसका शब्द था। कायर पुरुष उस नदी के पार नहीं जा
सकते थे। जैसे हंस और सारसों से सेवित, फूली हुई कमलिनी से
शोभित, शरदृऋतु की नदी में हाथी तैरते हैं, वैसे ही वीर वानर और
राक्षस नदी-रूपी युद्धभूमि में दौड़ते थे। २५-३३। नील ने रथ पर
सवार, वानरों पर बाण बरसाते हुए प्रहस्त को देखा और उसकी ओर
दौड़े। प्रहस्त धनुष चढ़ाकर नील पर बाण बरसाने लगा। वे बाण
कुपित साँप के समान बड़े वेग से नील की देह को छेदकर पृथिवी में
धँस गये। ३४-३७। अग्नि के समान चमकते हुए पैने बाण लगने
पर नील ने एक वृक्ष उखाड़ कर मारा। तब राक्षस प्रहस्त क्रुद्ध होकर
गरजा और सेनापति नील पर फिर बाण चलाने लगा। ३८-४०।
जैसे शरदृऋतु में बादलों की बूँदों से बैल पीड़ित नहीं होता वैसे ही नील
दुरात्मा प्रहस्त के चलाये हुए तीक्ष्ण बाणों से व्यथित नहीं हुए। नील को
बड़ा क्रोध आया, उन्होंने एक साल का पेड़ उखाड़कर प्रहस्त
घोड़ों को मार डाला। फिर कुपित होकर उस दुष्ट का धनुष भी तोड़
डाला और गरजने लगे। ४१-४४। धनुष टूट जाने पर सेनापति

प्रहस्त एक मुसल लेकर रथ से कूद पड़ा। प्रहस्त और नील दोनों सेनापति रुधिर से भीगे हुए हाथियों के समान युद्ध करने के लिए पृथिवी पर खड़े हुए। सिंह और बाघ के समान पैने दाँतों से एक-दूसरे को काटने लगे। युद्ध से न भागनेवाले, अपने पराक्रम से यश चाहनेवाले, दोनों योद्धा इन्द्र और वृत्रासुर के समान लड़ते थे। प्रहस्त ने नील के माथे पर मुसल मारा। उनके माथे से रुधिर बह चला। महाकपि नील ने बड़े क्रोध से एक वृक्ष उखाड़कर उसकी छाती पर दे मारा। ४५–५०। किन्तु वह व्यथित न हुआ और एक बड़ा भारी मुसल लेकर नील की ओर झपटा। उसे आता हुआ देखकर नील ने बड़ी फुर्ती से एक शिला उसके सिरपर दे मारी। उसके सिर के टुकड़े-टुकड़े हो गये। ५१–५४। सब इन्द्रियाँ शिथिल हो गईं, तेज नष्ट हो गया, वह प्राणहीन होकर कटे हुए वृक्ष की तरह पृथिवी पर गिर पड़ा। जैसे पर्वत से झरने झरते हैं, वैसे ही प्रहस्त के फूटे हुए सिर और देह से रुधिर बहने लगा। सेनापति प्रहस्त के मारे जाने पर राक्षसों की सेना घबराकर लंका की ओर भागी। जैसे बाँध टूट जाने पर पानी नहीं रुकता, वैसे ही प्रहस्त के मरने पर राक्षस न ठहर सके। वे बड़े दुःखित हुए, युद्ध छोड़कर चुपचाप भाग गये। महाबली नील की विजय हुई। उनको बड़ा हर्ष हुआ। रामचन्द्र और लक्ष्मण ने उनकी वीरता की प्रशंसा की। ५५–६१।

सर्ग ५९

सेनापति नील ने जब सेनापति प्रहस्त को मार डाला, तब राक्षस समुद्र के समान वेग से भाग खड़े हुए। राक्षसों ने राक्षसराज रावण के पास जाकर सेनापति के मारे जाने का हाल कहा। यह सुनकर रावण को बड़ा क्रोध आया। शोक और क्रोध से व्याकुल होकर वह प्रधान राक्षसों से बोला—जिन शत्रुओं ने इन्द्र को परास्त करनेवाले सेनापति प्रहस्त को सेना सहित मार डाला है, उनकी अब उपेक्षा

न करनी चाहिए। इसलिए आज हम स्वयं शत्रुओं से विजय पाने के लिए युद्धभूमि में जायँगे, और जैसे प्रज्वलित अग्नि वन को भस्म कर देती है, वैसे ही राम-लक्ष्मण और वानरी सेना का विनाश करेंगे।१-६। जलती हुई आग के समान तेजस्वी रावण यह कहकर, अच्छे घोड़े जुते हुए, अग्नि के समान चमकते हुए रथ पर सवार हुआ। शंख, ढोल और नगाड़े बजने लगे। वीर राक्षस ताल ठोंकने और सिंहनाद करने लगे। पुण्याहवाचन और स्तोत्र पढ़े गये। राक्षसराज रावण युद्ध के लिए चला। अंगार के समान चमकती हुई आँखोंवाले, पर्वताकार, मेघाकार राक्षसों के साथ रावण उसी प्रकार शोभित हुआ, जैसे भूतों के साथ रुद्र शोभित होते हैं। लंका से निकलकर महापराक्रमी रावण ने महासमुद्र और बादलों के समान गरजती हुई वानरी सेना को देखा। वानर हाथों में वृक्ष और पर्वत लिये थे।७-१०। प्रचंड राक्षसों की सेना को देखकर साँप के समान लम्बी भुजाओंवाले रामचन्द्र ने शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ विभीषण से पूछा—यह किसकी सेना है? इसमें ध्वजा, पताका और छत्र देख पड़ते हैं। प्रास, शूल और खड्ग आदि अस्त्र चमकते हैं। निर्भय राक्षस और ऐरावत के समान बड़े-बड़े हाथी आ रहे हैं। रामचन्द्र के पूछने पर इन्द्रतुल्य बलवान् विभीषण ने कहा—हे राजन्, यह जो प्रातःकाल के सूर्य के समान लाल मुँहवाला राक्षस हाथी पर सवार आ रहा है, इसका नाम अकम्पन है। जो इन्द्रधनुष के समान धनुष लिये, बड़े-बड़े दाँत निकाले, रथ पर सवार, हाथी के समान चला आता है, जिसकी पताका में सिंह का चित्र बना है, वह वीर इन्द्रजित् है।११-१५। यह जो विन्ध्याचल, अस्ताचल और महेन्द्राचल के समान देख पड़ता है, रथ पर बैठा हुआ धनुष की डोरी बजा रहा है, इस महाकाय, महावीर अतिरथ राक्षस का नाम अतिकाय है। यह जो प्रातःकाल के सूर्य के समान लाल-लाल आँखें निकाले हाथी पर सवार, गरजता हुआ चला आता है, इस वीर का नाम महोदर

है। यह जो सन्ध्या के बादलों के समान पर्वताकार राक्षस, चित्र-विचित्र घोड़े पर सवार, भाला उठाये हुए देख पड़ता है; वज्र के समान वेगवान् इस राक्षस का नाम पिशाच है। यह जो बिजली के समान चमकता हुआ शूल हाथ में लिये, सफ़ेद बैल पर सवार है, इस यशस्वी राक्षस का नाम त्रिशिरा है। यह जो चौड़ी छातीवाला, बादलों के समान शोभित, धनुष की डोरी बजाता हुआ चला आता है, जिसकी पताका में शेषनाग का चिह्न बना है, यह प्रसिद्ध कुम्भ राक्षस है। १६—२०। जिसकी परिघ में हीरा जड़े हैं और वह सोने से मढ़ी हुई है, यह राक्षसों में श्रेष्ठ अद्भुत काम करनेवाला निकुम्भ है। यह जो प्रज्वलित अग्नि के समान तेजस्वी, रथ पर बैठा हुआ, धनुष-बाण-तलवार आदि अस्त्र-शस्त्र धारण किये चला आता है, इसका नाम नरान्तक है। इसको अपने समान योद्धा युद्ध के लिए नहीं मिलता, इसलिए यह पर्वतों से युद्ध करता है। यह जो अनेक प्रकार के भयानक बाघ, ऊँट, हाथी और घोड़े के जैसे मुँह-वाले भूतों के साथ शोभित, आँखें घूरता हुआ देवताओं का भी दर्प नष्ट करनेवाला, चन्द्रमा के समान सफ़ेद पतली तीलियों का छत्र धारण किये हुए देख पड़ता है, यह राक्षसों का राजा रावण है। भूतों के साथ महादेव के समान यह अपनी सेना के साथ आ रहा है। यह विन्ध्याचल के समान महाकाय है। इन्द्र और यमराज का भी गर्व नष्ट कर देता है। इसके सिर पर मुकुट और कानों में कुंडल शोभित हैं, जिनसे सूर्य के समान प्रकाशित होता है। २१—२५। रामचन्द्र ने बड़े आश्चर्य से कहा—राक्षसराज बड़ा तेजस्वी है। जैसा तेजस्वी शरीर रावण का है, वैसा किसी दानव और देवता का भी नहीं है। इसके सैनिक भी बड़े वीर और पर्वत के समान महाकाय हैं, वे चमकते हुए अस्त्र-शस्त्र धारण किये हैं। राक्षसराज अपने सैनिकों के साथ यमराज के समान मालूम होता है। २६—३०। बड़े भाग्य से आज यह पापी हमारे सामने आया है। हम अपना क्रोध इसे मारकर शान्त करेंगे। यह कहकर महापराक्रमी

रामचन्द्र और लक्ष्मण धनुष पर बाण चढ़ाकर खड़े हो गये। उ
महात्मा रावण बलवान् राक्षसों से बोला—तुम लोग सावधान रहो
वानर जब तुम लोगों के साथ हमको यहाँ आया हुआ देखेंगे, तब मौका
पाकर सूनी नगरी में घुस जायँगे। उस समय घेरकर उनको मार डालो
उसके बाद रावण उसी प्रकार वानरों को मारने लगा जैसे बड़ा मत्स्य
समुद्र का पानी मथ रहा हो। ३१—३५। रावण को सामने आते दे
कर सुग्रीव ने पर्वत का एक भारी शिखर उसके ऊपर फेंका। रावण
बड़ी फुर्ती से सुवर्णपुंख बाण मारकर उसे काट डाला। वह टुकड़े-टुकड़े
होकर पृथिवी पर गिर पड़ा। उसके बाद रावण ने विषधर साँपों के
समान भयानक बाण धनुष पर चढ़ाकर सुग्रीव की छाती में मारा
वह चिनगारी उड़ती हुई आग के समान चमकता था। वायु और
वज्र के समान वेग से जाकर सुग्रीव की छाती में धँस गया, जैसे
कार्त्तिकेय की शक्ति क्रौंच पर्वत को छेद गई थी। ३६—४०। वी
सुग्रीव उस बाण से पीड़ित और मूर्च्छित होकर पृथिवी पर गिर पड़े। उ
की यह दशा देखकर राक्षस बड़े हर्ष से गरजने लगे। तब गवाक्ष
गवय, सुषेण, ऋषभ, ज्योतिर्मुख और नल पर्वत उठाकर रावण की
ओर दौड़े। रावण ने पैने बाणों से उनके प्रहार निष्फल कर दिये और
सुवर्णपुंख बाणों से उन वानरों को भी घायल किया। वे सब पृथि
पर गिर पड़े। रावण ने बाणों से वानरों की सेना को ढक दिया। उस
बाणों से पीड़ित और घायल वानर भागकर सबकी रक्षा करनेवा
रामचन्द्र की शरण में गये। ४१—४५। धनुर्धर महात्मा रामचन्द्र ने वान
की यह दशा देखकर शीघ्र ही अपना धनुष लेकर चलने का इ
किया। तब लक्ष्मण ने हाथ जोड़कर कहा—हे आर्य, इस दुष्ट को ह
मार सकते हैं, आपको कष्ट उठाने का काम नहीं है। इसलिए हमें आ
दीजिए। रामचन्द्र ने उनकी बात मान ली और उनको जाने
आज्ञा दी। रामचन्द्र ने कहा—युद्ध में बड़ी सावधानी से रहना, क्यों

रावण बड़ा पराक्रमी है। देवता और दानव भी इससे युद्ध करने का साहस नहीं करते। सब प्रकार से अपनी रक्षा करना और मौक़ा पाकर इस पर प्रहार करना।४६—५०। लक्ष्मण उनको प्रणाम करके युद्ध के लिए गये। वहाँ हाथी की सूँड़ के समान भुजाओंवाले, भयानक धनुष उठाये, वानरों पर बाणों की वर्षा करते हुए रावण को देखा। महातेजस्वी पवनकुमार हनुमान् वृक्षों और शिलाओं से उसके बाणों को रोकते थे। वे कूदकर उसके रथ पर चढ़ गये और दाहिना हाथ उठाकर उसे डाटकर बोले—रावण! तुम देवता, दानव, राक्षस, यक्ष और गन्धर्वों से ही अवध्य हो, वानरों से अवध्य नहीं हो। यह देखो, पाँचों अँगुलियों सहित हमारा हाथ उठा है, यह बहुत दिनों से तुम्हारी देह में बसे हुए प्राणों को बाहर निकाल देगा।५१—५६। महा-पराक्रमी रावण क्रोध से लाल-लाल आँखें करके बोला—हे वानर! अच्छी बात है, तुमने जो हाथ उठाया है, निडर होकर शीघ्र इसका प्रहार करो। इससे तुम्हारी कीर्ति होगी। तुम्हारा पराक्रम देख लें, तब तुम्हारा विनाश करें। हनुमान् ने उत्तर दिया—क्या तुमको स्मरण नहीं है, तुम्हारे पुत्र अक्ष को हमी ने मारा था। उसका स्मरण करो और उसी से हमारे पराक्रम का अनुमान कर लो। हनुमान् के यह कहने पर महा-तेजस्वी रावण ने उनकी छाती में एक थप्पड़ मारा।५७—६०। थप्पड़ लगने से हनुमान् कुछ विचलित तो हुए, किन्तु सम्हल गये। थोड़ी देर बाद उन्होंने भी रावण की छाती में एक थप्पड़ जमाया।६१। महात्मा हनुमान् का थप्पड़ लगने से दशानन रावण उसी तरह काँप उठा, जैसे भूकम्प आने से पर्वत डगमगाने लगे। हनुमान् का यह पराक्रम और रावण का काँपना देखकर सिद्ध, महर्षि, देवता और दानव बड़े प्रसन्न हुए। महातेजस्वी रावण शीघ्र ही कुछ स्वस्थ होकर बोला—हे वानर, तुम बड़े बलवान् हो। यद्यपि तुम हमारे शत्रु हो, तो भी हम तुम्हारे बल की प्रशंसा करेंगे। हनुमान् ने उत्तर दिया—हमारा

थप्पड़ लगने पर भी तुम जीवित हो, तो हमारे बल को धिक्कार है। रे मूर्ख, बातें न करके तू जल्दी हमारे ऊपर प्रहार कर ले। क्योंकि हम अभी एक घूँसा मारकर तुझे यमराज के घर भेज देंगे। यह सुनकर वह क्रोध के मारे आग हो गया, उसकी आँखें लाल हो गईं। उसने दाहिने हाथ से हनुमान् की छाती में एक घूँसा मारा, जिससे वे मूर्च्छित होकर पृथिवी पर गिर पड़े। महावीर हनुमान् को अचेत देखकर अतिरथ रावण ने नील की ओर अपना रथ बढ़ाया और साँपों के समान तीक्ष्ण बाणों से सेनापति नील को मारने लगा। ६२—७१। नील ने एक हाथ से पर्वत की शिला उठाकर रावण के ऊपर चलाई। उसी समय हनुमान् स्वस्थ हुए और नील के साथ युद्ध करते हुए रावण से बोले—तुम दूसरे के साथ युद्ध कर रहे हो, इसलिए हम तुम्हारे ऊपर आक्रमण करना उचित नहीं समझते। रावण ने नील के चलाये हुए शिखर को सात बाणों से टुकड़े-टुकड़े कर दिया। यह देखकर सेनापति नील क्रुद्ध होकर अश्वकर्ण, साल और आम आदि फूले-फले बड़े-बड़े वृक्षों को उखाड़कर प्रहार करने लगे। ७२—७७। रावण बाणों से उन वृक्षों को काटकर नील के ऊपर बाण बरसाने लगा। जैसे बादल पानी बरसाते हैं, वैसे ही रावण को बाण बरसाते देखकर महाबली नील अपना रूप छोटा करके उसके रथ की ध्वजा पर चढ़ गये और गरजने लगे। यह देखकर रावण बड़ा कुपित हुआ। ७८—८०। नील को कभी ध्वजा के ऊपर, कभी धनुष के ऊपर और कभी रावण के मुकुट के ऊपर देखकर रामचन्द्र, लक्ष्मण और हनुमान् को बड़ा विस्मय हुआ। नील की इस फुर्ती को देखकर महातेजस्वी रावण को भी बड़ा आश्चर्य हुआ। रावण को विस्मित जानकर वानर बड़े हर्ष से किलकिलाने लगे। वानरों का शब्द सुनकर रावण को और भी क्रोध आया। क्रोध के मारे वह अपना कर्तव्य न सोच सका। उसने बाण को अग्नि के मन्त्र से अभिमन्त्रित करके धनुष पर रखकर ध्वजा पर बैठे हुए नील की ओर

देखा, और उनसे कहा—हे वानर, तुम बड़े फुर्तीले हो। माया से छोटा रूप भी बना सकते हो, किन्तु यदि तुममें शक्ति हो, तो अब अपने प्राणों की रक्षा करो। तुम चाहे अनेक प्रकार के रूप धारण करो, किन्तु हमारे छोड़े हुए आग्नेय बाण से तुम्हारा विनाश अवश्य होगा।८१—८८। यह कहकर महाबाहु रावण ने आग्नेय बाण सेनापति नील को मारा। वह नील की छाती में लगा, वे मूर्च्छित होकर पृथिवी पर गिर पड़े, किन्तु अपने पिता अग्नि के प्रभाव से और अपने तेज से जीवित बच गये। उनको मूर्च्छित देखकर रावण बादल के समान गरजा और धनुष की डोरी बजाता हुआ लक्ष्मण की ओर दौड़ा। लक्ष्मण ने वीरता के साथ उससे कहा—तुम हमसे युद्ध करो, वानरों से युद्ध करना तुमको उचित नहीं है।८९—९४। रावण कुपित होकर बोला—हे लक्ष्मण, बड़े भाग्य की बात है, जो तुम आज हमारे सामने आये हो। हमारे बाणों से अभी यमलोक को जाओगे। लक्ष्मण ने उत्तर दिया—हे पापी रावण, बलवान् पुरुष अपने मुँह से अपनी प्रशंसा नहीं करते। हम तुम्हारा बल और प्रताप जानते हैं। हमसे युद्ध करो, व्यर्थ बकने से क्या काम है। तब रावण ने बड़े तीक्ष्ण सात बाण लक्ष्मण पर चलाये। लक्ष्मण ने सुवर्णपुंख बाणों से उसके बाण काट डाले। विषधर साँपों के समान अपने बाणों को कटे हुए देखकर रावण ने और बाण मारे, किन्तु लक्ष्मण कुछ भी विचलित नहीं हुए। क्षुर, अर्धचन्द्र और भल्ल बाणों से उसके बाणों को काट डाला।९५—१०१। लक्ष्मण की फुर्ती और अपने बाणों को निष्फल देखकर देवताओं का शत्रु रावण बड़ा विस्मित हुआ और फिर तीक्ष्ण बाण चलाने लगा। इन्द्र-तुल्य पराक्रमी लक्ष्मण भी रावण का विनाश करने के लिए वज्र के समान वेग से चलनेवाले, अग्नि के समान चमकते हुए, तीक्ष्ण बाण धनुष पर चढ़ाकर छोड़ने लगे। रावण ने उनके बाणों को अपने बाणों से काट डाला और ब्रह्मा का दिया हुआ प्रलय-

काल की अग्नि के समान प्रकाशित बाण लक्ष्मण के मस्तक पर मारा। तब लक्ष्मण को मूर्च्छा आ गई, उनके हाथ शिथिल हो गये किन्तु उन्होंने बड़े कष्ट से अपने को सम्हाल कर रावण का धनुष काट डाला और तीन बाणों से उसे घायल कर दिया। रावण अचेत होकर गिर पड़ा। उसके सब अंगों से रुधिर बहने लगा। थोड़ी देर बाद कष्ट से जब उसे होश आया तब उसने ब्रह्मा की दी हुई प्रचंड शक्ति हाथ में ला। अग्नि के समान प्रकाशित, युद्ध में वानरों को भयभीत करनेवाली, उस शक्ति को रावण ने बड़े वेग से लक्ष्मण के ऊपर चलाया। १०२—१०८। लक्ष्मण ने अग्नि-तुल्य तीक्ष्ण बाणों से उसे काट डालने का उद्योग किया, किन्तु वह उनकी छाती में लगी। शक्तिमान् लक्ष्मण शक्ति के प्रहार से व्याकुल होकर पृथिवी पर गिर पड़े। उनको मूर्च्छित जानकर रावण उनके पास आया और दोनों हाथों से उठाने लगा। यद्यपि महापराक्रमी रावण देवताओं सहित हिमवान्, मन्दराचल, सुमेरुपर्वत और तीनों लोकों को अपनी भुजाओं से उठा लेता था, किन्तु लक्ष्मण को न उठा सका। यद्यपि उनकी छाती में शक्ति लगी थी, वे पीड़ित थे, किन्तु वे साक्षात् विष्णु का अंश थे, उनको वह कैसे उठा सकता। उसी समय पवनकुमार हनुमान् दौड़कर रावण के पास आये और क्रुद्ध होकर उसकी छाती में वज्र के समान एक घूँसा मारा। वह काँपकर घुटनों के बल गिर गया और फिर मूर्च्छित होकर गिर पड़ा। उसके मुँह, कान और नाक से रुधिर बहने लगा। वह किसी तरह गिरता-पड़ता हुआ अपने रथ पर चला गया और वहाँ जाकर बेहोश हो गया। थोड़ी देर बाद कुछ होश तो आया, किन्तु स्वस्थ न हो सका। युद्ध में महापराक्रमी रावण को मूर्च्छित देखकर देवता, दानव, ऋषि और वानर प्रसन्न होकर हँसने लगे। महातेजस्वी हनुमान् रावण से पीड़ित लक्ष्मण को उठाकर रामचन्द्र के पास ले गये। शत्रुओं से न डरने-

वाले लक्ष्मण हनुमान् की भक्ति और स्नेह से हल्के हो गये थे। वह शक्ति लक्ष्मण को घायल करके फिर रावण के रथ पर चली गई। १०६—१२०। रावण जब स्वस्थ हुआ तब उसने भारी धनुष और तीक्ष्ण बाण फिर उठाया। इधर लक्ष्मण भी स्वस्थ हुए। उनकी छाती का घाव भर गया। सब व्यथा दूर हो गई। वह साक्षात् विष्णु का अंश थे, उनका प्रभाव कौन जान सकता था। वे महाबली वानरों की सेना को पीड़ित देखकर रावण से युद्ध करने को फिर चले। उसी समय हनुमान् ने रामचन्द्र के पास जाकर कहा, आप मेरी पीठ पर सवार होकर उसी प्रकार रावण से युद्ध कीजिए जैसे विष्णु गरुड़ के ऊपर सवार होकर शत्रुओं से युद्ध करते हैं। हनुमान् के कहने पर रघुनन्दन रामचन्द्र उनकी पीठ पर सवार हुए, और रथ पर बैठे हुए रावण को युद्धभूमि में देखकर वैसे ही क्रुद्ध होकर दौड़े जैसे विष्णु भगवान् अस्त्र उठाकर वैरोचन को मारने दौड़े थे। उन्होंने वज्र गिरने के समान धनुष का टंकार किया और फिर गम्भीर स्वर से रावण से कहा—हे राक्षसराज! खड़े रहो, हमारा अप्रिय करके, तुम भाग कर कहाँ जा सकते हो? यदि तुम इन्द्र, यम, सूर्य, ब्रह्मा, अग्नि और महादेव की भी शरण में जाओ, अथवा दसों दिशाओं में कहीं भी छिपो तो भी जीवित नहीं बच सकते। आज तुमने जिनको शक्ति से घायल किया है और जो शीघ्र ही स्वस्थ भी हो गये हैं, यही लक्ष्मण पुत्र-पौत्र के सहित तुम्हारा विनाश करेंगे। हमने जिस प्रकार अद्भुत बाणों से जनस्थान में चौदह हज़ार राक्षसों को मुहूर्त्त भर में मार डाला था, वैसे ही आज तुम्हारा भी विनाश करेंगे। १२१—१३२। यह सुनकर महाबली रावण बड़े क्रोध से प्रलयकाल की अग्नि के समान चमकते हुए तीक्ष्ण बाण रामचन्द्र के ऊपर छोड़ने लगा। बाण लगने से महातेजस्वी रामचन्द्र कुपित हुए, और क्रोध आने से उनका तेज और भी बढ़ गया। रावण के बाणों से हनुमान् भी

घायल हुए। रामचन्द्र ने तीक्ष्ण बाणों से रावण का रथ, ध्वज, पताका, छत्र और रथ के पहिया काट डाला। शूल और खड्ग आदि उसके अस्त्र भी काट डाले। सारथि और घोड़ों को भी मार डाला। वज्र के समान एक बाण उसी प्रकार रावण की छाती में मारा जैसे भगवान् इन्द्र ने सुमेरु पर्वत पर वज्र का प्रहार किया था। जो रावण इन्द्र के वज्र से पीड़ित नहीं हुआ था वह रामचन्द्र के बाण से व्यथित होकर मूर्च्छित हो गया। धनुष हाथ से छूट गया। रामचन्द्र ने अर्ध चन्द्राकार बाण मारकर सूर्य के समान चमकता हुआ उसका मुकुट भी काट डाला। अस्त होते हुए सूर्य के समान और विषहीन सर्प के समान रावण का तेज नष्ट हो गया। यह देखकर रामचन्द्र ने उससे कहा—रावण, तुमने बड़ी वीरता दिखाई। हमारे महाबली वानरों के साथ युद्ध करते-करते थक गये हो। इस समय तुम युद्ध नहीं कर सकते, इसलिए अब तुमको न मारेंगे। इस समय तुम बहुत पीड़ित हो, इसलिए लंका को चले जाओ। रात भर विश्राम करके, युद्ध की थकावट मिटाकर, कल प्रातःकाल जब फिर आवोगे तब हमारा बल देखोगे।१२२—१४३। रावण का धनुष और मुकुट काट डाला गया था। सारथि और घोड़े मार डाले गये थे। वह स्वयं बाणों से पीड़ित हो गया था। उसका दर्प और हर्ष भी नष्ट हो चुका था। रामचन्द्र की यह बात सुनकर वह लज्जित हुआ और लंका को चला गया। इधर रामचन्द्र और लक्ष्मण ने वानरों के अंगों में लगे हुए बाणों को निकालकर उनको स्वस्थ किया। युद्ध में रावण की हार हुई, यह देखकर देवता, दानव, नाग और जलचर-थलचर सब प्राणी बड़े प्रसन्न हुए। १४४—१४६।

सर्ग ६०

रामचन्द्र के बाणों से पीड़ित रावण का गर्व नष्ट हो गया। उसके

सब इन्द्रियाँ व्यथित हो गईं। जैसे सिंह के डर से हाथी और गरुड़ के डर से साँप व्याकुल हो जाता है, वैसे ही महात्मा रामचन्द्र से हारकर रावण व्याकुल हुआ। बिजली के समान वेग से चलनेवाले और ब्रह्म-दंड के समान अमोघ रामचन्द्र के बाणों का स्मरण करके वह बहुत घबराया। वह सुवर्णमय सिंहासन पर बैठा था, राक्षसों की ओर देख कर बोला—हमने जो कठिन तपस्या की थी, वह सब निष्फल हो गई। इन्द्र-तुल्य पराक्रमी होने पर भी हम एक मनुष्य से हार गये। १—५। ब्रह्मा ने जो कहा था कि मनुष्यों से तुमको भय है, वह उनकी बात अब सत्य हुई। हमने देवता, दानव, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस और नाग से ही न मारे जाने का वरदान माँगा था। खेद है कि हमने उस समय मनुष्यों से अवध्य होने का वर न माँग लिया। इक्ष्वाकु-वंशीय राजा अनरण्य ने हमको एक बार शाप दिया था कि हे राक्षसाधम, हमारे वंश में एक ऐसा पुरुष जन्म लेगा, जो तुमको पुत्र, मन्त्री, सेना, घोड़े और सारथि समेत युद्ध में मार डालेगा। हमें जान पड़ता है कि दशरथ का पुत्र रामचन्द्र, हमारी मृत्यु का कारण है। एक बार हमने वेदवती का अपमान किया था, उसने भी हमको शाप दिया था। मालूम होता है कि वही वेदवती सीता के रूप में हमारी मृत्यु के लिए उत्पन्न हुई है। उमा, नन्दीश्वर, रम्भा और वरुण की कन्या ने जो कहा था, वह भी मिथ्या नहीं हो सकता। ऋषियों का वचन तो अवश्य ही सत्य होगा। अब तुम सब लोग मिलकर शत्रु के मारने का कोई उपाय सोचो। ६—१२। राक्षसों की सेना चहारदीवारी और नगर के द्वारों पर नियुक्त करो। देवताओं और दानवों का गर्व नष्ट करनेवाले, ब्रह्मा की शाप से सोते हुए, महापराक्रमी कुम्भकर्ण को जगाओ। महाबली रावण ने युद्ध में रामचन्द्र से मन ही मन अपनी हार मानकर कुम्भकर्ण को जगाने की आज्ञा दी। सुख से निश्चिन्त सोता हुआ कुम्भकर्ण सात-आठ या नव-दस महीने में जागता है। अब उसे सोये हुए नवाँ महीना है। राक्षसों

में श्रेष्ठ महाबाहु कुम्भकर्ण युद्ध में राम-लक्ष्मण और सब वानरों को शीघ्र मार डालेगा। वह सब राक्षसों में श्रेष्ठ है, किन्तु वह मूर्ख हमेशा सोता ही रहता है। कुम्भकर्ण के जागने पर रामचन्द्र से परास्त होने की चिन्ता हमको न रहेगी।१३—२०। वह इन्द्र के समान पराक्रमी है, यदि ऐसे दुःख में भी सहायता न करेगा तो फिर कब हमारे काम आवेगा।

रावण की आज्ञा पाकर बहुत-से राक्षस चन्दन और माला आदि सुगन्धित वस्तुएँ और अनेक प्रकार के भोजन लेकर बहुत शीघ्र कुम्भकर्ण के पास चले। चार कोस लम्बी और उतनी ही चौड़ी, फूलों की गन्ध से सुगन्धित, अत्यन्त रमणीय गुहा में, जहाँ वह सोता था, वे कठिनता से जा सके, क्योंकि उसकी श्वास की वायु से वे पीछे हट जाते थे। किसी तरह वहाँ पहुँचकर, रमणीय सुवर्णमय गुहा में, राक्षसों में श्रेष्ठ, पर्वताकार, बलवान् कुम्भकर्ण को सोते हुए देखा। राक्षस उसे जगाने लगे। कुम्भकर्ण के रोयें खड़े थे। वह साँप की तरह लम्बी साँसें छोड़ता था। उसकी श्वास की वायु से राक्षसों के पैर नहीं ठहरते थे। उसकी नाक के छेद भयानक और मुँह पाताल के समान बड़ा भारी था। वह बहुत बड़ी शय्या पर सोता था, उसकी देह से रुधिर और चर्बी की गन्ध आती थी। भुजाओं में सोने के बिजायठ और सिर पर सूर्य के समान चमकता हुआ किरीट धारण किये था।२१—३०। राक्षसों ने कुम्भकर्ण को जगाने के लिए भैंसे, सुअर और मृग आदि पशु उसके सामने खड़े कर दिये, खाने की चीजों के ढेर लगा दिये, रुधिर से भरे हुए घड़े और अनेक प्रकार के पशुओं के मांस सामने रख दिये। उसकी देह भर में चन्दन पोत दिया, दिव्य मालाएँ पहना दीं, धूप आदि सुगन्धित वस्तुओं से उस स्थान को सुगन्धित कर दिया। सब राक्षस बादलों के समान गरजकर उसकी स्तुति करने लगे। चन्द्रमा के समान श्वेत शंख भी बजाये। जब इतने पर भी वह न जागा तब राक्षसों ने एक साथ गरजना आरम्भ किया। कोई ताल ठोंकने लगा, कोई विक

लगा, कोई पैर पकड़कर उसे खींचने लगा और कोई बड़े ऊँचे स्वर से उसे पुकारने लगा। शंख, नगाड़े और ढोल बजाये गये, जिनका शब्द सुनकर पक्षी डर के मारे आकाश को उड़े और वहाँ से गिर पड़े। इन उपायों से भी जब कुम्भकर्ण न जागा तब राक्षसों ने भुशुण्डी, मुसल, मुद्गर, गदा, शिलाओं और घूँसों से, सुख से सोये हुए कुम्भकर्ण को मारना शुरू किया।३१—४०। उसकी श्वास की वायु से कोई राक्षस उसके सामने खड़ा नहीं रह सकता था। दस हज़ार महाबली राक्षस काजल के ढेर के समान कुम्भकर्ण को घेर कर खड़े हो गये। मृदंग, पणव, नगाड़े और शंख आदि बाजे बजाकर, गरजकर और मारकर जगाने लगे। जब इन उपायों से भी वह न जागा तब और भी कठिन उपाय करने लगे। घोड़े, ऊँट, गधे और हाथी, कोड़ों से मार-मारकर उसके ऊपर दौड़ाये गये। नगाड़े, शंख और मृदंग पूरी ताक़त से बजाये गये। बड़े-बड़े चाबुकों से और मुद्गर, मुसल आदि शस्त्रों से उसके सब अंग पीटे गये। पीटने का शब्द पर्वत, वन और लंका भर में फैल गया, किन्तु इतने पर भी कुम्भकर्ण न जागा। तब राक्षसों ने सोने के डंडों से एक साथ हज़ारों नगाड़े बजाये। शाप के वशीभूत कुम्भकर्ण जब इस उपाय से भी न जागा, तब महापराक्रमी राक्षस कुपित होकर और भी बलपूर्वक उसे जगाने लगे।४१—५०। कोई नगाड़ा बजाने लगा, कोई गरजने लगा, कोई उसके सिर के बाल नोचने लगा और कोई कान काटने लगा। घड़ों में पानी भरकर उसके कानों में छोड़ने लगे। किन्तु गहरी नींद में सोता हुआ कुम्भकर्ण तब भी न जागा। बलवान् राक्षस शूल और मुद्गर आदि लेकर उसके सिर और छाती में मारने लगे। फिर रस्सी से बँधी हुई एक बहुत बड़ी गदा से उसे पीड़ित किया। किन्तु वह किसी उपाय से भी न जागा। तब राक्षसों ने उसकी देह पर हज़ारों हाथी दौड़ाये। उस बोझ से उसे स्पर्श का अनुभव हुआ तब उसको नींद खुली। पर्वत, वृक्ष और गदा आदि के प्रहार उसे कुछ भी

न जान पड़े। नींद खुलने पर वह जम्हाई लेने लगा और भूख से व्याकुल होकर उठ बैठा। वह साँप के समान लम्बी, पर्वत के समान मोटी और वज्र के समान दृढ़ भुजाएँ उठाकर, बड़वामुख के समान मुख फैलाकर जम्हाई लेने लगा। उसका मुख-विवर पाताल के समान और मुख-मंडल उदयाचल के शिखर पर उदय होते हुए सूर्य के समान जान पड़ा। जम्हाई लेने पर उसके मुँह से पर्वत से आती हुई वायु के समान बड़े वेग से श्वास निकली। वह प्रलय के समय सब प्राणियों का संहार करनेवाले काल के समान उठ खड़ा हुआ। ५१—६०। उसकी आँखें अंगार के समान, चमकती हुई बिजली के समान, और प्रकाशित ग्रह के समान दिखाई दीं। उसके खाने के लिए सुअर और भैंसे आदि जो पशु, और अनेक प्रकार के जो भोज्य-पदार्थ लाये गये थे, वे सब दिखा दिये गये। उसने डटकर भोजन किया और प्यास लगने पर घड़ों में भरी हुई मदिरा, चर्बी और रुधिर पिया। जब खा-पीकर सन्तुष्ट हुआ तब राक्षस उसके सामने आये और सिर झुकाकर प्रणाम करके हाथ जोड़कर खड़े हो गये। वह लाल-लाल आँखों से सब ओर देखने लगा, और इस प्रकार जगाने से विस्मित होकर राक्षसों को निमं[त्रित] करके बोला—तुम लोगों ने बड़े आदर से हमें क्यों जगाया है? रा[ज्य] कुशल से हैं न? कोई भय तो नहीं है? हमें जान पड़ता है कि हम[को] भय अवश्य उपस्थित हुआ है, उसी के लिए तुम लोगों ने हमें इतनी जल्दी जगाया है। आज हम राक्षसराज का भय दूर कर देंगे, इन्द्र को मार डालेंगे और अग्नि को शीतल कर देंगे। साधारण का[र्य] के लिए हमें कोई नहीं जगा सकता। कोई विशेष कारण अवश्य [है], उसे तुम जल्दी बताओ। ६१—७०। शत्रुओं का विनाश करनेवा[ले] कुम्भकर्ण के यह पूछने पर रावण का मन्त्री यूपाक्ष हाथ जोड़[कर] बोला—हम लोगों को देवताओं से तो कोई डर नहीं है, मनु[ष्य] से ही बहुत बड़ा भय उपस्थित हुआ है। ऐसा भय देवताओं [से]

दानवों से हम लोगों को कभी नहीं हुआ। पर्वत के समान बड़े बड़े वानरों ने आकर लंका को चारों ओर से घेर लिया है। सीता को हर लाने के कारण रामचन्द्र वानरों की सेना लेकर आये हैं। पहले एक वानर समुद्र लाँघकर यहाँ आया, उसने लंका में आग लगा दी। कुमार अक्ष को, बहुत-से राक्षसों और हाथियों को भी मार डाला। अधिक क्या कहें, देवताओं के कंटक राक्षसराज रावण को सूर्य के समान तेजस्वी रामचन्द्र ने 'अब तुम युद्ध नहीं कर सकते, इसलिए चले जाओ' यह कहकर छोड़ दिया। जो बात देवता, दानव कोई भी आज तक रावण के साथ नहीं कर सका था, वह रामचन्द्र ने किया। उन्होंने अपनी इच्छा से रावण को जीवित छोड़ दिया, नहीं तो प्राण जाने में कोई सन्देह न था। यूपाक्ष के मुँह से युद्ध में रावण की हार सुनकर कुम्भकर्ण चकित होकर बोला—हे यूपाक्ष, हम आज वानरों की सेना सहित रामचन्द्र और लक्ष्मण को जीतकर रावण को देखेंगे। वानरों के मांस और रुधिर से राक्षसों को तृप्त करेंगे और राम-लक्ष्मण का रुधिर हम स्वयं पियेंगे। ७१—८०। गर्व से भरी हुई कुम्भकर्ण की यह बात सुनकर राक्षसश्रेष्ठ महोदर ने हाथ जोड़कर कहा—हे महाबाहु, पहले आप रावण के पास चलिए, उनकी बातें सुनकर कर्तव्य का विचार करके तब युद्ध में शत्रुओं को परास्त कीजिए। महोदर के कहने पर महाबली कुम्भकर्ण राक्षसों के साथ चला। बहुत-से राक्षस रावण के पास पहले ही पहुँच गये थे। उन्होंने रावण से हाथ जोड़कर कहा—हे राक्षसेश्वर, आपके भाई कुम्भकर्ण जागे हैं। वे वहीं से युद्ध के लिए चले जायँ या आपके पास आवें। ८१—८६। रावण ने कहा—कुम्भकर्ण को आदर के साथ पहले हमारे पास लाओ। हम उनको देखेंगे और यथोचित सम्मान करेंगे। उन राक्षसों ने कुम्भकर्ण के पास जाकर कहा—राक्षसराज आपको देखना चाहते हैं, आप चलिए और अपने भाई को प्रसन्न कीजिए। भाई की आज्ञा सुनकर

महापराक्रमी कुम्भकर्ण उठ खड़ा हुआ । ८७–९० । उसने हाथ-मुँह धोया, स्नान किया और पीने के लिए पानी माँगा । रावण की आज्ञानुसार राक्षसों ने मदिरा और मांस आदि अनेक प्रकार की खाने-पीने की चीज़ें उसके सामने रख दीं । उसने हज़ार घड़े मदिरा पिया, किन्तु इतनी मदिरा से भी बलवान् कुम्भकर्ण को बहुत थोड़ा नशा हुआ । वह काल के समान कुपित होकर रावण के पास चला । उसके चलने से पृथिवी काँपने लगी । जैसे सूर्य की किरणों से पृथिवी में प्रकाश होता है, वैसे ही उसके तेज से राजमार्ग प्रकाशित हो गया और जिस प्रकार इन्द्र ब्रह्मा के पास जाते हैं, वैसे ही वह रावण के पास चला । शत्रुओं का विनाश करनेवाले पर्वताकार कुम्भकर्ण को देखकर वानर डर के मारे मार्ग छोड़कर दूर खड़े हो गये । कोई भाग खड़े हुए, कोई भागते-भागते गिर पड़े, कोई भागकर रामचन्द्र के पास पहुँचे और कोई भय के मारे पृथिवी पर लेट रहे । सूर्य के समान तेजस्वी, पर्वत के समान ऊँचे, भयानक कुम्भकर्ण को देखकर वानर तितर-बितर हो गये । ९१–९८ ।

सर्ग ६१

महातेजस्वी धनुर्धर रामचन्द्र ने भी मुकुट धारण किये हुए महाकाय कुम्भकर्ण को देखा । आकाश नापते हुए वामन का रूप जैसा ऊँचा हुआ था, वैसा ही पर्वताकार कुम्भकर्ण दिखाई दिया । वह बरसात के बादलों के समान काला था और सोने के आभूषण धारण किये था । उसे देखकर वानरों की सेना भाग खड़ी हुई थी । भागती हुई सेना को और महाकाय राक्षस को देखकर रामचन्द्र ने विस्मित होकर विभीषण से पूछा—यह पर्वत के समान ऊँचा, वानरों की जैसी आँखोंवाला, बिजली सहित बादलों के समान शोभित, मुकुट धारण किये हुए कौन राक्षस-वीर लंका में देख पड़ता है । इतना बड़ा राक्षस

पृथिवी पर और कहीं न होगा। इसे देखकर वानर भागे जा रहे हैं। हे विभीषण! बताओ, यह राक्षस है या दानव। हमने आज तक ऐसा प्राणी कभी नहीं देखा था। १—७। राजकुमार रामचन्द्र के यह पूछने पर बुद्धिमान् विभीषण ने उत्तर दिया—हे रघुनन्दन, जिसने युद्ध में इन्द्र और यमराज को परास्त किया है, वह विश्रवा का पुत्र महापराक्रमी कुम्भकर्ण यही है। इसकी बराबर ऊँचा राक्षस और कोई नहीं है। युद्ध में देवता, दानव, यक्ष, नाग, राक्षस, गन्धर्व, विद्याधर और साँप सब इससे हार गये हैं। हाथ में शूल लिये, भयानक आँखोंवाले, महाबली कुम्भकर्ण को देखकर देवता मोहित हो गये और इसे मार न सके। दूसरे राक्षस वरदान पाकर बलवान् हुए हैं, किन्तु तेजस्वी कुम्भकर्ण स्वभावतः महापराक्रमी है। ८—१२। पैदा होते ही इसने भूख से व्याकुल होकर हज़ारों प्राणियों को खा लिया था। तब प्रजा इसके डर से व्याकुल होकर इन्द्र की शरण में गई और उनसे अपना हाल कहा। इन्द्र ने कुपित होकर कुम्भकर्ण पर वज्र चलाया। वज्र लगने से यह कुछ काँप उठा और बड़े ज़ोर से गरजने लगा। प्रजा और भी बहुत डरी। बलवान् कुम्भकर्ण को बड़ा क्रोध आया और इसने ऐरावत हाथी का दाँत उखाड़कर इन्द्र की छाती में मारा। उस प्रहार से इन्द्र बहुत पीड़ित हुए। तब देवता, दानव, ब्रह्मर्षि और मनुष्य बड़े दुखित हुए। इन्द्र प्रजा को साथ लेकर प्रजापति ब्रह्मा के पास गये और कुम्भकर्ण की दुष्टता उनसे निवेदन की। जिस निर्दयता से इसने हज़ारों प्राणियों को खा लिया था, देवताओं को परास्त किया था, ऋषियों के आश्रम विध्वंस कर दिये थे और पराई स्त्रियों को हर लाया था, वह सब ब्रह्मा से कहा। फिर इन्द्र ने ब्रह्मा से प्रार्थना की—हे भगवन्, यदि इसी तरह यह प्रतिदिन प्राणियों को खाया करेगा, तो थोड़े ही दिनों में सब लोक शून्य हो जायँगे। १३—२०। इन्द्र की प्रार्थना सुनकर लोकपितामह ब्रह्मा ने सब राक्षसों को अपने पास

बुलाया। उनके साथ कुम्भकर्ण भी गया। इसे देखकर ब्रह्मा को भय हुआ। उन्होंने कहा—हे राक्षस, क्या विश्रवा ने लोकों का विनाश करने के लिए तुमको पैदा किया है! आज से तुम मुर्दे की तरह हमेशा सोते ही रहो। ब्रह्मा के शाप से कुम्भकर्ण उसी दम जम्हाई लेकर गिर पड़ा। कुम्भकर्ण की यह दशा देखकर रावण बहुत घबराया और हाथ जोड़कर ब्रह्मा से बोला—हे भगवन्, सोने का वृक्ष जब बढ़कर इतना बड़ा हुआ और फलने का समय आया तब आपने इसे काट डाला। यह आपका पौत्र है। इसे ऐसा शाप देना आपको उचित नहीं है। आपका वचन मिथ्या तो हो नहीं सकता, इसलिए यह सोवेगा तो अवश्य ही, किन्तु इसके सोने और जागने का कुछ समय नियत कर दीजिए। रावण की यह प्रार्थना सुनकर ब्रह्मा ने कहा—यह छः महीने सोवे और एक दिन जागे। यह वीर बढ़ी हुई आग के समान एक ही दिन में मुँह फैलाकर बहुत-से प्राणियों को खा जायगा।

आज आपके पराक्रम से डरकर राक्षसराज रावण ने कुम्भकर्ण को जगाया है। यह अभी गुहा से निकला है और बड़े क्रोध से वानरों को खाता हुआ दौड़ता चला जाता है। २१—३०। जब इसे देखकर ही वानर भाग खड़े हुए तो इससे युद्ध कैसे करेंगे। इसलिए आप वानरों से कहिए कि यह राक्षस नहीं है, एक बड़ा भारी यन्त्र है, तब उनका डर छूट जायगा। विभीषण की यह बात सुनकर रामचन्द्र ने सेनापति नील से कहा—तुम वानरों की सेना ले जाकर लंका के फाटकों पर चहारदीवारी के किनारे और रास्तों पर खड़ी कर दो। सब वानर पर्वत, वृक्ष और शिला आदि लेकर युद्ध के लिए तैयार रहें। रामचन्द्र की आज्ञा से सेनापति नील ने सेना को तैयार होने की आज्ञा दी। गवाक्ष, शरभ, हनुमान् और अंगद, यह चारों महावीर वानर पर्वत और शिला लेकर लंका के फाटक पर जा पहुँचे। सब वानर अपनी विजय से बड़े प्रसन्न थे। वे रामचन्द्र की आज्ञा सुनकर वृक्षों से राक्षसों की सेना को

पीड़ित करने लगे। उस समय वृक्ष और शिलाएँ लिये हुए वानरों की सेना ऐसी शोभित हुई, जैसे पर्वत के समीप बादलों की घटा शोभित हो। ३१-३६।

सर्ग ६२

नींद से मतवाला कुम्भकर्ण अनेक प्रकार से शोभित राजमार्ग पर चला जाता था। उसके साथ हजारों वीर राक्षस थे। छतों से उसके ऊपर फूलों की वर्षा होती थी। वह सुवर्णमय, रमणीय, सूर्य के समान प्रकाशित राक्षसराज के राजभवन में पहुँचा और जैसे बादलों में सूर्य प्रविष्ट होते हैं, वैसे ही वह वहाँ गया। जैसे इन्द्र ब्रह्मा के पास जाते हैं, वैसे ही कुम्भकर्ण ने राजभवन में जाकर अपने भाई को सिंहासन पर बैठे हुए देखा। राक्षसों के साथ चलते हुए कुम्भकर्ण ने पृथिवी को कँपा दिया। रावण पुष्पक विमान पर उदास बैठा था। १-६। कुम्भकर्ण को देखकर बड़े हर्ष से उठा और आगे बढ़कर उसे हाथ पकड़कर ले गया। जब रावण आसन पर बैठ गया तब महाबली कुम्भकर्ण ने प्रणाम किया और पूछा, क्या काम है? रावण ने फिर उठकर उसे छाती से लगाया। कुम्भकर्ण अपने भाई से मिलकर बड़ा प्रसन्न हुआ और उसकी आज्ञा से श्रेष्ठ आसन पर बैठकर बड़े क्रोध से लाल-लाल आँखें करके बोला— राजन्, आपने किसलिए मुझे बड़े आदर से जगाया है? बताइए, आपको किसका भय है, कौन अपनी मौत चाहता है? रावण ने कहा—हे महाबल, तुम बहुत दिनों से सोते हो, इसलिए रामचन्द्र से जो भय हम को है, उसे तुम नहीं जानते। ७-१२। दशरथ के पुत्र बलवान् रामचन्द्र सुग्रीव के साथ समुद्र लाँघकर लंका में आये हैं और हमारे कुल का नाश कर रहे हैं। देखो, लंका के वन-उपवन सब उजाड़ दिये गये। समुद्र में सेतु बाँधकर वानरों की सेना लंका में आई है। सेना बहुत बड़ी है। महासमुद्र के समान जान पड़ती है। प्रधान

राक्षसों को वानरों ने युद्ध में मार डाला, किन्तु वानरों के विना[illegible] का कोई उपाय हम नहीं देखते, क्योंकि अभी तक वानर युद्ध में [illegible] दिन नहीं हारे। १४—१६। हे महाबल, वानरों से हमको बड़ा [illegible] है। तुम हमारी रक्षा करो। इन सबको आज ही मार डालो। [illegible] लिए तुमको जगाया है। लंका में केवल बालक और बूढ़े रा[illegible] बचे हैं, उनकी रक्षा करो। अपने भाई के लिए यह कठिन [illegible] करो। हमने आज तक कभी ऐसा अनुरोध तुमसे नहीं किया। [illegible] हमारा स्नेह करते हो और हमको तुम्हारा बड़ा भरोसा है। देवता[illegible] और दानवों से जब कभी तुमसे युद्ध हुआ है, तुमने सबको परा[illegible] किया। जो तुमसे लड़ा वही हारा। १७—२०। हे महापराक्रमी, [illegible] तुम अपना पराक्रम दिखाओ। संसार में कोई प्राणी तुम्हारे सम[illegible] बलवान् नहीं है। तुम अपने भाइयों का स्नेह करते हो और युद्धप्रिय [illegible] हो। जैसे वायु बड़े वेग से चलकर शरदृऋतु के बादलों को उड़ा ले जा[illegible] है वैसे ही तुम अपने बल से शत्रुओं को पीड़ित करो। २१—२२।

सर्ग ६३

रावण का विलाप सुनकर कुम्भकर्ण बहुत हँसा और उससे कह[illegible] लगा—पहले जब हम लोगों ने रामचन्द्र से विरोध न करने [illegible] सलाह दी थी, तब आपको अपने हित की बात अच्छी न लगी [illegible] अब वही बात सामने आई। पापी पुरुषों को मरने पर उनके कर्मों [illegible] फल मिलता है, किन्तु आपको जीवन में ही कर्मों का फल मि[illegible] गया। महाराज, पहले आपने इन बातों का विचार नहीं किया; अ[illegible] बल के गर्व से इसका परिणाम नहीं सोचा। जो पुरुष नीति-अनी[illegible] नहीं जानता, ऐश्वर्य के मद से पहले का काम पीछे और पीछे का का[illegible] पहले करता है, उसकी यही दशा होती है। जो देश-काल का वि[illegible] न करके उलटे-सीधे काम कर बैठता है, उसके काम उसी प्रकार दू[illegible]

हो जाते हैं, जैसे मन्त्रों से पवित्र न की हुई हवि दूषित हो जाती है। १–६। जो राजा मन्त्रियों के साथ पाँच[1] अवस्थाओं का विचार करके सन्धि-विग्रह आदि उपाय करता है, वही राजनीति का जानकार है। जो मन्त्रियों के साथ सलाह करके और अपनी बुद्धि से सोच-समझकर काम करता है, जो शत्रु और मित्र की परीक्षा कर लेता है, जो यथोचित समय पर धर्म, अर्थ और काम अथवा धर्म और काम का सेवन करता है, वही पुरुष नीति का जानकार है। किन्तु जो राजपुत्र धर्म, अर्थ और काम के विषय में विश्वासपात्र मन्त्रियों से सलाह लेकर भी उसे नहीं समझता, उसका शास्त्र का पढ़ना व्यर्थ है। ७–१०। जो साम, दान, भेद, पराक्रम, नीति-अनीति, धर्म, अर्थ और काम के विषय में मन्त्रियों से सलाह लेता है और जो इन्द्रियों को वश में रखता है, वह कभी विपत्ति में नहीं पड़ता। जो राजा बुद्धि से जीविका करनेवाले, नीति जाननेवाले मन्त्रियों के साथ सलाह करके परिणाम को सोचकर काम करते हैं, उनको राजलक्ष्मी कभी नहीं छोड़ती। बहुत-से पशुबुद्धि पुरुष शास्त्र का मर्म समझे बिना अपनी ढिठाई से ऊटपटाँग सलाह दे बैठते हैं, राजा को चाहिए कि उनकी बात न माने; उससे अहित होता है। ऐसे पुरुष अपने स्वार्थ के लिए ठकुर-सोहाती कह देते हैं, उनकी बात का विश्वास न करना चाहिए। वे लोग अहित की बातें इस तरह बनाकर कहते हैं, जिससे हित जान पड़ता है। ऐसे धूर्तों से कभी सलाह न लेनी चाहिए। उनकी सलाह में चलने से सब काम चौपट हो जाते हैं। ११–१६। बहुत-से मन्त्री शत्रुओं से मिलकर अपने स्वामी का विनाश करा देते हैं। वे प्रकट में मित्र बने रहते हैं और सब काम उलटे ही करते हैं। राजा को चाहिए, उनके बर्ताव से समझ ले और उनको दूर कर दे। जिस राजा का

१ काम के आरम्भ का उपाय, अपना और शत्रु का बलाबल, देश-काल का विभाग, विपत्ति-प्रतिकार और कार्य-सिद्धि।

स्वभाव चंचल होता है, उसके छिद्र शत्रु जल्दी ढूँढ़ लेते हैं और जि
प्रकार क्रौंच पर्वत में कार्त्तिकेय की शक्ति से किये हुए छेद में पक्षी घुस
हैं, वैसे ही शत्रु उस राजा के राज्य में घुस आते हैं। जो राजा शत्रु
तुच्छ समझकर उसकी परवा नहीं करता और अपनी रक्षा का उ
नहीं सोचता उसे बड़े अनर्थों का सामना करना पड़ता है और राज्य से
हाथ धोना पड़ता है।१७-२०। आपको विभीषण ने जो सलाह दी
वही हम भी उचित समझते हैं। उसी के अनुसार काम करने से आप
हित होगा। यदि आपको वह सलाह अच्छी नहीं लगती तो आप
जो इच्छा हो, सो कीजिए। कुम्भकर्ण की यह बातें सुनकर राव
की भौंहें चढ़ गईं। वह कुपित होकर बोला--हम तुमसे बड़े हैं,
लिए गुरु और आचार्य के समान तुम्हारे मान्य हैं, तुम हमको
सिखाते हो। ऐसी व्यर्थ की बातें करने से क्या लाभ है। इस स
जो करने योग्य है, वह करो। हमने मूर्खता से, भ्रम से अथवा अ
पराक्रम के गर्व से जो काम अब तक नहीं किया है, उसकी बात
करना व्यर्थ है। इस समय जो उचित हो, वह सोचो। हमारी अनी
से जो विपत्ति सिर पर आ गई है, उसे अपने पराक्रम से दूर करो।२१-
यदि तुम हमारा स्नेह करते हो, अपने पराक्रम की ओर ध्यान
हो और हमारे काम को अपना काम समझते हो तो हमारी सहा
करो। सुहृद्र वही है, जो विपत्ति पड़ने पर काम आवे। भाई वही
जो दुःख में अपने भाई की सहायता करे। इस प्रकार धैर्य के साथ क
वचन कहते हुए रावण को क्रुद्ध और व्याकुल जानकर कुम्भकर्ण
धीरे से मधुर वचन बोला—राजन्, एकाग्रचित्त होकर हमारी बात सुनि
चिन्ता न कीजिए। क्रोध छोड़कर स्वस्थ हो जाइए। मेरे जीते-जी
में घबराहट न लाइए। जिसके कारण आप दुःखित हैं, उनको मैं
में मार डालूँगा। भ्रातृस्नेह और बन्धुभाव से मुझे सब अवस्थाओं
आपके हित की बात कहनी चाहिए। इसी से मैंने ऐसा कहा, पर

समय में जो प्रिय और अनुकूल काम भाई को करना चाहिए, वह मैं करूँगा। आप युद्ध में अपने शत्रुओं का विनाश देखेंगे। २६–३३। हे महाबाहु, युद्ध में मेरे हाथ से राम-लक्ष्मण की मृत्यु और भागती हुई वानरी-सेना को आप देखेंगे। मैं आज रामचन्द्र का सिर ले आऊँगा। उसे देखकर आप सुखी होंगे और सीता दुःखित होंगी। भाई-बन्धुओं के मारे जाने से जो राक्षस शोक से व्याकुल हैं, हम आज उनके आँसू पोंछेंगे। बादलों में छिपे हुए सूर्य के समान वानरराज सुग्रीव को आज आप युद्ध में मरा हुआ देखेंगे। ३४–३८। हे निष्पाप, जब रामचन्द्र को मारने के लिए मैं तैयार हूँ, ये सब राक्षस भी आपके सहायक मौजूद हैं, तो फिर आप क्यों दुःखित होते हैं। हे राक्षसराज, रामचन्द्र युद्ध में पहले मुझे मार डालेंगे तब आपको मारने पावेंगे। मेरे जीते-जी आपका कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता। हे शत्रुनाशन, और किसी की ओर न देखकर मुझे युद्ध करने की आज्ञा दीजिए। मैं अकेला ही आपके शत्रुओं को मार डालूँगा। इन्द्र, यम, अग्नि, पवन, कुबेर और वरुण, जो कोई हमसे युद्ध करेगा वह परास्त होगा। मेरी देह पर्वत के समान है। मैं तीक्ष्ण शूल लेकर, बड़े-बड़े दाँत निकालकर, जब गरजता हुआ दौड़ूँगा तब इन्द्र भी डरकर भाग जायँगे। जब मैं शत्रुओं को रौंदने लगूँगा तो जिसे अपने प्राणों का मोह होगा वह मेरे सामने खड़ा न रह सकेगा। मैं गदा, शक्ति, खड्ग अथवा पैने बाणों से न मारूँगा, केवल हाथों से ही मसल दूँगा। चाहे इन्द्र भी मेरे सामने आवें, उनको भी भागना ही पड़ेगा। यदि आज रामचन्द्र ने मेरे घूँसों की मार सह ली, तो फिर मेरे बाण उनका रुधिर पियेंगे। राजन्, जब मैं मौजूद हूँ तब आपको चिन्ता किस बात की है। ३६–४७। मैं आपके शत्रु का विनाश करने के लिए जाता हूँ। आप रामचन्द्र का भय छोड़ दीजिए। मैं उनको युद्ध में मारकर ही लौटूँगा। रामचन्द्र, लक्ष्मण और सुग्रीव का वध करूँगा, जो वानर लंका को फूँक गया था,

उस बलवान् हनुमान् को भी मार डालूँगा। जो वानर युद्ध में मेरे साम
आवेंगे, उन सबको खा लूँगा और आपकी विजय-कीर्त्ति संसार में फै
दूँगा। राजन्! यदि इन्द्र से, साक्षात् ब्रह्मा से अथवा सब देवताओं
भी आपको भय हो तो मैं क्रुद्ध होकर उनको भी पृथिवी पर गि
दूँगा। यमराज का विनाश कर दूँगा, अग्नि को खा जाऊँगा। सू
और सब नक्षत्रों को पृथिवी पर गिरा दूँगा। इन्द्र को मार डालूँगा
समुद्र पी लूँगा। पर्वतों को चूर-चूर कर दूँगा और पृथिवी को विदीर्ण क
दूँगा।४८—५३। बहुत दिनों से सोते हुए कुम्भकर्ण का पराक्रम आ
सब प्राणी देखेंगे। ये तीनों लोक मेरी एक दिन की भी खूराक नहीं है
अब मैं रामचन्द्र का वध और आपको प्रसन्न करने के लिए जाता हूँ
युद्ध में उनको मारकर प्रधान वानरों को खा लूँगा। राजन्, आप सु
से विहार कीजिए, मदिरा पीजिए, शोक त्यागकर अपने सब का
कीजिए। मैं आज रामचन्द्र को यमपुर भेज दूँगा और सीता हमेश
के लिए आपके वश में हो जायँगी। ५४—५६।

सर्ग ६४

बलवान् महाकाय कुम्भकर्ण की बातें सुनकर महोदर नाम क
राक्षस बोला—हे कुम्भकर्ण, उत्तम कुल में तुम्हारा जन्म हुआ है, इ
से तुम साधारण पुरुष होने पर भी इतने ढीठ हो। तुमको केवल ग
है, किन्तु सब विषयों के तुम जानकार नहीं हो। क्या राक्षसराज नी
अनीति नहीं समझते, जो तुम उनको सिखाते हो। हमारी समझ
तो लड़कपन और ढिठाई के कारण ऐसी बातें कहते हो। राक्षसरा
रावण अपना लाभ, शत्रुओं की हानि और देश-काल को भली भाँ
जानते हैं। किसी काम को बिना सोचे-समझे केवल बल के भरो
साधारण पुरुष ही कर बैठते हैं। बुद्धिमान् लोग ऐसा नहीं करते। ध
अर्थ और काम के सेवन का समय जो तुम अलग-अलग बता

हो, इस विषय को तुम स्वयं नहीं जानते तो फिर राजा को क्या सिखाते हो।

देखो, कर्म ही धर्म, अर्थ और काम इन तीनों का कारण है। कर्महीन पुरुष किसी प्रकार का पुरुषार्थ नहीं कर सकता। कर्म करनेवाले को ही शुभ-अशुभ कर्म का फल भोगना पड़ता है। मोक्ष भी धर्म और अर्थ का फल है। स्वर्गादि भी इसी से प्राप्त होते हैं। धर्म और अर्थ का सेवन न करने से कष्ट उठाने पड़ते हैं, किन्तु काम की उपेक्षा करने से कोई भी विघ्न नहीं होता। धर्म और अर्थ का फल इस लोक में अथवा परलोक में मिलता है, किन्तु काम का शुभफल उसी समय मिल जाता है। इसलिए काम का सेवन करना राजा का अवश्य कर्त्तव्य है। हमने भी महाराज के इस विषय का समर्थन किया था, क्योंकि यदि बलवान् पुरुष शत्रु से युद्ध करने का साहस करें, तो उसमें हानि ही क्या है। १–१०। किन्तु तुमने अकेले ही सेना सहित रामचन्द्र को मार डालने की जो बात कही है, इस विषय में भी हम अपने विचार प्रकट किये देते हैं। जिन्होंने जनस्थान में बड़े बलवान् चौदह हज़ार राक्षसों को मार डाला, उनको तुम अकेले जाकर कैसे जीत लोगे? जो राक्षस जनस्थान में रामचन्द्र से हारकर भाग आये हैं, उनकी दशा इस समय देखो। वे भय से व्याकुल हो रहे हैं। सिंह के समान बलवान् कुपित रामचन्द्र को सोते हुए साँप के समान जगाना चाहते हो! संसार में ऐसा कौन है जो कुपित होने पर मृत्यु के समान असह्य रामचन्द्र को भयभीत कर सके? ११–१५। तुम्हारी इस बात का हम कैसे विश्वास कर लें? कौन निर्बल पुरुष बलवान् शत्रु को साधारण समझकर, अपने प्राण देने पर उतारू होकर, उसे अपने वश में करना चाहेगा। हे राक्षसश्रेष्ठ, मनुष्यों में जिसके समान दूसरा कोई नहीं है, जो इन्द्र और यम के समान पराक्रमी हैं, उनसे तुम अकेले युद्ध करने का इरादा कैसे करते हो? महोदर कुपित कुम्भकर्ण से यह कहकर, राक्षसों के बीच में बैठे

हुए, संसार को पीड़ित करनेवाले रावण से बोला—राजन्, सीता को अ
अधीन करने में आप देर क्यों करते हैं। आप जब चाहें तब सीता आ
वश में हो सकती हैं। १६—२०। हमने इस काम के लिए एक बहुत अ
उपाय सोचा है। यदि आप सहमत हों तो वैसा ही किया जाय। आ
नगर में यह ढिंढोरा पिटवा दीजिए कि महोदर, द्विजिह्व, संह्लादि, कुम्भक
और वितर्दन, ये पाँच राक्षस रामचन्द्र को मारने के लिए जाते हैं। ह
लोग रामचन्द्र से युद्ध करेंगे। यदि वे मारे गये तो फिर कोई उपा
करने की आवश्यकता ही न रहेगी, और यदि हम लोग शत्रु को न
मार सके और जीवित बच गये उस समय यह उपाय कीजिएगा।
उपाय यह है कि हम लोग राम नाम से अंकित रामचन्द्र के तीक्ष्ण
बाणों से घायल होकर अंगों से रुधिर टपकाते हुए युद्धभूमि से आ
आपसे कहेंगे कि हम लोगों ने राम-लक्ष्मण को खा लिया है। आप
प्रणाम करेंगे और आपसे पुरस्कार मागेंगे। तब आप नगर में यह घोष
कर दीजिएगा कि राम और लक्ष्मण सेना सहित मारे गये। अप
प्रसन्नता दिखाने के लिए नौकरों को वस्त्र, आभूषण और धन दीजिए
सैनिकों को भी वस्त्र और मालाएँ दीजिएगा। आप भी प्रसन्नता
मदिरा पीजिएगा। जब नगर भर में यह बात फैल जाय और रा
आपस में कहने लगें कि राम-लक्ष्मण दोनों भाइयों को राक्षसों ने
लिया है तब आप सीता के पास जाइएगा और उन्हें धन-रत्न त
भोग-विलास की चीजों का प्रलोभन देकर, समझा-बुझाकर, अपने व
में कीजिएगा। २१—३१। यद्यपि वह आपकी स्त्री बनना नहीं चाह
किन्तु अपने पति की मृत्यु सुनकर, अपने को अनाथ समझकर आप
वश में हो जायँगी। स्त्रियाँ स्वभावतः अबला होती हैं, पति
मृत्यु सुनकर उनका धैर्य छूट जाता है। सीता रामचन्द्र की मृत्यु सुन
निराश हो जायँगी, और कोई उपाय न देखकर आपके अधीन
जायँगी। इसके सिवा वे हमेशा सुख में रही हैं, सुख में ही रहने

योग्य भी हैं; इस समय दुःख से बहुत पीड़ित हैं इसलिए सुख की आशा से आपकी बात अवश्य मान लेंगी। महाराज, हमने यह निश्चय समझ लिया है कि यदि आप रामचन्द्र के सामने फिर गये तो बड़ा अनर्थ होगा। इसलिए यहीं बैठे-बैठे कोई उपाय कीजिए। युद्ध करने से काम नहीं सिद्ध हो सकता। जो राजा युद्ध के विना शत्रु को जीत लेता है, उसकी सेना नष्ट होने से बच जाती है। उसका यश, पुण्य, कीर्त्ति और कल्याण भी होता है। ३२—३६।

सर्ग ६५

महोदर की यह बात सुनकर कुम्भकर्ण ने उसे डाट दिया और अपने भाई राक्षसराज रावण से कहा—हम आज दुरात्मा रामचन्द्र को मार कर आपका भय दूर कर देंगे और आप शत्रुरहित होकर सुखी होंगे। जैसे विना पानी के बादल नहीं गरजते, वैसे ही विना वीरता के पुरुष नहीं गरजते। युद्ध में हमारा बल देखिएगा। अपने मुँह से अपनी प्रशंसा करना उचित नहीं है। फिर कुम्भकर्ण ने महोदर की ओर देख कर कहा—जो राजा तुम्हारे समान मूर्ख, कायर, अपने को पंडित समझनेवाले पुरुषों की बात सुनते हैं, वे इसी तरह दुःख उठाते हैं। तुम लोगों ने राजा को प्रसन्न करने के लिए इनके मन की बात कहकर सब काम विगाड़ दिया है। अब लंका में रावण के सिवा और कोई वीर नहीं रह गया; सेना और खजाना का भी विनाश हो गया। तुम प्रकट में तो इनके मित्र जान पड़ते हो, किन्तु तुम्हारे काम शत्रु के समान होते हैं। अब हम तुम लोगों की अनीति को दूर करने के लिए युद्ध में शत्रुओं का विनाश करेंगे। कुम्भकर्ण के यह कहने पर रावण हँसकर बोला—हे वीर, तुम सत्य कहते हो, यह रामचन्द्र से बहुत डर गया है। इसी से युद्ध की बातें इसे अच्छी नहीं लगतीं। १—१०। हे कुम्भकर्ण, तुम्हारे समान पराक्रमी और हमारा सुहृद् दूसरा कोई नहीं है। इसलिए

तुम शत्रुओं को जीतने के लिए जाओ। हमने इसी काम के लिए तुम्हें जगाया है। हे शत्रुनाशन, आजकल राक्षस बड़ी विपत्ति में हैं। तुम हाथ में शूल लेकर, काल-पाश लिये हुए यमराज के समान जाकर, सूर्य के समान तेजस्वी राम-लक्ष्मण और सुग्रीव आदि वानरों को मार डालो। तुम्हारा भयानक रूप देखकर वानर भागेंगे। राम-लक्ष्मण का भी धैर्य छूट जायगा। महातेजस्वी रावण ने कुम्भकर्ण को युद्ध के लिए तैयार देखकर मानों फिर से अपना जन्म समझा, क्योंकि वह कुम्भकर्ण का पराक्रम अच्छी तरह जानता था। इसलिए वह शरदृऋतु के निर्मल चन्द्रमा के समान प्रसन्न हुआ। ११—१६। रावण की यह बात सुनकर महाबली कुम्भकर्ण बड़े हर्ष से युद्ध के लिए तैयार हुआ। उसने लोहे का बना हुआ, तपाये हुए सोने से भूषित, तीक्ष्ण शूल लिया। वह शूल इन्द्र के वज्र के समान दृढ़, वज्र ही के समान भारी; देवता, दानव, यक्ष, गन्धर्व और साँपों को पीड़ित करनेवाला, लाल फूलों की माला से शोभित, अग्नि के समान दीप्यमान और शत्रुओं के रुधिर से रँगा हुआ था। १७—२०। महातेजस्वी कुम्भकर्ण हाथ में शूल लेकर रावण से बोला—मैं अकेला ही जाऊँगा, सेना के जाने की कोई आवश्यकता नहीं। मुझे शत्रुओं पर क्रोध आया है और मैं भूखा भी बहुत हूँ, इसलिए मैं अकेला ही जाकर सब वानरों को खा लूँगा। रावण ने कहा—तुम शूल और मुद्गर लेकर सेना के साथ जाओ, क्योंकि वानर बड़े उद्योगी, साहसी और वीर हैं। तुमको मदान्ध और अकेले देखकर दाँतों से नोच-नोचकर मार डालेंगे। इसलिए राक्षसों की बहुत बड़ी सेना अपने साथ ले जाओ और राक्षसों का अहित करनेवाले शत्रुओं का विनाश करो। यह कहकर महातेजस्वी रावण ने आसन से उठकर, मणियों की माला कुम्भकर्ण के गले में पहना दी। अँगूठी, बिजायठ, चन्द्रमा के समान चमकता हुआ हार भी पहना दिया। कानों में कुंडल पहनाये और दिव्य सुगन्धित फूलों की माला पहनाई। सोने का बिजायठ और सुवर्णमय

अन्य सब आभूषण पहनकर बड़े-बड़े कानोंवाला कुम्भकर्ण प्रज्वलित अग्नि के समान शोभित हुआ। उसकी कमर में काला सूत बँधा था, इससे वह समुद्र मथने के समय वासुकि नाग से बँधे हुए मन्दराचल के समान जान पड़ा।२१—२६। वह बिजली के समान चमकता हुआ सुवर्णमय, दृढ़ कवच पहनकर, सन्ध्या के बादलों से घिरे हुए सुमेरु पर्वत के समान शोभित हुआ। सब अंगों में आभूषण पहने, हाथ में शूल लिये हुए वह राक्षस तीनों लोक नापने के समय वामन भगवान् के समान जान पड़ा। उसने रावण की प्रदक्षिणा की, प्रणाम किया और गले से लगाया। रावण ने उसे आशीर्वाद देकर जाने की आज्ञा दी और वह युद्ध के लिए चला। शंख और नगाड़े बजने लगे। हाथी, घोड़े, रथ और पैदलों की चतुरंगिनी सेना चली। सेना के चलने का शब्द बादलों के गरजने के समान होने लगा। सेना के पीछे महाबली कुम्भकर्ण चला। उसके पीछे साँप, ऊँट, गधे, सिंह, हाथी और पशु-पक्षियों पर सवार बहुत-से राक्षस चले। हाथ में शूल लिये हुए, छत्र लगाये, रुधिर की गन्ध से मदान्ध, देवताओं और दानवों का शत्रु, उद्भट वीर कुम्भकर्ण युद्ध के लिए निकला। मार्ग में राक्षसों ने उसके ऊपर फूलों की वर्षा की। उसके पीछे बहुत-से बलवान् राक्षस अस्त्र-शस्त्र लेकर पैदल चले। वे सब काजल के ढेर के समान काले थे। उनकी लाल-लाल आँखें बड़ी भयानक थीं। शूल, खड्ग, परशु, भिन्दिपाल, परिघ, गदा, मुसल, तालस्कन्ध और क्षेपणीय आदि अस्त्र-शस्त्र लेकर चले। बलवान् कुम्भकर्ण का रूप उस समय बहुत ही भयानक था।३०—४०। वह सौ धनुष मोटा और छः सौ धनुष ऊँचा था। उसकी आँखें गाड़ी की पहिया के समान थीं। मुँह जले हुए पर्वत के समान था। वह हँसकर राक्षसों से बोला—आज मैं क्रुद्ध होकर मुख्य वानरों के यूथों को उसी प्रकार भस्म कर दूँगा, जैसे अग्नि पतंगों को भस्म कर देती है। अथवा इन बेचारों का कोई अपराध नहीं है, यह जाति तो हम लोगों के उद्यानों का

भूषण है। लंका को घेरने का कारण राम-लक्ष्मण हैं। उनको मार डालने से ही यह बेचारे सब मर जायँगे। ४१—४५। कुम्भकर्ण के यह कहने पर राक्षस समुद्र को कँपाते हुए सिंहनाद करने लगे। उस समय भयानक उत्पात होते थे। उल्कापात और वज्रपात हुआ। गधे के रंग के बादल घिर आये। समुद्र और वन सहित पृथिवी काँप उठी। सियारिनें भयानक बोली बोलने लगीं। झुंड के झुंड पक्षी दाहिनी ओर से निकल गये। मार्ग में जाते हुए कुम्भकर्ण के शूल पर गिद्ध बैठ गया। कुम्भकर्ण की बाईं आँख और बाईं भुजा फड़कने लगी। ४६—५०। बड़े शब्द के साथ प्रज्वलित उल्का उसके सामने गिरी। सूर्य का तेज मलिन हो गया। बड़े ज़ोर से आँधी चलने लगी। काल से प्रेरित कुम्भकर्ण इन भयानक उत्पातों की कुछ भी परवा न करके चलता हो गया। वह पैदल चलकर नगर की चहारदीवारी के बाहर आया और बादलों के समान अद्भुत वानरों की सेना देखने लगा। उस पर्वताकार राक्षस को देखकर वानर उसी प्रकार भाग खड़े हुए, जैसे प्रचंड वायु के वेग से बादल उड़ जाते हैं। वानरों के भागने पर मेघाकार कुम्भकर्ण मेघ के समान गरजने लगा। उसके गरजने का शब्द सुनकर बहुत-से वानर उसी प्रकार पृथिवी पर गिर पड़े, जैसे जड़ काट देने पर साल के वृक्ष गिर पड़े हों। प्रलय के समय दंडधारी यमराज के समान बलवान् कुम्भकर्ण भयानक परिघ लेकर वानरों को भयभीत करता हुआ शत्रुओं का विनाश करने के लिए लंका से निकला। ५१—५७।

सर्ग ६६

कुम्भकर्ण लंका की चहारदीवारी के बाहर आकर बड़े वेग से चला। वह पर्वतों को कँपाता हुआ, समुद्र को चलायमान करता हुआ, वज्र गिरने का-सा शब्द करने लगा। वह इन्द्र, यम और वरुण

से भी अवध्य था। उसकी आँखें बड़ी भयानक थीं। उसे देखकर वानर भाग खड़े हुए। तब अंगद ने नल, नील, गवाक्ष और महाबली कुमुद से कहा—तुम लोग अपने पराक्रम को भूलकर और अपनी जाति के गौरव का ख़याल न करके साधारण वानरों की तरह कहाँ भागे जाते हो? हे वीरो! अभी कुछ नहीं बिगड़ा, लौट आओ। तुम लोगों को अपने प्राण बचाने के लिए इस तरह भागना उचित नहीं है। यह राक्षस युद्ध नहीं कर सकता, इसका यह बनावटी आकार केवल भय दिखाने के लिए है। १—६। इस बनावटी भय को अपने पराक्रम से नष्ट कर दो। वानर इन बातों को सुनकर बड़ी कठिनता से लौटे और वृक्ष लेकर युद्धभूमि में खड़े हो गये। फिर वे बड़े क्रोध से मदान्ध हाथियों की तरह कुम्भकर्ण को मारने लगे। कोई वानर पर्वत के शिखरों से, कोई शिलाओं से और कोई फूले हुए वृक्षों से कुम्भकर्ण को मारने लगा, किन्तु वह राक्षस रत्ती भर भी न डिगा। ७—१०। उसकी देह पर गिरने से शिलाओं और वृक्षों के टुकड़े-टुकड़े हो गये। तब कुम्भकर्ण भी बड़ा कुपित हुआ और महाबली वानरों की सेना को मथने लगा। जैसे वन को दावानल भस्म कर देता है, वैसे ही वह वानरों का संहार करने लगा। बहुत-से वानर रुधिर से लथपथ होकर पृथिवी पर लोट गये और ऐसे शोभित हुए मानों लाल फूलवाले वृक्ष कटे पड़े हैं। वानर एक-दूसरे को नाँघते-फाँदते हुए भाग खड़े हुए। कोई पीछे फिरकर नहीं देखता था। बहुतेरे समुद्र में कूद पड़े और बहुत-से वन में छिप रहे। कुम्भकर्ण की मार से भागे हुए बहुत-से वानर जिस मार्ग से समुद्र उतरे थे, उस ओर चले गये। बहुत-से वानर डर के मारे गड्ढों में छिप रहे। रीछ वृक्षों पर चढ़ गये, कोई-कोई पर्वतों पर चले गये। बहुत-से वानर भागते-भागते गिर पड़े और बहुतेरे कहीं खड़े न हुए भागते ही चले गये। कुछ डर के मारे मुर्दे की तरह पृथिवी पर लोट गये। इस प्रकार वानरों को भागते हुए देखकर अंगद ने पुकारकर कहा—

हे वानरो! खड़े रहो, लौट आओ और युद्ध करो, भागकर कहाँ जाओगे
हम ऐसा स्थान कहीं नहीं देखते जहाँ जाकर तुम लोग अपने प्राण
बचा सको। इसलिए लौट आओ, भागकर क्या प्राण बचाते हो
तुम लोग बड़े बलवान् और वेगवान् हो। अस्त्र फेंककर भागोगे तो
स्त्रियाँ तुमको हँसेंगी। स्त्रियों से हँसाकर जीवित रहना मरने के
बराबर है। ११—२०। तुम लोग अच्छे कुल में जन्मे हो। साधारण
वानरों की तरह डरकर क्या भागे जाते हो। तुम लोग बड़े नासमझ
हो, जो अपने पराक्रम का खयाल न करके डर के मारे भाग रहे हो।
सभा में जो बड़ी-बड़ी बातें मारते थे और कहते थे कि हम अकेले ही
सब राक्षसों को मार डालेंगे, वे बातें कहाँ गईं। जो पुरुष धिक्कार
पर जीवित रहता है, वह डरपोक है। इसलिए डर छोड़ दो और वीर
पुरुषों के मार्ग पर चलो। यदि तुम्हारी आयु क्षीण हो गई होगी तो
प्राण त्यागकर पृथिवी पर सो रहोगे, नहीं तो कोई न मार सकेगा।
और यदि युद्ध में मारे जाओगे तो ब्रह्मलोक को जाओगे, जो अधम
से युद्ध करनेवालों के लिए दुर्लभ है। अथवा यदि युद्ध में शत्रुओं को
मार डालोगे तो संसार में कीर्ति होगी, और यदि मारे जाओगे तो वीरों
के लोक का सुख भोगोगे।२१—२५। कुम्भकर्ण रामचन्द्र के सामने पड़
कर जीवित नहीं लौट सकता, जैसे जलती हुई आग में गिरकर पतंग
नहीं जीते। हम लोग वीरों में गिने जाते हैं। यदि कुम्भकर्ण के डर
से भागकर अपने प्राण बचावेंगे तो संसार में हँसी होगी। वीर अंगद
की यह बातें सुनकर भागते हुए वानर इस प्रकार निन्दित वचन
बोले—कुम्भकर्ण ने हम लोगों में से बहुतों का विनाश कर दिया
है, इसलिए अब लौटने का समय नहीं है, क्योंकि हम लोगों को
अपने प्राण बहुत प्रिय हैं। यह कहकर वानर भयानक आँखोंवाले
कुम्भकर्ण को आते हुए देखकर इधर-उधर भागे। बलवान् वानरों को
भागते देखकर अंगद ने किसी तरह समझा-बुझाकर उनको लौटाया।

बुद्धिमान् अंगद ने अपनी बातों से सबको प्रसन्न किया, तब वे खड़े हो गये और अंगद की आज्ञा पाने की प्रतीक्षा करने लगे। २६—३२।

सर्ग ६७

अंगद की बातें सुनकर सब वानर युद्ध की इच्छा से लौटे। बलवान् अंगद की बातों से वानरों ने अपने बल-पराक्रम का स्मरण किया और वे बड़े हर्ष से लौटकर, मरने पर उतारू होकर युद्ध के लिए खड़े हो गये। महाकाय वानर बड़े-बड़े वृक्ष और पर्वत के शिखर उठाकर कुम्भकर्ण की ओर दौड़े। कुम्भकर्ण भी कुपित होकर गदा उठाकर सब ओर से वानरों को रौंदता हुआ प्रहार करने लगा। उसकी मार से हज़ारों वानर पृथिवी पर सो गये। वह अपने हाथों से आठ, दस, सोलह, बीस या तीस वानर एक साथ पकड़कर खा लेता था। जैसे गरुड़ साँपों को खा लेते हैं, वैसे ही वह वानरों को खाने लगा, और खाता हुआ युद्धभूमि में दौड़ने लगा। वानर बड़ी कठिनता से साहस करके वृक्ष और शिलाएँ लेकर खड़े हुए। वानरों में श्रेष्ठ द्विविद एक पर्वत उठाकर पर्वताकार कुम्भकर्ण की ओर दौड़े। द्विविद ने कुम्भकर्ण की ओर वह पर्वत फेंका, किन्तु पर्वत उसके ऊपर न गिरकर सेना के ऊपर जा गिरा। उससे बहुत-से हाथी, घोड़े और रथ चूर हो गये, बहुत-से राक्षस भी उस पर्वत के नीचे पीस गये। द्विविद ने फिर एक पर्वत उठाया और उसे फेंककर बहुत-से घोड़े, सारथि और राक्षसों को मार डाला। राक्षसों के रुधिर से पृथिवी भीग गई। १—१२। रथ पर बैठे हुए राक्षसों ने भी गरज कर कालान्तक के समान पैने बाणों से बहुत-से वानरों के सिर उड़ा दिया। वानरों ने बड़े-बड़े पेड़ उखाड़कर रथ, घोड़े, हाथी, ऊँट और राक्षसों को मार डाला। उसी समय हनुमान् बड़े-बड़े पर्वत और वृक्ष लेकर आकाश को चले गये और वहाँ से कुम्भकर्ण

के सिर पर बरसाने लगे। महाबली कुम्भकर्ण ने अपने शूल से उन वृक्षों और पर्वतों को तोड़-फोड़कर गिरा दिया। फिर वह शूल लेकर वानरों की ओर झपटा। उसे आते देखकर महावीर हनुमान् एक पर्वत लेकर उसके सामने खड़े हो गये और बड़े वेग से उस महाकाय राक्षस को मारा। पर्वत के लगने से कुम्भकर्ण काँप उठा, उसकी देह से चर्बी और रुधिर बहने लगा। तब उसने बिजली के समान चमकता हुआ, अग्नि के समान प्रज्वलित, पर्वत के शिखर के समान भारी शूल उठाकर हनुमान् की छाती में मारा, जैसे कार्त्तिकेय ने क्रौंच पर्वत पर शक्ति का प्रहार किया था। छाती में शूल लगने से हनुमान् बहुत व्याकुल हो गये। वे रुधिर का वमन करने लगे और बड़े क्रोध से प्रलयकाल के बादलों के समान गरजने लगे। १३–२०। हनुमान् को पीड़ित देखकर राक्षस प्रसन्न होकर गरजे और वानर कुम्भकर्ण के डर से युद्ध से भागे। तब बलवान् नील ने भागते हुए वानरों को समझाकर लौटाया और पर्वत का एक शिखर उठाकर कुम्भकर्ण के ऊपर फेंका। कुम्भकर्ण ने एक घूँसा मारकर उस शिखर को तोड़ डाला; उससे चिनगारियाँ निकलने लगीं और वह टुकड़े-टुकड़े होकर पृथिवी पर गिर पड़ा। उसके बाद ऋषभ, शरभ, नील, गवाक्ष और गन्धमादन, यह पाँच वीर वानर एक साथ कुम्भकर्ण की ओर झपटे और पर्वत, वृक्ष, थप्पड़, लात तथा घूँसों से उस महाकाय राक्षस को सब ओर से मारने लगे। किन्तु उसने उन प्रहारों को स्पर्श के समान समझा, उसे कुछ भी पीड़ा न हुई। फिर उसने बड़े वेग से झपटकर ऋषभ को पकड़कर बग़ल में दबा लिया। वानरश्रेष्ठ ऋषभ कुम्भकर्ण की भुजाओं से पीड़ित होकर पृथिवी पर गिर पड़े और उनके मुँह से रुधिर बहने लगा। उसके बाद इन्द्र के शत्रु कुम्भकर्ण ने शरभ को एक घूँसा मारा। गवाक्ष को एक लात और नील को ठिहुनी का ठोकर दिया, ये सब वानर रुधिर से भीगकर ढाक के कटे हुए

के समान मूर्च्छित होकर गिर पड़े। कुम्भकर्ण ने जब उन महात्मा वानरों को गिरा दिया तब हज़ारों वानर एक साथ उसके ऊपर टूट पड़े। २१—३०। और, पर्वताकार कुम्भकर्ण के ऊपर चढ़कर दाँतों से काटने लगे, नखों से नोचने लगे, थप्पड़ और घूँसों से मारने लगे। जब हज़ारों वानर उसके ऊपर चढ़ गये तब पर्वत के समान वह राक्षस ऐसा शोभित हुआ जैसे वृक्षों समेत पर्वत की शोभा होती है। वह महाबली राक्षस क्रुद्ध होकर हाथों से पकड़कर वानरों को खाने लगा, जैसे गरुड़ साँपों को खाता है। कुम्भकर्ण पाताल के समान अपने मुँह में जिन वानरों को झोंक लेता था, वे नाक और कान की राह निकल जाते थे। ३१—३५। इस प्रकार वह राक्षस कुपित होकर वानरों को खाने और रौंदने लगा। वह प्रलय-काल की अग्नि के समान क्रुद्ध होकर मांस और रुधिर का पृथिवी पर कीचड़ करता हुआ वानरों की सेना में घूमने लगा। वज्र-धारी इन्द्र और हाथ में पाश लिये हुए यमराज के समान महाबली कुम्भकर्ण हाथ में शूल लेकर युद्धभूमि में शोभित हुआ और जैसे ग्रीष्मऋतु में अग्नि सूखे वन को जला देता है वैसे ही वह वानरों का संहार करने लगा। जब वानरों के यूथप मार डाले गये तब सेना के सब वानर डर के मारे चिल्लाने लगे। ३६—४०। बहुत-से वानर कुम्भकर्ण की मार से व्यथित होकर रामचन्द्र की शरण में गये। वानरों को पीड़ित देखकर अंगद पर्वत का एक बड़ा भारी शिखर लेकर, गरजकर राक्षसों को भयभीत करते हुए बड़े वेग से कुम्भकर्ण की ओर दौड़े और वह शिखर उसके सिर पर दे मारा। इन्द्र का शत्रु कुम्भकर्ण शिखर के लगने से क्रोध के मारे आग हो गया और गरजकर सब वानरों को डराता हुआ अंगद की ओर झपटा। उसने क्रुद्ध होकर अंगद के ऊपर शूल चलाया, किन्तु युद्ध में निपुण महाबली अंगद ने बड़ी फुर्ती से उसका प्रहार व्यर्थ कर दिया। फिर उन्होंने

कूदकर बड़े जोर से उसकी छाती में एक थप्पड़ मारा। थप्पड़ लगने से पर्वताकार कुम्भकर्ण मूर्च्छित होकर गिर पड़ा। थोड़ी दे बाद जब उसे होश आया तब उसने अंगद को एक घूँसा मारा, जिस अंगद मूर्च्छित होकर गिर पड़े। अंगद के गिर जाने पर कुम्भक शूल उठाकर सुग्रीव की ओर दौड़ा। ४१—५०। कुम्भकर्ण को आ देखकर, वीर वानरराज सुग्रीव कूदकर, एक पर्वत का शिखर उठा बड़े वेग से महाबली कुम्भकर्ण की ओर दौड़े। सुग्रीव को सामने आ देखकर वह अपने सब अंग फुलाकर खड़ा हो गया। वानरों के रुधि से भीगे हुए, बड़े-बड़े वानरों को खाते हुए, कुम्भकर्ण को खड़ा हुआ देखकर सुग्रीव ने कहा—तुमने बहुत-से वानरों को खा लिया है और बहुतों को मारकर गिरा दिया है। यह तुमने बड़ा कठिन काम किया इससे तुम्हारी बड़ी कीर्ति हुई।५१—५५। हे राक्षस, साधारण वान को मारकर क्या करोगे। उनको जाने दो। अब हमारे चलाये हुए पर्वतों की मार सहो। धैर्य और पराक्रम के साथ कहे हुए सुग्रीव के यह वचन सुनकर कुम्भकर्ण ने उत्तर दिया—हे वानर, तुम ब्रह्मा के पौत्र और ऋक्षराज के पुत्र हो, इसी से तुम बड़े धैर्य और पौरुष से गरज रहे हो। कुम्भकर्ण के यह कहने पर सुग्रीव ने वज्र के समान वह पर्वत कुम्भकर्ण की छाती में मारा, किन्तु वह भारी पर्वत उसकी चौड़ी छाती पर गिरकर टुकड़े-टुकड़े हो गया। यह देखकर वानरों को बड़ा दुःख हुआ और राक्षस प्रसन्न होकर गरजने लगे। ५६—६०। कुम्भकर्ण शिखर के लगने से बड़ा क्रुद्ध हुआ और मुँह फैलाकर गरजने लगा। फिर उसने सुग्रीव को मार डालने के लिए बिजली के समान चमकता हुआ शूल चलाया। कुम्भकर्ण के तीक्ष्ण शूल को बड़े वेग से आते हुए देखकर हनुमान् ने लपककर दोनों हाथों से उसको पकड़ लिया और तोड़ डाला। लोहे का, एक हजार भार के वजन का शूल हनुमान् ने बड़ी प्रसन्नता से जाँघ के ऊपर रखकर तोड़कर फेंक

दिया। यह देखकर वानरों की सेना बड़े हर्ष से गरजने लगी और उत्साह के साथ आगे बढ़ी। वानरों का गरजना सुनकर कुम्भकर्ण डरकर पीछे हट गया। कुम्भकर्ण का शूल तोड़ने पर सब वानर हनुमान् की प्रशंसा करने लगे। अपना शूल टूटा हुआ देखकर महात्मा कुम्भकर्ण बड़ा क्रुद्ध हुआ और मलयाचल का एक शिखर उखाड़कर सुग्रीव को मारा। वह शिखर लगते ही सुग्रीव मूर्च्छित होकर गिर पड़े, इसलिए राक्षस बड़े प्रसन्न हुए और गरजे। ६१—६७। सुग्रीव को मूर्च्छित देखकर महापराक्रमी कुम्भकर्ण उनको उठाकर उसी प्रकार वेग से ले भागा जैसे प्रचंड वायु बादल को उड़ा ले जाती है। मेघ के समान सुग्रीव को उठाकर युद्धभूमि से भागता हुआ कुम्भकर्ण ऊँचे शिखर से शोभित पर्वत के समान जान पड़ा। यह देखकर सब राक्षस उसकी प्रशंसा करने लगे, और वह सुग्रीव के पकड़ जाने से विस्मित देवताओं का कोलाहल सुनता हुआ लंका की ओर चला। इन्द्र-तुल्य पराक्रमी सुग्रीव को पकड़कर कुम्भकर्ण ने अपने मन में समझा कि इनको मार डालने से रामचन्द्र और वानरों की सब सेना परास्त हो जायगी। कुम्भकर्ण ने सुग्रीव को पकड़ लिया और वानरों की सेना इधर-उधर भागी जा रही है, यह देखकर बुद्धिमान् हनुमान् अपने मन में सोचने लगे कि अब मुझे क्या करना चाहिए। शीघ्र ही कोई उपाय करना मेरा कर्तव्य है। मैं पर्वत के समान होकर अभी इस राक्षस को मार डालूँगा। जब मैं घूँसों से मारकर महाबली कुम्भकर्ण को विदीर्ण कर दूँगा और वानरराज सुग्रीव छूट जायँगे तब वानरों को बड़ा हर्ष होगा। ६८—७५। अथवा वे स्वयं छूट कर चले आवेंगे। देवता, दानव और नाग भी यदि उनको पकड़ लें तो भी वे छूटकर चले आ सकते हैं, फिर अकेला कुम्भकर्ण उनका क्या बिगाड़ सकता है। मेरी समझ में उसके चलाये हुए पर्वत से वे मूर्च्छित हो गये हैं और उनको पता नहीं है कि वे इस समय कहाँ हैं। मुहूर्त्त भर में उनको होश आ जायगा, तब वे अपना और वानरों

का हित जिस तरह समझेंगे सो करेंगे। ७६–७८। यदि महात्मा सुग्रीव को मैं छुड़ाऊँगा तो उनको बड़ा दुःख होगा और उनकी कीर्ति नष्ट हो जायगी। इसलिए थोड़ी देर उनकी प्रतीक्षा करूँ और भागी हुई वानरों की सेना को ढाढ़स बधाऊँ। यह सोचकर पवनकुमार हनुमान् ने भागते हुए वानरों को रोका। उधर कुम्भकर्ण वानरराज सुग्रीव को लेकर लंका को गया। नगर की चहारदीवारी, फाटक और ऊँचे घरों से उसके ऊपर फूलों की वर्षा होने लगी। धान का लावा, चन्दन और सुगन्धित जल छिड़का गया। उसकी शीतलता से महाबली सुग्रीव को बहुत शीघ्र होश आया। जब उन्हें होश आया और देखा कि मैं कुम्भकर्ण की गोद में दबा हूँ, और यह मुझे लंका की चौड़ी सड़क पर लिये जा रहा है, तब वे सोचने लगे कि मुझे क्या करना चाहिए। मैं ऐसा उपाय करूँ जिससे वानरों का हित हो और मेरा काम सिद्ध हो जाय। यह सोचकर उन्होंने बड़ी फुर्ती से लपककर दाँतों से कुम्भकर्ण की नाक और कान काट लिये, और उसकी बगलें नखों से चीर-फार डालीं। कुम्भकर्ण रुधिर से भीग गया। उसने कुपित होकर सुग्रीव को एक झिटका देकर पृथिवी पर पटक दिया और पैरों से रौंदने लगा। दूसरे राक्षस भी उनको मारने लगे, किन्तु सुग्रीव उस मार की कुछ भी परवा न करके बड़े वेग से उछलकर आकाश-मार्ग से रामचन्द्र के पास चले आये। ७६–८८। नाक और कान कट जाने पर रुधिर बहाता हुआ महाबली कुम्भकर्ण झरना झरते हुए पर्वत के समान शोभित हुआ। काजल के ढेर के समान काला, महाकाय, रुधिर का वमन करता हुआ कुम्भकर्ण रुधिर से भीगकर सन्ध्या समय के बादल के समान हो गया। सुग्रीव के चले आने पर वह कुपित होकर फिर युद्ध करने के लिए युद्धभूमि की ओर दौड़ा। उसने यह सोचकर कि हमारे हाथ में कोई शस्त्र नहीं है, एक बड़ा भयानक मुद्गर ले लिया। वह बड़े वेग से लंका से बाहर

निकलकर वानरों की सेना के सामने आया, और जैसे प्रलय के समय अग्नि प्रजा का संहार करती है वैसे ही वानरों का विनाश करने लगा। वह भूखा तो था ही, रुधिर-मांस का लोलुप भी था, वानरों की सेना में घुसकर वानरों, रीछों और पिशाच राक्षसों को भी खाने लगा। उसे अपना-पराया नहीं सूझता था, प्रलय के समय सृष्टि का संहार करनेवाले काल के समान वानरों को भक्षण करने लगा। एक साथ दो-दो, तीन-तीन वानरों और राक्षसों को पकड़-पकड़कर एक ही हाथ से, बड़ी फुर्ती से, मुँह में झोंकने लगा। बहुत-से वानरों को पर्वत के शिखर से मारकर खा लिया। उसके मुँह से रुधिर और चर्बी बहती थी। वानर उसके डर के मारे भागकर रामचन्द्र के पास गये और उनसे कहने लगे--कुम्भकर्ण कुपित होकर वानरों को खाता हुआ दौड़ा आता है। वह सात-आठ, बीस-तीस और सौ-सौ वानरों को एक साथ पकड़कर मुँह में रख लेता है। वह देह भर में रुधिर और चर्बी लगाये, आँतों की माला पहिने, पैने दाँत निकाले, शूल से मारता हुआ, प्रलयकाल के समान भयानक दौड़ा चला आता है। वानरों की यह बात सुनकर शत्रुओं का विनाश करनेवाले लक्ष्मण क्रुद्ध होकर युद्ध करने लगे। ८६—१००। उन्होंने सात बाण मारकर कुम्भकर्ण को पीड़ित कर दिया। उसके बाद और भी बहुत-से बाण मारे। बलवान् लक्ष्मण ने क्रुद्ध होकर कुम्भकर्ण का सुवर्णमय कवच बाणों से ढक दिया, जैसे वायु सन्ध्या के समय आकाश को बादलों से आच्छादित करे। काजल के ढेर के समान काला कुम्भकर्ण सुवर्णभूषित बाणों से आच्छादित होकर बादलों से ढके हुए, किरणों से शोभित, सूर्य के समान हो गया। भयानक राक्षस कुम्भकर्ण लक्ष्मण के बाणों की कुछ भी परवा न करके बादलों के समान गरजकर बोला—हे लक्ष्मण, हम यमराज को भी अनायास युद्ध में परास्त कर सकते हैं। तुमने हमारे साथ युद्ध करके बड़ी वीरता

दिखाई। अस्त्र लिये, युद्धभूमि में काल के समान खड़े हुए, ह
सामने जो खड़ा रह सके वह बड़ी प्रशंसा के योग्य है। फिर जो ह
युद्ध भी कर सके, उसके लिए कहना ही क्या है; क्योंकि ऐरावत
सवार होनेवाले देवराज इन्द्र सब देवताओं को साथ लेकर भी आ
तक कभी युद्ध में हमारे सामने ठहर नहीं सके। हे लक्ष्मण, यद्यपि
बालक हो, तो भी अपने पराक्रम से तुमने हमको सन्तुष्ट कर दि
अब तुम्हारी अनुमति लेकर हम रामचन्द्र से युद्ध करने के लिए जा
चाहते हैं। तुमने अपने उत्साह और बल-पराक्रम से युद्ध में हम
प्रसन्न किया है, इसलिए हम तुमको न मारकर केवल रामचन्द्र को
मारेंगे; क्योंकि अकेले उन्हीं को मार डालने से हमारी विजय
जायगी। यदि रामचन्द्र को मार डालने पर कोई और हमसे यु
करना चाहेगा तो हम उससे भी युद्ध करेंगे। १०१—१११। कुम्भक
के मुँह से अपनी प्रशंसा सुनकर लक्ष्मण ने हँसकर कठोर वचन कहा
तुमने जो इन्द्र आदि देवताओं को असह्य अपना पराक्रम बता
सो ठीक है। उसमें कुछ भी झूठ नहीं है। हे वीर, तुम्हारा परा
हमने भी देख लिया। तुम यदि रामचन्द्र को पूछते हो तो उधर दे
वे पर्वत के समान अटल खड़े हैं। यह सुनकर राक्षस कुम्भकर्ण लक्ष्म
को छोड़कर पृथिवी को कँपाता हुआ बड़े वेग से रामचन्द्र की ओ
दौड़ा। रामचन्द्र ने उसे आते देखकर उसकी छाती में तीक्ष्ण बा
मारे। बाण लगने पर वह और भी कुपित होकर दौड़ा। क्रोध
मारे उसके मुँह से आग की-सी ज्वाला निकलने लगी। वह बड़े
से गरजा और वानरों को डराता हुआ रामचन्द्र की ओर दौड़ा
रामचन्द्र के मोर-पंख के समान फोंकें लगे हुए बाण छाती
लगने से वह ऐसा व्यथित हुआ कि उसके हाथ से गदा और मु
आदि सब शस्त्र पृथिवी पर गिर पड़े। वह अपने हाथ में शस्त्र
देखकर दोनों हाथों से युद्ध करने लगा। बाण लगने से उस



छाती से उसी प्रकार रुधिर बहने लगा जैसे पर्वत से झरने झरते हैं। वह रुधिर से भीगकर बड़ा क्रुद्ध हुआ और वानरों, रीछों तथा राक्षसों को खाता हुआ युद्धभूमि में दौड़ने लगा। महापराक्रमी, काल के समान भयानक, कुम्भकर्ण ने पर्वत का एक शिखर उठाकर रामचन्द्र के ऊपर चलाया। रामचन्द्र ने सीधे चलनेवाले सात बाण मारकर उस शिखर को टुकड़े-टुकड़े करके गिरा दिया। उसके बाद धर्मात्मा रामचन्द्र ने सुवर्णभूषित बाणों से उसका कवच काट डाला। वह चमकता हुआ कवच पर्वत के शिखर के समान गिर पड़ा। उसके गिरने से दो सौ वानर कुचल गये।११२–१२५। उसी समय धर्मात्मा लक्ष्मण ने कुम्भकर्ण के वध का उपाय सोचकर रामचन्द्र से कहा—हे राजन्, यह कुम्भकर्ण रुधिर की गन्ध से मतवाला होकर, अपना पराया भूलकर, वानरों और राक्षसों को खा रहा है। इसलिए वानरों के यूथप और मुख्य-मुख्य वानर इसके ऊपर चढ़ जावें, तब यह दुष्ट भार से पीड़ित होगा और वेग से दौड़-दौड़कर वानरों को खा न सकेगा। राजकुमार लक्ष्मण की यह बात सुनकर महाबली वानर बड़े हर्ष से उसके ऊपर चढ़ गये।१२६–१३०। तब दुष्ट कुम्भकर्ण ने कुपित होकर बड़े वेग से अपनी देह हिलाई, जिससे वे सब पृथिवी पर वैसे ही गिर पड़े, जैसे मतवाला हाथी अपनी पीठ पर बैठे हुए मनुष्यों को गिरा दे। वानरों को गिरते देखकर और कुम्भकर्ण को कुपित जानकर, रामचन्द्र लाल-लाल आँखें करके, आँखों से ही मानों भस्म करते हुए, धनुष लेकर बड़ी फुर्ती से दौड़े। रामचन्द्र को आते देखकर कुम्भकर्ण से पीड़ित वानर बड़े प्रसन्न हुए। रामचन्द्र वानरों को ढाढ़स बँधाकर सुवर्ण से मढ़ा हुआ दृढ़ सर्पाकार धनुष लेकर, बाणों से भरा हुआ तरकस बाँधकर कुम्भकर्ण की ओर झपटे। उनके पीछे महाबली वीर लक्ष्मण और दुर्जय वानर भी चले। रामचन्द्र ने सिर पर मुकुट धारण किये, शत्रुओं का विनाश करनेवाले, क्रोध के मारे लाल-लाल आँखें निकाले,

दिग्गज के समान दौड़ते हुए, बड़े क्रोध से वानरों को ढूँढ़ते हुए, सब ओर राक्षसों से घिरे हुए, विन्ध्याचल और मन्दराचल के समान महाकाय, सोने का बिजायठ बाँधे हुए, मुँह से रुधिर टपकाते हुए, वर्षा-काल में उठे हुए बादलों के समान आते हुए, जीभ से होठ काटते हुए, वानरों को रौंदते हुए, कालान्तक के समान महापराक्रमी कुम्भकर्ण को देखा। १३१—१४०। प्रज्वलित अग्नि के समान तेजस्वी राक्षस कुम्भकर्ण को देखकर पुरुषश्रेष्ठ रामचन्द्र ने अपना धनुष चढ़ाया। धनुष का शब्द सुनकर कुम्भकर्ण बड़ा क्रुद्ध हुआ और उस शब्द का सहन न करके रामचन्द्र की ओर दौड़ा। साँप के समान लम्बी भुजाओंवाले रामचन्द्र ने बरसात के बादल के समान पर्वताकार कुम्भकर्ण को आते हुए देखकर उससे कहा—हे राक्षसश्रेष्ठ! आओ, खेद न करो, हम धनुष लिये खड़े हैं, हमको राक्षसों का काल समझो। तुमको मुहूर्त्त भरमें अचेत कर देंगे। कुम्भकर्ण रामचन्द्र को पहचानकर बड़े जोर से हँसा और वानरों को भगाता हुआ वेग से दौड़ा। डर के मारे वानरों के हृदय विदीर्ण हो गये। वह ठठाकर हँसा और बादलों के समान गरजकर रामचन्द्र से बोला—हमको विराध, कबन्ध, खर, बालि अथवा मारीच न समझो, हम कुम्भकर्ण हैं। हमारा यह लोहमय भयानक मुद्गर देखो, इसी मुद्गर से हमने देवताओं और दानवों को परास्त किया है। कान और नाक कट जाने से हमारा अनादर न करो। नाक-कान कटने से हमें कुछ भी पीड़ा नहीं हुई। हे रामचन्द्र, तुम अपने अस्त्र-शस्त्र चलाकर अपना पराक्रम पहले दिखा दो। तुम्हारा पौरुष देखकर तब हम तुमको खा लेंगे। १४१—१५०। कुम्भकर्ण की यह बातें सुनकर, रामचन्द्र ने वज्र के समान वेग से चलनेवाले पैने नुकीले बाण मारे, किन्तु उन बाणों से कुम्भकर्ण को कुछ भी पीड़ा न हुई। वह अपने स्थान से रत्ती भर न डिगा। जिनके एक बाण से साल के सात वृक्ष कट गये, एक ही बाण से महाबली बालि मार डाला गया, उन्हीं रामचन्द्र के वज्र के समान बाणों

के लगने से कुम्भकर्ण को कुछ भी व्यथा न हुई। उसने उन बाणों को वर्षा की बूँदों के समान सह लिया और गरजकर बड़े वेग से रामचन्द्र के ऊपर भयानक मुद्गर का प्रहार किया। रुधिर से भीगे हुए, देवताओं की सेना को भयभीत करनेवाले, उसी मुद्गर से वानरों की सेना को भी भगा दिया। तब रामचन्द्र ने वायव्य-अस्त्र लेकर कुम्भकर्ण का हाथ और मुद्गर काट डाला। हाथ कटने पर वह बड़े ज़ोर से गरजने लगा। रामचन्द्र के बाण से कटा हुआ उसका हाथ और मुद्गर पर्वत के शिखर के समान वानरों की सेना के ऊपर गिरा, जिससे बहुत-से वानर कुचलकर मर गये। जो वानर मरने से बचे, वे डरकर भाग गये और दूर खड़े होकर रामचन्द्र और कुम्भकर्ण का युद्ध देखने लगे। हाथ कट जाने पर कुम्भकर्ण, जिसका एक शिखर टूटकर गिर पड़ा हो उस पर्वत के समान हो गया और बाएँ हाथ से एक वृक्ष उखाड़कर रामचन्द्र की ओर झपटा। किन्तु रामचन्द्र ने इन्द्र के मन्त्र से अभिमन्त्रित करके सुवर्णभूषित बाण मारकर, वह हाथ भी काटकर वृक्ष के सहित गिरा दिया। कुम्भकर्ण का वह हाथ भी कटकर पर्वत के समान पृथिवी पर गिरा और वानरों, राक्षसों, वृक्षों, पर्वतों और शिलाओं को चूर-चूर कर दिया। १५१–१६०। दोनों हाथ कट जाने पर भी वह राक्षस गरजकर रामचन्द्र की ओर दौड़ा। तब रामचन्द्र ने अर्धचन्द्राकार दो पैने बाण मारकर उसके दोनों पैर भी काट डाले। उसके पैर कटकर इतने ज़ोर से गिरे कि उसके शब्द की प्रतिध्वनि समुद्र, लंका, वानरों और राक्षसों की सेना, पर्वतों, गुहाओं, और सब दिशाओं में फैल गई। जब हाथ-पैर कट गये तब वह घोड़े का-सा मुँह फैलाकर गरजता हुआ उसी प्रकार रामचन्द्र की ओर दौड़ा, जैसे राहु चन्द्रमा की ओर दौड़ता है। रामचन्द्र ने सुवर्ण-पुंख हज़ारों पैने बाण उसके मुँह में भर दिये। जब उसका मुँह भर गया तब वह बोल भी न सका। बड़े कष्ट से कराहता हुआ मूर्च्छित

होकर गिर पड़ा। तब रामचन्द्र ने सूर्य की किरण के समान चमकता हुआ, ब्रह्मदंड और यमदंड के समान भयानक, प्रचंड वायु के समान वेगवान्, इन्द्र के मन्त्र से अभिमन्त्रित करके तीक्ष्ण बाण धनुष पर चढ़ाकर वज्र के समान वेग से कुम्भकर्ण के ऊपर चलाया। अंगार के समान चमकता हुआ वह भयानक बाण अपने तेज से सब दिशाओं को प्रकाशित करता हुआ, बड़े वेग से जाकर बड़े-बड़े दाँत निकले हुए, हिलते हुए कुंडलों से शोभित, पर्वत के शिखर के समान कुम्भकर्ण का सिर उसी प्रकार काट डाला जैसे इन्द्र ने वृत्रासुर का सिर काट डाला था।

कुंडलों से अलंकृत कुम्भकर्ण का भारी सिर दो सूर्यों के बीच में रात्रि के समय चन्द्रमा के समान शोभित हुआ। रामचन्द्र के बाणों से कटे हुए उसके पर्वताकार सिर के गिरने पर लंका की चहारदीवारी, फाटक और फाटक के समीप सेना का शिविर गिर पड़ा। उसका धड़ समुद्र में जा गिरा, और बड़े-बड़े ग्राहों, मछलियों और साँपों को रौंदता हुआ पृथिवी में धँस गया। देवताओं और ब्राह्मणों के शत्रु महापराक्रमी कुम्भकर्ण के मारे जाने पर पृथिवी काँपने लगी, पर्वत डगमगाने लगे और देवता बड़े हर्ष से गरजने लगे। देवर्षि, महर्षि, नाग, देवता, भूत, यक्ष, गन्धर्व, गुह्यक और गरुड़ आदि रामचन्द्र का पराक्रम देखकर बड़े प्रसन्न हुए। कुम्भकर्ण को मरा हुआ देखकर राक्षसराज के भाई-बन्धु रामचन्द्र की ओर देख देखकर बड़े दुःख से रोने लगे। जैसे सिंह को देखकर हाथी दुःखित होते हैं, जैसे राहु के मुख से निकलकर सूर्य आकाश का अन्धकार दूर करके शोभित होते हैं, वैसे ही युद्ध में कुम्भकर्ण को मारकर रामचन्द्र वानरों की सेना में शोभित हुए। महा-पराक्रमी शत्रु के मारे जाने पर हर्ष से वानरों के मुँह फूले हुए कमल के समान प्रसन्न हो गये, और वे रामचन्द्र की प्रशंसा करने लगे। जिस प्रकार वृत्रासुर को मारकर इन्द्र प्रसन्न हुए थे, उसी प्रकार युद्ध में कभी

न हारनेवाले, देवताओं की सेना का विनाश करनेवाले, कुम्भकर्ण को मारकर रामचन्द्र को बड़ा हर्ष हुआ। १६१—१७७।

सर्ग ६८

महात्मा रामचन्द्र के हाथ से कुम्भकर्ण का वध देखकर राक्षसों ने राक्षसराज रावण के पास जाकर यह हाल कहा—राजन्, काल के समान कुम्भकर्ण वानरों को युद्ध से भगाकर, और जो उनके सामने आये उनको खाकर, मुहूर्त भर में शत्रुओं को पीड़ित करके, रामचन्द्र के तेज से शान्त हो गये। पहले उनकी नाक और कान काट लिये गये। वे रुधिर से भीगकर लंका के फाटक पर पर्वत के समान खड़े हो गये। फिर रामचन्द्र ने बाणों से उनके हाथ, पैर और सिर काट डाला। उनका रुंड समुद्र में जा गिरा। जैसे दावानल से वृक्ष जल जाते हैं, वैसे ही आपके भाई कुम्भकर्ण रामचन्द्र के बाणों से पीड़ित होकर मर गये। १—५। युद्ध में महाबली कुम्भकर्ण की मृत्यु सुनकर रावण शोक के मारे मूर्च्छित होकर गिर पड़ा। देवान्तक, नरान्तक, त्रिशिरा और महाकाय अपने चाचा की मृत्यु सुनकर रोने लगे। महोदर और महापार्श्व अपने भाई के विनाश से व्याकुल होकर विलाप करने लगे। थोड़ी देर बाद जब रावण को होश आया, तब वह भी दुःखित होकर विलाप करने लगा—हा वीर, हा शत्रुनाशन, हा महाबली कुम्भकर्ण, तुम मुझे छोड़कर यमलोक को चले गये। ६—१०। तुमने शत्रुओं की सेना को पीड़ित किये बिना अपने भाई-बन्धुओं के शत्रु को मारे बिना मुझे छोड़कर अकेले कहाँ चले गये। मैं कुम्भकर्ण के भरोसे किसी देवता और दानव से भी नहीं डरता था। आज मेरा दाहिना हाथ टूट गया। अब मैं निस्सन्देह मरा। बड़े आश्चर्य की बात है, काल और अग्नि के समान प्रचंड जो वीर देवताओं और दानवों का दर्प नष्ट कर देता था, वह आज युद्ध में रामचन्द्र के हाथ से कैसे

मारा गया! हे कुम्भकर्ण, तुम इन्द्र के वज्र से कभी पीड़ित नहीं होते थे, फिर आज रामचन्द्र के बाण से व्यथित होकर पृथिवी पर कैसे सो गये? देखो, युद्ध में तुम्हारी मृत्यु देखकर देवता और ऋषि आकाश में बड़े हर्ष से गरज रहे हैं। वानर अब अपनी जीत से प्रसन्न होकर लंका के फाटकों और क़िलों पर चढ़ आवेंगे। अब मैं सीता को लेकर क्या करूँगा। राज्य से भी मेरा कुछ प्रयोजन नहीं है। मैं तो कुम्भकर्ण के विना अपना जीवन ही नहीं चाहता। यदि मैंने अपने भाई का विनाश करने वाले राम को न मार डाला तो मेरा जीवन व्यर्थ है। इससे तो मर जाना ही अच्छा। मैं आज ही वहाँ चला जाऊँगा जहाँ मेरा भाई कुम्भकर्ण गया है। मैं अपने भाइयों के विना क्षण-भर भी जीना नहीं चाहता। हे कुम्भकर्ण, जिनके साथ मैंने अपकार किया था वे देवता तुम्हारे मर जाने से अब मुझे हँसेंगे। अब तुम्हारे विना मैं इन्द्र को कैसे जीतूँगा। ११–२०। विभीषण ने जो मेरे हित की बात कही थी, और मैंने अज्ञान से उसका कहना नहीं माना, वह बात मेरे सामने आई। प्रहस्त और कुम्भकर्ण के मर जाने से विभीषण की बातें मुझे लज्जित कर रही हैं। मैंने जो धर्मात्मा विभीषण को यहाँ से निकाल दिया, उसका फल मुझे मिला। कुम्भकर्ण की मृत्यु सुनकर, रावण इस प्रकार शोक से व्याकुल होकर, दीनभाव से विलाप करके पृथिवी पर गिर पड़ा। २१–२४।

सर्ग ६९

शोक से व्याकुल दुरात्मा रावण का इस प्रकार विलाप सुनकर त्रिशिरा ने कहा—राजन्, आपके भाई कुम्भकर्ण ऐसे ही पराक्रमी थे, किन्तु अब तो मारे ही गये, आपको इस प्रकार विलाप करना उचित नहीं है; क्योंकि आपके समान सत्पुरुष इस तरह दुःखित होकर नहीं रोते। आप अपने पराक्रम से तीनों लोकों का विनाश कर

सकते हैं इसलिए साधारण पुरुषों की तरह आपको शोक नहीं करना चाहिए। ब्रह्मा ने आपको शक्ति, कवच, बाण और धनुष दिया है। आपके रथ में एक हज़ार गधे जोते जाते हैं, और जब वह चलता है तो बादलों के गरजने का सा शब्द होता है। आपने विना शस्त्र के ही कई बार देवताओं और दानवों को जीत लिया है, तो क्या अब अस्त्र शस्त्र लेकर भी रामचन्द्र को परास्त नहीं कर सकते ?। १–५। अथवा हे महाराज, आप ठहरिए। मैं जाता हूँ, और जैसे गरुड़ साँपों का संहार कर देते हैं वैसे ही मैं आपके शत्रुओं का विनाश कर आता हूँ। जैसे देवराज इन्द्र ने शम्बर को और विष्णु ने नरकासुर को मारा था वैसे ही आज मैं रामचन्द्र को युद्ध में मार डालूँगा। काल से प्रेरित रावण ने त्रिशिरा की यह बात सुनकर फिर से मानों अपना जन्म समझा। रावण के इन्द्र-तुल्य पराक्रमी वीर पुत्र देवान्तक, नरान्तक और तेजस्वी अतिकाय बड़े हर्ष से गरजकर, युद्ध के लिए मैं जाऊँगा, मैं जाऊँगा, कहने लगे।६–१०। वे सब बड़े मायावी, आकाश में ठहर कर युद्ध करनेवाले, देवताओं का दर्प नष्ट करनेवाले, महापराक्रमी और यशस्वी थे। कभी यह नहीं सुना गया कि वे किसी देवता, गन्धर्व, किन्नर या नाग से युद्ध में हारे हों। वे सब के सब युद्ध में निपुण, अस्त्रों के जानकार, पूरे विज्ञानी और देवताओं से वर पाये हुए थे। सूर्य के समान तेजस्वी, शत्रुओं का विनाश करनेवाले पुत्रों के साथ रावण ऐसा शोभित हुआ जैसे दानवों का दर्प नष्ट करनेवाले देवताओं के साथ इन्द्र की शोभा होती है। रावण ने पुत्रों को गले से लगाकर, आभूषण पहनाकर, बहुत-बहुत आशीर्वाद देकर, युद्ध में जाने की आज्ञा दी। मत्त और युद्धोन्मत्त अपने दो भाइयों को उनकी रक्षा के लिए भेजा। वे सब संसार को रुलानेवाले रावण को प्रणाम और प्रदक्षिणा करके चले। काल से प्रेरित त्रिशिरा, अतिकाय, देवान्तक, नरान्तक, महोदर और महापार्श्व, ये छः महाबली राक्षस धाव

भरनेवाली औषधें और सुगन्ध लगाकर युद्ध के लिए निकले।११-२०। महोदर, ऐरावत के कुल में उत्पन्न, काले बादलों के समान काले सुदर्शन हाथी पर तरकस और सब अस्त्र-शस्त्र रखकर सवार हुआ। जैसे अस्ताचल के शिखर पर सूर्य शोभित होते हैं वैसे ही वह अपने हाथी पर शोभित हुआ। रावण का पुत्र धनुर्धर त्रिशिरा सब अस्त्र-शस्त्र लेकर, अच्छे घोड़े जुते हुए रथ पर वैसा ही शोभित हुआ जैसे उल्का, बिजली और इन्द्र-धनुष से बादल शोभित होता है। उसके तीन सिर थे और तीनों सिरों पर मुकुट धारण किये था, इसलिए सुवर्ण के समान चमकते हुए तीन शिखरों सहित हिमालय पर्वत के समान जान पड़ा। धनुर्धरों में श्रेष्ठ महातेजस्वी अतिकाय तरकस, धनुष, प्रास, खड्ग और परिघ आदि अस्त्र-शस्त्र रखकर उत्तम रथ पर सवार हुआ। वह अपने सिर पर सुवर्णमय चित्र-विचित्र मुकुट और अच्छे-अच्छे आभूषण पहनकर, अपनी प्रभा से प्रकाशित सुमेरु पर्वत के समान शोभित हुआ। जैसे देवताओं के साथ इन्द्र की शोभा होती है वैसे ही महाबली राजकुमार अतिकाय राक्षसों के साथ शोभित हुआ। नरान्तक उल्का के समान चमकता हुआ प्रास लेकर उच्चैःश्रवा के समान श्वेत, सुवर्ण के आभूषण पहने हुए, मन के समान वेग से चलनेवाले घोड़े पर सवार होकर उसी प्रकार शोभित हुआ जैसे महातेजस्वी कार्त्तिकेय शक्ति लेकर मयूर पर सवार होते हैं।२१-३१। देवान्तक सुवर्णभूषित परिघ लेकर, समुद्र मथते समय दोनों हाथों में मन्दराचल पर्वत लिये हुए विष्णु के देह की विडम्बना करता हुआ शोभित हुआ। महातेजस्वी महापार्श्व गदा लेकर, हाथ में गदा लिये हुए युद्ध में कुबेर के समान शोभित हुआ। ये छहों राक्षस बादलों के समान गरजते हुए, हाथी, घोड़ों, और रथों पर सवार होकर, अमरावती से प्रस्थान करते हुए देवताओं के समान लंका से चले। सूर्य के समान तेजस्वी राजकुमार मुकुट धारण करके आकाश में प्रकाशित ग्रहों के समान प्रकाशित हुए।

उनके हाथों में चमकते हुए अस्त्र-शस्त्र, शरद् ऋतु में उड़ती हुई हंसों की पाँति के समान जान पड़े। उन वीरों ने अपने मन में ठान लिया या तो शत्रु को परास्त करेंगे या अपने जीवन से हाथ धोवेंगे। मार्ग में चलते हुए वीर राक्षस बादलों और सिंहों के समान गरजते थे। दूसरे का बाण पकड़ लेते और बोली बोलते थे। मदान्ध राक्षसों के चलने और गरजने से पृथिवी काँपने लगी। उनके सिंहनाद से आकाश गूँज उठा। इस प्रकार महाबली राक्षसों ने बड़े हर्ष से लंका से निकलकर शिला और वृक्ष लिये हुए वानरों को देखा। महात्मा वानरों ने भी हाथी, घोड़े और रथों से सजी हुई, सैकड़ों किंकिणी बजती हुई, बादलों की घटा के समान, अग्नि और सूर्य के समान तेजस्वी राक्षसों की सेना को देखा। राक्षसों को देखकर वानर पर्वत और शिलाएँ लेकर बार-बार गरजने लगे। राक्षस वानरों का गरजना न सह सके और वे भी बड़े भयानक शब्द से गरजे। हाथों में पर्वत लिये हुए वानर राक्षसों की सेना में घुस गये। कोई-कोई वानर आकाशमार्ग से राक्षसों की सेना में कूद पड़े और बहुत-से तो क्रुद्ध होकर सामने से ही घुसे। महापराक्रमी वानरों को बलवान् राक्षस बाण मारकर रोकने लगे। तब वानरों ने बड़े-बड़े वृक्षों और पर्वतों से राक्षसों पर प्रहार किये। राक्षस और वानर सिंह के समान गरजते थे। वानरों ने बड़ी-बड़ी शिलाओं से राक्षसों के कवच और आभूषण तोड़ डाले। रथों और हाथियों पर सवार वीरों को शिलाओं के प्रहार से मार डाला। बहुतेरे राक्षसों को घूँसों से मारकर गिरा दिया। राक्षस घायल होकर काँपने, गिरने और कराहने लगे। उन्होंने भी शूल, मुद्गर, भाला, शक्ति, तलवार और पैने बाणों से वानरों को मारा। अपनी अपनी विजय के लिए दोनों पक्ष के वीर प्रहार करने लगे। वानर और राक्षस इस प्रकार युद्ध करते-करते रुधिर से भीग गये। वानरों के चलाये हुए पर्वतों और राक्षसों के अस्त्र-शस्त्रों से युद्धभूमि

भर गई। रुधिर से डूब गई। पर्वताकार राक्षसों की लाशों से मूँद गई। जब मारते-मारते और फेंकते-फेंकते वृक्ष और पर्वत आदि टूट-फूट गये तब वानर घूँसों और थप्पड़ों से युद्ध करने लगे। वानर राक्षसों को फेंक-फेंककर राक्षसों को, और राक्षस वानरों को फेंक फेंककर वानरों को मारने लगे। राक्षस लोग वानरों के हाथों से शिलाएँ छीनकर वानरों को, और वानर राक्षसों के हाथों से अस्त्र-शस्त्र छीनकर राक्षसों को मारते थे। इस प्रकार वानर और राक्षस अस्त्र-शस्त्रों और वृक्ष-पर्वतों से युद्ध करते हुए सिंह के समान गरजते थे। वानरों की मार से राक्षसों के कवच टूट गये। असंख्य राक्षस मर गये। और बहुतों की देह से इस प्रकार रुधिर बहने लगा जैसे वृक्षों से पानी बहता है। वानरों ने रथों को उठाकर रथों पर दे मारा। हाथियों को हाथियों पर, घोड़ों को घोड़ों पर और राक्षसों को राक्षसों के ऊपर पटक दिया। राक्षसों ने क्षुरप्र, अर्द्धचन्द्र और भल्ल बाणों से वानरों के चलाये हुए पर्वत और वृक्ष काट डाले। टूटे हुए वृक्षों, फूटे हुए पर्वतों तथा मरे हुए वानरों और राक्षसों से युद्धभूमि ऐसी भर गई कि कहीं चलने को मार्ग न रह गया। वानरों ने वृक्षों और शिलाओं से, निडर होकर बड़े गर्व और उत्साह से राक्षसों के साथ युद्ध किया। वानरों को हर्षित और राक्षसों का विनाश देखकर देवता और महर्षि प्रसन्न होकर हँसने लगे। यह देख-कर नरान्तक तीक्ष्ण शूल लेकर, वायु के समान वेग से चलनेवाले घोड़े पर सवार होकर, वानरों की सेना में उसी प्रकार घुस गया जैसे समुद्र में बड़ा मत्स्य कूदता है। उस वीर ने पहुँचते ही तीक्ष्ण भाला से सात सौ वानरों को मार डाला, और क्षण भर में वानरों को तितर-बितर कर दिया। घोड़े पर सवार नरान्तक को वानरों की सेना में अकेले घूमते हुए देखकर महर्षि और विद्याधर बड़े विस्मित हुए। नरान्तक को युद्धभूमि का मार्ग पर्वताकार वानरों से ढका हुआ और मांस-रुधिर से भरा हुआ देख पड़ा। वानर प्रहार भी न कर पाये, किन्तु नरान्तक ने सात

सो वानरों का विनाश कर दिया। जैसे आग वन को जला देती है वैसे ही नरान्तक की मार से बहुत-से वानर मर गये। जब तक वानर वृक्ष और पर्वत उठावें, तब तक वह भाला से मारकर, वज्र के प्रहार से टूटे हुए पर्वत के समान गिरा देता था। बलवान् नरान्तक चमकता हुआ भाला लेकर युद्ध-भूमि में घूमने और वानरों का विनाश करने लगा। जैसे बरसात में वायु के झकोरे व्याकुल कर देते हैं वैसे ही वह वानरों की सेना को पीड़ित करने लगा। वानर डर के मारे न बोल सकते थे, न खड़े रह सकते थे, और न कूद-फाँद सकते थे। जो उछलता था उसे वह ऊपर ही मार डालता था। जो खड़ा रहता था वह खड़े ही खड़े मार डाला जाता था, और जो चलता-फिरता था वह चलते-फिरते ही उसके भाले का शिकार हो जाता था। इस प्रकार महापराक्रमी नरान्तक ने वानरों को पीड़ित कर दिया। सूर्य के समान तेजस्वी, काल के समान भयानक, नरान्तक ने अकेले ही भाले से मारकर बहुत-से वानरों को पृथ्वी पर गिरा दिया। वानर वज्र गिरने के समान उसके भाले का प्रहार न सह सके और व्यथित होकर चिल्लाने लगे। सिर कट जाने पर पर्वताकार वानर वज्र के प्रहार से टूटे हुए शिखर के समान देख पड़े। जिन बलवान् वानरों को कुम्भकर्ण ने घायल किया था, वे स्वस्थ होकर सुग्रीव के पास गये। उसी समय सुग्रीव ने नरान्तक के डर से भागते हुए वानरों को देखा। आगे वानरों की भागती हुई सेना को और पीछे घोड़े पर सवार भाला लिये हुए, नरान्तक को देखकर महातेजस्वी वानरराज सुग्रीव ने इन्द्रतुल्य पराक्रमी अंगद से कहा—यह जो घोड़े पर सवार वीर राक्षस वानरों को खदेड़ता हुआ चला आता है इसे शीघ्र जाकर मार डालो। सुग्रीव की आज्ञा पाकर बलवान् अंगद वानरों की सेना से निकलकर उसी प्रकार आगे बढ़े, जैसे बादलों की घटा से सूर्य निकलते हैं। उस समय सोने का बिजायठ बाँधे हुए अंगद, धातु से शोभित पर्वत के

समान देख पड़े। नखों और दाँतों के सिवा और कोई अस्त्र उनके पास न था। उन्होंने ललकारकर महाबलवान् नरान्तक से कहा—खड़े रहो, इन बेचारे साधारण वानरों को मारकर क्या करोगे। वज्र के समान पुष्ट हमारी छाती में भाला मारो। यह सुनकर नरान्तक बड़ा क्रुद्ध हुआ। दाँतों से होठ चबाकर, साँप की तरह लम्बी साँस छोड़कर अंगद के समीप आया और अंगार के समान चमकता हुआ भाला बड़े ज़ोर से उनकी छाती में मारा। वह भाला वज्र के समान पुष्ट अंगद की छाती में लगने से टूटकर पृथिवी पर गिर पड़ा। जैसे गरुड़ बड़े भारी साँप को काटकर फेंक दें, वैसे ही भाला को टूटकर पृथिवी पर गिरा देखकर अंगद ने नरान्तक के घोड़े के सिर पर एक ऐसा थप्पड़ मारा कि उसका सिर फट गया, आँखें निकल आईं, जीभ निकल आई। और वह पृथिवी पर ऐसा गिरा कि उसके चारों पैर टूट गये। अपने घोड़े के मर जाने पर नरान्तक ने कुपित होकर अंगद के सिर में एक घूँसा मारा, जिससे अंगद का सिर फूट गया, गरम रुधिर बह चला और वे मूर्च्छित हो गये। थोड़ी देर में जब होश आया तब वे बड़े विस्मित हुए। फिर उन्होंने भी पर्वत के शिखर और वज्र के समान घूँसा तानकर नरान्तक की छाती में मारा। अंगद का घूँसा लगने से उसकी छाती फट गई। मुँह से आग की-सी चिनगारियाँ निकलने लगीं, रुधिर से भीग गया, और जैसे वज्र के प्रहार से पर्वत गिर पड़े वैसे ही निर्जीव होकर पृथिवी पर गिर पड़ा। महापराक्रमी नरान्तक के मारे जाने पर आकाश में देवता और युद्धभूमि में वानर गरजने लगे। अंगद का यह कठिन पराक्रम देखकर रामचन्द्र को बड़ा हर्ष और विस्मय हुआ, और युद्ध के लिए अंगद का उत्साह बढ़ गया।

सर्ग ७०

नरान्तक को मरा हुआ देखकर देवान्तक, त्रिशिरा और महोदर

आदि सब राक्षस रोने लगे। उसके बाद महोदर मेघाकार बड़े भारी हाथी पर सवार होकर महापराक्रमी अंगद की ओर दौड़ा। अपने भाई के दुःख से दुःखित महाबली देवान्तक भी भयानक परिघ लेकर अंगद की ओर चला। महावीर त्रिशिरा भी अच्छे घोड़े जुते हुए, सूर्य के समान चमकते हुए, रथ पर सवार होकर अंगद की ओर झपटा। देवताओं का दर्प नष्ट करनेवाले वीर तीन राक्षसों को अपनी ओर आते देखकर अंगद ने एक बड़ा भारी वृक्ष उखाड़कर देवान्तक के ऊपर चलाया, जैसे इन्द्र दानवों पर चमकते हुए वज्र का प्रहार करते हैं। किन्तु त्रिशिरा ने विषैले साँपों के समान पैने बाण मारकर उसे काट डाला। जब वृक्ष कट गया तब अंगद आकाश को उछल गये और वहाँ से वृक्षों और शिलाओं की वर्षा करने लगे। किन्तु त्रिशिरा ने पैने बाणों से और महोदर ने परिघ से उन्हें तोड़-फोड़कर गिरा दिया। उसके बाद त्रिशिरा कुपित होकर अंगद के ऊपर बाण बरसाने लगा। और हाथी पर सवार महोदर ने भी दौड़कर अंगद की छाती में वज्र के समान तोमर के कई प्रहार किये। १–१०। उसी समय देवान्तक ने भी क्रुद्ध होकर एक परिघ उठाकर अंगद के मारा और बड़ी फुर्ती से हट गया। यद्यपि इन तीनों राक्षसों ने एक साथ अंगद पर प्रहार किये, तो भी महातेजस्वी अंगद व्यथित न हुए। उन्होंने बड़े वेग से कूदकर महोदर के हाथी के सिर के ऊपर एक ऐसा थप्पड़ मारा कि उसकी आँखें निकल आईं और वह गिरकर मर गया। फिर महाबली अंगद ने उस हाथी का दाँत उखाड़कर देवान्तक को मारा। देवान्तक के मुँह से लाख के रंग के समान रुधिर बहने लगा, और वह आँधी से कँपाये हुए पेड़ के समान काँपने लगा। फिर महातेजस्वी देवान्तक ने स्वस्थ होकर अंगद के ऊपर एक परिघ चलाया। परिघ लगने से अंगद टिहुनी के बल गिरे और झट उठ खड़े हुए। उनको उठते देखकर त्रिशिरा ने सीधे चलनेवाले तीन बाण उनके माथे में मारा। अंगद

को तीन राक्षसों के साथ युद्ध करते देखकर बलवान् नील और हनुमान् दौड़ आये। नील ने त्रिशिरा के ऊपर पर्वत का एक शिखर चलाया, किन्तु बुद्धिमान् त्रिशिरा ने उसे बाणों से काटकर गिरा दिया। ११–२० उस शिखर के सौ टुकड़े हो गये और वह चिनगारियाँ उड़ाता हुआ गिर पड़ा। उसी समय महाबली देवान्तक परिघ लेकर हनुमान् की ओर दौड़ा। हनुमान् ने उसे आते देखकर उसके सिर पर वज्र के समान एक घूँसा मारा। फिर वीर हनुमान् ने बड़े ज़ोर से गरजकर राक्षसों को भयभीत कर दिया। हनुमान् का घूँसा लगने से राक्षसराज के पुत्र देवान्तक का सिर फूट गया, आँखें, जीभ और दाँत निकल आये, और वह निर्जीव होकर पृथिवी पर गिर पड़ा। देवताओं के शत्रु, महाबली राक्षसों में श्रेष्ठ देवान्तक के मरने पर त्रिशिरा कुपित होकर नील की छाती में तीक्ष्ण बाण मारने लगा। महोदर भी क्रुद्ध होकर, मन्दराचल पर आरूढ़ सूर्य के समान पर्वताकार हाथी पर सवार होकर, उसी प्रकार बाणों की वर्षा करने लगा जैसे बिजली सहित गरजते हुए बादल पर्वत पर पानी बरसाते हैं। महाबली महोदर के बाणों से घायल होकर सेनापति नील मूर्च्छित हो गये, किन्तु बहुत शीघ्र स्वस्थ होकर उन्होंने वृक्षों सहित एक बड़ा भारी पर्वत उखाड़कर बड़े वेग से महोदर के सिर पर दे मारा। २१–३०। उस पर्वत के लगते ही महोदर पृथिवी पर गिर पड़ा, और जैसे वज्र के प्रहार से पर्वत विदीर्ण हो जाता है, वैसे ही वह घायल होकर मर गया। अपने चाचा की मृत्यु देखकर त्रिशिरा धनुष लेकर तीक्ष्ण बाणों से हनुमान् को मारने लगा। उसी समय महावीर हनुमान् ने पर्वत का एक शिखर त्रिशिरा के ऊपर चलाया। किन्तु वीर त्रिशिरा ने पैने बाणों से उसे रत्ती-रत्ती काट डाला। उस शिखर को व्यर्थ हुआ देखकर हनुमान् उसके ऊपर वृक्ष चलाने लगे, किन्तु महाप्रतापी त्रिशिरा पैने बाणों से वृक्षों को काटकर गरजने लगा। तब हनुमान् को बड़ा क्रोध आया, और जैसे सिंह हाथी को नखों से चीर-फाड़ डालता

है, वैसेही उन्होंने त्रिशिरा के घोड़ों को नखों से चीर डाला। यह देख कर त्रिशिरा ने बड़े क्रोध से हनुमान् के ऊपर उसी प्रकार एक शक्ति चलाई जैसे प्रलय के समय यमराज प्रजा का संहार करने के लिए शक्ति चलाते हैं। आकाश से गिरती हुई उल्का के समान उस शक्ति को बड़े वेग से आती हुई देखकर महावीर हनुमान् ने उसे पकड़कर तोड़ डाला। फिर वे बड़े ज़ोरसे गरजे। यह देखकर और वानर भी बड़े हर्षसे बादलोंकी तरह गरजने लगे। तब त्रिशिरा ने हनुमान् की छाती में एक खड्ग मारा। ३१—४०। हनुमान् ने क्रुद्ध होकर उसकी छाती पर एक थप्पड़ जमाया। उस थप्पड़ के लगते ही महातेजस्वी त्रिशिरा मूर्च्छित होकर गिर पड़ा। हनुमान् ने दौड़कर उसके हाथ से तलवार छीन ली और गरजकर सब राक्षसों को भयभीत कर दिया। त्रिशिरा को जब होश आया, तब वह हनुमान् का गरजना न सह सका और उठकर उनको एक घूँसा मारा। घूँसा लगने पर हनुमान् ने कुपित होकर दौड़कर उसके केश पकड़ लिया और पैनी तलवार से कुंडल तथा मुकुट से शोभित उसके तीनों सिर उसी तरह काट डाला जैसे इन्द्र ने विश्वरूप के सिर काटे थे। ४१—४६। उसके तीनों सिर अंगार के समान चमकती हुई आँखों सहित उसी प्रकार पृथिवी पर गिर पड़े, जैसे तीन नक्षत्र आकाश से पृथिवी पर गिरें। इन्द्र-तुल्य पराक्रमी हनुमान् ने देवताओं के शत्रु त्रिशिरा को जब मार डाला, तब वानर बड़े हर्ष से गरजने लगे, पृथिवी काँपने लगी और राक्षस डर के मारे भाग खड़े हुए। त्रिशिरा, महोदर, देवान्तक और नरान्तक की मृत्यु देखकर महापार्श्व को बड़ा क्रोध आया और उसने चमकती हुई लोहे की एक बड़ी भारी गदा उठा ली। ४७—५०। वह गदा सोने से मढ़ी मांस और रुधिर से सराबोर शत्रुओं के रुधिर से तृप्त लाल फूलों की मालाओं से शोभित तथा ऐरावत, महापद्म और सार्वभौम आदि दिग्गजों को भी भयभीत करनेवाली थी। उस गदा को लेकर राक्षस महापार्श्व प्रलयकाल की अग्नि के समान कुपित होकर वानरों

की ओर झपटा। उसे आता हुआ देखकर ऋषभ नाम का वानर युद्ध करने के लिए आगे बढ़ा। पर्वताकार ऋषभ को सामने देखकर महापार्श्व ने उसकी छाती में वज्र के समान गदा मारी। गदा के लगने से ऋषभ की छाती से रुधिर बहने लगा, वह मूर्च्छित होकर काँपता हुआ गिर पड़ा। बड़ी देर के बाद जब उसे होश आया तब वह क्रोध के मारे होंठ काटता हुआ महापार्श्व की ओर देखने लगा। फिर उसने बड़े वेग से दौड़कर महापार्श्व की छाती में एक घूँसा मारा। घूँसा लगने से राक्षस महापार्श्व की छाती से रुधिर बहने लगा और वह कटे हुए वृक्ष के समान पृथिवी पर गिर पड़ा। तब ऋषभ ने यमदंड के समान भयानक उसकी गदा छीन ली और बड़े ज़ोर से सिंहनाद किया। थोड़ी देर तक वह राक्षस मुर्दे की तरह बेहोश पड़ा रहा, उसके बाद जब उसे होश आया, तब उसने ऋषभ के ऊपर प्रहार किया।५१—६०। उस प्रहार से ऋषभ मूर्च्छित होकर गिर पड़े। मुहूर्त भर के बाद स्वस्थ होकर उन्होंने महापार्श्व की जो गदा छीन ली थी, वही गदा उसकी छाती में मारी। गदा के लगने से देवताओं, यक्षों और ब्राह्मणों के शत्रु महापार्श्व की छाती फट गई और जैसे हिमालय पर्वत से पानी की धारा बहती है वैसे ही उसकी छाती से रुधिर बहने लगा। महापार्श्व ऋषभ के हाथ से गदा छीनने के लिए दौड़ा, किन्तु महात्मा ऋषभ ने बड़े ज़ोर से वही गदा उसके सिर पर दे मारी। उसका सिर फट गया, आँखें और दाँत निकल आये, और वज्र के प्रहार से विदीर्ण पर्वत के समान वह पृथिवी पर गिर पड़ा। जब महापार्श्व इस प्रकार निर्जीव होकर पृथिवी पर गिरा तब राक्षसों की सेना भागने लगी। रावण का भाई महापार्श्व युद्ध में मारा गया, यह देखकर समुद्र के समान राक्षसों की सेना अस्त्र-शस्त्र फेंककर, अपने प्राण बचाने के लिए, समुद्र में उठती हुई तरंगों के समान भाग खड़ी हुई।६१—६६।

सर्ग ७१

इन्द्र-तुल्य पराक्रमी अपने भाइयों को तथा महोदर और महापार्श्व को मरा हुआ देखकर और राक्षसों की भयानक सेना को भागती हुई देखकर देवदानव का दर्प नष्ट करनेवाला, ब्रह्मा से वरदान पाया हुआ, पर्वताकार महातेजस्वी, अतिकाय कुपित होकर हज़ार सूर्य के समान चमकते हुए रथ पर सवार होकर वानरों की ओर दौड़ा। उसके कानों में कुंडल और सिर पर मुकुट शोभित थे। उसने पहले अपने धनुष का टंकार किया और फिर अपना नाम पुकारकर गरजने लगा। सिंह के समान गरजकर, अपना नाम सुनाकर और धनुष की डोरी बजाकर, वानरों को भयभीत कर दिया। उसका भारी डील-डौल देखकर वानरों ने समझा कि कुम्भकर्ण फिर उठकर आगया। वे डर के मारे एक दूसरे के पीछे छिपने लगे। तीनों लोकों को नापने के लिए बढ़े हुए भगवान् वामन-का सा बड़ा भारी उसका रूप देखकर, वानर डर के मारे भागकर रामचन्द्र की शरण में गये। रामचन्द्र ने भी रथ पर सवार, धनुष लिये हुए, प्रलयकाल के बादलों के समान गरजते हुए, पर्वताकार अतिकाय को दूर से देखा और वानरों को ढाढ़स बँधाकर बड़े आश्चर्य से विभीषण से पूछा। यह सिंह के समान आँखोंवाला, हज़ार घोड़े जुते हुए बड़े भारी रथ पर सवार, धनुष लिये हुए कौन पर्वताकार राक्षस है? यह तीक्ष्ण शूल, प्रास, और तोमर लिये अपने तेज से प्रकाशित भूतों सहित महादेव के समान जान पड़ता है। ११-१३। रथ पर कालजिह्वा के समान प्रकाशित शक्तियों से यह राक्षस चमकती हुई बिजली सहित बादल के समान जान पड़ता है। सोने से मढ़े हुए धनुष इसके रथ को उसी प्रकार शोभित करते हैं, जैसे इन्द्रधनुष से आकाश की शोभा होती है। सूर्य की किरणों के समान चमकते हुए बाणों से सब दिशाओं को प्रकाशित करता हुआ, रथ की ध्वजा में राहु का चित्र लगाये हुए, तीन जगह से झुका हुआ, सोने से मढ़ा हुआ, बादलों के गरजने के समान

शब्द करता हुआ, इन्द्रधनुष के समान धनुष लिये हुए यह कौन राक्षस सूर्य के समान चमकते हुए रथ पर सवार युद्धभूमि में आ रहा है। १४—१८। जिसके रथ पर ध्वजा और पताका शोभित है, चार सारथि बैठे हैं और जो बादलों के गरजने के समान घरघराता है, जिसके रथ पर अड़तिस तरकस, इतने ही धनुष और सोने के समान चमकती हुई बहुत-सी ज्या रक्खी हैं; जिसकी दोनों बगलों में दस-दस हाथ लम्बी, चार-चार हाथ की मूठवाली, चमकती हुई दो तलवारें रक्खी हैं; जो गले में लाल फूलों की माला पहने है, जिसका मुँह काल के समान भयानक है, जो देखने में बड़े भारी पर्वत के समान और बादलों में छिपे हुए सूर्य के समान है, जिसकी भुजाओं में सोने के बिजायठ शोभित हैं, जो बड़े ऊँचे शिखरवाले हिमालय के समान देख पड़ता है; जिसका मुँह कानों में कुंडल शोभित होने से पुनर्वसु नक्षत्र के बीच में पूर्णचन्द्रमा के समान जान पड़ता है, जिसे देखकर डर के मारे सब वानर भाग गये हैं, हे महाबाहु विभीषण! बताओ यह कौन राक्षस है? १६—२५। महातेजस्वी राजकुमार रामचन्द्र के पूछने पर विभीषण ने उत्तर दिया—यह महापराक्रमी, अस्त्र-शस्त्र जाननेवालों में श्रेष्ठ, अपने पिता के समान बलवान् राक्षस, कुबेर के छोटे भाई महात्मा राक्षसराज रावण का पुत्र है। यह हाथी और घोड़े की सवारी में बड़ा निपुण है। धनुर्विद्या में, तलवार चलाने में, तथा साम, दान, भेद, नीति और मन्त्रण में भी बड़ा चतुर है। इसी के बाहुबल से लंका निर्भय रहती है। रावण का यह धान्यमालिनी नामक स्त्री का पुत्र है और इसका नाम अतिकाय है। २६-३०। इसने ब्रह्मा की तपस्या करके बहुत-से अस्त्र पाये हैं और उन अस्त्रों से शत्रुओं को जीता है। ब्रह्मा ने वरदान दिया है कि इसे देवता और दानव नहीं मार सकते। यह दिव्य कवच और सूर्य के समान प्रकाशित रथ भी ब्रह्मा ने ही दिया है। इसने सैकड़ों देवताओं, दानवों और यक्षों को परास्त करके राक्षसों की रक्षा की है। इसने अपने बाणों

से इन्द्र का वज्र और वरुण का पाश भी रोक दिया है। हे पुरुषश्रेष्ठ! रावण का पुत्र, युद्ध में निपुण, देव-दानव का दर्प नष्ट करनेवाला, बलवान् अतिकाय जब तक बाणों से वानरों की सेना का विनाश न कर दे, उसके पहले ही आप इसके मारने का उपाय कीजिए। ३१-३६। उसी समय बलवान् अतिकाय वानरों की सेना में घुसकर धनुष की डोरी बजाने और गरजने लगा। रथ पर सवार महाभयानक अतिकाय को देखकर कुमुद, द्विविद, मैन्द, नील और शरभ, ये वीर वानर वृक्ष और पर्वत के शिखर लेकर एक साथ उसके ऊपर दौड़े, किन्तु धनुर्धरों में श्रेष्ठ महातेजस्वी अतिकाय ने सुवर्णभूषित बाणों से उनके चलाये हुए वृक्षों और शिखरों को काटकर गिरा दिये। ३७-४०। फिर उसने लोहमय बाणों से कुमुद आदि पाँचों वानरों को पीड़ित कर दिया। उनके सब अंग छिन्न-भिन्न हो गये, वे पराजित होकर अतिकाय से युद्ध न कर सके। उसके बाद और भी जो वानर उसके सामने युद्ध करने आये, उनको उसी प्रकार भयभीत कर दिया, जैसे कुपित सिंह मृगों को दुःखित कर देता है। जिसने उससे युद्ध नहीं किया, उसे उस वीर राक्षस ने नहीं मारा। महावीर अतिकाय ने धनुष-बाण लेकर, बड़े गर्व के साथ रामचन्द्र से कहा—हम रथ पर सवार, धनुष-बाण हाथ में लिये खड़े हैं, किसी साधारण पुरुष से युद्ध नहीं करते, जो युद्धविद्या में निपुण और समर्थ हो, वह हमसे युद्ध करे। ४१-४५। अतिकाय की यह बात सुनकर शत्रुओं का नाश करनेवाले लक्ष्मण को बड़ा क्रोध आया। वे उसकी बातें न सह सके और झट धनुष लेकर टंकार करने लगे। लक्ष्मण के धनुष की डोरी का शब्द पृथिवी, आकाश, समुद्र और सब दिशाओं में फैल गया। राक्षस डर के मारे काँपने लगे। लक्ष्मण के धनुष का वह भयानक शब्द सुनकर रावण के पुत्र महाबली अतिकाय को बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने युद्ध के लिए उद्यत लक्ष्मण को देखकर धनुष पर बाण चढ़ाकर बड़े क्रोध से कहा—हे लक्ष्मण, तुम बालक

हो, युद्ध करने में निपुण भी नहीं हो, इसलिए तुम हमारे सामने से चले जाओ। काल के समान हमसे युद्ध करने की इच्छा न करो। क्योंकि हमारे चलाये हुए बाणों का प्रहार हिमवान् पर्वत, पृथिवी और आकाश भी नहीं सह सकता। तुम सुख से सोते हुए कालाग्नि को न जगाओ। तुम्हारे लिए यही उचित है कि धनुष यहीं रखकर चुपके लौट जाओ, हमसे युद्ध करके अपने प्राण न गँवाओ। अथवा यदि तुमको अपने बल का गर्व हो, हमारी बात न रुचती हो, लौटना न चाहते हो, तो खड़े रहो, अभी प्राण त्यागकर यमलोक को जाओगे। शत्रुओं का दर्प नष्ट करनेवाले, तपाये हुए सोनेसे मढ़े हुए, महादेव के त्रिशूल के समान कराल, हमारे पैने बाणों को देखो। हमारा यह सर्पाकार बाण उसी प्रकार तुम्हारा रुधिर पियेगा, जैसे सिंह हाथी का रुधिर पीता है। यह कहकर अतिकाय ने कुपित होकर धनुष पर बाण चढ़ाया। ४६—५६। गर्व और क्रोध से भरे हुए अतिकाय के यह वचन सुनकर महाबली राजकुमार लक्ष्मण ने कहा—अपने मुँह अपनी प्रशंसा करने से तुम प्रशंसनीय नहीं हो सकते। अपनी प्रशंसा करना वीर पुरुषों का काम नहीं है। हे दुष्ट, हम धनुष-बाण लिये तेरे सामने खड़े हैं, तू अपना बल क्यों नहीं दिखाता? युद्ध करके अपना बल प्रकट कर, बकने से क्या लाभ। बकने से कोई वीर नहीं होता। जो पौरुष दिखाता है, वही वीर है। तुम रथ पर सवार हो, धनुष और सब अस्त्र-शस्त्र तुम्हारे पास हैं। बाणों से अथवा दूसरे अस्त्रों से अपना पराक्रम दिखाओ। तुम्हारा पराक्रम देखकर हम पैने बाणों से उसी प्रकार तुम्हारा सिर धड़ से अलग कर देंगे, जैसे ताल का पका हुआ फल हवा के झोंके से गिर पड़ता है। आज हमारे सुवर्णभूषित बाण तुम्हारा रुधिर पियेंगे। बालक समझकर हमारा निरादर न करो। हम बालक हों या वृद्ध, हमको अपना काल समझो। भगवान् वामन भी तो बालक ही थे, किन्तु उन्होंने तीन पग से तीनों लोक नाप लिये। लक्ष्मण की बातें सुनकर अतिकाय को बड़ा

क्रोध आया, उसने तीक्ष्ण बाण निकाला । ५७–६४ । विद्याधर, भूत, देवता, दानव, महर्षि और गुह्यक वह युद्ध देखने लगे। अतिकाय ने कुपित होकर धनुष पर बाण चढ़ाया, और लक्ष्मण को मानों आकाश को उड़ा देने के लिए उनके ऊपर चलाया । विषधर साँप के समान बाण को अपने सामने आते हुए देखकर शत्रुनाशन लक्ष्मण ने अर्धचन्द्राकार बाण मारकर उसे काट डाला । अपने बाण को कटा हुआ देखकर अतिकाय ने क्रुद्ध होकर पाँच बाण लक्ष्मण पर चलाये। किन्तु लक्ष्मण ने पैने बाणों से उनको काटकर गिरा दिया। फिर लक्ष्मण ने एक तीक्ष्ण बाण धनुष पर चढ़ाकर बड़े वेग से उस राक्षस के माथे में मारा। वह बाण अतिकाय के माथे में घुस गया और जैसे पहाड़ की खोह में घुसे हुए साँप की देह में रुधिर लगा हो, वैसे ही वह बाण देख पड़ा । लक्ष्मण के बाण से पीड़ित होकर अतिकाय उसी प्रकार काँपने लगा जैसे रुद्र के बाण से त्रिपुर का द्वार काँप उठा था। वह महाबली राक्षस लम्बी साँसें छोड़कर चिन्ता करने लगा और कुछ सोचकर लक्ष्मण से बोला—यद्यपि तुम हमारे शत्रु हो, तो भी हम तुम्हारी प्रशंसा करते हैं कि तुम बाण चलाने में बड़े निपुण हो ।६५–७५। यह कहकर रथ पर बैठे हुए महापराक्रमी वीर, अतिकाय ने अपना रथ आगे बढ़ाया और क्रम से एक, दो, तीन, पाँच और सात बाण धनुष पर चढ़ाकर बड़े वेग से मारा। सूर्य के समान चमकते हुए, सुवर्ण की फोंकें लगे हुए, आकाश को प्रकाशित करते हुए, काल के समान उन बाणों को लक्ष्मण ने बड़ी सावधानी से पैने बाणों से काट डाला। उन बाणों के कट जाने पर इन्द्र का शत्रु अतिकाय बड़ा क्रुद्ध हुआ और एक तीक्ष्ण बाण धनुष पर चढ़ाकर लक्ष्मण की छाती में मारा। बाण लगने से लक्ष्मण की छाती से उसी प्रकार रुधिर बहने लगा जैसे मतवाले हाथी के अंगों से मद बहता है। लक्ष्मण ने बड़ी फुर्ती से बाण निकालकर फेंक दिया और एक तीक्ष्ण बाण

लेकर आग्नेय मन्त्र से अभिमन्त्रित करके धनुष पर चढ़ाया। उस बाण के तेज से लक्ष्मण का धनुष भी प्रज्वलित हो गया। ७६–८४। यह देखकर तेजस्वी अतिकाय ने सुवर्णपुंख सर्पाकार बाण निकालकर रौद्र मन्त्र से अभिमन्त्रित किया। लक्ष्मण ने यमराज के कालदंड के समान आग्नेय बाण चलाया और अतिकाय ने सूर्यास्त्र संयोजित करके रौद्र बाण चलाया। वे दोनों बाण आकाश में लड़ते हुए विषधर साँपों के समान टकराकर एक-दूसरे की शक्ति नष्ट करके भस्म होकर गिर पड़े। तब अतिकाय ने क्रुद्ध होकर त्वाष्ट्र मन्त्र से अभिमन्त्रित करके ऐषीक बाण चलाया। लक्ष्मण ने इन्द्र के मन्त्र से अभिमन्त्रित एक बाण मारकर अतिकाय का ऐषीक बाण काट डाला। तब अतिकाय ने यम देवता के मन्त्र से अभिमन्त्रित बाण लक्ष्मण पर चलाया। लक्ष्मण ने वायव्य अस्त्र से उसे भी काट डाला। फिर लक्ष्मण क्रुद्ध होकर अतिकाय के ऊपर उसी प्रकार बाण बरसाने लगे जैसे बादल पानी बरसाते हैं। ८५–९४। किन्तु वे बाण अतिकाय के वज्रभूषित कवच पर लगने से टूटकर गिर पड़े। अपने बाणों को निष्फल देखकर महायशस्वी लक्ष्मण ने एक हजार बाण अतिकाय के ऊपर चलाये। अतिकाय अभेद्य कवच पहने था, इससे वह उन बाणों से कुछ भी व्यथित न हुआ। पुरुषश्रेष्ठ लक्ष्मण जब किसी प्रकार से अतिकाय के अंगों में एक भी घाव न कर सके, तब पवनदेव उनके पास आकर बोले—यह राक्षस अभेद्य कवच पहने है और इसे ब्रह्मा का वरदान भी मिला है, इसलिए तुम ब्रह्मास्त्र से इसे मारो। ब्रह्मास्त्र के सिवा और किसी अस्त्र से यह मर नहीं सकता। जब तक इसके शरीर पर यह कवच रहेगा तब तक दूसरे किसी अस्त्र से इसकी मृत्यु नहीं हो सकती। ९५–९९। पवनदेव की यह बात सुनकर इन्द्र-तुल्य पराक्रमी लक्ष्मण ने एक बड़ा तीक्ष्ण बाण निकाला और उसे ब्राह्म मन्त्र से अभिमन्त्रित किया। लक्ष्मण के ब्रह्मास्त्र सन्धान करने पर सब दिशाएँ, आकाशमंडल और सूर्य-चन्द्रमा

आदि सब ग्रह डर गये, पृथिवी काँपने लगी। लक्ष्मण ने यमदूत के समान फोंक लगे हुए उस बाण को रावण के पुत्र इन्द्र-शत्रु अतिकाय के ऊपर चलाया। अतिकाय ने बड़े वेग से उस चित्र-विचित्र फोंकवाले बाण को आते देखकर बड़ी फुर्ती से तीक्ष्ण बाण मारकर उसे निष्फल करना चाहा, किन्तु वह बाण गरुड़ के समान वेग से अतिकाय की ओर चला और उसके बाण लगने से न रुका। जब काल के समान वह बाण अतिकाय के समीप पहुँच गया तब वह शक्ति, ऋष्टि, परशु, शूल और बाणों से उसे काटने लगा, किन्तु अग्नि के समान प्रज्वलित वह बाण अतिकाय के अस्त्रों को निष्फल करके उसकी गर्दन पर गिरा और उसका सिर धड़ से अलग हो गया। १००–१०६। लक्ष्मण के बाण से कटकर, मुकुट और शिरस्त्राण सहित अतिकाय का सिर हिमालय के शिखर के समान पृथिवी पर गिरा। उसे देखकर बचे हुए राक्षस उदास और दुखित होकर रोते और चिल्लाते हुए भागे। अतिकाय के मारे जाने से युद्ध में थके हुए राक्षस निराश और भयभीत होकर लंका की ओर भाग गये। महापराक्रमी शत्रु के मारे जाने पर वानरों के मुँह फूले हुए कमल के समान प्रसन्न हो गये और वे लक्ष्मण की प्रशंसा करने लगे। १०७–१११।

सर्ग ७२

महात्मा लक्ष्मण ने अतिकाय को मार डाला, यह सुनकर रावण घबराकर कहने लगा—सब शस्त्रों को जाननेवाले, शत्रुओं का प्रभाव न सहनेवाले, शत्रुओं को परास्त करनेवाले महापराक्रमी धूम्राक्ष, अकम्पन, प्रहस्त और कुम्भकर्ण को भी रामचन्द्र ने मार डाला। इनके सिवा और भी महाकाय राक्षस मारे गये। प्रसिद्ध पराक्रमी इन्द्रजित ने वरदान में मिले हुए भयानक बाणों से राम-लक्ष्मण को बाँध लिया था, किन्तु जिस बन्धन से देवता, दानव, यक्ष, गन्धर्व और किन्नर आदि

कोई भी नहीं छूट सकता, उससे भी राम-लक्ष्मण दोनों भाई अपने प्रभाव से, या माया से, अथवा मोहन मन्त्र-यन्त्रादिकों से, न जाने किस उपाय से छूट गये। जितने शूर-वीर राक्षस हमारी आज्ञा से युद्ध करने गये, उन सबको बलवान् वानरों ने मार डाला। अब हम किसी को ऐसा समर्थ नहीं देखते, जो राम-लक्ष्मण, सुग्रीव और विभीषण को वानरों की सेना सहित मार सके। ओह! रामचन्द्र बड़े बलवान् हैं, उनके अस्त्रों में बड़ा प्रभाव है। उनके पराक्रम से राक्षसों का विनाश हो गया। १–१०। अब बड़ी सावधानी से लंका की रक्षा करनी चाहिए। अशोक-वाटिका की भी, जहाँ सीता रहती हैं, देख-भाल रखना बड़ा ज़रूरी काम है। जो कोई लंका से बाहर निकले अथवा बाहर से लंका में आवे उसकी खबर रखनी चाहिए। आने-जाने के मार्गों पर सेना नियुक्त की जाय। रात, दिन, सवेरे और शाम हर वक्त राक्षस सावधानी से वानरों का काम देखते रहें। वानरों की ओर से किसी समय असावधान न रहना चाहिए; वे न जाने किस समय लंका में घुस आवें और उपद्रव मचा दें। वानरों की बलवान् सेना हमारे सिर पर डटी है, वह न जाने किस समय हमारे ऊपर फाट पड़े। ११–१५। राक्षसराज रावण की आज्ञा पाकर राक्षसों ने वैसा ही प्रबन्ध किया। उसके बाद रावण दुःख से पीड़ित होकर दीन भाव से घर को चला गया। वह क्रोध, चिन्ता और पुत्र-शोक से व्यथित होकर लम्बी साँसें छोड़ने लगा। १६–१८।

सर्ग ७३

जो राक्षस युद्ध में मारने से बच गये, उन्होंने बड़ी शीघ्रता से रावण के पास जाकर देवान्तक, त्रिशिरा और अतिकाय आदि के वध का हाल कहा—अपने पुत्रों और भाइयों की मृत्यु सुनकर रावण रोने लगा और शोक के मारे मूर्च्छित हो गया। जब उसे होश आया तो सोचने लगा कि क्या करना चाहिए। रावण को दीनभाव से चिन्ता

करते देखकर उसका पुत्र इन्द्रजित् बोला—महाराज, जबतक इन्द्र को परास्त करनेवाले हम जीवित हैं तब तक आपको मोह और शोक किस बात का है। ऐसा कौन पुरुष समर्थ है जो हमारे बाणों से अपने प्राणों की रक्षा कर सके। आप आज ही हमारे बाणों से घायल, सब अंगों में बाण लगे हुए और सब अंगों से छिन्न-भिन्न, पृथिवी पर निर्जीव पड़े हुए राम-लक्ष्मण को देखेंगे। १—५। जिस इन्द्रजित् का सौभाग्य और पौरुष निश्चित है, उसकी यह प्रतिज्ञा सुनिए—आज हम अमोघ बाणों से राम-लक्ष्मण को तृप्त कर देंगे। जैसे राजा बलि की यज्ञ में भगवान् वामन ने अपना विक्रम दिखाया था वैसे ही इन्द्र, यम, विष्णु, रुद्र, सिद्धगण, अग्नि, चन्द्रमा और सूर्य आदि युद्ध में हमारा पराक्रम देखेंगे। रावण से यह कहकर और उसकी आज्ञा लेकर महातेजस्वी इन्द्रजित् अच्छे गधे जुते हुए, वायु के समान वेग से चलनेवाले, सूर्य के रथ के समान रथ पर सवार होकर बड़े हर्ष से युद्ध-भूमि को चला। महात्मा इन्द्रजित् को युद्ध के लिए जाते देखकर बहुत से महाबली राक्षस धनुष-बाण, प्रास, मुद्गर, तलवार, परशु, और गदा आदि अस्त्र-शस्त्र लेकर हाथी, घोड़े, बाघ, वृश्चिक, बिलार, गधे, ऊँट, साँप, सुअर, कुत्ते, सिंह, सियार, कौवा, हंस, और मोरों पर सवार होकर बड़े हर्ष से उसके साथ हो लिये। ६—१३। शंख और नगाड़े बजने लगे। इस प्रकार देवताओं का शत्रु इन्द्रजित् बड़े वेग से युद्ध के लिए चला। उसके ऊपर श्वेत छत्र लगा था, जिससे वह पूर्ण चन्द्रमा से शोभित आकाश के समान जान पड़ता था। सुवर्णभूषित चँवर भी उसके ऊपर ढुलता था। सूर्य के समान तेजस्वी, धनुर्धरों में श्रेष्ठ, इन्द्रजित् के चलने से लंका ऐसी शोभित हुई जैसे सूर्य से आकाश की शोभा होती है। शत्रुओं का दमन करनेवाला महातेजस्वी इन्द्रजित् युद्धभूमि में पहुँचकर अपने रथ के चारों ओर राक्षसों को नियुक्त करके रथ से उतरकर मन्त्रों से विधिपूर्वक हवन करने लगा। १४—१६। उसने कुशा के

स्थान पर शस्त्र बिछाया, बहेड़ा की लकड़ी का ईंधन बनाया, लाल कपड़े पहने और लोहे का स्रुव लिया। हवि, लाजा, माला और सुगन्धित द्रव्यों की आहुतियाँ देकर एक जीवित काले बकरे का गला पकड़कर एकबारगी अग्नि-कुंड में छोड़ दिया। बड़े वेग से अग्नि की ज्वाला उठी और उससे विजय के चिह्न सूचित हुए। पहले अग्नि की शिखा दाहिनी ओर को उठी, फिर उसका रंग तपाये हुए सोने का-सा हो गया। अग्नि ने स्वयं उठकर आहुति ग्रहण किया। उसके बाद शस्त्र-विद्या में निपुण इन्द्रजित् ने अपने धनुष, रथ और ब्रह्मास्त्र को उसी स्थान पर मन्त्रों से अभिमन्त्रित किया। जब उसने अग्नि में आहुति देकर अपने अस्त्रों को अभिमन्त्रित किया तब सूर्य-चन्द्रमा आदि ग्रहों और नक्षत्र सहित आकाशमंडल डर गया। इन्द्र के समान तेजस्वी इन्द्रजित् इस प्रकार अग्नि में आहुति देकर धनुष, बाण, खड्ग और शूल आदि अस्त्र-शस्त्र लेकर घोड़े और रथ सहित आकाश में अदृश्य हो गया। इधर ध्वजा-पताका से शोभित रथों और घोड़ों सहित राक्षसों की सेना युद्ध करने के लिए गरजती हुई आगे को बढ़ी। राक्षस युद्धभूमि में पहुँचकर चित्र-विचित्र अलंकृत पैने बाण, तोमर और अंकुश आदि से वानरों को मारने लगे। राक्षसों को युद्ध करते देखकर इन्द्रजित् बड़े क्रोध से बोला—तुम लोग वानरों को मार डालने के लिए बड़े उत्साह से युद्ध करो और किसी बात की शंका न करो। २०—३०। यह सुनकर विजय चाहनेवाले राक्षस गरजकर बाणों की वर्षा करने लगे। राक्षसों के साथ इन्द्रजित् भी बाण, गदा और मुसल आदि शस्त्रों से वानरों का विनाश करने लगा। इस प्रकार की मार पड़ने पर वानर भी क्रुद्ध होकर वृक्षों और शिलाओं से इन्द्रजित् के ऊपर प्रहार करने लगे। महातेजस्वी, महाबली इन्द्रजित् और भी क्रुद्ध होकर वानरों का वध करने लगा। उसने एक-एक बाण से पाँच-पाँच, सात-सात और नव-नव वानरों को मार डाला। यह देखकर

राक्षस बड़े प्रसन्न हुए। ३१—३५। वीर इन्द्रजित् ने सूर्य के समान चमकते हुए सुवर्णभूषित बाणों से वानरों को छिन्न-भिन्न कर दिया। जैसे देवासुर-संग्राम में देवताओं की मार से दैत्य पीड़ित हो गये थे वैसे ही इन्द्रजित् के बाणों से वानर पीड़ित होकर पृथिवी पर गिरने लगे। सूर्य के समान तेजस्वी इन्द्रजित् के बाण सूर्य की किरणों के समान थे। वानरों ने क्रुद्ध होकर उसके ऊपर धावा किया। किन्तु उनकी देह से रुधिर बह रहा था, बाण लगने से व्यथित थे, इसलिए उसके सामने न जा सके, इधर-उधर भाग खड़े हुए। फिर कुछ सोचकर, रामचन्द्र के काम के लिए अपने प्राण छोड़ने की इच्छा से फिर लौटे और गरजकर वृक्ष, पर्वत और शिलाएँ इन्द्रजित् के ऊपर फेंकने लगे। महातेजस्वी इन्द्रजित् ने उनके फेंके हुए वृक्षों और शिलाओं को बाणों से काटकर गिरा दिया और जलती हुई आग के समान चमकते हुए, विषधर साँपों के समान तीक्ष्ण बाण बरसाने लगा। ३६—४५। उसने अठारह पैने बाणों से गन्धमादन को, नव बाणों से नल को, सात मर्मभेदी बाणों से महाबली मैन्द को, पाँच बाणों से गज को, दस बाणों से जाम्बवान् को और तीस बाणों से नील को घायल कर दिया। प्रलयकाल की अग्नि के समान कुपित होकर, वरदान पाये हुए तीक्ष्ण बाणों से सुग्रीव, ऋषभ, अंगद और द्विविद आदि प्रधान वानरों को निर्जीव के समान कर दिया। सूर्य के समान चमकते हुए, वेग से चलनेवाले पैने बाणों से वानरों की सेना को मथ डाला। वानरी सेना को बाणों से पीड़ित और रुधिर से भीगी हुई देखकर महातेजस्वी इन्द्रजित् बड़ा प्रसन्न हुआ। ४६-५०। वह तीक्ष्ण शस्त्र बरसाकर, पैने बाण मारकर, सब ओर से वानरों का विनाश करने लगा। अपनी सेना को छोड़कर अदृश्य हो गया और वानरों के ऊपर उसी प्रकार बाण बरसाने लगा, जैसे काले बादल पानी बरसाते हैं। इन्द्रजित् के बाणों से घायल होकर पर्वत के समान बड़े-बड़े वानर चिल्लाने लगे

और मोहित होकर पृथिवी पर उसी प्रकार गिर पड़े जैसे इन्द्र का वज्र लगने से पर्वत गिरे थे। वानरों को केवल पैने बाणों की वर्षा देख पड़ती थी, माया से अदृश्य इन्द्रजित् को कोई नहीं देखता था। महा-पराक्रमी इन्द्रजित् ने सूर्य के समान चमकते हुए पैने बाणों से वीर वानरों को घायल कर दिया और सब दिशाओं को भर दिया।५१-५५। उसके बाद वह अंगार के समान चमकते हुए शूल, तलवार और परशु आदि अस्त्र शस्त्र वानरों की सेना पर बरसाने लगा। इन्द्रजित् के बाणों से घायल और रुधिर से भीगे हुए वानर फूले हुए ढाक के पेड़ के समान हो गये। जिन वानरों ने यह सोचकर कि देखें बाण कहाँ से आते हैं, ऊपर की ओर देखा, उनकी आँखों में बाण लगे और वे चुप-चाप एक-दूसरे को लिपटकर पृथिवी पर लेट गये। राक्षसश्रेष्ठ इन्द्रजित ने मन्त्रों से अभिमन्त्रित प्रास, शूल और पैने बाणों से हनुमान, सुग्रीव, अंगद, गंधमादन, जाम्बवान्, सुषेण, मैन्द, द्विविद, नील, गवाक्ष, गवय, केसरी, हरिलोमा, विद्युद्दंष्ट्र, सूर्यानन, ज्योतिर्मुख, दधिमुख, पावकाक्ष, नल और कुमुद आदि वानरों को घायल कर दिया। गदा और पैने बाणों से और भी मुख्य-मुख्य वानरों को घायल करके सूर्य की किरणों के समान चमकते हुए बाण राम-लक्ष्मण के ऊपर बरसाने लगा।५६-६२। पानी की धारा के समान बाण गिरते देख-कर, उनकी कुछ परवा न करके रामचन्द्र ने लक्ष्मण से कहा—हे लक्ष्मण, इन्द्र का शत्रु यह राक्षस ब्रह्मास्त्र लेकर फिर आया है और वानरों की सेना को व्याकुल करके हम लोगों के ऊपर बाण बरसाने लगा है। इसे ब्रह्मा का वरदान मिला है, इसलिए यह महाकाय होने पर भी हम लोगों को देख नहीं पड़ता। यह अस्त्र-शस्त्र लेकर हम लोगों को मारने के लिए आया है, किन्तु यह देख नहीं पड़ता इस-लिए कैसे परास्त किया जा सकता है। भगवान् ब्रह्मा सृष्टि की उत्पत्ति के कारण हैं। उनका सम्मान करना हमारा कर्तव्य है, इस-

लिए तुम भी हमारे साथ सावधानी से इन अस्त्रों का सहन करो। यह राक्षस बाणों की वर्षा से सब दिशाओं को ढके देता है। बड़े-बड़े वीर वानर घायल होकर गिर पड़े हैं और अब वानरों की सेना पहले की तरह शोभित नहीं होती। जब हम और तुम इसके बाण सह लेंगे और यह देखेगा कि हम लोग हर्ष और क्रोध छोड़कर अचेत पृथिवी पर पड़े हैं तब यह अपनी विजय समझकर लंका को लौट जायगा। यह सोचकर राम-लक्ष्मण दोनों भाई इन्द्रजित् के बाणों से मूर्च्छित होकर गिर पड़े, और इन्द्रजित् दोनों भाइयों को पीड़ित करके बड़े हर्ष से गरजने लगा। इस प्रकार इन्द्रजित् राम-लक्ष्मण और वानरों की सेना को परास्त करके लंका को चला गया। उसकी विजय देखकर राक्षस प्रशंसा करने लगे और यह सब हाल कहने के लिए वह रावण के पास गया। ६४-७२।

सर्ग ७४

जब दोनों भाई राम-लक्ष्मण भी इन्द्रजित् के बाणों से पीड़ित होकर गिर पड़े, तब वानरों की सेना निराश हो गई। सुग्रीव, नील, अंगद और जाम्बवान् आदि वीर वानर कुछ भी न कर सके। वानरों को दुःखित देखकर बुद्धिमान् विभीषण मधुर वचनों से उनको समझाने लगे—देखो, राम-लक्ष्मण को पीड़ित देखकर तुम लोग कुछ भी आशंका न करो, क्योंकि वे ब्रह्मा के वचन का सम्मान करने के लिए अपनी इच्छा से इन्द्रजित् के अस्त्रों से पीड़ित हुए हैं। भगवान् ब्रह्मा ने निष्फल न होनेवाला ब्रह्मास्त्र इन्द्रजित् को दिया था। उसे निष्फल करना उचित न समझकर राजकुमार राम-लक्ष्मण ने अपनी इच्छा से सह लिया है, इसलिए विषाद करने का समय नहीं है। विभीषण की बातें सुनकर हनुमान् थोड़ी देर बाद होश आने पर उनसे बोले—विभीषण, वानरों की सेना में जो अभी जीवित हों, चलो हम और तुम उनको समझा-बुझाकर ढाढस बँधावें। उसके बाद अँधेरी

रात में विभीषण और हनुमान् मसाल लेकर युद्धभूमि में घूमने लगे। उन्होंने देखा कि वानरों के हाथ, पैर, पूँछ, जाँघ, अँगुली और सिर कट गये हैं। उनकी देह से उसी प्रकार रुधिर बह रहा है, जैसे पर्वतों से झरने झरते हैं। पर्वतों के समान वानरों के गिरने से युद्धभूमि भर गई है। सुग्रीव, अंगद, नील, शरभ, गन्धमादन, जाम्बवान्, सुषेण, मैन्द, नल, ज्योतिर्मुख और द्विविद युद्धभूमि में अचेत पड़े हैं। १-११। इन्द्रजित् ने दिन के पाँचवें भाग में सन्ध्या के समय सरसठ करोड़ वानरों को मार डाला। समुद्र के समान भयानक वानरों की सेना को बाणों से पीड़ित देखकर हनुमान् और विभीषण, जाम्बवान् को ढूँढ़ने लगे। जाम्बवान् बूढ़े तो थे ही, सैकड़ों बाण लगने से, बुझी हुई आग के समान शिथिल हो गये थे। उनको देखकर विभीषण ने कहा—आर्य, तीक्ष्ण बाणों से पीड़ित होकर तुम्हारे प्राण तो नहीं निकल गये? विभीषण के यह पूछने पर जाम्बवान् बड़े कष्ट से बोले—हे राक्षसराज, हमने तुम्हारी आवाज़ से तुमको पहचाना, किन्तु सब अंगों में बाण लगने के कारण आँखों से तुमको नहीं देखते। अब यह बताओ कि अंजना के पुत्र पवनकुमार महावीर हनुमान् जीवित हैं या नहीं? १२-१८। जाम्बवान् की यह बात सुनकर विभीषण ने कहा—तुम राम-लक्ष्मण की कुशल न पूछकर पहले हनुमान् को ही क्यों पूछते हो? तुमने हनुमान् के लिए जितना स्नेह प्रकट किया, उतना सुग्रीव, अंगद और रामचन्द्र के लिए नहीं किया, इसका क्या कारण है? जाम्बवान् ने उत्तर दिया—हे राक्षसराज, जिस लिए हनुमान् को हम पूछते हैं, सो सुनो। हनुमान् के जीवित रहने पर मरी हुई सेना को जीवित समझो और हनुमान् के मरने पर हम लोग जीवित रहने पर भी मरे के समान हैं। पवन के समान पराक्रमी, अग्नि के समान तेजस्वी, हनुमान् यदि जीवित होंगे तो हम लोगों के जीने की आशा है। १९-२३। यह सुनकर हनुमान् ने जाम्बवान् को प्रणाम किया और उनके पैर छूकर

बड़ी नम्रता से कहा—आपकी कृपा से मैं जीवित हूँ। हनुमान् की यह बात सुनकर व्यथित जाम्बवान् ने फिर से अपना जन्म समझा और हनुमान् से कहा—हे वानर-वीर, वानरों की रक्षा तुम्हीं कर सकते हो, तुम्हारे सिवा और किसी को हम इसके योग्य नहीं समझते। किसी में इतना पराक्रम भी नहीं है, जो वानरों की रक्षा कर सके। अब तुम्हारे पराक्रम का समय आ गया है। रीछों और वानरों की सेना को प्रसन्न करो और बाणों से पीड़ित राम-लक्ष्मण को इस दुःख से छुड़ाओ। हे पवनकुमार, समुद्र के उस पार बहुत दूर हिमवान् पर्वत पर जाओ, वहाँ बहुत ऊँचा सुवर्णमय ऋषभ नाम का शिखर देखोगे। उसी के समीप कैलास शिखर है। उन दोनों के बीच में ओषधि-शिखर देख पड़ेगा। उस पर सब प्रकार की ओषधियाँ हैं और वह अपने तेज से प्रकाशित हो रहा है। २४—३१। हे वीर, उस शिखर पर सब दिशाओं को प्रकाशित करती हुई मृतसंजीवनी, विशल्यकर्णी, सुवर्णकर्णी और सन्धानी ये चार ओषधियाँ देखोगे। हे पवनकुमार, हिमवान् पर्वत पर जाकर उन ओषधियों को ले आओ और वानरों को जीवित करके प्रसन्न करो। जैसे वायु के वेग से समुद्र में लहरें उठती हैं, वैसे ही जाम्बवान् की बातें सुनकर हनुमान् की देह में बल उमड़ पड़ा। ३२—३५। वीर हनुमान् कूदकर पर्वत के ऊपर चढ़ गये और दूसरे पर्वत के समान देख पड़ने लगे। जिस पर्वत पर वह चढ़ गये थे, वह अपने को सम्हाल न सका और पीड़ित होकर पृथिवी में धँस गया। उसके शिखर और वृक्ष टूटकर गिर पड़े। लंका नगरी भी उसी पर्वत पर बसी थी, इसलिए उसके फाटक, चहारदीवारी और बहुत-से घर गिर पड़े। रात का समय था, लंका डर के मारे नाचने-सी लगी। ३६—४०। पर्वताकार हनुमान् ने उस पर्वत के साथ पृथिवी और समुद्र को भी कँपा दिया। फिर उन्होंने बड़े जोर से गरजकर राक्षसों को भयभीत कर दिया। हनुमान् का गरजना सुनकर राक्षस

डर के मारे सिमिट रहे। उसके बाद महापराक्रमी हनुमान् रामचन्द्र को प्रणाम करके, उनके काम के लिए, साँप के समान पूँछ ऊपर को उठाकर, पीठ झुकाकर, कान सिकोड़कर, घोड़े का-सा मुँह फैलाकर बड़े वेग से आकाश को उछले। ४१—४५। उनके प्रचंड वेग से पर्वत के शिखर और वृक्ष टूटकर समुद्र में गिर पड़े। उन पर रहनेवाले साधारण वानर भी उन्हीं के साथ जा गिरे। गरुड़ के समान वेगवान् हनुमान् साँप के समान लम्बी भुजाएँ फैलाकर, समुद्र की लहरों में टकराते हुए, जलचरों को देखते-देखते, हिमालय पर्वत की ओर विष्णु के हाथ से छूटे हुए चक्र के समान वेग से चले। ४६—४८। पवन के समान वेग से चलते हुए हनुमान् ऊपर से पर्वत, वृक्ष, तालाब, नदियाँ, अच्छे-अच्छे नगर और मनुष्यों को देखते जाते थे। वे आकाश-मार्ग से अनायास चले। वेग से चलने का शब्द सब दिशाओं में फैल गया। उन्होंने जाम्बवान् की बातों का स्मरण करते हुए बड़ी शीघ्रता से चलकर हिमवान् पर्वत को देखा। उस पर्वत पर बहुत-से झरने थे, कन्दराएँ थीं, सफ़ेद बादलों के समान सुन्दर शिखरों और अनेक प्रकार के वृक्षों से वह शोभित था। हनुमान् ने सुवर्णमय शिखरों से शोभित बड़े ऊँचे हिमवान् पर्वत पर जाकर देवर्षियों के पवित्र आश्रम देखे। ब्रह्मकोष, रजतालय, शक्रालय, रुद्रशरप्रमोक्ष (जहाँ शिवजी ने त्रिपुर को मारने के लिए बाण छोड़ा था), हयग्रीव-स्थान और ब्रह्मशिर स्थान भी देखा। अग्नि का स्थान, कुबेर का स्थान, सूर्य के समान प्रकाशित सूर्यनिबन्धन स्थान, ब्रह्मालय, शिव का धनुष और पृथिवी का मध्यभाग भी देखा। उसके बाद हिमवान् का सबसे ऊँचा कैलास शिखर देखा और उसी पर बैठे हुए नन्दीश्वर को भी देखा। कैलास के पास ही अनेक प्रकार की ओषधियों से प्रकाशमान सर्वोषधि नाम का शिखर भी देखा। ४९—५७। आग के ढेर के समान चमकते हुए उस पर्वत को देखकर हनुमान् को बड़ा आश्चर्य हुआ। वे कूदकर उस शिखर

पर चढ़ गये और जाम्बवान् की बताई हुई ओषधियाँ ढूँढ़ने लगे। पवनकुमार हनुमान् लंका से चार हज़ार कोस लम्बी यात्रा करके जिस पर्वत पर दिव्य ओषधियाँ थीं, उस सर्वौषधि नाम पर्वत पर पहुँच गये। किन्तु उस पर्वत पर की ओषधियाँ यह समझकर कि हमें कोई ढूँढ़ने आया है, अदृश्य हो गईं। जब महात्मा हनुमान् ने ओषधियों को न देखा तब वे कुपित होकर गरजे, और आग के समान लाल-लाल आँखें करके उस पर्वत से बोले—तुमने जो रामचन्द्र के ऊपर दया न करने का निश्चय कर लिया है, इसका फल पाओगे। हम अपने बाहुबल से तुमको उखाड़ लेंगे। यह कहकर उन्होंने शिखर, हाथी, साँप, शिलाओं और सुवर्णमय धातुओं के सहित उस पर्वत को बड़े वेग से हिलाया। फिर उसे उखाड़कर आकाशमार्ग से चल दिये। गरुड़ के समान वेगवान् हनुमान् को पर्वत लेकर आकाशमार्ग से जाते देखकर देवता, दानव और सब लोक डर गये। आकाश में चलनेवाले सब प्राणी उनकी स्तुति करने लगे। सूर्य के समान तेजस्वी हनुमान्, सूर्य के समान चमकते हुए शिखर को लेकर, सूर्य के मार्ग में, सूर्य के समीप पहुँचकर, दूसरे सूर्य के समान शोभित हुए। ५८–६५। उस पर्वत को लिये हुए पर्वताकार हनुमान्, अग्नि के समान तेजस्वी, सहस्रधार चक्र धारण किये हुए विष्णु के समान जान पड़े। पर्वत लेकर हनुमान् जब लंका में पहुँचे तब उनको देखकर सब वानर गरजने लगे। वानरों को देखकर हनुमान् भी बड़े हर्ष से गरजे। वानरों का गरजना सुनकर राक्षस भी भयानक शब्द करने लगे। उसके बाद महात्मा हनुमान् पर्वत पर ठहरी हुई वानरों की सेना में पर्वत लिये हुए उतरे। उन्होंने प्रधान वानरों को प्रणाम किया और विभीषण ने उनको हृदय से लगा लिया। बस, जैसे ही वह पर्वत वहाँ आया, उन ओषधियों की गन्ध से राजकुमार राम-लक्ष्मण की व्यथा जाती रही। इन्द्रजित के बाणों से जितने वानर घायल होकर मुर्दे की तरह पड़े थे, वे उन

ओषधियों की गन्ध से पीड़ा-रहित हो गये और ऐसे उठ बैठे, मानों रात में सोये थे अब प्रातःकाल जाग पड़े हैं। लंका में जब से युद्ध आरम्भ हुआ तब से जितने राक्षस युद्ध में मारे गये, उनकी लाशें रावण की आज्ञा से समुद्र में इसलिए फेंक दी जाती थीं जिसमें जान पड़े कि राक्षस मारे ही नहीं गये। जब सब वानर जी गये तब हनुमान् उस शिखर को जहाँ से लाये थे, वहीं रख आये। ६६—७३।

सर्ग ७५

महातेजस्वी वानरराज सुग्रीव रामचन्द्र और लक्ष्मण से अनुमति लेकर हनुमान् से बोले—हे पवनकुमार, रावण के कई पुत्र और कुम्भकर्ण युद्ध में मारे गये हैं। अब ऐसा उपाय किया जाय जिसमें रावण युद्ध के लिए न निकल सके। जितने बलवान् फुर्तीले वानर हैं, वे सब मसाल लेकर बहुत शीघ्र लंका में फाँद पड़ें। सुग्रीव की आज्ञानुसार सन्ध्या होते ही बलवान् वानर मसाल लेकर लंका की ओर दौड़े। जलती हुई मसाल हाथों में लिये सब ओर से वानरों को आते देखकर नगर की रक्षा करनेवाले राक्षस भाग खड़े हुए। १—५। वानरों ने लंका में घुसकर ऊँचे मकानों में, नगर के द्वारों और छतों में आग लगा दी। हज़ारों घर जल गये। पर्वत के समान ऊँचे घर गिर पड़े। लंका में ठौर-ठौर अगर, चन्दन, मोती, मणि और मूँगा आदि तथा सूती, रेशमी और अनेक प्रकार के वस्त्र जल गये। सोने-चाँदी के बर्तन, अस्त्र-शस्त्र, हाथी-घोड़ों के अलंकार, योद्धाओं के कवच, हाथी घोड़ों के कवच, धनुष, धनुष की डोरी, बाण, तलवार, तोमर, अंकुश, बहुत अच्छे ऊन के बने हुए कम्बल, बाघ के चमड़े के बिछौने, कस्तूरी, मोती, मणि और स्वस्तिवाचन आदि पढ़ने के स्थान तथा गृहस्थ राक्षसों के घर और अनेक उत्तम स्थान जल गये। चित्र-विचित्र कवच, माला, आभूषण और वस्त्र पहने, मदिरा के नशे में लाल-

लाल आँखें किये, स्त्रियों के साथ विहार करते हुए, शत्रुओं के ऊपर अत्यन्त कुपित, हाथों में गदा, शूल, तलवार लिये हुए, खाते-पीते हुए, अपने घरों में बहुमूल्य शय्या पर स्त्रियों के साथ सोते हुए, डर के मारे पुत्रों को लेकर इधर-उधर भागते हुए, हज़ारों लाखों राक्षस भस्म हो गये। अग्नि प्रचंड रूप धारण करके बढ़ती गई। सोने और चाँदी के बने हुए, चित्र-विचित्र रत्नों की बनी हुई खिड़कियों से शोभित, मणियों और मूँगों से बने हुए चित्रों से चित्रित; क्रौंच, मयूर, बीणा और स्त्रियों के आभूषणों के शब्द से शब्दायमान पर्वतों के समान ऊँचे घर जलकर ढेर हो गये। आग में जलते हुए लंका के फाटक बिजली चमकते हुए बादलों के समान देख पड़े, और लंका के घर जलते हुए पर्वत के शिखर के समान शोभित हुए। ६--२२। विमानाकार घरों में सोती हुई सुन्दरी स्त्रियाँ जलने लगीं। वे अपनी देह से वस्त्र-आभूषण फेंकने और हाहाकार मचाने लगीं। लंका के घर आग में जलकर इन्द्र के वज्र से विध्वंस किये हुए पर्वतों के शिखरों के समान गिरने लगे। जलते हुए घर हिमालय के शिखरों के समान दूर से प्रकाशित होते थे। रात के समय आग की ज्वाला से लंका नगरी फूले हुए ढाक के वृक्षों के समान शोभित हुई। २३--२६। हाथी और घोड़े खोल दिये गये। वे आग के डर से इधर-उधर भागने लगे। जैसे प्रलय के समय समुद्र के जीव-जन्तु घबराकर उछलने लगते हैं, वही दशा उस समय उनकी भी हुई। कहीं घोड़े को आता हुआ देखकर हाथी डर जाता था और कहीं डरे हुए हाथी को देखकर घोड़ा लौट पड़ता था। जब लंका जलने लगी और आग की भयानक ज्वाला उठी तो उसके प्रकाश से खारा समुद्र लाल समुद्र के समान देख पड़ा। मुहूर्त भर में वानरों ने लंका को ऐसा जलाया कि वह प्रलयकाल में जली हुई सम्पूर्ण पृथिवी के समान भस्म हो गई। धुआँ से व्याकुल और आग में जलती हुई लंका की स्त्रियों का रोना चार सौ कोस

तक सुन पड़ा। राक्षस आग के डर से भागे और अधजले होकर लंका के बाहर निकले; उनको वानर कूद-कूदकर मारने लगे। उस समय वानरों के गरजने का शब्द तथा राक्षसों और राक्षसियों के रोने का शब्द पृथिवी, समुद्र और सब दिशाओं में फैल गया।३७-३३। उसी समय राम-लक्ष्मण ने भी स्वस्थ होकर अपना धनुष उठाया। उनके धनुष की टंकार का भयानक शब्द सुनकर राक्षसों का डर और भी बढ़ गया। उस समय धनुष की डोरी बजाते हुए रामचन्द्र प्रलय के समय धनुष धारण किये हुए कुपित महादेव के समान शोभित हुए। रामचन्द्र के धनुष का शब्द, वानरों के गरजने और राक्षसों के रोने के शब्द से मिलकर और भी भयानक हुआ। रामचन्द्र के बाणों से लंका की चहारदीवारी और फाटक कैलास-शिखर के समान पृथिवी पर गिरने लगे। घरों पर रामचन्द्र के बाण गिरते देखकर राक्षस युद्ध करने के लिए तैयार हुए। ३४-४०। राक्षसों के गरजने से वह रात प्रलयकाल की रात के समान भयानक हो गई। इधर महात्मा सुग्रीव ने वानरों को आज्ञा दी कि तुम लोग अपने समीप के फाटक पर जाकर युद्ध करो। जो हमारी आज्ञा न मानेगा उसे प्राण-दंड दिया जायगा। सुग्रीव की आज्ञा पाते ही हाथों में मसाल लिये हुए वानर लंका के फाटक घेरकर खड़े हो गये। वानरों को द्वार पर खड़े देखकर रावण को बड़ा क्रोध आया। ४१-४४। उसने इतने ज़ोर से जम्हाई ली कि उसका शब्द सब दिशाओं में फैल गया। उस समय वह क्रोध के मारे रुद्र के समान भयानक हो गया। उसने कुम्भकर्ण के पुत्र कुम्भ-निकुम्भ को राक्षसों के साथ युद्ध करने के लिए भेजा। रावण की आज्ञा से कुम्भ-निकुम्भ के साथ यूपाक्ष, शोणिताक्ष, प्रजंघ और कम्पन चले। रावण ने उन बलवान् राक्षसों को आज्ञा दी कि तुम लोग यहाँ से गरजते हुए जाओ। रावण की आज्ञानुसार राक्षसों की सेना चमकते हुए अस्त्र-शस्त्र लेकर सिंहनाद करती हुई चली। उस

समय राक्षसों के आभूषणों की चमक, मसालों की रोशनी, चन्द्रमा के प्रकाश, नक्षत्रों के तेज और लंका के जलने से आकाश प्रकाशित हो गया। जलने का प्रकाश, समुद्र के पानी पर पड़ता था, और उसमें जो लहरें उठती थीं उनकी बहुत ही शोभा होती थी।४५—५३।
वानरों ने देखा कि राक्षसों की सेना ध्वज, पताका, रथ, हाथी, और घोड़ों से शोभित है। बड़े बलवान् भयानक राक्षस हाथों में तलवार, परशु, शूल, गदा, प्रास, तोमर, और धनुष लिये हैं, दोनों भुजाओं में सोने के गहने पहने हैं, परशु घुमा रहे हैं। उनके सब अंगों में सूर्य के समान चमकते हुए आभूषण शोभित हैं। मदिरा के नशे में उनकी आँखें लाल हो गई हैं। उनके अंगों में लगी हुई मदिरा और मालाओं की सुगन्ध से वायु सुगन्धित हो गई है। बड़े बलवान् राक्षस उस सेना के साथ हैं और बादलों की तरह गरज रहे हैं। राक्षसों की सेना को देखकर वानर गरजकर आगे बढ़े। जैसे पतंगे दौड़कर जलती हुई आग में कूद पड़ते हैं वैसे ही बलवान् राक्षस बड़े वेग से दौड़कर वानरों की सेना में घुस पड़े। वज्र के समान परिघ घुमाते हुए वीर राक्षस उस समय बहुत शोभित हुए। वानर युद्ध करने के लिए वृक्ष और पर्वत लेकर, घूँसा तानकर, उन्मत्त की तरह राक्षसों को मारने लगे।५४—६१।
महापराक्रमी राक्षस भी पैने बाणों से वानरों के सिर काटने लगे। वानरों ने दाँतों से राक्षसों के कान काट लिये। बहुतों को घूँसों और शिलाओं से चूर कर दिया। भयानक राक्षसों ने भी प्रधान वानरों को बाणों से घायल कर दिया। जैसे ही किसी ने किसी के ऊपर प्रहार करने का इरादा किया तो उसने पहले ही उसका सिर काट डाला। किसी ने किसी को गिराने का इरादा किया तो उसने झपटकर पहले ही उसे गिरा दिया। किसी ने किसी की निन्दा की तो उसने उसी दम बदला ले लिया। किसी ने युद्ध के लिए ललकारा तो वह आगे बढ़कर युद्ध करने लगा। उसके साथ ही और लोग भी गरजकर बोल उठे कि

आओ हम तुमसे युद्ध करते हैं। एक दूसरे से कहते थे कि तुम इनसे युद्ध करने का कष्ट क्यों उठाते हो? ठहरो, हमसे युद्ध करो। वानरों ने प्रास, शूल, और तलवार आदि अस्त्र-शस्त्र लिये हुए राक्षसों से भयानक युद्ध किया। राक्षसों के वस्त्र खिसक गये और कवच कट गये। वानरों ने सात-सात और दस-दस राक्षसों को तथा राक्षसों ने सात-सात और दस-दस वानरों को एक साथ मार डाला। ध्वजा और कवच कट जाने पर तथा वस्त्रों के छूट जाने पर भी राक्षसों ने बड़ी वीरता से युद्ध किया और वानरों ने बड़े उत्साह से उनको रोका। ६२—६६।

सर्ग ७६

इस प्रकार महायुद्ध होने पर जब बहुत वीर मारे गये, तब अंगद बड़े उत्साह के साथ कम्पन के सामने आये। कम्पन ने अंगद को ललकारकर बड़े क्रोध से पहले ही उन पर गदा का प्रहार किया; उससे अंगद को मूर्च्छा आ गई। किन्तु बहुत शीघ्र उनको होश आ गया और उन्होंने पर्वत का एक शिखर उठाकर कम्पन के ऊपर दे मारा। वह घायल होकर पृथिवी पर गिरा और मर गया। कम्पन को मरा हुआ देखकर शोणिताक्ष रथ पर सवार होकर अंगद से युद्ध करने लगा। उसने बड़ी फुर्ती से कालाग्नि के समान भयानक, छुरे की धार के समान पैने, वत्सदन्त, श्रीमुख, कर्णी, शल्य और विपाठ नामक पैने बाण अंगद पर चलाये। यद्यपि अंगद के अंग-प्रत्यंग सब घायल हो गये तो भी उन्होंने बड़ी फुर्ती से शोणिताक्ष का रथ और धनुष-बाण तोड़ डाला। तब शोणिताक्ष को बड़ा क्रोध आया वह ढाल-तलवार लेकर बड़े वेग से झपटा। अंगद ने दौड़कर उसकी तलवार छीन ली और गरजकर उसी तलवार से शोणिताक्ष के बायें कन्धे पर ऐसा प्रहार किया कि बायें कन्धे से लेकर दाहिने हाथ के

नीचे तक तिरछा घाव हो गया। १–१०। उसके बाद महाबली अंगद वही तलवार हाथ में लेकर दूसरे राक्षसों को मारने दौड़े। तब महा-पराक्रमी प्रजंघ और यूपाक्ष रथ पर सवार होकर, हाथ में गदा लेकर अंगद के सामने आये। उसी समय शोणिताक्ष को भी होश आया और वह भी गदा लेकर अंगद की ओर झपटा। शोणिताक्ष और प्रजंघके बीच में अंगद, विशाखा नक्षत्र के बीच में पूर्ण चन्द्रमा के समान शोभित हुए। ११–१५। यह देखकर मैन्द और द्विविद दोनों वीर उनकी सहायता के लिए दौड़े आये। महाबली तीनों राक्षस भी खड्ग, बाण और गदा लेकर बड़े क्रोध से दौड़े। शोणिताक्ष, प्रजंघ और यूपाक्ष के साथ महावीर अंगद, मैन्द और द्विविद का युद्ध होने लगा। तीनों वानर राक्षसों के ऊपर वृक्ष उखाड़-उखाड़कर फेंकने लगे। महाबली प्रजंघ ने उनके फेंके हुए सब वृक्ष तलवार से काट डाले। उसके बाद वानरों ने फिर राक्षसों के रथों पर वृक्ष और पर्वत फेंके। उनको महाबली यूपाक्ष ने बाणों से काटकर गिरा दिया। १६–२०। मैन्द और द्विविद ने जो वृक्ष उखाड़कर फेंके, उनको वीर शोणिताक्ष ने गदा से तोड़ डाला। वेगवान् प्रजंघ शत्रुओं के मर्म-स्थल विदीर्ण करनेवाला एक बड़ा भारी खड्ग लेकर अंगद की ओर दौड़ा। उसे अपने समीप आया हुआ देखकर महाबली अंगद ने अश्वकर्ण का एक वृक्ष उखाड़कर उसके ऊपर दे मारा और जिस हाथ में वह तलवार लिये था, उसमें एक घूँसा मारकर तलवार भी गिरा दी। उसने मुसल के समान अपना खड्ग पृथिवी पर गिरा हुआ देखकर महाबली अंगद के माथे में वज्र के समान एक घूँसा मारा। घूँसा लगने से अंगद दो घड़ी तक बेहोश रहे। जब उनको होश आया तब उन्होंने एक घूँसा मारकर प्रजंघ का सिर धड़ से अलग कर दिया। अपने चाचा की मृत्यु देखकर यूपाक्ष रोने लगा और रथ पर बैठकर तलवार लेकर दौड़ा। उसे आते देखकर द्विविद ने झपटकर उसकी छाती में प्रहार किया और उसे पकड़

भी लिया। महाबली शोणिताक्ष ने भी बलवान् द्विविद की छाती में प्रहार किया। २१—३०। उस प्रहार से द्विविद काँपने लगे। तब उसने उनको मारने के लिए गदा उठाई, किन्तु द्विविद ने उसकी गदा छीन ली। उसी समय मैन्द भी द्विविद के पास आ गये। शोणिताक्ष और यूपाक्ष के साथ दोनों वीर वानरों का युद्ध होने लगा। महाबली द्विविद ने नखों से शोणिताक्ष का मुँह नोच डाला और बड़े ज़ोर से पृथिवी पर पटककर कुचल दिया। वानरों में श्रेष्ठ मैन्द ने भी यूपाक्ष को उठाकर पृथिवी पर दे मारा। इस प्रकार शोणिताक्ष और यूपाक्ष मारे गये और राक्षसों की सेना भागकर कुम्भ के पीछे जा छिपी। ३१—३५। कुम्भ ने भागते हुए राक्षसों को ढाढ़स बँधाया और उनको फिर युद्ध के लिए उत्साहित किया। धनुर्धरों में श्रेष्ठ कुम्भ धनुष लेकर विषधर साँपों के समान पैने बाण चलाने लगा। उस समय उसका श्रेष्ठ धनुष इन्द्र-धनुष के समान शोभित हुआ। उसने धनुष पर एक तीक्ष्ण सुवर्णपुंख बाण चढ़ाया और कान तक डोरी खींचकर द्विविद को मारा। बाण लगते ही महावीर द्विविद पीड़ित होकर पर्वत के शिखर के समान गिर पड़े। ३६—४१। अपने भाई को युद्धभूमि में गिरा हुआ देखकर मैन्द एक बड़ी भारी शिला लेकर कुम्भ की ओर झपटे। मैन्द ने बड़े वेग से वह शिला चलाई, किन्तु कुम्भ ने पाँच बाण मारकर उसे काट डाला। फिर उसने साँप के समान तीक्ष्ण बाण मैन्द की छाती में मारा। मर्मस्थल में बाण लगने से वे मूर्च्छित होकर गिर पड़े। अपने मामा मैन्द और द्विविद को मूर्च्छित देखकर अंगद बड़े वेग से दौड़े। अंगद को आते देखकर कुम्भ उनके ऊपर बाणों की वर्षा करने लगा। उसने पहले पाँच बाण मारे और फिर दो बार तीन-तीन बाण चलाये। उसके बाद लगातार सुवर्णभूषित पैने बाण मारकर अंगद को पीड़ित कर दिया। इतने बाण लगने पर भी अंगद पीछे नहीं हटे और बड़ी फुर्ती से शिला और वृक्ष उसके ऊपर बरसाने लगे। किन्तु कुम्भकर्ण

के पुत्र महापराक्रमी कुम्भ ने अंगद के फेंके हुए वृक्षों और शिलाओं को बाणों से काटकर गिरा दिया।४२—५०। अंगद को अपनी ओर बढ़ते देखकर कुम्भ ने उनकी भौंहों के बीच में दो बाण मारे। अंगद के माथे से रुधिर की धारा बहने लगी, आँखें मूँद गईं। उन्होंने एक हाथ से आँखें मूँदकर दूसरे हाथ से साल का एक पेड़ उखाड़ लिया और इन्द्रध्वज के समान तथा मन्दराचल के समान उस पेड़ को बड़े वेग से राक्षसों के ऊपर चलाया। ५१—५५। किन्तु कुम्भ ने सात बाण मारकर उस वृक्ष को काट डाला। अंगद के माथे में घाव हुआ था, इससे वे मूर्च्छित होकर गिर पड़े। अंगद की यह दशा देखकर वानरों ने रामचन्द्र के पास जाकर यह हाल कहा। तब रामचन्द्र ने जाम्बवान् आदि वीर वानरों को अंगद की रक्षा के लिए कुम्भ के साथ युद्ध करने की आज्ञा दी। रामचन्द्र की आज्ञा पाकर जाम्बवान्, सुषेण और वेगदर्शी, ये तीन महाबली वानर बड़े क्रोध से लाल-लाल आँखें करके वृक्ष और शिलाएँ लेकर धनुष ताने हुए कुम्भ की ओर झपटे। ५६—६१। बलवान् वानरों को अपनी ओर आते देखकर कुम्भ ने बहुत-से बाण मारकर उनको रोक दिया। वे उसी प्रकार आगे न बढ़ सके, जैसे समुद्र अपनी मर्यादा नहीं नाँघ सकता। उनको बाण-वृष्टि से व्याकुल देखकर वानरराज सुग्रीव अंगद को पीछे करके बड़े वेग से दौड़े, जैसे पर्वत के ऊपर घूमते हुए हाथी पर सिंह झपटता है। सुग्रीव ने अश्वकर्ण आदि अनेक प्रकार के बड़े-बड़े वृक्ष उखाड़कर फेंके, जिनसे आकाश ढक गया; किन्तु कुम्भ ने पैने बाणों से उनको काटकर गिरा दिया। कटे हुए वृक्ष पृथिवी पर गिरकर भयानक तोपों के समान देख पड़े। अपने प्रहार को विफल देखकर महापराक्रमी सुग्रीव दुःखित नहीं हुए, बल्कि उन्होंने बड़ी फुर्ती से कूदकर कुम्भ का इन्द्रधनुष के समान धनुष छीन लिया और तोड़ डाला। ६२—७०। फिर उन्होंने टूटे हुए दाँतवाले हाथी के समान कुपित कुम्भ से कहा—हे कुम्भ,

तुम बड़े बलवान् हो और तुम्हारे बाणों का वेग भी बड़ा अद्भुत है। प्रभाव और नम्रता में रावण के समान हो, पराक्रम में प्रह्लाद, बालि, इन्द्र, कुबेर और वरुण के तुल्य हो। अपने भाइयों में तुम्हीं अपने पिता के समान बलवान् देख पड़ते हो। जब तुम हाथ में शूल लेकर खड़े हो जाते होगे, तो देवता मारे डर के उसी प्रकार तुम्हारे सामने न आते होंगे, जैसे जितेन्द्रिय पुरुष के मन में चंचलता नहीं आती। अब तुम युद्ध में अपना पराक्रम दिखाओ और हमारी वीरता देखो। तुम्हारे चाचा रावण ब्रह्मा के वरदान से देवताओं और दानवों को परास्त कर चुके हैं। कुम्भकर्ण भी अपने पराक्रम से देवताओं और दानवों के प्रहार सह लेते थे। तुम धनुर्विद्या में इन्द्रजित् के तुल्य और प्रताप में रावण के समान हो। तुम राक्षसों में सबसे श्रेष्ठ हो, इसलिए आज युद्ध-भूमि में तुम्हारे साथ हमारा अद्भुत युद्ध सब प्राणी देखें, जैसे इन्द्र और शम्बर का युद्ध हुआ था। तुमने महापराक्रमी अंगद, जाम्बवान्, सुषेण और वेगदर्शी आदि वानरों को मूर्च्छित करके अपना अस्त्र-कौशल और पराक्रम दिखाया। हे वीर, हमने यह सोचकर कि तुम इन वानरों के साथ युद्ध करके थक गये होगे, इसलिए तुमको नहीं मारा; क्योंकि यदि उसी समय हम तुमको मार डालते तो संसार में हमारी निन्दा होती। अब तुम सुस्ता चुके हो, हमारा पराक्रम देखो। सुग्रीव के यह व्यंग्य वचन सुनकर आग में घी छोड़ने के समान कुम्भ का क्रोध बढ़ गया। ७१—८०। उसने दौड़कर सुग्रीव को पकड़ लिया और मदान्ध हाथी के समान दोनों वीर बार-बार लम्बी साँसें छोड़ते हुए बाहुयुद्ध करने लगे। दोनों वीर लिपट गये और एक-दूसरे को खींचने लगे। लड़ते-लड़ते जब थक गये तब उनके मुँह से धुएँ सहित आग की ज्वाला के समान गरम साँसें निकलने लगीं। उनके पैरों की धमक से पृथिवी धँस गई, समुद्र का पानी खलभलाने लगा और तरंगें उठने लगीं। सुग्रीव ने बड़ी फुर्ती से कुम्भ

को उठाकर इतने ज़ोर से समुद्र में फेंक दिया कि वह समुद्र की तह तक चला गया। जिस स्थान पर कुम्भ गिरा वहाँ समुद्र का पानी विन्ध्याचल और मन्दराचल की ऊँचाई के बराबर ऊपर को उठकर चारों ओर फैल गया। थोड़ी देर बाद कुम्भ समुद्र से निकल आया और बड़े क्रोध से सुग्रीव की छाती में वज्र के समान घूँसा मारा। घूँसा लगने से रुधिर बहने लगा, हड्डियाँ नहीं टूटीं, और जैसे वज्र गिरने पर सुमेरु पर्वत से आग की ज्वाला निकली थी वैसे ही सुग्रीव की छाती से ज्वाला निकलने लगी। उन्होंने भी सहस्रकिरण सूर्य के समान चमकता हुआ घूँसा तानकर कुम्भ की छाती में मारा। वज्र-तुल्य घूँसा लगने से उसकी छाती फट गई, वह बुझती हुई आग के समान तेज-हीन और पीड़ित होकर पृथिवी पर गिर पड़ा और मर गया। उस समय वह ऐसा देख पड़ा, मानों आकाश से प्रदीप्त मंगल ग्रह गिर पड़ा हो, और जैसे रुद्र से अभिभूत सूर्य तेजहीन हो गये हों। वैसे ही कुम्भ का चेहरा मुरझा गया। महापराक्रमी वानरराज सुग्रीव के हाथ से जब कुम्भ मारा गया तब वन-पर्वत समेत पृथिवी काँप उठी और राक्षस बहुत डर गये। ८१—९४।

सर्ग ७७

अपने भाई की मृत्यु देखकर निकुम्भ बड़े क्रोध से सुग्रीव को इस प्रकार देखने लगा, मानों भस्म कर डालेगा। उसने राक्षसों का भय दूर करनेवाला, यमदंड-तुल्य, महेन्द्र पर्वत के शिखर के समान, फूलों की माला और चन्दन आदि से शोभित, सोने से मढ़ा हुआ, हीरा और मूँगा से अलंकृत, इन्द्रध्वज के समान परिघ उठाया और बड़े ज़ोर से गरजा। महापराक्रमी निकुम्भ कानों में कुंडल, भुजाओं में बिजायठ, गले में स्वर्णपदक और विचित्र माला पहने था। वह परिघ लेकर उन आभूषणों की चमक से ऐसा शोभित हुआ, जैसे

गरजते हुए बादल, इन्द्रधनुष और चमकती हुए बिजली से शोभित होते हैं। उसने जब अंगार के समान चमकता हुआ परिघ घुमाया तब उसके अग्र भाग से आवह आदि सातों वायु चलने लगीं। देवलोक, गन्धर्व लोक, नक्षत्र, तारा, चन्द्रमा और सब ग्रहों सहित सम्पूर्ण आकाश-मंडल उस परिघ के साथ मानों घूमने लगा। उस समय वह राक्षस प्रलयकाल की अग्नि के समान भयानक हो गया। उसका प्रचंड कोप ईंधन के समान और परिघ के आभूषणों का प्रकाश अग्नि के तेज के समान था। उसका कराल रूप देखकर राक्षस और वानर डर के मारे सन्न हो गये। कोई वानर उसके सामने खड़ा न रह सका। किन्तु महावीर हनुमान् छाती खोलकर उसके सामने खड़े हो गये। १—१०। महाबली निकुम्भ ने सूर्य के समान चमकता हुआ परिघ हनुमान् की छाती में मारा। हनुमान् की छाती वज्र के समान पुष्ट थी। उस परिघ के सौ टुकड़े हो गये और जैसे आकाश में सौ उल्काएँ शोभित हों, वैसे ही परिघ के सौ टुकड़े पृथिवी पर गिरकर शोभित हुए। किन्तु महावीर हनुमान् परिघ लगने से उसी प्रकार विचलित न हुए, जैसे आँधी चलने से पहाड़ नहीं हिलते। वायु के समान पराक्रमी महातेजस्वी हनुमान् ने बड़े वेग से निकुम्भ की छाती में एक घूँसा मारा। घूँसा लगने से उसका कवच टूट गया, रुधिर बहने लगा और हाड़ों से चिनगारियाँ निकलने लगीं जैसे बादल में बिजली चमकती है। पहले तो वह काँप उठा, किन्तु फिर स्वस्थ होकर उसने दौड़कर महावीर हनुमान् को पकड़ लिया। महाबली हनुमान् के पकड़े जाने पर राक्षस अपनी विजय समझकर गरजने लगे। निकुम्भ उनको पकड़कर ले चला, किन्तु वीर हनुमान् ने वज्र के समान एक घूँसा फिर उसकी छाती में मारा और झट अपने को छुड़ा कर पृथिवी पर खड़े हो गये। फिर उन्होंने बड़ी फुर्ती से निकुम्भ को पकड़कर दे मारा और छाती पर चढ़कर पैरों से रौंद डाला। फिर

दोनों हाथों से उसका सिर पकड़ा और उमेठ कर तोड़ डाला। मरते समय वह भयानक शब्द से चिल्लाने लगा। ११–२२। निकुम्भ के मारे जाने पर वानर प्रसन्न होकर गरजने लगे। उनके गरजने का शब्द आकाश और सब दिशाओं में फैल गया। पृथिवी काँपने लगी और राक्षस डर गये। उसके बाद मकराक्ष के साथ रामचन्द्र का युद्ध हुआ। २३–२४।

सर्ग ७८

कुम्भ और निकुम्भ की मृत्यु सुनकर रावण क्रोध के मारे आग हो गया। उसने शोक और क्रोध से व्याकुल होकर खर के पुत्र मकराक्ष को आज्ञा दी—बेटा, तुम हमारी आज्ञा से सेना लेकर युद्ध-भूमि में जाओ और वानरों सहित राम-लक्ष्मण को मार डालो। रावण की यह बात सुनकर मकराक्ष ने अपने को बड़ा वीर समझा और बड़ी ढिठाई से कहा—बहुत अच्छा, मैं अभी मारे डालता हूँ। उसने यह कहकर रावण की प्रदक्षिणा की और प्रणाम करके शरद-ऋतु के बादलों के समान स्वच्छ घर से युद्ध के लिए प्रस्थान किया। १–५। वह समीप खड़े हुए सेनापति से बोला—हमारे लिए रथ और साथ चलने के लिए सेना शीघ्र लाओ। उसकी आज्ञा पाकर सेनाध्यक्ष ने सेना और रथ लाकर उसके सामने खड़ा कर दिया। वह रथ की प्रदक्षिणा करके सवार हुआ और सारथि से बोला—बड़ी शीघ्रता से रथ हाँको। मकराक्ष ने अपने सैनिकों को आज्ञा दी कि पहले तुम लोग युद्ध करो, उसके बाद हम लड़ेंगे। राक्षसराज रावण ने मुझे राम-लक्ष्मण को मारने की आज्ञा दी है, इसलिए हे राक्षसो, आज मैं पैने बाणों से रामचन्द्र, लक्ष्मण, वानरराज सुग्रीव और अन्य प्रधान वानरों को मार डालूँगा। जैसे आग सूखे ईंधन को जलाती है वैसे ही मैं शूल से वानरों की सेना को भस्म करूँगा।

मकराक्ष की यह बात सुनकर पीली आँखोंवाले, महाबलवान्, बड़े-बड़े दाँत काढ़े, कामरूपी भयानक राक्षस बड़ी सावधानी से अनेक प्रकार के अस्त्र-शस्त्र लेकर, मतवाले हाथियों के समान गरजने लगे। भयानक राक्षस महाकाय मकराक्ष के साथ बड़े हर्ष से चले। उनके चलने से पृथिवी काँपने लगी, ताल ठोंकने, हज़ारों नगाड़े और शंख बजने का भयानक शब्द होने लगा। चलते समय अनेक प्रकार के अशकुन हुए, सारथि के हाथ से चाबुक गिर पड़ा, रथ की ध्वजा टूट गई, रथ में जुते हुए घोड़े उदास हो गये; वे आँखों से आँसू बहाने और धीरे-धीरे पैर उठाने लगे, उनका पराक्रम नष्ट हो गया। सामने से आँधी चली और धूलि उड़ने लगी। यह सब अशकुन देखकर भी राक्षस उसकी परवा न करके बड़े वेग से राम-लक्ष्मण की ओर बढ़ते ही गये। बादल, हाथी और भैंसे के समान काले राक्षस, जिनके सब अंगों में गदा और तलवार के घाव के चिह्न बने थे, आपस में अपने युद्ध-कौशल की प्रशंसा करते हुए चले। ९—२१।

सर्ग ७९

मकराक्ष को आते देखकर वानर युद्ध करने के लिए कूदकर आगे खड़े हो गये। जैसे देवताओं और दानवों का युद्ध हुआ था, वैसे ही वानरों और राक्षसों का भयानक युद्ध होने लगा। वानर वृक्ष और शिलाओं से राक्षसों को मारने लगे तथा राक्षस गदा, शूल, परिघ, शक्ति, खड्ग, पट्टिश, भिन्दिपाल, तोमर, कुन्त, पाश, मुद्गर, दंड और बाणों से वानरों का विनाश करने लगे। मकराक्ष ने बाणों की मार से वानरों को व्याकुल कर दिया। वे पीड़ित होकर डर के मारे भाग खड़े हुए। वानरों को भागते देखकर राक्षस अपनी विजय समझकर बड़े गर्व से सिंह की तरह गरजने लगे। रामचन्द्र ने जब देखा कि वानर भाग रहे हैं और राक्षस उनके पीछे दौड़े आते हैं, तब बाण

बरसाकर राक्षसों को रोक दिया। यह देखकर मकराक्ष कुपित होकर रामचन्द्र से बोला—हे राम, खड़े रहो। तुम हमारे साथ युद्ध करो। आज हम पैने बाणों से तुम्हारे प्राण हर लेंगे, और तुमने दंडक वन में हमारे पिता खर को मार डाला है, वह बदला चुकावेंगे। हे दुष्ट राम, जब हमको तुम्हारे कामों की याद आती है, तब क्रोध के मारे हमारे सब अंग जलने लगते हैं। जब तुमने हमारे पिता को मारा था, उस समय तुम दंडक वन में हमारे सामने नहीं पड़े। बड़े भाग्य की बात है, जो आज तुम सामने आ गये। आज तुम्हारी वही दशा होगी, जो भूखे सिंह के सामने पड़कर एक छोटे पशु की होती है। आज तुम हमारे बाणों से प्राण त्यागकर यमराज का घर देखोगे, और तुमने जिन बलवान् राक्षसों को मारा है, उनके साथ निवास करोगे।१–१४।हे राम, बहुत कहने से कुछ प्रयोजन नहीं अब हमारा और तुम्हारा युद्ध सब लोग देखें। एक बात और सुन लो—तुमको जिन अस्त्रों का अच्छा अभ्यास हो, उन्हीं से युद्ध करो। चाहे बाण-युद्ध करो और चाहे गदा-युद्ध। मकराक्ष की यह बातें सुनकर रामचन्द्र ने उत्तर दिया—हे राक्षस, वृथा बकवाद क्यों करता है, युद्ध के विना बातों से किसी की जीत नहीं होती। दंडक वन में त्रिशिरा, दूषण और चौदह हजार राक्षसों के साथ तेरे बाप को हमीं ने मारा है। हे दुष्ट, आज तू भी मेरे बाणों से मारा जायगा। सियार, कौआ, तीक्ष्ण नख और चोंचवाले गिद्ध भरपेट तेरा मांस खायँगे। १५–२०। रामचन्द्र की यह बात सुनकर महाबली मकराक्ष क्रुद्ध होकर उनके ऊपर बाण बरसाने लगा। रामचन्द्र ने बाण मारकर उसके सुवर्णपुंख बाणों को काटकर गिरा दिया। इस प्रकार महापराक्रमी मकराक्ष के साथ राजकुमार रामचन्द्र का युद्ध होने लगा। उस समय युद्धभूमि में धनुष की डोरी का ऐसा शब्द हुआ, मानों आकाश में बादल गरजते थे। वह अद्भुत युद्ध देवता, दानव, गन्धर्व, किन्नर और नाग आकाश से

देखने लगे। जिसके अंगों में घाव लगते थे, उसका बल दुगुना बढ़ जाता था और वह मारनेवाले से बदला लेता था। २१–२६। मकराक्ष के चलाये हुए बाणों को रामचन्द्र टुकड़े-टुकड़े कर डालते थे और वह भी रामचन्द्र के बाणों को काट डालता था। आकाश, पृथिवी और सब दिशाओं में बाण भर गये, जिससे अँधेरा हो गया। महाबाहु रामचन्द्र ने क्रुद्ध होकर मकराक्ष का धनुष काट डाला, आठ बाणों से सारथि और घोड़ों को मारकर रथ भी तोड़ डाला। तब मकराक्ष शूल लेकर पृथिवी पर खड़ा हो गया। रुद्र का दिया हुआ, प्रलयकाल के अग्नि के समान प्रकाशमान, सब प्राणियों को डरानेवाला वह भयानक शूल संहारास्त्र के समान था। उसे देखकर देवता डर के मारे भाग गये। मकराक्ष ने बड़े क्रोध से शूल घुमाकर महात्मा रामचन्द्र के ऊपर चलाया। उसे अपनी ओर आते देखकर रामचन्द्र ने चार बाण मारकर काट डाला। सोने से मढ़ा हुआ वह शूल टुकड़े-टुकड़े होकर उल्का की तरह पृथिवी पर गिर पड़ा। यह देखकर आकाश से देवता और गन्धर्व आदि रामचन्द्र की प्रशंसा करने लगे। मकराक्ष ने देखा कि हमारा शूल काट डाला गया है तो वह "खड़े रहो, खड़े रहो" कहता हुआ घूँसा तानकर रामचन्द्र की ओर झपटा। तब रामचन्द्र ने हँसकर धनुष पर अग्नि-बाण चढ़ाया और उसकी छाती में मारा। उसकी छाती फट गई और वह गिरकर मर गया। मकराक्ष को मरा हुआ देखकर सब राक्षस रामचन्द्र के बाणों के डर से लंका को भाग गये। जैसे वज्र के प्रहार से पर्वत छिन्न-भिन्न हो गया हो, वैसे ही रामचन्द्र के बाणोंसे मकराक्ष को मरा हुआ देखकर देवता बड़े प्रसन्न हुए। २७–४१।

सर्ग ८०

मकराक्ष का वध सुनकर समरविजयी रावण क्रोध के मारे दाँत

छटपटाने लगा। थोड़ी देर तक सोचता रहा कि अब क्या करना चाहिए, फिर उसने अपने पुत्र इन्द्रजित् को युद्ध करने की आज्ञा दी। हे वीर, तुम महापराक्रमी राम-लक्ष्मण को मार डालो। चाहे सामने युद्ध करो और चाहे छिपकर, तुम उनसे सब तरह से बलवान् हो। तुमने तो अपनी समानता न रखनेवाले इन्द्र को जीत लिया है, फिर मनुष्यों को युद्ध में देखकर क्यों न मार डालोगे! १—४। पिता की यह आज्ञा सुनकर इन्द्रजित् यज्ञभूमि में विधिपूर्वक होम करने लगा। उसी समय राक्षसी स्त्रियाँ ऋत्विजों के धारण करने के लिए लाल पगड़ियाँ लेकर आईं। इन्द्रजित् ने कुशाओं की जगह शस्त्र बिछाये, बहेड़ा की लकड़ी ली, लाल वस्त्र पहना और लोहे का स्रुवा लिया। अग्नि प्रज्वलित करके काले बकरे का गला पकड़कर जीते ही होम कर दिया। होम करते समय धुवाँ का निकलना बन्द हो गया, विजय के चिह्न देख पड़ने लगे। तपाये हुए सोने के समान अग्नि की शिखा दाहिनी ओर को घूमने लगी। अग्नि ने स्वयं उठकर हवि ग्रहण किया। ५—१०। इन्द्रजित् इस प्रकार अग्नि में आहुति देकर देवता, दानव और राक्षसों को तृप्त करके श्रेष्ठ रथ पर सवार हुआ। रथ में चार घोड़े जुते थे, भारी धनुष और पैने बाण रक्खे थे, सोने का उहार पड़ा था, वह चन्द्र-अर्धचन्द्र और मृगों के चित्रों से शोभित था। अग्नि के समान चमकता हुआ सुवर्णमय शंख रक्खा हुआ था। रथ का ध्वज वैडूर्य मणि से अलंकृत था। सूर्य के समान तेजस्वी, ब्रह्मास्त्र से सुरक्षित, महाबली इन्द्रजित् राक्षसी मन्त्रों से अग्नि में आहुति देकर, रथ पर सवार होकर, नगर से बाहर निकला और बड़े गर्व से बोला—जिनको पिता ने घर से निकाल दिया है, उन राम-लक्ष्मण को मैं आज युद्ध में मारकर अपने पिता रावण को विजयी बनाऊँगा। पृथिवी पर वानरों का वंश न रक्खूँगा। राम-लक्ष्मण का वध करके राक्षसों को प्रसन्न करूँगा। इन्द्रजित् यह कहकर

अन्तर्द्धान हो गया। ११—१८। वह रावण की आज्ञानुसार धनुष और तीक्ष्ण बाण लेकर बड़े क्रोध से युद्धभूमि में गया। वानरों की सेना में खड़े हुए, दो-दो तूणीर बाँधे, अतएव तीन सिरवाले साँप के समान महापराक्रमी राम-लक्ष्मण को बाणों की वर्षा करते देखकर उसने पहचान लिया कि यही दोनों भाई हैं। फिर उसने धनुष की डोरी चढ़ाई और जैसे बादल पानी बरसाते हैं वैसे ही बाण बरसाने लगा। आकाश में रथ खड़ा करके अदृश्य होकर पैने बाणों से राम-लक्ष्मण को ढक दिया। रामचन्द्र और लक्ष्मण भी धनुष पर बाण चढ़ाकर मारने लगे। दोनों भाइयों ने सूर्य के समान चमकते हुए दिव्य बाणों से आकाश-मंडल को भर दिया, किन्तु इन्द्रजित् के एक भी बाण न लगा। १९—२४। उसी समय इन्द्रजित् ने धुएँ का सा अन्धकार फैला दिया जिससे सब दिशाओं में अन्धकार छा गया। वह ऐसा अदृश्य था कि न तो उसके धनुष की ज्या का शब्द सुन पड़ता था और न रथ के पहियों की घरघराहट सुन पड़ती थी। न उसका रूप देख पड़ता था और न घोड़ों की टाप का शब्द ही सुनाई देता था। जैसे घनघोर बादलों की अँधियारी में ओले गिरते हों वैसे ही बाणों की वर्षा होती थी। महाबाहु इन्द्रजित् ने वरदान में पाये हुए सूर्यवत् प्रकाशित बाणों से राम-लक्ष्मण के सब अंग घायल कर दिये। जैसे पानी की धारा से पर्वत नहीं टलता वैसे ही राम-लक्ष्मण उसके बाणों से विचलित न होकर सुवर्णपुंख बाण बरसाते रहे। राम-लक्ष्मण के बाण पक्षियों की तरह आकाश में जाकर इन्द्रजित् के अंगों में घाव करके रुधिर से भीगकर पृथिवी पर गिर पड़ते थे। २५—३०। पुरुषश्रेष्ठ राम-लक्ष्मण बाणों से अत्यन्त पीड़ित होने पर भी इन्द्रजित् के चलाये हुए बाणों को भल्ल बाणों से काट डालते थे। जिधर से बाण आते देखते थे उसी ओर ताककर बाण मारते थे। इन्द्रजित् बड़ी फुरती से अपना रथ सब ओर दौड़ाता था

और पैने बाणों से राम-लक्ष्मण को घायल करता था। वीर राम-लक्ष्मण रुधिर से भीगकर फूले हुए ढाक के पेड़ के समान देख पड़ने लगे। जैसे बादलों से घिर जाने पर सूर्य नहीं देख पड़ते वैसे ही इन्द्रजित् नहीं देख पड़ता था। उसका रूप, धनुष-बाण और उसकी चाल, कुछ भी विदित नहीं होती थी। ३१—३५। इन्द्रजित् के बाणों से सैकड़ों वानर निर्जीव होकर पृथिवी पर गिर पड़े। तब लक्ष्मण ने कुपित होकर रामचन्द्र से कहा——अब मैं ब्रह्मास्त्र चलाता हूँ, जिससे सब राक्षसों का विनाश हो जायगा। यह सुनकर रामचन्द्र ने उनको समझाया कि एक के लिए सब राक्षसों का मार डालना उचित नहीं है। क्योंकि जो युद्ध न करता हो, जो छिपा हो, जो हाथ जोड़कर शरण में आया हो, जो डर के मारे भाग रहा हो अथवा असावधान हो उसे न मारना चाहिए। इसलिए हे लक्ष्मण, हम इन्द्रजित् को ही मारने का उपाय करेंगे। तुम भी विषधर साँपों के समान तीक्ष्ण बाण उसी के ऊपर चलाओ। यदि वह सामने आकर युद्ध करेगा, तब तो उस मायावी क्षुद्र राक्षस को देखकर वानर ही मार डालेंगे। वह आकाश, पाताल, स्वर्ग अथवा पृथिवी में कहीं भी जाकर छिपे, किन्तु हमारे बाणों से निर्जीव होकर पृथिवी पर अवश्य गिरेगा। लक्ष्मण से यह कहकर महात्मा रामचन्द्र दुष्ट इन्द्रजित् को मारने के लिए वानरों के साथ सब ओर देखने लगे। ३६—४३।

सर्ग ८१

महात्मा रामचन्द्र का इरादा समझकर इन्द्रजित् युद्ध से लौट पड़ा और लंका को चला गया। वहाँ जाकर उसने सोचा कि हमारे चले आने से बेचारे राक्षस मार डाले जायँगे। तब क्रोध के मारे उसकी आँखें लाल होगईं, और वह फिर राक्षसों की सेना लेकर पश्चिम द्वार से निकला। देवताओं के शत्रु महापराक्रमी इन्द्रजित् ने युद्ध-

भूमि में वीर राम-लक्ष्मण को युद्ध के लिए तैयार खड़े देखकर एक माया रची। उसने माया की सीता अपने रथ पर बैठाकर उनको वध करना चाहा। वह मूर्ख सबको मोहित करने के लिए सीता को मारने का निश्चय करके वानरों के सामने चला। उसे आते देखकर सब वानर वृक्ष और शिलाएँ लेकर उसकी ओर दौड़े। वानरश्रेष्ठ हनुमान् सबसे आगे थे। उन्होंने इन्द्रजित् के रथ पर सीता को उदास बैठी देखा। वे एक वेणी धारण किये थीं, उपवास करने के कारण मुख दुर्बल था। एक मैला वस्त्र पहने थीं। और उनके सब अंगों में धूलि लगी थी।१-१०। हनुमान् कुछ दिन पहले उनको देख चुके थे, इसलिए रामचन्द्र की भार्या सरलस्वभाव सीता को पहचान गये। शोक के मारे दुःखित तपस्विनी सीता को इन्द्रजित् के रथ पर देखकर उन्होंने वानरों से कहा—यह दुष्ट किस विचार से सीता को रथ पर बैठाकर यहाँ लाया है। यह कहकर महावीर हनुमान् सब वानरों के साथ इन्द्रजित् की ओर दौड़े। वानरों को अपनी ओर आते देखकर इन्द्रजित ने क्रुद्ध होकर सीता के केश पकड़ लिये और गर्दन पर नंगी तलवार रख कर खींचा। माया की सीता 'राम-राम' कहकर चिल्लाने लगी। यह देखकर हनुमान् को बड़ा दुःख हुआ और उनकी आँखों से आँसू निकल पड़े। ११-१६। रामचन्द्र की प्रिया सर्वांगसुन्दरी सीता की यह दशा देखकर हनुमान् क्रुद्ध होकर इन्द्रजित् से कठोर वचन बोले— रे दुष्ट, तू अपने विनाश के लिए सीता के केश क्यों पकड़ता है। ब्रह्मर्षियों के वंश में जन्म लेकर तू यह राक्षसी काम करने लगा! तुझ पापी को धिक्कार है। तेरी मति भ्रष्ट हो गई है। रे मूर्ख, रे दुराचारी, रे अधम, तू यह क्या कर रहा है! रे निर्दय, यह दुष्कर्म करते हुए तुझे दया नहीं आती। सीता बेचारी का राज्य छूटा, घर छूटा, रामचन्द्र से वियोग हुआ। इन्होंने तेरा क्या अपराध किया है जो तू इनको मारे डालता है? १७-२०। सीता को मारकर तू बहुत दिनों तक

जीवित न बचेगा। तू हमारे सामने इनको मारता है, इसलिए हमारे ही हाथ से तेरी मृत्यु होगी। स्त्री का वध करनेवाले पुरुष जिस लोक को जाते हैं, तू प्राण त्यागकर उसी लोक को जायगा। हनुमान् यह कहते हुए अस्त्र लेकर वानरों के साथ बड़े क्रोध से उसकी ओर दौड़े। वानरों की सेना अपनी ओर आती देखकर इन्द्रजित् ने हजारों बाण मारकर वानरों को रोक लिया, और हनुमान् से कहा—रामचन्द्र, सुग्रीव और तुम जिस सीता के लिए यहाँ आये हो, उसे हम अभी तुम्हारे सामने मारे डालते हैं। इसे मारकर राम, लक्ष्मण, सुग्रीव और दुष्ट विभीषण को भी मारेंगे। हे वानर, जो तुम कहते हो कि स्त्री का वध न करना चाहिए सो भी राजनीति के विरुद्ध है। क्योंकि जिस काम के करने से शत्रुओं को दुःख हो उसके करने में पाप नहीं होता। हनुमान् से यह कहकर इन्द्रजित् ने रोती हुई माया की सीता का सिर तलवार से काट डाला। वह तपस्विनी यज्ञोपवीतवत् कटकर गिर पड़ी। उसके बाद इन्द्रजित् ने हनुमान् से कहा—हमारी तलवार से मरी हुई रामचन्द्र की प्रिया सीता को देखो। २१—३१। सीता मर गई, अब तुम लोगों का परिश्रम व्यर्थ है। यह कहकर वह अपने रथ पर बैठकर बड़े जोर से गरजने लगा। उसके समीप ही खड़े हुए वानरों ने मुँह फैलाये गरजते हुए इन्द्रजित् का शब्द सुना। दुष्ट इन्द्रजित् माया की सीता को मारकर बड़ा प्रसन्न हुआ और उसे प्रसन्न देखकर वानर दुःखित होकर भाग खड़े हुए। ३२—३५।

सर्ग ८२

वज्र के शब्द के समान इन्द्रजित् का भयानक गरजना सुनकर जब सब वानर उदास होकर डर के मारे भागने लगे, तब महावीर हनुमान् ने पुकारकर उनसे कहा—तुम युद्ध का उत्साह छोड़कर कहाँ भागे जाते हो? तुम लोगों की वीरता कहाँ चली गई? लौटो, हम

आगे चलते हैं, पीछे तुम लोग भी युद्ध में आओ। बुद्धिमान् हनुमान् के यह कहने पर सब वानर बड़े हर्ष से पर्वतों के शिखर और वृक्ष लेकर राक्षसों की ओर गरजते हुए दौड़े। वानरों के साथ वीर हनुमान् अग्नि की तरह शत्रु-सेना का विनाश करने लगे। जैसे कालान्तक सब प्राणियों का संहार करता है उसी प्रकार वे राक्षसों का वध करने लगे। हनुमान् ने बड़े शोक और क्रोध से इन्द्रजित् के रथ पर एक शिला चलाई, किन्तु इन्द्रजित् के सारथि ने शिला को आती हुई देखकर बड़ी फुर्ती से घोड़ों को हाँककर रथ हटा ले गया। इन्द्रजित् अपने रथ-सारथि सहित बच गया और शिला का प्रहार व्यर्थ हो गया। १-१०। किन्तु वह शिला राक्षसों की सेना के ऊपर गिरी और उससे बहुत से राक्षस चूर-चूर हो गये। उसके बाद बड़े-बड़े वानर वृक्ष और पर्वतों के शिखर इन्द्रजित् के ऊपर फेंकने लगे। उनकी मार से भयानक राक्षस घायल होकर पृथिवी पर लोटने लगे। वानरों का गरजना सुनकर और राक्षसों का वध देखकर इन्द्रजित् अस्त्र लेकर बड़े क्रोध से दौड़ा। उसने अपने सैनिकों के साथ बाण बरसाकर बहुत-से वानरों को मार डाला। वानरों ने भी शूल, वज्र, खड्ग, पट्टिश और मुद्गर आदि से इन्द्रजित् के सैनिकों को मारा। महाबली हनुमान् ने बड़े-बड़े समूचे वृक्ष जड़ समेत उखाड़कर राक्षसों का विनाश किया। उन्होंने उसी जगह राक्षसों को रोककर वानरों से कहा—हे वानरो! चलो, अब हम लोग लौट चलें, क्योंकि राक्षसों की सेना का विनाश हम लोगों से नहीं हो सकता। रामचन्द्र का प्रिय करने की इच्छा से सीता के लिए हम लोगों ने प्राण छोड़ने पर उतारू होकर इतना युद्ध किया और अनेक प्रकार के यत्न किये, ११-२०। किन्तु जब सीता मार डाली गई, तब युद्ध करना व्यर्थ है। फिर जैसा अब रामचन्द्र और सुग्रीव के पास चलकर यह हाल कहें, फिर जैसा वे कहेंगे वैसा किया जायगा। यह कहकर हनुमान् ने अपनी सेना

को युद्ध करने से रोक दिया और सब वानरों को लेकर धीरे धीरे रामचन्द्र के पास चले। हनुमान् को सेना के साथ लौटते देखकर दुष्ट इन्द्रजित् होम करने के लिए निकुम्भिला नामक देवालय को गया। वहाँ उसने यज्ञभूमि में अग्नि प्रज्वलित करके रुधिर और मांस की आहुतियाँ दीं। अग्नि मांस और रुधिर से तृप्त होकर सन्ध्या समय के सूर्य के समान देख पड़ने लगा। इस प्रकार इन्द्रजित् ने विधिपूर्वक हवन किया और उचित-अनुचित समझनेवाले राक्षस उसी स्थान पर खड़े रहे। २१-२६।

सर्ग ८३

इधर रामचन्द्र ने वानरों और राक्षसों का घोर संग्राम सुनकर जाम्बवान् से कहा—हे सौम्य, अस्त्रों का भयानक शब्द सुन पड़ता है, इससे निश्चय जान पड़ता है कि महाबली हनुमान् कठिन काम कर रहे हैं। इसलिए हे ऋक्षेश, तुम अपनी सेना लेकर शीघ्र जाओ और युद्ध करते हुए हनुमान् की सहायता करो। यह सुनकर जाम्बवान् "बहुत अच्छा" कहकर अपनी सेना के साथ पश्चिम के फाटक की ओर, जहाँ हनुमान् युद्ध करते थे, चले। किन्तु मार्ग में ही युद्ध से लौटते हुए, लम्बी साँसें लेते हुए वानरों के साथ हनुमान् को देखा। हनुमान् ने काले बादलों के समान रीछों की सेना युद्ध के लिए आती हुई देखकर दूर ही से रोका, जिससे सेना खड़ी हो गई। हनुमान् उस सेना को भी साथ लेकर रामचन्द्र के पास गये और दुःखित होकर बोले—इन्द्रजित् ने युद्ध करते हुए हम लोगों के सामने रोती हुई सीता को मार डाला है। हे शत्रुनाशन, सीता की यह दशा देखकर हम लोग दुःख के मारे घबराकर यह हाल आपसे कहने के लिए यहाँ आये हैं। हनुमान् की यह बात सुनते ही रामचन्द्र शोक के मारे मूर्च्छित होकर कटे हुए वृक्ष के समान पृथिवी पर गिर पड़े। १-१०।

देवतुल्य रामचन्द्र को पृथिवी पर गिरा हुआ देखकर सब ओर से वानर दौड़कर वहाँ आये, और सहसा प्रज्वलित होकर सबको भस्म करते हुए अग्नि के समान तेजस्वी रामचन्द्र के ऊपर कमल से सुगन्धित जल छिड़कने लगे। लक्ष्मण ने दुःखित होकर दोनों हाथों से रामचन्द्र को छाती में लगा लिया और व्याकुल होकर कहा—हे आर्य, जब धर्म शुभ मार्ग पर चलते हुए आपको अनर्थों से न बचा सका तो फिर वह निरर्थक है। जिस प्रकार स्थावर-जंगम प्राणी प्रत्यक्ष देख पड़ते हैं उस प्रकार धर्म कहीं नहीं दीखता, इसलिए हमारी समझ में तो धर्म कोई चीज़ ही नहीं है। यदि स्थावर-जंगम प्राणियों की भाँति धर्म भी कोई पदार्थ होता तो आप-जैसे पुरुषों पर विपत्ति न पड़ती। यदि संसार में धर्म-अधर्म होता तो अधर्म करनेवाला रावण नरक को जाता और धर्म करनेवाले आपको दुःख न मिलता। अधर्मी रावण तो सुख भोग रहा है और धर्म का पालन करनेवाले आप दुःख में पड़े हैं। इससे जान पड़ता है कि इन दोनों में परस्पर विरोध है, अर्थात् धर्म करनेवाले को दुःख और अधर्म करनेवाले को सुख मिलता है। चाहिए तो यह कि धर्म करने से धर्म का फल और अधर्म करने से अधर्म का फल मिले। रावण आदि जो अधर्म करते हैं वे अधर्म का फल पावें और धर्म का पालन करनेवाले आप धर्म का फल भोगें। किन्तु जो रावण सदा अधर्म करता है, उसकी उन्नति हो रही है और आप सदा धर्म का पालन करते हैं, सो हमेशा दुःख उठाते हैं। इसलिए धर्म-अधर्म दोनों निरर्थक हैं; क्योंकि न तो धर्म करनेवाले को धर्म का फल मिलता है और न अधर्म करनेवाले को अधर्म का। ११—२१।

यदि अधर्म से ही पापियों का विनाश हो जाय तो पापियों का विनाश कर देने से अधर्म स्वयं नष्ट हो जायगा, फिर वह किसे मारेगा। अथवा जिसका विनाश होता है या जो किसी का विनाश करता है वह दैवी इच्छा है, तो अधर्म करनेवाले को दुःख न मिलना चाहिए।

क्योंकि उस पाप कर्म के फल का भागी दैव ही है। हे शत्रुनाशन, जो धर्म प्रत्यक्ष नहीं देख पड़ता, केवल अनुमान से जाना जाता है, उसके बल पर आप कैसे कल्याण पा सकते हैं? देखिए, यदि धर्म कोई पदार्थ होता तो आपका कुछ भी अनिष्ट नहीं हो सकता था; क्योंकि आप धर्म का पालन करते हो। जो आप इस प्रकार के दुःख उठा रहे हैं, इसी से सिद्ध है कि धर्म कोई चीज़ नहीं है। अथवा धर्म इतना दुर्बल है कि वह पौरुष का सहारा चाहता है। अतएव हमारी समझ में ऐसे दुर्बल और क्षुद्र धर्म का पालन करना वृथा है। जब पराक्रम से ही काम सिद्ध होते हैं और पराक्रम के ही साथ धर्म का फल मिलता है तो धर्म को छोड़कर पौरुष ही करना उचित है। हे परन्तप, यदि सत्य बोलना धर्म है, तो जब राजा दशरथ ने प्रजा के सामने आपको राज्य देने की प्रतिज्ञा की और फिर उसका पालन न करके निर्दयता से आपको वन जाने की आज्ञा दे दी तो आपने झूठ बोलनेवाले पिता को क्यों क़ैद नहीं कर लिया? यदि केवल धर्म का पालन करना, अथवा केवल अधर्म करना ही क्षत्रियों का कर्तव्य होता तो वज्रपाणि इन्द्र विश्वरूप मुनि को मारकर यज्ञ न करते। यदि धर्म-अधर्म के आश्रित रहता है तो वह पौरुष के विनाश का कारण हो जाता है। संसार में कार्य सिद्ध करने के लिए पौरुष के साथ साथ धर्म का पालन करना चाहिए।२२—३०। हे तात, धर्म के विषय में मेरा ऐसा ही विचार है, किन्तु आपने राज्य का त्याग करके धर्म का समूल विनाश कर दिया। जैसे पर्वत से नदियाँ उत्पन्न होती हैं वैसेही जब धन सुरक्षित रहता और बढ़ता रहता है तो उससे सब काम सिद्ध होते हैं। और, जिस प्रकार गर्मी के दिनों में छोटी नदियाँ सूख जाती हैं, वैसे ही धनहीन अल्प-प्राण पुरुष का कोई काम सफल नहीं होता। जो मनुष्य धन का त्याग करके सुख चाहता है उसमें अनेक प्रकार के दोष उत्पन्न हो जाते हैं और वह पाप करने लगता है। जिसके पास धन होता है उसी के मित्र और

भाई-बन्धु होते हैं। वही श्रेष्ठ गिना जाता है; वही पंडित, वही पराक्रमी, वही बुद्धिमान्, वही गुणवान् और वही वीर कहलाता है। धन का त्याग कर देने में यही सब दोष हैं। हे वीर, आपने जो राज्य और धन का त्याग कर दिया, इससे हम लोगों में वे सब अवगुण आ गये, जो निर्धन और राज्यच्युत मनुष्यों में होते हैं। जिसके पास धन है, उसी के धर्म, अर्थ और काम सिद्ध होते हैं, और जिसके पास धन नहीं होता, वह यदि धन का संग्रह करना चाहता है तो उसका मनोरथ सफल नहीं हो सकता। धन से ही हर्ष, काम, दर्प, धर्म, क्रोध, शम और दम सब होते हैं। जो लोग केवल धर्म करने में ही लगे रहते हैं, सांसारिक बातों की ओर ध्यान नहीं देते, उनका यह लोक तो बिगड़ता ही है, साथ ही धर्म, अर्थ और काम भी वैसे ही नष्ट हो जाते हैं जैसे रात में बादल होने से नक्षत्र नहीं देख पड़ते। ३१–४०। हे वीर, आप पिता की आज्ञा-पालन को ही धर्म मानकर वन को चले आये। यहाँ प्राणों से भी अधिक प्रिय स्त्री को राक्षस हर ले गया। उससे भी बढ़कर दुःख यह मिला कि आज इन्द्रजित् ने सीता को मार भी डाला। अब इस दुःख को हम अपने पराक्रम से दूर करेंगे, इसलिए हे पुरुषश्रेष्ठ, हे दीर्घबाहु, हे धृत-व्रत! उठिए, अपने को न भूलिए। हे निष्पाप, सीता की मृत्यु सुनकर क्रोध के मारे आपके हित के लिए मैंने यह बातें कही हैं। अब मैं बाणों से हाथी, घोड़े और रथ सहित राक्षसराज रावण को मारकर लंका नगरी को विध्वंस कर दूँगा। ४१–४४।

सर्ग ८४

इस प्रकार भ्रातृ-वत्सल लक्ष्मण रामचन्द्र को समझा रहे थे, उसी समय विभीषण सब मुरचों पर वीर वानरों को तैनात करके वहाँ आये। उनके साथ अस्त्र-शस्त्र धारण किये चारों मन्त्री भी थे। काजल के ढेर के समान काले चार मन्त्रियों के साथ विभीषण, चार हाथियों के साथ

नराज के समान शोभित थे। विभीषण ने वहाँ आकर शोक से
याकुल रामचन्द्र को और दुःख के मारे रोते हुए वानरों को देखा।
मचन्द्र मूर्च्छित हैं और लक्ष्मण की गोद में सिर रक्खे लेटे हैं, यह
खकर विभीषण को बड़ा दुःख हुआ। उन्होंने पूछा, यह क्या
बात है? विभीषण तथा सुग्रीव और सब वानरों की ओर देखकर
लक्ष्मण ने आँखों में आँसू भरकर धीरे से कहा—हे सौम्य, इन्द्रजित्
ने सीता को मार डाला, यह बात हनुमान् के मुँह से सुनकर रामचन्द्र
मूर्च्छित हो गये हैं। लक्ष्मण कुछ और भी कहना चाहते थे, किन्तु
विभीषण उनकी बात काटकर रामचन्द्र से बोले—महाराज, हनुमान्
ने दुःखित होकर जो बात आपसे कही है उसे मैं वैसे ही अनहोनी
समझता हूँ, जैसे कोई कहे कि किसी ने समुद्र सोख लिया। क्योंकि सीता
के विषय में दुरात्मा रावण का जो भाव है, उसे हम भली भाँति जानते
हैं। वह सीता को नहीं मार सकेगा। १—१०। उसके हित के लिए
हमने उससे बड़ी प्रार्थना की कि सीता को छोड़ दो, किन्तु उसने नहीं
माना। यहाँ तक कि साम, दान, भेद, युद्ध और अन्य किसी भी उपाय से
कोई सीता को देख नहीं सकता, तो फिर इन्द्रजित् उनको कैसे मारेगा।
हे महाबाहु, इन्द्रजित् वानरों को मोहित करके चला गया है, उसने
जिसे वानरों के सामने मारा है, उसे माया की सीता समझिए।
आज वह निकुम्भिला में होम करेगा। होम समाप्त होने पर देवताओं
के साथ इन्द्र भी उसे युद्ध में नहीं जीत सकेंगे। उसी दुष्ट ने सबको
मोहित करने के लिए यह माया रची है। उसने समझा कि ऐसा करने
से वानरों का पराक्रम क्षीण हो जायगा। हे पुरुषश्रेष्ठ, यह व्यर्थ का
सन्ताप छोड़ दीजिए, क्योंकि आपको शोक से व्याकुल देखकर
सब वानर व्याकुल हो रहे हैं। आप सावधानी से यहीं रहिए और
होम समाप्त होने के पहले ही सेना सहित हम लोग लक्ष्मण के साथ
उस स्थान पर पहुँच जायँ, जहाँ इन्द्रजित् होम कर रहा है। वीर लक्ष्मण

पैने बाणों से उसका वह काम छुड़ा देंगे और फिर उसे मार डालेंगे। गरुड़ के समान वेग से चलनेवाले इनके बाण आज उस दुष्ट का रुधिर अवश्य पियेंगे। इसलिए हे महाबाहु, जैसे इन्द्र वज्र छोड़ते हैं वैसे ही आप उस राक्षस का विनाश करने के लिए शुभ लक्षण लक्ष्मण को आज्ञा दीजिए। हे पुरुषश्रेष्ठ, शत्रु का वध करने में अब विलम्ब न होना चाहिए। उसे मारने के लिए आप वज्ररूप लक्ष्मण को भेजिए, जैसे दैत्यों का वध करने के लिए इन्द्र वज्र चलाते हैं। यदि वह राक्षस होम समाप्त कर लेगा तो वह युद्ध में अदृश्य रहेगा, देवता-दानव कोई भी उसे न देखेगा। देवताओं को भी बड़ी आशंका होगी। ११—२३।

सर्ग ८५

विभीषण की बातें सुनकर शोक से व्याकुल होने के कारण रामचन्द्र कुछ समझ न सके। उन्होंने धीरज धरकर वानरों के पास बैठे हुए विभीषण से पूछा—हे राक्षसराज विभीषण, तुमने जो कहा वह ठीक हमारी समझ में नहीं आया, उसे हम फिर सुनना चाहते हैं, इसलिए फिर कहो। रामचन्द्र की यह बात सुनकर बोलने में चतुर विभीषण वही बात फिर कहने लगे—हे महाबाहु, मैं आपकी आज्ञानुसार सेना को विभक्त करके सब मोरचों पर तैनात कर आया हूँ। और, यूथपों को भी यथोचित स्थानों पर नियुक्त कर आया हूँ। एक बात और आपसे कहना है वह सुनिए—आप जो अकारण दुःखित हैं, इससे हम लोगों को भी बड़ा दुःख है। हे राजन्, यदि आप राक्षसों को मारकर सीता को प्राप्त करना चाहते हैं तो शत्रुओं का हर्ष बढ़ानेवाले इस मिथ्या शोक को छोड़कर प्रसन्न होकर उद्योग कीजिए। १—९। हे रघुनन्दन, अब मैं आपके हित की एक बहुत आवश्यक बात कहता हूँ—रावण का पुत्र इन्द्रजित निकुम्भिला में होम

करने के लिए गया है। लक्ष्मण बड़ी भारी सेना लेकर वहाँ चलें और विषधर साँपों के समान तीक्ष्ण बाणों से उसे मारें। वीर इन्द्रजित् ने ब्रह्मा के वरदान से ब्रह्मशिर नाम का अस्त्र और उसकी इच्छानुसार चलनेवाले चार घोड़े प्राप्त किये हैं। वह इस समय सेना के साथ निकुम्भिला नामक देवालय को गया है। वहाँ जिस काम के लिए गया है, यदि वह काम समाप्त करके उठा तो हम लोगों की मृत्यु समझिए। ब्रह्मा ने उससे कहा था कि हे इन्द्र के शत्रु, यदि तुम्हारा कोई शत्रु निकुम्भिला में पहुँचकर होम समाप्त करने के पहले, तुमको मार डालेगा तब तो उसकी विजय हो ही जायगी, किन्तु यदि होम कर चुकोगे तो फिर तुमको कोई न मार सकेगा। हे महाबाहु, सब लोकों के ईश्वर ब्रह्मा ने उसे यह वरदान दिया है। इसलिए हे राजन्, उस बुद्धिमान् का वध होम समाप्त के पहले ही हो सकता है। महाबली लक्ष्मण को आज्ञा दीजिए, यह चलकर उसे मारें। उसके मरने पर सपरिवार रावण को मरा हुआ समझिए। १–१६। विभीषण की यह बात सुनकर रामचन्द्र ने कहा—हे सत्यपराक्रम, हम जानते हैं कि वह दुष्ट बड़ा मायावी है, बड़ा बुद्धिमान् और बलवान् भी है, ब्रह्मास्त्र भी जानता है। युद्ध में सब देवताओं सहित इन्द्र और वरुण को भी मूर्च्छित कर देता है। वह रथ पर चढ़कर आकाश में उसी प्रकार अदृश्य घूमता रहता है, जैसे बादलों में छिपे हुए सूर्य नहीं देख पड़ते। दुष्टात्मा इन्द्रजित् का पराक्रम और उसकी माया का स्मरण करके रामचन्द्र ने यशस्वी लक्ष्मण से कहा—तुम सुग्रीव की सब सेना, रीछों की सेना सहित जाम्बवान् और हनुमान् आदि यूथपों को साथ लेकर जाओ और मायावी इन्द्रजित् को मार डालो। १७–२२। उसकी माया समझनेवाले महात्मा विभीषण अपने मन्त्रियों के साथ तुम्हारी सहायता करेंगे। रामचन्द्र की आज्ञा सुनकर महापराक्रमी लक्ष्मण ने श्रेष्ठ धनुष-बाण और तलवार लेकर, कवच

पहनकर, रामचन्द्र के पैर छूकर कहा—आज हमारे धनुष से छूटे हुए बाण इन्द्रजित् को मारकर लंका में उसी प्रकार गिरेंगे जैसे हंस मानसरोवर में गिरते हैं। आज हमारे बाण उस दुष्ट का शरीर छेद डालेंगे और उसे रत्ती-रत्ती उड़ा देंगे। महाबली राजकुमार लक्ष्मण यह कहकर रामचन्द्र को प्रणाम और प्रदक्षिणा करके, इन्द्रजित् को मारने के लिए हनुमान् आदि हज़ारों वानरों तथा मन्त्रियों सहित विभीषण के साथ बड़ी शीघ्रता से निकुम्भिला को चले। चलते समय रामचन्द्र ने स्वस्त्ययन किया। मार्ग में उनको जाम्बवान् की सेना भी देख पड़ी। इस प्रकार बहुत दूर चलकर मित्रों को आनन्द देनेवाले लक्ष्मण, व्यूह रचना करके खड़ी हुई राक्षसों की सेना देखने लगे। माया से युद्ध करनेवाले इन्द्रजित् को मारने के लिए वे हाथ में धनुष लेकर खड़े हो गये। जैसे कोई घोर अंधकार में प्रवेश करे, वैसे ही विभीषण, अंगद और हनुमान् के साथ राजकुमार लक्ष्मण, चमकते हुए अनेक प्रकार के शस्त्रों से प्रकाशित, ध्वजों और बड़े-बड़े रथों से भरी हुई, भयानक राक्षसों की सेना में घुसे। २३—३६।

सर्ग ८६

उसी समय विभीषण ने शत्रुओं के अहित और अपने हित के लिए लक्ष्मण से कहा—राजकुमार, काले बादलों के समान जो राक्षसों की सेना सामने देख पड़ती है, शिला धारण करनेवाले वानरों को साथ लेकर शीघ्र इससे युद्ध करो। क्योंकि सेना का विनाश करने पर ही रावण का पुत्र इन्द्रजित् देख पड़ेगा। अतएव होम समाप्त होने के पहले ही, इन्द्र के वज्र के समान बाणों की वर्षा करते हुए, दौड़कर इसके पास शीघ्र पहुँच जाओ। हे वीर, अपने को धार्मिक समझनेवाले, सब लोकों को भयभीत करनेवाले, मायावी दुरात्मा इन्द्रजित् को शीघ्र मार डालो। विभीषण की यह बात सुनकर शुभलक्षण

लक्ष्मण इन्द्रजित् के ऊपर बाण बरसाने लगे। वानर और रीछ भी वृक्ष और पर्वत लेकर एक साथ राक्षसों की सेना पर टूट पड़े। राक्षसों ने भी शक्ति, तोमर, तलवार और पैने बाण चलाये। राक्षसों और वानरों के प्रहार का शब्द लंका में सर्वत्र फैल गया। वृक्षों, पर्वतों, पैने बाणों और अनेक प्रकार के अस्त्रों से आकाश भर गया। १—१०। भयानक मुँहवाले राक्षसों ने शस्त्रों के प्रहार से वानरों को भयभीत कर दिया। वानरों ने भी पर्वत के शिखरों और वृक्षों से राक्षसों का विनाश किया। महाबली वानरों और रीछों की मार से राक्षस व्याकुल हो गये। इन्द्रजित् ने जब यह सुना कि हमारी सेना वानरों से मारी गई तो वह होम समाप्त किये विना ही उठ खड़ा हुआ, और हरे वृक्षों के अन्धकार से निकलकर बड़े क्रोध से अपने रथ पर सवार हुआ। ११—१५। भयानक धनुष और बाण लिये हुए, लाल-लाल आँखें निकाले, काजल के ढेर के समान इन्द्रजित्, काल की तरह देख पड़ा। इन्द्रजित् को रथ पर सवार देखकर, लक्ष्मण की मार से घबराकर भागे हुए राक्षस लौट पड़े। उसी समय शत्रुओं का विनाश करनेवाले हनुमान् ने एक बड़ा भारी वृक्ष उखाड़कर चलाया। प्रलयकाल की अग्नि के समान भस्म करते हुए, हनुमान् के चलाये हुए वृक्षों से राक्षसों की सेना मूर्च्छित हो गई। यह देखकर हजारों राक्षस आगे बढ़े और हनुमान् के ऊपर बाण बरसाने लगे। शूल, खड्ग, शक्ति, पट्टिश, परिघ, गदा, कुन्त, शतघ्नी, मुद्गर, परशु और भिन्दिपाल आदि अस्त्र-शस्त्रों से तथा वज्रतुल्य घूँसों और थप्पड़ों से हनुमान् को मारने लगे। १६—२४। इन्द्रजित् ने भी देखा कि पर्वताकार हनुमान् बेखटके राक्षसों को मारे डालते हैं, तो उसने अपने सारथि से कहा—हमारा रथ इस वानर के सामने ले चलो। सारथि रथ पर बैठे हुए इन्द्रजित् को हनुमान् के सामने ले गया, और वह हनुमान् के सिर पर बाण, खड्ग, पट्टिश, परशु आदि बरसाने लगा। हनुमान् ने झपटकर उसके चलाये हुए

अस्त्र-शस्त्र हाथ से पकड़ लिया और क्रुद्ध होकर कहा--रे मूर्ख रावण का पुत्र! यदि तू अपने को वीर समझता है तो हमसे युद्ध कर। हनुमान् के सामने आकर जीवित नहीं लौट सकता।२५-३०। रे दुर्बुद्धे, तू हमारे साथ बाहु-युद्ध कर; यदि हमारा वेग सह लेगा तो तुझे राक्षसों में श्रेष्ठ समझेंगे। यह सुनकर उसने हनुमान् को मारने के लिए अपना धनुष उठाया, उसी समय विभीषण ने लक्ष्मण से कहा--जिसने इन्द्र को जीत लिया है, वह रावण का पुत्र इन्द्रजित् यही है, जो रथ पर बैठा हुआ हनुमान् को मारना चाहता है। अतएव हे लक्ष्मण, जिनको शत्रु रोक न सके, जो लगते ही प्राणान्त कर दें, ऐसे भयानक बाणों से इसे मार डालो। शत्रुओं को भयभीत करने वाले विभीषण की यह बात सुनकर महात्मा लक्ष्मण ने रथ पर बैठे हुए महाबली दुर्धर्ष इन्द्रजित् को देखा। ३१-३५।

सर्ग ८७

धनुर्धर लक्ष्मण से यह कहकर और उनको साथ लेकर विभीषण बड़े हर्ष से आगे बढ़े। थोड़ी दूर जाकर, एक घने वन में पहुँचकर, लक्ष्मण को काले बादलों के समान बड़ा भारी बरगद का पेड़ दिखाया और कहा कि इन्द्रजित् इसी पेड़ के नीचे भूतों को बलि देकर युद्ध में जाता है, और वहाँ अदृश्य रहकर तीक्ष्ण बाणों से अपने शत्रुओं को मारता और बाँध लेता है। अतएव इस पेड़ के नीचे आने से पहले ही तुम पैने बाणों से रथ-सारथि और घोड़ों सहित उसे मार डालो। १-६। महातेजस्वी लक्ष्मण ने 'बहुत अच्छा' कहा, और धनुष की डोरी बजाते हुए वहीं खड़े हो गये। उन्होंने युद्ध में न हारने वाले इन्द्रजित् को कवच पहने, खड्ग और धनुष हाथ में लिये, अग्नि-वर्ण रथ पर बैठे हुए देखकर उसे युद्ध के लिए ललकारा। ७-६। महातेजस्वी इन्द्रजित् लक्ष्मण के साथ विभीषण को देखकर कठोर

वचन बोला—तुम राक्षस कुल में उत्पन्न हुए और वहीं पले; हमारे पिता के सगे भाई, इससे हमारे चाचा होकर भी अपने भतीजे (हम) से शत्रुता करते हो? रे मूर्ख, रे धर्मद्रोही, तुझमें न जातीयता है और न स्नेह; इसी से तुझमें धर्म नहीं रह गया और न तू अब किसी जाति का रहा। रे मूर्ख, तू अपने भाइयों को छोड़कर शत्रुओं का सेवक बन गया, इसलिए सज्जनों की दृष्टि में तू शोचनीय और निन्दनीय हो गया। १०–१३। तू यह नहीं समझता कि कहाँ अपने भाइयों के साथ रहना और कहाँ किसी नीच मनुष्य का आश्रय लेना, कितना बड़ा अन्तर है। दूसरा चाहे गुणवान् भी हो और अपना निर्गुण; किन्तु अपना निर्गुण भला और गुणवान् नहीं भला। क्योंकि गैर गैर ही है और अपना अपना ही। जो अपने पक्ष को छोड़कर दूसरे के पक्ष में जाता है वह अपने पक्ष के नष्ट होने पर उन्हीं के हाथ से मारा जाता है। हे विभीषण, तुम रावण के छोटे भाई हो और जैसी निर्दयता तुम कर रहे हो वैसी अपने कुटुम्बियों के साथ दूसरा कोई न करेगा। १४–१७। इन्द्रजित् की यह बात सुनकर विभीषण ने उत्तर दिया—हे राक्षस, हमारा स्वभाव जाने बिना तुम वृथा क्यों बकते हो? हे असाधु राक्षसपुत्र, ऐसा कठोर वचन मत कहो। हम यद्यपि राक्षसों के कुल में उत्पन्न हुए हैं, किन्तु जो गुण श्रेष्ठ पुरुषों में होते हैं, वे सब गुण हममें हैं। हमारा स्वभाव राक्षस का सा नहीं है हम अधर्म नहीं करते और न दूसरों को पीड़ित करनेवाले क्रूर कर्म ही करते हैं। देखो, भाई चाहे अच्छे स्वभाव का न भी हो, किन्तु कोई भाई उसे निकाल नहीं देता। तुम्हारे पिता ने हमको घर से निकाल दिया और हमने उनको इसलिए त्याग दिया कि सदा पाप करनेवाले धर्म के विरोधी पुरुष को त्याग देने से ही सुख मिलता है, जैसे विषधर साँप को हाथ से छोड़ देने पर ही प्राण बचते हैं। इसी से हम अपने प्राण बचाने के लिए रामचन्द्र के पास चले आये। पराया धन

हरनेवाले, परस्त्रीगामी दुष्ट पुरुष को उसी प्रकार छोड़कर चला जाना उचित है, जैसे आग से जलते हुए घर को छोड़ दिया जाता है। पराया धन हरना, परस्त्रीगमन करना और मित्रों का विश्वास न करना यह तीन दोष विनाश कर देनेवाले हैं। महर्षियों का वध, देवताओं से शत्रुता, अभिमान, क्रोध, सबसे वैर रखना, सबके प्रतिकूल काम करना, प्राण और ऐश्वर्य के विनाश करनेवाले यह सब दोष रावण में हैं। इन दोषों से उनके गुण वैसे ही छिप गये हैं, जैसे बादल पर्वत को ढक देते हैं। १८—२५। इन्हीं दोषों के कारण हमने तुम्हारे पिता, अपने भाई रावण को त्याग दिया। क्योंकि उनके कुकर्मों से तुम, तुम्हारे पिता और लंकापुरी, सबका विनाश हो जायगा। हे राक्षस, तुम अभिमानी, बालक, दुर्विनीत और काल के वश हो, जो चाहो बक लो। हे राक्षसाधम, जिस समय तुम्हारे पिता ने हमको लंका से निकाला था, उस समय तुमने भी हमको कठोर वचन कहा था, उसका फल तुमको मिला अब जो कहते हो, इसका भी फल शीघ्र ही मिलेगा। अब तुम इस बरगद के नीचे नहीं जा सकते। लक्ष्मण के साथ युद्ध करो, जिनका निरादर करते हो उन्हीं के हाथ से प्राण त्यागो और यमलोक में जाकर देवताओं का मनोरथ सफल करो। अपना बल दिखाओ और अपने अस्त्रों का प्रयोग करने में कोई कसर न उठा रक्खो। आज लक्ष्मण के बाणों से अपनी सेना सहित मारे जाओगे। २६—३०।

सर्ग ८८

विभीषण की बातें सुनकर काले घोड़े जुते हुए रथ पर सवार यमराज के समान भयानक इन्द्रजित् बड़ा भारी धनुष, खड्ग और बाण उठाकर हनुमान् की पीठ पर चढ़े हुए, उदयाचल पर स्थित सूर्य के समान तेजस्वी लक्ष्मण, विभीषण और सब वानरों से बोला—तुम

लोग हमारा पराक्रम देखो। आज हमारे धनुष से छूटे हुए बाणों को आकाश से गिरती हुई जलधारा के समान देखोगे और प्रहार सहोगे। हमारे बाण तुम लोगों के अंगों को उसी प्रकार छिन्न-भिन्न कर डालेंगे, जैसे आग रुई के ढेर को भस्म कर देती है। शूल, शक्ति, ऋष्टि और पैने बाणों से काटकर तुम लोगों को यमपुर भेजेंगे। मैं जब बरसात के बादलों के समान गरजकर बड़ी फुर्ती से बाण बरसाऊँगा तब मेरे सामने कौन खड़ा रह सकेगा ? क्या उस दिन की बात तुम भूल गये, जब हमने वज्र के समान बाणों से मारकर तुम दोनों भाइयों को पृथिवी पर सुला दिया था। तुम्हारी सेना के सब वानरों को भी मूर्च्छित कर दिया था। जान पड़ता है, अब तुम सचमुच यमलोक को जाना चाहते हो, इसी से तुमको वह बात भूल गई, और विषधर साँप के समान कुपित हमसे युद्ध करने के लिए आये। १—११।

इन्द्रजित् के यह वचन सुनकर लक्ष्मण ने उत्तर दिया—हे राक्षस, तुमने इन कामों में (युद्ध में) पार पाना कठिन बताया है। किन्तु वही पुरुष बुद्धिमान् कहाते हैं जो अपने उद्योग से कामों में सफलता प्राप्त करते हैं। तुम कठिन काम को केवल अपने मुँह से सफल कहकर अपने को कृतार्थ समझते हो। रे मूर्ख, तुमने छिपकर युद्ध में हम लोगों को मूर्च्छित कर दिया था, यह चोरों का काम है। वीर पुरुष ऐसा नहीं करते। हे राक्षस, जिस तरह हम तुम्हारे सामने खड़े हैं, उसी तरह तुम भी हमारे बाणों के सामने खड़े होकर अपनी वीरता दिखाओ, वृथा क्यों बकते हो। १२—१६।

लक्ष्मण के यह कहने पर महाबली इन्द्रजित् धनुष उठाकर पैने बाण बरसाने लगा। उसके चलाये हुए बाण विषैले साँपों के समान फुफकारते हुए बड़े वेग से लक्ष्मण के ऊपर गिरने लगे। रावण का पुत्र इन्द्रजित् वेग से चलनेवाले बाणों से लक्ष्मण को घायल कर दिया। श्रीमान् लक्ष्मण रुधिर से भीगकर विना धुयें की आग के

समान रक्तवर्ण हो गये। इन्द्रजित् अपनी यह सफलता देखकर सिंहनाद करता हुआ लक्ष्मण के समीप आकर बोला—हे लक्ष्मण, हमारे धनुष से छूटे हुए प्राण-नाशक पैने बाण आज तुम्हारा विनाश कर देंगे। तुम्हारी लाश के ऊपर झुंड के झुंड गिद्ध, बाज और सियार कूदेंगे। परम मूर्ख, क्षत्रियों के सहायक, असभ्य रामचन्द्र आज हमारे हाथ से मारे हुए अपने प्रिय भाई (तुम) को देखेंगे। हे लक्ष्मण, आज तुम्हारा कवच, धनुष और सिर हमारे बाणों से कटकर पृथिवी पर गिरेगा। १७—२५।

इन्द्रजित् के यह कठोर वचन कहने पर लक्ष्मण ने क्रुद्ध होकर उत्तर दिया—हे मूर्ख राक्षस, यह बकवाद छोड़ दे। पुरुषार्थ करके इस बात को सिद्ध कर। पुरुषार्थ किये विना वृथा क्यों बकता है। वह काम कर, जिससे तेरी बातों का हम विश्वास करें। देख, हम तुझे कठोर वचन कहे विना ही मार डालेंगे। लक्ष्मण ने यह कहकर अपने धनुष पर पाँच बाण चढ़ाये और बड़े वेग से धनुष की डोरी कान तक खींचकर इन्द्रजित् की छाती में मारे। २६—३०। कुपित साँपों के समान वे सुपुंख बाण राक्षस की छाती में सूर्य की किरणों के समान शोभित हुए। बाणों के लगने से क्रुद्ध होकर इन्द्रजित् ने तीन बाण लक्ष्मण के मारे। इस प्रकार लक्ष्मण और इन्द्रजित् का तुमुल युद्ध होने लगा। दोनों वीर महापराक्रमी, तेजस्वी और परम दुर्जेय थे। दोनों वीर आकाश में प्राप्त दो ग्रहों के समान शोभित थे, तथा इन्द्र और वृत्रासुर के समान युद्ध में दुर्धर्ष थे। दोनों वीर दो सिंहों के समान युद्ध करते थे, बड़े हर्ष से इन्द्र और शम्बरासुर के समान इस प्रकार बाण बरसाते थे, जैसे बादल पानी बरसाते हैं। ३१—३८।

सर्ग ८९

साँप की तरह लम्बी साँस छोड़ते हुए शत्रुनाशन लक्ष्मण कुपित

होकर बाण छोड़ने लगे। उनके धनुष की डोरी का शब्द सुनकर इन्द्रजित् उदास हो गया और उनकी ओर देखने लगा। इन्द्रजित् को उदास देखकर विभीषण ने लक्ष्मण से कहा—देखिए, आपके धनुष का शब्द सुनकर इसका मुँह सूख गया है। यह इसकी पराजय का एक बड़ा लक्षण है। इसलिए हे महाबाहो, इसके मारने में विलम्ब न कीजिए। अब इसे मरा समझिए, इसमें कोई सन्देह नहीं है। लक्ष्मण ने विषधर साँपों के समान तीक्ष्ण बाण चलाये। इन्द्र के वज्र के समान बाणों से घायल होकर इन्द्रजित् की सब इन्द्रियाँ व्यथित हो गईं और वह मूर्च्छित हो गया। थोड़ी देर बाद जब उसे होश आया तब उसने वीर लक्ष्मण को युद्धभूमि में अपने सामने देखा और क्रुद्ध होकर लाल-लाल आँखें करके उनके समीप आकर कठोर वचन बोला—हे लक्ष्मण, क्या तुम उस दिन की बात भूल गये, तुमको हमारे पराक्रम का स्मरण नहीं है? हमने वज्र-तुल्य बाणों से मारकर तुम दोनों भाइयों को बेहोश कर दिया था, और तुम दोनों भाई पृथिवी पर लोटते थे। वह बात तुमको स्मरण न होगी अथवा तुम यमलोक को जाना चाहते हो, नहीं तो हमसे युद्ध करने न आते। अच्छी बात है, यदि तुमने उस दिन हमारा पराक्रम नहीं देखा तो खड़े रहो अभी तुमको दिखाते हैं। १—१२। यह कहकर उसने सात बाण लक्ष्मण के, दस पैने बाण हनुमान् के और सौ बाण विभीषण के मारे। क्रोध के मारे उसका बल दुगुना हो गया। इन्द्रजित् का यह काम देखकर लक्ष्मण ने हँसकर कहा—यह तो कुछ भी नहीं है। हे राक्षस, वीर पुरुष युद्ध में ऐसे तुच्छ प्रहार नहीं करते। तुम्हारे इन प्रहारों से हम लोगों को कुछ भी क्लेश नहीं हुआ। युद्ध में विजय चाहनेवाले शूर-वीर ऐसा युद्ध नहीं करते। यह कहकर धनुर्धर लक्ष्मण ने बहुत-से बाण इन्द्रजित् के ऊपर चलाये। उन बाणों के लगने से उसका सुवर्णमय कवच टुकड़े टुकड़े होकर रथ पर गिर पड़ा, मानों आकाश से तारागण पृथिवी पर गिरे हों। कवच टूट जाने और सब

अंगों में घाव हो जाने से इन्द्रजित् प्रातःकाल के सूर्य के समान रक्त-वर्ण हो गया। १३—२०। तब भीमपराक्रमी उस वीर ने उसी दम लक्ष्मण से बदला ले लिया, एक हज़ार बाण मारकर उनका दिव्य कवच काट डाला। दोनों वीर भयानक युद्ध करते थे, लम्बी साँस छोड़ते थे और सब अंगों में बाण लगने से रुधिर से भीग गये थे। बड़ी देर तक इसी प्रकार एक-दूसरे के अंगों में पैने बाण मारते रहे। दोनों महापराक्रमी थे और अपनी-अपनी विजय के लिए प्रयत्न करते थे। दोनों वीरों के कवच और रथ की ध्वजाएँ कट गईं। वे घायल हो गये, और जैसे पर्वतों से झरने झरते हैं वैसे ही उनकी देह से गरम रुधिर बहने लगा। वे बाण बरसाते और भयानक शब्द से गरजते थे, मानों प्रलयकाल के काले बादल आकाश में घिर आये थे। इस प्रकार बड़ी देर तक युद्ध करने पर भी न कोई थका और न कोई भागा। अस्त्र-विद्या के जानकारों में श्रेष्ठ दोनों वीर अपनी-अपनी अस्त्र-कुशलता दिखाते थे। उनके बाणों से आकाश भर गया। दोनों वीर बड़ी फुर्ती और बड़ी निपुणता से प्रहार करते थे। २१—३०। दोनों के गरजने का भयानक शब्द अलग-अलग सुन पड़ता था। जैसे वज्र का शब्द सुनकर लोग काँप उठते हैं वैसे ही लक्ष्मण और इन्द्रजित् का सिंहनाद सुनकर कंपित हो गये। उनके गरजने का शब्द आकाश में बादलों के गरजने के समान शोभित होता था। युद्ध में विजय और कीर्ति चाहनेवाले दोनों बलवान् सुवर्णपुंख बाणों से घायल होकर देह से रुधिर टपकाने लगे। उनकी देह में पैठकर रुधिर से भीगे हुए सुवर्णपुंख बाण पृथिवी में धँस गये। हज़ारों पैने बाण आकाश में बाणों से कटकर और टूटकर गिर पड़े। युद्धभूमि में उसी प्रकार बाणों के ढेर लग गये, जैसे यज्ञ में अग्निकुंड के समीप कुशों के ढेर लग जाते हैं। उनके सब अंगों में घाव हो जाने से वे दोनों महात्मा ऐसे शोभित हुए जैसे वन में बिना पत्तों के फूले हुए ढाक और

सेमर के पेड़ शोभित होते हैं। लक्ष्मण और इन्द्रजित् अपनी-अपनी विजय के लिए प्रचंड युद्ध करते थे। लक्ष्मण इन्द्रजित् को और इन्द्रजित् लक्ष्मण को अस्त्रों से मारते थे, किन्तु उनमें से कोई थकता नहीं था। उनकी देह में बाण गड़ गये थे, इसलिए ऐसे शोभित होते थे, जैसे पर्वतों पर वृक्ष लगे हों। ३१-४०। उनकी देह रुधिर से भीग गई थी, चमकते हुए बाण गड़े हुए थे, अतएव वे जलती हुई आग के समान शोभित होते थे। इस प्रकार बड़ी देर तक युद्ध हुआ, किन्तु उनमें से न कोई भागा और न कोई थका। महात्मा विभीषण लक्ष्मण का उत्साह बढ़ाकर उनकी थकावट दूर करने के लिए युद्ध में उनके समीप आकर खड़े हो गये। ४१-४३।

सर्ग ९०

इस प्रकार परस्पर विजय पाने की इच्छा से लक्ष्मण और इन्द्रजित् मदान्ध हाथियों के समान युद्ध करते थे। उसी समय वीर विभीषण, श्रेष्ठ धनुष धारण किये हुए युद्धभूमि में आये। वे धनुष की डोरी बजाकर राक्षसों के ऊपर पैने बाण चलाने लगे। जैसे वज्र बड़े-बड़े पर्वतों को विदीर्ण कर देता है, वैसे ही विभीषण के चलाये हुए अग्नि के समान बाण राक्षसों का विनाश करने लगे। विभीषण के चारों साथी भी शूल, तलवार और पट्टिश आदि शस्त्रों से राक्षसों को मारने लगे। उस समय विभीषण अपने चारों साथियों के बीच में ऐसे शोभित हुए जैसे हाथी अपने बच्चों के बीच में खड़ा हो। उसी समय वीर विभीषण ने राक्षसों का वध चाहनेवाले वानरों से कहा—इन्द्रजित् के साथ तो अकेले लक्ष्मण युद्ध कर रहे हैं, तुम लोग क्यों खड़े हो? इसकी सेना को क्यों नहीं मारते? पापी इन्द्रजित् के मारे जाने पर अकेले रावण को मारना बाक़ी रह जायगा, उसकी और सब सेना मारी जा चुकी है। वीर प्रहस्त, महाबली निकुम्भ, कुम्भकर्ण,

कुम्भ, धूम्राक्ष, जम्बुमाली, महामाली, तीक्ष्णवेग, अशनिप्रभ, सुप्तघ्न, यज्ञकोप, वज्रदंष्ट्र, संह्रादी, विकट, अरिघ्न, तपन, मन्द, प्रघास, प्रघस, प्रजंघ, जंघ, अग्निकेतु, रश्मिकेतु, विद्युज्जिह्व, द्विजिह्व, सूर्यशत्रु, अकम्पन, सुपार्श्व, चक्रमाली, कम्पन, और महापराक्रमी देवान्तक तथा नरान्तक मारे गये। बल से दर्पित सब राक्षसों का विनाश किया गया। अब तुम लोगों के लिए केवल इतनी सेना का वध करना बाक़ी रहा, सो कोई कठिन काम नहीं है। जो भुजाओं से समुद्र तैर सकता है, उसके लिए गाय के खुर में भरे हुए पानी का लाँघ जाना कौन बड़ी बात है। १—१६। यद्यपि अपने भतीजे का वध करना अनुचित है, तो भी हम रामचन्द्र के काम के लिए दया छोड़कर उसके साथ युद्ध करेंगे। हम जब इसका वध करने की इच्छा करते हैं तो हमारी आँखों में आँसू भर आते हैं, इसलिए इसे मार नहीं सकते। इसे तो महाबाहु लक्ष्मण मार डालेंगे, किन्तु तुम लोग इसके सैनिकों को मारो। महायशस्वी विभीषण की यह बात सुनकर वानर बड़े हर्ष से पूँछ उठाकर गरजने लगे। जैसे बादलों को देखकर मोर बोलने लगते हैं। जाम्बवान् और रीछों के सब यूथप भी दाँतों और नखों से नोचने तथा पत्थरों से मारने लगे। राक्षसों ने निडर होकर अस्त्र-शस्त्र लेकर जाम्बवान् को घेर लिया और बाण, परशु, पट्टिश, मुद्गर और तोमर आदि से उनको मारा। वानरों और रीछों के साथ राक्षसों ने उसी प्रकार युद्ध किया, जैसे देवताओं के साथ दानवों ने किया था। हनुमान् ने लक्ष्मण को अपनी पीठ पर से उतार दिया और एक पर्वत की शिला उखाड़कर हज़ारों राक्षसों को मार डाला। वीर इन्द्रजित् थोड़ी देर विभीषण के साथ युद्ध करके शत्रुनाशन लक्ष्मण की ओर फिर दौड़ा। और दोनों वीर परस्पर युद्ध करने लगे, बाणों की वर्षा होने लगी, और जैसे बरसात में सूर्य और चन्द्रमा बादलों में छिप जाते हैं, वैसे ही वे दोनों वीर बाणों से ढक गये। महाबली लक्ष्मण और इन्द्रजित

इतनी फुर्ती से बाण चलाते थे कि उनका तरकस से बाण का निकालना, धनुष पर चढ़ाना, धनुष की डोरी खींचना और बाण छोड़ना कोई न देखता था। १७—३०। आकाश में बाण भर जाने से अँधेरा हो गया और किसी ओर कुछ न सूझता था। लक्ष्मण और इन्द्रजित् का ऐसा घोर युद्ध होने लगा कि उन दोनों वीरों को क्षण भर के लिए भी अवकाश न मिलता था। बड़ी फुर्ती से चलाये हुए बाण आकाश और सब दिशाओं में भर गये, सब ओर अँधेरा छा गया और भय मालूम होने लगा। सूर्य के अस्त होने पर जैसा अँधेरा होता है, वैसा अँधेरा हो गया। कौवा और गिद्ध आदि मांस खानेवाले पक्षी भयानक शब्द बोलने लगे। रुधिर की नदियाँ बहने लगीं, वायु का चलना बन्द हो गया, आग बुझ गई, गन्धर्व और चारण घबराकर दौड़ आये, महर्षिगण लोकों के कल्याण की प्रार्थना करने लगे। उसी समय लक्ष्मण ने चार बाणों से इन्द्रजित् के चारों घोड़ों को मारा। सुवर्ण के आभूषण पहने, काले रंग के घोड़े घायल होकर मर गये। उसके बाद लक्ष्मण ने वज्र के समान एक सुवर्णपुंख तीक्ष्ण बाण मारकर सारथि का सिर काट डाला। सारथि के मर जाने पर इन्द्रजित् स्वयं रथ हाँकने लगा। वह रथ भी हाँकता था और बाण भी चलाता था, यह देखकर सबको बड़ा आश्चर्य हुआ। जब वह रथ हाँकने लगता था, तब लक्ष्मण उसपर पैने बाण चलाते थे, और जब वह धनुष उठाता था, उसी बीच में लक्ष्मण उसके घोड़ों को मार डालते थे। वह बार-बार दूसरे घोड़े जोतकर युद्ध करता था। लक्ष्मण बड़ी फुर्ती से बाण चलाते और युद्धभूमि में निर्भय विचरते थे। सारथि के मरने पर इन्द्रजित् बहुत दुःखित हुआ। उसकी प्रसन्नता जाती रही। ३१—४५। इन्द्रजित् को दुःखित देखकर वानर प्रसन्न हुए और लक्ष्मण की प्रशंसा करने लगे। प्रमाथी, रभस, शरभ और गन्धमादन, यह चार महाबली वानर बड़े वेग से ऊपर को उछलकर इन्द्रजित् के घोड़ों पर कूद पड़े।

सिर के ऊपर पर्वताकार वानरों के कूद पड़ने से घोड़ों के मुँह से रुधिर बहने लगा और वे निर्जीव होकर पृथिवी पर गिर पड़े। उन वानरों ने घोड़ों को मारकर इन्द्रजित् का रथ भी तोड़ डाला और फिर वे बड़े वेग से कूदकर लक्ष्मण के पास लौट आये। जब इन्द्रजित् का रथ टूट गया, सारथि और घोड़े मारे गये, तब वह बाण चलाता हुआ लक्ष्मण की ओर दौड़ा। इन्द्रतुल्य पराक्रमी लक्ष्मण ने भी पैदल दौड़ते हुए इन्द्रजित् को पैने बाणों से घायल किया। ४६–५३।

सर्ग ९१

महातेजस्वी इन्द्रजित् घोड़ों के मारे जाने पर बड़ा क्रुद्ध हुआ। धनुर्धर लक्ष्मण और इन्द्रजित् दोनों वीर विजय की इच्छा से परस्पर युद्ध करते हुए श्रेष्ठ हाथियों के समान शोभित होते थे। वानर और राक्षस मार से पीड़ित होने पर भी अपने स्वामी को छोड़कर युद्ध से नहीं भागे। राक्षस इन्द्रजित् की प्रशंसा करने लगे और इन्द्रजित् राक्षसों को प्रसन्न करता हुआ बोला—हे राक्षसो, इतना अँधेरा हो गया है कि किसी ओर कुछ नहीं देख पड़ता। अपना पराया नहीं सूझता। तुम लोग निडर होकर वानरों को मोहित करने के लिए युद्ध करते रहो। हम दूसरे रथ पर चढ़ कर अभी लौट आवेंगे तुम लोग ऐसा उपाय करो कि जब तक हम नगर से लौटकर न आवें, तब तक वानर युद्ध न करें। राक्षसों से यह कहकर और वानरों को धोखा देकर इन्द्रजित् रथ लेने के लिए लंका को चला गया। वहाँ जाकर सुवर्णमय रथ पर भाला, तलवार और बाण आदि अस्त्र-शस्त्र रखकर, तेज घोड़े जोतकर, घोड़ों के हाँकने में चतुर आज्ञाकारी सारथि को लेकर महातेजस्वी इन्द्रजित् रथ पर सवार हुआ और कुछ वीर राक्षसों को साथ लेकर काल के वश बड़ी शीघ्रता से लंका से निकला। १–११। बड़े वेग से चलनेवाले घोड़े जुते हुए रथ पर सवार महापराक्रमी इन्द्रजित् लक्ष्मण और विभीषण

के सामने आ पहुँचा। उसकी यह जल्दबाज़ी और बुद्धिमानी देखकर लक्ष्मण, विभीषण और सब वानर बड़े विस्मित हुए। इन्द्रजित् ने कुपित होकर सैकड़ों-हज़ारों बाण वानर-यूथपों पर चलाये। वह बड़ी शीघ्रता से धनुष को खींचकर बाणों से वानरों को मारता था। वानर तीक्ष्ण बाणों की मार से व्यथित होकर लक्ष्मण की शरण में गये, जैसे प्रजा प्रजापति की शरण में जाती है।१२—१६। तब वीर लक्ष्मण ने कुपित होकर, हाथों की फुर्ती दिखाते हुए, बाण मारकर उसका धनुष काट डाला। उसने झट दूसरा धनुष उठाया और उसकी डोरी चढ़ाई। किन्तु लक्ष्मण ने तीन बाण मारकर उसे भी काट डाला और विषधर साँपों के समान पाँच बाण उसकी छाती में मारे। वे बाण इन्द्रजित् की छाती बेधकर उस पार निकल गये और रुधिर से लथ-पथ होकर लाल साँपों के समान पृथिवी पर गिर पड़े।१७—२०। इन्द्रजित् के मुँह से रुधिर गिरने लगा। उसने मज़बूत डोरीवाला एक बड़ा धनुष फिर उठाया, लक्ष्मण की ओर देखकर बड़ी फुर्ती से इस प्रकार बाण बरसाने लगा, जैसे इन्द्र पानी बरसाते हैं। यद्यपि इन्द्रजित् के छोड़े हुए बाणों का रोकना बहुत कठिन था, तो भी शत्रुदमन लक्ष्मण ने अनायास उन बाणों को व्यर्थ कर दिया और बड़ी सावधानी से उसे अपना अद्भुत पराक्रम दिखाया। उन्होंने बड़ी फुर्ती से एक साथ सब राक्षसों के तीन-तीन बाण मारे और इन्द्रजित् को तो बहुत-से बाण मारकर व्यथित कर दिया।२१—२५। वीर इन्द्रजित् बलवान् लक्ष्मण के बाणों से पीड़ित होने पर भी बाण चलाता रहा। किन्तु लक्ष्मण ने पैने बाणों से बीच में ही उसका बाण काट डाला और एक भल्ल बाण मारकर उसके सारथि का सिर उड़ा दिया। जब उसके रथ पर सारथि न रहा, तब घोड़े रथ लेकर इधर-उधर भागने और मंडलाकार घूमने लगे। वह बड़ा अद्भुत दृश्य हुआ। पराक्रमी लक्ष्मण ने क्रुद्ध होकर उसके घोड़ों को भी बाणों से मार डाला।

इन्द्रजित् अपना यह पराभव न सह सका और विषैले साँपों के समान भयानक दस बाण लक्ष्मण के ऊपर चलाया। किन्तु वज्र के समान होने पर भी वे बाण लक्ष्मण के सुवर्ण के समान चमकते हुए कवच में लगकर व्यर्थ हो गये। यह देखकर इन्द्रजित् समझ गया कि लक्ष्मण का कवच अभेद्य है तब उसने तीन बाण उनके माथे में मारे।२६-३२। वे तीनों बाण उनके माथे में लगे और उनका सिर तीन शिखरवाले पर्वत के समान शोभित हुआ। बाणों से विद्ध होने पर भी लक्ष्मण ने बड़ी फुर्ती से पाँच बाण कुंडलों से शोभित उसके मुँह में मारे। इस प्रकार धनुर्धर वीर लक्ष्मण और इन्द्रजित् परस्पर तीक्ष्ण बाणों से युद्ध करते थे। दोनों वीर रुधिर से भीग जाने के कारण फूले हुए ढाक के पेड़ के समान शोभित हुए। अपनी-अपनी विजय की इच्छा से एक दूसरे के अंगों में भयानक बाण मारते थे। इन्द्रजित् ने विभीषण के सिर में तीन बाण मारे। विभीषण को घायल करके उसने सब वानर-यूथपों को भी एक-एक बाण से पीड़ित किया।३३-४०। महातेजस्वी विभीषण ने क्रुद्ध होकर गदा से उसके घोड़ों को मार डाला। तब उसने रथ से कूदकर विभीषण के ऊपर एक शक्ति चलाई। उसे विभीषण की ओर आते देखकर लक्ष्मण ने पैने बाणों से उसके टुकड़े-टुकड़े कर दिये। विभीषण ने वज्र के समान पाँच बाण इन्द्रजित् की छाती में मारे। वे सुवर्णपुंख बाण उसकी छाती चीरकर निकल गये और रुधिर लग जाने से लाल साँपों के समान जान पड़े। तब इन्द्रजित् ने कुपित होकर यमराज का दिया हुआ तीक्ष्ण बाण निकाला। यह देखकर महापराक्रमी लक्ष्मण ने भी एक बाण हाथ में लिया, जिसे कुबेर ने स्वप्न में उनको दिया था। उस बाण को इन्द्र आदि देवता और दैत्य भी नहीं सह सकते थे। दोनों वीरों ने अपने-अपने बाण धनुष पर चढ़ाकर खींचा और उनके धनुष क्रौञ्च पक्षी के समान 'चूँ चूँ' करने लगे। दोनों वीरों के धनुषों पर चमकते हुए बाण बहुत ही शोभित हुए। ४१-५०। धनुष से छूटे

हुए दोनों बाणों से आकाश प्रकाशित हो गया और वे एक-दूसरे से टकराकर बड़े वेग से गिर पड़े। उन भयानक बाणों के टकराने से धुआँ और चिनगारियों सहित भयंकर आग पैदा हो गई। महाग्रह के समान दोनों बाणों के सौ-सौ टुकड़े हो गये। यह देखकर लक्ष्मण और इन्द्रजित् को बड़ी लज्जा और क्रोध आया। फिर लक्ष्मण ने वरुणास्त्र लिया और इन्द्रजित् ने रुद्रास्त्र, दोनों ने एक-दूसरे के ऊपर चलाया। लक्ष्मण के चलाये हुए वरुणास्त्र ने इन्द्रजित् के रुद्रास्त्र को नष्ट कर दिया। तब समरविजयी इन्द्रजित् ने क्रुद्ध होकर मानों तीनों लोकों को भस्म कर डालने के लिए आग्नेय बाण चलाया। लक्ष्मण ने सौर्यास्त्र चलाकर उसे व्यर्थ कर दिया। अपने बाण को व्यर्थ हुआ देखकर इन्द्रजित् मारे क्रोध के मूर्च्छित-सा हो गया। फिर उसने शत्रुओं को पीड़ित करनेवाला आसुर-अस्त्र धनुष पर चढ़ाया। उसके धनुष से सैकड़ों मुद्गर, शूल, भुशुण्डी, गदा, खड्ग और परशु छूटने लगे। यह देखकर लक्ष्मण ने एक भयानक माहेश्वर-अस्त्र चलाया। उसे कोई नहीं रोक सकता था और वह सब अस्त्रों का नाश कर सकता था। उसने इन्द्रजित् के चलाये हुए आसुर-अस्त्र को रोक दिया। ५१—६०।

लक्ष्मण और इन्द्रजित् का रोमहर्षण युद्ध देखकर आकाश में स्थित सब प्राणी लक्ष्मण की प्रशंसा करने लगे। वे सब युद्ध देखने के लिए आये थे, उनसे आकाश की बड़ी शोभा हुई। ऋषि, पितर, इन्द्र आदि देवता, गन्धर्व, गरुड़ और सर्प आदि लक्ष्मण की जय-जय करने लगे। लक्ष्मण ने एक तीक्ष्ण बाण धनुष पर चढ़ाया, वह अग्नि के समान चमकता था। इसी बाण से इन्द्रजित् का प्राणान्त होगा। उसमें सुन्दर पंख लगे थे, उसकी धार बहुत पैनी थी। वह ठौर-ठौर पर सोने से मढ़ा था। वह शत्रु को विनाश करके ही छोड़ता था। राक्षसों को भयभीत करनेवाले उस बाण को न कोई रोक सकता था और न कोई सह सकता था। वह विषधर साँप के विष के समान था। देवता भी

उसकी प्रशंसा करते थे। उसी बाण से महातेजस्वी इन्द्र ने देवासुर-संग्राम में दैत्यों को जीता था। ६१—६७। वीर लक्ष्मण वह श्रेष्ठ बाण धनुष पर चढ़ाकर डोरी खींचते हुए बोले—हे बाण, यदि रामचन्द्र धर्मात्मा, सत्यप्रतिज्ञ, और महाबली हैं तो तुम रावण के पुत्र इन्द्रजित् को मार डालो। यह कहकर बलवान् लक्ष्मण ने कान तक धनुष की डोरी खींचकर इन्द्र के मन्त्र से अभिमन्त्रित उस बाण को इन्द्रजित् के ऊपर छोड़ा। कानों में चमकते हुए कुंडलों से शोभित, शिरस्त्राण के सहित, उसका सिर धड़ से अलग होकर पृथिवी पर गिर पड़ा। रुधिर से भीगा हुआ सिर पृथिवी पर सुवर्ण के समान चमकता हुआ देख पड़ा। उसके बाद टूटा हुआ धनुष हाथ में लिये, कवच पहने, उसका धड़ भी पृथिवी पर गिरा। इन्द्रजित् के मारे जाने पर विभीषण और सब वानर वैसे ही हर्षध्वनि करने लगे जैसे वृत्रासुर के मारे जाने पर देवता प्रसन्न हुए थे। ६८—७५। आकाश में स्थित महात्मा ऋषि, देवता, अप्सराएँ और गन्धर्व भी प्रसन्न हुए। प्रसन्न वानरों ने राक्षसों की सेना को मार-पीटकर तितर-बितर कर दिया। वानरों की मार से पीड़ित राक्षस अस्त्र-शस्त्र फेंककर लंका की ओर भाग गये। बहुत-से राक्षस पट्टिश, खड्ग और परशु आदि अस्त्र युद्धभूमि में फेंककर दूसरी दिशाओं को भागे। कुछ राक्षस समुद्र में कूद पड़े, बहुत-से पहाड़ की कन्दराओं में छिप रहे और कुछ लंका को भाग गये। ७६—८०। इन्द्रजित् के साथ युद्ध में हजारों राक्षस थे, किन्तु उसके मरते ही सबके सब भाग खड़े हुए, वहाँ एक भी न दिखाई पड़ा। जैसे सूर्य के अस्त होने पर उनकी किरणें नहीं रह जातीं वैसे ही इन्द्रजित् के मरते ही उसकी सेना का एक भी राक्षस युद्धभूमि में न रह गया। प्राण निकल जाने पर इन्द्रजित् अस्त होते हुए सूर्य के समान और बुझी हुई आग के समान हो गया। उसके मरने से बहुतों का दुःख दूर हो गया। संसार प्रसन्न हुआ। उस पापी राक्षस के मारे जाने से भगवान् इन्द्र और

सब महर्षियों को बड़ा हर्ष हुआ। आकाश में देवताओं के नगाड़ों का शब्द सुन पड़ा। गन्धर्व गाने लगे, अप्सराएँ नाचने लगीं, देवताओं ने फूल बरसाये। संसार में शान्ति हो गई। आकाश और जल निर्मल हो गया, देवताओं और दानवों को बड़ा हर्ष हुआ। सब लोकों को भयभीत करनेवाले इन्द्रजित् के मरने पर देवता, दानव और गन्धर्व वहाँ आये और बड़े हर्ष से कहने लगे—अब ब्राह्मण लोग निडर होकर जहाँ चाहें वहाँ बिचरें। उनके दुःख के दिन बीत गये। राक्षसों में श्रेष्ठ, अद्वितीय पराक्रमी, इन्द्रजित् के मारे जाने पर विभीषण, हनुमान, जाम्बवान् और सब वानर प्रसन्न होकर लक्ष्मण की प्रशंसा करने लगे। वे लक्ष्मण को चारों ओर से घेरकर खड़े हो गये। हर्ष के मारे उछलने, कूदने, गरजने, पूँछ पटकने और लक्ष्मण की जय बोलने लगे। बड़े हर्ष से परस्पर गले लगते और अनेक प्रकार से लक्ष्मण की प्रशंसा करते थे। इन्द्र का शत्रु मारा गया और यह कठिन काम प्रिय सुहृद् लक्ष्मण ने किया, यह देखकर देवताओं को बड़ा हर्ष हुआ। ८१—९५।

सर्ग ९२

युद्ध में इन्द्रजित् को मारकर रुधिर से भीगे हुए लक्ष्मण बड़े प्रसन्न हुए। उसके बाद वे जाम्बवान् और बहुत-से वानरों के साथ विभीषण और हनुमान् के सहारे बड़ी शीघ्रता से रामचन्द्र और सुग्रीव के पास आये। लक्ष्मण ने रामचन्द्र को प्रणाम किया और उनके पास बैठ गये जैसे इन्द्र के पास बृहस्पति बैठते हैं। वे बहुत थके थे, अस्पष्ट शब्दों में इन्द्रजित् के वध का हाल महात्मा रामचन्द्र से कहा। उसके बाद विभीषण ने बड़े हर्ष से "महात्मा लक्ष्मण ने इन्द्रजित् को मार डाला" रामचन्द्र से निवेदन किया। महाबली इन्द्रजित् लक्ष्मण के हाथ से मारा गया, यह सुनकर रामचन्द्र बड़े प्रसन्न होकर बोले—

लक्ष्मण, तुमने बहुत बड़ा काम किया, मुझे बड़ा हर्ष हुआ। इन्द्रजित् के मारे जाने से अब तुम अपनी विजय समझो। अपनी प्रशंसा सुनकर लक्ष्मण कुछ लज्जित-से हो गये। रामचन्द्र ने उनका माथा सूँघा, छाती से लगाया और बड़े स्नेह से गोद में बैठा लिया। रामचन्द्र अपने प्रिय भाई लक्ष्मण को बार-बार देखने लगे। इन्द्रजित् के प्रहार से लक्ष्मण पीड़ित थे, लम्बी साँसें छोड़ रहे थे। उनको पीड़ित देखकर रामचन्द्र को भी बड़ा दुःख हुआ, उन्होंने फिर लक्ष्मण का माथा सूँघा, उनके सब अंगों पर हाथ फेरकर उनका उत्साह बढ़ाया। लक्ष्मण, आज तुमने बहुत बड़ा काम किया। पुत्र के मारे जाने से रावण को भी अब मरा हुआ समझो। आज हम विजयी हुए। हे वीर, तुमने दुरात्मा रावण का दाहिना हाथ काट डाला। विभीषण और हनुमान ने भी युद्ध में बड़ा काम किया। तुमने तीन दिन और तीन रात में बड़े परिश्रम से उस वीर का वध किया है। अपने पुत्र का वध सुनकर रावण बहुत बड़ी सेना के साथ युद्ध में आवेगा। पुत्र के वध से दुखी रावण को अब हम युद्ध में मार डालेंगे। हे लक्ष्मण! तुम्हारी सहायता से (इन्द्रजित् के मारे जाने से) अब हमको सीता और हमारा राज्य दुष्प्राप्य नहीं है। रामचन्द्र ने इस प्रकार लक्ष्मण को उत्साहित करके और उनको छाती से लगाकर सुषेण से कहा—हे महाप्राज्ञ, तुम लक्ष्मण की चिकित्सा करो। इनकी देह में घाव बहुत हैं, जहाँ तक सम्भव हो शीघ्र इनको स्वस्थ करो। विभीषण और अन्य सब वानरों को भी चिकित्सा करके शीघ्र स्वस्थ करो। रामचन्द्र की यह बात सुनकर सुषेण ने लक्ष्मण को एक दवा सुँघाई, उसकी गंध से उसी समय लक्ष्मण स्वस्थ हुए और उनके घावों की पीड़ा जाती रही। उसके बाद घाव भी भर गये। रामचन्द्र की आज्ञा से उसने विभीषण और अन्य प्रमुख वानरों की भी चिकित्सा की। उनकी भी व्यथा उसी समय जाती रही। लक्ष्मण स्वस्थ हो गये और बड़े उत्साह से उठकर बैठ गये, यह देखकर रामचन्द्र, सुग्रीव,

विभीषण, जाम्बवान् और सब सैनिकों को बड़ा हर्ष हुआ। महात्मा रामचन्द्र ने फिर लक्ष्मण की प्रशंसा की। सेनापति वानरों को भी इन्द्रजित् के मारे जाने से बड़ा हर्ष हुआ।

सर्ग ९३

उधर रावण के मन्त्रियों ने इन्द्रजित् के मारे जाने का हाल सुनकर बड़े दुःख से रावण के पास जाकर कहा—महाराज, लक्ष्मण ने विभीषण की सहायता से हम लोगों के देखते ही देखते महातेजस्वी इन्द्रजित् को युद्ध में मार डाला। युद्ध में किसी से न हारनेवाले इन्द्रजित्, जिन्होंने सब देवताओं सहित इन्द्र को परास्त किया था; लक्ष्मण के हाथ से मारे गये। अपने बाणों से लक्ष्मण को पीड़ित करके वे परलोक को चले गये।

अपने पुत्र के मारे जाने का हाल सुनकर रावण को बड़ा शोक और दुःख हुआ। उसे मूर्च्छा आ गई, उसकी सब इन्द्रियाँ व्याकुल हो गई। बड़ी देर के बाद जब उसे होश आया तब वह विलाप करने लगा—हा पुत्र, राक्षसी सेना के सेनापति, तुमने तो इन्द्र को जीत लिया था, आज लक्ष्मण के हाथ से कैसे मारे गये। तुम तो क्रुद्ध होकर अपने बाणों से यम को भी परास्त कर सकते थे, मन्दराचल के शिखरों को तोड़ सकते थे, तो फिर लक्ष्मण को मार डालना तुम्हारे लिए कौन बड़ी बात थी। आज हमको यह अनुभव हुआ कि काल बड़ा बलवान् है। उसी ने तुम्हारा विनाश किया। खैर, कोई बात नहीं, वीरों के लिए यही उत्तम मार्ग है। देवता भी इसे उत्तम मानते हैं। जो अपने स्वामी के लिए मारा जाता है, वह स्वर्ग को जाता है। १—९। इन्द्रजित् की मृत्यु सुनकर देवता, लोकपाल और महर्षिगण निडर होकर सुख से सोवेंगे। आज हमको एक इन्द्रजित् के विना वन और उपवनों सहित सम्पूर्ण पृथिवी और तीनों लोक सूने लगते

हैं। आज हम अन्तःपुर में राक्षसों की पुत्रियों के रोने का शब्द सुनेंगे। जैसे पहाड़ की कन्दराओं में हथिनी चिग्घारती हैं, वैसे ही आज अन्तःपुर में स्त्रियाँ विलाप करेंगी। हे शत्रुनाशन, युवराजपद को, सब राक्षसों को, लंका नगरी को, अपनी माता को, हमको और अपनी स्त्री को छोड़कर तुम कहाँ चले गये। १०–१३। हे वीर, हमारे सामने तुम यमलोक को गये, और हमको तुम्हारा प्रेतकर्म करना पड़ा, यह काम कैसा विपरीत हुआ। बेटा! राम-लक्ष्मण और सुग्रीव जीवित हैं, इस काँटे को निकाले विना (इनको मारे विना) तुम कहाँ चल दिये। १४–१५। इस प्रकार विलाप करते-करते राक्षस-राज रावण को बड़ा क्रोध आया। वह स्वभाव से ही बड़ा उग्र था, पुत्र के शोक से उसका क्रोध और भी प्रचंड हो गया, जैसे ग्रीष्म ऋतु में सूर्य की किरणें प्रचंड होती हैं। १६–१७। बड़े क्रोध से उसने जम्हाई ली, उसके मुँह से वैसे ही धुआँ उठती हुई आग की ज्वाला निकली, जैसे वृत्रासुर के मुँह से निकली थी। पुत्र के शोक से सन्तप्त क्रोधी रावण ने सीता को इसका कारण समझकर उनके वध का निश्चय किया। उसकी आँखें स्वभाव से ही कुछ लाल थीं, क्रोध के मारे और भी लाल तथा भयानक हो गईं। उसका रूप भी स्वभावतः भयानक था, उस समय क्रोध से मूर्च्छित होने के कारण कुपित रुद्र के समान हो गया। १८–२१। रावण की लाल-लाल आँखों से आँसू की बूँदें टपक पड़ीं, जैसे जलते हुए दीपकों से तेल की बूँदें गिरें। २२। क्रोध के मारे दाँत कटकटाने लगा। वह शब्द समुद्र मथते हुए दानवों के खींचने से मन्दराचल के शब्द के समान हुआ। २३। चराचर जगत् का संहार करनेवाले काल के समान कुपित रावण के पास उस समय कोई राक्षस डर के मारे जा न सका। २४। उसने बड़े क्रोध से राक्षसों से कहा—मैंने हजारों वर्ष तपस्या की है। कितनी ही बार ब्रह्मा को सन्तुष्ट किया है। अपनी तपस्या के प्रभाव से और ब्रह्मा

दान से, देवताओं और दानवों से मुझे कोई भय नहीं ।२५-२७। ब्रह्मा ने मुझे सूर्य के समान प्रकाशित कवच दिया । देवताओं और दानवों के साथ युद्ध में वज्र के प्रहार से भी नहीं टूटा ।२८। आज जब हम उस कवच को पहन-कर और रथ पर बैठकर युद्ध-भूमि में जायँगे, तो हमारे सामने आने का साहस कौन कर सकेगा । साक्षात् इन्द्र भी हमसे युद्ध करने का साहस न कर सकेंगे । देवताओं और दैत्यों के साथ हमको युद्ध करते देखकर ब्रह्मा बड़े प्रसन्न हुए थे । उन्होंने जो धनुष-बाण हमको दिया है, उसे लेकर राम-लक्ष्मण को मारने के लिए आज हम युद्धभूमि में जायँगे ।२९-३०। तुम लोग बाजे बजाते हुए जाओ और हमारा वह धनुष ले आओ ।३१। पुत्रवध के शोक से सन्तप्त रावण ने बड़े क्रोध से यह कहकर, सीता को मार डालने का विचार किया । लाल-लाल आँखों से भयानक राक्षसों की ओर देखकर वह बोला—हमारे पुत्र ने तो रामको मोहित करने के लिए मायारूपी सीता का वध किया था, किन्तु हम उस बात को आज सत्य ही करेंगे । क्षत्रियों में नीच रामचन्द्र में मन लगाये हुई सीता को मार डालेंगे । मन्त्रियों से यह कहकर उसने बड़ी जल्दी अपनी तलवार उठाई ।३२-३५। चमकते हुए श्वेत वस्त्र के समान उज्ज्वल तलवार लेकर झट उठ खड़ा हुआ । उसकी स्त्री मन्दोदरी और उसके कुछ मन्त्री भी साथ चले ।३६। पुत्र के शोक से व्याकुल कुपित रावण बड़ी शीघ्रता से वहाँ को चला जहाँ सीता बैठी थीं । उसको इस तरह जाते देखकर राक्षस बड़े प्रसन्न हुए । वे गरजने लगे और एक-दूसरे को हृदय से लगाकर कहने लगे—आज इनको देखकर राम-लक्ष्मण डर जायँगे । इसी तरह का क्रोध करके इन्होंने सब लोकपालों को जीत लिया है, और भी बहुत से शत्रुओं को मार गिराया है, तीनों लोकों के श्रेष्ठ-रत्न छीन लिये हैं । पृथिवी पर इनके समान बलवान और कोई नहीं है ।३७-४०।

राक्षस आपस में इस तरह की बातें करते हुए उसके पीछे चले जाते थे। क्रोध में भरा हुआ रावण अशोक-वाटिका में पहुँचा और तलवार उठाकर सीता की ओर दौड़ा। यद्यपि उसके मन्त्रियों ने बहुत समझाया, किन्तु उसने एक भी न सुनी। जैसे मंगल ग्रह रोहिणी की ओर दौड़े, वैसे ही रावण सीता की ओर झपटा। ४१—४२। सीता ने भी नंगी तलवार लिये हुए कुपित रावण को देखा। राक्षसियों ने भी सीता से कहा कि रावण तलवार लिये हुए आ रहा है, मन्त्रियों के रोकने पर भी वह नहीं लौटा। सीता यह सुनकर बड़े दुःख से रोने लगीं और राक्षसियों से बोलीं—क्रोध में भरा हुआ यह जिस तरह आ रहा है, इससे जान पड़ता है कि मुझ अनाथा को यह मार डालेगा। इसने कई बार मुझसे कहा है कि मैं उसे अपना पति बनाऊँ, किन्तु मैंने इसकी बात स्वीकार नहीं की। अब मेरी ओर से यह निराश हो गया है, इसलिए आज क्रुद्ध होकर मुझे मार डालने के लिए आ रहा है। ४३—४७। अथवा इस दुष्ट ने मेरे निमित्त राम-लक्ष्मण को मार डाला होगा, क्योंकि राक्षस बड़े हर्ष से गरज रहे हैं। उनका भयानक नाद मैंने सुना है। यदि मेरे निमित्त दोनों राजकुमार मारे गये तो मुझे धिक्कार है। अथवा राम-लक्ष्मण को यह नहीं मार सका और पुत्र के शोक से यह दुष्ट हमी को मार डालना चाहता हो। ४८—५०। मैंने अपनी नासमझी से हनुमान् की बात नहीं मानी, उनकी पीठ पर चढ़कर यदि चली जाती तो आज अपने पति की गोद में होती और यह सोच क्यों होता। कौशल्या जब अपने पुत्र की मृत्यु सुनेंगी, तो उनकी छाती फट जायगी, क्योंकि उनके रामचन्द्र ही एकमात्र पुत्र हैं। वे रो-रोकर इनके जन्म की, बालकपन की, और जवानी की बातों की याद करेंगी और इनके धर्म के कामों का स्मरण करेंगी। ५१—५४। वे निराश हो जायँगी। पुत्र का श्राद्ध करके या तो अग्नि में जलकर मर जायँगी, या पानी में

रहा मरेंगी। उस दुष्टा कुबरी को धिक्कार है, उसी के कारण कौशल्या को ऐसा शोक होगा।५५–५६। बेचारी सीता को इस तरह रोती हुई देखकर धर्मात्मा, बुद्धिमान्, सुपार्श्व मन्त्रियों के रोकने पर भी रावण से बोला—आप कुबेर के भाई हैं, क्रोध के कारण धर्म को छोड़कर सीता को क्यों मारते हैं ? हे राक्षसराज ! आप वीर हैं, वेदों के पारंगत हैं, अपना धर्म कर्म जानते हैं, स्त्री का वध करना आपने कैसे उचित समझा ? यह क्रोध युद्ध में दिखाइए। हम लोगों के साथ चलकर रामचन्द्र से युद्ध कीजिए। रामचन्द्र के वध के समय की प्रतीक्षा कीजिए, क्योंकि सीता बहुत सुन्दरी है।५७–६१। आज कृष्णपक्ष की चतुर्दशी है, आज युद्ध की तैयारी कीजिए और कल अमावस्या को सेना के साथ विजय करने के लिए यात्रा कीजिए। आप बुद्धिमान् हैं, वीर हैं। रथ पर सवार होकर, तलवार लेकर युद्धभूमि में चलिए और राम-लक्ष्मण का वध करके सीता को प्राप्त कीजिए। दुरात्मा रावण सुपार्श्व के यह धार्मिक वचन मानकर घर को लौट गया और मन्त्रियों को साथ लेकर वहाँ से सभाभवन को गया।६२–६४।

सर्ग ९४

पुत्रशोक से पीड़ित रावण सभा में जाकर कुपित सिंह के समान श्वास लेता हुआ बड़े दुःख से आसन पर बैठा और हाथ जोड़कर बलवान् प्रधान राक्षसों से बोला—आप लोग चतुरंगिणी सेना लेकर जावें और वर्षाकाल के बादलों की तरह बाणों की वर्षा करके राम को मार डालें। अथवा यदि आप लोग उनको न मार सकेंगे, तो आप लोगों के बाणों से पीड़ित राम को कल प्रातःकाल सब लोगों के देखते-देखते हम तो मार ही डालेंगे।१–५। राक्षसराज की यह आज्ञा मानकर वे सब राक्षस रथों पर सवार होकर सेना के साथ चले। युद्धभूमि में पहुँचते ही परिघ, पट्टिश, बाण, खड्ग और परशु आदि विनाश करने-

वाले आयुध वानरों के ऊपर छोड़ने लगे। ६—७। वानरों ने भी वृक्ष और पर्वत राक्षसों के ऊपर फेंके। यह भयानक तुमुल युद्ध सूर्योदय होते ही होते आरंभ हो गया। राक्षसों और वानरों ने गदा, परशु, प्रास और खड्ग आदि शस्त्रों का प्रहार किया। ८—१०। ऐसा भयानक युद्ध हुआ कि युद्ध की भूमि रुधिर से भर गई। रुधिर की नदी बह चली। टूटे हुए रथ और मरे हुए हाथी उस नदी की करार के समान देख पड़े। बाण मछलियों के समान, ध्वजायें वृक्ष के समान और लाशें घाट के समान देख पड़ीं। रुधिर से भीगे हुए वानर कूद-कूदकर राक्षसों की ध्वजायें, रथ, कवच, घोड़े और उनके आयुधों को नष्ट करने लगे। पैने दाँतों और नखों से राक्षसों के बाल नोचते थे और कान, नाक आदि भी काट लेते थे। एक-एक राक्षस के ऊपर सैकड़ों वानर कूद पड़ते थे, जैसे फले हुए वृक्ष के ऊपर सैकड़ों पक्षी दौड़ते हैं। ११—१५। इस प्रकार धावा करते हुए वानरों को पर्वताकार राक्षस गदा, भाला, परशु और खड्ग से मारने लगे। राक्षसों की मार से वानर व्याकुल हो गये और युद्ध से भागकर सबकी रक्षा करनेवाले रामचन्द्र की शरण में गये। तब रामचन्द्र धनुष लेकर युद्धभूमि में आये और राक्षसों की सेना के ऊपर बाणों की वर्षा करने लगे। १६—१८। बाणों की अग्नि से भस्म करते हुए रामचन्द्र के सामने राक्षस उसी प्रकार न जा सके जैसे तपते हुए सूर्य के सामने मेघ नहीं जा सकते हैं। रामचन्द्र के किये हुए ऐसे कठिन कार्य युद्ध में राक्षसों ने देखे, किन्तु बड़ी फुर्ती से रथों को तोड़ते हुए और सेना को भगाते हुए रामचन्द्र को राक्षसों ने नहीं देखा, जैसे वन में चलता हुआ वायु कहीं दिखाई नहीं देता। १९—२१। रामचन्द्र के बाणों से छिन्न-भिन्न, घायल और पीड़ित राक्षस देख पड़े, किन्तु फुर्तीले रामचन्द्र को राक्षसों ने न देखा। जैसे बाणों के प्रहार करते हुए उनको राक्षसों ने उसी प्रकार नहीं देखा, जैसे "यह इन्द्रियों का संचालन करनेवाले आत्मा को कोई नहीं देखता।

हाथियों को मारते हैं, महारथियों को मारते हैं, पैने बाणों से घोड़ों और पैदल सेना को भी मारते हैं," ऐसा कहते हुए राक्षस बेसुध से होकर राक्षसों के ही ऊपर प्रहार करने लगे। २२—२५। किन्तु सेना का विनाश करते हुए रामचन्द्र को उन्होंने न देखा, क्योंकि महात्मा रामचन्द्र ने गन्धर्व-अस्त्र से राक्षसों को मोहित कर दिया था। वे कभी तो युद्धभूमि में हज़ारों राम देखते थे और किसी समय महारथी रामचन्द्र को अकेले ही देखते थे। किसी समय घुमाते हुए सुवर्णमय धनुष की रेखा अलात चक्र के समान देख पड़ती थी, किन्तु रामचन्द्र नहीं दिखाई पड़ते थे। २६—२८। फिर राक्षसों ने कालचक्र के समान रामरूपी चक्र को देखा। उनका शरीर मानों चक्र की नाभि है, धनुष मानों नेमि है, धनुष की डोरी का शब्द मानों चक्र के चलने का शब्द है। उनका तेज और बुद्धि चक्र के आर हैं। २९—३०। वायु के समान वेगवाले दस हज़ार रथियों को, अठारह हज़ार बलवान् हाथियों को, चौदह हज़ार घुड़सवारों को, और दो लाख पैदल राक्षसों को अकेले रामचन्द्र ने पहर भर में अग्नि की शिखा के समान तीक्ष्ण बाणों से मार डाला। ३१—३३। घोड़े, रथ, ध्वजा और पताका आदि के नष्ट होने पर बचे हुए राक्षस लंका को भाग गये। मारे हुए हाथियों, घोड़ों और पैदल राक्षसों से वह रणभूमि कुपित रुद्र की क्रीड़ाभूमि के समान हो गई। रामचन्द्र का यह काम देखकर देवता, गन्धर्व, सिद्ध और महर्षिगण प्रशंसा करने लगे। ३४—३६। रामचन्द्र ने सुग्रीव, विभीषण, हनुमान्, जाम्बवान्, मैन्द और द्विविद आदि वानरों से कहा—ऐसा अस्त्र-बल मुझमें अथवा रुद्र में ही है, और किसी में नहीं है। इन्द्रतुल्य महात्मा रामचन्द्र ने राक्षसराज रावण की सेना का इस प्रकार संहार किया और इस काम को देखकर हर्षित देवताओं ने उनकी स्तुति की। ३७—३९।

सर्ग ९५

हज़ारों घुड़सवारों को, हज़ारों गजारोही राक्षसों को, घोड़े जुते हुए अग्नि के समान चमकते हुए ध्वजाओं सहित हज़ारों रथों और रथियों को, गदा और परिघ से युद्ध करनेवाले हज़ारों पैदल राक्षसों को अकेले रामचन्द्र ने सुवर्णभूषित पैने बाणों से मार डाला। उन सबको मारे हुए देखकर बचे हुए राक्षस लंका को भाग गये और राक्षसियों के साथ दुःखित होकर चिन्ता करने लगे। उन राक्षसियों में से किसी के पति, किसी के पुत्र, किसी के भाई-बन्धु मारे गये थे; वे सब बड़े दुःख से विलाप करने लगीं।१—५। वे आपस में कहने लगीं—बड़े पेटवाली बूढ़ी सूर्पणखा, कामदेव के समान रूपवान् रामचन्द्र के पास क्या करने गई थी। सुकुमार रामचन्द्र सबका हित चाहते हैं। महापराक्रमी हैं। कुरूपा सूर्पणखा मार डालने के योग्य है। जिसमें कोई भी गुण नहीं है, जिसका मुँह बड़ा ही कुरूप है, उसने गुणवान्, महातेजस्वी, सुन्दर मुखवाले रामचन्द्र को कैसे अपना पति बनाना चाहा! इसने अपने को उनकी स्त्री बनने के योग्य कैसे समझा! ६—८। और कुछ नहीं, यह हम लोगों का अभाग्य है। जिसके बाल सफ़ेद हो गये हैं, उस बूढ़ी सूर्पणखा ने हँसने के योग्य, निन्दित इस अकार्य को हम लोगों के अभाग्य से ही किया। राक्षसों के विनाश के लिए, खर-दूषण की मृत्यु के लिए यह कुरूपा रामचन्द्र के पास गई थी। ६—१०। उसी के कारण रामचन्द्र के साथ रावण का वैर हुआ और अपना विनाश कराने के लिए वह सीता को हर लाया। किन्तु उसका मनोरथ सिद्ध नहीं हुआ, क्योंकि वह सीता को नहीं पाता। व्यर्थ में बलवान् के साथ वैर हो गया, जिसका किसी तरह अन्त नहीं हो सकता। विराध राक्षस सीता के लिए गया था, उसे रामचन्द्र ने एक ही बाण से मार डाला। बस, यही एक दृष्टान्त पर्याप्त है। ११—१३। जनस्थान में चौदह हज़ार भयानक राक्षसों को अग्नि की शिखा के समान तीक्ष्ण

बाणों से अकेले रामचन्द्र ने मार डाला। खर, दूषण और त्रिशिरा का वध कर दिया। यही दृष्टान्त पर्याप्त है। १४—१५। जिसकी भुजाएँ चार कोस लंबी थीं, उस रुधिर पीनेवाले गरजते हुए कबंध को भी उन्होंने मार डाला। बस, यही दृष्टान्त पर्याप्त है। इन्द्र के पुत्र बड़े बलवान् बालि को, जो बादलों के समान गरजता था, उसे भी रामचन्द्र ने एक ही बाण से मार डाला। यही एक दृष्टान्त पर्याप्त है। दीन, दुःखी सुग्रीव को जिनके सब मनोरथ नष्ट हो गये थे, जो ऋष्यमूक पर्वत पर रहते थे, उनको वानरों का राजा बना दिया। यही एक दृष्टान्त पर्याप्त है। विभीषण ने राक्षसों के हित के लिए धर्मार्थयुक्त वचन कहे थे, किन्तु मोह के वश रावण को उनकी बातें अच्छी नहीं लगीं। यदि उनके वचन मान लेता तो आज दुःख से पीड़ित लंका स्मशान के समान न हो जाती। १६—२०। महाबली कुम्भकर्ण को रामचन्द्र ने मारा, अतिकाय को लक्ष्मण ने मार डाला, प्रिय पुत्र इन्द्रजित् भी मारा गया। इन सब बातों को देख-सुनकर भी रावण कुछ नहीं समझता। हमारा पति, भाई और पुत्र भी युद्ध में मारे गये। राक्षसियाँ इस प्रकार की बातें आपस में कहने लगीं। २१—२३। हाथी, घोड़े, रथ और पैदल सेना का हज़ारों की संख्या में वीर रामचन्द्र ने विनाश कर दिया। जान पड़ता है कि रुद्र, विष्णु, महेन्द्र अथवा यमराज रामचन्द्र का रूप धारण करके हम लोगों का विनाश कर रहे हैं। बड़े-बड़े वीरों को रामचन्द्र ने मार डाला। हम लोगों के जीवन की अब कोई आशा नहीं है। इस भय का अन्त नहीं दिखाई देता, इसलिए अनाथ होकर विलाप करती हैं। २४—२६। रामचन्द्र के हाथ से यह महाभय उपस्थित है, इस बात को रावण नहीं समझता। रामचन्द्र से युद्ध करने के लिए जब वह जायगा, तो देवता, गन्धर्व, पिशाच और राक्षस कोई भी उसकी रक्षा न कर सकेंगे। भयानक उत्पात भी देख पड़ते हैं, वे यही सूचना दे रहे हैं कि युद्ध में रामचन्द्र के हाथ से रावण

मारा जायगा। ब्रह्मा ने रावण को देवता, दानव और राक्षसों से ही अभयदान दिया है। मनुष्यों से भय न होना तो इसने माँगा ही नहीं। २७-३०। इसलिए जान पड़ता है कि रावण का और हम सब राक्षसों का भी विनाश करनेवाली यह भय मनुष्यों से उत्पन्न हुई है। इसी से हम सबका विनाश होगा ; क्योंकि वरदान पाये हुए बलवान् रावण से पीड़ित होकर देवताओं ने ब्रह्मा की तपस्या की है और महात्मा ब्रह्मा ने प्रसन्न होकर देवताओं के हित के लिए यह कहा है कि अब बहुत दिनों तक सब दानव और राक्षस भयभीत होकर तीनों लोकों में मारे-मारे फिरेंगे। इसके सिवा इन्द्र आदि सब देवताओं ने त्रिपुरासुर का वध करनेवाले महादेव को भी प्रसन्न किया है। उन्होंने देवताओं से यह कहा है कि राक्षसों को भयभीत करने के लिए और तुम लोगों के हित के लिए एक स्त्री उत्पन्न होगी। ३१-३६। उसने देवताओं की प्रेरणा से पूर्व समय में क्षुधारूप उत्पन्न होकर जैसे दानवों को खा लिया था, उसी प्रकार इस समय राक्षसों का विनाश करने के लिए सीता का रूप धारण करके आई है। यह सब राक्षसों के साथ रावण को खा लेगी। मूर्ख रावण की दुष्टता और अन्याय से यह भय हम लोगों को प्राप्त हुआ है। अब मैं संसार में ऐसा किसी को नहीं देखती जो प्रलय के समय आये हुए काल के समान रामचन्द्र से हम लोगों की रक्षा कर सके। जैसे दावाग्नि में जलती हुई हथिनियों का रक्षक कोई नहीं रहता, वैसे ही इस महाभय में पड़ी हुई हम लोगों का रक्षक कोई नहीं है। ३७-४०। विभीषण ने बड़ी बुद्धिमानी की, जिससे भय आनेवाला था, उसी की शरण में वे पहले ही चले गये। इस प्रकार आपस में कहती हुई राक्षसियाँ एक-दूसरी को गले से लगाकर दुःख शोक और भय के मारे विलाप करने लगीं। ४१-४२।

सर्ग ९६

बड़े दुःख से रोती हुई राक्षसियों का करुण शब्द लंका भर में रावण ने सुना। वह बड़ी देर तक लंबी साँस छोड़ता हुआ सोचता रहा, फिर उसे बड़ा क्रोध आया। क्रोध से लाल-लाल आँखें करके, दाँतों से होठ चबाता हुआ, भयानक कालाग्नि के समान हो गया। फिर उसने समीप बैठे हुए राक्षसों से कहा—तुम लोग शीघ्र जाकर महोदर, महापार्श्व और विरूपाक्ष से कहो कि बहुत शीघ्र सेना लेकर नगर से निकलें। १—५। उसके वचन सुनकर राक्षस बहुत डरे और बहुत शीघ्र महोदर आदि राक्षसों के पास जाकर उसकी आज्ञा सुनाई। राजा की आज्ञा से अपनी सेना लेकर वे सब युद्धभूमि को चले। प्रस्थान करते समय स्वस्त्ययन किया और रावण के पास जाकर हाथ जोड़कर प्रणाम करके, राजा की विजय चाहते हुए सामने खड़े हो गये। क्रोध से मूर्च्छित रावण बोला—आज प्रलयकाल के सूर्य के समान प्रकाशित धनुष से छूटे हुए बाणों से राम-लक्ष्मण को यमलोक में पहुँचा दूँगा। ६—१०। खर, कुम्भकर्ण, प्रहस्त और इन्द्रजित् को मारने का बदला आज ले लूँगा। हमारे बाणों से आज आकाश ढक जायगा। आकाश, अन्तरिक्ष, दिशाएँ और समुद्र कुछ भी न दिखाई देगा। ११—१२। धनुष से छूटे हुए बाणों से वानरों के यूथपों को मार डालूँगा। वायु के समान वेगवाले रथ पर सवार होकर वानरों की सेना को उसी प्रकार मथ डालूँगा, जैसे समुद्र में उठी हुई तरंगें पानी को मथ डालती हैं। १३—१४। फूले हुए कमल के समान जिनके मुँह हैं, कमल के पराग के समान जिनका रंग है, उन वानरों की सेना को उसी प्रकार मथ डालूँगा, जैसे फूले हुए कमलों से युक्त तालाब को हाथी मथ डालता है। १५। वानरों के मुँह में बाण भर दूँगा और उनके मुँह युद्धभूमि में वैसे ही दिखाई देंगे जैसे तालाब में नाल सहित कमल। वृक्ष ही जिनके अस्त्र हैं, उन वानर-यूथपों को एक-एक बाण से सौ-सौ का वध करूँगा। जिन

राक्षसों के भाई और पुत्र युद्ध में मारे गये हैं, आज शत्रुओं का वध करके उनके आँसू पोछूँगा। हमारे बाण से छिन्न-भिन्न होकर वानर पृथिवी पर गिरेंगे। वानरों की लाशों से युद्धभूमि को ऐसा ढक दूँगा कि बड़ा यत्न करने पर पृथिवी देख पड़ेगी। आज गिद्ध और कौवे आदि मांस खानेवाले जीव-जन्तुओं को शत्रुओं के मांस से तृप्त कर दूँगा। १६—२०। हमारा रथ शीघ्र तैयार करो। धनुष लाओ, और वीर राक्षस हमारे पीछे चलें। रावण की यह बात सुनकर महापार्श्व नाम का राक्षस सेनाध्यक्षों से बोला—राजा की आज्ञा से बहुत शीघ्र सेना तैयार करो। २१—२२। सेनाध्यक्षों ने प्रत्येक घर से राक्षसों को बुलवाया। गरजते हुए राक्षस खड्ग, पट्टिश, शूल, गदा, हल, मुसल, शक्ति, मुद्गर, चक्र, परशु, भिन्दिपाल और शतघ्नि आदि अनेक प्रकार के अस्त्र-शस्त्र लेकर निकले। दो घड़ी में सेना तैयार हो गई। एक लाख रथ, तीन लाख हाथी, साठ करोड़ घोड़े, असंख्य गधे, ऊँट और पैदल राजा की आज्ञा से युद्ध के लिए चले। २३—२८। उसी समय सारथि ने रथ लाकर रावण के सामने खड़ा किया। वह श्रेष्ठ रथ अनेक प्रकार के अलंकारों से सुसज्जित था। दिव्य अस्त्र उसके ऊपर रक्खे थे। अनेक प्रकार के रत्नों के स्तंभों से शोभित था, सुवर्णमय हजारों कलश उसके ऊपर रक्खे थे। उस रथ को देखकर राक्षसों को बड़ा विस्मय हुआ। कोटि सूर्य के समान और प्रज्वलित अग्नि के समान प्रकाशित था। रावण उस पर सवार हुआ। उसमें आठ घोड़े जुते हुए थे। २९—३३। राक्षसों की सेना के साथ रावण युद्ध के लिए चला। अपने पराक्रम और गंभीरता से पृथिवी को मानों विदीर्ण किये देता था। नगाड़े, मृदंग, पटह और शंख आदि युद्ध के बाजे बजने लगे। उनका गंभीर शब्द रामचन्द्र ने भी सुना और उनको विदित हो गया कि सीता का हरण करनेवाला, ब्राह्मणों और देवताओं का कंटक, दुराचारी रावण युद्ध के लिए आ रहा है। ३४—३६। सहसा उस गंभीर शब्द को

सुनकर वानर डर के मारे भागने लगे, पृथिवी काँपने लगी। महाबाहु महातेजस्वी रावण अपनी विजय के लिए मन्त्रियों के साथ चला। महापार्श्व, महोदर और विरूपाक्ष भी रावण की आज्ञा से रथ पर सवार हुए। वे सब बड़े प्रसन्न थे, राजा की विजय चाहते थे। उनके गरजने से मानों पृथिवी फटी जा रही थी। ३७—४०। कालान्तक यम के समान तेजस्वी रावण धनुष लेकर राक्षसों की सेना के साथ युद्ध करने के लिए चला। वह महारथी उस फाटक पर गया, जहाँ राम और लक्ष्मण खड़े थे। ४१—४२। रावण के चलने के समय बड़े-बड़े अशकुन और उत्पात हुए। सब दिशाओं में अँधेरा छा गया, सूर्य की प्रभा नष्ट हो गई, पृथिवी काँपने लगी और पक्षी भयानक शब्द बोलने लगे। बादलों से रुधिर मिला हुआ पानी बरसने लगा, रथ के घोड़े अकस्मात् गिर पड़े, ध्वजा के ऊपर गिद्ध बैठ गया। दाहिनी ओर सियार बोलने लगे, रावण की बाँई आँख और बाँई भुजा फड़कने लगी। उसका मुँह उदास होगया और स्वर भी कुछ धीमा पड़ गया। ४३—४५। वज्रपात के समान शब्द करती हुई उल्का गिरी। झुंड के झुंड कौवे और गिद्ध बोलते हुए मड़राने लगे। यह सब उत्पात देख-सुनकर भी रावण ने इनकी ओर कुछ भी ध्यान न दिया। वह काल के वश था, अपनी मूर्खता से अपना वध कराने के लिए चला। ४६—४८। राक्षसों की सेना को आती हुई देखकर वानरों की सेना भी युद्ध के लिए तैयार हुई। विजय चाहनेवाले कुपित वानर एक-दूसरे को ललकारने लगे। रावण बड़े क्रोध से सुवर्णभूषित बाण वानरों के ऊपर चलाने लगा। ४९—५०। बहुत-से वानरों के सिर कट गये, किसी की छाती फट गई, किसी के कान कट गये, किसी की आँख फूट गई और बहुत से वानरों के सिर फट गये। बहुत-से वानर तो रावण की साँस के वेग से ही मर गये। ५१—५२। क्रोध से आँखें घूरता हुआ, रथ पर सवार, रावण युद्धभूमि में जिधर जाता था, उधर ही उसके बाणों का वेग वानरों के यूथप नहीं सह सकते थे। ५३।

सर्ग ६७

इस प्रकार रावण के बाणों से छिन्न-भिन्न वानरों की लाशें युद्ध भूमि में भर गईं। उसके असह्य बाणों को वानर उसी प्रकार न सह सके जैसे पतंग प्रदीप्त अग्नि को नहीं सह सकते। बाणों से पीड़ित वानर रोते हुए भाग खड़े हुए जैसे वन में आग की लपट से जलते हुए हाथी भागते हैं। १—३। बाण चलाता हुआ रावण वानरों की सेना में उसी प्रकार घुसा जैसे बादलों के समूह में वायु पहुँचता है। उसने बड़ी शीघ्रता से वानरों को मारकर भगा दिया और रामचन्द्र के समीप जा पहुँचा। ४—५। वानरों को युद्ध से भागते हुए देखकर सुग्रीव ने अपने स्थान पर सुषेण को नियुक्त करके उससे युद्ध करने का इरादा किया। सुषेण उन्हीं के समान वीर थे, इसलिए वहाँ उनको नियुक्त करके, वृक्ष हाथ में लेकर युद्ध करने के लिए रावण के सामने चले। ६—७। उनके पीछे और इधर-उधर बहुत-से वानर चले, वे सब वृक्ष और पर्वत हाथों में लिये हुए थे। सुग्रीव बड़े ज़ोर से गरजे और वीर राक्षसों को मारने लगे। उन्होंने महाकाय राक्षसों को इस प्रकार मार गिराया जैसे प्रलयकाल में वायु वृक्षों को उखाड़कर फेंक देती है। ८—१०। राक्षसों की सेना के ऊपर, इस प्रकार पर्वत बरसाये, जैसे बादल वन में पक्षियों के झुंड के ऊपर ओले बरसावें। ११। सुग्रीव के चलाये हुए पर्वतों से राक्षसों के सिर और कान आदि फट गये। वे पृथिवी पर ऐसे गिरे, जैसे इन्द्र का वज्र लगने से पर्वत गिरें। १२। सुग्रीव की मार से व्याकुल होकर बहुत-से राक्षस गरजते हुए पृथिवी पर गिरे और बहुतों की तो मृत्यु हो गई। १३। यह देखकर विरूपाक्ष नाम का राक्षस धनुष लेकर रथ से उतर पड़ा। "मैं विरूपाक्ष हूँ" यह पुकारकर झट हाथी पर सवार हुआ और गरजता हुआ वह महाबली राक्षस वानरों की ओर दौड़ा। १४—१५। सेना के आगे खड़े हुए सुग्रीव के ऊपर उसने भयानक बाण चलाया और घबराये हुए राक्षसों

को ढाढ़स बँधाकर युद्धभूमि में खड़ा किया। पैने बाणों के लगने से सुग्रीव को बड़ा क्रोध आया, बड़े ज़ोर से गरजकर उन्होंने उसका वध करने का निश्चय किया। १६—१७। वीर सुग्रीव ने एक बहुत बड़ा वृक्ष उखाड़कर विरूपाक्ष के हाथी के सिर पर दे मारा, जिससे वह बड़े ज़ोर से चिग्घारता हुआ चार हाथ पीछे हट गया। अपने हाथी को इस प्रकार व्याकुल देखकर महाबली विरूपाक्ष उसकी पीठ पर से कूद पड़ा। ढाल और तलवार लेकर सुग्रीव की निन्दा करता हुआ उनके सामने जाकर खड़ा हो गया। १८—२०। यह देखकर सुग्रीव को बड़ा क्रोध आया, उन्होंने एक बड़ी शिला उठाकर उसके ऊपर फेंकी। २१—२२। शिला को अपने ऊपर आती देखकर वह राक्षस कूदकर अलग खड़ा हुआ और सुग्रीव के ऊपर खड्ग का प्रहार किया। सुग्रीव उस प्रहार से मूर्च्छित होकर पृथिवी पर गिर पड़े। दो घड़ी तक उन्हें होश नहीं आया। २३—२४। होश आने पर बड़ी शीघ्रता से दौड़कर विरूपाक्ष की छाती में एक घूँसा मारा। तब विरूपाक्ष ने क्रुद्ध होकर सुग्रीव के ऊपर फिर खड्ग का प्रहार किया जिससे सुग्रीव का कवच टूट गया। राक्षस ने बड़ी फुर्ती से लातों से मारकर सुग्रीव को गिरा दिया। सुग्रीव ने भी झट उठकर उसकी छाती में वज्र के समान एक लात मारी, किन्तु वह बचा गया। फिर उसने बड़ी फुर्ती से सुग्रीव की छाती में एक घूँसा मारा। तब सुग्रीव को बड़ा क्रोध आया, क्योंकि सुग्रीव का प्रहार तो वह बचा गया था और सुग्रीव की छाती में उसका घूँसा लगा था। उन्होंने मौका पाकर विरूपाक्ष के माथे में एक लात मारी। वज्र के समान उस लात के लगने से उसका सिर फूट गया और मुँह से रुधिर बहने लगा। वह राक्षस उस पर्वत के समान पृथिवी पर गिरा, जिससे झरने झरते हों। २५—३२। उसकी आँखें निकल आईं, मुँह से फेन सहित रुधिर बहने लगा। वानरों ने देखा कि विरूपाक्ष को सुग्रीव ने अत्यन्त विरूप कर दिया है। उसकी देह से रुधिर बहता

है, पृथिवी पर लोटता और बड़ी दीनता से रोता है।३३-३४। राक्षसों और वानरों की सेना में घोर शब्द होने लगा। दोनों सेनाएँ समुद्र के समान शोभित हुई। विरूपाक्ष के मारे जाने से वानर बड़े हर्ष से गरजने लगे और राक्षस करुण शब्द से चिल्लाने लगे, जिससे दोनों सेनाएँ बढ़ी हुई गंगा के समान शोभित हुई। ३५-३६।

सर्ग ९८

युद्ध में परस्पर मारे जाने के कारण दोनों सेनाएँ ऐसी क्षीण हो गई जैसे ग्रीष्म ऋतु में दो तालाब सूख गये हों। विरूपाक्ष की मृत्यु और सेना का विनाश देखकर राक्षसराज रावण का क्रोध दुगुना हो गया। १-२। वानरों की जीत और अपनी सेना की हार देखकर वह बड़ा व्यथित हुआ। उसने इसे दैव का कोप समझा। ३। समीप ही खड़े हुए, शत्रुओं का नाश करनेवाले, महोदर से बोला—हे महाबाहु, इस समय हम तुम्हीं से विजय की आशा करते हैं। शत्रु की सेना को मारो और अपना पराक्रम दिखाओ। हमने आज तक तुम्हारा पोषण किया है, उसके प्रत्युपकार का यही समय है। शत्रुओं से अच्छी तरह युद्ध करो। ४-५। "ऐसा ही करूँगा" यह कहकर महोदर वानरों की सेना में उसी तरह घुसा जैसे आग में पतंग घुसते हैं। महाबली महोदर ने स्वामी की आज्ञा से वानरों की सेना को तितर-बितर कर दिया। वीर वानरों ने भी बड़ी-बड़ी शिलाएँ लेकर राक्षसों की सेना में घुसकर उनका विनाश किया। ६-८। महोदर ने कुपित होकर सुवर्णभूषित बाणों से अनेक वानरों के हाथ-पैर और जाँघें काट डालीं। राक्षस की मार से व्याकुल होकर वानर भाग खड़े हुए। कोई-कोई सुग्रीव के पीछे जा छिपे। ९-१०। वानरों को भागते हुए देखकर सुग्रीव महोदर की ओर दौड़े। एक बड़ी शिला उठाकर सुग्रीव ने महोदर को मार डालने के लिए उसके ऊपर फेंकी। महोदर

ने अपने ऊपर शिला को आती हुई देखकर बड़ी सावधानी के साथ बाणों से उसे काट डाला। उसके हज़ारों टुकड़े हो गये, और गिद्धों के झुंड के समान वह पृथिवी पर गिर पड़ी। ११—१४। तब सुग्रीव को बड़ा क्रोध आया, उन्होंने एक साल का पेड़ उखाड़कर उसके ऊपर चलाया। उसने उसके भी टुकड़े-टुकड़े कर दिये। शत्रु की सेना को पीड़ित करनेवाले सुग्रीव को भी उसने बाणों से मारा। उसी समय सुग्रीव ने पृथिवी पर पड़े हुए एक परिघ को देखा। उसे उठाकर महोदर को दिखाते हुए, घुमाकर उसके घोड़ों को मारा। घोड़े गिर पड़े और मर गये। वीर महोदर झट रथ से कूद पड़ा और एक बड़ी भारी गदा उठाई। १५—१८। सुग्रीव के हाथ में परिघ थी और महोदर के हाथ में गदा। साँड़ों के समान गरजते हुए दोनों वीर चमकती हुई बिजली से शोभित बादलों के समान देख पड़े। राक्षस ने सूर्य के समान प्रकाशित गदा सुग्रीव के ऊपर चलाई। गदा को अपने ऊपर आती देखकर सुग्रीव ने बड़े क्रोध से परिघ उठाकर उस गदा में मारा। लगने से परिघ टूट गई और गदा के साथ ही वह भी पृथिवी पर पड़ी। १९—२२। तब सुग्रीव ने सुवर्णभूषित लोहे का बड़ा मुसल उठाकर महोदर के ऊपर चलाया। उधर से महोदर ने भी [illegible] उनके ऊपर फेंकी। वह सुग्रीव के चलाये हुए मुसल में लगी दोनों टूटकर पृथिवी पर गिर पड़ीं। २३—२४। जब दोनों अस्त्र टूट गये, तब वे घूँसों से एक-दूसरे को मारने लगे। दोनों [illegible], दोनों ही बलवान् थे। प्रज्वलित अग्नि के समान शोभित [illegible]। बारबार गरजते थे, परस्पर प्रहार करते थे। घूँसों की मार [illegible]रते पृथिवी पर गिर पड़े। फिर शीघ्र ही उठकर युद्ध करने [illegible] एक-दूसरे पर हाथ चलाने लगे, हार किसी की न हुई। [illegible] तक बाहुयुद्ध करते-करते दोनों थक गये। तब महोदर ने [illegible] पड़ा हुआ खड्ग उठाया, सुग्रीव ने भी एक खड्ग उठा

लिया। २५–२८। शस्त्र चलाने में निपुण दोनों वीर गरजकर बड़े क्रोध से एक-दूसरे की ओर दौड़े। दोनों विजय चाहते थे, दोनों ही क्रुद्ध थे। दोनों मंडलाकार पैतरा बदलने लगे। २९–३०। अपने बल की प्रशंसा करते हुए वीर महोदर ने खड्ग उठाकर सुग्रीव के कवच के ऊपर मारा। खड्ग उनके कवच में धँस गया और वह अपना खड्ग निकालने का उद्योग करने लगा। वानर-वीर सुग्रीव ने बड़ी फुर्ती से अपने खड्ग से उसका खड्ग काट डाला, और फिर शिरस्त्राण और कुंडल धारण किये हुए महोदर का सिर भी काट डाला। वह पृथिवी पर गिर पड़ा, यह देखकर राक्षसों की सेना भाग खड़ी हुई। उसे मारकर वानरों के साथ सुग्रीव गरजने लगे। रामचन्द्र को हर्ष हुआ और रावण को बड़ा क्रोध आया। राक्षस उदास और दुखी होकर डर के मारे भागे।३१–३५। महोदर को मारकर, बड़े भारी पर्वत के समान पृथिवी पर गिराकर, सूर्यपुत्र सुग्रीव अपने तेज से सूर्य के समान शोभित हुए। युद्ध में वानरराज सुग्रीव की विजय हुई। देवता, सिद्ध और यक्षों के समूह पृथिवी पर आकर बड़े हर्ष से सुग्रीव को देखने लगे। ३६–३७।

सर्ग ९९

महोदर को सुग्रीव ने मार डाला, यह देखकर महापार्श्व को बड़ा क्रोध आया। वह लाल-लाल आँखें करके बाणों से अंगद की सेना का विनाश करने लगा। प्रधान वानरों के सिर काटकर गिरा दिये, जैसे पवन गुच्छों से फल गिरा देता है। उस कुपित राक्षस ने किसी वानर के हाथ काट डाले और बहुत-से वानरों की बगल में बाण मारे। महापार्श्व के बाणों की वर्षा से वानर व्याकुल और मूर्च्छित होकर भागने लगे। १–४। महापार्श्व के बाणों से पीड़ित अपनी सेना को घबराई हुई देखकर अंगद बड़े वेग से दौड़े।

पूर्णमासी को समुद्र में वेग मालूम होता है, वैसे ही बड़े वेग से दौड़कर सूर्य की किरणों के समान चमकती हुई लोहे की एक परिघ महापार्श्व के ऊपर फेंकी। परिघ के लगने से महापार्श्व बेहोश हो गया और सारथि के साथ रथ के ऊपर से पृथिवी पर गिर पड़ा। ५—७। उसी समय तेजस्वी जाम्बवान् काले बादलों के समान ऋक्षों के समूह से झपटकर पर्वत के समान एक शिला उठाकर उसके घोड़ों को मार डाला और उसका रथ भी तोड़ डाला। थोड़ी देर में जब महापार्श्व को होश आया, तो उसने अंगद के ऊपर बहुत-से बाण चलाये। ८—१०। जाम्बवान् की छाती में तीन बाण मारे, गवाक्ष को भी बहुत बाणों से पीड़ित किया। गवाक्ष और जाम्बवान् को पीड़ित देखकर अंगद को बड़ा क्रोध आया और उन्होंने एक बहुत बड़ी परिघ उठाई। ११—१२। दोनों हाथों से उस परिघ को घुमाकर महापार्श्व को मार डालने के विचार से उसके ऊपर फेंकी। वह लोहे की परिघ सूर्य की किरणों के समान प्रकाशित हुई। उसके प्रहार से उस राक्षस का धनुष टूट गया, बाणों के भी टुकड़े-टुकड़े हो गये, और शिरस्त्राण भी टूटकर गिर पड़ा। १३—१५। प्रतापवान् अंगद ने बड़े वेग से दौड़कर उसकी कनपटी पर एक थप्पड़ भी जमाया। महातेजस्वी महापार्श्व बड़ा क्रुद्ध हुआ और तेल से साफ़ किया हुआ बड़ा मज़बूत एक परशु उठाकर अंगद के ऊपर चलाया। पिता के समान पराक्रमी वीर अंगद उस प्रहार को बचा गये और कुपित होकर वज्र के समान एक घूँसा उसकी छाती में मारा। १६—२१। महापार्श्व की छाती फट गई और वह पृथिवी पर गिरकर मर गया। उसके गिरने से राक्षसों की सेना भागने लगी और रावण को बड़ा क्रोध आया। वानर प्रसन्न होकर सिंह के समान गरजने लगे, उनके गरजने का शब्द सुनकर लंका नगरी व्याकुल हो गई। वानर प्रसन्न होकर इस प्रकार गरजे जैसे इन्द्र के साथ देवता गरजते हैं। इन्द्र का शत्रु राक्षसराज रावण

देवताओं और वानरों का गरजना सुनकर बड़े क्रोध से युद्ध के लिए उद्यत हुआ। २२—२५।

सर्ग १००

महोदर, महापार्श्व और महाबली विरूपाक्ष के मारे जाने पर रावण को बड़ा क्रोध आया। उसने सारथि से कहा—मन्त्रियों के मारे जाने का और लंका नगरी के घिरने का दुःख, आज हम राम-लक्ष्मण को युद्ध में मारकर मिटा देंगे। सीता जिसमें फल और पुष्परूप है, सुग्रीव जाम्बवान्, कुमुद, नल, द्विविद, मैन्द, अंगद, गन्धमादन, हनुमान, सुषेण, और अन्य सब वानरों के यूथप, जिसकी शाखाएँ हैं, उस वृक्षरूप रामचन्द्र को हम काट डालेंगे। १—५। महान् अतिरथ रावण यह कहकर रथ के शब्द से सब दिशाओं को नादित करता हुआ बड़े वेग से रामचन्द्र की ओर दौड़ा। उसके रथ का शब्द नदी, पर्वत और वन में सर्वत्र फैल गया, पृथिवी डगमगाने लगी, मृग, पक्षी और सिंह डर गये। उसने बड़ा भयानक अस्त्र चलाया, जिससे सब वानर जलने लगे। बहुत-से पृथिवी पर गिर पड़े। ६—८। बहुत-से वानर भाग खड़े हुए। उनके भागने से बड़े जोर से धूलि उठी। वानर उस ब्रह्मास्त्र को नहीं सह सके। रावण के बाणों से पीड़ित वानरों की सेना को भागती हुई देखकर रामचन्द्र उससे युद्ध करने के लिए चले। ९—१०। लक्ष्मण भी उनके साथ चले जैसे विष्णु के साथ इन्द्र चलें। उनके हाथ में बहुत बड़ा धनुष था, वह मानों आकाश को छू रहा था। लक्ष्मण के साथ महातेजस्वी रामचन्द्र ने वानरों को भागते हुए और रावण को आते हुए देखकर अपना धनुष सँभाला। धनुष का टंकार किया, जिसके शब्द से पृथिवी विदीर्ण-सी हो गई। ११—१५। रावण के बाण-समूह से और रामचन्द्र के धनुष के शब्द से सैकड़ों राक्षस गिर पड़े। राजकुमार रामचन्द्र और लक्ष्मण

के समीप रावण वैसे ही जान पड़ा, जैसे सूर्य और चन्द्रमा के समीप राहु आया हो। पहले लक्ष्मण ने उसके साथ युद्ध करने की इच्छा से अपना धनुष चढ़ाकर अग्नि की शिखा के समान तीक्ष्ण बाण चलाये। १६—१८। किन्तु महातेजस्वी रावण ने अपने बाणों से धनुर्धर लक्ष्मण के चलाये हुए बाणों को आकाश ही में रोक दिया। हाथों की फुर्ती दिखाते हुए रावण ने लक्ष्मण के धनुष से छूटे हुए एक बाण को एक बाण से, तीन बाणों को तीन बाणों से और दस बाणों को दस बाणों से काट डाला। १९—२०। फिर वह लक्ष्मण की परवा न करके पर्वत के समान स्थित रामचन्द्र के सामने आया और क्रोध से लाल-लाल आँखें करके उनके ऊपर बाणों की वर्षा करने लगा। २१—२२। रावण के धनुष से छूटे हुए बाणों को आते देखकर उन्होंने बड़ी फुर्ती से भल्ल बाण निकाला और उन पैने बाणों से विषधर साँपों के समान भयानक, चमकते हुए, उसके बाणों को काट डाला। २३—२४। रामचन्द्र रावण के ऊपर और रावण रामचन्द्र के ऊपर परस्पर अनेक प्रकार के पैने बाणों की वर्षा करने लगे। २५। परस्पर कोई किसी से हारते न हुए, बाणों के समान वेग से इधर-उधर कूद कूदकर कभी बाईं ओर से दाहिनी ओर और कभी दाहिनी ओर से बाईं ओर मंडलाकार घूमने लगे। २६। यम और अन्तक के समान भयानक राम और रावण को परस्पर बाणों की वर्षा करते देखकर सब प्राणी डर गये। दोनों ओर से निरन्तर अनेक प्रकार के बाणों के छूटने से आकाश उसी प्रकार भर गया, जैसे वर्षाकाल में बिजली सहित बादलों से भर जाता है। २७—२८। बड़े वेग से चलनेवाले, कंकपत्र लगे हुए, पैने बाणों की वर्षा होने से आकाश में गवाक्ष-से बन गये। महामेघों के समान उठे हुए रामचन्द्र और रावण ने सूर्य अस्त होने के पहले ही बाणों की वृष्टि से अन्धकार कर दिया। २९—३०। एक दूसरे को मार डालना चाहता था। इन्द्र और वृत्रासुर के युद्ध से भी

बढ़कर भयानक युद्ध हुआ। दोनों वीर महाधनुर्धर थे और दोनों ही युद्ध करने में बड़े निपुण थे। दोनों अस्त्र के जाननेवालों में श्रेष्ठ थे, दोनों ही युद्ध में विचरते थे। ३१—३२। जिधर वे दोनों वीर जाते थे, उनके साथ-साथ वायु के वेग से समुद्र की तरंगों के समान बाणों की तरंगें जाती थीं। संसार को रुलानेवाले रावण ने रामचन्द्र के माथे में बहुत से बाण मारे। भयानक धनुष से छूटे हुए बाणों को रामचन्द्र ने नीलकमलों के समान धारण किया। वे कुछ भी व्यथित नहीं हुए। ३३—३५। रामचन्द्र ने बड़े क्रोध से रौद्र बाण धनुष पर चढ़ाकर रौद्र मन्त्र जपते हुए बड़े वेग से धनुष की डोरी खींचकर रावण के ऊपर चलाया। किन्तु वह बाण रावण के अवध्य कवच पर लगा, इस कारण उसे कुछ भी व्यथित न कर सका। सब प्रकार के अस्त्र चलाने में कुशल रामचन्द्र ने रथ पर बैठे हुए रावण के माथे में एक बाण मारा। ३६—३८। वह बाण रावण के माथे में लगा, किन्तु उसने ऐसा निवारण किया कि वह पँचमुहे साँप के समान फुफकारता हुआ पृथिवी पर गिरा और धँस गया। रामचन्द्र के बाण को विफल करके क्रोध से मूर्च्छित रावण ने भयानक आसुरास्त्र निकाला। ३९—४०। सिंह और बाघ के मुख के आकारवाले, कंक, कोक, गिद्ध, बाज और शृगाल के मुख के आकारवाले, भेड़ियों के समान मुँहवाले, पँचमुँहे साँपों के समान जीभ लपलपाते हुए, इत्यादि अनेक प्रकार के बाण उसने चलाये। ४१—४२। गधे, सुअर, कुत्ते, मुर्गे और विषधर साँपों के मुखों के आकारवाले, पैने बाण, साँप के समान फुफकारते हुए रावण ने बड़े क्रोध से रामचन्द्र के ऊपर चलाये। ४३—४४। अग्नि के समान तेजस्वी रामचन्द्र ने इन अस्त्रों को देखकर बड़े उत्साह से आग्नेय अस्त्र निकाले। अग्नि के समान प्रज्वलित मुखवाले, सूर्य के समान प्रकाशित मुखवाले, ग्रहों, नक्षत्रों और उल्काओं के समान चमकते हुए और बिजली के समान लपलपाते हुए अनेक प्रकार के अस्त्र रामचन्द्र

ने चलाये। उन बाणों से रावण के चलाये हुए बाण आकाश में ही टुकड़े-टुकड़े हो गये। रामचन्द्र ने अनायास ही रावण के बाणों को नष्ट कर दिया यह देखकर सुग्रीव आदि सब वानरों को बड़ा हर्ष हुआ। रावण के धनुष से छूटे हुए बाणों को रामचन्द्र ने काट डाला, यह देखकर वानर प्रसन्न होकर ऊँचे स्वर से गरजने लगे। ४५—५०।

सर्ग १०१

उस अस्त्र के नष्ट हो जाने पर राक्षसराज रावण का क्रोध दुगुना हो गया। उसने क्रोध के मारे मयदानव का बताया हुआ बड़ा भयानक अस्त्र रामचन्द्र के ऊपर चलाया। उस अस्त्र से शूल, गदा, मुशल और वज्र के समान दृढ़ चमकते हुए और भी बहुत-से अस्त्र निकले। मुद्गर, कूट, पाश और चमकते हुए वज्र ये सब बड़े वेग से चले, जैसे युग के अन्त में पवन चलता है। १—४। अस्त्र चलाने में श्रेष्ठ महातेजस्वी रामचन्द्र ने गन्धर्व अस्त्र से रावण के उस अस्त्र को भी काट डाला। महात्मा रामचन्द्र ने अस्त्र को काट डाला, यह देखकर क्रोध से लाल-लाल आँखें करके रावण ने और अस्त्र चलाया। ५—६। उस अस्त्र से भी बहुत बड़े-बड़े चमकते हुए अस्त्र निकले। यह सब अस्त्र बुद्धिमान् रावण के धनुष से छूटने लगे। उन चमकते हुए अस्त्रों से आकाश प्रकाशित हो गया, जैसे चन्द्रमा और सूर्य आदि ग्रहों से सब दिशाएँ प्रकाशित होती हैं। ७—८। रावण के चलाये हुए चक्र और अन्य सब आयुधों को रामचन्द्र ने बाणों से काट डाला। अपने अस्त्रों को कटे हुए देखकर रावण ने रामचन्द्र के सब मर्म स्थानों में दस-दस बाण मारे। ९—१०। उन बाणों के लगने से महातेजस्वी रामचन्द्र कम्पित नहीं हुए। उन्होंने भी बड़े क्रोध से रावण के सब अंगों में बहुत-से बाण मारे। ११—१२। उसी समय शत्रुओं का नाश करनेवाले महाबली लक्ष्मण ने कुपित होकर सात बाण निकाले। १३। उन बाणों से रावण के रथ का ध्वज

काट डाला। उसका ध्वज मनुष्य के सिर के आकार का था।१४। एक बाण से कुंडल पहने हुए सारथि का सिर काट डाला। पाँच बाण मारकर हाथी की सूँड़ के आकार का उसका धनुष भी काट डाला। १५—१६। उसी बीच में विभीषण ने अपनी गदा से रावण के रथ के आठों घोड़ों को मार डाला, जो पर्वताकार और काले बादलों के समान काले थे। घोड़ों के मारे जाने पर रावण रथ से कूद पड़ा और विभीषण के ऊपर बड़ा क्रुद्ध हुआ।१७—१८। उसने वज्र के समान चमकती हुई महाशक्ति विभीषण के ऊपर चलाई। लक्ष्मण ने बड़े पैने तीन बाण मारकर उसे ऊपर ही काट डाला। यह देखकर वानर गरजने लगे। सुवर्ण की माला से भूषित रावण की शक्ति बाणों से तीन खंड होकर आकाश से गिरी और चिनगारी निकलती हुई उल्का के समान शोभित हुई।१९—२१। तब रावण ने शत्रु के प्राण हरनेवाली, काल से भी कठोर, अपने तेज से चमकती हुई एक बड़ी भारी शक्ति विभीषण को मारने के लिए उठाई। दुरात्मा रावण के हाथ में वह शक्ति इन्द्र के वज्र के समान चमकी। लक्ष्मण ने देखा कि इसके प्रहार से विभीषण बच नहीं सकते। तब उन्होंने बड़ी फुर्ती से धनुष पर बाण चढ़ाकर शक्ति उठाये हुए रावण के ऊपर चलाया। लक्ष्मण के बाणों से रावण ऐसा व्याकुल हो गया कि विभीषण के ऊपर शक्ति न चला सका। विभीषण को लक्ष्मण ने बचा लिया, यह देखकर वह लक्ष्मण के सामने खड़ा होकर बोला—अपने बल की प्रशंसा करनेवाले हे लक्ष्मण, तुमने विभीषण को इस उपाय से बचा लिया है, इसलिए अब विभीषण को छोड़कर तुम्हारे ही ऊपर यह शक्ति चलाता हूँ। २२—२८। परिघ के समान हमारे हाथों से छोड़ी हुई यह शक्ति तुम्हारा हृदय विदीर्ण करके रुधिर से रँगकर, तुम्हारे प्राण ले लेगी। उस शक्ति में आठ घंटा बँधे थे, मय की माया से बनी थी। वह शत्रुघातिनी शक्ति कभी निष्फल नहीं होती थी। रावण बड़े क्रोध से उस शक्ति को लक्ष्मण के ऊपर

फेंककर बड़े ज़ोर से गरजा। २६–३१। वज्र के समान गंभीर शब्द करती हुई वह शक्ति बड़े वेग से लक्ष्मण के ऊपर चली। उस शक्ति को देखकर रामचन्द्र ने कहा—रावण का यह उद्यम व्यर्थ हो, यह शक्ति निष्फल हो जावे, लक्ष्मण का कल्याण हो और उनके प्राण बचें। ३२–३३। क्रुद्ध रावण की चलाई हुई शक्ति विषधर साँप के समान वेग से जाकर लक्ष्मण की छाती में धँस गई। वह शक्ति सर्प-राज की जीभ के समान लपलपाती थी। दूर से रावण की फेंकी हुई शक्ति के प्रहार से लक्ष्मण की छाती में घाव हो गया और वे पृथिवी पर गिर पड़े। ३४–३६। उनकी यह दशा देखकर समीप ही खड़े हुए महातेजस्वी रामचन्द्र को भाई के स्नेह से बड़ा दुःख हुआ। वे थोड़ी देर तक शोक के मारे आँसू बहाते रहे। फिर उन्होंने युगान्त की अग्नि के समान क्रोध किया। ३७–३८। यह विषाद करने का समय नहीं है यह सोचकर, उन्होंने रावण का वध करने के लिए बड़ा भयानक युद्ध किया। रामचन्द्र ने लक्ष्मण को बड़े यत्न से देखा। उनका हृदय विदीर्ण हो गया था, देह में रुधिर लगा हुआ था, जान पड़ता था कि साँप लिपटा हुआ कोई पर्वत पड़ा है। ३९–४०। बलवान् रावण की चलाई हुई शक्ति को बहुत यत्न करने पर भी कोई वानर तोड़ न सका। जब वे उस शक्ति की ओर चलते थे, तब रावण उनको बाणों से मारकर पीड़ित कर देता था। वह शक्ति लक्ष्मण की छाती चीरकर पृथिवी में धँस गई थी। सबको भयभीत करनेवाली उस शक्ति को बलवान् रामचन्द्र ने बड़े क्रोध से दोनों हाथों से पकड़कर तोड़ डाला। जब वे लक्ष्मण की छाती से खींच रहे थे, उस समय बलवान् रावण ने उनके सुकुमार अंगों में बहुत-से बाण मारे। ४१–४४। किन्तु बाणों की कुछ भी परवा न करके लक्ष्मण को गले से लगाकर रामचन्द्र ने हनुमान् और सुग्रीव से कहा—तुम सब लोग लक्ष्मण को घेर कर खड़े हो जाओ, यह समय पराक्रम करने का है। इस समय को हम बहुत

दिनों से चाहते थे। पापात्मा रावण को हम मारेंगे, इसकी प्रतीक्षा हम उसी प्रकार करते थे, जैसे चातक बादलों की प्रतीक्षा करता है। ४५—४७। हम सत्य प्रतिज्ञा करते हैं, थोड़ी ही देर में तुम लोग देखोगे, रावण अथवा राम दो में से एक नहीं है। राज्य का छूटना, वन में रहना, दंडकवन में घूमना, सीताहरण, राक्षसों का समागम, इन सब बातों से हमने नरक के समान दुःख उठाया है। आज युद्ध में रावण को मारकर उन सब दुःखों को दूर करेंगे। ४८—५०। जिसके लिए हम वानरों की सेना यहाँ लाये, जिसके लिए युद्ध में वालि को मारकर सुग्रीव को राजा बनाया, जिसके लिए समुद्र को अपने बल से भयभीत किया और समुद्र में सेतु बाँधा, वह पापी रावण इस समय हमारे सामने खड़ा है। ५१—५२। सामने आकर अब यह जीवित नहीं बच सकता, जैसे जिसकी दृष्टि में विष है उस साँप के सामने आकर कोई नहीं बचता और जैसे गरुड़ की दृष्टि में पड़कर साँप नहीं बचता। ५३—५४। इसलिए हे वानरो, तुम लोग पर्वत पर बैठकर सुख से हमारा और रावण का युद्ध देखो। यक्ष, सिद्ध, गन्धर्व, चारण आदि और तीनों लोक युद्ध में राम का पराक्रम देखें। आज हम वह काम करेंगे, जिसका बखान चराचर जगत् और सब देवता, जब तक पृथिवी रहेगी, तब तक करते रहेंगे। ५५—५७। यह कहकर रामचन्द्र सुवर्णभूषित पैने बाणों से रावण को मारने लगे। जैसे रावण भी उसी तरह बाणों और मुसलों की वर्षा करने लगा जैसे बादल पानी बरसाते हैं। दोनों ओर से बाणों के चलने का बड़ा भयानक शब्द हुआ। राम और रावण के बाण आकाश में परस्पर लड़कर टूट-टूटकर पृथिवी पर गिरने लगे। सब प्राणियों को भयभीत करनेवाला भयानक शब्द उनके धनुष का हुआ। ५८—६२। धनुर्धर महात्मा रामचन्द्र के बाणों की वृष्टि से पीड़ित होकर रावण डरकर वायु के द्वारा उड़ाये हुए बादलों के समान भाग खड़ा हुआ। ६३।

सर्ग १०२

बलवान् रावण की शक्ति के प्रहार से लक्ष्मण को रुधिर से लथपथ देखकर, उस दुष्ट के ऊपर बाण छोड़ते हुए रामचन्द्र ने सुषेण से कहा—रावण के पराक्रम से लक्ष्मण पृथिवी पर गिरकर साँप की तरह लोट रहे हैं, यह हमारा शोक बढ़ाते हैं। ये हमको प्राणों से भी बढ़कर प्रिय हैं। इनको रुधिर से भीगे और पृथिवी पर पड़े देखकर मुझमें ऐसी शक्ति कहाँ है, जो मैं युद्ध कर सकूँ। १—४। युद्ध में प्रशंसा पानेवाले लक्ष्मण यदि मर गये तो मुझे अपने प्राणों और सुखों से क्या प्रयोजन है। इनकी यह दशा देखकर हमारा पराक्रम लज्जित-सा हो गया है। हाथ से धनुष गिरा पड़ता है, बाण गिरे जा रहे हैं, आँसुओं के मारे दृष्टि बन्द हो गई है, सब अंग उसी तरह काँपते हैं, जैसे दुःस्वप्न देखने से काँपने लगते हैं। चिन्ता बढ़ती जाती है, जी चाहता है कि हम भी मर जायँ। ५—७। दुरात्मा रावण की शक्ति से मर्मस्थान में घाव होने से पीड़ित, बड़े दुःख से कराहते हुए लक्ष्मण को देखकर रामचन्द्र को बड़ा दुःख हुआ और वे विलाप करने लगे। ८—९। उन्होंने लक्ष्मण को सम्बोधित करके कहा—अब विजय भी हमको प्रिय नहीं है। चन्द्रमा अन्धे को क्या प्रसन्न करेगा। अब युद्ध करने से क्या लाभ है। जीवित रहने से ही क्या है। युद्ध का तो अब कोई काम ही नहीं रह गया, क्योंकि हमारे प्राणों से भी प्रिय लक्ष्मण मारे हुए पड़े हैं। १०—११। वन को आते समय जिस तरह ये हमारे पीछे चले आये हैं, उसी तरह हम भी अब इनके पीछे यमलोक को चले जायँगे। १२। हाय, हमारी आज्ञा का पालन करनेवाले, हमारे प्रिय बन्धु लक्ष्मण को मायावी राक्षसों ने इस अवस्था को पहुँचाया। पुरुष किसी भी देश को जावे, स्त्रियाँ सब जगह मिल सकती हैं। बान्धव भी सब देशों में मिल सकते हैं, किन्तु ऐसा कोई देश मैं नहीं देखता, जहाँ सगा भाई मिल सके। १३—१४। लक्ष्मण के विना राज्य से हमारा क्या प्रयोजन है।

पुत्रवत्सला सुमित्रा से हम क्या कहेंगे। १५। सुमित्रा हमारी निन्दा करेंगी, हम उसे सह न सकेंगे। कौसल्या, केकयी, महाबली भरत और शत्रुघ्न, जब हमसे पूछेंगे कि तुम्हारे साथ लक्ष्मण भी वन को गये थे, उनको तुम कहाँ छोड़कर चले आये तब हम क्या कहेंगे। १६–१७। इसलिए बन्धुओं से निन्दित होने की अपेक्षा यहीं मर जाना अच्छा है। मैंने पूर्व जन्म में कौन पाप किया है, जिससे परम धार्मिक भाई मारा हुआ मेरे आगे पड़ा है और मैं देखता हूँ। मनुष्यों में श्रेष्ठ, वीरों में श्रेष्ठ, हे लक्ष्मण, तुम मुझे छोड़कर अकेले परलोक को क्यों चले जा रहे हो। रोते हुए मुझसे क्यों नहीं बोलते। १८–२०। उठो, बोलो, क्या सो रहे हो, मुझ दुखिया को देखो। जब मैं शोक से पीड़ित और व्याकुल होकर पर्वतों और वनों में घूमता था, बहुत उदास रहता था, तब तुम मुझे समझाते थे। अब क्यों नहीं समझाते ? इस तरह शोक से रोते हुए रामचन्द्र को आश्वासन देते हुए सुषेण बोले—हे पुरुषश्रेष्ठ, युद्ध में बाणों के समान व्याकुल करनेवाली, शोक उत्पन्न करनेवाली, इस बुद्धि को छोड़ दीजिए। लक्ष्मी बढ़ानेवाले लक्ष्मण मरे नहीं हैं। २१–२४। क्योंकि इनके मुख में कोई विकार नहीं देख पड़ता। मुँह के ऊपर कालापन नहीं आया है। मुख सुन्दर, प्रसन्न और प्रभायुक्त है। हथेलियाँ कमलपत्र के समान हैं, और आँखें प्रसन्न हैं। निर्जीव मनुष्यों में यह लक्षण नहीं दिखाई देते। २५–२६। हे वीर, विषाद न कीजिए, लक्ष्मण जीवित हैं। इनके अंग तो शिथिल हो गये हैं, ये पृथिवी पर सो रहे हैं, किन्तु श्वास चल रही है, क्योंकि हृदय बार-बार काँपता है। रामचन्द्र से यह कहकर बुद्धिमान् सुषेण ने समीप खड़े हुए हनुमान् से कहा—हे वीर, जाम्बवान् जिस पर्वत को तुम्हें पहले बता चुके हैं, उस पर्वत पर तुम शीघ्र जाओ। उसके दक्षिण शिखर पर विशल्यकर्णी, सावर्ण्यकर्णी, संजीवकर्णी और संधानी ये चार ओषधियाँ हैं। लक्ष्मण को जीवित करने के लिए शीघ्र उनको ले आओ। २७–३१। सुषेण के यह कहने

पर हनुमान् उस पर्वत पर गये, किन्तु ओषधियों को न पहचानने के कारण उनको बड़ी चिन्ता हुई। महापराक्रमी हनुमान् ने यह विचार किया कि इस शिखर को ही उखाड़ ले जायँगे। जान पड़ता है कि इसी शिखर पर वे ओषधियाँ हैं। सुषेण ने जिस शिखर को बताया है, वह यही है। ३२–३४। यदि विशल्यकर्णी न ले जाऊँगा, अथवा समय बीत जाने पर ओषध भी पहुँची तो बड़ी हानि होगी। ३५। यह सोचकर महाबली हनुमान् ने उस शिखर को तीन बार हिलाया। फिर उसे उखाड़ लिया। उसके ऊपर अनेक प्रकार के वृक्ष फूले हुए थे, पानी भरे हुए काले बादलों के समान उस शिखर को लेकर आकाश-मार्ग से चले।३६–३८। बड़े वेग से लंका में पहुँचे। शिखर को रखकर कुछ विश्राम करके सुषेण से बोले—हे वानरश्रेष्ठ, हम उन ओषधियों को पहचान नहीं सके, इसलिए पर्वत का यह शिखर उठा लाये हैं।३९–४०। सुषेण ने यह कहते हुए हनुमान् की प्रशंसा की और उस शिखर से ओषधियाँ उखाड़ीं। देवताओं के लिए भी जो काम दुष्कर है, उस काम को हनुमान् ने किया, यह देखकर वानरों को बड़ा विस्मय हुआ।४१–४२। सुषेण ने उस ओषध को पीसकर लक्ष्मण को सुँघाया। उसे सूँघते ही उनकी पीड़ा दूर हो गई, वे स्वस्थ होकर उठ बैठे। ४३–४४। लक्ष्मण को बैठे हुए देखकर वानर बड़े प्रसन्न हुए और उनकी प्रशंसा करने लगे। 'आओ आओ' कहकर रामचन्द्र ने बड़े प्रेम से उनको छाती में लगा लिया और आँखों में आँसू भर-कर कहा—हे वीर, बड़े भाग्य से हमने तुमको देखा। तुम मरकर फिर लौटे हो। ४५–४७। तुम्हारे मर जाने पर मुझे अपने जीवन से कोई प्रयोजन न था। युद्ध में विजय पाना और सीता का मिलना भी व्यर्थ था। ४८। ऐसा कहते हुए महात्मा रामचन्द्र से दुःखित लक्ष्मण शिथिल वाणी से बोले—हे सत्यपराक्रम, आपने राक्षसों का वध करने की प्रतिज्ञा की है। आपको ऐसी सत्त्वविहीन लघु बातें न

कहनी चाहिए।४६—५०। सत्यवादी लोग अपनी प्रतिज्ञा को मिथ्या नहीं करते, क्योंकि प्रतिज्ञा का पालन करना ही महत्त्व का लक्षण है। ५१। हे अनघ, हमारे लिए आपको निराश होना उचित नहीं है। रावण को मारकर अपनी प्रतिज्ञा पूरी कीजिए। ५२। आपके बाणों के वश में आकर शत्रु उसी प्रकार जीवित न लौटेगा, जैसे पैनी दाढ़ोंवाले गरजते हुए सिंह के सामने आकर हाथी जीवित नहीं बच सकता। हम चाहते हैं कि सूर्यास्त के पहले ही इस दुरात्मा रावण का वध हो जाय। ५३—५४। हे वीर, युद्ध में यदि रावण को मारने की आपकी इच्छा हो, यदि आप अपनी प्रतिज्ञा पूरी करना चाहते हों, यदि आप राजकुमारी सीता को पाने की अभिलाषा रखते हों, तो शीघ्र ही रावण का वध कीजिए। ५५।

सर्ग १०३

लक्ष्मण के यह वचन सुनकर रामचन्द्र ने अपना धनुष चढ़ाया और रावण को मारने के लिए भयानक बाण राक्षसों की सेना पर चलाया। राक्षसराज रावण भी दूसरे रथ पर सवार होकर रामचन्द्र के सामने वैसे ही दौड़ा, जैसे राहु सूर्य की ओर दौड़ता है। १—२। रथ पर बैठा हुआ रावण वज्र के समान बाण रामचन्द्र के ऊपर बरसाने लगा जैसे बादल बड़े भारी पर्वत के ऊपर पानी की धारा बरसावें। ३। रामचन्द्र ने भी अंगारों के समान चमकते हुए सुवर्णभूषित बाण रावण के ऊपर चलाये। ४। देवता, गन्धर्व और किन्नर यह युद्ध देखकर बोल उठे कि रामचन्द्र पृथिवी पर खड़े हैं और रावण रथ पर सवार है, इसलिए यह युद्ध ठीक नहीं है। ५। उनके यह वचन सुनकर इन्द्र ने अपने सारथि मातलि को बुलाकर कहा—हमारा रथ लेकर पृथिवी पर खड़े हुए रामचन्द्र के पास शीघ्र जाओ और उनको इस रथ पर सवार कराओ। तुम देवताओं का हित करो। इन्द्र के

यह कहने पर मातलि झुककर प्रणाम करके बोला—हे देवेन्द्र, हम शीघ्र ही जायँगे और सारथि का काम करेंगे। यह कहकर उसने हरे रंग के घोड़े रथ में जोते। ६—९। वह सुवर्णमय रथ बहुत विचित्र बना हुआ था। सौ क्षुद्र घंटिकाओं से भूषित था, प्रातःकाल के सूर्य के समान प्रकाशित था। उसमें वैडूर्यमणि के गुम्बज लगे थे। उसमें जुते हुए घोड़े सुवर्ण के आभूषण पहने थे। श्वेत चँवर उस पर रक्खा था। सुवर्ण के आभूषणों से भूषित घोड़े सूर्य के समान प्रकाशित थे। सुवर्णमय ध्वज लगा था। देवराज इन्द्र की आज्ञा से मातलि उस रथ को लेकर आकाश से उतरा। हाथ में चाबुक लिये, रथ पर बैठा हुआ मातलि, रामचन्द्र के समीप आकर हाथ जोड़कर बोला—हे महासत्त्व, हे शत्रुनाशन, सहस्राक्ष इन्द्र ने आपकी विजय के लिए यह रथ आपको दिया है। इस पर इन्द्र का बड़ा भारी धनुष, अग्नि के समान प्रकाशित कवच, सूर्य के समान प्रकाशित बाण रक्खे हैं। चमकती हुई पैनी शक्ति भी रक्खी है। १०—१५। हे वीर, इस रथ पर सवार होकर रावण को मारिए जैसे इन्द्र ने दानवों का विनाश किया है। मैं आपका सारथि हूँगा। मातलि के यह कहने पर रामचन्द्र ने उस रथ को प्रणाम किया। फिर उसकी प्रदक्षिणा करके अपने तेज से तीनों लोकों को शोभित करते हुए उस रथ पर सवार हुए। १६—१७। उधर रावण रथ पर सवार था, इधर महाबाहु रामचन्द्र भी रथ पर सवार हुए। बड़ा अद्भुत रोमहर्षण युद्ध होने लगा। १८। अस्त्रों के जानकार रामचन्द्र ने रावण के चलाये हुए गन्धर्वास्त्र को गन्धर्व अस्त्र से दैवास्त्र को दैवास्त्र से काट डाला। उन अस्त्रों के कट जाने पर क्रुद्ध होकर रावण ने बड़ा भयानक राक्षसास्त्र चलाया। १९—२०। रावण के धनुष से सुवर्णभूषित जो बाण छूटे, वे विषैले साँप होकर रामचन्द्र की देह में लगे। उन बाणों के अग्रभाग अंगारों के समान चमकते थे। मुँह बाये हुए साँपों के समान रामचन्द्र के ऊपर आने

लगे। वासुकि के समान महाविषधर साँपों से सब दिशाएँ भर गईं। २१—२३। रामचन्द्र ने उनको अपने ऊपर आते देखकर साँपों को भयभीत करनेवाला गरुड़ास्त्र चलाया। रामचन्द्र के धनुष से छूटे हुए सुवर्णपुंख, अग्नि के समान प्रकाशित, साँपों के शत्रु गरुड़रूप बाण सब ओर चले। २४—२५। रामचन्द्र के गरुड़रूप बाणों ने रावण के सर्परूप बाणों को नष्ट कर दिया। २६। रावण का राक्षसास्त्र जब नष्ट हो गया तब वह क्रुद्ध होकर बाणों की भयानक वृष्टि करने लगा। २७। एक हज़ार बाणों से रामचन्द्र को पीड़ित करके सारथि को भी बहुत-से बाण मारकर व्यथित किया। २८। एक बाण से सुवर्णमय पताका को काटकर गिरा दिया। इन्द्र के घोड़ों को भी बहुत बाण मारे। यह देखकर देवता, गन्धर्व, दानव और चारण आदि सब उदास हो गये। २९—३०। रामचन्द्र को बाणों से पीड़ित देखकर सिद्ध और महर्षिगण बड़े दुखी हुए। विभीषण और सब वानरों को भी बड़ा दुःख हुआ। चन्द्रमा के समान रामचन्द्र को राहुरूप रावण से ग्रस्त देखकर चन्द्रमा के प्रिय नक्षत्र रोहिणी पर बुध चला गया। यह योग प्रजा का अहित करनेवाला होता है। और भी बहुत-से अनिष्टसूचक अशुभ होने लगे। समुद्र में बड़े वेग से लहरें उठने लगीं, मानों वे बड़े क्रोध से उछलकर सूर्य का स्पर्श करेंगी। सूर्य श्यामवर्ण हो गये और उनकी किरणें मन्द हो गईं। कबन्ध उनकी गोद में देख पड़ा, केतु भी उनके साथ दिखाई दिया। इक्ष्वाकु-वंशी राजाओं का विशाखा नक्षत्र है, उस नक्षत्र पर मंगल ग्रह आया। दस सिर और बीस भुजावाला, हाथ में धनुष लिये हुए रावण मैनाक पर्वत के समान दिखाई दिया। ३१—३६। दशग्रीव से पीड़ित रामचन्द्र उसके बाणों को व्यर्थ नहीं कर सके। उनको बड़ा क्रोध आया, आँखें कुछ लाल हो गईं, भौंहें चढ़ाकर ऐसे कुपित हुए मानों राक्षसों को भस्म कर देंगे। कुपित रामचन्द्र का मुँह देखकर सब प्राणी डर गये,

पृथिवी काँपने लगी, सिंह और शार्दूल सहित पर्वत हिल गये। पर्वतों के ऊपर के वृक्ष भी काँपने लगे, नदियों का पति समुद्र चलायमान हो उठा।३७–४०। गधे कठोर शब्द बोलने लगे। आकाश में बादल गरजने लगे, उत्पातसूचक शब्द करते हुए सब ओर घूमने लगे। रामचन्द्र को कुपित देखकर और ये सब उत्पात देखकर सब प्राणी डर गये। रावण को भी बड़ा भय हुआ।४१–४२। विमानों पर बैठे हुए देवता और गन्धर्व प्रलय के समान यह युद्ध देखते थे। ऋषि, दानव, दैत्य, गरुड़, नाग और सब आकाशचारी उस युद्ध को देखने लगे। वीर रामचन्द्र और रावण अनेक प्रकार के भयानक आयुधों से युद्ध करते थे।४३–४४। देवता और दानव उस युद्ध को देखकर बड़े प्रसन्न हुए। देवता बारबार पुकारकर रामचन्द्र से कहते थे, कि तुम्हारी विजय हो, और दानव दशग्रीव की जय बोलते थे।४५–४६। उसी समय रामचन्द्र के ऊपर प्रहार करने के लिए दुष्टात्मा रावण ने क्रुद्ध होकर वज्र के समान शूल उठाया। वह भयानक शूल पर्वत के शिखर के समान भारी था। धुआँ उठती हुई प्रलयकाल की अग्नि के समान भयानक था। काल भी बड़े दुःख से उसे सह सकता था। सब प्राणियों को भयभीत करनेवाला, सबको विदीर्ण करनेवाला और शत्रुओं का विनाश करनेवाला था। रावण ने बड़े क्रोध से उसे उठाया।४७–५०। राक्षसों की सेना भी उसके साथ खड़ी थी। अपनी सेना को प्रसन्न करता हुआ महाकाय रावण शूल उठाकर गरजने लगा। घोर नाद से पृथिवी, अन्तरिक्ष और सब दिशाओं को उसने कँपा दिया। उस दुरात्मा के गरजने का शब्द सुनकर सब प्राणी डर गये। समुद्र क्षुभित हो उठा।५१–५४। महाबली रावण शूल उठाकर बड़े ज़ोर से गरजकर कठोर वचन बोला—हमने वज्रसम यह शूल बड़े क्रोध से उठाया है। यह तुम दोनों भाइयों के प्राण निकाल लेगा।५५–५६। तुम युद्ध में अपनी बड़ाई चाहते हो, किन्तु आज हम तुमको मारकर युद्ध में मरे हुए वीर राक्षसों

के समान कर देंगे। खड़े रहो, तुमको शूल से अभी मार डालेंगे। यह कहकर रावण ने रामचन्द्र के ऊपर शूल चलाया। ५७—५८। रावण के हाथ से छूटा हुआ, बिजली के समान चमकता हुआ, वह शूल आकाश में शोभित हुआ। उस भयानक शूल को देखकर रामचन्द्र ने उसे काट डालने के लिए बहुत-से बाण चलाये। ५९—६०। अपने ऊपर गिरते हुए शूल को रोकने के लिए उन्होंने बहुत-से बाण मारे, जैसे प्रलय के समय उठे हुए अग्नि को शान्त करने के लिए इन्द्र पानी बरसाते हैं। किन्तु उस शूल ने रामचन्द्र के धनुष से छूटे हुए बाणों को उसी प्रकार नष्ट कर दिया जैसे अग्नि पतंगों को भस्म कर देता है। ६१—६२। शूल में लगने से उनके सब बाण टूट गये, यह देखकर रामचन्द्र को बड़ा क्रोध हुआ। तब उन्होंने मातलि की लाई हुई इन्द्र की शक्ति उठाई। उस शक्ति को जब बलवान् रामचन्द्र ने उठाया तो युगान्त के समय चमकती हुई उल्का के समान उसने आकाश को प्रकाशित कर दिया। ६३—६५। रामचन्द्र ने उसे चलाया, वह रावण के शूल के ऊपर गिरी। उस शक्ति के लगने से शूल टूटकर पृथिवी पर गिर पड़ा। फिर रामचन्द्र ने सीधे चलनेवाले, वज्र के समान तीक्ष्ण बाणों से रावण के रथ के सब घोड़े मार डाले। ६६—६७। तीन बाण रावण के माथे में और बहुत-से पैने बाण छाती में मारे। और भी सब अंगों में बाण मारकर उसे घायल कर दिया। रुधिर से भीगा हुआ रावण फूले हुए अशोक के समान शोभित हुआ। उसके अंगों में बाण लगे और वह रुधिर से भीग गया। तब उसे बड़ा खेद हुआ और अत्यन्त क्रोध आया। ६८—७०।

सर्ग १०४

युद्ध में प्रशंसा चाहनेवाला रावण रामचन्द्र के बाणों से पीड़ित होकर बड़ा कुपित हुआ। क्रोध के मारे उसकी आँखें लाल हो गईं। वह

अपना धनुष उठाकर रामचन्द्र की ओर दौड़ा।१–२। जैसे वर्षा काल में
बादल पानी बरसाकर तालाब को भर देते हैं, वैसे ही उसने हज़ारों बाण
मारकर रामचन्द्र के सब अंगों को भर दिया।३। सब अंगों में बाण लगने
पर भी रामचन्द्र बड़े भारी पर्वत के समान कंपित नहीं हुए।४। रामचन्द्र के
बाणों को रोकने के लिए रावण ने सूर्य की किरणों के समान प्रकाशित
बाण निकाले और क्रुद्ध होकर एक हज़ार बाण उनकी छाती में
मारे। बाणों के लगने से रुधिर बहने के कारण रामचन्द्र वन में फूले
हुए पलाश वृक्ष के समान दिखाई दिये। ५–७। तब उनको बड़ा
क्रोध आया। उन्होंने प्रलय काल के सूर्य के समान प्रचंड बाण चलाये।८।
राम और रावण का घोर संग्राम हुआ। बाणों के मारे अन्धकार छा
गया। दोनों वीर दिखाई नहीं देते थे। ६। तब वीर रामचन्द्र को बड़ा
क्रोध आया! वे हँसकर कठोर वचन रावण से बोले—हे अधम राक्षस,
हमारा पराक्रम जाने विना, सीता को अकेली पाकर जनस्थान से हर
लाये हो, इससे तुम बलवान् नहीं हो गये।१०–११। हम आश्रम पर नहीं
थे, बेचारी सीता वन में अकेली बैठी थीं। तुम उनका हरण करके अपने
को वीर समझते हो। १२। अनाथ स्त्रियों पर वीरता दिखानेवाले,
पराई स्त्री को हरनेवाले तुम ऐसा निन्दित काम करके भी अपने को
जीवित समझते हो।१३। हे निर्लज्ज! हे आचारभ्रष्ट! हे मर्यादा को
बिगाड़नेवाले! गर्व से पराई स्त्री को चुराकर जो तेरी मृत्यु का कारण है,
अपने को वीर समझता है। १४। कुबेर के भाई, वीर और बहुत बड़ी
सेना के स्वामी होकर तुमने बड़ा निन्दित और तुच्छ काम किया।
चोरी करना क्या ऐसे लोगों का काम है? १५। अहंकार से यह
निन्दित काम जो तुमने किया है, उसका फल आज भोगो। रे मूर्ख
रावण! तू चोरी से सीता को लेकर भागा है, ऐसा काम करके भी तुझे
लज्जा नहीं आती और अपने को वीर समझता है। यदि हमारे सामने
सीता का तिरस्कार करता, तो वहीं मेरे बाणों से निहत होकर अपने

भाई खर को देखता। १६–१८। बड़े भाग्य से तू आज हमारे सामने आया है। बाणों से मारकर अभी तुझे यमलोक को भेजते हैं।१९। आज हमारे बाणों से कटा हुआ कुंडल सहित तेरा सिर गिद्ध और सियार नोचेंगे। २०। हे रावण! आज हमारे बाणों से निहत होकर तुम पृथिवी पर गिरोगे और गिद्ध तुम्हारी छाती पर बैठकर बड़े हर्ष से रुधिर पियेंगे। २१। जैसे गरुड़ बिल में घुसे हुए साँपों को पकड़कर खींच लेते हैं, वैसे ही गिद्ध तुम्हारी आँतें पकड़कर खींचेंगे। इस प्रकार कहते हुए रामचन्द्र समीप ही खड़े हुए रावण के ऊपर बाणों की वर्षा करने लगे। २२–२३। शत्रु को मारने की इच्छा से उस समय उनका बल, वीर्य, हर्ष और अस्त्रों का बल दुगुना हो गया। हर्ष बढ़ने के कारण सब अस्त्रविद्या उनको स्मरण हो आईं। हाथों में बड़ी फुर्ती भी हो गई। यह सब शुभ लक्षण देखकर उनका हर्ष और भी बढ़ा, फिर वे रावण को बाणों से पीड़ित करने लगे। २४–२६। वानरों ने भी रावण के ऊपर शिलाओं की वर्षा कर दी। रामचन्द्र ने भी बहुत से बाण मारे। तब रावण बहुत व्याकुल हो गया। २७। धनुष खींचने और अन्य किसी शस्त्र के उठाने की शक्ति उसमें न रह गई। उसे व्याकुल देखकर रामचन्द्र ने बाण चलाना बन्द कर दिया। २८। जो बाण रामचन्द्र ने मारे थे, वही उसकी मृत्यु के लिए पर्याप्त थे, क्योंकि उसका मरण-काल आ गया था। उसकी यह दशा देखकर सारथि उसका रथ लेकर युद्ध से भागा। २९–३०। रावण का पराक्रम नष्ट हो गया था, वह घायल होकर गिर पड़ा था, यह देखकर सारथि डर के मारे बादलों के समान शब्द करता हुआ रथ लेकर बड़े वेग से भाग गया। ३१।

सर्ग १०५

जब रावण की मूर्च्छा जागी तो अपना रथ युद्धभूमि के बाहर

देखकर क्रोध के मारे आँखें लाल करके सारथि से बोला—युद्धभूमि से हमारा रथ भगाकर तुमने बड़ा अपमान कराया। क्या तुमने हमको अशक्त, हीनवीर्य, पौरुष से रहित, डरपोक, तुच्छ, बलहीन, तेजहीन, माया न जाननेवाला, और अस्त्रों का न जाननेवाला समझा? हे मूर्ख, तुमने हमारी आज्ञा के विना अपनी बुद्धि से ऐसा क्यों किया? तुमने हमारे विचार की ओर ध्यान ही नहीं दिया। शत्रु के सामने से रथ भगाकर हमारा अपमान कराया। १—४। हे अनार्य, बहुत दिनों में उपार्जन किये हुए हमारे यश, वीर्य, तेज और विश्वास को तूने नष्ट कर दिया। ५। युद्ध की सदा अभिलाषा रखनेवाले हमको, प्रसिद्ध पराक्रमी शत्रु के सामने से हटाकर तुमने हमको कायर बना दिया। ६। हे मूढ़, अब भी तू हमारा रथ शत्रु के सामने नहीं ले चलता, इससे जान पड़ता है कि शत्रु की ओर से तेरा कुछ सत्कार किया गया है। हमारा यह तर्क बिलकुल सत्य है। ७। तेरा यह काम शत्रुओं का-सा काम है, क्योंकि हित चाहनेवाला सुहृद् ऐसा काम कभी नहीं करता। ८। तुम बहुत दिनों से हमारे यहाँ रहते हो। यदि उसका कुछ ध्यान तुमको है और हमारे गुणों का स्मरण है, तो शत्रु के लौट जाने के पहले ही हमारा रथ युद्धभूमि में पहुँचाओ। ९। रावण के यह कठोर वचन कहने पर हित चाहनेवाला सारथि बड़ी नम्रता से हित के वचन बोला—मैं डरा हुआ नहीं हूँ, मूढ़ भी नहीं हूँ, शत्रुओं से मैंने घूस भी नहीं ली है। मतवाला नहीं हूँ, आपका शत्रु भी नहीं हूँ। आपके किये हुए सत्कार को भी नहीं भूला हूँ। मैंने आपका हित करने के लिए, आपके यश की रक्षा करने के लिए, आपके स्नेह से आपके हित के लिए यह काम किया है। किन्तु आप उसे अहित समझते हैं। १०—१२। महाराज, मैं आपका प्रिय और हित चाहता हूँ। इस विषय में अनार्य और नीच पुरुष की तरह आप मुझे दोष न दें। १३। मैं जिस कारण से युद्धभूमि से रथ को हटा लाया हूँ, वह आपको

बताता हूँ, सुनिए—युद्ध करते-करते आप थक गये थे, आपको थका हुआ देखकर मैंने सोचा कि बल दिखाने का यह समय नहीं है। घोड़े भी बहुत थक गये थे, पसीने में ऐसे सराबोर थे, मानों पानी में भीगे हुए थे और बहुत व्याकुल थे। १४—१६। अशकुन भी बहुत होते थे, जिनको देखकर मुझे अमंगल की आशंका हुई। हे महाबल, सारथि को उचित है कि देश, काल, लक्षण, चेष्टा, दीनता, हर्ष और खेद का ध्यान रक्खे। खाईं और गड्ढे देखे रहे, ऊँची-नीची भूमि का भी ध्यान रहे। युद्ध का समय जाने रहे और शत्रुओं के छिद्र भी देखता रहे। किस समय शत्रु के समीप रथ ले जाना चाहिए, किस समय दूर रखना चाहिए, किस समय शत्रु के सामने रखना चाहिए और कब हट जाना चाहिए, इन सब बातों का ध्यान रखना सारथि का कर्तव्य है। १७-२०। मैं इन सब बातों को अच्छी तरह जानता हूँ, इससे आपके और इन घोड़ों के विश्राम के लिए, भयानक खेद से बचाने के लिए, मैंने यह उचित काम किया है। २१। हे वीर, हे प्रभो, मैं स्वेच्छा से रथ को नहीं हटा लाया। आपके स्नेह के कारण रथ को यहाँ ले आया हूँ। अब जो आपकी आज्ञा हो, सो मैं करूँ और आपके ऋण से उद्धार हो जाऊँ। २२—२३। सारथि की इन बातों से रावण संतुष्ट हुआ और उसकी प्रशंसा करके बोला——हे सूत, अब शीघ्र ही रामचन्द्र के सामने रथ ले चलो, क्योंकि युद्ध में शत्रुओं को मारे विना रावण नहीं लौटेगा। २४—२५। यह कहकर राक्षसराज रावण ने हाथ का एक आभूषण सारथि को दिया और उसने रावण की ये बातें सुनकर रथ को लौटाया। २६। रावण की आज्ञा से सारथि ने घोड़ों को हाँका और क्षण भर में रथ को रामचन्द्र के सामने पहुँचा दिया। २७।

सर्ग १०६

रावण युद्ध करने के लिए रामचन्द्र के सामने खड़ा था। वह युद्ध

थका हुआ और चिन्तित था। उसे देखकर भगवान् अगस्त्य देवताओं के साथ युद्ध देखने के लिए रामचन्द्र के समीप आकर बोले—हे महाबाहु रामचन्द्र! यह सनातन, परमगुह्य, आदित्यहृदय नाम का स्तोत्र सुनो—इसको धारण करके युद्ध में सब शत्रुओं को जीतोगे। यह स्तोत्र शत्रुओं का नाश करनेवाला, पवित्र, कल्याण करनेवाला और अक्षय है। यह सब पापों का नाश करता है, मंगल कामों में मंगल करता है। चिंता और शोक को दूर करता है और आयु को बढ़ाता है।१–५। इसलिए तुम भी भगवान् भास्कर की पूजा करो। देवता और दानव सब उनको नमस्कार करते हैं। वे तीनों लोकों के स्वामी हैं, विवस्वान् और रश्मिमान् आदि उनके अनेक नाम हैं। वे बड़े तेजस्वी हैं, अपनी किरणों से सब लोकों को प्रकाशित करते हैं। सब देवता उनमें निवास करते हैं। देवताओं, दैत्यों और सब लोकों की रक्षा वे ही करते हैं। वही ब्रह्मा हैं, वही विष्णु हैं, शिव, स्कन्द, प्रजापति, महेन्द्र, कुबेर, काल, यम, चन्द्रमा, वरुण, पितर, वसु, साध्य, अश्विनी-कुमार, मरुद्गण, मनु, वायु, अग्नि भी वही हैं। प्रजा, प्राण और ऋतुओं के कर्ता भी वही हैं। वही सबको प्रकाशित करते हैं। ६–९। उनके अनेक नाम हैं—आदित्य, सविता, सूर्य, खग, पूषा, गभस्तिमान्, सुवर्णसदृश, भानु, हिरण्यरेता, दिवाकर, हरिदश्व, सहस्रार्चि, सप्तसप्ति, मरीचिमान्, तिमिरोन्मथन, शम्भु, त्वष्टा, मार्तंड, अंशुमान्, हिरण्यगर्भ, शिशिर, तपन, अहस्कर, रवि, अग्निगर्भ, अदितिपुत्र, शंख, शिशिरनाशन, व्योमनाथ, तमोभेदी, ऋग्यजुस्सामपारग, घनवृष्टि, अपांमित्र, विन्ध्यवीथी, प्लवंगम, आतपी, मण्डली, मृत्यु, पिंगल, सर्वतापन, कवि, विश्व, महातेज, रक्त, सर्वभवोद्भव, ग्रहनक्षत्रताराधिप, विश्वभावन और द्वादशात्मा। वे सब तेजस्वियों में तेजस्वी हैं, तुम उनको नमस्कार करो। १०–१५। पूर्व के पर्वत पर उदय होनेवाले, पश्चिम के पर्वत पर अस्त होनेवाले,

ज्योतिर्गण के स्वामी, दिन के अधिपति को नमस्कार है। १६।
जय, जयभद्र, हरिदश्व, सहस्रांशु और आदित्य को बार बार नमस्कार है। उग्र, वीर, सारंग, पद्मप्रबोध, प्रचंड, ब्रह्म, ईशान, अच्युतांशु, सूर, आदित्यवर्चस्, भास्वान्, सर्वभक्ष, रौद्र और वपुष को नमस्कार है। १७-१९। तमोघ्न, हिमघ्न, शत्रुघ्न, अमितात्मा, कृतघ्नहन्ता, ज्योतिष्पति और देव को नमस्कार है। २०। हरि, विश्वकर्मा, तमोभिनिघ्न, तप्तचामीकर, रुचि, लोकसाक्षी को नमस्कार है। २१। ये भगवान् भास्कर प्रलय के समय संहार करते हैं, फिर यही सृष्टि करते हैं और सबका पालन करते हैं। ये तपते हैं और अपनी किरणों से पानी भी बरसाते हैं। २२। सबके सो जाने पर भी ये जागते रहते हैं। अग्निहोत्र यज्ञ यही हैं और अग्निहोत्र करनेवालों को फल भी यही देते हैं, । यज्ञ, यज्ञों के देवता, यज्ञों के फल और भी जितने कृत्य लोकों में होते हैं उन सबके परमप्रभु यही हैं। २३-२४ हे रामचन्द्र, जो मनुष्य विपत्ति के समय, कैसा ही कठिन कष्ट पड़ने पर, भय के समय, वनों में कहीं भी इनका स्मरण करता है, वह कष्ट नहीं पाता। २५। तुम इस स्तोत्र को तीन बार जपो और एकाग्रचित्त से देव-देव जगत्पति सूर्य की पूजा करो। युद्ध में तुम्हीं जीतोगे। २६। हे महाबाहु, ऐसा करने से इसी क्षण में तुम रावण को मारोगे। इतना कहकर अगस्त्य मुनि जहाँ से आये थे, वहीं चले गये। २७। मुनि के ये वचन सुनकर महातेजस्वी रामचन्द्र का शोक दूर होगया। उन्होंने बड़े हर्ष से उस स्तोत्र को धारण किया। २८। सूर्य की ओर देखकर उन्होंने उस स्तोत्र का जप किया। फिर तीन बार आचमन करके पवित्र होकर अपना धनुष उठाया। २९। रावण को देखकर वे बड़े प्रसन्न हुए। युद्ध के लिए आगे बढ़े और उसका वध करने के लिए प्रयत्न करने लगे। ३०। देवताओं के बीच में स्थित सूर्य भगवान् बड़े प्रसन्न हुए। रावण की मृत्यु का समय जानकर, रामचन्द्र की ओर देखकर बोले—शीघ्र इसका वध करो। ३१।

सर्ग १०७

रावण का रथ गन्धर्व नगर के आकार का था। उसके ऊपर बड़ी ऊँची पताका लगी थी। सुवर्ण की माला पहने हुए घोड़े जुते थे, सब अस्त्र-शस्त्र रक्खे थे। ऊँची ध्वजा मानों आकाश को छू रही थी। वह पृथिवी को निनादित कर रहा था, शत्रुओं की सेना का विनाश करनेवाला था। सारथि ने बड़े हर्ष से रथ को आगे बढ़ाया। रामचन्द्र ने महानाद करते हुए रथ को सामने आते हुए देखा। उसमें बड़ी ऊँची ध्वजा लगी थी, उसके चलने का शब्द बड़ा ही गम्भीर था। उसमें बड़े भयानक काले घोड़े जुते थे। आकाश में प्रकाशित सूर्य के समान था, विमान के समान शोभित था, पताका बिजली के समान चमक रही थी। इन्द्र के धनुष के समान धनुष शोभित था। १—६। पानी बरसाते हुए बादलों के समान, बाण छोड़ते हुए शत्रु को सामने देखकर रामचन्द्र, वज्र के प्रहार से विदीर्ण हो रहे पर्वत के शब्द के समान धनुष का टंकार करके, जो द्वितीया के चन्द्रमा के समान टेढ़ा था, इन्द्र के सारथि मातलि से बोले—हे मातलि! देखो, शत्रु का रथ आ रहा है। ७—६। युद्ध में हमको मारने के विचार से यह बड़े वेग से बाईं ओर को आता है। इसलिए तुम सावधान हो जाओ, शत्रु के रथ के सामने रथ ले चलो, क्योंकि जैसे वायु बादलों को छिन्न-भिन्न कर देती है, वैसे ही हम इस रथ का विध्वंस करना चाहते हैं। १०—११। भय और घबराहट को दूर करके, सावधान होकर, बुद्धि और नेत्र स्थिर करके, घोड़ों की बाग सम्हालो और शीघ्र रथ ले चलो। १२। यद्यपि तुमको सिखाने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि तुम इन्द्र के सारथि हो। हम एकाग्र होकर युद्ध करना चाहते हैं, इसलिए तुमको सावधान करते हैं, सिखाते नहीं हैं। १३। रामचन्द्र की बातों से प्रसन्न होकर मातलि ने रथ को आगे बढ़ाया। रथ को इस तरह से हाँका कि रावण का रथ बाईं ओर हो गया। पहियों की धूलि से रावण मूँद गया। १४—१५। क्रोध के

मारे रावण की आँखें लाल हो गईं। वह रामचन्द्र के रथ के ऊपर बाण बरसाने लगा । १६ । रामचन्द्र इस तिरस्कार को न सह सके। उन्होंने बड़े क्रोध से इन्द्र का धनुष उठाया और सूर्य की किरणों के समान चमकते हुए बाण चलाये। अपनी-अपनी विजय की इच्छा से उन्मत्त सिंहों के समान राम-रावण का युद्ध होने लगा।१७-१८। रावण का विनाश चाहनेवाले देवता, गन्धर्व, सिद्ध और महर्षि युद्ध देखने के लिए आये। उसी समय रावण के विनाश और रामचन्द्र की विजय के लिए भयानक उत्पात होने लगे । १६-२०। रावण के रथ के ऊपर रुधिर बरसने लगा। उसके बाईं ओर मंडलाकार वायु बहने लगी, जिधर उसका रथ जाता था, उधर ही गिद्धों की पाँति रथ के ऊपर आकाश में उड़ती थी। २१-२२। लंका बंधूक-पुष्प के समान संध्या राग से रँग गई । दिन में ही वहाँ की भूमि जलती हुई आग-सी दिखाई देने लगी । २३। बहुत बड़ी उल्का घोर शब्द के साथ गिरी । रावण के प्रतिकूल ये उत्पात देखकर राक्षसों को बड़ा दुःख हुआ।२४। जहाँ रावण का रथ खड़ा था, वहाँ की पृथिवी काँपने लगी। प्रहार करते हुए राक्षसों के हाथ शिथिल हो गये, मानों किसी ने पकड़ लिये। २५ । रावण के आगे सूर्य की किरणें लाल, पीली, काली और सफ़ेद दिखाई दीं, जैसे पर्वत के ऊपर अनेक रंगों की धातुवें देख पड़ती हैं। रावण के पीछे गिद्धों के झुंड और सामने उसके मुँह की ओर देखते हुए सियार अमंगल शब्द बोलने लगे। २६-२७। धूलि उड़ाती हुई वायु भी रावण के प्रतिकूल चली। धूलि से उसकी आँखें मूँद गईं । २८। विना बादल के ही आकाश में घोर शब्द होने लगा। राक्षसों की सेना में बिजली गिरने लगी।२९। धूलि के मारे आकाश नहीं देख पड़ता था, सब दिशाओं में अन्धकार हो गया। ३०। आपस में लड़ती हुई सारिकाओं के झुंड उसके रथ के ऊपर गिरने लगे। उसके रथ में जुते हुए घोड़ों के आगे

समान गरम आँसू बहने लगे। ३१—३२। उन उत्पातों को देखकर सबको भय हुआ। वे सब भयानक उत्पात रावण के विनाश के लिए हुए। ३३। इधर रामचन्द्र के सामने कल्याण करनेवाले शुभ निमित्त दिखाई दिये, जो रामचन्द्र की विजय बताते थे। ३४। अच्छे शकुनों को देखकर रामचन्द्र को बड़ा हर्ष हुआ। उनको विश्वास हुआ कि अब रावण की मृत्यु निकट है। ३५। शकुनों को जाननेवाले रामचन्द्र ने अपने विषय में शुभ शकुन देखकर प्रसन्न हुए और बड़े पराक्रम से युद्ध करने लगे। ३६।

सर्ग १०८

राम और रावण का युद्ध सबको भयभीत करनेवाला और बड़ा भयानक हुआ। राक्षसों और वानरों की सेना बलवान् राम और रावण का घोर संग्राम देखकर विस्मित हो गई। वे परस्पर युद्ध करना भूल गये। अस्त्र-शस्त्र लिये हुए सन्न खड़े रहे। रावण की ओर देखते हुए राक्षस और रामचन्द्र को देखते हुए वानर चित्र के समान खड़े थे। १—५। राम और रावण शुभ और अशुभ शकुनों को देखकर निर्भय होकर युद्ध करने लगे। रामचन्द्र ने तो शुभ निमित्तों को देखकर अपनी विजय का विश्वास कर लिया था और रावण ने अशुभ निमित्तों को देखकर निश्चय कर लिया था कि अब हमें मरना है। इससे दोनों वीर युद्ध में अपना-अपना पराक्रम दिखाने लगे। ६—७। बलवान् रावण ने रामचन्द्र के रथ का ध्वज काटने के लिए बहुत-से बाण चलाये। किन्तु इन्द्र के सुदृढ़ रथ पर उसके बाणों का कुछ भी प्रभाव न पड़ा। वे टूटकर पृथिवी पर गिर पड़े। तब रामचन्द्र को बड़ा क्रोध आया। उन्होंने उससे बदला लेने के लिए महासर्प के समान तीक्ष्ण एक बाण रावण के ध्वज में मारा। चमकते हुए उस असह्य बाण के लगने से उसका ध्वज कटकर गिर

पड़ा और बाण पृथिवी में धँस गया। ८—१२। अपने ध्वज को कटा हुआ देखकर रावण को बड़ा क्रोध आया और रामचन्द्र के ऊपर बाण बरसाने लगा। उसने बड़े पैने बाण रामचन्द्र के घोड़ों के मारे, किन्तु वे तो दिव्य घोड़े थे, उन पर उसके बाणों का कुछ भी प्रभाव न पड़ा। जैसे पद्मनाल के लगने से व्यथा नहीं होती वैसे ही उन घोड़ों को कुछ भी पीड़ा न हुई। वे पहले की तरह स्वस्थ बने रहे। यह देखकर रावण ने घोड़ों के ऊपर फिर बाणों की वर्षा की। गदा, परिघ, चक्र, मुसल, पर्वतों के शिखर, वृक्ष, शूल और परशु आदि बहुत से अस्त्र-शस्त्र माया के बल से चलाये। इतने अस्त्र चलाने पर भी उसे थकावट कुछ भी न जान पड़ी। १३—१८। वह अस्त्रों की वृष्टि और तुमुल युद्ध सबके लिए बड़ा भयानक हुआ। रामचन्द्र के ऊपर इतने अस्त्र चलाने के बाद उनको छोड़कर वह वानरों की सेना की ओर झुका। बाणों से उसने आकाश को भर दिया। १९—२०। रावण को वानरों के ऊपर बाण चलाते देखकर रामचन्द्र ने भी हजारों पैने बाण मारे। राम और रावण के बाणों से आकाश भर गया, आकाश में सर्वत्र बाण ही बाण दिखाई दिये। कोई बाण निष्फल नहीं जाता था। जिसके ऊपर चलाया गया, उसके ऊपर लगा, एक दूसरे को तोड़कर साथ ही पृथिवी पर गिर पड़े। इस तरह युद्ध में राम और रावण के छोड़े हुए बाणों से आकाश आच्छादित हो गया। आकाश में वायु के भी चलने की गुंजाइश न रही। २१—२६। रामचन्द्र ने रावण के घोड़ों के ऊपर बाण चलाये और रावण ने बदला लेने के लिए रामचन्द्र के घोड़ों के ऊपर प्रहार किया। इस प्रकार दोनों वीर बड़े क्रोध से बराबर युद्ध करते रहे। एक मुहूर्त भर बड़ा ही तुमुल युद्ध हुआ। देखनेवालों के रोयें खड़े हो गये। युद्ध करते हुए बलवान् राम और रावण एक-दूसरे के ऊपर पैने बाण चलाते थे। रावण के रथ की ध्वजा कट गई थी, इसलिए वह रामचन्द्र के ऊपर बड़ा कुपित हुआ। २७—२८।

सर्ग १०९

युद्ध करते हुए राम और रावण को देखकर सबको बड़ा विस्मय हुआ। वे कुपित होकर एक-दूसरे पर आक्रमण करते थे, एक-दूसरे का रथ तोड़ने का उद्योग करते थे। एक-दूसरे का वध करने में तत्पर थे। मंडलाकार, सीधे, तिरछे, इधर से उधर और उधर से इधर आते-जाते थे और बड़े भयानक हो गये थे। सारथि भी रथ हाँकने की चातुरी दिखाता था। राम और रावण एक-दूसरे को पीड़ित कर रहे थे। १—४। दोनों वीर एक-दूसरे के रथ पर बाणों की वर्षा करते थे। बरसते हुए दो मेघों के समान देख पड़ते थे। इस तरह युद्ध में अनेक प्रकार की गति दिखाकर फिर एक-दूसरे के सामने खड़े हो गये। उनके रथ इतने समीप थे कि घोड़ों के मुँह से मुँह मिल गये और पताका पताका में मिल गई। तब रामचन्द्र ने चार पैने बाण रावण के घोड़ों को मारा। बाणों के लगने से उसके घोड़े बहुत पीछे हट गये। तब रावण को बड़ा क्रोध आया। उसने बड़े पैने बाण रामचन्द्र के ऊपर चलाये। बलवान् दशग्रीव के बाणों से विद्ध होने पर भी रामचन्द्र कुछ भी व्यथित न हुए और न उनमें किसी प्रकार का विकार हुआ। वज्रपात के समान शब्द करते हुए बाण इन्द्र के सारथि को भी मारे। यद्यपि वे बाण बड़े वेग से मातलि के शरीर पर गिरे, किन्तु उन बाणों से उनको कुछ भी विकलता या व्यथा न हुई। ५—१२। रामचन्द्र को अपने ऊपर बाणों के गिरने से उतना क्रोध नहीं हुआ था, जितना क्रोध मातलि के ऊपर बाण गिरने से हुआ। उन्होंने इतने बाण रावण के ऊपर चलाये कि उसने युद्ध से मुँह फेर लिया। १३। उन्होंने रावण के रथ के ऊपर क्रम से बीस, तीस, साठ और सैकड़ों-हज़ारों बाण मारे। १४। राक्षसराज रावण ने भी कुपित होकर गदा और मुसल रामचन्द्र के ऊपर चलाया। गदा, मुसल और परिघ के चलने का भयानक शब्द सब ओर फैल गया। बड़ा ही तुमुल और रोमहर्षण युद्ध हुआ। १५—१६।

बाणों के चलने की वायु से सातों समुद्र क्षुभित हो उठे, और समुद्रों के क्षुभित होने से पाताल में रहनेवाले दानव और सर्प आदि सब व्याकुल हो गये। पर्वत और वन समेत पृथिवी काँपने लगी। सूर्य का तेज मलिन हो गया, वायु का चलना बन्द हो गया। यह देखकर देवता, गन्धर्व, सिद्ध, महर्षि, किन्नर और नाग बड़े चिन्तित हुए। १७–२०। गो-ब्राह्मणों का कल्याण हो, सनातन लोक स्थित रहें, रामचन्द्र रावण को युद्ध में जीतें, यह कहते हुए देवता और ऋषिगण राम-रावण का रोमहर्षण युद्ध देखने लगे। जैसे आकाश की उपमा आकाश ही है, समुद्र की उपमा समुद्र ही है, वैसे ही इस युद्ध की भी और कोई उपमा नहीं है। इस प्रकार कहते हुए गन्धर्व, अप्सराएँ और देवता राम-रावण का अनुपम अद्भुत युद्ध देखते थे। २१–२४। रघुवंशियों की कीर्ति बढ़ानेवाले महाबाहु रामचन्द्र ने क्रोध करके विषधर साँप के समान बाण धनुष पर चढ़ाया। उस बाण से रावण का कुंडल सहित सिर काटकर पृथिवी पर गिरा दिया। उस सिर को सबने देखा, किन्तु जैसा सिर रामचन्द्र ने काट डाला था वैसा ही उसके दूसरा सिर उत्पन्न हो गया। युद्ध में निपुण रामचन्द्र ने बड़ी फुर्ती से उसका वह सिर भी काट डाला, किन्तु सिर के कटते ही तुरंत रावण के धड़ पर ज्यों का त्यों दूसरा सिर दिखाई दिया। २५–२८। उसे भी वज्र के समान बाण से रामचन्द्र ने काट डाला। इसी प्रकार सौ बार रावण के सिर रामचन्द्र ने काटे, किन्तु उसके सिरों और प्राणों का अन्त न दिखाई दिया। तब अस्त्र-विद्या में कुशल, वीर रामचन्द्र सोचने लगे—जिन बाणों से हमने मारीच को मारा, खर-दूषण का वध किया, क्रौंचवन में विराध का और दंडकवन में कबंध का विनाश किया, जिनमें से एक ही बाण मारकर ताल के सात वृक्षों को काटकर पर्वत को विदीर्ण किया, बालि को एक बाण से मारा, समुद्र क्षुभित किया, उन हमारे अमोघ बाणों से, जिन पर हमें पूरा विश्वास था,

रावण की मृत्यु क्यों नहीं होती। इसका क्या कारण है? २९—३३।
यह चिन्ता करते हुए भी युद्ध में रामचन्द्र घबराये नहीं, सावधान बने रहे। फिर उन्होंने रावण की छाती में बाण मारे। ३४। रथ पर बैठा हुआ रावण भी कुपित होकर गदा और मुसल से रामचन्द्र को मारने लगा। इस बार भी बड़ा घोर संग्राम हुआ। कभी पृथिवी पर, कभी पर्वतों पर और कभी अन्तरिक्ष में युद्ध होता रहा। ३५—३६। देवता, दानव, यक्ष, पिशाच, नाग और राक्षस इस युद्ध को देखते थे। सात दिन तक लगातार दिन-रात युद्ध हुआ। किसी समय, किसी मुहूर्त और किसी क्षण में युद्ध बन्द नहीं हुआ। ३७—३८। राम और रावण का यह युद्ध देखकर और रामचन्द्र की विजय न देखकर इन्द्र के सारथि महात्मा मातलि ने युद्ध करते हुए रामचन्द्र से कहा। ३९।

सर्ग ११०

मातलि रामचन्द्र को स्मरण दिलाते हुए बोले—हे वीर, आप तो अनजान की तरह इसके साथ युद्ध कर रहे हैं। इसको मारने के लिए ब्रह्मास्त्र चलाइए। देवताओं ने इसके विनाश का जो समय हमसे बताया था, वह समय आ गया। १—२। मातलि के स्मरण दिलाने पर रामचन्द्र ने साँप की तरह फुफकारता हुआ बाण निकाला। वह बाण भगवान् अगस्त्य ने रामचन्द्र को दिया था और अगस्त्य को वह अमोघ बाण ब्रह्मा से मिला था। ३—४। महातेजस्वी ब्रह्मा ने त्रैलोक्य की विजय चाहनेवाले इन्द्र के लिए वह बाण उत्पन्न करके उनको दिया था। उस बाण के दोनों पार्श्व में पवन को और गाँसी में अग्नि और सूर्य को स्थापित किया था। उस पूरे बाण को आकाशमय बनाया, गुरुता में उसे सुमेरु और मन्दराचल के समान किया। सुवर्णभूषित सुपुंख वह बाण सूर्य के समान प्रकाशित था। धुवाँ सहित ब्रह्माग्नि के समान, विषधर साँप के समान वह बाण मनुष्य,

हाथी और घोड़ों के समूह का विनाश करनेवाला और बहुत शीघ्र काम करनेवाला था। पर्वतों को विदीर्ण करनेवाला, द्वारों और परिघों को तोड़नेवाला था। बड़ा भयानक था, उसमें रुधिर और चर्बी लगी हुई थी। वज्रसार के समान दृढ़, महानाद करनेवाला, बहुत संग्रामों में संहार करनेवाला, सबको भयभीत करनेवाला और फुफकारते हुए साँप के समान भयानक था। ५—१०। युद्ध में कंक, गिद्ध, बगुला, सियार और राक्षसों को भोजन देनेवाला था। यमराज के समान सबको भय उत्पन्न करानेवाला था। वानरों को प्रसन्न करनेवाला, राक्षसों को पीड़ित करनेवाला, गरुड़ के समान चित्र-विचित्र पंखों से युक्त, इक्ष्वाकुवंशियों के भय का नाश करनेवाला, शत्रुओं की कीर्ति को हरनेवाला था। उस बाण को वेद में कही हुई विधि से अभिमंत्रित करके महाबली रामचन्द्र ने धनुष पर चढ़ाया। ११-१४। रामचन्द्र के धनुष पर उस बाण को देखकर सब प्राणी डर गये, पृथिवी काँपने लगी। रामचन्द्र ने बड़े क्रोध से धनुष की डोरी खींचकर मर्मस्थल विदीर्ण करनेवाले उस बाण को चलाया। वज्रपाणि इन्द्र के हाथ से छूटे हुए वज्र के समान, दुर्धर्ष काल के समान, किसी के न रोकने योग्य, वह बाण रावण की छाती में लगा। महाबली रामचन्द्र के धनुष से छूटे हुए, शरीरान्त करनेवाले उस बाण ने दुरात्मा रावण का हृदय विदीर्ण कर दिया। रुधिर में भीगकर, रावण के प्राण लेकर, बड़े वेग से वह बाण पृथिवी में पैठ गया। रावण को मारकर रुधिर से लथपथ वह बाण अपना काम करके रामचन्द्र के तूणीर में फिर लौट आया। महातेजस्वी राक्षसराज रावण के प्राण निकल गये। प्राणों के साथ ही उसके हाथ से धनुष और बाण भी गिर पड़ा और वज्र से मारे हुए वृत्रासुर के समान वह रथ से पृथिवी पर गिर पड़ा। १५—२२। राक्षसों का स्वामी मारा गया, उसे पृथिवी पर पड़ा हुआ देखकर बचे हुए राक्षस डर के मारे भाग खड़े हुए, और वानर

दशग्रीव का वध और रामचन्द्र की विजय

ने उनका पीछा किया। देखकर वानरों से पीड़ित किये हुए राक्षस लंका को भाग गये। वे जिसके आश्रित थे, वह रावण मार डाला गया था, इसलिए राक्षस गये थे। रामचन्द्र की विजय से वानरों को बड़ा हर्ष हुआ। वे रामचन्द्र की जय और रावण का विनाश कहते हुए बड़े हर्ष से गरजते थे। आकाश में देवताओं का नगाड़ा बजने लगा। सुगन्ध वायु चलने लगी, आकाश से रामचन्द्र के रथ के ऊपर पुष्पवृष्टि हुई। २३–२८। देवता रामचन्द्र की स्तुति करने लगे। देवताओं ने "साधु, साधु" कहकर रामचन्द्र की प्रशंसा की। वह शब्द सबको सुनाई दिया। सब लोकों को भय देनेवाले दुरात्मा रावण के मारे जाने पर देवता और चारणगण बड़े प्रसन्न हुए। २९–३०। राक्षसराज रावण के मारे जाने से सुग्रीव, अंगद और विभीषण के मनोरथ पूर्ण हुए। शान्ति से वायु चलने लगी, दिशाओं में प्रकाश हो गया, आकाश निर्मल हो गया, पृथिवी का काँपना बन्द हुआ, सूर्य का तेज स्थिर हो गया। ३१–३२। युद्ध में विजय होने से सुग्रीव, विभीषण, अंगद आदि सुहृद् लक्ष्मण के साथ रामचन्द्र के पास आये और उनकी प्रशंसा करने लगे। ३३। दृढ़प्रतिज्ञ रामचन्द्र शत्रु को मारकर अपनी सेना के साथ युद्धभूमि में वैसे ही शोभित हुए, जैसे देवताओं के साथ इन्द्र शोभित हुए थे। ३४।

सर्ग १११

रामचन्द्र से पराजित और मारे हुए अपने भाई रावण को युद्धभूमि में पड़े देखकर शोक के वेग से व्याकुल विभीषण विलाप करने लगे— हे वीर, हे विख्यात पराक्रमी, हे नीति-निपुण, तुम तो बहुमूल्य शय्या पर सोने के योग्य हो, फिर पृथिवी पर क्यों पड़े हो? आभूषणों से भूषित भुजाएँ फैलाकर, सूर्य के समान प्रकाशित मुकुट फेंककर, पृथिवी पर क्यों सो रहे हो? १–३। हे वीर, हमने पहले ही कहा था, किन्तु

काम और मोह के वश होने से तुमको हमारी बातें पसन्द नहीं आईं, और इसी से तुम आज इस दशा को पहुँचे। गर्व के मारे हमारे वचन प्रहस्त, इन्द्रजित्, कुम्भकर्ण, अतिकाय, नरान्तक तथा और लोगों ने और तुमने भी नहीं माने, यह उसी का परिणाम है। ४-५। आज तुम्हारे मरने से धर्म का रूप नष्ट हो गया, सुनीतिज्ञों का सेतु टूट गया, पराक्रम का संग्रह नष्ट हो गया, हस्तलाघव का विषय जाता रहा। ६। शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ वीर रावण के मारे जाने से सूर्य मानों पृथिवी पर गिर पड़े, चन्द्रमा अंधकार में डूब गया। अग्नि की ज्वाला शान्त हो गई और वीरों का उत्साह भंग हो गया। ७। राक्षसराज रावण के मारे जाने और धूलि में लोटने से लंका में क्या शेष रह गया! लंका के निवासियों का पराक्रम नष्ट हो गया। ८। आज रामरूप वायु ने रावणरूप वृक्ष को नष्ट कर दिया। धैर्य उस वृक्ष के पल्लव थे, सहन-शक्ति उसके पुष्प थे, तपस्या उसका बल, और शूरता मूल था। ९। सिंहरूप रामचन्द्र के वश में पड़कर हाथीरूप रावण पृथिवी पर सो रहा है। तेज उसके दाँत हैं, कुल-परंपरा उसकी पीठ है, क्रोध उसके पैर और प्रसन्नता उसकी सूँड़ है। १०। रामरूप मेघ ने रावणरूप अग्नि को बुझा दिया। पराक्रम और उत्साह जिसकी ज्वलन्त शिखा थी, क्रोध ने श्वास का छोड़ना जिसका धुवाँ था और बल जिसकी जलाने की शक्ति थी। ११। रामरूप बाघ ने रावणरूप साँड़ को मार डाला। राक्षस उसकी पूँछ, कंधा और सींगें थे। चंचलता उसकी आँखें और कान थे। वह साँड़ वायु के समान वेगवान् और विजयी था। १२। शोक से व्याकुल विभीषण को ऐसे हेतुयुक्त वचन कहते हुए देखकर रामचन्द्र उनसे बोले—युद्ध में महापराक्रमी महाउत्साही रावण निश्शंक पड़ा हुआ है। ऐसे वीर पुरुष शोचनीय नहीं होते। क्षत्रिय धर्म के जानकार लोग वीरों की ऐसी मृत्यु के लिए शोक नहीं करते। १३-१५। जिसने युद्ध में इन्द्र आदि देवताओं सहित तीनों

लोकों को भयभीत कर दिया, उसकी मृत्यु के लिए शोक करना उचित नहीं है।१६। सदा किसी की विजय होती रहे, ऐसा तो आजतक कभी नहीं हुआ। वीर पुरुष या तो शत्रु को मारते हैं, अथवा शत्रु के हाथ से युद्ध में स्वयं मारे जाते हैं। क्षत्रिय लोग युद्ध में मरने की प्रशंसा सदा से करते चले आ रहे हैं। युद्ध में मारे हुए क्षत्रिय शोक करने के योग्य नहीं होते। यह विचारकर, इसका दृढ़ निश्चय करके, शोक छोड़ दो और मरने के बाद जो कृत्य करना चाहिए वह करो।१७–१९। शोक से पीड़ित विभीषण इस प्रकार कहते हुए रामचन्द्र से बोले—रावण इन्द्र आदि देवताओं से भी युद्ध में कभी नहीं हारा। किन्तु आपके सामने आकर वह युद्ध में मारा गया, जैसे समुद्र का पानी किनारे पर आकर ठोकर खाता है।२०–२१। इन्होंने बहुत दान किया, गुरुजनों का सम्मान किया, भृत्यों का भरण-पोषण किया। सब प्रकार के सुख भोग किये। मित्रों को धन दिया और शत्रुओं से शत्रुता की। तपस्या और अग्निहोत्र किये, वेदान्त और कर्मकाण्ड पढ़ा। आपकी आज्ञा हो तो अब इनका प्रेतकर्म किया जाय।२२–२३। विभीषण के यह करुण वचन सुनकर महात्मा रामचन्द्र ने आज्ञा दी कि इनका प्रेतकर्म करो। शत्रु जब तक जीवित रहता है, तभी तक उससे वैर है। अब यह मर गया और हमारा कार्य भी सिद्ध हो गया। तुम इसका प्रेतकर्म करो। अब यह जैसा तुम्हारा है, वैसा ही हमारा भी। २४–२५।

सर्ग ११२

महात्मा रामचन्द्र के हाथ से रावण की मृत्यु सुनकर शोक से व्याकुल राक्षसियाँ अन्तःपुर से निकलकर युद्धभूमि में आईं। यद्यपि उनको बहुत रोका गया, किन्तु जिसका बछड़ा मर गया हो, उस गाय की तरह रोती हुई उत्तर द्वार से निकलकर बहुत-से राक्षसों के साथ धूलि में गिरती-पड़ती हुई अपने पति के पास पहुँचीं।१–३। हा नाथ,

हा आर्यपुत्र, कहकर बार-बार पुकारती थीं। युद्धभूमि में जहाँ कबन्ध पड़े थे, रुधिर का कीचड़ हो गया था, उसमें बार-बार गिरती-पड़ती हुई, पति के शोक से रोती हुई, यूथप हाथी के मर जाने पर हथिनियों के समान चिग्घारती हुई, युद्धभूमि में आकर, काजल के ढेर के समान महाकाय, महापराक्रमी, महातेजस्वी रावण को देखा। ४–६। पति को रणभूमि में पड़ा हुआ देखकर कटी हुई लता के समान उसके ऊपर गिर पड़ीं। कोई तो बड़े आदर से उसका आलिंगन करके रोने लगीं, कोई पैरों में और कोई गले में लिपट गईं। कोई हाथ उठाकर पृथिवी पर गिर पड़ीं और कोई पति का मुँह देखकर, व्याकुल हो गईं। कोई उसका सिर गोद में रखकर, रो-रोकर आँसुओं से उसे सींचने लगीं, जैसे मेघ पानी से कमल को सींचते हैं। ७–१०। वे रावण का मुँह देखकर विलाप करती हुई बोलीं—तुमने इन्द्र और यम को पीड़ित कर दिया था, कुबेर का पुष्पक विमान छीन लिया था, गन्धर्वों, ऋषियों और देवताओं को भयभीत कर दिया था, ऐसे बलवान् होकर आज तुम युद्धभूमि में क्यों पड़े सो रहे हो? ११–१३। हाय, जो रावण दानवों, दैत्यों और नागों से कभी नहीं डरा, उसको मनुष्य से इतना बड़ा भय हुआ? जिस रावण को देवता, दानव और राक्षस कोई न मार सका, उसे पैदल एक मनुष्य ने मार डाला? १४–१५। जिसको देवता, यक्ष और असुर न मार सके, वह रावण बलहीन पुरुष के समान एक मनुष्य के हाथ से मारा गया? १६। इसी तरह और भी बहुत सी बातें कहती हुई रावण की स्त्रियाँ बड़े दुःख से विलाप करने लगीं। सुहृदों के रोकने पर भी उनके कहे हुए हित के वचनों को न मानकर, तुम अपनी और निशाचरों की मृत्यु के लिए सीता को यहाँ क्यों लाये? तुमने राक्षसों का, अपना और हमारा विनाश किया। १७–१८। विभीषण तुम्हारे भाई हैं, उनकी कही हुई हित की बातें तुमने न मानी। अपने वध के लिए उनको तुमने कठोर वचन कहे। यह उसी का फल आज

तुमको मिला। यदि तुम सीता को लौटा देते, तो हम लोगों का यह सर्वस्व विनाश क्यों होता। विभीषण के वचन मान लेने से रामचन्द्र भी तुम्हारे मित्र हो जाते। शत्रुओं के मनोरथ सिद्ध न होते और हम लोग विधवा न होतीं। १६—२१। तुमने निर्दयता से सीता को बल-पूर्वक रोक रक्खा, जिसका फल यह हुआ कि अपना, हम लोगों का और राक्षसों का विनाश करा दिया। २२। हे राक्षसराज, इसमें तुम्हारा कोई दोष नहीं है, क्योंकि अपनी इच्छा से कोई कुछ नहीं कर सकता। दैव की प्रेरणा से ही सब काम होते हैं, उसी दैव ने तुमको मार डाला। २३। दैवयोग से ही युद्ध में वानरों का विनाश, राक्षसों का विनाश और तुम्हारा विनाश हुआ; क्योंकि दैव की गति को धन से, इच्छा से, पराक्रम से अथवा आज्ञा से कोई नहीं हटा सकता। २४—२५। इस तरह बड़े दुःख से विलाप करती हुई रावण की स्त्रियाँ कुररी की तरह चिल्लाती थीं। २६।

सर्ग ११३

इस प्रकार विलाप करती हुई रावण की स्त्रियों में सबसे बड़ी और प्रिय पत्नी अपने पति को बड़े दुःख से देखने लगी। अचिन्त्य कर्म करनेवाले रामचन्द्र से मारे हुए रावण को पृथिवी पर पड़े देखकर मन्दोदरी रो-रोकर कहने लगी—हे महाबाहु, तुमको युद्ध में कुपित देखकर इन्द्र भी डर जाते थे। महात्मा ऋषि, यशस्वी गन्धर्व और चारणगण भी तुम्हारे डर से भाग जाते थे। १—४। वही तुम एक साधारण मनुष्य रामचन्द्र के हाथ से आज मारे गये? हे राक्षसेश्वर, क्या तुमको लज्जा नहीं आती? ५। तुमने तीनों लोकों को जीत लिया था। अपने पराक्रम से तुमने लक्ष्मी को प्राप्त किया था। ऐसे असह्य तुम वनवासी मनुष्य के हाथ से कैसे मारे गये? तुम अपनी इच्छा-नुसार रूप धारण कर सकते थे। जहाँ मनुष्य नहीं जा सकते थे, वहाँ

तुम विचरते थे। युद्ध में रामचन्द्र के हाथ से तुम्हारा वध आश्चर्यजनक हुआ। ६–७। हमको तो विश्वास ही नहीं होता कि रामचन्द्र ने ऐसा काम किया। सब अस्त्र लिये हुए तुमको रामचन्द्र ने मार डाला? ८। सम्भव है, राम का रूप धारण करके तुम्हारे विनाश के लिए काल स्वयं आया हो, अथवा इन्द्र ने राम का रूप धारण करके तुमको मारा हो। किन्तु यह तो असंभव है, इन्द्र बेचारे में इतनी शक्ति कहाँ! वह तो युद्ध में तुम्हारी ओर देख भी नहीं सकता। ९–१०। और कोई नहीं, महायोगी सनातन परमात्मा ने ही महाबलवान्, महावीर्यवान्, देवताओं के शत्रु महातेजस्वी तुमको मारा है। ११। उनका आदि, मध्य और अन्त्य नहीं है, वे ब्रह्मा आदि सब देवताओं से श्रेष्ठ हैं, शंख-चक्रधारी अविद्या से परे और सबका पालन करनेवाले हैं। वे नित्य ऐश्वर्यवान्, अजेय, शाश्वत और सर्वलोकेश्वर हैं। उन्हीं श्रीमान्, सत्यपराक्रमी, भगवान् विष्णु ने लोकों के हित के लिए, वानरों का रूप धारण किये हुए देवताओं को साथ लेकर, देवताओं के शत्रु, सब को भयभीत करनेवाले तुमको राक्षसों के साथ मार डाला।१२–१४। तुमने पहले अपनी इन्द्रियों को जीत लिया था, फिर त्रिभुवन को जीता। जान पड़ता है कि तुम्हारी इन्द्रियों ने ही पूर्व के वैर का स्मरण करके तुमको जीत लिया है।१५। जनस्थान में बहुत-से राक्षसों के साथ खर को जब रामचन्द्र ने अकेले मार डाला था, तभी हमने समझा था कि रामचन्द्र मनुष्य नहीं हैं। जिस लंका में देवता भी प्रवेश नहीं कर सकते, उस लंका में वीर हनुमान् निर्भय चले आये। तभी हम लोगों को बड़ा भय हुआ था। हमने कहा था कि रामचन्द्र के साथ विरोध न करो, किन्तु उस बात को तुमने अनसुनी कर दी। उसी का फल आज सामने आया। १६–१८। हे राक्षसश्रेष्ठ, अकस्मात् तुमको सीता की अभिलाषा हुई। वही तुम्हारे ऐश्वर्य का, तुम्हारे शरीर का और तुम्हारे भाई बंधुओं के विनाश का कारण है। हे दुर्मते, अरुन्धती और रोहिणी

से भी श्रेष्ठ सीता को जो तुम हर लाये, यह तुमने बड़ा अनुचित किया। पतिव्रता सीता वसुन्धरा पृथिवी को भी धारण कर सकती है, लक्ष्मी की भी लक्ष्मी है। १९–२१। छल करके उस सुन्दरी को निर्जन वन से हर लाकर तुमने अपना और अपने कुल का विनाश किया। जिस इच्छा से उसको लाये थे, वह तुम्हारी इच्छा भी पूरी न हुई, बल्कि उसी पतिव्रता की तपस्या से तुम भस्म हो गये। २२–२३। जब उसका हरण करने गये थे, तभी भस्म हो गये होते, किन्तु अग्नि और इन्द्र सहित सब देवता तुमसे डरते थे, इसी से अग्नि उस समय तुमको भस्म नहीं कर सका। २४। पापी को पाप का फल समय आने पर अवश्य मिलता है। अच्छे कर्मों का फल अच्छा और बुरे कर्मों का फल बुरा होता है। विभीषण को उनके शुभकर्मों के प्रभाव से सुख मिला और तुमको पाप का यह फल मिला। २५–२६। सीता से भी बढ़कर सुन्दरी तुम्हारे बहुत-सी स्त्रियाँ थीं, किन्तु तुम मोह के वश थे, काम के वशीभूत थे, यह बात तुम्हारी समझ में न आई। कुल में, रूप में, अथवा दया, दाक्षिण्य आदि गुणों में सीता हमसे अधिक नहीं है, हमारी बराबर भी नहीं है, किन्तु मोह के वश तुम इसे समझ न सके। २७–२८। विना कारण के किसी की मृत्यु नहीं होती, इसी से तुम्हारी मृत्यु का कारण सीता हुई। २९। किन्तु दोष तुम्हारा ही है। सीता के कारण होनेवाली मृत्यु को तुम बहुत दूर से बुला लाये। तुम्हारी तो मृत्यु हो गई और सीता अब शोक त्यागकर राम के साथ विहार करेगी। ३०। अभागिन तो हम हैं, जो घोर शोक-सागर में डूब रही हैं। तुम्हारे साथ विमान पर बैठकर, कैलास, मन्दराचल, और सुमेरु आदि पर्वतों पर, चैत्ररथ आदि देवताओं के उपवनों में विहार करती थीं, चन्दन और माला धारण करती थीं, अनेक प्रकार के देश देखती थीं। ३१–३२। हे वीर, तुम्हारी मृत्यु होने से अब हम सब काम-भोगों से वंचित रहेंगी। सामान्य स्त्रियों के समान हो गईं। चंचला

राजलक्ष्मी को धिक्कार है! हे राजन्, सुन्दर भौंहें और ऊँची नाक से शोभित तुम्हारा मुँह अति सुकुमार था। मुँह की कान्ति, तेज और लावण्य चन्द्रमा, सूर्य और कमल के समान थी। चमकते हुए किरीट और कुंडल शोभित थे, मद से व्याकुल आँखें चंचल थीं। अनेक प्रकार की मनोहर बातों से और पुष्प-मालाओं से तुम्हारा मुँह शोभित रहता था।३३—३६। हे प्रभो, वही तुम्हारा मुँह आज शोभित नहीं हो रहा है, क्योंकि रामचन्द्र के बाणों से विदीर्ण हो गया है। लाल-लाल रुधिर बह रहा है, सिर फट गया है, उसमें से चर्बी निकल आई है और रथ की धूलि पड़ने से रूखा हो गया है। हाय, बुढ़ापे में वैधव्य देने-वाली यह दशा हमें प्राप्त हुई। ३७—३८। मूर्खता के कारण हमने कभी इस बात का स्मरण नहीं किया था; क्योंकि हमारे पिता दानवों के राजा थे, पति राक्षसों के राजा थे और पुत्र ने इन्द्र को जीत लिया था। हमको बड़ा गर्व था। हम तो यह समझती थीं कि हमारे रक्षक अहंकारी शत्रुओं को जीतनेवाले, बड़े क्रूर और प्रसिद्ध पराक्रमी हैं, उनको किसी का भय नहीं है। किन्तु इस तरह का प्रभाव रखनेवाले तुम लोगों के ऊपर अकस्मात् मनुष्य के द्वारा यह भय कैसे आ गया! इन्द्र-नील मणि के समान नीले, पर्वत के समान ऊँचे, केयूर, अंगद, वैदूर्य-मुक्ताहार और मालाओं से श्वेतवर्ण, विहार के समय में अत्यन्त शोभित, युद्धभूमि में प्रचंड, बिजलियों से शोभित बादलों के समान, चमकते हुए आभूषणों से शोभित, तुम्हारे शरीर का इस समय हम आलिंगन भी नहीं कर सकतीं, क्योंकि पैने बाण तुम्हारी देह भर में धँसे हुए हैं। तुम्हारा शरीर काटों से युक्त साही के समान हो गया है। यद्यपि इसका दर्शन अब दुर्लभ है, तो भी हम इसे अपने हृदय में नहीं लगा सकतीं। ३९—४५। बाण तुम्हारे सब सुकुमार अंगों में गड़े हुए हैं, वज्र के प्रहार से विदीर्ण पर्वत के समान तुम्हारा शरीर छिन्न-भिन्न हो गया है। हे राजन्! क्या यह सत्य है, अथवा हम स्वप्न देख रही हैं

तुम राम के हाथ से कैसे मारे गये! ४६—४७। तुम तो काल के भी काल थे, फिर मृत्यु के वश कैसे हुए। हाय त्रैलोक्य के धन का भोग करनेवाले, तीनों लोकों को भयभीत करनेवाले, लोकपालों को जीतनेवाले, कैलास सहित महादेव को उठा लेनेवाले, अहंकारियों को दंड देनेवाले, पराक्रम दिखानेवाले, सब लोकों में हलचल मचानेवाले, शत्रु के सामने गर्व से भरी बातें कहनेवाले, अपने भृत्यों और सैनिकों की रक्षा करनेवाले, बड़े पराक्रमी शत्रुओं का विनाश करनेवाले, हजारों दानवेन्द्रों और यक्षों का हनन करनेवाले, युद्ध में निवातकवच नामक राक्षसों को दंड देनेवाले, अनेक यज्ञों का विध्वंस करनेवाले, स्वजनों की रक्षा करनेवाले, धर्म की व्यवस्था को तोड़नेवाले, युद्ध में माया उत्पन्न करनेवाले, देवताओं दानवों और मनुष्यों की कन्याओं का अपहरण करनेवाले, शत्रुओं की स्त्रियों को शोक देनेवाले, स्वजनों को उपदेश देनेवाले, लंकाद्वीप की रक्षा करनेवाले, भयानक काम करनेवाले, हम लोगों को काम-भोग देनेवाले, रथियों में श्रेष्ठ, ऐसे प्रभावशाली पति को रामचन्द्र के हाथ से मारा हुआ देखकर भी हमारा चित्त स्थिर है? और हम इस शरीर को धारण किये हुए हैं? यह बड़े आश्चर्य की बात है! हे राक्षसेश्वर, तुम महामूल्य शय्या पर सोते थे, आज पृथिवी पर धूलि में क्यों सो रहे हो? ४८—५७। युद्ध में हमारे पुत्र इन्द्रजित् को जब लक्ष्मण ने मार डाला था, तभी मैं अधमरी हो गई थी। अब तुम्हारे मारे जाने पर हम भी मर गईं। हमारे बन्धु-बान्धव मारे गये, स्वामी तुम भी मारे गये। काम-भोग से भी विहीन हो गईं। ऐसी दशा में भी जो हमारे प्राण नहीं निकलते तो हमें अब बहुत वर्षों तक शोक करना पड़ेगा। राजन्, तुम तो बहुत दूर जानेवाले मार्ग से जा रहे हो, मुझ दुःखिनी को भी अपने साथ लेते चलो। क्योंकि तुम्हारे बिना मैं जीवित न रह सकूँगी। मुझे छोड़कर तुम जाने की इच्छा क्यों करते हो। ५८-६०। विलाप करती हुई इस अभागिन से तुम क्यों नहीं बोलते। हे प्रभो,

पैदल, नगर के द्वार से, विना परदे की आई हुई मुझे देखकर तुम क्रोध क्यों नहीं करते। देखो, तुम्हारी स्त्रियाँ लज्जा छोड़कर, परदा किये विना बाहर निकल आई हैं। इनको देखकर क्रोध क्यों नहीं करते। ६१-६२। ये सब तुम्हारी क्रीडा की सहायक हैं, ये अनाथ हो गई हैं, रो रही हैं, इनको क्यों नहीं समझाते और इनका आदर क्यों नहीं करते। ६३। राजन्, तुमने बहुत-सी पतिव्रता, गुरुजनों की सेवा करनेवाली, कुलीन स्त्रियों को विधवा कर दिया है, उन्हीं स्त्रियों के शाप से तुम आज शत्रु के हाथ से मारे गये। ६४—६५। पतिव्रता स्त्रियों के आँसू अकस्मात् पृथिवी पर न गिराना चाहिए, क्योंकि गिरानेवाले का विनाश हो जाता है। तुमने पतिव्रताओं के आँसू गिराये, उन्हीं का शाप तुमको लगा। राजन्, तुमने अपने पराक्रम से तीनों लोकों को जीत लिया था, ऐसे शूराभिमानी होकर, स्त्री की चोरी, जो बड़ा ही नीच काम है, तुमने क्यों किया। कपट-मृग द्वारा राम और लक्ष्मण को आश्रम से दूर करके उनकी स्त्री को हर लाये, इसके सिवा युद्ध में तुम्हारी और किसी कायरता का मुझे स्मरण नहीं है। ६६—६९। पराई स्त्री का अपहरण करना तुम्हारे विनाश का कारण हुआ। विभीषण बड़े बुद्धिमान् हैं। भूत, भविष्य, वर्तमान का ध्यान रखकर काम करते हैं। सीता को जब तुम हर लाये थे, तब उन्होंने लम्बी साँस छोड़कर बहुत सोच-विचार करके तुमसे कहा था कि यह काम राक्षसों के विनाश के लिए हुआ है। उनकी बात सत्य हुई। काम और क्रोध के वश होकर तुमने जो परस्त्री का हरण किया, उसी ने तुम्हारा समूल विनाश कर दिया। तुमने इस राक्षस-कुल को अनाथ कर दिया। ७०—७३। यद्यपि तुम्हारा बल-पौरुष संसार में विख्यात है, तुम शोचनीय नहीं हो, किंतु स्त्री-स्वभाव के कारण मैं रो रही हूँ। ७४। तुमने जो कुछ पाप और पुण्य किये, उनको लेकर तुम अपनी गति को चले गये, अब हम तुम्हारे विनाश से दुःखित होकर अपने लिए सोच कर रही हैं। ७५। हे दशानन, हित

चाहनेवाले सुहृदों के वचन तुमने नहीं सुने। तुम्हारे भाई विभीषण ने हेतु-अर्थयुक्त, श्रेयस्कर, हित के जो वचन कहे थे, उनको भी तुमने न माने। मारीच, कुम्भकर्ण और हमारे पिता की बातें भी अपने बल के गर्व से तुमने नहीं सुनीं। उसी का यह फल है। ७६—७८। पीताम्बर और अंगद धारण किये हुए, काले बादलों के समान तुम सब अंगों में रुधिर लगाये यहाँ क्यों पड़े हो। क्या सोते हो? शोक से पीड़ित मुझसे क्यों नहीं बोलते? युद्ध से कभी न भागनेवाले, सब कामों में चतुर, महापराक्रमी राक्षस की मैं दौहित्री (बेटी की बेटी) मन्दोदरी हूँ। मुझसे क्यों नहीं बोलते? क्या पहले-पहल इस निरादर के होने से लज्जित हो गये हो? उठो, उठो, क्यों सोते हो। ७९—८१। आज सूर्य की किरणें निर्भय होकर लंका में प्रवेश कर गई हैं। सूर्य के समान चमकते हुए जिस परिघ से तुम शत्रुओं को पीड़ित करते थे, इन्द्र के वज्र के समान, सुवर्णभूषित वह परिघ रामचन्द्र के बाणों से टूटा हुआ पृथिवी पर पड़ा है। उसके हज़ारों टुकड़े हो गये हैं। ८२-८३। आज इस रणभूमि का आलिंगन करके क्यों सो रहे हो? क्या यह तुमको बहुत प्रिय है, हमसे तुमको प्रेम नहीं है, हमसे बोलने की इच्छा क्यों नहीं करते? ८४। हमारे इस हृदय को धिक्कार है, तुम्हारे मर जाने पर भी शोक से पीड़ित होकर इसके हज़ारों टुकड़े क्यों नहीं हो जाते! ८४—८५। मन्दोदरी इस तरह विलाप करती थी, उसकी आँखों में आँसू भरे थे, स्नेह के मारे उसका हृदय काँपता था, रोते-रोते उसे मूर्छा आगई। ८६। वह रावण की छाती पर गिर पड़ी और संध्या के समय बादल में बिजली के समान शोभित हुई। रोती हुई सपत्नियों ने उसे उठाकर बैठाया और समझाने लगीं—हे देवि, क्या तुम प्राणियों की अवस्था के भेद के विषय को नहीं जानती हो? प्राणियों की स्थिति अनिश्चित है, राजलक्ष्मी चंचला है। ८७—८९। सौतों के ऐसा कहने पर मन्दोदरी आँसुओं से स्तनों को भिगोती हुई फिर रोने लगी। उसी समय रामचन्द्र

ने विभीषण से कहा कि अब तुम अपने भाई का अन्तिम संस्कार करो और इन स्त्रियों को समझाओ। ६०—६१। बुद्धिमान् विभीषण रामचन्द्र की इस बात पर विचार करके बड़ी नम्रता से धर्मार्थयुक्त वचन बोले—रावण बड़ा क्रूर, मिथ्यावादी, परस्त्रीगामी, अधर्मी और दुष्ट था, इसका अन्तिम संस्कार हम नहीं करना चाहते। यह भ्रातृरूप हमारा शत्रु था। सबका अहित करने में ही लगा रहता था। यद्यपि बड़ा भाई होने के कारण हमारा पूज्य है, तो भी यह पूजा करने के योग्य नहीं है। ६२—६४। हे रामचन्द्र, मरे हुए भाई का अन्तिम संस्कार न करने से लोग पहले तो हमको नृशंस कहेंगे, किन्तु जब इसके अवगुणों को सुनेंगे तब हमें दोष न देंगे। ६५। यह सुनकर धर्मात्माओं में श्रेष्ठ, बोलने में चतुर रामचन्द्र ने प्रसन्न होकर विभीषण से कहा—तुम्हारा प्रिय करना हमको उचित है, क्योंकि तुम्हारे ही प्रभाव से हमने शत्रु को जीता है। किन्तु हे राक्षसेश्वर, जो बात उचित होगी उसे हम अवश्य कहेंगे। ६६—६७। यद्यपि यह निशाचर अधर्मी और मिथ्यावादी था, इसमें कोई सन्देह नहीं है। किन्तु यह बड़ा तेजस्वी, बलवान्, युद्ध में बड़ा वीर, महात्मा और सब लोकों को रुलानेवाला था। सुनते हैं कि इन्द्र आदि देवताओं से भी कभी युद्ध में परास्त नहीं हुआ। शत्रुता मरणपर्यंत रहती है, अब यह मर गया है, हमारा प्रयोजन सिद्ध हो गया है, अब इससे हमारी शत्रुता नहीं है। तुम इसका अन्तिम संस्कार करो। इससे जो सम्बन्ध तुम्हारा है, वैसा ही सम्बन्ध अब हमारा भी है। ६८—१००। हे महाबाहु, तुम विधिपूर्वक इसका संस्कार करो। ऐसा करने से तुम यश के भागी होगे। रामचन्द्र की यह बात सुनकर विभीषण अपने भाई का दाहकर्म करने के लिए शीघ्रता करने लगे। १०१—१०२। लंका में जाकर रावण के अग्निहोत्र की अग्नि को प्रज्वलित किया। यज्ञ की अग्नि, चन्दन, देवदारु और अगुरु आदि सुगन्धित पदार्थ, मणि, मोती, मूँगा आदि सब

सामान छकड़ों में भरकर श्मशान में भेजा। याजकों को भी चलने की आज्ञा दी। सब राक्षसों को लेकर माल्यवान् के साथ श्मशान को गये और सब क्रिया करने लगे। १०३—१०६। सुवर्ण की शिविका में रेशमी वस्त्र बिछाकर रोते हुए विभीषण ने रावण की लाश उसमें रक्खी। नगाड़े बजने लगे, बन्दी-मागधगण स्तुति करने लगे, शिविका के ऊपर पताका फहराई गई और पुष्प फेंके गये। शिविका उठाई गई, विभीषण सबके आगे थे, काष्ठ आदि लेकर दक्षिण दिशा को चले। १०७—१०९। अध्वर्यु लोगों ने अग्नि को प्रज्वलित किया और शिविका के साथ सब लोग चले। ११०। उनके पीछे रोती और गिरती-पड़ती हुई रावण की स्त्रियाँ भी चलीं। १११। शिविका श्मशान-भूमि में रक्खी गई, चन्दन आदि सुगन्धित लकड़ियों की चिता बनाई गई, कमल और उशीर उस पर रक्खे गये, रंकु जाति के मृग का चर्म वेद के मन्त्र पढ़कर बिछाया गया। राक्षसराज का पितृमेध यज्ञ किया गया। दक्षिण और पूर्व के कोने में वेदी बनाई गई, उस पर अग्नि स्थापित किया गया। ११२—११४। शव के ऊपर दही और घी छोड़ा गया, कन्धे पर स्रुव, पैरों पर शकट और जाँघों पर उलूखल रक्खा गया। काष्ठपात्र, अरणि, उत्तरारणि और मुसल, शास्त्र के अनुसार यथास्थान रक्खे गये। ११५—११६। शास्त्र और महर्षियों की कही हुई रीति के अनुसार राक्षसों ने रावण के लिए पशु का वध किया। घृतयुक्त परिस्तरणिका रक्खी गई। विभीषण आदि सब राक्षसों ने सुगन्ध, माला, वस्त्र और आभूषणों से रावण के शव को अलंकृत किया। रोते हुए राक्षसों ने शव के ऊपर धान के लावा फेंके। ११७—११९। विभीषण ने विधिपूर्वक चिता में अग्नि दी। फिर स्नान करके गीले वस्त्र पहने हुए सब राक्षसों ने हाथों में कुश, तिल और जल लेकर विधिपूर्वक तिलांजलि दिया। विभीषण ने रोती हुई स्त्रियों को समझा-बुझाकर घर जाने को कहा। जब सब स्त्रियाँ

लंका को गईं, तब विभीषण रामचन्द्र के पास आये और नम्रता से सामने खड़े हो गये। १२०—१२२। रामचन्द्र शत्रु को मारकर लक्ष्मण सुग्रीव और सेना के साथ बड़े प्रसन्न हुए जैसे वृत्रासुर को मारकर इन्द्र प्रसन्न हुए थे। रामचन्द्र ने इन्द्र का दिया हुआ कवच उतार दिया, धनुष और बाण रख दिया। शत्रु के मरने से उनका क्रोध भी शान्त हुआ और उनका स्वभाव सौम्य हो गया। १२३—१२४।

सर्ग ११४

रावण का वध देखकर विमानों पर बैठे हुए देवता, गन्धर्व और दानव आपस में रावण का घोर युद्ध, रामचन्द्र का पराक्रम, वानरों का युद्ध; लक्ष्मण, हनुमान् और सुग्रीव का पराक्रम और सीता के पातिव्रत की बातें करते हुए अपने-अपने स्थान को गये। रामचन्द्र ने मातलि का सम्मान करके इन्द्र के भेजे हुए अग्नि के समान प्रकाशित रथ को ले जाने की आज्ञा दी। उनकी आज्ञा पाकर इन्द्र का सारथि मातलि दिव्य रथ को लेकर स्वर्ग को चला गया। उसके चले जाने पर रामचन्द्र ने प्रसन्न होकर सुग्रीव का आलिंगन किया। लक्ष्मण ने रामचन्द्र को प्रणाम किया और वानरों ने भी उनका सम्मान किया। उसके बाद रामचन्द्र अपनी सेना में आये। समीप खड़े हुए बलवान् लक्ष्मण से उन्होंने कहा—सौम्य लक्ष्मण, विभीषण ने हमारे साथ बड़ा उपकार किया है। ये हमारे बड़े भक्त और स्नेही हैं, तुम लंका में जाकर इनका अभिषेक करो। १—६। हमारी बड़ी इच्छा है कि रावण के अनुज विभीषण को लंका में अभिषेक किये हुए देखें। १०। महात्मा रामचन्द्र के ऐसा कहने पर लक्ष्मण ने उनकी आज्ञा स्वीकार की और सुवर्ण का एक कलश वानरों के हाथ में देकर समुद्र का जल लाने की आज्ञा दी। ११—१२। वानर बहुत शीघ्र दौड़े गये और समुद्र से जल ले आये। लक्ष्मण ने विभीषण

को आसन पर बैठाकर जल से अभिषेक किया। फिर लंका में जाकर सब राक्षसों के सामने राक्षसों का राजा बनाने के लिए वेद के मन्त्र पढ़कर वानरों और राक्षसों ने भी अभिषेक किया। १३—१५। जो राक्षस विभीषण का प्रिय करते थे और जो उनके मन्त्री थे, अभिषेक होने पर बड़े प्रसन्न हुए और रामचन्द्र की प्रशंसा करने लगे। विभीषण का अभिषेक होने पर रामचन्द्र और लक्ष्मण को बड़ा हर्ष हुआ। १६—१७। उसके बाद विभीषण प्रजा को सान्त्वना देकर रामचन्द्र के पास चले आये। निशाचर लोग दधि, अक्षत, मोदक, लाजा और पुष्प आदि विभीषण को भेंट देने के लिए लाये। १८—१९। विभीषण ने उन सब मांगलिक पदार्थों को लाकर रामचन्द्र और लक्ष्मण को अर्पण कर दिया। २०। विभीषण को राजलक्ष्मी मिली, वे कृतार्थ हुए। उनका प्रिय करने के लिए उनके दिये हुए सब पदार्थ रामचन्द्र ने ले लिये। २१। उसके बाद रामचन्द्र ने विनीत हनुमान् से कहा—हे सौम्य, महाराज विभीषण से आज्ञा लेकर लंका को जाओ और सीता से हम लोगों की कुशल कहो। २२—२३। रामचन्द्र की विजय हुई, रावण युद्ध में मारा गया, लक्ष्मण और सुग्रीव के साथ वे कुशल से हैं, यह खबर सीता को सुनाओ। २४। हे वानरश्रेष्ठ, सीता को यह प्रिय समाचार सुनाकर और उनका सन्देश लेकर शीघ्र लौट आओ। २५।

सर्ग ११५

रामचन्द्र की आज्ञा से पवनतनय हनुमान् लंका को गये। राक्षसों ने उनका बड़ा सम्मान किया। फिर वे विभीषण की आज्ञा लेकर अशोक वाटिका को गये। सीता उनको पहचान गईं। हनुमान् ने भी मलिन वस्त्र पहने हुई सीता को, क्रूर ग्रह से पीड़ित रोहिणी के समान देखा। १—३। वे वृक्ष के नीचे दुखित बैठी थीं, उनके चारों ओर राक्षसियाँ बैठी थीं। हनुमान् ने समीप जाकर उनको प्रणाम किया।

महाबली हनुमान् को देखकर सीता को बड़ा हर्ष हुआ।४—५। वानर वीर हनुमान् रामचन्द्र का सन्देश उनसे कहने लगे—हे वैदेही! लक्ष्मण, सुग्रीव, विभीषण और सब वानरों के साथ महाबली रामचन्द्र कुशलपूर्वक हैं। युद्ध में उनकी विजय हुई, शत्रु को मारकर उन्होंने विजय प्राप्त की, उनका मनोरथ सिद्ध हुआ। उन्होंने तुम्हारी कुशल पूछी है। हे देवि, रावण युद्ध में मारा गया, यह प्रिय समाचार हम तुमको सुनाते हैं। तुम्हारे प्रभाव से युद्ध में रामचन्द्र को विजय मिली। अब तुम अपना चित्त स्वस्थ करो और सब व्यथा दूर करो। शत्रु रावण मार डाला गया और लंका अपने अधीन कर ली गई। ६—१०। रामचन्द्र ने कहा है कि रावण जब से सीता को हर ले गया है, तब से उनको नींद नहीं आई। उन्होंने उसके मारने की जो प्रतिज्ञा की थी, वह अब पूरी हो गई। समुद्र में सेतु बाँधकर वे लंका में आये और राक्षसों का उन्होंने विनाश कर दिया। अब यहाँ तुमको कोई भय नहीं है, क्योंकि लंका के राजा अब विभीषण हैं और यहाँ का सब ऐश्वर्य उनके अधीन है।११—१२। अब तुम प्रसन्न हो जाओ और यह विश्वास करो कि अपने ही घर में बैठी हो। तुमको देखने के लिए उत्सुक विभीषण बड़े हर्ष से शीघ्र ही आते हैं। १३। हनुमान् की यह बातें सुनकर चन्द्रमुखी सीता कुछ उत्तर न दे सकीं। हर्ष के मारे उनका गला रुँध गया। १४। सीता के कुछ भी न बोलने पर वानरश्रेष्ठ हनुमान् ने कहा—हे देवि, क्या सोचती हो, हमसे बोलती क्यों नहीं हो। हनुमान् के ऐसा कहने पर धर्मचारिणी सीता गद्गद वाणी से बोलीं—रामचन्द्र की विजय सुनकर हर्ष के मारे हमारे मुँह से कुछ बोल नहीं निकला। हे वानर, यह प्रिय सन्देश लाने के बदले तुमको प्रसन्न करने के लिए इसके योग्य कौन पदार्थ दें; यह बहुत सोचने पर भी हमारी समझ में नहीं आता। १५—१८। पृथिवी पर हम ऐसा कोई पदार्थ नहीं देखतीं, जिसे इस प्रिय वचन कहने के बदले में तुमको

देकर हमें सुख हो। १९। अनेक प्रकार के रत्न, सुवर्ण और तीनों लोकों का राज्य भी इस सन्देश के बदले में देना तुच्छ है। २०। सीता के यह कहने पर हनुमान् हाथ जोड़कर बड़े हर्ष से बोले—हे देवि, तुम पतिव्रता हो, पति का प्रिय और हित चाहती हो, पति की विजय चाहती हो और निन्दारहित हो। ऐसे स्निग्ध वचन कहना तुम्हारे योग्य ही हैं। तुम्हारे ये प्रिय वचन देवताओं के राज्य से और सब रत्नों से भी बढ़कर हैं। देवताओं का राज्य आदि सब कुछ हमको प्राप्त हुआ, क्योंकि आज हम युद्ध में शत्रुओं को मारकर विजय पाये हुए रामचन्द्र को प्रसन्न देखते हैं। २१–२४। हनुमान् के यह वचन सुनकर जनकनन्दिनी सीता फिर बोलीं—तुम शुभ लक्षणों से युक्त हो, माधुर्य गुण तुम्हारा आभूषण है, बुद्धि के आठों अंग तुममें मौजूद हैं, तुम ऐसे वचन क्यों न कहो! तुम पवन के परम धार्मिक पुत्र हो, तुम्हारा बल और तुम्हारी वीरता सराहनीय है। पराक्रम, उदारता, तेज, धैर्य, क्षमा और नम्रता आदि सब श्रेष्ठ गुण तुममें हैं। इतने अधिक गुण और किसी में नहीं देखे जाते, फिर तुम ऐसे वचन क्यों न कहो! २५–२८। हनुमान् ने हाथ जोड़कर बड़ी नम्रता से कहा—इन राक्षसियों ने तुम्हारा बड़ा निरादर किया है, तुमको बहुत डरवाया और डाटा है। यदि तुम्हारी अनुमति हो तो इन सबको हम मार डालें। २९–३०। अशोक-वाटिका में तुमको यों ही अनेक प्रकार के कष्ट मिल रहे थे, उस पर ये भयानक राक्षसियाँ रावण की आज्ञा से बराबर कठोर वचन कहती थीं, ऐसा हमने सुना है। इसलिए हम चाहते हैं कि इन क्रूर आँखोंवाली भयानक राक्षसियों को मार डालें। ३१–३३। इन कठोर वचन कहनेवाली राक्षसियों को मारने की आज्ञा हमें दीजिए, हम यही वरदान आपसे माँगते हैं। इनको लातों, घूँसों और थप्पड़ों से मारें, जाँघों और टिहुनियों के प्रहार इनके ऊपर करें, इनके केश नोच डालें और दाँतों से इनकी नाक कान

काट लें। हे यशस्विनी, तुमको डाटनेवाली, तुम्हारा अप्रिय करने-वाली, इन दुष्टाओं को इस तरह के प्रहार करके मार डालने की हमारी इच्छा है । ३४–३६ । हनुमान् के यह कहने पर यशस्विनी सीता धर्मयुक्त वचन बोलीं—ये दासी हैं, राजा की आज्ञा से काम करती हैं। आज्ञा का पालन न करें तो इनको दंड दिया जाय, इसलिए इनके ऊपर क्रोध न करना चाहिए । हे वानरश्रेष्ठ, हमारे दुर्भाग्य से पूर्वजन्म के दुष्कर्मों के फलस्वरूप यह दुःख हमें मिला है। समय के फेर से यह क्लेश हमको मिलना ही था, इसमें इनका कोई दोष नहीं है। ये रावण की दासी हैं, हमको इनके ऊपर क्रोध नहीं है। रावण की आज्ञा से ये हमको धमकाती थीं, उसके मारे जाने पर अब वैसा बर्ताव नहीं करतीं ।३७–४२। उन पौराणिक* बातों पर, जो रीछ ने बाघ से कही थीं, तुम ध्यान दो। दूसरों के अधीन रहकर पाप करनेवालों को सज्जन पुरुष पापी नहीं कहते और उन लोगों के अपकार करने पर उनसे बदला नहीं लेते। क्योंकि उसके दोषी वे लोग नहीं हैं । तुम इनको दोषी और वध के योग्य समझते हो, किन्तु हम इनका कोई अपराध नहीं समझतीं, इसलिए इन बेचारियों पर दया करनी चाहिए । इनकी दयनीय दशा को देखो । मनुष्यों की हिंसा करना राक्षसों का काम ही है। रावण की आज्ञा से इन राक्षसियों ने हमारे साथ जो बर्ताव किया है, उसका

---

* एक बहेलिया वन में शिकार के लिए गया था। वहाँ एक बाघ को देखकर वह भागा और एक पेड़ पर चढ़ गया। उस पेड़ पर एक रीछ बैठा था, और बाघ भी दौड़कर उसके नीचे आ गया। बाघ ने रीछ से कहा कि तुम भी वन में रहते हो और यह व्याध वन में रहनेवाले हम लोगों का शत्रु है। इसलिए इसे ढकेल दो। रीछ ने उत्तर दिया—क्योंकि यह हमारे निवासस्थान में आया है, इसे मैं कैसे ढकेल दूँ। यह बड़ा अधर्म होगा, शरणागत की रक्षा न करना बड़ा पाप है। यह कहकर रीछ सो गया। तब बाघ ने बहेलिये से कहा कि रीछ सो गया है, यदि तुम इसको ढकेल दो तो तुमको हम छोड़ देंगे। बहेलिया वैसा ही करने को तैयार हो गया। किन्तु रीछ को जैसे ही वह ढकेलने लगा, रीछ जाग पड़ा और वृक्ष की शाखा में लटक रहा। वह पृथिवी पर नहीं गिरा। तब बाघ ने रीछ से फिर कहा—इसने तुम्हारे साथ अपराध किया है, अब तुम इसे क्यों नहीं ढकेल देते। किन्तु रीछ ने उत्तर दिया कि अपराध करने पर भी इसे हम तुमको नहीं देंगे; क्योंकि यह हमारी शरण में आया है, इसकी रक्षा करना हमारा धर्म है।

बदला इनसे लेना उचित नहीं है, क्योंकि ये पराधीन हैं। ४३—४६। सीता के यह कहने पर बोलने में चतुर हनुमान् ने कहा—आप रामचन्द्र की धर्मपत्नी हैं, ऐसा कहना आपके योग्य ही है। अब मैं रामचन्द्र के पास जाता हूँ। जो सन्देश आप कहिए, वह मैं उनसे निवेदन करूँ। सीता ने कहा—हे वानरश्रेष्ठ, अब मैं रामचन्द्र को देखना चाहती हूँ। सीता के यह वचन कहने पर पवनतनय हनुमान् ने बड़े हर्ष से उत्तर दिया—हे देवि, पूर्ण चन्द्रमा के समान जिनका मुँह है, जिन्होंने शत्रुओं का विनाश कर दिया है, जिनकी मित्रता स्थिर रहती है, इन्द्र के समान उन रामचन्द्र को लक्ष्मण के साथ शची के समान तुम देखोगी। साक्षात् लक्ष्मी के समान शोभायमान सीता से यह कहकर महावेगवान् हनुमान् रामचन्द्र के पास आये। ४७—५२।

सर्ग ११६

धनुर्धरों में श्रेष्ठ महाप्राज्ञ रामचन्द्र के पास आकर हनुमान् ने कहा—जिसके लिए बड़े-बड़े उद्योग किये गये, समुद्र में सेतु बाँधा गया, सेना और कुटुम्ब सहित रावण का विनाश किया गया, शोक से पीड़ित उन सीता को बुलाकर आप देखिए। १—२। आपकी विजय सुनकर सीता की आँखों में आँसू भर आये। वे हमको पहचानती थीं, इसलिए हमारा विश्वास करके, युद्ध में विजयी आपको और लक्ष्मण को देखने के लिए उन्होंने हमसे कहा है। ३—४। हनुमान् की यह बात सुनकर धर्मात्माओं में श्रेष्ठ रामचन्द्र मन में कुछ सोचने लगे और उनकी आँखों में आँसू भर आये। उन्होंने पृथिवी की ओर देखकर एक लम्बी साँस छोड़ी, और पास ही बैठे हुए विभीषण से कहा—सीता को सिर से स्नान कराओ, दिव्य आभूषणों और अंगराग से विभूषित करके शीघ्र उनको यहाँ ले आओ। ५—७। रामचन्द्र की

यह आज्ञा पाकर विभीषण अपनी स्त्री को साथ लेकर बहुत शीघ्र सीता के पास गये। विभीषण की स्त्री ने रामचन्द्र का सन्देश सीता से कहा—हे कल्याणी, तुम स्नान करके दिव्य आभूषण और दिव्य अंगराग से भूषित होकर शिबिका पर बैठो, रामचन्द्र ने तुमको बुलाया है, वे तुमको देखना चाहते हैं। यह सुनकर सीता ने उत्तर दिया—स्नान किये बिना ही हम शीघ्र रामचन्द्र का दर्शन करना चाहती हैं।८—१०। विभीषण ने कहा—नहीं, रामचन्द्र ने जो आज्ञा दी है, उसका पालन तुमको करना चाहिए। पतिव्रता साध्वी सीता ने विभीषण की बात स्वीकार कर ली। तब युवती स्त्रियों ने सीता को सिर से स्नान कराया, महामूल्य आभूषण और वस्त्र पहनाये, शिबिका में बैठाकर उसके ऊपर परदा डाल दिया गया। विभीषण ने बहुत-से राक्षस शिबिका की रक्षा के लिए साथ कर दिये।११—१४। विभीषण बड़े हर्ष से महात्मा रामचन्द्र के पास गये और सीता का आगमन उनसे निवेदन किया। रामचन्द्र उस समय बड़े चिन्तित थे। सीता बहुत दिनों तक राक्षस के घर में रही हैं, इसी बात को वे अपने मन में सोच रहे थे। उनका आगमन सुनकर हर्ष, विषाद, और क्रोध तीनों उनके हृदय में उदय हो आये। सीता के आने से उनको विशेष हर्ष न हुआ। पास ही खड़े हुए विभीषण को देखकर चिन्तित मन से उन्होंने कहा—सौम्य राक्षसराज, सीता को शीघ्र ही हमारे सामने लाओ।१५—१८। रामचन्द्र के यह वचन सुनकर विभीषण ने सब लोगों को हटाने का प्रयत्न किया। जामा और पगड़ी पहने, हाथ में बेत लिये, चोपदार सबको वहाँ से हटाने लगे। रीछ, वानर और राक्षस दूर जाकर खड़े हो गये। उन लोगों के हटाने में वायु के वेग से समुद्र में शब्द होने के समान शब्द हुआ।१९—२३। उन लोगों को यह बात पसंद न आई। रामचन्द्र को भी उनका अनादर सहन न हुआ, उन्होंने उनको रोक दिया। क्रोध से उनकी आँखें लाल

होगई। दृष्टि से मानों जलाते हुए विभीषण से बोले—तुम हमारी आज्ञा के बिना इन लोगों को क्यों कष्ट देते हो ? इनको मत हटाओ, क्योंकि ये सब लोग हमारे स्वजन हैं। २४—२६। इसके सिवा स्त्रियों का आचरण ही उनका परदा है, वस्त्र और घर आदि परदा नहीं है। फिर यह तो बड़े दुःख का समय है, सीता बड़ी विपत्ति में हैं, दुःखिनी हैं। सबके देखने में कोई दोष नहीं। फिर हमारे समीप होने से इनको देखने में क्या दोष है। दुःख और विपत्ति में, युद्ध, स्वयंवर, यज्ञ और विवाह में स्त्रियों का सबके सामने निकलना दोष नहीं माना जाता। इसलिए सीता शीविकासे उतरकर पैदल हमारे पास आवें और रीछ-वानर आदि उनको देखें। २७—३०। रामचन्द्र के यह कहने पर, उनका अभिप्राय समझकर, विभीषण नम्रता से सीता को पैदल ही उनके समीप ले आये। ३१। लक्ष्मण, सुग्रीव और हनुमान् को रामचन्द्र के यह वचन सुनकर बड़ा दुःख हुआ। ३२। सीता शिविका से उतरकर चलीं, लज्जा के मारे वे सिकुड़ी जाती थीं। रामचन्द्र के समीप आकर विस्मय, हर्ष और स्नेह से उन्होंने अपने स्वामी का सौम्य मुख देखा। ३३—३४। बहुत दिनों के बाद पूर्ण चन्द्रमा के समान सुन्दर मुख देखकर सीता का शोक दूर हो गया और प्रसन्नता से उनका मुख चन्द्रमा के समान हो गया। ३५।

सर्ग ११७

सिर झुकाये समीप बैठी हुई सीता को देखकर रामचन्द्र अपने हृदय के भाव प्रकट करने लगे—हे कल्याणी, हमने युद्ध में शत्रु को जीतकर तुम्हारा उद्धार किया है। पौरुष से जो काम करने योग्य था, वह हमने किया। १—२। अब हमारा क्रोध शान्त हो गया। शत्रु ने जो हमारा अपमान किया था, उसका भी मार्जन हो गया। अपने अपमान और शत्रु को साथ ही हमने नष्ट कर दिया। हमारा पौरुष सब लोगों ने

देखा, हमारा परिश्रम सफल हुआ, प्रतिज्ञा पूरी हुई। आज हम अपने प्रभाव को प्राप्त हुए। ३—४। आश्रम पर हमारे न रहने से मायावी राक्षस छल से तुमको हर लाया था। दैव के कोप से यह बात हुई, किन्तु मनुष्य होकर भी हमने दैवकृत दोष को जीत लिया। ५। अपमान करनेवाले का विनाश यदि अपने बल से न कर सके, तो उस अल्प बुद्धिवाले का पौरुष किस काम का है। समुद्र लाँघकर लंका में आना और लंका में आग लगाना आदि जो प्रशंसनीय काम हनुमान् ने किये, वे आज सफल हुए। ६—७। हमको हित की सलाह देते हुए और युद्ध में पराक्रम दिखाते हुए सुग्रीव का सेना के साथ परिश्रम करना आज सफल हुआ। ८। विभीषण का परिश्रम आज सफल हुआ, जो निर्गुणी भाई को त्यागकर स्वयं हमारे पास आये। ९। रामचन्द्र की यह बातें सुनकर मृगी के समान उत्फुल्लनयनी सीता की आँखों में आँसू भर आये। १०। समीप बैठी हुई, प्राणों से भी अधिक प्रिय सीता को देखते हुए, यद्यपि उनको शुद्ध जानते थे, किन्तु लोकापवाद के भय से रामचन्द्र का हृदय विदीर्ण हो रहा था। कमल-नयनी, काले कुंचित केशोंवाली सीता से, वानरों और राक्षसों के सामने रामचन्द्र फिर बोले—मनुष्य को अपने अपमान का मार्जन करने के लिए जो कुछ करना चाहिए, रावण को मारकर, हमने वह काम किया और तुम्हारा उद्धार किया, जैसे महात्मा अगस्त्य ने इल्वल और वातापि नामक दैत्यों का विनाश करके दक्षिण दिशा को निर्भय कर दिया था। ११—१४। तुम्हारा कल्याण हो। सुहृदों की सहायता से युद्ध में हमने बड़े परिश्रम से राक्षसों का जो वध किया है, वह तुमको प्राप्त करने के लिए नहीं, किन्तु लोकापवाद को दूर करने के लिए, अपने सदाचार की रक्षा के लिए, अपने विख्यात वंश को कलंक से बचाने के लिए हमने रावण का विनाश किया है। १५—१६। बहुत दिनों तक रावण के यहाँ रहने से तुम्हारे चरित्र में हमको

सन्देह है, इसलिए जैसे आँखों में पीड़ा होने से दीपक अच्छा नहीं लगता, वैसे ही सामने बैठी हुई तुम हमें अच्छी नहीं लगती हो।१७। अतएव हे जनकनन्दिनी, अब तुम्हारा जहाँ मन चाहे वहाँ तुम चली जाओ। अब तुमसे हमारा कुछ भी प्रयोजन नहीं है। १८। अच्छे कुल में उत्पन्न कोई भी तेजस्वी पुरुष अन्य के घर में रही हुई स्त्री को प्रेम के वश स्वीकार नहीं कर सकता। १९। रावण ने तुमको गोद में उठा लिया, कुदृष्टि से देखा, फिर हम कैसे तुमको ग्रहण कर लें और अपने कुल की निन्दा करावें। २०। हमने रावण को जीत कर उसके हाथ से तुम्हारा उद्धार किया, यही हमारा प्रयोजन था। अब तुमसे हमारा कोई सम्बन्ध नहीं है, तुम्हारा जहाँ जी चाहे, वहाँ चली जाओ। २१। हे कल्याणी, हमने बहुत सोच-समझकर ये बातें कही हैं। अब तुम अपने जीवन-निर्वाह के लिए लक्ष्मण, भरत अथवा शत्रुघ्न के पास रहो, अथवा सुग्रीव या विभीषण में से किसी के यहाँ रहो। जिसमें अपना सुख देखो, वह काम करो। २२-२३। तुम्हारा दिव्य मनोहर रूप देखकर रावण इतने दिनों तक कैसे सहन कर सका होगा, जब कि तुम उसके घर में रहती थीं।२४। प्रिय वचन सुनने के योग्य, बहुत समय से सम्मान पाई हुई सीता, रामचन्द्र के यह अप्रिय वचन सुनकर रोने लगीं। वे हाथी की सूँड़ से उखाड़ी हुई लता के समान व्यथित हो गईं। २५।

सर्ग ११८

क्रोध से कहे हुए रामचन्द्र के कठोर वचन सुनकर सीता को बड़ा दुःख हुआ। ऐसी बातें कभी उन्होंने न सुनी थीं, वानरों और राक्षसों के सामने पति के यह कठोर वचन सुनकर लज्जा के मारे वे झुक गईं। अपने अंगों में सिमटी जाती थीं, वचनरूप बाणों से पीड़ित होकर रोने लगीं। १-३। फिर वे आँसू पोंछती हुई गद्गद वाणी से रामचन्द्र

से बोलीं—हे वीर, सुनने में अत्यन्त कटु, ऐसे अयोग्य वचन मुझे क्यों कहते हो ? साधारण पुरुष साधारण स्त्री को जो वचन कहता है, वैसे रूखे वचन तुम मुझे सुनाते हो। ४–५। हे महाबाहु, तुम मुझे जैसी समझते हो वैसी मैं नहीं हूँ। मेरा विश्वास करो, मैं अपने सदाचार की शपथ करती हूँ। ६। तुम साधारण स्त्रियों का आचरण देखकर स्त्रियों की जाति पर शंका करते हो, ऐसा तुमको न करना चाहिए। अब यदि हमारा विश्वास हो गया हो तो अपना सन्देह दूर करो।७। हे प्रभो, रावण की देह से जो हमारा स्पर्श हुआ, वह हमारी विवश अवस्था में हुआ, हमारी इच्छा से नहीं, सो भी दैव का अपराध है, जिसने हमको उसके वश में कर दिया। ८। हमारे वश में तो हमारा मन था, वह आप ही में लगा हुआ था। हमारा शरीर पराधीन था, हमारा कोई सहायक नहीं था, हम क्या कर सकती थीं। ९। इतने दिनों तक साथ रहने से, साथ ही साथ बढ़े हुए प्रेम से, यदि आप मुझे न जान सके, तो सदा के लिए मेरा विनाश हुआ। यदि मुझे त्यागना ही था, तो वीर हनुमान् को जब मुझे देखने के लिए लंका को भेजा था, तभी मुझे सन्देश दे दिया होता कि आपने मुझे त्याग दिया है। १०–११। आपसे त्यागने का वचन सुनकर वानर-वीर हनुमान् के सामने ही मैं अपने प्राण त्याग देती। आपको और आपके सुहृदों को राक्षसों से संग्राम करने का वृथा परिश्रम और क्लेश क्यों होता। महाराज, साधारण मनुष्य के समान क्रोध के वश में होकर आपने मुझे भी साधारण स्त्री समझ लिया है।१२–१४। आपने मेरे चरित्र को नहीं समझा। मैं जनक की पुत्री हूँ, पृथ्वी से उत्पन्न हुई हूँ, इसका भी आपने विचार नहीं किया।१५। बाल्यावस्था में ही आपके साथ मेरा विवाह हुआ, तबसे मैं आपके साथ रही। मेरा प्रेम और स्वभाव आप जानते हैं, किन्तु उसका भी आपने ध्यान नहीं दिया।१६। रो-रोकर गद्गद वाणी से इस प्रकार कहती हुई सीता ने चिन्ता करते हुए दुःखित

लक्ष्मण से कहा—लक्ष्मण ! चिता बनाओ, वही इस दुःख की औषध है। मिथ्या अपवाद से मेरा अपमान किया गया, अब मैं जीवित रहना नहीं चाहती । १७–१८ । पति ने मेरे गुणों से अप्रसन्न होकर सबके सामने मुझे त्याग दिया है, इसलिए मैं अग्नि में प्रवेश करूँगी क्योंकि मेरा विश्वास दिलाने के लिए अग्नि ही योग्य गति है । १६। सीता के यह कहने पर शत्रुओं का विनाश करनेवाले लक्ष्मण इन बातों को न सह सके। वे रामचन्द्र की ओर देखने लगे। रामचन्द्र की आकृति से उनका अभिप्राय समझकर और उनकी सम्मति से लक्ष्मण ने चिता बनाई । २०–२१ । उस समय रामचन्द्र का रूप कालान्तक यम के समान हो गया था। उनका कोई सुहृद् न उनको समझा सका, न उनसे कुछ बोल सका और न उनकी ओर देख सका। वे सिर झुकाये बैठे थे, सीता उनकी प्रदक्षिणा करके प्रज्वलित अग्नि के समीप गईं । २२–२३ । हाथ जोड़कर देवताओं और ब्राह्मणों को प्रणाम करके अग्नि के समीप खड़ी होकर बोलीं—अग्नि सब लोकों के साक्षी हैं, यदि मेरा मन रामचन्द्र के सिवा अन्य किसी में न जाता हो, तो अग्नि सब ओर से मेरी रक्षा करें। मुझ सदाचारिणी को रामचन्द्र दुष्टा समझते हैं, उसकी साक्षी अग्नि हैं। यदि मेरा चरित्र शुद्ध है, तो अग्नि सब ओर से मेरी रक्षा करें। यह कहकर सीता अग्नि की प्रदक्षिणा करके जलती हुई चिता में निश्शंक प्रवेश कर गईं । २४–२७। सीता को बाल, वृद्ध और युवा सभी ने अग्नि में प्रवेश करती हुई देखा । २८। तपाये हुए सुवर्ण के रंग की सीता, तपाये हुए सुवर्ण के आभूषण पहने, जलती हुई चिता में सबके सामने कूद पड़ीं । २६ । सुवर्ण की वेदी के समान प्रकाशित विशालाक्षी सीता को अग्नि में कूदती हुई सब लोगों ने देखा । ३० । देवता, गन्धर्व और ऋषियों ने भी प्रज्वलित अग्नि में पूर्णाहुति के समान गिरती हुई सीता को देखा। ३१ । मन्त्रों से अभिमन्त्रित वसुधारा के समान

सीता को अग्नि में कूदती हुई देखकर स्त्रियाँ चिल्लाने लगीं। ३२। देवता, गन्धर्व और दानवों ने भी, शाप के वश नरक में गिरती हुई देवी के समान, सीता को अग्नि में प्रवेश करती हुई देखा। ३३। सीता को अग्नि में प्रवेश करते देखकर राक्षस और वानर हाहाकार करने लगे। उनके चिल्लाने का बड़ा अद्भुत शब्द हुआ। ३४।

सर्ग ११९

वानरों और राक्षसों का हाहाकार सुनकर रामचन्द्र उदास हो गये। उनकी आँखों में आँसू भर आये। थोड़ी देर तक चिन्ता करते रहे। उसी समय कुबेर, पितरों के साथ यमराज, सहस्राक्ष इन्द्र, जल के स्वामी वरुण, वृषभध्वज महादेव, सब लोकों के कर्ता ब्रह्मा, ये सब देवता सूर्य के समान चमकते हुए अपने-अपने विमानों पर चढ़ कर लंका में रामचन्द्र के पास आये। १—४। देवताओं को देखकर रामचन्द्र हाथ जोड़कर खड़े हो गये। देवताओं ने आभूषण से शोभित लम्बी भुजाओं को उठाकर रामचन्द्र से कहा——आप सब लोकों के कर्ता हैं, ज्ञानियों में श्रेष्ठ और सबके स्वामी हैं। फिर आप अग्नि में प्रवेश करती हुई सीता की उपेक्षा क्यों करते हैं ? आप देवताओं में श्रेष्ठ हैं, क्या आप अपने स्वरूप को नहीं जानते ? ५—६। वसुओं में प्रथम वसु ऋतुधामा आप ही हैं, तीनों लोकों के आदिकर्ता आप ही हैं, प्रजापति स्वयम्भू आप ही हैं, रुद्रों में आठों रुद्र, साध्यों में पाँचों साध्य आप ही हैं। आप विराट्रूप हैं, अश्विनीकुमार आपके कान और सूर्य-चन्द्रमा आपके नेत्र हैं। सृष्टि की आदि, मध्य और अन्त में केवल आप ही विद्यमान रहते हैं। हे परन्तप, फिर साधारण पुरुष के समान आप सीता की उपेक्षा क्यों करते हैं ? ७—९। लोकपालों के यह कहने पर सब लोकों के स्वामी, धर्मात्माओं में श्रेष्ठ, रामचन्द्र ने कहा—हम तो अपने को मनुष्य समझते हैं, महाराज दशरथ के

पुत्र हैं, किन्तु हम जो कुछ हों और जहाँ से आये हों, वह सब आप बताइए। १०–११। रामचन्द्र के ये वचन सुनकर ब्रह्मा ने उत्तर दिया—हे सत्यपराक्रम, हमारे सत्य वचन सुनो—आप साक्षात् नारायण हैं, चक्र धारण करते हैं, और सब कुछ करने में समर्थ हैं। आप अपनी इच्छा से एकशृंग वराह का अवतार लेते हैं; भूत, भविष्य, वर्तमान सब कालों में शत्रुओं का विनाश करते हैं। आप सत्य अविनाशी ब्रह्म हैं, आपका आदि, मध्य और अन्त नहीं है। सब लोकों के परमधर्म आप ही हैं। विश्वक्सेन चतुर्भुज आप ही हैं। शार्ङ्गधर, हृषीकेश, पुरुषोत्तम पुरुष, अजित, खड्गधृक्, विष्णु, कृष्ण, बृहद्बल, सेनानी, ग्रामणी आदि आपके नाम हैं। बुद्धि, क्षमा और दम सब कुछ आप ही हैं। जगत् की उत्पत्ति और प्रलय के स्थान आप ही हैं। उपेन्द्र और मधुसूदन आप ही हैं। आप महेन्द्र और पद्मनाभ हैं, महर्षियों ने आपको शरणागत के रक्षक बताया है। १२–१७। सहस्रशृंग, वेदात्मा, शतशीर्ष और महर्षभ भी आपके नाम हैं। आप तीनों लोकों के कर्ता स्वयंप्रभु हैं, सिद्धों साध्यों के आश्रय हैं, यज्ञ, वषट्कार और ओंकार भी आप ही हैं। आपकी उत्पत्ति और अन्त कोई नहीं कह सकता। आपके रूप का बखान भी कोई नहीं कर सकता। गो-ब्राह्मण और सब प्राणियों में आप ही दिखाई देते हैं। दिशाओं, पर्वतों, वनों और आकाश में सर्वत्र आप हैं। आप सहस्रपाद, शतशीर्ष, श्रीमान् और सहस्रनेत्र हैं। सब प्राणियों को और पर्वतों सहित पृथिवी को आप ही धारण किये हुए हैं। पृथिवी के नीचे जल में शेषरूप आप ही दिखाई देते हैं। हे राम! देवता, गन्धर्व और दानवों सहित तीनों लोकों को आप धारण किये हुए हैं। हम आपके हृदय हैं, और सरस्वती आपकी जिह्वा है। देवता आपके रोम हैं, आपके पलक मारने से रात होती है और पलक खोलने से दिन होता है। वेद आप ही से उत्पन्न हैं। आपके

विना भूत, भविष्य, वर्तमान कुछ भी नहीं है। जगत् में जो कुछ दीखता है, वह सब आप ही हैं। यह सम्पूर्ण जगत् आपका शरीर है, पृथिवी स्थिरता है, अग्नि आपका कोप है, चन्द्रमा आपका हर्ष है। आपही ने त्रिविक्रम का रूप धारण करके तीनों लोकों को तीन पग से नाप लिया था।१८—२६। महासुर बलि को बाँधकर आपही ने इन्द्र को राजा बनाया था। सीता लक्ष्मी का रूप हैं, और आप प्रजापति विष्णु का अवतार हैं। रावण का वध करने के लिए मनुष्य का रूप धारण करके पृथिवी पर आये हैं। हे धर्मात्माओं में श्रेष्ठ रामचन्द्र, रावण का वध करके आपने हम लोगों का कार्य किया, अब आप देवलोक को चलिए। हे देव, आपका बल, वीर्य, पराक्रम निष्फल नहीं होता। आपकी स्तुति और आपका दर्शन भी निष्फल नहीं होता। जो लोग आपके भक्त हैं, वे भी कभी निष्फल नहीं होते। आपके भक्तों के सब मनोरथ इस लोक में और परलोक में भी सफल होते हैं। २७—३१। इस पुरातन आर्ष स्तोत्र को जो लोग पढ़ेंगे, वे जन्म और मरण से मुक्त होकर मोक्षपद को प्राप्त करेंगे। ३२।

सर्ग १२०

ब्रह्मा के यह शुभ वचन सुनकर अग्निदेव मूर्ति धारण करके सीता को गोद में लिये हुए उस चिता से निकल आये। चिता में प्रवेश करते समय सीता का जैसा स्वरूप था, वैसा ही रूप अग्निदेव की गोद में सब लोगों ने देखा। वे तपाये हुए सोने के आभूषण पहने थीं, लाल वस्त्र धारण किये थीं, काले कुंचित उनके केश थे। उनकी माला और आभूषण मलिन नहीं हुए थे। उनकी देह की कान्ति प्रातःकाल के सूर्य के समान थी। सब लोकों के साक्षी मूर्तिमान् अग्नि ने गोद में सीता को लेकर रामचन्द्र को दे दिया और उन्होंने कहा—हे राम, यह सीता आपकी हैं। मन से, वचन से, बुद्धि से अथवा

दृष्टि से, किसी प्रकार का भी पाप इन्होंने नहीं किया। इनका चरित्र शुद्ध है, इस सदाचारिणी ने आपके सिवा और किसी में मन नहीं लगाया।१–६। आपकी अनुपस्थिति में बलवान् राक्षस रावण इनको निर्जन वन से हर ले गया था। यह बेचारी विवश थी। उसने अन्तःपुर में बन्द कर लिया था। भयानक राक्षसियाँ इसकी रखवाली करती थीं, किन्तु इसका चित्त सदा आपही में लगा रहा। अनेक प्रलोभन देने पर, बहुत धमकाने और डाटने पर भी, आपमें मन लगाये हुई इस सदाचारिणी ने उस राक्षस को आँख उठाकर देखा तक नहीं। उसे तृण के बराबर भी नहीं समझा। ७–१०। हे रघुनन्दन! पापरहित, विशुद्धचरित्रवाली सीता को ग्रहण करो। अब इसे कुछ न कहो, आपको हम यह आज्ञा देते हैं। ११। अग्नि के ये वचन सुनकर हर्ष के मारे रामचन्द्र की आँखों में आँसू भर आये। थोड़ी देर तक कुछ सोचते रहे, उत्तर न दे सके। फिर वे देवताओं में श्रेष्ठ अग्निदेव से बोले—सीता अवश्य ही पापरहित हैं। इनके समान पवित्र और कोई स्त्री तीनों लोकों में नहीं है। रावण के अन्तःपुर में ये बहुत दिनों तक रही हैं, इसलिए इनको शुद्ध किये विना यदि हम ग्रहण कर लेते, तो सब लोग हमको यही कहते कि दशरथ का पुत्र राम कामी और मूर्ख है। १२–१५। हम भी जानते हैं कि जनकनन्दिनी सीता सदा हमारे अनुकूल रही हैं और हमीं में मन लगाये रहती हैं। हमने लोगों के विश्वास के लिए अग्नि में प्रवेश करती हुई इनकी उपेक्षा की है। अपने तेज से अपनी रक्षा स्वयं करती हुई इस विशालाक्षी का रावण कुछ नहीं बिगाड़ सकता था, जैसे समुद्र मर्यादा का अतिक्रम नहीं कर सकता। वह दुष्ट मन से भी सीता को नहीं प्राप्त कर सकता था, जैसे जलती हुई आग की शिखा को कोई छू नहीं सकता। रावण के अन्तःपुर में रहने से इनमें किसी तरह का दोष नहीं है। क्योंकि ये हमारी अनन्य भक्त हैं, इनका और हमारा सम्बन्ध सूर्य और

प्रभा के समान है। १६—१९। फिर आप लोगों की आज्ञा का पालन करना हमारा अवश्य कर्तव्य है, क्योंकि आप लोग लोकपाल हैं और हमारे हित की बात कहते हैं। देवताओं ने विजयी महाबली रामचन्द्र के कामों की इस प्रकार प्रशंसा की। उनको बड़ा हर्ष हुआ और सीता को अपने पास बैठाकर उन्होंने बड़े सुख का अनुभव किया। २०—२१।

सर्ग १२१

रामचन्द्र के यह शुभ वचन सुनकर महादेव बोले—हे कमलनयन, महाबाहु, विशाल वक्षस्थल, शत्रुनाशन, धर्मात्माओं में श्रेष्ठ रामचन्द्र! बड़े भाग्य से तुमने यह काम किया। १—२। रावण से सब लोकों को बड़ा भय था, तुमने दैव की कृपा से युद्ध में उसे मारकर उस अन्धकाररूप महाभय को हटाया। ३। अब अयोध्या को जाओ, दुःखित भरत को समझाओ। यशस्विनी कौशल्या, सुमित्रा और केकयी को देखो। अयोध्या का राज्य करो और सुहृदों को आनन्दित करो। इक्ष्वाकुकुल में वंश-परम्परा की वृद्धि करो। अश्वमेध यज्ञ करके, ब्राह्मणों को धन देकर उत्तम यश प्राप्त करके देवलोक को आओ। ४—६। यह देखो, तुम्हारे पिता महायशस्वी राजा दशरथ विमान पर बैठे हैं, तुमने इनका उद्धार किया है। ये इन्द्रलोक को गये हैं। लक्ष्मण और तुम इनको प्रणाम करो। महादेव के वचन सुनकर लक्ष्मण के साथ रामचन्द्रजी ने विमान पर बैठे हुए पिता को प्रणाम किया। ७—९। अपने तेज से शोभित, श्वेत वस्त्र धारण किये हुए, राजा दशरथ को दोनों भाइयों ने देखा। १०। प्राणों से भी बढ़कर प्रिय रामचन्द्र को देखकर महाराज दशरथ को बड़ा हर्ष हुआ। उन्होंने रामचन्द्र को दोनों हाथों से पकड़कर छाती से लगाया और गोद में बैठाकर कहा—हे राम, स्वर्गलोक में देवता हमारा बड़ा सम्मान करते हैं, किन्तु तुम्हारे विना वह सुख हमें अच्छा नहीं लगता। ११—१३। केकयी

ने तुमको वनवास देने के लिए जो कटुवचन कहे थे, वे आज भी हमें विस्मृत नहीं हुए। १४। आज तुमको और लक्ष्मण को कुशलपूर्वक देखकर और छाती से लगाकर सब दुख छूट गये, जैसे सूर्य घनीभूत शिशिर को पार करते हैं। १५। हे पुत्र, तुम महात्मा हो, तुमने हमारी प्रतिज्ञा पूरी करके हमारा उद्धार किया, जैसे धर्मात्मा अष्टावक्र ने अपने पिता कहोल को तार दिया था। १६। रावण का वध कराने के लिए इन्द्र ने जो तुम्हारे अभिषेक में विघ्न डाला और तुम्हारा वनवास कराया वह हमें अब मालूम हुआ। १७। हे राम, कौशल्या का मनोरथ सफल होगा, वे वन से लौटकर अयोध्या में आये हुए तुमको देखेंगी। अयोध्या के निवासियों की भी इच्छाएँ पूरी होंगी, तुम्हारा राज्याभिषेक सब लोग देखेंगे। १८–१९। धर्मात्मा पुण्यवान् और बलवान् तुम्हारे भक्त भरत का और तुम्हारा मिलाप देखने की हमारी इच्छा है। २०। हे सौम्य, हमारी प्रतिज्ञा का पालन करने के लिए तुमने सीता और लक्ष्मण के साथ चौदह वर्ष वनवास किया। अब वनवास के दिन पूरे हो गये हैं, तुम्हारी और हमारी प्रतिज्ञा पूरी हो गई। तुमने युद्ध में रावण को मारा, इससे देवता भी सन्तुष्ट हो गये। हे शत्रुनाशन, तुमने यह श्लाघनीय काम किया। तुम्हारी कीर्ति संसार में फैली, अब तुम भाइयों के साथ राज्य करो और बहुत दिनों तक जीवित रहो। २१–२३। महाराज दशरथ के यह कहने पर रामचन्द्र हाथ जोड़कर बोले—हे धर्मज्ञ, केकयी और भरत के ऊपर आप कृपा कीजिए। आपने केकयी से कहा था कि पुत्रसहित तुम्हारा त्याग करते हैं, यह घोर शाप उनको न लगे। २४–२५। महाराज दशरथ ने हाथ जोड़े हुए रामचन्द्र से कहा—अच्छा, ऐसा ही होगा। फिर उन्होंने लक्ष्मण को गले से लगाकर और उनसे कहा—धर्मज्ञ लक्ष्मण, तुम रामचन्द्र को प्रसन्न रखते हो, इससे संसार में तुम्हारा बड़ा यश होगा और अन्त में स्वर्गलोक प्राप्त करोगे। रामचन्द्र सब लोकों के

हितैषी हैं, इनकी सेवा करने से तुम्हारा कल्याण होगा। देखो, महात्मा पुरुषोत्तम रामचन्द्र की स्तुति इन्द्र आदि सब देवता, सिद्ध, महर्षि और तीनो लोकों के निवासी सब प्राणी करते हैं। ये मनुष्य नहीं हैं, अविनाशी ब्रह्म हैं; देवताओं के हृदय में भी निवास करते हैं। सीता और तुम इनकी सेवा करो। इनकी सेवा से सदाचार, धर्म और यश प्राप्त करोगे।२६—३१। सीता भी हाथ जोड़े उनके सामने खड़ी थीं, लक्ष्मण से यह कहकर महाराज दशरथ सीता से बोले—हे पुत्री, राम ने तुमको त्याग देने की जो बात तुमसे कही थी, उसके लिए इनके ऊपर क्रोध न करना। क्योंकि ये तुम्हारा हित चाहते हैं, तुम्हारी शुद्धि के लिए ऐसा कहा था। हे पुत्री, जो दुष्कर काम तुमने किया है, इससे स्त्री-जाति का बड़ा यश होगा। यद्यपि पति की सेवा के लिए तुमको उपदेश देने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि तुम स्त्री-धर्म को जानती हो, किन्तु हमने अपना कर्तव्य समझकर तुमको उपदेश दिया है।३२—३५। इस प्रकार राम, लक्ष्मण और सीता को समझाकर विमान पर बैठे हुए महाराज दशरथ इन्द्रलोक को चले गये। ३६—३७।

सर्ग १२२

महाराज दशरथ के चले जाने पर हाथ जोड़े हुए रामचन्द्र से इन्द्र बड़े प्रेम से बोले—हे पुरुषश्रेष्ठ, आपका दर्शन पाकर हम लोगों को बड़ा हर्ष हुआ; क्योंकि आपने हमारे शत्रु रावण का वध किया है। हम लोग बड़े प्रसन्न हैं, आपका भी यदि कोई काम हो तो हमसे कहिए। सीता और लक्ष्मण के साथ खड़े हुए रामचन्द्र ने इन्द्र से कहा—हे देवराज, यदि आप हमारे ऊपर प्रसन्न हैं, तो हम जो कहें, वह कीजिए। जो वानर युद्ध में हमारे लिए प्राण त्याग कर यमलोक को गये हैं, वे सब जीवित होकर उठ खड़े हों।१—५। ये लोग हमारे काम

के लिए स्त्री और पुत्र को छोड़कर यहाँ आये हैं, इनको हम प्रसन्नचित्त देखना चाहते हैं। ये लोग बड़े वीर हैं, इन्होंने युद्ध में बड़ा पराक्रम किया है, ये मृत्यु को कुछ भी नहीं समझते। हे पुरन्दर, इनको जीवित कर दीजिए। ६—७। हमारा प्रिय करने के लिए इन लोगों ने मृत्यु की परवा नहीं की है। आपकी कृपा से ये लोग जीवित हो जायँ, यही वर हम माँगते हैं। ये पहले की तरह बलवान् हो जायँ। इनकी देह में घाव न रहें और किसी प्रकार का रोग भी न रहे। इन रीछों और वानरों को हम प्रसन्नचित्त देखना चाहते हैं। इसके सिवा यह भी वरदान दीजिए कि ये लोग जहाँ कहीं रहें, वहाँ अकाल में भी फूल-फल और मूल प्राप्त हों। नदियों का पानी निर्मल रहे। ८—१०। महात्मा रामचन्द्र के ये वचन सुनकर इन्द्र ने बड़े प्रेम से कहा—हे रघूत्तम, यद्यपि तुमने बड़ा कठिन वरदान माँगा है, किन्तु हमारा वचन आज तक कभी मिथ्या नहीं हुआ, इसलिए जो तुम चाहते हो वह अवश्य होगा। ११—१२। जो वानर और रीछ युद्ध में मारे गये हैं और उनके सब अंग छिन्न-भिन्न हो गये हैं, वे सब जीवित होकर उठ खड़े होंगे। वे पहले की तरह बलवान् हो जायँगे, उनकी देह में न घाव रहेंगे और न थकावट रहेगी। जैसे सोते हुए मनुष्य नींद टूट जाने पर उठ बैठते हैं वैसे ही ये सब वानर जीवित होकर उठ खड़े होंगे। अपनी स्त्री और पुत्रों से, सुहृदों, बान्धवों और जातिवालों से बड़े हर्ष से मिलेंगे। १३—१५। हे धनुर्धर रामचन्द्र, ये लोग जहाँ कहीं रहेंगे वहाँ के वृक्ष अकाल में भी फूलें और फलेंगे। नदियों में सदा निर्मल जल रहेगा। १६। इन्द्र के यह कहते ही मरे हुए सब वानर सोकर जागे हुए के समान उठ खड़े हुए। उनके अंगों में घाव का चिह्न भी न रह गया। यह क्या हुआ, यह कहते हुए सब वानर बड़े विस्मित हुए। कार्य सिद्ध हो जाने से रामचन्द्र को बड़ा हर्ष हुआ। उनको

कृतार्थ देखकर देवता स्तुति करने लगे और बड़े प्रेम से फिर उनसे बोले—राजन्, अब वानरों को बिदा कीजिए। ये लोग अपने-अपने घर को जायँ और आप भी अयोध्या को जाइए। १७–१९। दुःखिनी सीता को आश्वासन दीजिए। आपके शोक से व्रत धारण करते हुए भरत को जाकर देखिए। शत्रुघ्न और सब माताओं से मिलिए। अपना अभिषेक कराइए और नगरनिवासियों को प्रसन्न कीजिए। राम और लक्ष्मण से यह कहकर सहस्राक्ष इन्द्र, सूर्य के समान प्रकाशित रथ पर बैठकर बड़े हर्ष से अपने स्थान को चले गये। जाते समय दोनों भाइयों ने सब देवताओं को प्रणाम किया। उसके बाद सब वानरों को विश्राम करने की आज्ञा दी। राम और लक्ष्मण से सुरक्षित वानरी सेना युद्ध में विजय पाने के कारण बड़ी प्रसन्न थी। हर्षित होने के कारण चन्द्रमा से शोभित रात्रि के समान वह शोभित थी। २०–२४।

सर्ग १२३

रात को रामचन्द्र सुख से सोये और प्रातःकाल उनके जागने पर विभीषण हाथ जोड़कर उनकी कुशल पूछकर बोले—आपकी जय हो, अनेक प्रकार के सुगन्धित पदार्थ मिले हुए जल से स्नान कराने के लिए, चन्दन आदि दिव्य गन्ध देह में लगाने के लिए, उत्तम वस्त्र-आभूषण, अलंकार और मालाएँ पहनाने के लिए, कमल के समान आँखोंवाली सुन्दरी स्त्रियाँ विधिपूर्वक स्नान आदि कराने के लिए सब सामग्री लेकर आपके सामने उपस्थित हुई हैं। कृपा करके आप यह सब स्वीकार कीजिए। १–३। विभीषण के यह कहने पर रामचन्द्र ने उत्तर दिया—सुग्रीव आदि मुख्य वानरों को स्नान कराइए, हम अभी चन्दन और आभूषण आदि धारण नहीं कर सकते। क्योंकि सत्यवादी महाबाहु महात्मा भरत हमारे लिए तपस्या कर रहे हैं, उनके बिना हम वस्त्र-आभूषण आदि धारण करना उचित

नहीं समझते। अब इस बात की शीघ्रता करनी चाहिए कि जहाँ तक सम्भव हो, हम अयोध्या में शीघ्र पहुँचे; क्योंकि अयोध्या यहाँ से बहुत दूर है और मार्ग भी बड़ा दुर्गम है। ४—८। रामचन्द्र के यह कहने पर विभीषण ने कहा—हे राजकुमार, एक ही दिन में आपको अयोध्या में पहुँचा दूँगा। आपका कल्याण हो। बलवान् भाई रावण ने कुबेर को युद्ध में जीतकर सूर्य के समान प्रकाशित, इच्छानुसार चलनेवाले पुष्पक-नामक विमान को बलपूर्वक छीन लिया था। हे अतुलविक्रम, आपकी यात्रा के लिए वह सुरक्षित है। बादलों के समान उस विमान पर बैठकर आप अनायास अयोध्या में पहुँच जायँगे। ६—११। हे रामचन्द्र, यदि आप मुझ पर अनुग्रह करते हैं, आपको मेरे गुणों का स्मरण है, यदि आप मेरा स्नेह करते हैं, तो लक्ष्मण और सीता के साथ आज की रात और यहाँ निवास कीजिए। मैं सब उत्तम पदार्थों से आपके सुहृदों का, वानरी सेना का और आपका सम्मान करूँ, तब आप यहाँ से जाइए। मैं आपका सेवक हूँ, आपको आज्ञा नहीं देता हूँ; सौहार्द, नम्रता और सम्मान के साथ आपका सत्कार करना चाहता हूँ। मेरा किया हुआ सत्कार आपको स्वीकार करना चाहिए। १२—१५। विभीषण के यह वचन सुनकर रामचन्द्र वानरों और राक्षसों के समक्ष उनसे बोले—हे वीर, आपने सब प्रकार से हमारी सेवा की है, अच्छी सलाह दी है, आप ही की मन्त्रणा से युद्ध में विजय मिली है, अब आपको कुछ भी करने की आवश्यकता नहीं है। हे राक्षसेश्वर, आपकी इच्छा हम इसलिए पूरी नहीं कर सकते कि हमारा मन भरत को देखने के लिए शीघ्रता कर रहा है। भरत हमको लौटाने के लिए चित्रकूट तक आये, पैरों पर सिर रखकर उन्होंने प्रार्थना की, किन्तु हम उनकी वह प्रार्थना स्वीकार नहीं कर सकते थे। १६—१६। यशस्विनी माता कौसल्या, सुमित्रा, कैकयी तथा गुरुजनों और पुरवासियों को देखने के लिए हमारा मन

व्याकुल हो रहा है। २०। हे सौम्य, आप सब प्रकार से हमारी पूजा कर चुके, अब हमको अयोध्या को जाने की अनुमति दीजिए। आप इस बात को न मानने से क्रोध न कीजिएगा। हे मित्र, हम आपसे क्षमा माँगते हैं। २१। विमान शीघ्र ले आइए, हमारा कार्य हो गया है, अब यहाँ रहने का कोई प्रयोजन नहीं है। २२। रामचन्द्र के यह कहने पर राक्षसराज विभीषण ने सूर्य के समान प्रकाशित पुष्पक विमान को मँगाया। २३। वह विमान सुवर्णमय था, उसमें वैडूर्यमणि के आसन बने थे, चाँदी के समान श्वेतवर्ण स्त्रियों के विहार-स्थान बने थे। ध्वजा और पताका श्वेतवर्ण थी। सुवर्णमय बहुत-से घर बने थे, उनमें मोती और मणि के गवाक्ष थे। छोटी घंटियाँ और बड़े घंटे भी बँधे थे, उनका मनोहर शब्द होता था। विश्वकर्मा का बनाया हुआ वह विमान मेरु पर्वत के शिखर के आकार का था। चाँदी और मोतियों से शोभित वह बहुत सुन्दर विमान राजाओं के बैठने के योग्य बना हुआ था। उसकी फ़र्श स्फटिक मणि की बनी हुई थी और बैठने के स्थान वैडूर्यमणि के बने हुए थे। उनके ऊपर बहुमूल्य बिछौने बिछे थे। २४—२८। मन के समान वेग से चलनेवाला विमान विभीषण की आज्ञा से वहाँ लाया गया। 'विमान आया है', यह रामचन्द्र से कहकर विभीषण उनके सामने खड़े हो गये। पर्वताकार, इच्छानुसार चलनेवाले, पुष्पक विमान को देखकर रामचन्द्र और लक्ष्मण को बड़ा विस्मय हुआ। २९—३०।

सर्ग १२४

पुष्पों से आभूषित पुष्पक विमान को देखकर समीप खड़े हुए विभीषण हाथ जोड़कर बड़ी नम्रता से रामचन्द्र से बोले—अब क्या आज्ञा है। महातेजस्वी रामचन्द्र ने कुछ सोचकर बड़े स्नेह से लक्ष्मण के समक्ष विभीषण से कहा—इन वानरों ने इस युद्ध में बड़ा प्रयत्न

और परिश्रम किया है। धन-रत्न आदि से इनका सत्कार करो। हे राक्षसेश्वर, संग्राम से न भागनेवाले, प्राणों का भय छोड़कर युद्ध करनेवाले, इन वानरों की ही सहायता से आपने विजय प्राप्त की है। इसलिए धन-रत्न आदि देकर इनका सत्कार कीजिए, जिससे इनका परिश्रम सफल हो। १—६। आपसे सम्मानित होकर ये प्रसन्न होंगे, आपके कृतज्ञ रहेंगे और आवश्यकता पड़ने पर आपकी सहायता करेंगे। आप लंका के राजा हैं; जितेन्द्रिय रहना, दयावान् होना, धन का संग्रह करना और दान देना राजा का कर्तव्य है। जो राजा सेना को प्रसन्न नहीं रखता, युद्ध में सेना का निरर्थक विनाश कराता है, सेना घबराकर उस राजा को त्याग देती है। ७—६। रामचन्द्र के ऐसा कहने पर विभीषण ने धन-रत्न और वस्त्र आदि देकर वानरों का सम्मान किया। १०। वानरों को धन-रत्न आदि से सम्मानित देखकर यशस्विनी सीता और धनुर्धर लक्ष्मण के साथ रामचन्द्र पुष्पक विमान पर बैठे। महापराक्रमी सुग्रीव, विभीषण और सब वानरों की प्रशंसा करते हुए रामचन्द्र ने उन लोगों से कहा—मित्रों का जो कर्तव्य है, उसे आप लोगों ने बहुत अच्छी तरह से किया। अब हमारी आज्ञा से अपने-अपने स्थान को जाइए। ११—१४। हे सुग्रीव, हित चाहनेवाले उत्तम मित्र को मित्र के साथ जो काम करना उचित है, आपने बड़े स्नेह से और अधर्म के भय से वैसा ही किया। अब अपनी सेना को लेकर शीघ्र किष्किन्धा को जाइए। हे विभीषण, आप लंका में रहिए, हमारा दिया हुआ राज्य कीजिए। सब देवताओं के साथ इन्द्र भी आपको परास्त नहीं कर सकते। १५—१६। हम आप लोगों से बिदा होकर, आप लोगों की अनुमति लेकर, पिता की राजधानी अयोध्या को जाते हैं। १७। रामचन्द्र के ये वचन सुनकर विभीषण, सुग्रीव और सब वानरों ने हाथ जोड़कर कहा—हे नृपसत्तम, हम लोग भी आपके साथ अयोध्या को चलना चाहते हैं। मार्ग में

अनेक प्रकार के वन और उपवन देखेंगे, अयोध्या में पहुँचकर कौसल्या को प्रणाम करेंगे। आपका अभिषेक देखकर अपने घरों को चले आवेंगे। हम लोगों को भी अपने साथ ले चलिए। १८—२०। धर्मात्मा रामचन्द्र ने सुग्रीव, विभीषण और सब वानरों से कहा—यदि हम अपने सुहृदों के साथ अयोध्या को जावें और कुछ दिनों तक आप लोगों के साथ हर्ष से वहाँ रहें, तो इससे बढ़कर हमको प्रसन्न करनेवाला और कोई काम न होगा। हे सुग्रीव, आप सब वानरों के साथ शीघ्र विमान पर बैठिए और विभीषण भी अपने मन्त्रियों के साथ विमान पर बैठें। २१—२३। रामचन्द्र की आज्ञा पाकर वानरों के साथ सुग्रीव और अपने मन्त्रियों के साथ विभीषण उस दिव्य विमान पर बैठे। २४। सब लोगों के बैठ जाने पर रामचन्द्र की आज्ञा से कुबेर का उत्तम विमान आकाश को उड़ा। २५। हंसयुक्त प्रकाशित विमान पर आकाशमार्ग से जाते हुए प्रसन्न रामचन्द्र कुबेर के समान शोभित हुए। २६। सब रीछ, वानर और महाबली राक्षस उस दिव्य विमान पर सुख से बैठ गये। उनके बैठने के लिए स्थान संकुचित नहीं था। २७।

सर्ग १२५

रामचन्द्र की आज्ञा पाकर वह हंसयुक्त उत्तम विमान बड़ा शब्द करता हुआ आकाश को उड़ा। आकाश में जाकर रामचन्द्र ने चारों ओर देखकर चन्द्रमुखी सीता से कहा—हे वैदेही, त्रिकूट पर्वत के शिखर पर विश्वकर्मा की बनाई हुई कैलास पर्वत के शिखर के समान लंका को देखो। १—३। इस युद्धभूमि को देखो, जहाँ राक्षसों और वानरों के मांस और रुधिर का कीचड़ हो गया है। हे सीते, यहाँ हज़ारों राक्षस और वानर मारे गये हैं। ४। हे विशालाक्षि, ब्रह्मा से वरदान पाया हुआ, सबको पीड़ित करनेवाला, राक्षसराज रावण यहाँ मारा

गया है। हमने तुम्हारे लिए इसका वध किया है। ५। कुम्भकर्ण और प्रहस्त इस स्थान पर मारे गये हैं। हनुमान् ने धूम्राक्ष को यहाँ मारा था। महात्मा सुषेण ने विद्युन्माली को, लक्ष्मण ने इन्द्रजित् को और अंगद ने विकट को यहाँ मारा है। विरूपाक्ष, महापार्श्व, महोदर, बलवान् अकम्पन, त्रिशिरा, अतिकाय, देवान्तक, नरान्तक, मत्त, युद्धोन्मत्त, कुम्भकर्ण के पुत्र कुम्भ-निकुम्भ, वज्रदंष्ट्र, और दंष्ट्र आदि बड़े बलवान् राक्षस इस स्थान पर मारे गये हैं। मकराक्ष नामक दुर्धर्ष राक्षस का विनाश हमने किया है। ६—११। बलवान् शोणिताक्ष, यूपाक्ष, प्रजंघ, विद्युज्जिह्व, यज्ञशत्रु, महाबली सुप्तघ्न, सूर्यशत्रु और ब्रह्मशत्रु आदि राक्षस इस स्थान पर मारे गये हैं। रावण की स्त्री मन्दोदरी अपने पति के मारे जाने पर हजारों सौतों के साथ युद्धभूमि में आकर यहाँ रोई थी। हे सुमुखि, यह समुद्र का घाट देख पड़ता है। हम लोगों ने समुद्र के इस पार आकर रात को इस स्थान पर निवास किया था। यह सेतु देखो, हमने तुम्हारे लिए समुद्र में यह सेतु बाँधा है। हे विशालाक्षि, इसके बाँधने में नल ने बड़ा कठिन काम किया था। हे वैदेही, इस अपार वरुणालय को देखो, कैसा शब्द इसमें हो रहा है। यह शंख और सीपी से भरा हुआ है। हे मैथिलि, इस मैनाक पर्वत को देखो, हनुमान् को विश्राम कराने के लिए यह अपने आप समुद्र से निकला है। १२—१८। समुद्र के किनारे इस स्थान पर हमारी सेना ठहरी थी। इस स्थान पर भगवान् शंकर हमारे ऊपर प्रसन्न हुए थे। यह देखो, समुद्र का घाट दिखाई देता है। १९—२०। इसका नाम सेतुबन्ध होगा और तीनों लोक इसकी पूजा करेंगे। यह परम पवित्र स्थान महापाप का नाशक है। इसी स्थान पर राक्षसराज विभीषण आकर हमसे मिले थे। हे सीते! वह देखो, सुग्रीव की नगरी, विचित्र वन से शोभित किष्किन्धा दिखाई देती है। वहाँ बालि को हमने मारा था। २१—२२। किष्किन्धा को देखकर सीता बड़े प्रेम से विनीत

वचन बोलीं—राजन्, तारा आदि सुग्रीव की स्त्रियों को और अन्य भी प्रमुख वानरों की स्त्रियों को साथ लेकर मैं आपके साथ अयोध्या को चलना चाहती हूँ ।२३-२५। सीता के यह कहने पर रामचन्द्र ने 'एवमस्तु' कहा, और जब किष्किन्धा के ऊपर विमान पहुँचा तब विमान को ठहराने की आज्ञा देकर सुग्रीव से कहा—हे वानरराज, प्रधान वानरों से कहिए कि वे अपनी स्त्रियों को ले आवें और सीता के साथ वे सब स्त्रियाँ अयोध्या को चलें। आप भी अयोध्या को चलने के लिए तारा को ले आइए। शीघ्रता कीजिए, जिसमें विलम्ब न हो। महातेजस्वी रामचन्द्र के यह कहने पर वानरराज सुग्रीव प्रधान वानरों को साथ लेकर किष्किन्धा को गये और अन्तःपुर में जाकर तारा की ओर देख-कर बोले—प्रिये, जनकनन्दिनी सीता का प्रिय करने के लिए रामचन्द्र ने इन वानरों की स्त्रियों के साथ तुमको भी बुलाया है। सब स्त्रियों को लेकर अयोध्या को चलो। वहाँ तुम महाराज दशरथ की स्त्रियों को देखोगी।२६-३२। सुग्रीव की यह बात सुनकर सर्वांगसुन्दरी तारा ने वानरों की स्त्रियों को बुलवाकर कहा—सुग्रीव की आज्ञा है कि तुम लोग अपने-अपने पति के साथ अयोध्या को चलो, मैं भी तुम लोगों के साथ चलूँगी। अयोध्या को देखने की मेरी भी इच्छा है।३३-३४। वहाँ देश और नगर की प्रजा के साथ रामचन्द्र अयोध्या में प्रवेश करेंगे। महाराज दशरथ की स्त्रियों को देखोगी और अयोध्या का ऐश्वर्य देखोगी। ३५। तारा की यह आज्ञा पाकर वानरों की स्त्रियाँ अयोध्या को जाने के लिए तैयार हुईं। सीता को देखने की इच्छा से अपने-अपने पति के साथ विमान पर चढ़ीं। तब रामचन्द्र की आज्ञा से विमान फिर आकाशमार्ग से चला। ऋष्यमूक पर्वत के समीप जब विमान पहुँचा तब रामचन्द्र ने सीता से फिर कहा—हे सीते, सुवर्ण के समान चमकती हुई धातुओं से शोभित यह ऋष्यमूक पर्वत दिखाई देता है। यह पर्वत मेघ के समान है और इसकी धातुवें बिजली के

समान चमक रही हैं। ३६—३८। इसी पर्वत पर वानरराज सुग्रीव का और हमारा समागम हुआ था। इस स्थान पर हमने वालि का वध करने की प्रतिज्ञा की थी। यह पंपासर दिखाई देता है, इसके किनारे विचित्र वन शोभित है। यहाँ तुम्हारे वियोग में बड़े दुःख से हमने विलाप किया था। इसी के किनारे हमने धर्मचारिणी शबरी को देखा था। योजनबाहु कबन्ध को इसी स्थान पर हमने मारा था। हे सीते! देखो, यह बड़ा भारी बर्गद का वृक्ष जनस्थान में दिखाई देता है। इसी स्थान पर तुम्हारे निमित्त महातेजस्वी पक्षिराज जटायु को रावण ने मार डाला था। हे सुन्दरी, देखो, यह हम लोगों का आश्रम है, यह पर्णशाला दिखाई देती है, यह अभी तक वैसी ही बनी है। यहीं से राक्षसराज रावण तुमको हर ले गया था। यह प्रसन्नसलिला गोदावरी है। ३६—४५। वह देखो, केले के वृक्षों से घिरा हुआ अगस्त्य मुनि का आश्रम दिखाई देता है। हे वैदेही, यह शरभंग का आश्रम दिखाई देता है। यहीं पर सहस्राक्ष इन्द्र आये थे। हे देवि, ये वही तपस्वी देख पड़ते हैं, जिनके प्रधान सूर्य और अग्नि के समान तेजस्वी महर्षि अत्रि हैं। देखो, इस स्थान पर हमने महाकाय विराध को मारा था। ४६—४८। हे सीते, इस स्थान पर तुमने धर्मचारिणी अनसूया का दर्शन किया था। यह चित्रकूट पर्वत दिखाई देता है। यहाँ कैकयी के पुत्र भरत हमको प्रसन्न करने के लिए आये थे। यह विचित्र वन से शोभित यमुना नदी दिखाई देती है। ४९—५०। हे मैथिलि, यह भरद्वाज का आश्रम है। यह पवित्र त्रिपथगा गंगा नदी है। ५१। हमारे मित्र गुह का शृंगवेरपुर यह दिखाई देता है। हे सीते, वह देखो, हमारे पिता की राजधानी अयोध्या भी देख पड़ती है। तुम वन से लौट कर इस नगरी को फिर आई हो, इसे प्रणाम करो। अयोध्या का नाम सुनकर सब वानर, सब राक्षस और विभीषण सिर उठाकर बड़े हर्ष से अयोध्या को देखने लगे। जहाँ श्वेतवर्ण, बड़े

ऊँचे घर हैं, जिनमें बड़े-बड़े फाटक लगे हैं, जहाँ हाथी और घोड़े बहुत हैं, इन्द्र की अमरावती के समान उस अयोध्या को वानरों ने देखा। ५२—५४।

सर्ग १२६

चौदह वर्ष पूरे होने पर पंचमी तिथि को रामचन्द्र वन से लौटकर प्रयाग में भरद्वाज मुनि के आश्रम पर आये। विमान से उतरकर मुनि को प्रणाम किया और हाथ जोड़कर बड़ी नम्रता से उनसे पूछा—भगवन्, क्या आपने अयोध्या की कुछ खबर सुनी है, वहाँ सुभिक्ष तो है? भरत राज्य का पालन करते हैं? और हमारी सब माताएँ जीवित हैं न? १—२। रामचन्द्र के यह पूछने पर महामुनि भरद्वाज मुस्कराकर बड़े हर्ष से बोले——भरत तुम्हारी आज्ञा के वश हैं; जटा रखाये, तुम्हारे खड़ाऊँ आगे धरे, उन्हीं की आज्ञा लेकर राजकार्य करते हैं और तुम्हारे आने की प्रतीक्षा कर रहे हैं। तुम्हारे घर में भी सब कुशल है। ३—४। हे रामचन्द्र, जब तुम पिता की आज्ञा से धर्म का पालन करने के लिए राज्य का सुखभोग और सर्वस्व त्यागकर स्वर्ग से च्युत देवता के समान लक्ष्मण और सीता के साथ बलकल वस्त्र पहने हुए पैदल वन को जा रहे थे, उस समय तुमको देखकर बड़ी करुणा आई थी, परन्तु आज शत्रुओं को जीतकर सब काम सिद्ध करके अपने मित्रों और बान्धवों के साथ लौट आये हो, तुमको देखकर हमें बड़ा हर्ष हुआ। ५—८। हे राघव, तुम्हारे सब दुःख-सुख हम यहीं बैठे-बैठे जान लेते थे। जनस्थान में रहने के समय जो दुःख तुमको मिले थे, वह भी हम जानते हैं। तुम ब्राह्मणों और तपस्वियों की रक्षा करते थे। अनिन्दिता सीता को जिस तरह रावण हर ले गया, सो भी हम जानते हैं। मारीच राक्षस मृग के वेश में आया, तुम उसके पीछे दौड़े, सीता को रावण हर ले गया, फिर मार्ग में तुमको कवन्ध मिला,

उसके बाद तुम पंपा के समीप गये, सुग्रीव से तुम्हारी मित्रता हुई, तुमने वालि को मारा, फिर सीता को ढूँढ़ने के लिए वानर भेजे गये, हनुमान् समुद्र लाँघकर लंका में पहुँचे, सीता के समाचार मिले, नल ने समुद्र में सेतु बाँधा, वानरों के यूथ जिस तरह लंका में पहुँचे, पुत्र-बान्धव, अमात्य, सेना और वाहन के साथ बलदर्पित रावण जिस तरह युद्ध में मारा गया, देवताओं के कंटक रावण के मारे जाने पर देवता तुम्हारे पास आये और तुमको वरदान दे गये, हे धर्मवत्सल ! ये सब बातें हम यहीं बैठे हुए तपोबल से देखते थे। अयोध्या को तो हमारे शिष्य प्रायः आते-जाते रहते हैं। वहाँ के भी सब समाचार सुना करते थे। ६—१६। हे शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ, तुम अपने मित्रों के साथ आज यहीं ठहरो, हमारा दिया हुआ अर्घ्य-पाद्य ग्रहण करो, कल अयोध्या को चले जाना। हम भी तुमको वरदान देना चाहते हैं।१७। राजकुमार रामचन्द्र ने सिर झुकाकर मुनि की आज्ञा स्वीकार की और हाथ जोड़कर यह वर माँगा—भगवन्, यहाँ से अयोध्या तक मार्ग में जितने वृक्ष हैं, समय न होने पर भी वे सब फल जायँ। मीठे, सुगन्धित, अमृत के समान, विविध प्रकार के फल उपलब्ध हों, जिसमें अयोध्या को जाते समय आपका ऐश्वर्य दिखाई दे। भरद्वाज ने कहा, बहुत अच्छा, ऐसा ही हो। मुनि के मुँह से यह वचन निकलते ही वहाँ के सब वृक्ष स्वर्ग के वृक्षों के समान हो गये। जिनमें फल नहीं थे, वे फल गये, जिनमें पुष्प नहीं थे, वे पुष्पित हो गये, जो सूख गये थे, उनमें नये-नये पल्लव निकल आये। बहुतेरे वृक्षों से मधु टपकने लगा। मार्ग से तीन-तीन योजन इधर-उधर के सब वृक्ष फले-फूले शोभित होने लगे। १८—२२। वानरों ने बड़े हर्ष से मनमाने दिव्य फल खाये। उस समय वानरों ने मानों स्वर्ग को जीत लिया। २३।

सर्ग १२७

अयोध्या का स्मरण करके रामचन्द्र को बड़ी प्रसन्नता हुई। थोड़ी देर सोचकर उन्होंने वानरों की ओर देखा और हनुमान् से कहा—हे वानरसत्तम, तुम अयोध्या को बहुत शीघ्र जाओ और देखो कि महाराज दशरथ के घर में सब लोग कुशल-पूर्वक हैं ? १–३। मार्ग में तुमको शृंगवेरपुर मिलेगा। वहाँ निषादों का राजा गुह रहता है, उससे हमारी ओर से कुशल पूछना और हमारी कुशल भी कहना। वह हमारा हार्दिक मित्र है। हमको कुशल-पूर्वक स्वस्थ आया हुआ सुनकर बड़ा प्रसन्न होगा। ४–५। वह तुमको अयोध्या का मार्ग बतावेगा और भरत के भी समाचार कहेगा। ६। भरत के पास जब पहुँचना तो उनसे कहना कि सीता और लक्ष्मण के साथ रामचन्द्र कुशल से हैं। उनके सब काम सिद्ध हो गये हैं। बलवान् रावण सीता को हर ले आया था, सो भी भरत से कहना। सुग्रीव से हमारी मित्रता, बालि का वध और नदियों के पति समुद्र को तुमने लाँघकर सीता का जिस प्रकार पता लगाया वह भी भरत से कहना। ७–९। सेना के साथ युद्ध के लिए प्रस्थान करना, समुद्र के तट पर पहुँचना, समुद्र में सेतु बाँधना, रावण का वध, ब्रह्मा, इन्द्र और वरुण से वरदान मिलना, भगवान् शंकर की कृपा से पिता के दर्शन मिलना, यह सब भरत से कहना। हे सौम्य, भरत से यह सब बताकर हमारा आगमन कहना—राक्षसराज विभीषण और वानरराज सुग्रीव के साथ शत्रुओं को जीतकर बहुत बड़ा यश प्राप्त करके बलवान् मित्रों के साथ रामचन्द्र अयोध्या के समीप आ गये हैं। १०–१३। यह सुनकर भरत की चेष्टा कैसी होती है, हमारे प्रति उनके क्या भाव हैं, उनका मुँह, दृष्टि और चेष्टा देखकर और बातें करके सब वृत्तान्त अच्छी तरह जान लेना। क्योंकि हाथी, घोड़े, रथ आदि सहित परम्परागत राज्य को पाकर किसका मन विचलित नहीं हो जाता। १४–१६। भरत इतने दिनों से राज्य का

शासन कर रहे हैं, शायद उनकी इच्छा राज्य करने की हो, तो राज्य वही करें। उनके मन का हाल जानकर बहुत शीघ्र लौट आओ। इतनी जल्दी आओ कि हम यहाँ से बहुत दूर न जायँ और तुम लौटकर हमसे हाल कहो। १७—१८। रामचन्द्र की यह आज्ञा पाकर हनुमान् मनुष्य का रूप धारण करके अयोध्या को चले। वे ऐसे वेग से उड़े, जैसे साँप को पकड़ने के लिए गरुड़ उड़ता है। आकाश-मार्ग से गंगा और यमुना का संगम लाँघकर शृंगवेरपुर के पास आये और बड़े हर्ष से शुभ वचन बोले—तुम्हारे मित्र रामचन्द्र सीता और लक्ष्मण के साथ आ रहे हैं, उन्होंने तुमसे अपनी कुशल कही है। भरद्वाज मुनि की आज्ञा से आज पंचमी की रात को वहीं निवास करेंगे और कल तुम्हारे यहाँ आवेंगे। तुम यहीं उनको देखोगे। १९—२४। गुह से यह कहकर महातेजस्वी हनुमान् फिर बड़े वेग से आकाशमार्ग से चले। मार्ग में रामतीर्थ, बालुकिनी नदी, बरूथी और गोमती नदी तथा बड़ा भयानक साल का वन देखा। बहुत-से देशों और हजारों मनुष्यों को देखते हुए नन्दिग्राम के समीप पहुँचे। नन्दिग्राम के समीप का वन इन्द्र के नन्दनवन और चैत्ररथ के समान शोभित था, वृक्ष फूले-फले थे। आभूषणों से अलंकृत स्त्रियाँ पुत्र-पौत्रों के साथ देख पड़ीं। नन्दिग्राम अयोध्या से एक कोस बाहर था। हनुमान् ने जाकर भरत को देखा। वे चीर और मृगचर्म धारण किये थे, जटाएँ बाँधे थे, देह में मैल लगा था, भाई के दुःख से बहुत दीन और दुर्बल थे। फल-मूल खाते थे, धर्मचारी और तपस्वी का रूप धारण किये हुए थे। जितेन्द्रिय रहते थे, इसलिए ब्रह्मर्षियों के समान तेजस्वी थे। रामचन्द्र के खड़ाऊँ आगे रखकर राज्य का शासन करते थे। २५—३२। सब तरह के भय से चारों वर्णों के मनुष्यों की रक्षा करते थे। मन्त्री, पुरोहित, और प्रधान सेनापति उनके समीप बैठे थे। राजकुमार भरत को वल्कलवस्त्र और मृगचर्म धारण किये हुए देखकर धर्मवत्सल

अयोध्या-निवासी भी किसी प्रकार के भोग-विलास नहीं करते थे। ३३—३४। देह धारण किये हुए साक्षात् धर्म के समान धर्मज्ञ भरत से पवनतनय हनुमान् ने हाथ जोड़कर कहा—चीर और जटा धारण करनेवाले, दंडक वन में रहनेवाले, जिन रामचन्द्र के विषय में तुम चिन्ता कर रहे हो, उन्होंने तुमसे अपनी कुशल कही है। यह प्रिय वचन हम सुनाते हैं, अब शोक छोड़ दो, इसी मुहूर्त में तुम अपने भाई रामचन्द्र से मिलोगे। ३५—३७। रावण को युद्ध में मारकर सीता को प्राप्त करके अपने मित्रों के साथ रामचन्द्र आ रहे हैं। महातेजस्वी लक्ष्मण और यशस्विनी सीता भी उनके साथ हैं। सीता रामचन्द्र के साथ वैसे ही शोभित हैं, जैसे इन्द्र के साथ इन्द्राणी। ३८—३९। हनुमान् के यह वचन सुनकर केकयी के पुत्र भरत को बड़ा हर्ष हुआ। सहसा उनको मूर्च्छा आ गई और वे गिर पड़े। थोड़ी देर बाद स्वस्थ होकर उठ बैठे और प्रिय वचन कहनेवाले हनुमान् से बोले। पहले तो हनुमान् को छाती से लगा लिया और प्रेम के आँसुओं से उनको भिगो दिया। फिर उनसे कहा—क्या तुम कोई देवता हो, हमारे ऊपर दया करके यहाँ आये हो? हे सौम्य, इस प्रिय वचन कहने के बदले में जो कहो, वह प्रिय पदार्थ तुमको दें। एक लाख गायें, एक सौ गाँव, और कुंडल आदि सब आभूषण पहने हुई सुन्दरी सोलह कन्याएँ भार्या बनाने के लिए तुमको दी जाती हैं। कन्याओं का रंग सुवर्ण का-सा होगा, नासिका और जाँघें बहुत सुन्दरी होंगी, चन्द्रमा के समान उनके मुख होंगे, सब आभूषण धारण किये हुई और अच्छे कुल की होंगी। ४०—४५। हनुमान् के मुँह से रामचन्द्र का आगमन सुनकर राजकुमार भरत बड़े प्रसन्न हुए। उनका मन रामचन्द्र को देखने के लिए शीघ्रता करने लगा। प्रसन्न होकर हनुमान् से फिर बोले। ४६।

सर्ग १२८

भरत ने कहा—बहुत वर्ष हुए हमारे स्वामी वन को गये हैं। आज मुझे आनन्द देनेवाला उनका हाल मिला है। जो मनुष्य जीवित रहता है, उसे सौ वर्ष बाद भी कभी न कभी आनन्द मिलता ही है। यह लोकोक्ति आज मुझे सत्य जान पड़ी। १—२। अब तुम यह बताओ कि वानरों का साथ रामचन्द्र का कहाँ और कैसे हुआ। ३। हनुमान् को आसन पर बैठाकर भरत ने यह प्रश्न किया और हनुमान् क्रम से रामचन्द्र के वनवास का हाल कहने लगे—आपकी माता ने राजा से जिस तरह वरदान माँगा, रामचन्द्र वन को गये, पुत्र के शोक से राजा दशरथ की जिस तरह मृत्यु हुई, आपको राजगृह से दूत बुला लाये, अयोध्या में आकर आपने राज्य करना स्वीकार न किया, सज्जनों का धर्म पालन करते हुए आपने चित्रकूट में जाकर रामचन्द्र से वापस आने की प्रार्थना की। रामचन्द्र ने पिता की आज्ञा पालन करने के लिए राज्य करना स्वीकार न किया और आप उनकी पादुका लेकर लौट आये। हे महाबाहु, वह सब तो आप जानते ही हैं। आपके लौट आने के बाद जो हाल हुए, वह सुनिए। ४—६। जब आप चले आये तब वहाँ के पशु-पक्षी बहुत व्याकुल देख पड़े, जिससे यह जान पड़ा कि यह वन बहुत उजाड़-सा हो गया है। इसलिए रामचन्द्र सिंह, बाघ आदि भयानक जीवों से संकुल निर्जन दंडकारण्य को चले गये। १०—११। उस गहन वन में जाते हुए इन लोगों के सामने महाबलवान् विराध नाम का राक्षस गरजता हुआ देख पड़ा। वह भुजाएँ ऊपर को उठाये था और मुँह नीचे को किये हाथी के समान गरज रहा था। रामचन्द्र ने उसे मार डाला और पृथ्वी में गाड़ दिया। १२—१३। वह कठिन काम करके दोनों भाई शरभंग मुनि के आश्रम पर गये। शरभंग तो उसी समय स्वर्ग लोक को चले गये, और इन दोनों भाइयों ने वहाँ रहनेवाले मुनियों को प्रणाम करके जनस्थान को

प्रस्थान किया। वहाँ राक्षसों का निवास था। महात्मा रामचन्द्र ने अकेले उनसे युद्ध करके पहर भर में चौदह हज़ार राक्षसों का विनाश कर दिया। वे राक्षस बड़े बलवान् थे, मुनियों की तपस्या में विघ्न करते थे। राक्षसों के प्रधान खर को मारकर उसके सेनापति त्रिशिरा और दूषण का भी वध किया।१४—१६। शूर्पणखा नाम की राक्षसी रामचन्द्र के पास आई थी और वह सीता को मारने दौड़ी थी। रामचन्द्र की आज्ञा से लक्ष्मण ने खड्ग लेकर उसकी नाक-कान काट डाला। उसी के कारण राक्षसों से युद्ध हुआ। फिर वह राक्षसी रावण के पास गई। रावण ने अपने अनुचर मारीच नामक राक्षस को भेजा, उसने सुवर्णमय मृग का रूप धारण करके सीता को प्रलोभित किया। उस मनोहर मृग को देखकर सीता ने उसे पकड़ लाने को रामचन्द्र से आग्रह किया। रामचन्द्र धनुष-बाण लेकर उसके पीछे दौड़े, वह उनको बहुत दूर ले गया। रामचन्द्र ने बाण से उसे मार डाला। २०—२४। हे सौम्य, मरते समय उस राक्षस ने रामचन्द्र का-सा शब्द किया, जिसे सुनकर लक्ष्मण भी आश्रम से चले गये। मौका पाकर रावण रामचन्द्र के आश्रम पर आया और जैसे मंगल ग्रह रोहिणी पर आक्रमण करे, वैसे ही वह सीता को लेकर भागा। सीता को बचाने के लिए पक्षिराज जटायु दौड़े, उनको युद्ध में रावण ने मार डाला।२५—२६। सीता को लेकर वह चला गया। मार्ग में ऋष्यमूक पर्वत के ऊपर कुछ वानर बैठे थे। उन वानरों ने बड़े विस्मय से उसे जाते हुए देखा। वह मन के समान वेग से चलनेवाले पुष्पक विमान पर सीता को लिये हुए जा रहा था। लंका में ले जाकर बड़े सुन्दर सुवर्णमय घर में सीता को बैठाया और अनेक तरह की बातें कहकर समझाने लगा। सीता ने उसकी बातों पर कुछ भी ध्यान न दिया, उससे ज़रा भी न डरीं, उसे तृण के समान समझती रहीं। रामचन्द्र के ही विषय में वे सोचती थीं। रावण ने उनको अशोक-वाटिका में रक्खा। इधर मारीच को मारकर

रामचन्द्र जब आश्रम पर आये तो सीता को न देखकर बड़े दुःखी हुए। फिर उन्होंने जटायु को देखा। रामचन्द्र पिता के समान उसका सम्मान करते थे। सीता की रक्षा करने के लिए वह मारा गया, यह देखकर उनको बड़ा दुःख हुआ। फिर दोनों भाई सीता को ढूँढ़ते हुए गोदावरी नदी के समीप गये। मार्ग अनेक प्रकार के फूले हुए वृक्षों से शोभित था। आगे चलकर जब एक घने वन में पहुँचे तो वहाँ कबन्ध नाम का राक्षस मिला, उसे भी दोनों भाइयों ने मार डाला। उसी राक्षस के कहने से ऋष्यमूक पर्वत पर गये, वहाँ सुग्रीव मिले और उनसे मित्रता हुई। २७—३६। सुग्रीव को उनके भाई बालि ने राज्य से निकाल दिया था। रामचन्द्र से जब उनकी मित्रता हुई और परस्पर बहुत बातें हुईं, तब रामचन्द्र ने महाबली बालि को मारकर सुग्रीव को राजा बनाया। सुग्रीव ने राजपुत्री सीता को ढूँढ़ने की प्रतिज्ञा की। वानरराज महात्मा सुग्रीव ने सीता को ढूँढ़ने के लिए दस करोड़ वानर सब दिशाओं में भेजे। ३७—४०। मैं भी उन्हीं वानरों में था। हम लोग विन्ध्य पर्वत पर मार्ग भूल गये और बहुत दिनों तक भटकते फिरे। हम लोग बड़े चिन्तित थे। समय भी बहुत बीत गया था। इतने में गृध्रराज जटायु का भाई सम्पाति हमको मिल गया। उसी ने हमको बताया कि सीता को रावण हर ले गया है और उसके घर में सीता मौजूद हैं। ४१—४२। यह सुनकर हम लोगों को बड़ा दुःख हुआ। सौ योजन समुद्र लाँघकर लंका को जाने का साहस कोई न कर सका। तब मैं अपने पराक्रम का स्मरण करके सौ योजन समुद्र के पार लंका में गया। वहाँ अशोक-वाटिका में एक मैला रेशमी वस्त्र पहने बड़े शोक में बैठी हुई सीता को देखा। उनके पास जाकर अपना परिचय दिया, उनका हाल पूछा और रामचन्द्र की दी हुई अँगूठी, जिसे उन्होंने निशानी के लिए दी थी, सीता को दिया। ४३—४५। सीता ने भी अपनी चूड़ामणि

निशानी के लिए दी। उसे लेकर मैं रामचन्द्र के पास लौट आया और सब हाल उनसे बताया। सीता की दी हुई चूड़ामणि उनको दी। सीता का हाल सुनकर रामचन्द्र ने अपने जीवन की प्रशंसा की और जैसे मृतक मनुष्य के ऊपर अमृत पड़ने पर वह चैतन्य हो जाय, वैसे ही सीता का समाचार पाकर रामचन्द्र चैतन्य हुए।४६–४८। रामचन्द्र को बड़ा क्रोध आया। प्रलयकाल में सृष्टि का विनाश करने के लिए कुपित अग्नि के समान उन्होंने लंका को विध्वंस करने का उद्योग किया। बहुत बड़ी वानरों की सेना लेकर समुद्र के तट पर पहुँचे। नल ने समुद्र में सेतु बाँधा और सेना के साथ रामचन्द्र समुद्र के उस पार लंका में जा पहुँचे। ४६–५०। राक्षसों से युद्ध होने लगा। प्रहस्त को नील ने मारा, कुम्भकर्ण को रामचन्द्र ने और इन्द्रजित् को लक्ष्मण ने मार डाला। रावण का वध स्वयं रामचन्द्र ने अपने हाथ से किया। राक्षसों के मारे जाने पर इन्द्र, वरुण, यम, महादेव, ब्रह्मा और राजा दशरथ वहाँ आये। सब देवताओं ने रामचन्द्र को वरदान दिया। ऋषियों से भी रामचन्द्र को वरदान मिला। उसके बाद वे राक्षसों और वानरों के साथ पुष्पक विमान पर बैठकर किष्किंधा को आये। फिर आगे चलकर गंगा नदी के किनारे भरद्वाज मुनि के आश्रम पर उतरे। आज वहीं निवास करेंगे। कल प्रातःकाल पुष्य नक्षत्र होगा, उसी शुभ मुहूर्त में आप रामचन्द्र को देखेंगे। ५१–५५। हनुमान् के ये मधुर वचन सुनकर भरत को बड़ा हर्ष हुआ। वे हाथ जोड़कर बोले—बहुत दिनों के बाद आज हमारा मनोरथ पूर्ण हुआ। ५६।

सर्ग १२९

यह समाचार सुनकर सत्यविक्रम भरत को परम आनन्द हुआ। उन्होंने शत्रुघ्न को आज्ञा दी कि नगर के सब लोग पवित्र होकर सुगन्ध-माला आदि से देवमन्दिरों में बाजे बजाते हुए पूजा करें। १–२।

स्तुति करनेवाले और वंशावली जाननेवाले सूत-मागधगण, बाजा बजानेवाले, वेश्याएँ, अमात्य, सेना, सेनापति, सैनिकों की स्त्रियाँ, कौसल्या आदि सब माताएँ, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य सब लोग रामचन्द्र को देखने के लिए चलें। भरत की आज्ञा से शत्रुघ्न ने हज़ारों मज़दूरों को आज्ञा दी कि अयोध्या से नन्दिग्राम तक ऊँची-नीची ज़मीन को बराबर करें और गड्ढों को पाट दें। शीतल जल छिड़कें; अक्षत, लावा और फूल बखेरें। घरों के ऊपर ऊँची पताकाएँ फहराई जायँ। प्रातःकाल होते-होते यह सब काम हो जायँ। राजमार्ग माला, मोती, पुष्प आदि से अलंकृत किये जायँ। शत्रुघ्न की आज्ञा से सब वैसा ही किया गया। धृष्टि, जयन्त, विजय, सिद्धार्थ, अर्थसाधक, अशोक, मन्त्रपाल और सुमन्त ये सब मन्त्री और नगर के प्रधान लोग मत्त हाथियों पर सवार हुए। हाथी ध्वजा, पताका और सुनहली झूल आदि से सजाये गये थे। ३-१२। बहुत लोग घोड़ों पर सवार होकर चले। महारथी रथों पर सवार हुए। महारथियों के रथ भी शक्ति, ऋष्टि, पाश, ध्वजा और पताका से शोभित थे। हज़ारों वीर घोड़ों पर सवार होकर और हज़ारों पैदल सिपाही अस्त्र-शस्त्र लिये हुए चले। १३—१४। उनके पीछे महाराज दशरथ की सब स्त्रियाँ रथों पर सवार होकर चलीं। कौसल्या को आगे करके सुमित्रा भी चलीं। धर्मात्मा ब्राह्मण, मन्त्री और माला-मोदक हाथ में लिये हुए वैश्य भरत के समीप बैठे थे। शंख और नगाड़े बजने लगे। बन्दीजन विरदावलि कहने लगे। धर्म जाननेवाले भरत रामचन्द्र के खड़ाऊँ, श्वेत छत्र, श्वेत बालों का चँवर, श्वेत पुष्पों की माला हाथ में लिये थे। वे चीर और काला मृगचर्म पहने थे, उपवास करने के कारण शरीर दुर्बल हो गया था। चित्त दुखित था, रामचन्द्र का आगमन सुनकर वे हर्षित हुए थे। १५—१६। घोड़ों की टापों से, रथों की घरघराहट से, शंखों और नगाड़ों के बाजने से और हाथियों के चिग्घारने से इतना घोर शब्द हुआ, मानों पृथिवी

काँप उठेगी। सब अयोध्या-निवासी नन्दिग्राम में पहुँचे, उनको देख-कर भरत ने हनुमान् से कहा—वानरों का स्वभाव चंचल होता है। तुमने अपने स्वभाववश यह झूठ ही तो नहीं कह दिया? क्योंकि शत्रु-नाशन रामचन्द्र को मैं अभी तक कहीं नहीं देखता। उनके साथी कामरूपी वानर भी कहीं नहीं दिखाई देते। यह सुनकर हनुमान् ने उत्तर दिया—भरद्वाज की कृपा से सब वृक्ष समय न होने पर भी फूले और फले हैं। मधु टपक रहा है, भँवरे गुंजार रहे हैं। इन्द्र के वरदान से भरद्वाज मुनि इच्छा करते ही भोजन की सब सामग्री उत्पन्न कर देते हैं। खाने-पीने में वानरों ने देर की होगी। आप भी जब उनके आश्रम पर गये थे, तब उन्होंने आपकी सेना का आतिथ्य किया था, सो तो आप जानते ही हैं। अब वहाँ से चल चुके होंगे। देखिए, हर्षित वानरों का शब्द सुनाई देता है, मेरी समझ से वानरों की सेना गोमती नदी उतर रही है। वह देखिए, साल वन की ओर धूलि उड़ती हुई दिखाई देती है। जान पड़ता है, रमणीय साल वन में वानर आ गये हैं और वृक्षों को हिलाते हैं। यह देखिए, चन्द्रमा के समान प्रकाशित विमान आ रहा है। यह कुबेर का दिव्य पुष्पक विमान है। ब्रह्मा ने अपनी इच्छा से इसका निर्माण किया है। महात्मा रामचन्द्र ने बन्धु-बान्धवों सहित रावण को मारकर इसे प्राप्त किया है।२०—३०। प्रातःकाल के सूर्य के समान यह प्रकाशित है, कुबेर के प्रसाद से मन के समान वेग से चलता है। सीता के साथ दोनों भाई राम-लक्ष्मण और महातेजस्वी सुग्रीव इसी दिव्य विमान पर बैठे हैं। हनुमान् के यह कहने पर स्त्री, बालक, युवा और वृद्ध सबके सब बोल उठे—'रामचन्द्र यह आये।' वह शब्द आकाश तक चला गया। हाथी, घोड़े और रथ से उतरकर सब लोग विमान पर बैठे हुए रामचन्द्र को आकाश में उदित चन्द्रमा के समान देखने लगे।३१—३४। भरत रामचन्द्र की ओर मुँह करके बड़े हर्ष से हाथ जोड़कर खड़े हो गये, और अर्घ्य-पाद्य आदि से उनकी

पूजा की। विशालहृदय रामचन्द्र पुष्पक विमान पर इन्द्र के समान शोभित थे। उदय हो रहे सूर्य के समान विमान पर बैठे हुए रामचन्द्र को भरत ने प्रणाम किया। रामचन्द्र की आज्ञा से हंसयुक्त महा-वेगवान् उत्तम विमान पृथिवी पर उतरा। रामचन्द्र की आज्ञा पाकर भरत विमान पर चढ़ गये, और उनको फिर प्रणाम किया। बहुत दिनों के बाद भरत को देखकर उन्होंने गोद में बैठा लिया और बड़े हर्ष से छाती से लगाया। ३५—४०। लक्ष्मण ने भरत को प्रणाम किया और भरत ने सीता को प्रणाम करके अपना नाम बताया। सुग्रीव, जाम्बवान्, अंगद, मैन्द, द्विविद, नील और ऋषभ को गले से लगाया। सुषेण, नल, गवाक्ष, गन्धमादन, शरभ और पनस से भी भरत मिले। वे कामरूपी वानर मनुष्य का रूप धारण किये हुए थे, बड़े हर्ष से उन सबों ने भरत से कुशल पूछी। ४१—४४। धर्मात्माओं में श्रेष्ठ राजकुमार भरत ने सुग्रीव को फिर हृदय से लगाकर कहा—हे सुग्रीव, तुम हमारे चारों भाइयों के पाँचवें भाई हो। सौहार्द से ही मित्र होता है और अपकार करना ही शत्रु का लक्षण है। फिर भरत ने विभीषण से कहा—बड़े भाग्य से तुम रामचन्द्र के सहायक हुए। तुम्हारी सहायता से ही यह कठिन काम हो सका। ४५—४७। शत्रुघ्न ने बड़ी नम्रता से रामचन्द्र, लक्ष्मण और सीता के चरणों में प्रणाम किया। ४८। रामचन्द्र ने माता कौसल्या के चरणों में विनीतभाव से प्रणाम किया। शोक के मारे कौसल्या का शरीर विवर्ण हो गया था। फिर सुमित्रा और केकयी को प्रणाम करके अन्य सब माताओं को प्रणाम किया। फिर पुरोहित वसिष्ठ के पास गये और उनको भी प्रणाम किया। ४९—५०। अयोध्या के निवासियों ने हाथ जोड़कर रामचन्द्र से कुशल पूछी—हे कौसल्या का आनन्द बढ़ानेवाले महाबाहु रामचन्द्र! आप अच्छी तरह हैं न? हज़ारों नागरिकों की अंजलियाँ रामचन्द्र ने विकसित मुकुल के समान देखीं। ५१—५२। भरत ने रामचन्द्र की पादुका

अपने हाथों से उनके चरणों में पहिना दीं और हाथ जोड़कर कहा—जो हमारे पास आपकी धरोहर थी, उसे मैं आपको सौंपता हूँ, आप अपना राज्य लीजिए। ५३—५४। आज वन से लौटकर अयोध्या में आये हुए आपको मैं देखता हूँ। इससे मेरा मनोरथ पूरा हुआ और जन्म सफल हुआ। आप अपना कोष, सेना, गृह और कोष्ठागार देख लीजिए। मैंने आपके प्रभाव से दसगुना कर दिया है। ५५—५६। भ्रातृवत्सल भरत को यह कहते हुए देखकर विभीषण और सब वानरों की आँखों से आँसू भर आये। रामचन्द्र ने बड़े हर्ष से भरत को गोद में बैठा लिया और सेना के साथ विमान से ही भरत के आश्रम को आये। ५७—५८। वहाँ विमान पृथिवी पर उतरा, सब लोग उतर पड़े। रामचन्द्र ने पुष्पक विमान को आज्ञा दी—अब तुम कुबेर के पास जाओ। ५९—६०। रामचन्द्र की आज्ञा से दिव्य पुष्पक विमान कुबेर के स्थान उत्तर दिशा को चला गया। इस विमान को रावण कुबेर से छीन लाया था। रामचन्द्र की आज्ञा से वह फिर कुबेर के पास गया। ६१—६२। महापराक्रमी रामचन्द्र वसिष्ठ मुनि को प्रणाम करके उनके समीप ही दूसरे आसन पर उसी प्रकार शोभित हुए जैसे इन्द्र बृहस्पति के पास बैठे हों। ६३।

सर्ग १३०

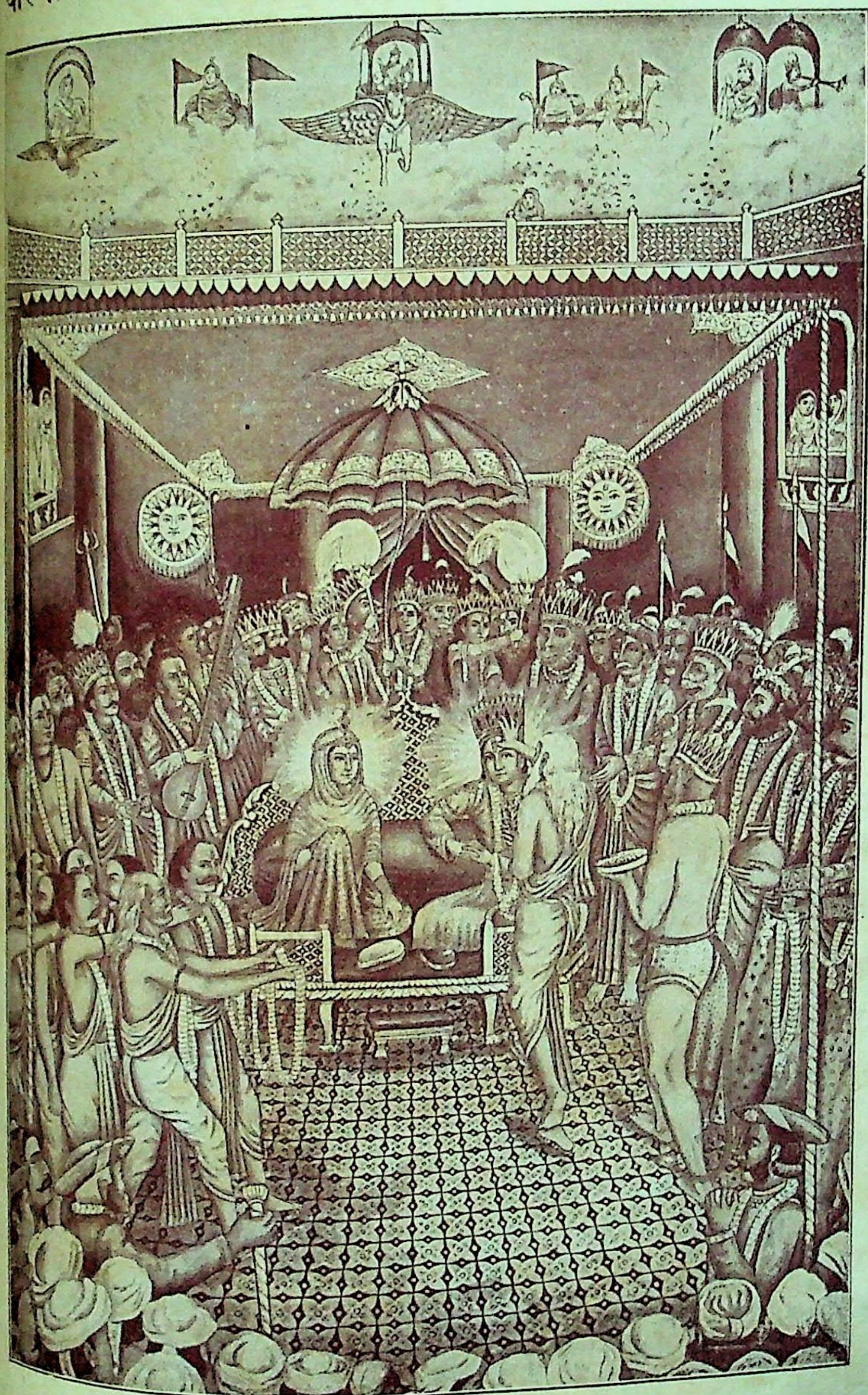
केकयी का आनन्द बढ़ानेवाले भरत ने सत्यपराक्रम रामचन्द्र से हाथ जोड़कर कहा—आपने हमारी माता का सम्मान किया, उनकी आज्ञा से वन को चले गये, उन्होंने राज्य हमको दिया। वह राज्य हम आपको देते हैं, जिसे हमने आपकी आज्ञा से स्वीकार किया था। १—२। जैसे बलवान् बैल का भार छोटा बछड़ा नहीं सँभाल सकता वैसे ही हम इस राज्य-भार को नहीं उठा सकते और जैसे जल के प्रवाह से टूटा हुआ सेतु जल के वेग को नहीं रोक सकता वैसे ही हम अनेक

विघ्नों से इस राज्य की रक्षा नहीं कर सकते। जैसे गधा घोड़े की चाल नहीं चल सकता, कौवा हंस का काम नहीं कर सकता, हे वीर! वैसे ही आपके करने योग्य काम को हम नहीं कर सकते। ३—५। जैसे कोई वृक्ष लगाया जाय, जब वह बड़ा हो, उसकी बड़ी-बड़ी शाखाएँ हों, फूल भी आवें, किन्तु फल न लगे और वृक्ष टूट जाय तो जिस प्रयोजन से वह लगाया गया था वह प्रयोजन सिद्ध न हुआ। हे महाबाहु, इस उपमा को आप अपने तईं समझें। इसलिए हे महाराज, हम चाहते हैं कि आपका राज्याभिषेक हो। आपको सब लोग मध्याह्न के सूर्य के समान महातेजस्वी देखें। ६—६। आप नूपुरु-कांची आदि के शब्दों और मधुर गीतों से शयन करें, नगाड़ों के शब्दों से जागें, क्योंकि राजा लोग इसी तरह सोते-जागते हैं। १० । जहाँ तक ज्योतिर्मंडल घूमता है, जहाँ तक पृथिवी का विस्तार है, वहाँ तक इस लोक के आप स्वामी हों। ११। भरत के यह वचन सुनकर शत्रुओं के पुर को जीतनेवाले रामचन्द्र ने उनकी बात स्वीकार की और शुभ आसन पर विराजमान हुए। १२। उसके बाद शत्रुघ्न की आज्ञा से क्षौरकर्म में निपुण, जो बहुत शीघ्र और सफ़ाई से काम कर सकते थे, रामचन्द्र के पास आये।१३। रामचन्द्र की आज्ञा से पहले भरत का क्षौर किया गया और स्नान कराया गया। उसके बाद लक्ष्मण को फिर सुग्रीव और विभीषण को स्नान कराया गया। सबसे पीछे रामचन्द्र की जटाएँ सुलझाकर स्नान कराया गया। विचित्र मालाएँ पहनाई गईं। चन्दन आदि सुगन्ध लगाकर बहुमूल्य वस्त्र पहनाये गये। इस प्रकार सुशोभित होकर रामचन्द्र आसन पर बैठे। १४—१५। इक्ष्वाकुकुलवर्धन भरत ने रामचन्द्र और लक्ष्मण को अपने हाथ से वस्त्र आदि पहनाया। सीता को स्नेह के मारे महाराज दशरथ की स्त्रियों ने अपने हाथ से स्नान आदि कराया। पुत्रवत्सला कौसल्या ने वानरों की स्त्रियों को अपने हाथ से आभूषण आदि पहनाये। १६—१८। शत्रुघ्न की आज्ञा से सुमन्त्र सारथि सर्वांगसुन्दर

रथ जोतकर लाये। सूर्य और अग्नि के समान चमकते हुए उस दिव्य रथ पर रामचन्द्र सवार हुए।१६-२०। सुग्रीव और हनुमान् भी स्नान करके दिव्य वस्त्र और सुन्दर कुंडल पहनकर इन्द्र के समान रामचन्द्र के साथ चले । सीता के साथ सुग्रीव की स्त्रियाँ सब आभूषण और वस्त्र आदि पहनकर नगर को देखने के लिए बड़े हर्ष से चलीं। २१-२२। महाराज दशरथ के मंत्री और पुरोहित वसिष्ठ रामचन्द्र के राज्याभिषेक के लिए सलाह करने लगे । अशोक, विजय और सिद्धार्थ आदि मन्त्रियों ने नगर और राज्य के कल्याण के लिए बहुत शीघ्र महात्मा रामचन्द्र का राज्याभिषेक करना निश्चय किया। अभिषेक के लिए मांगलिक वस्तुएँ शीघ्र मँगाने का विचार किया गया।२३-२५।वसिष्ठ जी मन्त्रियों के साथ यह निश्चय करके सब सामग्री एकत्र करने की आज्ञा देकर रामचन्द्र को देखने के लिए चले। २६। उधर रामचन्द्र सुन्दर घोड़े जुते हुए रथ पर इन्द्र के समान विराजमान होकर नन्दिग्राम से अयोध्या को आ रहे थे। सारथि के स्थान पर भरत बैठे थे।शत्रुघ्न छत्र लिये थे और लक्ष्मण के हाथ में चँवर था। राक्षसराज विभीषण भी चन्द्रमा के समान श्वेत चँवर लिये खड़े थे। देवता, महर्षि और मरुद्गण आकाश में आकर मधुर शब्दों से रामचन्द्र की स्तुति करने लगे। २७-३०। रथ के ऊपर से नगर अच्छी तरह न देख पड़ता था, इसलिए सुग्रीव महाराज दशरथ के शत्रुंजय नामक पर्वताकार हाथी पर सवार हुए। नव हजार हाथियों पर और भी सब वानर मनुष्यों का रूप धारण किये सुन्दर वस्त्र और आभूषण पहने हुए सवार हुए। ३१-३२। दुन्दुभि और शंख आदि बाजों के साथ पुरुषश्रेष्ठ रामचन्द्र ऊँचे महलों से शोभित अयोध्या को चले। नगर के लोगों ने रथ पर विराजमान रामचन्द्र को सामने आते हुए देखा। वे रामचन्द्र की जय बोलने लगे, रामचन्द्र ने भी उन लोगों को दर्शन देकर प्रसन्न किया। प्रजा, अमात्य, ब्राह्मणों और भाइयों के साथ जाते हुए महात्मा

रामचन्द्र नक्षत्रों के बीच में चन्द्रमा के समान शोभित थे। ३३—३६। सबसे आगे नगाड़े और ताल बजते थे, कुछ लोग मंगल-द्रव्य हाथों में लिये हुए थे, बन्दीजन जय-जयकार करते थे। अक्षत और सुवर्ण लिये हुए वैश्य गायों और कन्याओं के साथ आगे चल रहे थे। कुछ लोग हाथों में मोदक लिये हुए रामचन्द्र के आगे चलते थे।३७—३८। रामचन्द्र मन्त्रियों से सुग्रीव की मित्रता, हनुमान् का प्रभाव और वानरों के काम कहते जा रहे थे। वानरों की वीरता और राक्षसों का बल सुनकर अयोध्या के निवासियों को बड़ा विस्मय हुआ। ३९—४०। इस प्रकार रामचन्द्र ने वानरों के साथ हृष्ट-पुष्ट मनुष्यों से परिपूर्ण अयोध्या में प्रवेश किया। अयोध्या के निवासियों ने घरों के ऊपर पताकाएँ फहराई थीं। रामचन्द्र पिता के रमणीय घर में पहुँचकर धर्मात्माओं में श्रेष्ठ भरत से बोले कि महात्मा सुग्रीव को कौसल्या, सुमित्रा और केकयी के पास ले जाओ। सब माताओं को ये प्रणाम करेंगे। ४१—४४। उसके बाद मुक्ता और वैदूर्यमणि जटित, अशोक के वृक्षों से शोभित, हमारे घर में इनको ठहराओ। ४५। रामचन्द्र के यह वचन सुनकर सत्यविक्रम भरत सुग्रीव का हाथ पकड़कर सम्मानपूर्वक उनको महाराज दशरथ के घर को ले गये। सुग्रीव ने कौसल्या आदि सब माताओं को प्रणाम किया। फिर वे भरत के साथ रामचन्द्र के घर को गये। शत्रुघ्न की आज्ञा से पलंग, बिछौना और तेल से भरे हुए दीपक लेकर बहुत-से सेवक शीघ्र ही वहाँ आये। ४६—४७। भरत ने सुग्रीव से कहा कि रामचन्द्र का अभिषेक कराने के लिए वानरों को भेजकर तीर्थों का जल शीघ्र मँगाना चाहिए। सुग्रीव ने रत्नों से भूषित सुवर्ण के चार घड़े मँगाकर चार वानरों को आज्ञा दी कि तुम लोग चारों समुद्रों का जल लेकर प्रातः काल होते ही यहाँ पहुँच जाओ।४८—५०। सुग्रीव के यह कहने पर गरुड़ के समान शीघ्रगामी, हाथियों के समान बड़े-बड़े वानर, आकाशमार्ग से चले। जाम्बवान्, हनुमान्, वेगदर्शी और ऋषभ, ये चार वानर

पाँच सौ नदियों का जल कलसों में भरकर लाये। महाबली सुषेण पूर्वसमुद्र से रत्नभूषित सुवर्ण-घट में जल ले आया। ऋषभ दक्षिण-समुद्र से रक्तचन्दन और कपूरमिश्रित जल सोने के कलस में लाया। पवन के समान पराक्रमी गवय पश्चिम-समुद्र से और गरुड़ तथा वायु के समान बलवान् धर्मात्मा हनुमान् उत्तर-समुद्र से जल लेकर शीघ्र आ गये। ५१—५६। रामचन्द्र के अभिषेक के लिए वानरश्रेष्ठ तीर्थों से जल ले आये, यह समाचार शत्रुघ्न ने पुरोहित वसिष्ठ, मन्त्रियों और सुहृदों से कहा। ५७—५८। ब्राह्मणों के साथ वृद्ध वसिष्ठ ने रामचन्द्र और सीता को रत्न-जटित आसन पर बैठाया। वसिष्ठ, विजय, जाबालि, कश्यप, कात्यायन, गौतम और वामदेव ने पुरुषोत्तम रामचन्द्र का पवित्र सुगन्धित जल से अभिषेक किया, जैसे वसुओं ने इन्द्र का अभिषेक किया था। उसके बाद ऋत्विजों, ब्राह्मणों, कन्याओं, मन्त्रियों, योद्धाओं और वैश्यों ने ओषधि-युक्त जल से अभिषेक किया। चारों लोकपाल और सब देवताओं ने भी आकाश में आकर रामचन्द्र का अभिषेक किया। ५९—६३। प्राचीन समय में ब्रह्मा ने महाराज मनु का अभिषेक करके रत्नों से शोभित जो किरीट उनके सिर पर रक्खा था और उसके बाद जो राजा इस वंश में हुए, उनके अभिषेक के बाद वही महामूल्य अनेक रत्नों से शोभित किरीट उनके भी सिर पर रक्खे गये थे। महात्मा वसिष्ठ ने रामचन्द्र का अभिषेक करके सब आभूषणों के साथ वही किरीट उनके सिर पर रख दिया। ६४—६७। शत्रुघ्न ने श्वेत छत्र और वानरराज सुग्रीव ने श्वेत चँवर हाथ में लिया। राक्षसों के राजा विभीषण भी चन्द्रमा के समान श्वेतवर्ण चँवर लेकर खड़े हुए। इन्द्र की आज्ञा से वायु ने चमकती हुई सुवर्ण की माला और सब रत्नों और मणियों से विभूषित मुक्ताहार महाराज रामचन्द्र को दिया। ६८—७०। रामचन्द्र के अभिषेक के समय देवता और गन्धर्व गाने लगे और अप्सराएँ नाचने लगीं। उस उत्सव के



राज्याभिषेक

...य सभी वृक्ष सुगन्धित फूलों और फलों से शोभित थे, जिनके ...लने-फलने की ऋतु नहीं थी, वे भी पुष्पित हुए और फले थे। खेतों में ...स्य पकी हुई शोभित थी। ७१–७२। महाराज रामचन्द्र ने एक ...ख घोड़े, एक लाख गायें, एक सौ बैल, तीस करोड़ सुवर्ण-...एँ और महामूल्य विविध वस्त्र-आभूषण ब्राह्मणों को दिये। ७३–७४। ...र्य की किरणों के समान चमकती हुई सोने और मणियों की दिव्य ...ला सुग्रीव को दी। चन्द्रमा की किरणों के समान प्रकाशित वैदूर्यमणि ...बने हुए दो विचित्र अंगद बालि-पुत्र अंगद को दिये। ७५–७६। ...न्द्ररश्मिवत् प्रकाशित मणि-जटित मुक्ताहार सीता को दिया। सीता ...रामचन्द्र की ओर देखकर दो विमल वस्त्र और उत्तम आभूषण ...नुमान् को दिये। फिर उन्होंने उस मुक्ताहार को, जो रामचन्द्र ने ...नको दिया था, अपने गले से निकालकर बार-बार रामचन्द्र की ...ओर देखा। रामचन्द्र उनके मन का अभिप्राय समझ गये और उनसे ...ले—हे भामिनि, तुम जिससे सन्तुष्ट हो, उसे यह हार दे दो। सीता ने वह ...र भी हनुमान् को ही दे दिया। तेज, धैर्य, यश, दक्षता, सामर्थ्य, नीति, ...नय, पौरुष, विक्रम और बुद्धि ये सब गुण सदैव जिसमें विद्यमान ...ते हैं, वे वानरश्रेष्ठ हनुमान् उस हार को पहनकर ऐसे शोभित हुए मानों ...न्द्रमा के किरण-समूह के समान श्वेत बादल से पर्वत शोभित हो ...हा था। ७७–८३। वृद्ध और श्रेष्ठ अन्य वानरों को भी वस्त्र और आभूषण ...र यथोचित सम्मान किया गया। रामचन्द्र ने विभीषण, सुग्रीव, हनुमान्, ...जाम्बवान् और अन्य सब मुख्य वानरों को यथेष्ट रत्न आदि ...देकर सम्मानित करके सबको विदा किया। ८४–८६। द्विविद, ...मैन्द और नील को भी रत्न आदि देकर सन्तुष्ट किया। महाराज ...रामचन्द्र ने सब वानरों की ओर बड़े प्रेम से देखा। वानर रामचन्द्र से ...विदा होकर किष्किन्धा को गये। वानरराज सुग्रीव रामचन्द्र का ...अभिषेक देखकर और उनसे सम्मानित होकर अपनी राजधानी

किष्किन्धा को गये। धर्मात्मा विभीषण भी लंका का राज्य और धन पाकर राक्षसों के साथ लंका को गये । ८७-९० । वानरों को विदा करके महायशस्वी रामचन्द्र राज्य का शासन करने लगे। धर्मात्मा लक्ष्मण से उन्होंने कहा—हे धर्मज्ञ, तुम युवराज होकर हमारे साथ राज्य का शासन करो । इक्ष्वाकु-वंशियों के इस राज्य में सदा से युवराज होते आये हैं, वैसे ही तुम भी इस पद को स्वीकार करके शासन-कार्य में हमारी सहायता करो। ९१-९३ । रामचन्द्र के बहुत कहने पर भी लक्ष्मण ने जब युवराज होना स्वीकार न किया, तब महात्मा रामचन्द्र ने युवराज पद पर भरत को नियुक्त किया । उसके बाद रामचन्द्र ने पुंडरीक यज्ञ और अश्वमेध यज्ञ किये। अश्वमेध यज्ञ तो बार-बार करते रहे, और भी अनेक यज्ञ इन्होंने किये। ९४-९५। उन्होंने दस हज़ार वर्ष राज्य किया, और अपने शासन-काल में बहुत सी दक्षिणा देकर और सुन्दर घोड़े छोड़कर दस अश्वमेध यज्ञ किये। आजानबाहु विशालवक्षस्थल प्रतापी रामचन्द्र ने लक्ष्मण की सहायता से पृथिवी का बहुत अच्छा शासन किया और पुत्र-भाई-बन्धुओं के साथ विविध यज्ञ किये। ९६-९८। उनके शासन-काल में न कोई स्त्री विधवा हुई, न किसी को कोई रोग हुआ और न हिंसक जीवों से किसी को भय हुआ । किसी का किसी तरह से अनर्थ नहीं हुआ। चोरों का भय नहीं था, चोर कहीं थे ही नहीं, और वृद्धों को बालकों का प्रेतकर्म नहीं करना पड़ा । ९९-१०० प्रजा प्रसन्न थी, सब लोग धर्मपरायण थे, रामचन्द्र की आज्ञा का पालन करते थे और परस्पर एक-दूसरे को कष्ट नहीं पहुँचाते थे। मनुष्यों को कोई रोग नहीं होता था, कोई चिन्ता नहीं थी, अपने पुत्रों के साथ हज़ारों वर्ष जीते थे। रामचन्द्र के राज्य में सब वृक्ष फूले-फले रहते थे, मनुष्यों की इच्छा होते ही बादल पानी बरसाते थे। सुख-स्पर्श वायु चलती थी। प्रजा सन्तुष्ट थी, लोग अपने-अपने

कामों में लगे रहते थे, कोई झूठ नहीं बोलता था, सबको धर्म में श्रद्धा थी।१०१-१०४।जब तक रामचन्द्र ने राज्य किया, उस दस हज़ार वर्ष के समय में मनुष्य धर्मपरायण होते रहे और उनमें सब अच्छे लक्षण थे।१०५।

वाल्मीकि मुनि ने इस आदि-काव्य की रचना पूर्व-समय में की थी। यह काव्य मनुष्यों का धर्म, यश, आयु बढ़ानेवाला और राजाओं को विजय देनेवाला है। जो इस काव्य को नित्य सुनता है, वह सब पापों से छूट जाता है। जिसे पुत्र की कामना होती है, उसको इस काव्य के श्रवण करने से पुत्र और जिसे धन की इच्छा होती है, उसको धन प्राप्त होता है। रामचन्द्र के अभिषेक की कथा सुनने से मनुष्यों की सब कामनाएँ पूरी होती हैं, और राजा शत्रुओं को जीतकर विजयी होता है। जैसे कौसल्या के पुत्र रामचन्द्र, सुमित्रा के पुत्र लक्ष्मण और कैकयी के पुत्र भरत हुए थे, ऐसे ही पुत्र उन स्त्रियों को प्राप्त होते हैं, जो स्त्रियाँ इस काव्य को सुनती हैं। इसमें रामचन्द्र के विजय की कथा है। इस रामायण को सुनकर मनुष्य दीर्घायु होते हैं। १०६-११०। वाल्मीकि की बनाई हुई इस आदि-काव्य को क्रोध त्यागकर श्रद्धा से जो सुनता है, वह कठिन दुःखों से छूट जाता है। इस रामायण को विदेश में स्थित जो मनुष्य सुनता है वह अपने देश में आता है और अपने भाई-बन्धुओं के साथ सुख भोगता है, और जो कुछ माँगता है वह सब रामचन्द्र उसे देते हैं। जो इस रामायण को सुनता है, उससे देवता प्रसन्न होते हैं, और जिसके घर में यह पुस्तक होती है, वहाँ विनायक आदि सब ग्रह शान्त हो जाते हैं। प्रवासी मनुष्य का कल्याण होता है, राजा की विजय होती है। रजस्वला स्त्री इसके सुनने से श्रेष्ठ पुत्र उत्पन्न करती है। इस प्राचीन इतिहास को सुनने से और इसकी पूजा करने से मनुष्य सब पापों से छूट जाता और दीर्घायु होता है। क्षत्रियों को ब्राह्मणों से यह काव्य सुनना चाहिए। इसके सुनने से पुत्र और ऐश्वर्य प्राप्त होता है, इसमें सन्देह नहीं

है । १११–११६ । इस सम्पूर्ण रामायण को पढ़ने और सुनने से महाबाहु रामचन्द्र, जो आदिदेव नारायण सनातन विष्णु हैं, प्रसन्न होते हैं । रामायण की कथा सुनने से देवता प्रसन्न होते हैं और पितर तृप्त होते हैं । जो लोग श्रद्धा से इस रामायण को लिखते हैं, उन्हें शरीर त्यागने पर स्वर्गलोक प्राप्त होता है । इस लोक में कुटुम्ब और धन-धान्य की वृद्धि होती है । उत्तम सुख और अच्छी स्त्रियाँ मिलती हैं । इस शुभ काव्य को सुनने से मनुष्यों के सब अर्थ सिद्ध होते हैं । इसके सुनने से दीर्घायु, आरोग्य, यश, सुहृद्, बन्धु, बुद्धि, बल, समृद्धि और सब कामनाएँ प्राप्त होती हैं । सत्पुरुषों को नियमपूर्वक यह इतिहास सुनना चाहिए । ११७–१२२ ।



वाल्मीकीय रामायण

उत्तरकाण्ड

सर्ग १

रामचन्द्र राक्षसों को मारकर अयोध्या में जब राज्य करने लगे तो उनको प्रसन्न करने के लिए बहुत-से मुनि वहाँ आये। पूर्व दिशा में रहनेवाले कौशिक, यवक्रीत, गार्ग्य, गालव और मेधातिथि के पुत्र कण्व; दक्षिण दिशा में रहनेवाले स्वस्त्यात्रेय, नमुचि, प्रमुचि, अगस्त्य, अत्रि, सुमुख और विमुख; पश्चिम दिशा में रहनेवाले नृषद्गु, कवषी, धौम्य और कौषेय; उत्तर दिशा में रहनेवाले वसिष्ठ, कश्यप, अत्रि, विश्वामित्र, गौतम, जमदग्नि और भरद्वाज अयोध्या को आये। १—६। ये सब मुनि वेद-वेदाङ्ग और सब शास्त्रों के विद्वान् और अग्नि के समान प्रकाशित थे। रामचन्द्र के द्वार पर आकर धर्मात्मा अगस्त्य ने द्वारपाल से कहा—रामचन्द्र से कहो कि मुनि लोग आये हैं। अगस्त्य की आज्ञा से द्वारपाल तुरन्त ही रामचन्द्र के पास गया। वह बड़ा नीतिज्ञ, चेष्टा देखकर मन की बात जाननेवाला, सदाचारी, बुद्धिमान् और धैर्यवान् था। ७—१०। पूर्णमासी के चन्द्रमा के समान प्रकाशित रामचन्द्र को देखकर ऋषियों में श्रेष्ठ अगस्त्य का आगमन निवेदन किया। मुनियों का आगमन सुनते ही रामचन्द्र ने द्वारपाल को आज्ञा दी—सब मुनियों को बहुत शीघ्र यहाँ बुला लाओ। ११—१२। द्वारपाल मुनियों को बुला लाया। मुनियों को देखकर रामचन्द्र हाथ जोड़कर खड़े हो गये। पाद्य-अर्घ्य और गौ देकर उनकी पूजा की। बड़े आदर से सुवर्णमय उत्तम आसन पर कुशासन और मृगचर्म बिछाकर बैठाया।

उन लोगों के बैठ जाने पर उनका और उनके शिष्यों का कुशलप्रश्न किया। वेदविद् महर्षियों ने उत्तर दिया—हे महाबाहु रामचन्द्र, हम लोगों का सर्वत्र कुशल है। १३–१६। बड़े भाग्य की बात है कि आप ने शत्रुओं का विनाश किया और हम लोग आपको सकुशल देख रहे हैं। राजन्, बड़े भाग्य से आपने संसार को रुलानेवाले रावण का वध किया। हे राम, यद्यपि आपके लिए पुत्र-पौत्रों सहित रावण का वध करना कोई कठिन काम नहीं था, आप तो धनुष लेकर तीनों लोकों को जीत सकते हैं।१७–१८।आपने हम लोगों के हित के लिए राक्षसेश्वर रावण का वध किया। हे धर्मात्मन्, सीता और आपके हितकारी लक्ष्मण के साथ आपको बड़े भाग्य से हम लोग विजयी देख रहे हैं। प्रहस्त, विकट, विरूपाक्ष, महोदर, अकम्पन और जिसके समान महाकाय राक्षस संसार में और नहीं है, उस कुम्भकर्ण तथा त्रिशिरा, अतिकाय, देवान्तक और नरान्तक को युद्ध में आपने हम लोगों के भाग्य से मारा। देवताओं से भी अवध्य राक्षसेन्द्र रावण को मारकर आपने विजय प्राप्त की। उसके पुत्र इन्द्रजित् का वध करना, उसको मारने से भी बढ़कर कठिन काम था। हे महाबाहु ! काल के समान, देवताओं के शत्रु, इन्द्रजित् को मारकर आपने विजय प्राप्त की, यह हम लोगों ने जब सुना तो बड़े प्रसन्न हुए। वह बड़ा मायावी था और सब प्राणियों से अवध्य था। युद्ध में उसका मारा जाना सुनकर हम लोगों को बड़ा विस्मय हुआ। हे वीर, हम लोगों को अभय करते हुए आप इस प्रकार की उन्नति कर रहे हैं, यह बड़े भाग्य की बात है। हे शत्रुनाशन, सदा आपकी जय हो। १९–२८। मुनियों के यह वचन सुनकर रामचन्द्र को बड़ा विस्मय हुआ। वे हाथ जोड़कर बोले—आप लोग कुम्भकर्ण और रावण से भी अधिक इन्द्रजित् की प्रशंसा क्यों कर रहे हैं। महोदर, प्रहस्त, विरूपाक्ष, मत्त, उन्मत्त, देवान्तक, नरान्तक, अतिकाय, त्रिशिरा और धूम्राक्ष आदि जो बड़े बलवान् राक्षस थे,

उनसे भी अधिक प्रशंसा आप लोग इन्द्रजित् की क्यों करते हैं ? उसका बल, पराक्रम और प्रभाव कैसा था, किस कारण आप लोग उसे अधिक समझते हैं ? २९–३३ । मैं आपको आज्ञा नहीं देता, यदि मेरे सुनने योग्य हो, यदि गोपनीय बात न हो तो मैं उसका बल, पराक्रम सुनना चाहता हूँ । ३४ । उसे वरदान कैसे मिला, इन्द्र को उसने कैसे जीता, पुत्र पिता से भी अधिक बलवान् कैसे हुआ ? जिस प्रकार से उसे वरदान मिला हो, इन्द्र को जिस तरह उसने जीता हो और पिता से अधिक बलवान् जिस प्रकार हुआ हो वह आप लोग कृपा करके मुझसे कहिए । ३५–३६ ।

सर्ग २

महात्मा रामचन्द्र के यह पूछने पर महातेजस्वी अगस्त्य बोले—हे रामचन्द्र ! इन्द्रजित् का तेज, बल और जिस तरह उसने शत्रुओं को जीता और शत्रुओं के हाथ से न मारा जा सका, वह वृत्तान्त सुनो । पहले मैं रावण के कुल, जन्म और वरदान पाने का वृत्तान्त कहता हूँ। सत्ययुग में प्रजापति ब्रह्मा के पुत्र, उन्हीं के समान ब्रह्मर्षि, पुलस्त्य नाम के एक ऋषि हुए थे । वे केवल नाममात्र के ही प्रजापति के पुत्र नहीं थे, बल्कि कीर्ति, धर्म और शील में अपने पिता के समान थे । १–५ । महामति पुलस्त्य अपने उत्तम गुणों के कारण, और प्रजापति के पुत्र होने के कारण, देवताओं और सब लोकों के प्रिय थे । तपस्या करने के लिए सुमेरु पर्वत के समीप तृणविन्दु नामक आश्रम में उन्होंने निवास किया। वहाँ इन्द्रियों को वश में करके तपस्या करने लगे । किन्तु उनकी तपस्या में ऋषि, नाग और राजर्षियों की कन्याएँ विघ्न करने लगीं । वे आश्रम पर आकर क्रीड़ा करती थीं । ६–९ । वह स्थान बड़ा रमणीय था, सब ऋतुओं में भोग-विलास करने के योग्य था, इसी से वे सब नित्य वहाँ आकर

गातीं, बजातीं, नाचतीं और हाव-भाव दिखाती थीं। इस प्रकार मुनि की तपस्या में उन लोगों ने जब बड़ा विघ्न किया तो एक दिन मुनि कुपित होकर बोले—आज से यदि कोई कन्या यहाँ आकर मुझे देखेगी तो वह गर्भवती हो जायगी। मुनि का यह वचन सुनकर और कन्याओं ने तो डर के मारे वहाँ आना छोड़ दिया, किन्तु राजर्षि तृणविन्दु की कन्या ने मुनि का वह वचन नहीं सुना था, इसलिए वह आश्रम पर आकर विचरने लगी। उसने अपनी और सखियों को वहाँ न देखा। पुलस्त्य मुनि उस समय वेद का पाठ करते थे। राजकुमारी थोड़ी देर तक वेद का पाठ सुनती रही, फिर उसने तपोनिधि पुलस्त्य को देखा। मुनि को देखते ही वह गर्भवती हो गई। उसकी देह पीली पड़ने लगी, गर्भ के सब लक्षण स्पष्ट हो गये। १०—१७। अपनी यह दशा देख-कर वह बहुत घबराई। मुझे यह क्या हो गया, यह सोचती हुई वह अपने पिता के पास गई। १८। तृणविन्दु ने उसे गर्भवती देखकर उससे पूछा—तू अभी कुमारी है, तेरा विवाह नहीं हुआ, तूने यह गर्भ कैसे धारण किया? यह सुनकर राजकुमारी को बड़ा दुःख हुआ। वह हाथ जोड़कर बोली—हे तात, इसका कारण मैं नहीं जानती कि मेरा रूप ऐसा क्यों हो गया है। १९—२०। मैं अपनी सखियों को ढूँढ़ने के लिए महर्षि पुलस्त्य के आश्रम पर अकेली गई थी, किन्तु वहाँ और कोई सखी देख नहीं पड़ी। वहीं मेरी यह दशा हुई। मैं डर के मारे आपके पास चली आई हूँ। २१—२२। यह सुनकर तपस्वी राजर्षि, तृणविन्दु ने ध्यान करके देखा तो उन्हें विदित हुआ कि यह ऋषि का कर्म है। वे महर्षि पुलस्त्य का शाप जानकर, अपनी कन्या को लेकर उनके आश्रम पर गये और उनसे बोले—भगवन्, अनेक गुणों से भूषित और अपने आप आई हुई मेरी कन्या को आप भिक्षारूप ग्रहण कीजिए। २३—२५। आप तपस्या कर रहे हैं, इन्द्रियों को आपने काबू में कर लिया है, यह आपकी सेवा करेगी, इसमें सन्देह

नहीं है। २६। धर्मात्मा तृणविन्दु के यह कहने पर उसे ग्रहण करने के इच्छुक पुलस्त्य ने कहा—'बहुत अच्छा'। कन्या मुनि को देकर राजा अपने आश्रम पर चले आये, और वह अपने गुणों से सन्तुष्ट करती हुई पति की सेवा करने लगी। २७–२८। उसके शील और चरित्र से मुनि सन्तुष्ट और प्रसन्न होकर बोले—हे सुन्दरी, तुम्हारे गुणों से मैं बड़ा प्रसन्न हुआ हूँ, इसलिए तुमको अपने ही समान पुत्र देता हूँ। इसका नाम पौलस्त्य होगा। यह दोनों कुलों की वृद्धि करेगा। २६–३०। वेद का पाठ करते हुए मुझसे तुमने वेद के मन्त्र सुने हैं, इससे इस पुत्र का नाम विश्रवा होगा। प्रसन्न होकर मुनि के ऐसा कहने पर राजकुमारी ने समय आने पर विश्रवा नाम का पुत्र उत्पन्न किया। विश्रवा अपने यश और धर्म के कारण तीनों लोकों में विख्यात हुए। वेद और शास्त्र के अध्ययन, समदर्शिता, व्रत, आचरण और तपस्या में वे अपने पिता के समान थे। ३१–३३।

सर्ग ३

पुलस्त्य के पुत्र विश्रवा थोड़े ही दिनों में अपने पिता की तरह तपस्या करने लगे। वे सत्यवादी, शीलवान्, जितेन्द्रिय, स्वाध्यायनिरत, शुद्धहृदय, भोग-विलास से विरक्त और धर्मपरायण थे। १–२। विश्रवा के अच्छे आचरण देखकर भरद्वाज मुनि ने उनके साथ अपनी कन्या का विवाह कर दिया। विवाह-विधि से भरद्वाज की कन्या को ग्रहण करके विश्रवा ने सांसारिक बुद्धि से अपनी भार्या में अपने ही समान पुत्र उत्पन्न किया। उसमें ब्राह्मणों के सब गुण थे, वह अपने पिता के समान गुणवान् था। उस पुत्र के उत्पन्न होने पर ब्रह्मा बड़े प्रसन्न हुए। ३–६। देवर्षियों के साथ वे वहाँ आये और उसका नामकरण किया। वे जानते थे कि यह पुत्र धनाध्यक्ष होगा। ब्रह्मा ने कहा कि यह विश्रवा का पुत्र है और गुणवान् भी विश्रवा के तुल्य है, इसलिए वैश्रवण

नाम से इसकी प्रसिद्धि होगी। घृत की आहुति देने पर जिस तरह अग्नि बढ़ती है, वैसे ही तपोवन में वैश्रवण बढ़ने लगे। बड़े होने पर उस महात्मा में यह बुद्धि उत्पन्न हुई कि हम तपस्या आदि धर्म करेंगे, क्योंकि धर्म ही ब्राह्मणों की परम गति है। ७–१०। यह सोचकर वे तपस्या करने लगे। हज़ार वर्ष तक कठिन नियमों का पालन करते हुए उन्होंने तप किया। उस समय में कुछ दिनों तक तो केवल जल पान किया, बहुत दिनों तक केवल वायु का सेवन करते रहे और कुछ दिनों तक निराहार ही रहे। इस विधि से तप करते-करते हजार वर्ष, एक वर्ष के समान बीत गये। उनकी तपस्या से प्रसन्न होकर महातेजस्वी ब्रह्मा इन्द्र आदि देवताओं के साथ उनके आश्रम पर आये और उनसे बोले—बेटा, तुम्हारी तपस्या से हम बहुत प्रसन्न हुए, जो इच्छा हो वह वर माँगो, क्योंकि तुम वरदान पाने के योग्य हो। सामने खड़े हुए पितामह से वैश्रवण ने कहा—भगवन्, हम लोकपाल होकर लोकों की रक्षा करना चाहते हैं। ११–१५। देवताओं के साथ ब्रह्मा ने प्रसन्नचित्त से कहा—अच्छा, ऐसा ही होगा। यम, इन्द्र और वरुण तीन लोकपालों की सृष्टि हम कर चुके हैं, चौथे की सृष्टि करना चाहते ही थे, वही पद तुम चाहते हो। हे धर्मज्ञ, अब तुम जाओ, तुम सब निधियों के स्वामी होगे और इन्द्र, वरुण तथा यम के समान चौथे लोकपाल होगे। १६–१८। सूर्य के समान प्रकाशित पुष्पक नाम का विमान तुमको सवारी के लिए हम देते हैं। तुम सब देवताओं की समता प्राप्त करो। अब हम लोग अपने-अपने स्थान को जाते हैं। हे तात, तुमको वरदान देकर हम कृतकृत्य हुए, तुम्हारा कल्याण हो। १६–२०। यह कहकर देवताओं सहित ब्रह्मा अपने स्थान को चले गये। उनके चले जाने पर धनेश अपने पिता के पास गये और हाथ जोड़कर बोले—भगवन्, पितामह ब्रह्मा से अभीष्ट वर तो हमने प्राप्त किया, किन्तु उन्होंने हमारे रहने के लिए कोई स्थान नहीं बताया। इसलिए आप कोई ऐसा

स्थान बताइए जहाँ हमारे रहने से किसी को कष्ट न हो। २१-२३। पुत्र के यह वचन सुनकर विश्रवा ने कहा—हे धर्मज्ञ, दक्षिण समुद्र के किनारे त्रिकूट नाम का एक पर्वत है, उसके ऊपर इन्द्र की पुरी के समान रमणीय लंका नाम की नगरी बसी हुई है। विश्वकर्मा ने राक्षसों के लिए उसे बनाया था। २४-२६। तुम वहीं जाकर निवास करो, तुम्हारा कल्याण हो। उसकी चहारदीवारी सोने की बनी हुई है, उसकी खाईं भी सोने की है। यन्त्र और शस्त्र भी वहाँ बहुत हैं। सुवर्ण और वैडूर्य के फाटक लगे हैं, वह नगरी बहुत रमणीय है। वहाँ राक्षस रहते थे, किन्तु विष्णु के डर से वे सब रसातल को भाग गये हैं। लंका आजकल सूनी पड़ी है, इस समय उसका स्वामी कोई नहीं है। तुम वहीं जाकर निवास करो। वहाँ तुम्हारे निवास करने से किसी को कोई कष्ट न होगा, क्योंकि वहाँ तो कोई रहता ही नहीं है। २७-३०। पिता के यह वचन सुनकर धर्मात्मा वैश्रवण पर्वत पर बसी हुई लंका में रहने लगे। उनकी आज्ञा से थोड़े ही दिनों में हज़ारों राक्षस वहाँ आकर बस गये। वैश्रवण उन राक्षसों के स्वामी हुए, और बड़े आनन्द से समुद्र के बीच में बसी हुई लंका में निवास करने लगे। वे कभी-कभी पुष्पक विमान पर बैठकर अपने माता-पिता के दर्शन के लिए जाया करते थे। ३१-३४। देवता और गन्धर्व उनकी स्तुति करते थे, अप्सराएँ नाचती थीं, किरणों से प्रकाशित सूर्य के समान वे शोभित थे और ऐसे पितृभक्त थे कि अपने पिता का दर्शन करने के लिए बड़े उत्सुक रहते थे। ३५।

सर्ग ४

अगस्त्य के यह वचन सुनकर रामचन्द्र विस्मित होकर बोले—सुनते हैं कि राक्षसों की उत्पत्ति विश्रवा से ही हुई है, फिर उससे पहले लंका में राक्षस कहाँ से आये? तीनों अग्नि के समान तेजस्वी महर्षि अगस्त्य की ओर बारबार देखकर रामचन्द्र ने बड़े विस्मय के साथ

कहा—भगवन्, लंका में पहले भी राक्षस रहते थे, यह बात आपसे सुनकर मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। क्योंकि मैंने सुना था कि राक्षसों की उत्पत्ति पुलस्त्य के वंश में विश्रवा से हुई है, किन्तु आपसे यह मालूम हुआ कि उससे पहले भी राक्षस थे। क्या वे राक्षस, रावण-कुम्भकर्ण, प्रहस्त, विकट और रावण के पुत्रों से भी बलवान् थे? उनका पूर्वज कौन था, उसका क्या नाम था और उसका बल-पौरुष कैसा था? किस अपराध के कारण भगवान् विष्णु ने उन राक्षसों को लंका से निकाल दिया था? हे निष्पाप, विस्तार के साथ यह सब मुझसे कहिए। जैसे सूर्य अन्धकार को मिटाते हैं, वैसे ही आप मेरे इस कुतूहल को दूर कीजिए। १—७। रामचन्द्र के कहे हुए शुद्ध, अलंकृत, विस्मययुक्त वचनों को सुनकर अगस्त्य मुनि बोले—पहले जल की उत्पत्ति हुई, जल से कमल और कमल से ब्रह्मा उत्पन्न हुए। ब्रह्मा ने जल आदि तत्त्वों से सृष्टि की रचना की। जल आदि की रक्षा के लिए उन्होंने फिर कुछ प्राणियों को उत्पन्न किया। वे सब प्राणी भूख-प्यास से व्याकुल होकर उत्पन्न करनेवाले ब्रह्मा के पास जाकर बोले कि हम लोग क्या करें। ८—१०। ब्रह्मा ने हँसकर उनसे कहा कि तुम लोग इस जल की रक्षा करो। उन प्राणियों में से कुछ लोगों ने कहा—'रक्षाम' अर्थात् आपकी आज्ञा से हम रक्षा करेंगे। अन्य लोगों ने कहा—'यक्षाम' अर्थात् हम भूखे हैं, हम भोजन करेंगे। तब ब्रह्मा ने कहा—तुम लोगों में से जिन्होंने 'रक्षाम' कहा है वे राक्षस होंगे, और जिन्होंने 'यक्षाम' कहा है वे यक्ष होंगे। ब्रह्मा के यह कहते ही हेति और प्रहेति नाम के दो भाई मधु-कैटभ के समान बलवान् राक्षस उत्पन्न हुए। ११—१६। प्रहेति धार्मिक था, इसलिए वह तप करने के लिए तपोवन को चला गया। हेति अपना विवाह करने का उद्योग करने लगा। काल की बहन जिसका नाम भया था और जो सबको भय देती थी, हेति ने उसके साथ विवाह किया। उसके

एक पुत्र उत्पन्न हुआ जो महातेजस्वी और सूर्य के समान प्रकाशित था। उसने पुत्र का नाम विद्युत्केश रक्खा, जल में कमल के समान वह पुत्र बढ़ने लगा। १७—१८। जब उसकी युवावस्था हुई तब हेति ने उसका विवाह करने का प्रयत्न किया। वह सन्ध्या के पास गया और उसकी कन्या जो उसी के समान थी, अपने पुत्र के लिए माँगी। १९—२०। सन्ध्या ने सोचा कि इसका विवाह किसी के साथ तो करना ही है, इसी के साथ क्यों न कर दें। यह सोचकर उसने विद्युत्केश को अपनी कन्या दे दी। वह राक्षस बड़ा प्रसन्न हुआ। जैसे शची के साथ इन्द्र विहार करते हैं, वैसे ही वह अपनी स्त्री के साथ क्रीड़ा करने लगा। उस स्त्री का नाम सालकटंकटा था। बहुत दिनों तक विहार करने के बाद उसने गर्भ धारण किया। प्रसव का समय आने पर मन्दर पर्वत पर जाकर उसने पुत्र उत्पन्न किया, और जैसे अग्नि के तेज से उत्पन्न गर्भ को त्यागकर गंगाजी चली गई थीं, वैसे ही वह राक्षसी रति करने की इच्छा से पुत्र को वहीं छोड़कर पति के पास चली गई। उसने पुत्र का कुछ भी प्यार न किया और पति के साथ क्रीड़ा करने लगी। उसका त्यागा हुआ पुत्र वहीं मेघ के समान शब्द करने लगा। २१—२५। वह शिशु शरद्ऋतु के सूर्य के समान तेजस्वी था। वह मुँह में मूठी डालकर धीरे-धीरे रोने लगा। उसी समय पार्वती के साथ बैल पर सवार महादेव आकाशमार्ग से जा रहे थे। उन्होंने उसका रोदन सुना। उसे देखकर महादेव और पार्वती को दया आई। उन्होंने उसकी माता के समान उसे भी दीर्घायु कर दिया और पार्वती के कहने से आकाश में विचरने के लिए एक विमान भी उसे दिया। हे राजकुमार, पार्वती ने राक्षसियों को वरदान दिया कि राक्षसियाँ पति का संयोग होते ही गर्भ धारण करें और शीघ्र ही प्रसव भी करें। उनकी सन्तान शीघ्र ही अपनी माता की आयु के समान हो जाय। २६—३१। उस राक्षस-पुत्र का नाम

सुकेश था। वह महादेव के वरदान से गर्वित होकर इन्द्र के समान सर्वत्र विचरने लगा। २२।

सर्ग ५

ग्रामणी नाम का एक गन्धर्व विश्वावसु के समान तेजस्वी था। उसने देखा कि सुकेश को ब्रह्मा से वरदान मिला है और वह बड़ा धार्मिक भी है, तो उसने अपनी कन्या देववती का विवाह उसके साथ कर दिया। देववती लक्ष्मी के समान सुन्दरी और युवती थी। वह अपने सौन्दर्य के कारण तीनों लोकों में विख्यात थी। वरदान के कारण सुकेश को सभी ऐश्वर्य प्राप्त थे, पतिरूप उसे पाकर देववती वैसे ही प्रसन्न हुई जैसे निर्धन मनुष्य धन पाकर सन्तुष्ट होता है। उस राक्षस को भी उसके साथ रहने से बड़ा हर्ष हुआ। वह राक्षस काजल के पर्वत से निकले हुए महागज के समान था। हे रघुनन्दन, कुछ दिनों के बाद सुकेश ने उस स्त्री से तीनों अग्नि के समान तेजस्वी तीन पुत्र उत्पन्न किये। १—५। उनमें एक का नाम माल्यवान्, दूसरे का सुमाली और तीसरे का माली था। ये तीनों बड़े बलवान् थे। अपने पुत्रों को रुद्र के समान तेजस्वी देखकर सुकेश बड़ा प्रसन्न हुआ। वे तीनों लोकों के समान स्थिर, तीनों अग्नियों के समान तेजस्वी, तीनों मन्त्रों के समान उग्र और तीनों दोषों (वात, पित्त, कफ) के समान भयानक थे। सुकेश के तीनों पुत्र बड़ी शीघ्रता से बड़े हुए, जैसे औषध न करने से रोग बढ़ जाते हैं। ६—८। उनको जब यह मालूम हुआ कि तपस्या के बल से उनके पिता को वरदान और ऐश्वर्य प्राप्त हुआ है, तो वे तीनों भाई सलाह करके सुमेरु पर्वत पर तपस्या करने चले गये। हे नृपसत्तम, उन राक्षसों ने कठिन नियमों का पालन करके घोर तपस्या की। ६—१०। सत्य, सरलता और इन्द्रियों का दमन आदि, संसार में दुर्लभ, कठिन तपस्या करके

देवता, दैत्य और मनुष्यों सहित तीनों लोकों को सन्तप्त कर दिया। कठोर तपस्या देखकर चतुर्मुख ब्रह्मा विमान पर चढ़कर देवताओं के साथ सुकेश के पुत्रों के पास आकर बोले—माँगो, हम तुमको वरदान देंगे। देवताओं के साथ ब्रह्मा को देखकर वे तीनों हाथ जोड़कर बोले—हे देव, हम लोगों की तपस्या से प्रसन्न होकर यदि आप वरदान देना चाहते हैं, तो हम लोगों को यह वरदान दीजिए कि हम अपने शत्रुओं को मार डालें, हमको कोई जीत न सके और बहुत दिनों तक हम लोग जीवित रहें। हे महाराज, हम तीनों भाइयों में परस्पर स्नेह भी बना रहे। ११—१४। "बहुत अच्छा, ऐसा ही होगा" सुकेश के पुत्रों से यह कहकर ब्राह्मणों पर दया करनेवाले ब्रह्मा अपने लोक को चले गये। १५। हे रामचन्द्र, ब्रह्मा से वरदान पाकर वे तीनों राक्षस निर्भय हो गये और देव-दानव सभी को पीड़ित करने लगे। उन तीनों राक्षसों से पीड़ित देवता, दैत्य, ऋषि और चारण आदि को कोई भी रक्षक न दिखाई दिया; जैसे नरक में पड़े हुए मनुष्यों को कोई रक्षक नहीं दिखाई देता। १६—१७। हे रघुसत्तम, उन तीनों राक्षसों ने शिल्पविद्या जाननेवालों में श्रेष्ठ विश्वकर्मा से कहा—महापराक्रमी, तेजस्वी, महात्मा देवताओं की इच्छानुसार घर आप ही बनाते हैं, इसलिए हे महामते, हम लोगों के लिए भी आप घर बना दें। चाहे हिमवान् पर्वत पर बनाइए और चाहे मन्दराचल के ऊपर, किन्तु हम लोगों का घर महादेव के घर के समान हो। राक्षसों के यह वचन सुनकर महाबाहु विश्वकर्मा ने उन राक्षसों के रहने के लिए अमरावती के समान उत्तम स्थान बनाया। विश्वकर्मा ने कहा—दक्षिण समुद्र के किनारे त्रिकूट नाम का पर्वत है, उसी जगह सुवेल नाम का दूसरा भी पर्वत है। उस मेघाकार पर्वत के शिखर पर पक्षी भी बड़ी कठिनता से जा सकते हैं। उसी पर्वत के ऊपर तीस योजन चौड़ी और सौ योजन लम्बी लंका नाम की नगरी है। उस

नगरी में सुवर्ण के गृह, सुवर्ण की चहारदीवारी और सुवर्ण के ही फाटक लगे हैं। हमने उसे इन्द्र की आज्ञा से बनाया था। तुम लोग लंका में जाकर वैसे ही निवास करो, जैसे इन्द्र आदि देवता इन्द्रपुरी में रहते हैं। १८—२६। राक्षसों के साथ लंकापुरी में रहने से शत्रु आपका कुछ न बिगाड़ सकेंगे, क्योंकि शत्रुओं का वहाँ पहुँचना बड़ा कठिन है। विश्वकर्मा के यह वचन सुनकर वे तीनों राक्षस हजारों अनुचरों के साथ लंका को चले गये और वहाँ रहने लगे। लंका की चहारदीवारी बहुत मज़बूत थी, चारों ओर बड़ी गहरी खाईं थी, सोने के सैकड़ों घर बने थे। राक्षस वहाँ बसकर बड़े प्रसन्न हुए।२७—२९। हे रघुनन्दन, उन्हीं दिनों में नर्मदा नाम की एक गन्धर्वी हुई। उसके तीन कन्याएँ थीं। यद्यपि नर्मदा राक्षसी नहीं थी, वह गन्धर्वी थी, किन्तु उसने अपनी कन्याओं का विवाह तीनों राक्षसों (माल्यवान्, सुमाली और माली) के साथ कर दिया। वे कन्याएँ बड़ी सुन्दरी थीं, चन्द्रमा के समान सुन्दर उनके मुँह थे। तीनों राक्षस अपनी-अपनी स्त्रियों के साथ विहार करने लगे, जैसे देवता अप्सराओं के साथ क्रीड़ा करते हैं। माल्यवान् की स्त्री का नाम सुन्दरी था, वह सुन्दरी भी बहुत थी। माल्यवान् और उस सुन्दरी से जो सन्तान उत्पन्न हुई उनके नाम सुनिए—वज्रमुष्टि, विरूपाक्ष, दुर्मुख, सुप्तघ्न, यज्ञकोप, मत्त और उन्मत्त तथा अनला नाम की अति सुन्दरी कन्या, ये सब माल्यवान् की सन्तान थीं।३०—३६। सुमाली की स्त्री का नाम केतुमती था। वह अपने पति को प्राणों से भी अधिक प्यारी थी। सुमाली के बहुत-सी सन्तानें थीं। उनके नाम ये थे—प्रहस्त, अकम्पन, विकट, कालिकामुख, धूम्राक्ष, दम्भ, सुपार्श्व, संह्रादि, प्रघस, भासकर्ण ये दस पुत्र और राका, पुष्पोत्कटा, कैकसी, और कुम्भीनसी ये चार कन्याएँ। ३७—४०। माली की स्त्री का नाम वसुदा था। वसुदा भी बड़ी सुन्दरी थी, कमल-दल के समान उसके नेत्र थे। उसकी सन्तानों के भी नाम सुनिए—अनल, हर और सम्पाति

वे माली के पुत्र थे। ये चारों राक्षस विभीषण के मन्त्री हुए। वे तीनों राक्षस अपने बाहुबल से गर्वित होकर अपने पुत्रों के साथ इन्द्र आदि देवताओं, ऋषियों, नागों और यक्षों को पीड़ित करने लगे। पवन के समान संसार में घूमते थे, युद्ध में मृत्यु के समान भयानक थे, वरदान से गर्वित होने के कारण यज्ञ की क्रियाओं का विध्वंस करते थे।४१–४५।

सर्ग ६

देवता, गन्धर्व, ऋषि और यक्ष आदि जब उन तीनों राक्षसों से बहुत पीड़ित हुए तो डर के मारे वे लोग देवदेव महादेव की शरण में गये। महादेव इस संसार के सृष्टिकर्ता, रक्षक और संहारक हैं। वे न कभी जन्म लेते हैं और न उनका कोई रूप ही है। सब लोकों के आधार, आराध्य और परमगुरु वही हैं। काम के शत्रु, त्रिपुरारि, त्रिनेत्र महादेव के पास जाकर देवताओं ने हाथ जोड़ डर के मारे गद्गद स्वर से कहा—भगवन्, सुकेश के पुत्र माल्यवान्, सुमाली और माली ब्रह्मा के वरदान से बड़े प्रचंड हो गये हैं, वे सब प्राणियों को पीड़ित करते हैं।१–४। उन राक्षसों ने हम लोगों को स्वर्ग से निकाल दिया है और देवताओं के समान स्वर्ग में क्रीड़ा करते हैं। हम लोगों के रहने का अब कोई स्थान ही नहीं है। इसलिए आपकी शरण में आये हैं। वे राक्षस अपने को ही ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, यम, वरुण, सूर्य और चन्द्रमा बताते हैं; अपने अनुचरों के साथ सब प्राणियों को पीड़ित करते हैं। हे देव, भय से पीड़ित हम लोगों को आपके सिवा और कौन अभय कर सकता है। आप रुद्र का रूप धारण करके देवताओं के शत्रुओं का विनाश कीजिए। देवताओं की यह प्रार्थना सुनकर महादेव ने कहा—हे देवताओ, इन राक्षसों के पिता को हमने वरदान दिया है, इसलिए हम इनको न मारेंगे। किन्तु हम तुमको सलाह बतावेंगे, जिससे इनका विनाश हो जायगा। ५–१०। हे महर्षिगण, देवताओं को

साथ लेकर तुम लोग विष्णु भगवान् की शरण में जाओ, वही इन दुष्ट राक्षसों का विनाश करेंगे। राक्षसों से पीड़ित देवता यह सुनकर महादेव की जय बोलने लगे और उनकी स्तुति करके विष्णु भगवान् के समीप गये। ११—१२। शंख-चक्रधर विष्णु को प्रणाम और उनकी स्तुति करके देवता सुकेश के पुत्रों पर क्रोध प्रकट करते हुए बोले—हे देव, तीनों अग्नियों के समान तेजस्वी सुकेश के पुत्र ब्रह्मा का वरदान पाकर बड़े प्रचंड हो गये हैं। उन लोगों ने बलपूर्वक हमारे स्थान छीन लिये हैं, त्रिकूट पर्वत के शिखर पर बसी हुई लंका नगरी में वे लोग रहते हैं और हम लोगों को बहुत पीड़ित करते हैं। १३—१५। हे मधुसूदन, इसलिए हम लोग आपकी शरण में आये हैं। आपही हम लोगों की गति हैं। हम लोगों के हितार्थ उनका वध कीजिए। उन राक्षसों के सिर काटकर यमलोक को भेज दीजिए। भय के समय हम लोगों को अभय देनेवाला आपके सिवा और कोई नहीं है। युद्ध में अनुचरों सहित उन राक्षसों को मारकर हम लोगों का भय दूर कीजिए, जैसे सूर्य अन्धकार को मिटा देते हैं। १६—१८। देवताओं के ऐसा कहने पर देवताओं को अभय और शत्रुओं को भय देनेवाले देवदेव जनार्दन भगवान् बोले——महादेव के वरदान से गर्वित सुकेश राक्षस को और उसके तीनों पुत्रों को, जिनमें ज्येष्ठ माल्यवान् है, हम जानते हैं। हे देवताओ, तुम लोग निर्भय रहो। मर्यादा को नष्ट करने-वाले उन अधम राक्षसों को हम अवश्य मारेंगे। १९—२१। विष्णु भगवान् के वचन सुनकर देवताओं को बड़ा हर्ष हुआ। उनकी प्रशंसा करते हुए वे लोग चले गये। देवताओं का यह उद्योग माल्यवान् ने जब सुना तो उसने अपने भाइयों से कहा कि देवता और ऋषि हम लोगों का वध कराने के लिए महादेव के पास गये थे। इन लोगों ने उनसे कहा कि हे देव, सुकेश के पुत्र वरदान के प्रभाव से बड़े उद्धत हो गये हैं। वे हमको पग-पग पर पीड़ित करते हैं। उन लोगों ने हमको इतना

सताया है कि हम लोग उन दुष्टों के भय के मारे अपने घरों में नहीं रहने पाते। अतएव हम लोगों के हित के लिए उनको मार डालिए। आप हुंकार से ही उनका वध कर सकते हैं। २२—२७। देवताओं के यह कहने पर अन्धकासुर का विनाश करनेवाले महादेव सिर और हाथ हिलाते हुए बोले—हे देवताओ, सुकेश के पुत्रों को हम नहीं मार सकते, क्योंकि हमीं ने उनको वरदान दिया है; किन्तु जो उनको मार सकता है, उसे हम तुम लोगों को बताते हैं। २८—२९। चक्र-गदापाणि पीताम्बरधारी जनार्दन विष्णु की शरण में तुम लोग जाओ। ३०। तब महादेव के कहने से देवता लोग उनको प्रणाम करके भगवान् विष्णु के पास गये। उनसे सब हाल कहा। विष्णु ने देवताओं से कहा कि तुम लोग निर्भय हो जाओ। हम राक्षसों का वध करेंगे। ३१—३२। हे राक्षसो, हम लोगों के डर से भागे हुए देवताओं से विष्णु ने हम लोगों के वध करने की प्रतिज्ञा की है। अब इस विषय में क्या करना चाहिए, यह विचार करो। ३३। यह न समझो कि हम लोग बड़े प्रबल हैं, हमारा कोई क्या बिगाड़ सकेगा। क्योंकि हिरण्यकशिपु बड़ा बलवान् था, उसकी भी मृत्यु हो गई। देवताओं के और भी बहुत से शत्रु जीवित नहीं बचे। नमुचि, कालनेमि, संह्राद, राधेय, यमलार्जुन, हार्दिक्य और शुम्भ-निशुम्भ आदि बड़े बलवान् थे। वे सब मार डाले गये, अब कहीं उनका नाम भी नहीं सुनाई देता। इन दानवों ने सैकड़ों यज्ञ किये, अस्त्र-शस्त्र में बड़े कुशल थे, शत्रुओं को भय देनेवाले और बड़े मायावी थे, किन्तु विष्णु ने इन सबका विनाश कर दिया। सैकड़ों-हज़ारों असुरों को मार डाला। इसलिए अब जो उचित समझो सो करो, क्योंकि विष्णु को जीतना बहुत कठिन है और वही हम लोगों का वध करना चाहते हैं। ३४—३८। माल्यवान् के यह वचन सुनकर माली और सुमाली दोनों भाइयों ने कहा—हम लोगों ने विद्याध्ययन किया, दान दिया,

ऐश्वर्य भी प्राप्त किया; आरोग्य और आयु प्राप्त की, अपने कुल के अनुसार धर्म की व्यवस्था भी की। शस्त्रों के बल से देवताओं को परास्त किया, और भी सब शत्रुओं को जीत लिया, अब हम लोगों को मृत्यु का क्या भय है। विष्णु, रुद्र और यम युद्ध में हम लोगों के सामने आने का साहस नहीं करते। हे राक्षसेश्वर, विष्णु से वैर होने का कोई कारण नहीं है। देवताओं के कहने से ही उनको हम लोगों से द्वेष हुआ है। इसलिए चलिए, हम लोग अभी चलकर देवताओं को मार डालें। जिनके कारण आपको यह आशंका हुई है।३९–४४। यह सलाह करके उन राक्षसों ने अपनी सेना एकत्र की। जृम्भ और वृत्रासुर के समान कुपित होकर वे सब चले। घोड़े, हाथी, रथ, गधे, बैल, ऊँट, घड़ियाल, साँप, मछलियाँ, कछुवे और गरुड़ के समान बड़े-बड़े पक्षी उनके वाहन थे। बहुत-से राक्षस सिंह, बाघ, वराह, सृमर, और चमर आदि जीवों पर सवार होकर चले। राक्षसों को अपने बल का बड़ा गर्व था। ४५–४९। जब ये लोग देवताओं से युद्ध करने के लिए लंका से निकले, उस समय लंका के निवासियों को बड़े अशकुन देख पड़े। सबके मन उदास हो गये। और भी अनेक प्रकार के भय देख पड़े। राक्षसों का विनाश सूचित करते हुए पृथिवी और आकाश में बड़े भयानक उत्पात हुए। बादलों से गर्म रुधिर और अस्थियाँ बरसने लगीं, समुद्र में तूफ़ान आया, भूकम्प हुआ, पर्वत डगमगाने लगे। सियार बड़े कठोर शब्द बोलने लगे। गिद्ध चक्कर लगाते हुए घूमने लगे। मैना और कबूतर आकाश में चक्कर लगाकर राक्षसों के ऊपर गिर पड़े। कौआ और बिलार बोलने लगे, किन्तु राक्षसों ने अपने बल के गर्व से इन उत्पातों की ओर कुछ भी ध्यान न दिया।५०–५८। राक्षसों को मौत घेरे थी, इसलिए इतने उत्पात देखकर भी वे लोग नहीं लौटे। माल्यवान् पर्वत के समान माल्यवान् राक्षस सेना के आगे था। उसके दोनों भाई सेनापति और सैनिक उसी प्रकार चले

जैसे ब्रह्मा के पीछे देवता चलें। बादलों के समान गरजती हुई राक्षसों की सेना, जिसका सेनापति माली था, विजय की इच्छा से जब देवलोक के समीप पहुँची, तो देवताओं के दूत से यह समाचार पाकर भगवान् विष्णु ने युद्ध करने की तैयारी की। धनुष और बाण लिया। हज़ारों सूर्यों के समान प्रकाशित कवच धारण किया। दो तूणीर, कटिसूत्र, खड्ग, शंख, चक्र, गदा, शार्ङ्ग धनुष आदि श्रेष्ठ अस्त्र धारण किये और सुमेरु पर्वत के समान गरुड़ पर सवार होकर राक्षसों का विनाश करने के लिए चले। ५६—६६। पीताम्बर ओढ़े श्यामवर्ण विष्णु गरुड़ के ऊपर वैसे ही शोभित हुए, जैसे सुमेरु पर्वत के शिखर पर बिजली सहित बादल शोभित हो। ६७। सिद्ध, गन्धर्व, देवता, यक्ष, ऋषि और नाग आदि उनकी स्तुति करते थे। असुर-सेना के शत्रु शंख, चक्र, धनुष धारण किये विष्णु भगवान् युद्धभूमि में पहुँचे। ६८। वेग से आये हुए गरुड़ के पंख की वायु से राक्षसों की सेना की पताकाएँ गिर पड़ीं। हाथों से शस्त्र गिर पड़े। नील पर्वत के समान राक्षसों की सेना चलायमान हो गई। ६९। फिर सँभल कर राक्षसों ने चारों ओर से विष्णु को घेर लिया और युगान्त की अग्नि के समान तीक्ष्ण आयुध, जिनमें मांस और रुधिर लगा हुआ था, उनके ऊपर बरसाने लगे। ७०।

सर्ग ७

बादलों के समान गरजते हुए राक्षस विष्णु भगवान् के ऊपर उसी प्रकार बाणों की वर्षा करने लगे, जैसे बादल पर्वत के ऊपर पानी बरसाते हैं। और, श्यामवर्ण भगवान् विष्णु काले राक्षसों से घिरे हुए ऐसे शोभित हुए, मानों बरसते हुए बादल पर्वत के ऊपर छाये हों। १—२। जैसे टीड़ी खेतों में गिरती हैं, पतंगे आग में कूदते हैं, मच्छर पानी भरे हुए घड़े में गिरते हैं, मगर समुद्र में और प्रलयकाल में

सब लोक समुद्र में निमग्न हो जाते हैं, वैसे ही राक्षसों के धनुषों से छूटे हुए, वज्र, वायु और मन के समान वेग से चलनेवाले बाण, विष्णु भगवान् के ऊपर गिरने लगे।३—४। हाथियों, घोड़ों और रथों पर सवार तथा पैदल राक्षसों ने आकाश में स्थित होकर बाण, और खड्ग आदि शस्त्रों से विष्णु को ऐसा आच्छादित कर दिया कि उनको श्वास लेना कठिन हो गया। जैसे द्विज प्राणायाम करते हैं, वही दशा उस समय विष्णु की हुई। किन्तु राक्षसों के प्रहारों का विष्णु भगवान् ने वैसे ही अनुभव किया, जैसे मछलियों के प्रहार का समुद्र। उन्होंने अपना धनुष चढ़ाकर राक्षसों के ऊपर बाण चलाये। ५—७। वज्र के समान कठोर और मन के समान वेग से चलनेवाले बाणों से सैकड़ों-हज़ारों राक्षसों को मार डाला। बाणों के प्रहार से राक्षस भाग खड़े हुए, जैसे वायु के वेग से बादल उड़ जाते हैं। विष्णु ने पांचजन्य नामक महाशंख बजाया, जिसके नाद से तीनों लोक घबरा गये। ८—१०। जैसे सिंह के गरजने से हाथी डरते हैं, वैसे ही शंख का शब्द सुनकर राक्षस भयभीत हुए। राक्षसों की सेना के हाथी और घोड़े भागे, रथों से रथी लोग गिर पड़े। वज्र के समान तीक्ष्ण बाण राक्षसों की छाती में भेदकर पृथिवी में धँस गये, जैसे इन्द्र के वज्र से पर्वत छिन्न-भिन्न हुए थे, वैसे ही विष्णु के बाणों से राक्षस कटकर पृथिवी पर गिर पड़े। ११—१४। चक्र के प्रहार से राक्षसों के शरीर में जो घाव हुए, उनसे रक्त की धारा उसी प्रकार बह चली जैसे पर्वत से गेरू बहता है। राक्षसों के गरजने का शब्द विष्णु के धनुष और शंख के शब्द में लीन हो गया। १५—१६। भगवान् विष्णु ने राक्षसों के सिर, बाण, ध्वज, धनुष, रथ, पताका और तूणीर को अपने बाणों से काट डाला। जैसे सूर्य से किरणें निकलती हैं, समुद्र से जलसमूह, पर्वत से साँप और बादलों से जल की बूँदें निकलती हैं, वैसे ही विष्णु के धनुष से छूटे हुए सैकड़ों हज़ारों बाण राक्षसों की ओर दौड़ते थे। १७—१९। जैसे शरभ के

भय से सिंह, सिंह के भय से हाथी, हाथी के डर से छोटे बाघ, बाघ के डर से चीता, चीता के डर से कुत्ते, कुत्ते के डर से बिलार, बिलार के डर से साँप, साँप के डर से चूहे भागते हैं वैसे ही विष्णु भगवान् के डर से राक्षस भाग खड़े हुए। बहुत-से राक्षस मार डाले गये। हज़ारों राक्षसों का वध करके विष्णु भगवान् ने फिर अपना शंख बजाया। इस प्रकार विष्णु के बाणों से डरकर और शंख के शब्द से घबराकर राक्षसों की सेना लंका की ओर भागी। २०—२४। सेना के भाग जाने पर सुमाली नाम का राक्षस विष्णु के ऊपर बाण बरसाने लगा। उसने बाणों से विष्णु को ऐसा ढक दिया, जैसे कुहरा सूर्य को आच्छादित कर देता है। यह देखकर राक्षसों को फिर धैर्य हुआ। बल से गर्वित सुमाली राक्षसों को जीवित-सा करता हुआ बड़े क्रोध से गरजकर विष्णु भगवान् की ओर दौड़ा। जैसे सूँड़ उठाकर हाथी चिग्घारता है, वैसे ही वह राक्षस आभूषणों से अलंकृत हाथ उठाकर बिजली सहित मेघ के समान गरजा। २५—२८। विष्णु ने गरजते हुए सुमाली के सारथि का सिर काट डाला। तब उसके रथ के घोड़े इधर-उधर भागने लगे। घोड़ों के भागने से सुमाली भी घूमने लगा, जैसे इन्द्रियरूप घोड़ों के चलायमान होने से धारणाहीन पुरुष भ्रान्तचित्त हो जाता है। २९—३०। भगवान् विष्णु ने उसका रथ काट डाला और घोड़ों को भी मार डाला। तब वह धनुष-बाण लेकर पैदल ही उनकी ओर दौड़ा। माली भी धनुष-बाण लेकर विष्णु के सामने आया और उसके भी सुवर्ण-भूषित बाण विष्णु के रथ पर गिरने लगे। किन्तु भगवान् विष्णु हज़ारों बाणों के लगने पर भी, वैसे ही विचलित नहीं हुए जैसे जितेन्द्रिय पुरुष मानसिक व्यथाओं से विचलित नहीं होता। ३१—३३। भगवान् विष्णु ने धनुष की डोरी बजाकर माली के ऊपर बाण बरसाये। वज्र और विद्युत् के समान प्रकाशित बाण माली के शरीर में धँस गये और उसका रुधिर पीने लगे, जैसे साँप सुधा-

रस पीते हैं। ३४—३५। शंख-चक्र-गदाधर विष्णु ने बाणों से माली का मुकुट, ध्वज, धनुष और रथ तोड़ डाला और उसके घोड़ों को भी मार डाला। तब वह राक्षस गदा लेकर रथ से कूद पड़ा, जैसे पर्वत के शिखर से सिंह कूदता है। जैसे यमराज ने महादेव को मारा था, वैसे ही उस राक्षस ने विष्णु के वाहन गरुड़ पर गदा का प्रहार किया। गरुड़ के सिर पर वह गदा उसी प्रकार गिरी, जैसे इन्द्र का वज्र पर्वत के ऊपर गिरा था। गदा के प्रहार से व्याकुल होकर गरुड़ विष्णु को लिये हुए भागे। माली ने गरुड़ पर सवार विष्णु को भगा दिया, यह देखकर राक्षस गरजने लगे। ३६—४०। राक्षसों का गरजना सुनकर भगवान् विष्णु ने क्रुद्ध होकर गरुड़ की पूँछ की ओर मुँह कर लिया। गरुड़ भागते ही चले जाते थे और विष्णु ने माली को मार डालने की इच्छा से सूर्य के समान प्रकाशित चक्र उसके ऊपर चलाया। काल-चक्र के समान चक्र ने माली का सिर काट डाला। वह राक्षस रुधिर गिराता हुआ पृथिवी पर गिरा। जैसे राहु का सिर चक्र से कटकर अलग गिरा था, वैसे ही उसका सिर धड़ से अलग हो गया। ४१—४३। देवता प्रसन्न होकर विष्णु की प्रशंसा करने और गरजने लगे। माली को निहत देखकर सुमाली और माल्यवान् अपनी सेना के साथ शोक से सन्तप्त होकर लंका को भाग गये। ४४—४५। उसी बीच गरुड़ भी कुछ स्वस्थ हुए और युद्धभूमि को लौटकर बड़े क्रोध से अपने पंखों की वायु से राक्षसों को भगाने लगे। जो राक्षस युद्धभूमि में मिले, उनको भगवान् विष्णु ने चक्र, गदा, मुसल और खड्ग आदि से मार डाला। बचे हुए राक्षसों के सिर बाणों से काट डाला। बहुत-से राक्षस आकाश से समुद्र में गिर पड़े। राक्षसों की सेना छिन्न-भिन्न हो गई। राक्षसों के शस्त्र और छत्र बाणों से काट डाले। बचे हुए राक्षस युद्ध से भागे, डर के मारे उनके नेत्र चंचल हो गये। ४६—५०। जैसे सिंह से भगाये हुए हाथी चिग्घारते हैं, वैसे ही विष्णु के भय से भागते हुए

निशाचर चिल्लाते थे। राक्षसों ने अस्त्र-शस्त्र फेंक दिये, और वायु के वेग से उड़ाये हुए काले बादलों के समान भाग गये। ५१—५२। बहुत-से राक्षसों के सिर चक्र के प्रहार से अलग हो गये थे। बहुतों के शरीर गदा के प्रहार से चूर्ण हो गये थे। बहुत-से राक्षसों के शरीर हल के प्रहार से दो खंड हो गये थे और पर्वत के समान पृथिवी पर गिरे थे। काले बादलों के समान निशाचरों के हार और कुंडल चमकते थे। नील पर्वत के समान राक्षसों से पृथिवी आच्छादित हो गई। ५३—५४।

सर्ग ८

भगवान् विष्णु ने भागते हुए राक्षसों की सेना का इस प्रकार विनाश किया, यह देखकर माल्यवान् लंका तक पहुँचकर फिर लौटा जैसे समुद्र का जल किनारे तक आकर लौट जाता है। क्रोध के मारे आँखें लाल करके वह राक्षस बोला—हे नारायण, तुम क्षत्रिय-धर्म को नहीं जानते, इसी से युद्ध की इच्छा न करके भागते हुए हम लोगों को पापियों की तरह मारते हो। हे सुरेश्वर, भागते हुए को जो मारता है, वह पापी, पुण्यात्मा महात्माओं के प्राप्त करने योग्य स्वर्ग को नहीं जाता। हे शंख-चक्र-गदाधर, यदि तुम्हारी इच्छा युद्ध करने की है, तो हमसे युद्ध करो। हम तुम्हारे सामने खड़े हैं, अब अपना पराक्रम दिखाओ। १—५। माल्यवान् पर्वत के समान राक्षस माल्यवान् को खड़ा देखकर विष्णु ने कहा—तुम लोगों से भयभीत देवताओं को हमने अभयदान दिया है, और राक्षसों का विनाश करने की प्रतिज्ञा की है। उस प्रतिज्ञा का पालन करते हैं। देवताओं का कार्य हमको प्राणों से भी अधिक प्रिय है। इसलिए तुम लोग चाहे रसातल को भी भाग जाओ, किन्तु तुम लोगों का विनाश अवश्य करेंगे। ६—८। भगवान् विष्णु यह कह रहे थे, उसी समय राक्षस माल्यवान् ने उनकी छाती में एक

शक्ति मारी। घंटा के समान शब्द करती हुई वह शक्ति उनकी छाती में लगी और काले बादलों में बिजली के समान शोभित हुई।९-१०। भगवान् ने उस शक्ति को अपनी छाती से निकालकर राक्षस के ऊपर चलाई। काले पर्वत के ऊपर जिस प्रकार उल्का गिरे वैसे ही वह शक्ति राक्षस की छाती में लगी। पर्वत के ऊपर इन्द्र के वज्र के समान गिरी हुई उस शक्ति से माल्यवान् का कवच टूट गया और मूर्च्छित होकर वह गिर पड़ा, किन्तु शीघ्र ही स्वस्थ होकर विष्णु के सामने निश्चल पर्वत की तरह खड़ा हो गया। ११-१४। तब उसने लोहे का शूल, जिसमें बहुत-से काँटे लगे थे, विष्णु की छाती में मारा। फिर वह एक घूँसा भी उनकी छाती में मारकर तीन हाथ पीछे हट गया। आकाश में राक्षस की इस वीरता की प्रशंसा हुई। विष्णु के ऊपर प्रहार करके उसने गरुड़ को भी मारा, किन्तु गरुड़ ने बड़े क्रोध से अपने पंखों की वायु से उस राक्षस को बहुत दूर भगा दिया, जैसे आँधी सूखे पत्तों के ढेर को उड़ा देती है। १५-१८। माल्यवान् की यह दशा देखकर सुमाली अपनी सेना लेकर लंका को चला गया। माल्यवान् भी व्याकुल होकर अपनी सेना के साथ लंका को भाग गया।१९-२०। हे रामचन्द्र, इस युद्ध में राक्षसों के बहुत-से वीर मारे गये और जो बचे वे युद्ध छोड़कर भाग गये। विष्णु के बल से परास्त हो गये थे, उनके साथ फिर युद्ध करने की सामर्थ्य न थी, इसलिए राक्षस अपनी स्त्रियों को लेकर लंका से भी भागे और पाताल को चले गये। हे रघुसत्तम, महापराक्रमी सुमाली को राजा बनाकर पाताल में रहने लगे। जिन राक्षसों को तुमने मारा है, वे पुलस्त्य-वंश के थे। सालकटंकटा के वंश के नहीं थे। सुमाली, माल्यवान् और माली रावण से भी अधिक बलवान् थे। शंख-चक्र-गदाधर विष्णु के सिवा और किसी में यह सामर्थ्य नहीं है, जो राक्षसों का विनाश कर सके। तुम साक्षात् नारायण चतुर्भुज सनातन हो। पुलस्त्य-वंश के राक्षसों का विनाश

करने के लिए पृथिवी पर उत्पन्न हुए हो। २१—२६। धर्म की व्यवस्था नष्ट करनेवाले राक्षस जब पृथिवी पर उत्पन्न होते हैं तो उनको मारने के लिए तुम अवतार लेते हो। तुम शरणागत के रक्षक हो। हे राजन्, इन राक्षसों की उत्पत्ति मैंने आपसे कही। अब रावण और उसके पुत्रों की उत्पत्ति तथा उसका अतुल प्रभाव कहते हैं, सुनो। विष्णु के भय से सुमाली राक्षस अपने पुत्रों-पौत्रों के साथ रसातल को चला गया और लंका में कुबेर ने निवास किया। २७—२९।

सर्ग ९

बहुत दिनों के बाद सुमाली एक बार मृत्युलोक को आया। काले बादलों के समान उसका शरीर था, तपाये हुए सोने के कुंडल कानों में शोभित थे। उसकी कन्या जो विना कमल के लक्ष्मी के समान सुन्दरी थी, उसके साथ आई थी। पृथिवी पर घूमते हुए उस राक्षस ने एक दिन पुष्पक विमान पर जाते हुए कुबेर को देखा। १—३। वे अपने पिता का दर्शन करने के लिए जा रहे थे। अग्नि के समान तेजस्वी, देव के समान रूपवान् कुबेर को देखकर बुद्धिमान् सुमाली मन में सोचने लगा, किस उपाय से कुबेर की सी लक्ष्मी हमें भी मिले और ऐसी ही उन्नति हमारी भी हो। यह सोचता हुआ सुमाली कैकसी नामक अपनी कन्या से बोला—हे पुत्री, अब तुम्हारी युवावस्था हुई, तुम्हारा विवाह करने का समय आया है। तुमसे कोई पुरुष इस डर से विवाह की प्रार्थना नहीं करता कि कहीं तुम उसकी प्रार्थना अस्वीकार न कर दो। बेटी, तुम साक्षात् लक्ष्मी के समान हो, सब गुण तुममें हैं, इसलिए हमको बड़ी चिन्ता है कि अपनी कन्या हम किसको दें। सम्मान चाहनेवाले लोगों को कन्या का पिता होना बड़े दुःख की बात है। क्योंकि कन्या के पिता को यह चिन्ता बनी रहती है कि हमारी कन्या को न जाने कैसा वर मिले। ४—१०। माता का कुल, पिता का कुल और जिस

कुल में कन्या ब्याही जाती है, इन तीनों कुलों को कन्या के विषय में सदा संशय बनी रहती है। इसलिए हे पुत्री, अब तुम मुनियों में श्रेष्ठ, प्रजापति के कुल में उत्पन्न, पुलस्त्य के पुत्र विश्रवा के पास स्वयं जाकर उनको अपना पति बनाओ। ११–१२। हे पुत्री, विश्रवा मुनि को यदि तुम अपना पति बनाओगी तो सूर्यतुल्य तेजस्वी, कुबेर के समान तुम्हारे भी प्रतापी पुत्र उत्पन्न होंगे। १३। पिता के यह वचन सुनकर वह कन्या विश्रवा मुनि के पास गई। हे रामचन्द्र, अग्नि के समान तेजस्वी विश्रवा मुनि उस समय अग्निहोत्र कर रहे थे।१४–१५। सन्ध्या का समय था, कन्या ने उस दारुण समय का भी विचार न किया। पिता की आज्ञा से मुनि के समीप जाकर उनके चरणों की ओर देखती हुई, पैर के अँगूठे से पृथिवी को खोदती हुई खड़ी हो गई। पूर्ण चन्द्रमा के समान सुन्दर मुखवाली उस सुन्दरी को देख कर महातेजस्वी विश्रवा मुनि बोले—हे कल्याणी, तुम कहाँ से आई हो, किसकी कन्या हो, यहाँ तुम्हारा क्या काम है ? बताओ, क्यों खड़ी हो ? १६–१८। कन्या हाथ जोड़कर बोली—महाराज, हमारे मन की बात अपने तपोबल से आप जान लीजिए। मैं केवल इतना ही आपसे निवेदन कर सकती हूँ कि मेरा नाम कैकसी है। पिता की आज्ञा से यहाँ आई हूँ। और सब वृत्तान्त आप अपने तपोबल से जान लीजिए। १६–२०। ध्यान करके विश्रवा ने सब हाल मालूम किया, फिर उससे बोले—हे भद्रे, जिस कारण तुम यहाँ आई हो, वह तुम्हारे मन की बात हमने जान ली। तुम पुत्र उत्पन्न कराना चाहती हो, किन्तु यह सन्ध्या का समय बड़ा दारुण समय है, इस समय में आने के कारण तुम्हारे जो पुत्र उत्पन्न होंगे, उनका स्वभाव और रूप बड़ा ही दारुण होगा। क्रूर कर्म करनेवाले राक्षस पुत्र उत्पन्न होंगे। मुनि के यह वचन सुनकर वह कन्या प्रणाम करके बोली—भगवन्, ब्रह्मवादी आपसे ऐसे दुराचारी पुत्र उत्पन्न कराना मैं नहीं चाहती

हूँ। हे भगवन्, आप मुझ पर प्रसन्न हों। २१—२५। कन्या के यह कहने पर मुनियों में श्रेष्ठ विश्रवा ने उत्तर दिया—हे सुन्दरी, तुम्हारा पिछला पुत्र हमारे वंश के अनुरूप धर्मात्मा होगा, इसमें सन्देह नहीं है। हे रामचन्द्र, मुनि के यह कहने पर कन्या उनके आश्रम पर रहने लगी। वह गर्भवती हुई और समय आने पर अति भयानक रूप दारुण राक्षस उसके गर्भ से उत्पन्न हुआ। उसके बड़े-बड़े दाँत, काजल के ढेर के समान काला, लाल-लाल होठ, दस सिर, बीस भुजाएँ और चमकते हुए बाल थे। उसके जन्म के समय बड़े उत्पात हुए। सियारनें बोलने लगीं, गिद्ध आदि मांसभक्षी पक्षी मंडल बाँधकर दाहिनी ओर से उड़े। आकाश से रुधिर की वर्षा हुई, बादल तड़पे, सूर्य का प्रकाश मलिन हो गया और पृथिवी पर महाउल्कापात हुआ। भूकम्प आया, आँधी चली, और समुद्र में तूफ़ान आया। २६—३२। उस बालक के पिता, ब्रह्मा के समान तेजस्वी विश्रवा ने उसके दस सिर देखकर उसका नाम दशग्रीव रक्खा। उसके बाद महाबली कुम्भकर्ण उसी स्त्री से उत्पन्न हुआ। वह इतना लम्बा-चौड़ा था कि पृथिवी पर उसके समान भारी डील डौल का कोई दूसरा प्राणी न था। उसके बाद शूर्पणखा पैदा हुई, उसका भी मुँह बड़ा विकराल था। शूर्पणखा के बाद महात्मा विभीषण का जन्म हुआ। ये कैकसी के सबसे पिछले पुत्र हैं। ३३—३५। विभीषण के उत्पन्न होने पर देवताओं ने आकाश से फूलों की वर्षा की, नगाड़े बजाये और बड़ी खुशियाँ मनाईं। सब लोकों को पीड़ित करनेवाले रावण और कुम्भकर्ण उस महावन में बहुत शीघ्र ही बड़े हुए। कुम्भकर्ण तपस्वी मुनियों को नित्य भक्षण करने लगा। धर्मात्मा विभीषण वेद-शास्त्र पढ़ने और धर्म-कर्म करने लगे। ३६—३९। कुछ दिनों के बाद कुबेर पुष्पक विमान पर चढ़कर अपने पिता का दर्शन करने के लिए आये। तेजस्वी कुबेर को देखकर कैकसी अपने पुत्र दशग्रीव से बोली—हे पुत्र, अपने भाई कुबेर को

देखो, इनका कैसा तेज है। तुम भी इनके भाई हो, किन्तु तुम ऐसे तेज-हीन हो। हे दशग्रीव, तुम भी ऐसा यत्न करो कि जिससे कुबेर के समान प्रतापी हो जाओ। ४०—४३। माता के यह वचन सुनकर प्रतापी दशग्रीव को बड़ा क्रोध आया। उसने प्रतिज्ञा की—मैं सत्य कहता हूँ, मैं अपने भाई के समान अथवा इनसे भी बढ़कर हूँगा, तुम चिन्ता न करो। ४४—४५। यह कहकर उसने अपने भाइयों के साथ कठिन तपस्या करने का निश्चय किया। तपस्या से हमारी इच्छाएँ पूरी होंगी, यह विचारकर वह गोकर्ण नामक स्थान पर गया। ४६—४७। उस राक्षस ने अपने भाइयों के साथ बड़ी तपस्या की और उसकी तपस्या से सन्तुष्ट होकर ब्रह्मा ने उसे विजय देनेवाले बहुत-से वरदान दिये। ४८।

सर्ग १०

यह सुनकर रामचन्द्र ने अगस्त्य से पूछा—भगवन्, महाबली इन राक्षसों ने कैसी तपस्या की, यह मुझे बताइए। अगस्त्यमुनि प्रसन्न होकर बोले—उन तीनों भाइयों ने गोकर्ण नामक स्थान पर जाकर विधिपूर्वक तपस्या की। उनमें कुम्भकर्ण धर्ममार्ग में स्थित होकर बड़े संयम से ग्रीष्मऋतु में पंचाग्नि तापता था, वर्षाऋतु में जितना पानी बरसता था उसे अपने सिर पर लेता था और जाड़े के दिनों में रात-दिन पानी में बैठा रहता था। १—४। इस प्रकार उग्र तपस्या करते-करते दस हजार वर्ष बीत गये और वह लगातार ऐसी ही तपस्या करता रहा। धर्मात्मा विभीषण पाँच हज़ार वर्ष तक एक पाँव के बल खड़े रहे। जब उनका यह नियम समाप्त हुआ तो अप्सराएँ नाचने लगीं, आकाश से फूलों की वर्षा हुई और देवता उनकी प्रशंसा करने लगे। ५—७। उसके बाद पाँच हज़ार वर्ष तक ऊपर को दोनों हाथ उठाये सूर्य की ओर देखते हुए वेद का पाठ करते रहे। नियमों का

पालन करते हुए विभीषण ने ये दस हज़ार वर्ष ऐसे बिताये जैसे स्वर्गवासी पुरुष नन्दनवन में बिताते हैं। ८—९। रावण ने भी दस हज़ार वर्ष तक निराहार तप किया। जब एक हज़ार वर्ष बीत जाते थे तब वह अपना एक सिर काटकर अग्नि में होम कर देता था। इस तरह नव हज़ार वर्षों में जब वह अपने नव सिर अग्नि में हवन कर चुका और दसवाँ हज़ार बीतने पर दसवाँ सिर भी काटकर अग्नि में आहुति देने को उद्यत हुआ तो ब्रह्मा उसके पास आये। १०—१२। सब देवता भी उनके साथ थे। पितामह ब्रह्मा ने कहा—हे दशग्रीव, तुम्हारी तपस्या से हम बड़े प्रसन्न हुए। हे धर्मज्ञ, जो वरदान चाहो वह माँग लो। तुम्हारा कौन काम हम करें, जिसमें तुम्हारा परिश्रम वृथा न हो। रावण प्रसन्न होकर प्रणाम करके बड़े हर्ष से बोला—भगवन्, प्राणियों को मृत्यु से बढ़कर और कोई भय नहीं है। क्योंकि मृत्यु के समान और कोई शत्रु नहीं है, इसलिए हम अमरत्व माँगते हैं। १३—१६। यह सुनकर ब्रह्मा ने उत्तर दिया, यह नहीं हो सकता, तुम और कोई वरदान माँगो। १७। हे रामचन्द्र, ब्रह्मा के ऐसा कहने पर रावण हाथ जोड़कर फिर बोला—हे प्रजापति! गरुड़, नाग, यक्ष, दैत्य, दानव, राक्षस और देवता मुझे न मार सकें। अन्य प्राणियों से हमको कोई चिन्ता नहीं है। मनुष्य आदि प्राणियों को तो हम तृण के समान समझते हैं। १८—२०। दशग्रीव के यह कहने पर धर्मात्मा पितामह ने कहा—अच्छा, ऐसा ही होगा, और हे राक्षस! इसके सिवा हम और भी वरदान तुमको देते हैं, सुनो। तुमने अपने सिर काटकर अग्नि में होम कर दिये हैं, वे फिर पहले की तरह हो जायँगे। हे सौम्य, एक और वरदान तुमको देते हैं, तुम अपनी इच्छा के अनुसार रूप धारण कर सकोगे। पितामह ब्रह्मा के यह कहते ही रावण के सिर, जिनको काटकर उसने अग्नि में आहुति दे दी थी, फिर उसी तरह हो गये, मानों काटे ही नहीं गये थे। २१—२६। रावण को यह वरदान

देकर पितामह ब्रह्मा विभीषण से बोले—हे वत्स, धर्म का पालन करते हुए तुमने कठिन तपस्या की है, इसलिए हम तुमसे बहुत प्रसन्न हैं, वरदान माँगो। जैसे चन्द्रमा अपनी किरणों से शोभित हैं, वैसे ही विभीषण सब गुणों से शोभित थे। उन्होंने हाथ जोड़कर कहा—भगवन्, सब लोकों के गुरु आप स्वयं हमारे पास आये, हम आपके दर्शन से ही कृतकृत्य हो गये। यदि आप प्रसन्न हैं और वरदान देना चाहते हैं, तो सुनिए। बड़ी विपत्ति के समय भी हमारी बुद्धि धर्म में लगी रहे, विना सीखा हुआ भी ब्रह्मास्त्र हमें मालूम हो जाय। ब्रह्मचर्य आदि जिस आश्रम में हम रहें, हमारी बुद्धि सदा उस धर्म का पालन करने में लगी रहे। यही वरदान हम चाहते हैं। क्योंकि जिनकी बुद्धि धर्म में स्थित रहती है, उनके लिए कुछ भी दुर्लभ नहीं है। प्रजापति ब्रह्मा प्रसन्न होकर फिर बोले—हे विभीषण, जैसे धर्मिष्ठ तुम हो, सदा वैसी ही बुद्धि तुम्हारी बनी रहेगी। हे शत्रुनाशन, यद्यपि तुम्हारा जन्म राक्षसकुल में हुआ है, किन्तु अधर्म में तुम्हारी बुद्धि कभी न लगेगी। और तुमको अमर भी करते हैं, तुम्हारी कभी भी मृत्यु न होगी। २७—३५। विभीषण से यह कहकर ब्रह्मा जब कुम्भकर्ण के पास गये तो देवताओं ने हाथ जोड़कर उनसे कहा—यह मूर्ख लोकों को जिस प्रकार पीड़ित कर रहा है, इस बात को जब तक आप मालूम न कर लें, तब तक इसे वरदान न दीजिए। इस दुष्ट ने नन्दनवन में सात अप्सराओं को, इन्द्र के दस सेवकों को और अनेक ऋषियों तथा मनुष्यों को खा लिया है। ये बातें तो उस समय की हैं जब यह बालक था और इसे कोई वरदान नहीं मिला था, वरदान पाने पर तो यह तीनों लोकों को खा जायगा। इसलिए हे भगवन्, वरदान के बदले इसे मोह दीजिए। ऐसा करने से सब लोकों का कल्याण होगा और इसका भी सम्मान हो जायगा। ३६—३६। देवताओं के यह कहने पर ब्रह्मा ने सरस्वती का स्मरण किया। स्मरण

कहते ही सरस्वती उनके पास आईं और हाथ जोड़कर बोलीं—हे देव, किसलिए आपने हमारा स्मरण किया है। बताइए, क्या आज्ञा है। ब्रह्मा ने कहा—तुम देवताओं का प्रिय करने के लिए कुम्भकर्ण की वाणी को मोहित करो। ब्रह्मा की आज्ञा से सरस्वती उसकी वाणी में प्रविष्ट हो गईं। तब ब्रह्मा ने कुम्भकर्ण से कहा—हे महाबाहु, जो इच्छा हो वह वरदान माँग लो। ४०–४३। यह सुनकर कुम्भकर्ण ने कहा—हे देवदेव, हम बहुत वर्षों तक लगातार सोते रहें, बस यही एक वरदान हम चाहते हैं। 'एवमस्तु' कहकर ब्रह्मा देवताओं के साथ चले गये। देवी सरस्वती जो उसकी वाणी में प्रविष्ट हो गई थीं, वे भी चली गईं। जब देवताओं के साथ ब्रह्मा आकाशमार्ग से चले गये और सरस्वती भी उसकी वाणी से हट गईं, तब उसे चेत हुआ। वह दुरात्मा सोचने लगा कि हमारे मुँह से ऐसे वचन क्यों निकल गये! जान पड़ता है कि ब्रह्मा के साथ देवता भी आये थे। उन्होंने हमको मोहित कर दिया, इसी कारण हमारे मुँह से ऐसे वचन निकले। ४४–४७। इस तरह वरदान पाकर महातेजस्वी वे तीनों भाई बहेड़े के वन में जाकर सुख से रहने लगे। ४८।

सर्ग ११

सुमाली को जब यह मालूम हुआ कि रावण आदि तीनों भाइयों को ब्रह्मा से वरदान मिले हैं तब वह अपने मन्त्रियों को साथ लेकर रसातल से इस लोक को आया। मारीच, प्रहस्त, विरूपाक्ष और महोदर ये चार उसके मन्त्री थे। सुमाली ने रावण के पास जाकर उसे छाती से लगाया और बोला—हे वत्स, बड़े भाग्य से तुम्हारा यह मनोरथ सिद्ध हुआ। त्रिभुवन में श्रेष्ठ ब्रह्मा ने तुमको वरदान दिया। जिसके भय से हम लोग लंका छोड़कर रसातल को भाग गये थे उन विष्णु से अब हम लोगों को किसी तरह का भय नहीं रह गया। विष्णु के

ही भय से हम लोग अपना घर छोड़कर रसातल को भाग गये हैं।१–६। यह लंका हम लोगों की नगरी है, जिसमें तुम्हारे भाई कुबेर रहते हैं। यहाँ पहले राक्षसों का निवास था। यदि अब समझाने-बुझाने से अथवा कुछ देने से या वीरता से ही लंका फिर हम लोगों को मिले तो सबका प्रयोजन सिद्ध हो। तुम लंका के राजा होगे, राक्षस अपने घरों में आकर रहेंगे और तुम इस राक्षसवंश का उद्धार करोगे। हे महाबल, हम लोगों के राजा आपही होंगे, इसमें कोई सन्देह नहीं है। ७–६। यह सुनकर रावण अपने नाना सुमाली से बोला—कुबेर हमारे बड़े भाई हैं, तुम ऐसा मत कहो। १०। रावण के ऐसा कहने पर सुमाली उसके मन की बात समझ गया, फिर उसने और कुछ न कहा। कुछ दिनों के बाद मौका पाकर प्रहस्त ने रावण से कहा—हे महाबाहु, तुमको ऐसा न कहना चाहिए। वीरों में भाईपन नहीं होता। इस विषय में तुम हमारी बात सुनो——अदिति और दिति दोनों सगी बहनें हैं। दोनों अत्यन्त सुन्दरी हैं और दोनों ही प्रजापति कश्यप की भार्या हैं। अदिति के पुत्र देवता हैं जो त्रिभुवन के ईश्वर हैं, और दिति के पुत्र दैत्य हैं। कश्यप से ही दोनों की उत्पत्ति हुई है। हे धर्मज्ञ, पूर्व समय में, पर्वत समुद्र वन सहित यह पृथिवी दैत्यों के अधिकार में थी। विष्णु ने दैत्यों को परास्त करके तीनों लोक देवताओं को दे दिये। देवताओं और दैत्यों में जैसा पहले हुआ था, वैसा ही आप भी कीजिए। ऐसा तो होता ही आया है, कोई नई बात आप नहीं करेंगे। ११–१८। प्रहस्त के यह समझाने पर रावण थोड़ी देर सोच कर बड़े हर्ष से बोला—बहुत अच्छा, ऐसा ही करेंगे। उसी दिन रावण राक्षसों को साथ लेकर वन को चला गया। त्रिकूट पर्वत पर जाकर उसने प्रहस्त को कुबेर के पास भेजा। प्रहस्त से उसने यह कहा कि तुम समझाकर कुबेर से कहो कि हे राजन्, यह लंकापुरी महात्मा राक्षसों की है। आपने जो इस पर अधिकार कर लिया है, यह बात

उचित नहीं है। इसलिए अब यदि आप हम लोगों को हमारी नगरी दे दें तो मानों हम लोगों के साथ आप बड़ा प्रेम करें, और धर्म का भी पालन करें। १६—२४। प्रहस्त रावण की आज्ञा से लंका में कुबेर के पास गया और उनसे बोला—हे महाबाहु, आपके भाई रावण ने मुझे भेजा है। जो सन्देश उन्होंने कहा है, वह मैं आपसे कहता हूँ, सुनिए। इस लंका नगरी में सुमाली आदि राक्षस पहले रहते थे। यह उन्हीं लोगों की नगरी है। इसलिए रावण ने आपसे कहा है कि अपनी नगरी वे आपसे फिर माँगते हैं। हे तात, इसे उन्हें दे दीजिए। आपसे समझाकर कहते हैं। २५—२८। प्रहस्त के यह वचन सुनकर कुबेर ने उत्तर दिया—राक्षस तो बहुत दिन पहले इसे छोड़कर चले गये थे, यह सूनी पड़ी हुई थी, इसलिए पिता ने हमको दे दिया था। हमने राक्षसों का सम्मान करके बहुत कुछ देकर यहाँ बसाया है। रावण से कहो कि यह राज्य और नगरी तुम्हारी भी है। इस शत्रुरहित राज्य का तुम भी भोग करो। और भी जो कुछ द्रव्य है, उसका भी तुम हमारे साथ भोग करो, क्योंकि तुम हमारे भाई हो, हमारा-तुम्हारा कुछ बाँटा नहीं है। प्रहस्त से यह कहकर कुबेर अपने पिता के पास गये। पिता को प्रणाम करके रावण का भेजा हुआ सन्देश भी उनको सुनाया। उन्होंने कहा —हे तात, रावण ने हमारे पास दूत भेजा था कि लंका के राजा राक्षस थे, इसलिए लंका हम को दे दो। इस विषय में आपकी क्या आज्ञा है, हमें क्या करना चाहिए? २६—३४। कुबेर ने हाथ जोड़कर पिता से इस प्रकार जब कहा तो विश्रवा मुनि बोले—हे पुत्र, रावण ने हमसे भी ऐसा ही कहा था। हमने उस दुष्ट को बहुत डाटा था और बहुत बुरा-भला भी कहा था, किन्तु हे पुत्र, ब्रह्मा से वरदान पाने के कारण वह बड़ा उन्मत्त हो गया है। किसका कैसा सम्मान करना चाहिए, यह कुछ भी नहीं जानता। हमारे शाप से उसका स्वभाव बड़ा कठोर होगया है। इस लिए अब तुम लंका को

छोड़ दो और अपने अनुचरों को लेकर कैलास पर्वत पर चले जाओ। वहाँ मन्दाकिनी नदी है, उसमें सूर्य के समान प्रकाशित कमल शोभित हैं और नदी का जल बहुत उत्तम है। कुमुद और उत्पल आदि अनेक प्रकार के सुगन्धित पुष्प उस नदी में हैं। देवता, गन्धर्व, अप्सराएँ, नाग और किन्नर आदि सदा वहाँ विहार करते रहते हैं। तुम वहीं जाकर निवास करो। इस दुष्ट से वैर न करो, क्योंकि तुम जानते हो कि ब्रह्मा ने इसे वरदान दिया है। ३५—४२। पिता की आज्ञा मानकर कुबेर लंका को छोड़कर पुत्र, स्त्री, धन, वाहन और अपने मन्त्रियों के साथ कैलास पर चले गये। प्रहस्त बड़े हर्ष से रावण के पास गया। वह अपने भाइयों और मन्त्रियों के साथ बैठा था। प्रहस्त ने कहा कि कुबेर अपना परिवार लेकर कैलास पर्वत पर चले गये, लंका सूनी पड़ी है। आप हम लोगों के साथ चलकर वहाँ निवास कीजिए। ४३—४५। रावण अपने भाइयों और मन्त्रियों के साथ लंका में रहने लगा। इस प्रकार कुबेर लंका को छोड़कर चले गये और रावण उसी प्रकार लंका में रहने लगा जैसे स्वर्ग में इन्द्र रहते हैं। ४६—४७। राक्षसों ने उसका राज्याभिषेक किया और काले बादलों के समान राक्षसों के साथ वह वहाँ राज्य करने लगा। कुबेर भी अपने पिता की आज्ञा से चन्द्रमा के समान निर्मल कैलास पर्वत पर रहने लगे। वहाँ बहुत सुन्दर और अलंकृत भवन तैयार हो गये। जैसे इन्द्र अमरावती में रहते हैं, वैसे ही वे भी कैलास पर निवास करने लगे। ४८—४९।

सर्ग १२

लंका में जब रावण का राज्याभिषेक हुआ, वह अपने भाइयों के साथ राज्य करने लगा, तब उसने अपनी बहिन शूर्पणखा का विवाह करने का निश्चय किया। कालका जाति के विद्युज्जिह्व दानव के साथ शूर्पणखा का विवाह हुआ। एक दिन रावण शिकार के लिए गया था, वहाँ

उसे मय नाम का दानव मिला। वह दानव एक कन्या अपने साथ लिये हुए था। रावण ने उससे पूछा—तुम कौन हो, इस निर्जन वन में क्यों घूमते हो और इस मृगशावकनयनी कन्या को अपने साथ क्यों लाये हो? हे रामचन्द्र, रावण के यह पूछने पर मय दानव ने उत्तर दिया—मैं अपना सब हाल बताता हूँ, सुनो। हेमा नाम की एक अप्सरा थी, शायद उसका नाम तुमने भी सुना हो। देवताओं ने उस अप्सरा को हमें दिया था। वह बड़ी सुन्दरी थी। उस अप्सरा को पाकर हम बड़े प्रसन्न हुए। दस हज़ार वर्ष तक उसके साथ हम बड़े सुख से रहे। देवताओं के कार्य के लिए हेमा की मृत्यु हो गई। उसको मरे तेरह वर्ष हो गये। हमने माया से एक सुवर्णमय नगर बनाया है, वह नगर वैडूर्य आदि मणियों से चित्रित है। हेमा के वियोग के दुःख से दुःखित हम उसी नगर में रहते हैं। हे राजन्, यह हमारी कन्या है, हेमा के गर्भ से उत्पन्न हुई है। १—१०। हम इसको साथ लिये हुए इसके लिए पति ढूँढ़ने निकले हैं। सम्मान चाहनेवाले पुरुषों के लिए क़न्या का पिता होना बड़े दुःख की बात होती है। क्योंकि कन्या दोनों कुलों को हमेशा संशय में रखती है। ११—१८। हेमा से दो पुत्र भी उत्पन्न हुए हैं, उनमें बड़े का नाम मायावी और छोटे का नाम दुन्दुभि है। तुम्हारे प्रश्न का उत्तर तो हमने दे दिया, किन्तु तुम कौन हो, यह हम कैसे जानें। यह सुनकर रावण नम्रतापूर्वक बोला—हम विश्रवा मुनि के पुत्र हैं, हमारा नाम दशग्रीव है। १३—१५। हे रामचन्द्र, रावण के यह कहने पर मय दानव ने सोचा कि यह विश्रवा मुनि का पुत्र है, इसी को अपनी कन्या दे दें। यह विचारकर उसने अपनी कन्या का हाथ रावण के हाथ में थमाया और हँसकर बोला—राजन्, यह हमारी कन्या मन्दोदरी हेमा अप्सरा से उत्पन्न हुई है। इसे तुम अपनी पत्नी बनाने के लिए ग्रहण करो। रावण ने कहा—बहुत अच्छा। १६-१६। अग्नि प्रज्वलित करके उसने मन्दोदरी का पाणिग्रहण किया।

हे रामचन्द्र, मय दानव यद्यपि यह जानता था कि रावण को विश्रवा मुनि ने शाप दिया है, उनके शाप से इसका स्वभाव बड़ा उग्र है, किन्तु पुलस्त्य के कुल में उत्पन्न जानकर उसने अपनी कन्या उसे दे दी। एक बड़ी अद्भुत शक्ति भी उसे दी, जो कभी निष्फल नहीं होती थी। बड़ी तपस्या से वह शक्ति उसे मिली थी। उसी शक्ति से रावण ने लक्ष्मण को घायल किया था। इस तरह अपना विवाह करके रावण लंका को गया, फिर उसने अपने दोनों भाइयों का भी विवाह कराया। वैरोचन की नातिन जिसका नाम वज्रज्वाला था, उसके साथ कुम्भकर्ण का ब्याह हुआ। गन्धर्वराज शैलूष की कन्या सरमा के साथ विभीषण का ब्याह हुआ। यह सरमा मानसरोवर के समीप उत्पन्न हुई थी। २०—२५। वर्षाकाल में जब सरोवर बढ़ने लगा तो उसकी माता ने कन्या के स्नेह के मारे रोकर कहा था कि सर न बढ़े। इसी से उस कन्या का नाम सरमा हुआ। इस तरह उन तीनों राक्षसों का विवाह हुआ और जैसे गन्धर्व नन्दनवन में क्रीड़ा करते हैं, वैसे ही वे अपनी स्त्रियों के साथ विहार करने लगे। २६—२७। कुछ दिनों के बाद मन्दोदरी ने एक पुत्र उत्पन्न किया। हे रामचन्द्र, यह वही पुत्र है जिसे आप लोग इन्द्रजित् कहते हैं। २८। पैदा होते ही यह बड़े ज़ोर से रोने लगा। इसके रोने का शब्द मेघ के गरजने के समान था, इसी से रावण ने स्वयं इसका नाम मेघनाद रक्खा। २९—३०। हे रामचन्द्र, माता-पिता को हर्षित करता हुआ मेघनाद रावण के अंतःपुर में बड़ा हुआ। सुन्दरी स्त्रियों ने उसका पालन-पोषण किया। ३१।

सर्ग १३

कुछ दिनों के बाद ब्रह्मा के वचन के प्रभाव से कुम्भकर्ण को बड़ी भारी निद्रा आई। कुम्भकर्ण ने रावण से कहा—हमको नींद आ रही है, हमारे सोने के लिए कहीं घर बनवा दीजिए। रावण ने

विश्वकर्मा के समान बुद्धिमान् शिल्पियों को आज्ञा दी। चार कोस का लम्बा, आठ कोस का चौड़ा घर तैयार किया गया। स्फटिक और सुवर्ण के खम्भे लगाये गये, वैडूर्यमणि की सीढ़ियाँ बनाई गईं, बड़े सुन्दर फाटक लगाये गये, और स्फटिक मणि की वेदी बनाई गई। १-५। सुमेरु पर्वत की गुहा के समान मनोहर, सब ऋतुओं में सुखदायक घर तैयार किया गया। जब घर बनकर तैयार हुआ तो महाबलवान् कुम्भकर्ण बहुत वर्षों के लिए उस घर में सो गया।६-७। कुम्भकर्ण के सो जाने पर निरंकुश रावण देवर्षि, गन्धर्व और यक्षों को पीड़ित करने लगा। नन्दन आदि वनों को वह इस तरह उजाड़ने लगा जैसे नदियों को हाथी मथ डालता है, वृक्षों को वायु कँपा देता है और पर्वतों को छिन्न-भिन्न कर देता है। ८-१०। इस प्रकार जब वह सबका विध्वंस करने लगा तो धर्मज्ञ कुबेर ने यह हाल सुनकर रावण के हित के लिए और भाईपन दिखाने के लिए लंका के पास एक दूत भेजा। वह दूत पहले विभीषण के पास गया। उन्होंने उसका बड़ा आदर किया और आने का कारण पूछा। कुबेर की कुशल पूछी, उनके कुटुम्ब का सब हाल पूछा और फिर सभा में ले जाकर रावण से मिलाया। दूत 'राजा की जय हो' कहकर चुप बैठ गया।११-१५। थोड़ी देर के बाद उत्तम आसन पर बैठे हुए रावण से बोला——राजन्, आपके भाई कुबेर ने माता-पिता के कुल और चरित्र के अनुरूप सन्देश आपसे कहा है, सुनिए। उन्होंने यह कहा है कि अब तुम पाप बहुत कर चुके, पाप की हद हो गई, अब सदाचार करना चाहिए। यदि हो सके तो धर्म का पालन करो। तुमने नन्दन वन को उजाड़ दिया, यह हमने स्वयं देखा है। ऋषियों को तुमने मार डाला है, सो भी हम सुन चुके हैं। सुना जाता है कि देवता तुम्हारे वध का उपाय कर रहे हैं। हे राक्षसराज, यद्यपि तुमने बार-बार हमारा अनादर किया है, किन्तु अपराध करने पर भी बालक की रक्षा की जाती है, इसलिए

हम तुमको समझाते हैं । १६—२० । हम तपस्या करने के लिए हिमवान् पर्वत पर गये थे, वहाँ इन्द्रियों को वश में करके रौद्र व्रत का अनुष्ठान कर रहे थे । एक दिन महादेव के साथ पार्वती को हमने देखा । हम मन में सोचने लगे कि यह कौन स्त्री है । पार्वती उस समय अनुपम रूप धारण किये थीं । यद्यपि हमारे मन का भाव कुछ दूषित नहीं था, किन्तु उनकी ओर देखते ही उनको कुछ क्रोध आ गया । उनके दिव्य प्रभाव से हमारी बाईं आँख भस्म हो गई । धूलि पड़ने से जिस प्रकार ज्योति पीली पड़ जाती है, वैसे ही हमारी आँख पीली पड़ गई । तब हम उस पर्वत के दूसरे तट पर जाकर तप करने लगे । आठ सौ वर्ष मौन रहकर हमने तप किया । व्रत समाप्त होने पर महादेव प्रसन्न होकर हमसे बोले—हे धर्मज्ञ, तुम्हारी इस तपस्या से हम प्रसन्न हुए । हे कुबेर, यह व्रत पहले हमने किया था और अब इसे तुमने किया है, तीसरा कोई पुरुष इस व्रत को नहीं कर सका । इस दुष्कर व्रत को पूर्व समय में हमीं ने सिद्ध किया था । हे सौम्य, आज से तुम हमारे मित्र हुए । तपस्या से तुमने हमें जीत लिया । २१—२६ । पार्वती ने अपने प्रभाव से जो तुम्हारा नेत्र जला दिया है, उनका रूप देखने से वह पिंगल हो गया है, इसलिए तुम्हारा एकाक्षपिंगली नाम बहुत दिनों तक रहेगा । इस प्रकार महादेव की मैत्री प्राप्त करके, उनकी आज्ञा लेकर जब हम अपनी नगरी को आये, तो हमने सुना कि तुमने ऐसे पाप किये हैं । कुल को दूषित करनेवाले पाप करना अब तुम छोड़ दो, क्योंकि देवता और ऋषि तुम्हारे वध का उपाय सोच रहे हैं । ३०—३३ । कुबेर का यह सन्देश सुनकर रावण की आँखें क्रोध से लाल हो गईं । वह हाथ मींजकर और दाँत कटकटाकर बोला—हे दूत, तुमने जो कहा वह सब हमने समझ लिया, किन्तु हमारे भाई कुबेर, जिन्होंने यह सन्देश भेजा है और तुम, अपने को जीवित न समझो; क्योंकि कुबेर यह हमारे हित

ही बात नहीं कहता, बल्कि वह मूर्ख अपनी और महादेव की मित्रता हमको सुनाने के लिए तुमको यहाँ भेजा है। इसलिए तुमने जो कहा है, वह हम सह नहीं सकते। ३४–३६। हे दूत, यह समझ कर अभी तक जो हम नहीं बोलते थे कि बड़ा भाई पिता के समान होता है, उसका वध न करना चाहिए। किन्तु कुबेर के यह वचन सुनकर अब हमारा यह विचार होता है कि अपने बाहुबल से तीनों लोकों को हम जीत लें। अकेले कुबेर के कारण इसी मुहूर्त में चारों लोकपालों का वध कर दें। ३७–३९। यह कहकर रावण ने दूत को खड्ग से मार डाला और दुष्ट राक्षसों को भोजन के लिए दे दिया। ४०। उसके बाद स्वस्त्ययन आदि करके रथ पर सवार होकर तीनों लोकों को जीतने की इच्छा से पहले कुबेर की नगरी को गया। ४१।

सर्ग १४

महाबलवान् रावण महोदर, प्रहस्त, मारीच, शुक, सारण और वीर धूम्राक्ष, इन छः मन्त्रियों को साथ लेकर बड़े क्रोध से सब लोकों को भस्म-सा करता हुआ कुबेर की नगरी को चला। नदी, पर्वत, वन, उपवन और नगर आदि लाँघता हुआ कैलास पर्वत पर पहुँचा। १–३। युद्ध करने के लिए मन्त्रियों के साथ दुरात्मा रावण को कैलास पर्वत पर आया हुआ सुनकर यक्षगण उसके सम्मुख युद्ध करने का साहस न कर सके। वे अपने स्वामी कुबेर के पास जाकर बोले—आपका भाई रावण युद्ध करने के लिए आया है। जब कुबेर ने उनको युद्ध की आज्ञा दी तो वे रावण से युद्ध करने के लिए आये। उमड़ते हुए समुद्र के समान रावण की सेना से कैलास पर्वत मानों काँप-सा रहा था। ४–७। यक्षों और राक्षसों का घोर युद्ध हुआ और रावण के मन्त्री बहुत पीड़ित हुए। अपनी सेना को व्याकुल देखकर रावण बड़े हर्ष से

गरजता हुआ कुबेर की सेना के सामने दौड़ा। रावण के एक-एक मन्त्री के साथ हज़ार-हज़ार यक्ष युद्ध करने लगे। यद्यपि यक्षों ने गदा, मुसल, खड्ग, शक्ति और तोमर आदि से रावण का सामना किया, किन्तु रावण उनकी सेना में घुसता ही गया। यक्षों ने शस्त्रों की ऐसी वर्षा की कि रावण को साँस लेना कठिन हो गया। यक्षों के शस्त्रों से घायल होने पर भी रावण व्यथित नहीं हुआ, जैसे मूसलाधार पानी बरसने पर भी पर्वत व्यथित नहीं होते। कालदंड के समान भारी गदा लेकर यक्षों का वध करता हुआ उनकी सेना में घुस गया। जैसे वायु की सहायता से अग्नि सूखे ईंधन को भस्म कर देता है, वैसे ही रावण गदा से यक्षों का विनाश करने लगा। ८—१५। जैसे पवन बादलों को तितर-बितर कर देता है, वैसे ही महोदर आदि रावण के मन्त्रियों ने यक्षों को भगा दिया। कुछ तो मारे गये, कुछ भाग गये, कुछ घायल होकर गिर पड़े और दाँतों से होंठ चबाते हुए बड़े क्रोध से युद्ध-भूमि में डटे रहे। जिनके शस्त्र टूट गये, वे डर के मारे एक दूसरे से लिपटकर गिर पड़े। इस तरह यक्षगण ऐसे विनष्ट हुए, जैसे जल के वेग से नदियों के किनारे विदीर्ण हो जाते हैं। प्राण त्यागकर स्वर्ग को जाते हुए और युद्ध करते-करते दौड़ते हुए यक्षों तथा युद्ध देखने के लिए आये हुए ऋषियों से आकाश इस प्रकार भर गया कि कहीं चलने का मार्ग न रह गया। १६—१९। उन बलवान् यक्षों को मरते हुए देखकर महाबाहु कुबेर ने और सेना भेजी। २०। हे रामचन्द्र, संगयोधकंटक नाम का यक्ष कुबेर का भेजा हुआ युद्धभूमि में आया। उसने मारीच को चक्र से ऐसा मारा, जैसे विष्णु दानवों को मारते हैं और वह पर्वत से वैसे ही गिरा, जैसे ग्रह पुण्य क्षीण होने पर गिर पड़ते हैं। २१—२२। थोड़ी देर बाद जब मारीच को होश आया तो सावधान होकर उसने उस यक्ष से युद्ध किया और वह यक्ष युद्ध से घायल होकर भाग गया। रावण द्वारपालों को भगाता हुआ सुवर्णमय,

वैदूर्यमणि और चाँदी के बने हुए फाटक से कुबेर की नगरी में घुसा। वहाँ सूर्यभानु नामक द्वारपाल ने उसे रोका। २३—२५। उसके रोकने पर भी जब रावण फाटक के भीतर घुसता ही गया तो उस यक्ष ने एक परिघ उठाकर रावण को मारा। उसके सिर से रुधिर की धारा बह चली, जैसे पर्वत से गेरू बहता है। किन्तु रावण ब्रह्मा के वरदान के कारण पृथिवी पर नहीं गिरा। २६—२८। रावण ने वही परिघ उठाकर उस यक्ष को मार डाला। उस परिघ के प्रहार से वह यक्ष ऐसा विदीर्ण हुआ कि उसकी लाश का भी कहीं पता न लगा। २९। रावण का यह पराक्रम देखकर यक्षों की सेना आयुध फेंककर भाग खड़ी हुई। उनके मुँह का तेज जाता रहा। वे डर के मारे नदियों और पर्वतों की गुहाओं में छिप रहे। ३०—३१।

सर्ग १५

यक्षों को भयभीत देखकर कुबेर ने मणिभद्र नामक महायक्ष से कहा—हे वीर, इस पापी दुराचारी रावण का वध करके वीर यक्षों की रक्षा करो। कुबेर की आज्ञा से मणिभद्र चार हज़ार यक्ष लेकर युद्ध करने लगा। गदा, मुसल, प्रास, शक्ति, तोमर और मुद्गर आदि शस्त्रों से यक्षों ने बड़ा घोर युद्ध किया। वे बाज की तरह दौड़ते थे और राक्षसों को ललकारते थे। १—५। वह तुमुल युद्ध देखकर देवता, गन्धर्व और ब्रह्मवादी ऋषि बड़े विस्मित हुए। उन चार हज़ार यक्षों में से एक हज़ार यक्षों को प्रहस्त ने मार डाला, महोदर ने भी एक हज़ार यक्षों का वध किया और मारीच ने कुपित होकर क्षणमात्र में दो हज़ार यक्षों का विनाश कर दिया। हे पुरुषश्रेष्ठ, यक्षों और राक्षसों की तुलना कैसे हो सकती थी! कहाँ यक्षों का साधारण युद्ध और कहाँ राक्षसों का माया-युद्ध, इसी से राक्षस युद्ध में विजय पाते थे। ६—९। धूम्राक्ष ने दौड़कर मणिभद्र की छाती में मुसल का प्रहार किया, किन्तु

मणिभद्र कुछ भी व्यथित न हुआ। उसने एक गदा धूम्राक्ष के सिर पर मारी, जिससे वह व्याकुल होकर पृथिवी पर गिर पड़ा।१०–११। धूम्राक्ष को रुधिर से लथपथ पृथिवी पर पड़ा हुआ देखकर रावण बड़े क्रोध से मणिभद्र की ओर दौड़ा। मणिभद्र ने उसे अपने सामने आते हुए देखकर एक साथ ही तीन शक्तियों का प्रहार किया। रावण ने भी उसके सिर पर एक प्रहार किया, जिससे उसका मुकुट गिर पड़ा। मणिभद्र परास्त होकर युद्ध से भागा, यह देखकर कैलास पर्वत पर हाहाकार मच गया।१२–१५। रावण ने दूर से धनाध्यक्ष कुबेर को देखा। वे हाथ में गदा लिये थे; शुक्र, प्रौष्ठपद और पद्मशंख ये तीन यक्ष उनके साथ थे। कुबेर ने भी शाप के कारण दारुण स्वभाव अपने भाई को युद्ध में देखकर अपने कुल के अनुसार उचित वचन कहा—हे मूर्ख रावण, तुम हमारा कहना नहीं मानते, इसका फल तुमको उस समय मालूम होगा, जब तुम नरक को जाओगे। जो मूर्ख अपनी मूर्खता से विष पीता है, वह अपने कर्म का फल अन्त समय में जानता है। १६–१९। तुम ऋषियों और देवताओं को पीड़ित करते हो और इसको पाप नहीं समझते हो, उसका यह फल है कि ब्रह्मा आदि कोई भी तुमसे प्रसन्न नहीं हैं। माता-पिता, ब्राह्मण और आचार्य का अपमान करते हो, इसका परिणाम यही होगा कि तुम यमलोक को जाओगे। इस अनित्य शरीर को पाकर जो मूर्ख शुभ कर्म नहीं करता, वह मरने पर उसका फल भोगता है और अपने कर्मों पर पश्चात्ताप करता है। २०–२२। गुरुजनों की सेवा किये विना किसी दुर्बुद्धि को अपने आप सुबुद्धि नहीं आती, इसलिए जैसा कर्म करता है, वैसा फल भोगता है। अपने कर्मों से ही ऋद्धि, सिद्धि, रूप, बल, धन, पुत्र और शूरता प्राप्त होती है। २३–२४। तुम्हारी जैसी मति है, इससे तुम नरक को जाओगे। अब हमने निश्चय कर लिया है कि तुमसे कुछ नहीं कहेंगे। २५। यह कहकर कुबेर ने ऐसे प्रहार किये

कि मारीच आदि रावण के सब मन्त्री युद्ध से भाग खड़े हुए। रावण के सिर पर भी एक गदा मारी, किन्तु वह व्यथित नहीं हुआ और न स्थान से ही हटा। हे रामचन्द्र, कुबेर और रावण का युद्ध होने लगा। न कोई व्यथित होता था और न कोई थकता था। कुबेर ने रावण के ऊपर आग्नेयअस्त्र चलाया। रावण ने वारुणअस्त्र चलाकर उसे व्यर्थ कर दिया। रावण ने राक्षसी माया रची। उसने सैकड़ों, हज़ारों रूप धारण किये। बाघ, वराह, मेघ, पर्वत, समुद्र, वृक्ष, यक्ष और दैत्य आदि का रूप धारण करके वह दिखाई देने लगा। इस प्रकार उसने अनेक रूप धारण किये। कुबेर जब प्रहार करना चाहते थे, तब वह अदृश्य हो जाता था। हे रामचन्द्र, उसके बाद रावण ने बहुत बड़ी गदा लेकर कुबेर के सिर पर मारी। कुबेर के सिर से रुधिर बह चला और वे कटे हुए अशोक वृक्ष के समान पृथिवी पर गिर पड़े। २६–३३। यक्षगण उनको नन्दन वन को उठा ले गये। इस तरह कुबेर को जीतकर रावण ने उनका पुष्पक विमान विजय का चिह्नस्वरूप ले लिया। ३४–३५। उस विमान में सुवर्ण के खम्भे, वैदूर्यमणि के द्वार और मोतियों की झालरें लगी थीं। मन के समान उसका वेग था। बैठनेवाले की इच्छानुसार वह चलता था। सुवर्ण और मणियों की सीढ़ियाँ लगी थीं और तपाये हुए सोने की वेदी बनी थी। देवताओं की सवारी के योग्य, कभी नष्ट न होनेवाला वह विमान दृष्टि और मन को सुख देता था। उस पर अनेक प्रकार की रचनाएँ थीं, विश्वकर्मा ने उसे बनाया था, सब ऋतुओं में सुख देता था, न अत्यन्त शीतल था, न अत्यन्त उष्ण। मूर्ख रावण अपने पराक्रम से जीतकर बड़े गर्व से उस विमान पर बैठकर चला। उसने अपने को तीनों लोकों का विजयी समझा। ३६–४०। इस प्रकार कुबेर को जीतकर वह कैलास पर्वत से लौटा। किरीट और हार आदि धारण किये हुए महाप्रतापी रावण बहुत बड़ी विजय पाकर उस

विमान पर अपने तेज से यज्ञ की वेदी में स्थित अग्नि के समान शोभित हुआ। ४१–४२।

सर्ग १६

हे रामचन्द्र, कुबेर को जीतकर पुष्पक विमान पर सवार रावण जब शरवण के समीप पहुँचा तो पुष्पक विमान रुक गया। सुवर्ण के समान चमकता हुआ शरवण दूसरे सूर्य के समान प्रकाशित था। उस रमणीय वन को रावण ने देखा। विमान के रुक जाने पर मन्त्रियों के साथ रावण सोचने लगा कि यह इच्छाचारी विमान क्यों नहीं चलता। जान पड़ता है कि इस पर्वत पर कोई रहता है और उसी का यह काम है जिससे यह विमान नहीं चलता। १–५। हे रामचन्द्र, तब बुद्धिमान् मारीच ने कहा—किसी कारण के विना यह नहीं हो सकता कि पुष्पक विमान न चले। अथवा यह पुष्पक कुबेर के सिवा किसी का वाहन न होगा। इसी से कुबेर के विना नहीं चल रहा है। ६–७। राक्षस आपस में इस तरह बातें कर रहे थे, उसी समय कृष्ण-पिंगलवर्ण, अतिकरालरूप, मूड़ मुड़ाये, छोटे-छोटे हाथ और छोटा शरीर धारण किये नन्दीश्वर उसके पास आकर बोले—हे रावण, पीछे लौट जाओ। इस पर्वत पर भगवान् शंकर क्रीड़ा करते हैं; गरुड़, नाग, यक्ष, देवता, गन्धर्व, राक्षस और अन्य कोई भी प्राणी इस पर्वत पर नहीं आ सकता। नन्दीश्वर के यह वचन सुनकर रावण पुष्पक विमान से उतर पड़ा और बड़े क्रोध से लाल-लाल आँखें निकालकर बोला—शंकर कौन है? यह कहता हुआ वह पर्वत के ऊपर चढ़ गया। वहाँ उसने महादेव को देखा, उनके समीप ही शूल लिये हुए दूसरे महादेव के समान नन्दीश्वर भी खड़े थे। उनका मुँह वानर का-सा था। उनको देखकर रावण हँसा। उसके हँसने का शब्द बादल के गरजने के समान हुआ। उसे हँसते देखकर शंकर का ही दूसरा स्वरूप नन्दीश्वर

बोले—हे रावण, हमारा वानर का-सा मुँह देखकर निरादर करके तुम वज्रपात के समान ज़ोर से हँसे हो, इससे हमारे वीर्य से युक्त, हमारे ही रूप के समान तेजस्वी वानर तुम्हारे कुल का विनाश करने के लिए उत्पन्न होंगे। नख और दाँत ही उनके आयुध होंगे। मन के समान शीघ्रगामी, युद्ध में उन्मत्त, महाबलवान् और चलते-फिरते पर्वतों के समान होंगे। ८—१८। वे तुम्हारा दर्प और बल नष्ट करेंगे। तुम्हारे मन्त्रियों और पुत्रों सहित कुल का विनाश करेंगे। हे निशाचर, तुमको तो हम अभी मार सकते हैं, किन्तु तुम अपने कर्मों से मरे के ही समान हो। १९—२०। नन्दीश्वर के यह कहने पर देवताओं ने आकाश में नगाड़े बजाये और फूलों की वर्षा की। नन्दीश्वर की बातों पर कुछ भी ध्यान न देकर महाबली रावण बोला—इस पर्वत ने पुष्पक विमान की गति रोक दी है, इसलिए हम इस पर्वत को उखाड़ डालेंगे। २१—२३। किस प्रभाव से महादेव राजा के समान यहाँ क्रीड़ा करते हैं। तुम जाकर उनसे कहो कि उनके लिए भय उपस्थित है। हे रामचन्द्र, यह कहकर रावण ने भुजाएँ फैलाकर कैलास पर्वत को उठा लिया। वह पर्वत काँपने लगा। पर्वत के काँपने से महादेव के गण भी काँप उठे। पार्वती चलायमान हुईं और डर के मारे महादेव के गले में लिपट गईं। २४—२६। हे रामचन्द्र, तब देवताओं में श्रेष्ठ महादेव ने पैर के अँगूठे से पर्वत को दबाया। रावण की भुजाएँ उसी के नीचे दब गईं। यह देखकर उसके मन्त्रियों को बड़ा विस्मय हुआ। २७—२८। भुजाओं के दबने से रावण बड़ा कुपित हुआ और बड़े क्रोध से गरजने लगा। उस शब्द से तीनों लोक काँप उठे। उसके मन्त्रियों ने तो यह समझा कि कहीं वज्रपात हुआ। इन्द्र आदि देवता भी चौंक पड़े। २९—३०। समुद्र में तूफ़ान-सा आया, पर्वत डगमगाने लगे। यक्ष, विद्याधर, सिद्ध और किन्नर आदि बोल उठे कि यह क्या हुआ। रावण के मन्त्रियों ने कहा—

हे दशानन, महादेव के सिवा और कोई इस समय रक्षा नहीं कर सकता, इसलिए तुम उन्हीं को प्रसन्न करो। उनकी स्तुति करो, नम्रता से उन्हीं की शरण में जाओ। शंकर बड़े कृपालु हैं, वे सन्तुष्ट हो जायँगे और तुम्हारे ऊपर दया करेंगे। मन्त्रियों के यह कहने पर रावण भगवान् शंकर की स्तुति करने लगा। प्रणाम करके अनेक प्रकार के स्तोत्र पढ़ता रहा। हज़ार वर्ष तक स्तुति करता हुआ जब वह रोता रहा, तब पर्वत के ऊपर विराजमान भगवान् शंकर प्रसन्न हुए। उसकी भुजाएँ जो पर्वत के नीचे दबी थीं, उनको छोड़कर वे बोले—तुम बड़े वीर हो, तुम्हारे बल से हम प्रसन्न हैं। पर्वत के नीचे दब जाने के कारण तुमने जो दारुण शब्द किया और उससे तीनों लोक भयभीत हो गये, इसलिए हे राजन्, तुम्हारा नाम रावण होगा। देवता, मनुष्य, यक्ष और संसार के सब प्राणी तुमको सब लोकों का रुलानेवाला रावण कहेंगे। हे राक्षसराज, अब हम आज्ञा देते हैं, तुम जिस मार्ग से जाना चाहते हो, चले जाओ। ३१–३९। महादेव के यह कहने पर रावण बोला—हे भगवन्, यदि आप हमारे ऊपर प्रसन्न हैं तो हम जो माँगते हैं, वह दीजिए। देवता, दैत्य, राक्षस, गन्धर्व, दानव और नाग आदि जो बड़े बलवान् प्राणी हैं, वे हमको नहीं मार सकते यह वरदान ब्रह्मा से हमें मिल चुका है और मनुष्यों को तो हम कुछ समझते ही नहीं। वे तो एक साधारण जीव हैं। ब्रह्मा ने हमें दीर्घायु भी दी है। ब्रह्मा के देने से जो शेष रह गई हो वह आयु आप दीजिए और शस्त्र भी दीजिए। ४०–४२। रावण के ऐसा कहने पर भगवान् शंकर ने चन्द्रहास नाम का एक खड्ग उसे दिया और अवशिष्ट आयु भी उसे दी। यह देकर उन्होंने कहा—इस खड्ग का कभी अनादर न करना। यदि इसका अनादर करोगे तो यह फिर हमारे पास चला आवेगा। ४३–४५। उसके बाद रावण महादेव को प्रणाम करके पुष्पक विमान पर सवार हुआ और पृथिवी-पर्यटन करता हुआ

क्षत्रियों को परास्त करने लगा। जिन क्षत्रियों ने उसका शासन नहीं माना, वे सब परिवार सहित नष्ट कर दिये गये। जो बुद्धिमान् थे और जानते थे कि इस राक्षस को कोई जीत नहीं सकता, उन्होंने उससे हार मान ली और अपने प्राण बचाये। ४६—४९।

सर्ग १७

हे राजन्, महाबाहु रावण पृथिवी-पर्यटन करता हुआ हिमवान् के वन में पहुँचा, वहाँ ऋषियों के समान तपस्या करती हुई और अपने तेज से देवी के समान प्रकाशित अत्यन्त सुन्दरी एक कन्या को देखा। काम और मोह के वश होकर वह हँसता हुआ उससे बोला—हे कल्याणी, यह युवा अवस्था सुख-भोग के लिए है, तुम इसके विपरीत यह क्या कर रही हो? ऐसी रूपवती होकर तुम्हें यह नहीं करना चाहिए। तुम्हारे रूप की उपमा नहीं दी जा सकती। इस रूप को देखते ही पुरुषों को काम उन्मत्त कर देता है। तुमको तपस्या करना उचित नहीं है, इसलिए इसका विचार ही छोड़ दो।१—५। हे भद्रे, हे सुन्दरी, तुम किसकी कन्या हो। तुम्हारा पति कौन है, यह क्या कर रही हो। जो पुरुष तुम्हारे साथ भोग करता होगा, वह धन्य है। हम जो पूछते हैं, उसका उत्तर दो। किसलिए तुम यह परिश्रम करती हो? रावण के यह कहने पर उस यशस्विनी कन्या ने विधिवत् उसका आतिथ्य किया और उससे कहा—हमारे पिता का नाम कुशध्वज था। वे महातेजस्वी ब्रह्मर्षि थे। वे बृहस्पति के पुत्र थे और बुद्धि में बृहस्पति के ही समान थे। नित्य वेदाभ्यास करते रहते थे। हम उन्हीं की कन्या हैं, हमारा नाम वेदवती है।६—९। हमारे साथ विवाह करने के लिए देवता, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस और नाग सभी हमारे पिता के पास आये, किन्तु हे राक्षसेश्वर, हमारे पिता ने उनमें से किसी के साथ हमारा विवाह नहीं किया। उसका कारण यह था कि हमारे पिता ने निश्चय

कर लिया था कि विष्णु को ही जामाता बनावेंगे ; क्योंकि वे सब देवताओं के ईश्वर हैं। दम्भु नामक दैत्यों के राजा ने जब यह बात सुनी तो कुपित होकर उस पापी ने रात में सोते हुए हमारे पिता को मारडाला। हमारी माता उनके शव को लेकर बड़े दुःख से अग्नि में प्रविष्ट हो गईं। १०–१५। इसी से हम अपने पिता का मनोरथ सत्य करने के लिए विष्णु भगवान् की तपस्या करती हैं, और हृदय से हमने उन्हीं के साथ विवाह करना निश्चित कर लिया है। उसी प्रतिज्ञा के कारण हम तपस्या कर रही हैं। हे राक्षसराज, हमने अपना यह सब वृत्तान्त तुमसे कहा। भगवान् नारायण ही हमारे पति हैं, उन पुरुषोत्तम के सिवा और कोई हमारा पति नहीं हो सकता। उन्हीं को पाने के लिए हम इस कठिन नियम का पालन कर रही हैं। १६–१८। हे राजन्, अब तुम यहाँ से जाओ। हमने तपोबल से तुमको जान लिया। तीनों लोकों की बातें तपोबल से हम जान सकती हैं। यह सुनकर कामातुर रावण विमान से उतर पड़ा और उस तपस्विनी कन्या से बोला—हे सुन्दरी, तुम अपने रूप के गर्व में हो; इसी से तुम ऐसा कह रही हो। हे मृगनयनी, तपस्या वृद्धावस्था में करनी चाहिए। तुम सब गुणों से सम्पन्न हो, तुमको ऐसी बातें न कहनी चाहिए। तीनों लोकों में तुम अति सुन्दरी हो, तुम्हारी युवा अवस्था बीती जाती है। हे कल्याणी, हम लंका के राजा हैं, हमारा नाम दशग्रीव है, तुम हमारी भार्या होकर इच्छानुसार सुख भोग करो। १९–२३। जिसे तुम विष्णु कहती हो और उसके साथ विवाह करना चाहती हो वह कौन है। बल, पराक्रम और तपस्या में वह हमारी बराबर नहीं हो सकता। रावण के ऐसा कहने पर वेदवती बोली—ऐसा मत कहो। हे राक्षसेन्द्र, भगवान् विष्णु तीनों लोकों के स्वामी हैं। सब लोक उनको नमस्कार करते हैं। तुम्हारे सिवा और कोई बुद्धिमान् पुरुष उनका अपमान न करेगा। २४–२६। वेदवती के यह कहते ही रावण ने उसके केश पकड़

...र खींचा। तब वेदवती को बड़ा क्रोध आया। उसने उसके हाथ से ...पने को छुड़ा लिया, उसका हाथ खड्गरूप हो गया और उसने अपने ...शों को काट डाला। क्रोध के मारे रावण को भस्म करती हुई उस ...न्या ने अपना शरीर त्यागने के लिए अग्नि प्रज्वलित करके रावण ...े कहा—हे राक्षस, तूने हमारा अपमान किया है, इसलिए अब हम ...जीवित रहना नहीं चाहतीं। हम अभी तेरे सामने ही अग्नि में भस्म ...हो जायँगी। २७—३०। और तेरा वध करने के लिए संसार में फिर जन्म ...ेंगी। पापी पुरुष का वध करना स्त्रियों के मान का काम नहीं है, और ...यदि हम तुझे शाप देती हैं तो हमारी तपस्या क्षीण होती है। ३१—३२। ...यदि हमने कुछ तपस्या की हो, दान दिया हो और अग्नि में आहुतियाँ ...दी हों तो हम किसी धर्मात्मा पुरुष की अयोनिजा, साध्वी, कन्या ...हों। यह कहकर वेदवती अग्नि में प्रवेश कर गई। यह देखकर ...देवताओं ने आकाश से फूल बरसाये। हे महाबाहु रामचन्द्र, वही ...वेदवती महाराज जनक की पुत्री सीता हैं। वे आपकी भार्या हुईं ...और आप साक्षात् सनातन विष्णु हैं। ३३—३५। जिस वेदवती ने ...पूर्व समय में क्रोध करके रावण से यह कहा था, वही सीता के रूप में ...उत्पन्न हुई और आपके अमानुषी पराक्रम से पर्वताकार रावण का वध ...कराया। अग्नि की शिखा के समान महाभागा सीता हल से जोते ...जा रहे खेत में उत्पन्न हुई हैं। कृतयुग में इनका नाम वेदवती था ...और अब त्रेतायुग में रावण का वध कराने के लिए इन्होंने मैथिल ...कुल में महात्मा जनक के यहाँ जन्म लिया है। ३६—३८।

सर्ग १८

वेदवती के अग्नि में प्रवेश कर जाने पर रावण पुष्पक विमान पर चढ़कर फिर पृथिवी-पर्यटन करने लगा। वह घूमता हुआ उशीरबीज देश में पहुँचा। वहाँ राजा मरुत् देवताओं के साथ यज्ञ कर रहे थे।

साक्षात् बृहस्पति के भाई संवर्त्त नामक ब्रह्मर्षि उनका यज्ञ करा रहे थे। रावण जब वहाँ पहुँचा तो देवता उसे देखकर डर के मारे तिर्यक् योनि में प्रवेश कर गये; क्योंकि तप के प्रभाव से उस राक्षस को कोई जीत नहीं सकता था। १—४। इन्द्र मयूर पक्षी में, धर्मराज कौवे में, धनाध्यक्ष कुबेर गिरगिट में और वरुण हंस में प्रविष्ट हुए। हे रामचन्द्र, इसी प्रकार और भी सब देवताओं ने पक्षियों के रूप धारण कर लिये। रावण अपवित्र कुत्ते के समान यज्ञभूमि में गया और राजा मरुत् से बोला कि या तो हमारे साथ युद्ध करो या हार मानो। ५—७। मरुत् ने उससे पूछा कि तुम कौन हो? यह सुनकर रावण ने उत्तर दिया——राजन्, हम कुबेर के छोटे भाई हैं, क्या तुमने हमें नहीं पहचाना या पहचानकर भी तुमको कुछ भय नहीं हुआ। इससे हम बड़े प्रसन्न हुए; क्योंकि तीनों लोकों में ऐसा कोई नहीं है जो हमारे पराक्रम को न जानता हो। हमने तो अपने बड़े भाई कुबेर को जीतकर यह विमान छीन लिया है। ८—१०। राजा मरुत् ने कहा—तुमने अपने भाई को युद्ध में जीत लिया? वाह, तब तो तुम धन्य हो! तुम्हारे समान प्रशंसनीय तीनों लोकों में कोई नहीं है। लोकनिन्दित और अधर्म का काम करके कोई प्रशंसनीय नहीं होता। तुम बड़े भाई को जीत-कर, ऐसा दुष्ट काम करके, अपनी प्रशंसा करते हो। ११—१२। कौन धर्म करके तुमने वरदान पाया है। तुम जो कहते हो, सो तो हमने आज तक नहीं सुना था। अच्छा, खड़े रहो अब यहाँ से जीवित न जाने पाओगे। हे मूर्ख, पैने बाणों से तुझे अभी यमलोक को भेजे देते हैं। यह कहकर राजा मरुत् धनुष-बाण लेकर युद्ध के लिए खड़े हो गये। किन्तु संवर्त मुनि ने उनको रोका और बड़े स्नेह से समझाकर कहा—तुम हमारी बात सुनो, इस समय युद्ध करना उचित नहीं है। तुम माहेश्वर यज्ञ कर रहे हो, इसे छोड़ दोगे तो तुम्हारे वंश का नाश हो जायगा। जिसने यज्ञ की दीक्षा ली हो, उसे भला क्रोध और युद्ध

[लड़]ना चाहिए ! इसके सिवा यह राक्षस बड़ा बलवान् है, इससे युद्ध [कर]के विजय पाना भी असम्भव है। १३–१७। गुरु के वचन मान-[क]र राजा मरुत् ने युद्ध का इरादा छोड़ दिया। धनुष-बाण रखकर वे [य]ज्ञ करने लगे। उनको पराजित जानकर शुक्र ने बड़े हर्ष से पुकारा [कि] रावण की विजय हुई। यज्ञ में आये हुए ऋषियों को राक्षसों ने खा [लि]या। उनके रुधिर से उनको तृप्ति भी नहीं हुई और वे फिर आगे [च]ले।१८–२०। रावण के चले जाने पर इन्द्र आदि देवता फिर अपने [रू]प में आ गये और उन जीवों को ये वरदान दिये। इन्द्र ने मयूर से [क]हा—मैं तुमसे प्रसन्न हूँ। अब साँप से तुमको भय न रहेगा। तुम्हारी पूँछ [में] हज़ार नेत्र होंगे और जब हम पानी बरसावेंगे तब तुमको बड़ा आनन्द [हो]गा। हे रामचन्द्र, मोर की पूँछ पहले नीले रंग की थी, इन्द्र के वर-[दा]न से उसकी पूँछ ऐसी विचित्र हो गई। २१–२४। इन्द्र का वरदान [पा]कर जब मयूर चले गये, तब यज्ञस्थल के पूर्व की ओर बैठे हुए कौवे [से] धर्मराज ने कहा—हे पक्षी, हम तुमसे बहुत प्रसन्न हैं। हमारा वचन [सु]नो—अन्य सब प्राणी अनेक रोगों से पीड़ित रहते हैं किन्तु हमारी [प्रस]न्नता के कारण तुमको कोई रोग न होगा और हमारे वरदान से [तु]मको मृत्यु का भय न रहेगा। जब तक कोई प्राणी तुमको मार न [डा]लेगा तब तक तुम जीवित रहोगे। जो मनुष्य हमारे लोक में आवेंगे, [उ]नको तृप्त करने के लिए उनके कुटुम्ब के लोग यदि तुमको खिलावेंगे [तो] उन प्राणियों को तृप्ति होगी। २५–२८। उसके बाद वरुण ने [हं]स से कहा—हे हंस! सुनो, आज से तुम्हारा रंग चन्द्रमा के समान, [फे]न के समान और फेन के समान उज्ज्वल होगा। तुम्हारा [श]रीर मनोहर होगा और तुम सदा प्रसन्न रहोगे। यही हमारी प्रसन्नता [का] चिह्न है। हे रामचन्द्र, पहले हंसों का रंग सफ़ेद नहीं था। उनके [पं]ख नीले थे और नीचे का भाग कुछ हरे रंग का था। २९–३२। [उ]सके बाद कुबेर ने पर्वत पर बैठे हुए गिरगिट से कहा—तुमको हम

सुवर्ण का रंग देते हैं। तुम्हारा सिर सदा सुवर्ण के समान चमकता रहेगा। यह सुवर्ण का रंग हमारी प्रसन्नता का चिह्न होगा। इस प्रकार वरदान देकर सब देवता यज्ञ समाप्त होने पर राजा मरुत् के साथ अपने-अपने स्थान को गये। ३३—३५।

सर्ग १९

राक्षसराज रावण राजा मरुत् को जीतकर युद्ध करने के लिए अन्य राजाओं के नगर को गया। महेन्द्र और वरुण के समान प्रतापी राजाओं से वह कहता था कि या तो युद्ध करो, या हार मानो। इसके सिवा और कोई उपाय तुम्हारे छुटकारे का नहीं है। बहुत-से बुद्धिमान् और बलवान् राजाओं ने आपस में सलाह करके, वरदान के प्रभाव से उसे महापराक्रमी जानकर, उससे हार मान ली। दुष्यन्त, सुरथ, गाधि, गय और पुरूरवा, इन सब राजाओं ने कह दिया कि हम तुमसे पराजित हुए। १—५। उसके बाद रावण अयोध्या को आया। उस समय यहाँ राजा अनरण्य राज्य करते थे। वे पुरन्दर के समान बलवान् थे। रावण ने उनसे कहा—हमसे युद्ध करो अथवा 'हम पराजित हुए' ऐसा कहो, बस यही हमारी आज्ञा है। ६—८। उस पापी के यह वचन सुनकर अनरण्य को बड़ा क्रोध आया। उन्होंने कहा—बहुत अच्छा, हम युद्ध करेंगे। खड़े रहो, हम युद्ध के लिए तैयार होते हैं। ९—१०। महाराज अनरण्य की आज्ञा से उनकी सेना राक्षसों से युद्ध करने के लिए निकली। उस सेना में दस हज़ार हाथी, एक लाख घोड़े, हज़ारों रथ, और बहुत बड़ी पैदल सेना थी। राक्षसों से उनकी सेना के साथ युद्ध होने लगा। राजा की सेना ने बड़ा पराक्रम दिखाया। अद्भुत युद्ध हुआ, किन्तु जैसे अग्नि में आहुति पड़ने से भस्म हो जाती है, वैसे ही राक्षसों के युद्ध में उनकी सेना भस्म हो गई। अग्नि में पतंगों के समान सैनिकों को भस्म होते देखकर

...जा ने सोचा कि जैसे समुद्र में नदियाँ विलीन हो जाती हैं, वही दशा ...ारी सेना की हुई। ११—१७। तब इन्द्र-धनुष के समान अपना ...नुष चढ़ाकर वे स्वयं रावण के सामने आये। उनके प्रहार से मारीच, ...क, सारण और प्रहस्त आदि रावण के सब मन्त्री वैसे ही भाग खड़े ...ए, जैसे मृग भागते हैं। १८—१९। फिर आठ सौ बाण रावण के सिर ...ारे। किन्तु उन बाणों से रावण के अंग में कहीं भी घाव न हुआ। ...से पर्वत को पानी की बूँदों से कुछ भी कष्ट नहीं होता, वैसे ही उन बाणों ...रावण को कुछ भी कष्ट न हुआ। राक्षसराज रावण ने क्रुद्ध होकर ...थप्पड़ उनके सिर में मारा। वे रथ से गिर पड़े और विह्वल होकर ...ाँपने लगे। २०—२३। वज्र के प्रहार से साल वृक्ष के समान गिरे ...ए राजा को देखकर रावण हँसकर बोला—राजन्, हमारे साथ युद्ध ...रने से तुमको क्या फल मिला। तीनों लोकों में ऐसा कोई नहीं, ...ो हमसे युद्ध कर सके। जान पड़ता है कि तुम भोग-विलास में ...ासक्त थे, इससे हमारा बल तुमने नहीं सुना; नहीं तो युद्ध क्यों ...रते। राजा के प्राण क्षीण हो रहे थे, वे धीरे से बोले—काल की ...ति बड़ी कठिन है। अपनी प्रशंसा करनेवाले तुमसे हम परास्त नहीं ...ए। हमारा काल आ गया है, इसलिए हम प्राण त्यागते हैं। तुम केवल ...ारणभूत हो। हमारे प्राण निकल रहे हैं, इसलिए हम इस समय क्या ...र सकते हैं। हे राक्षस, हम युद्ध से नहीं भागे, युद्ध करते ही करते मारे ...ाते हैं। तुमने इक्ष्वाकुवंश का निरादर किया है, इसलिए हम शपथपूर्वक ...हते हैं—यदि हमने कुछ दान दिया है, होम, तपस्या और सुकर्म किया ...ै और प्रजा का भली भाँति पालन किया है तो हमारे ये वचन सत्य ...ों। महात्मा इक्ष्वाकु के वंश में दशरथ के पुत्र रामचन्द्र होंगे, वे तुम्हारा ...ध करेंगे। २४—३०। यह शाप सुनकर देवताओं ने नगाड़े बजाये और ...ूलों की वर्षा की। ३१। हे रामचन्द्र, यह कहकर राजा अनरण्य शरीर ...्यागकर स्वर्गलोक को चले गये और रावण भी वहाँ से चला गया। ३२।

सर्ग २०

रावण इस प्रकार पृथिवी पर घूमता हुआ मनुष्यों को पीड़ित करता था। एक दिन आकाश में जाते हुए रावण को मुनियों में श्रेष्ठ नारद मिले। रावण ने उनको प्रणाम किया, फिर कुशल पूछकर उनके आगमन का कारण पूछा। आकाशमार्ग से जाते हुए महातेजस्वी नारद ने कहा—हे राक्षसराज, हे सौम्य, हम तुम्हारे पराक्रम से बड़े प्रसन्न हुए। जैसे विष्णु ने दैत्यों को पराजित किया था और हमको बड़ा हर्ष हुआ था, वैसे ही तुमने गन्धर्वों और नागों को परास्त करके हमको प्रसन्न किया। १—५। हम कुछ कहना चाहते हैं, वह सुनने-वाली बात है। यदि तुम सुनो तो हम कहें। सावधान होकर हमारी बात सुनो—हे तात, तुम देवताओं से भी अवध्य हो, फिर तुम इन बेचारे मनुष्यों को क्यों मारते हो। ये सब तो मृत्यु के वश हैं, बेचारे अपने आप एक दिन मर जायँगे। देवता, दानव, दैत्य, यक्ष, गन्धर्व और राक्षस कोई भी तुमको नहीं मार सकता तो मनुष्य बेचारे तुम्हारा क्या बिगाड़ेंगे। इसलिए इनको कष्ट देना उचित नहीं है। ६—८। ये अनेक प्रकार के कष्ट भोगते हैं, अनेक प्रकार के रोग और बुढ़ापे से पीड़ित रहते हैं, किन्तु फिर भी सदा अपने कल्याण की ही फ़िक्र में रहते हैं। इनको मारने से क्या लाभ है। जब अनेक अनिष्ट और विपत्तियाँ इनके साथ लगी हैं, तो इनसे युद्ध करने में किस बुद्धिमान् को दया न आवेगी। ये तो स्वयं भूख, प्यास, बुढ़ापा, रोग, शोक, मोह और दुःख से सदा पीड़ित रहते हैं। इसलिए तुम इनको न मारो। ६—११। हे राक्षेश्वर, इनकी गति नहीं जानी जाती। ये कभी प्रसन्न होकर गाते, बजाते और नाचते हैं, कभी बड़े विलाप से रोते हैं। माता, पिता, पुत्र, स्त्री के स्नेह में मोहित रहते हैं और अपने क्लेश को नहीं समझते। इन मूढ़, मोहग्रस्त मनुष्यों को क्लेश देने से क्या लाभ है। हे सौम्य, तुमने मृत्युलोक को जीत लिया, इसमें कोई सन्देह

नहीं है। यह लोग अवश्य यमलोक को जायँगे। इसलिए हे रावण,
तुम चलकर यमराज को जीतो। उनको जीत लेने से ये लोग अपने
आप परास्त हो जायँगे। महातेजस्वी नारद के यह कहने पर
लंकेश्वर रावण उनको प्रणाम करके हँसकर बोला——हे युद्धप्रिय नारद,
इस समय तो हम रसातल को जीतने के लिए जा रहे हैं। वहाँ नागों
को जीतकर फिर देवताओं और तीनों लोकों को अपने वश में
करके अमृत के लिए समुद्र को मथेंगे। १२—१९। यह सुनकर
भगवान् नारद ने कहा——तो तुम रसातल को दूसरे मार्ग से क्यों जाते
हो, यमपुर होकर ही क्यों नहीं चले जाते ? हे शत्रुनाशन, यही
मार्ग सीधा यमपुर को चला गया है। रावण हँसकर बोला——बहुत
अच्छा, ऐसा ही करेंगे। पहले यमराज को ही मार डालेंगे। हे ब्रह्मन्,
अब हम दक्षिण दिशा को, जहाँ सूर्य के पुत्र यमराज रहते हैं, वहीं
जायँगे। हमने चारों लोकपालों को जीतने की प्रतिज्ञा भी की है।
अब यमपुर को जाते हैं और सब प्राणियों को कष्ट देनेवाले यमराज
को मार डालेंगे। यह कहकर नारद को प्रणाम करके रावण अपने
मन्त्रियों के साथ दक्षिण दिशा को चला। महातेजस्वी नारद ध्यान
लगाकर सोचने लगे कि जो यमराज आयु क्षीण होने पर चराचर
जगत् और इन्द्र सहित तीनों लोकों को कष्ट देते हैं, उनको यह रावण
कैसे जीतेगा ! २०—२८। जो यमराज द्वितीय अग्नि के समान
दान और पुण्य के साक्षी हैं, जिस महात्मा के प्रभाव से सब प्राणी
चैतन्य होते हैं, जिनके भय से तीनों लोक पीड़ित रहते हैं, जो पुण्य
और पाप का फल देनेवाले हैं, उन यमराज को यह रावण कैसे
जीतेगा !२९—३१। जिन्होंने तीनों लोकों को जीत लिया है उनको यह
कैसे जीतेगा ! यमराज के साथ युद्ध करने के बाद देखें और क्या यह
करता है। इसलिए हम भी यमपुरी को जायँगे और यह कौतूहल देखेंगे।
यमराज और रावण का युद्ध कैसे होता है, यह देखना चाहिए।३२—३३।

सर्ग २१

यह सोचकर नारद मुनि यह समाचार कहने के लिए यमलोक को गये। वहाँ यमराज को देखा। अग्नि को सामने रक्खे हुए वे सब प्राणियों को उनके कर्म के अनुसार सुख-दुःख दे रहे थे। उन्होंने महर्षि नारद को देखकर उनको धर्म के अनुसार अर्घ्य दिया और उनसे पूछा—हे देवर्षि, सब कुशल है न? कहीं धर्म का विनाश तो नहीं हो रहा है? आपका आगमन कैसे हुआ? १—४। भगवान् नारद ने उत्तर दिया—आपसे कुछ कहने के लिए आया हूँ, सुनिए—यह दशग्रीव नाम का राक्षस आपको पराजित करने के लिए आ रहा है। इसको जीतना बड़ा कठिन है।५—६। इसी लिए मैं बड़ी शीघ्रता से आया हूँ। देखें, सबको दंड देनेवाले आपकी विजय होती है, या पराजय। यमराज और नारद की ये बातें हो रही थीं, उसी समय सूर्य के समान प्रकाशित पुष्पक विमान देख पड़ा। महाबलवान् रावण पुष्पक विमान के प्रकाश से उस स्थान को प्रकाशित करता हुआ समीप आ गया। उसने देखा कि यमलोक में सब प्राणी अपने-अपने कर्मों का फल भोग रहे हैं। ७—१०। यमराज के अनुचर बड़े भयानक रूप हैं, वे सब प्राणियों को पीड़ित कर रहे हैं। कोई बाँधे पड़े हैं, कोई बड़े दुःख से रो रहे हैं, किसी को कुत्ते काट रहे हैं, किसी को कीड़े काटते हैं। वे बड़े दारुण शब्द से रोते हैं, जिसे सुनकर बड़ी दया आती है। वैतरणी नदी में रुधिर बह रहा है, बहुत-से प्राणी उसमें उतारे जा रहे हैं। तपी हुई बालू में बहुत-से प्राणी तपाये जा रहे हैं। असिपत्र वन में, क्षार नदी में और क्षुरधारा आदि नरकों में प्राणियों को क्लेश दिया जा रहा है। कोई पानी माँगता है, कोई भूख के मारे चिल्ला रहा है। वे बड़े दीन-दुर्बल, उदास और मुर्दे के समान हो रहे हैं। उनकी देह सूख गई है और मैल लगा है। हज़ारों प्राणियों को इस प्रकार दुःख भोगते हुए उसने देखा। ११—१७। किसी-किसी को उत्तम घरों में गाते, बजाते और नाचते हुए भी देखा।

…वे लोग अपने कर्मों के प्रभाव से सुख भोग रहे थे। जिन लोगों ने …न्होंने गोदान दिया था, उनको गोरस, जिन्होंने अन्नदान दिया था, …न्हें अन्न, और जिन्होंने गृहदान किया था, वे उत्तम घरों में अपने …पुण्य का फल भोग रहे थे। बहुत-से धर्मात्माओं को देखा कि अनेक …प्रकार के अलंकारों से शोभित सुन्दरी स्त्रियों के साथ भोग-विलास …कर रहे थे और अपने तेज से प्रकाशित थे। १८—२०। महाबली …रावण ने दुःख भोगते हुए उन प्राणियों को अपने पराक्रम से छुड़ा …दिया। उनको एक मुहूर्त के लिए सुख मिला, जिसकी उन्हें कोई आशा …नहीं थी। महाप्रतापी रावण ने जब प्रेतों को बन्धन से छुड़ा दिया …तो यमराज के जो दूत उन प्रेतों की रक्षा करते थे, वे कुपित होकर …रावण की ओर दौड़े। सैकड़ों-हज़ारों वीर प्रास, परिघ, शूल, मुसल, …शक्ति, तोमर आदि अस्त्र-शस्त्र लेकर पुष्पक विमान पर प्रहार करने …लगे। उनके दौड़ने और प्रहार करने का शब्द सब दिशाओं में फैल …गया। जैसे भ्रमर फूल में लिपट जाते हैं, वैसे ही यमदूत पुष्पक विमान …के आसन, वेदी और तोरणादि को तोड़ने लगे। यद्यपि देवताओं के …बैठने योग्य वह विमान ब्रह्मा के प्रताप से अक्षय था तो भी उन दूतों ने …उसे बहुत हानि पहुँचाई। २१—२७। यमराज की सेना में एक लाख …सेनापति थे और सेना की संख्या नहीं की जा सकती। वृक्षों और …पर्वतों से युद्ध होने लगा। यमराज के सैनिकों और रावण के मन्त्रियों …में घमासान युद्ध हुआ। महावीर रावण भी युद्ध करता था। उसके …मन्त्री घायल होकर रुधिर से लथपथ हो गये, तो भी युद्ध करते …रहे। २८—३०। यमराज के महाबली दूत और रावण के मन्त्री एक …दूसरे पर प्रहार करते थे। फिर वे दूत मन्त्रियों को छोड़कर …रावण के ऊपर झपटे और अस्त्र-शस्त्र चलाने लगे। प्रहारों से रावण …की देह जर्जर कर दी। वह रुधिर से भीग गया और पुष्पक विमान …पर फूले हुए अशोक के समान शोभित हुआ। बलवान् रावण ने भी

शूल, गदा, प्रास, शक्ति, तोमर और बाण आदि चलाये। यमराज के दूतों ने उन अस्त्रों को तोड़ डाला और रावण के ऊपर प्रहार किये ३१-३६ जैसे बादल पर्वत के ऊपर पानी बरसाते हैं, वैसे ही यमदूतों ने शूल आदि अस्त्रों से रावण को श्वास लेना कठिन कर दिया। उसका कवच टूट गया और सब अंगों से रुधिर की धारा बह चली। तब वह पुष्पक विमान से पृथिवी पर गिर पड़ा। ३७-३८। थोड़ी देर में वह सचेत होकर कुपित यमराज के समान धनुष-बाण लेकर खड़ा हुआ। उसने पाशुपत बाण धनुष पर चढ़ाया और 'खड़े रहो, खड़े रहो' कहकर यमदूतों को ललकारा। कान तक धनुष की डोरी खींचकर बाण छोड़ दिया, जैसे त्रिपुर के ऊपर शंकर ने बाण चलाया था। वह बाण धुआँ सहित अग्नि के समान और ग्रीष्म ऋतु में वन को भस्म करती हुई दावाग्नि के समान था। वृक्षों को भस्म करता हुआ यमदूतों की ओर चला और उन सबको भस्म कर दिया। इन्द्रध्वज के समान वे सब वहीं गिर पड़े। महाबलवान् रावण अपने मन्त्रियों के साथ गरजने लगा। उसके महानाद से पृथिवी काँप उठी। ३९-४५।

सर्ग २२

रावण का महानाद सुनकर यमराज ने समझ लिया कि शत्रु की विजय हुई और हमारी सेना का विनाश हुआ। तब वे क्रोध से आँखें लाल करके अपने सारथि से बोले कि हमारा रथ शीघ्र ले आओ। सारथि उनकी आज्ञा से दिव्य रथ ले आया। महातेजस्वी यमराज उस पर सवार हुए। प्रास और मुद्गर हाथ में लेकर मृत्यु भी उनके आगे बैठ गई, जो काल आने पर सब प्राणियों का विनाश करती है। १-४। यमराज का कालदंड मूर्ति धारण कर उनकी बगल में बैठ गया। यह कालदंड यमराज का दिव्य अस्त्र है। अपने तेज से अग्नि के समान प्रकाशित

है। काल को कुपित देखकर तीनों लोक घबरा गये और देवता भी काँपने लगे। ५-६। सारथि ने घोड़ों को हाँका और रथ भयानक शब्द करता हुआ रावण के सामने चला। इन्द्र के घोड़ों के समान घोड़ों ने क्षण भर में यमराज को युद्धभूमि में पहुँचा दिया। ७-८। भयानक रथ और उस पर मृत्यु को बैठी हुई देखकर रावण के मन्त्री भाग खड़े हुए। उनमें लघु पराक्रम था। भय से पीड़ित हो गये। इस युद्ध के लिए हम समर्थ नहीं हैं, यह समझकर इधर-उधर भाग गये। किन्तु सब लोकों को भय देनेवाले यमराज का रथ देखकर रावण को कुछ भी भय न हुआ और न वह घबराया। यमराज ने पहुँचते ही बड़े क्रोध से शक्ति, तोमर आदि अस्त्र चलाकर रावण के मर्मस्थलों को पीड़ित कर दिया। रावण भी कुछ देर में स्वस्थ होकर बाण चलाने लगा। जैसे बादल पानी बरसाते हैं, वैसे ही यमराज के रथ पर उसने बाण बरसाये। यमराज ने सैकड़ों महाशक्तियाँ रावण की छाती में मारीं। रावण बहुत पीड़ित हो गया और अस्त्र न चला सका। यमराज ने अनेक प्रकार के अस्त्रों से उसे मूर्च्छित कर दिया। सात दिन तक वह बेहोश पड़ा रहा। ६-१५। उसके बाद जब उसे होश आया तब फिर युद्ध करने लगा। यमराज और रावण का तुमुल युद्ध हुआ। दोनों अपनी विजय चाहते थे और दोनों युद्ध से हटनेवाले नहीं थे। देवता, गन्धर्व, सिद्ध और ऋषिगण ब्रह्मा के साथ युद्ध देखने के लिए आये। यमराज और रावण का युद्ध प्रलयकाल के समान था। रावण वज्र के समान धनुष चढ़ाकर बाणों से आकाश को भरे देता था। उसने चार बाण मृत्यु के, सात बाण सारथि के और एक लाख बाण यमराज के मर्मस्थलों में मारा। १६-२०। तब यमराज को बड़ा क्रोध आया। उनके मुँह से धुआँ सहित आग की ज्वाला निकलने लगी। यह आश्चर्य देखकर देवताओं, दानवों तथा मृत्यु और काल को बड़ा हर्ष हुआ। मृत्यु कुपित होकर यमराज से बोली—आप हमको छोड़ दीजिए, हम इस पापी राक्षस को मार डालें। यह राक्षस

जीवित न बचेगा। हमारा यह स्वभाव ही है। हिरण्यकशिपु, नमुचि, शम्बर, निसन्दि, धूम्रकेतु, बलि, शुम्भ, वृत्रासुर, बाणासुर इत्यादि दैत्यों का, राजर्षि, शास्त्रवित्, गन्धर्व, नाग, ऋषि, पन्नग, दानव, यक्ष, अप्सराएँ और युगान्त के समय समुद्र, पर्वत, वन, नदी और वृक्षों सहित पृथिवी का हम विनाश करती हैं। २१–२७। बड़े-बड़े बलवान् हमारी दृष्टिमात्र से जीवित नहीं बचे, तो इस निशाचर की क्या गिनती है। इसलिए हमको छोड़ दीजिए, हम इसे मार डालें। हमारे देखने पर कैसा ही बलवान् क्यों न हो, जीवित नहीं रह सकता। मैं अपने बल की प्रशंसा नहीं करती हूँ, किन्तु यह स्वाभाविक बात है। ऐसी ही मर्यादा है। २८–३०। उसके यह वचन सुनकर यमराज ने कहा—तुम ठहरो, इसे हम अभी मारे डालते हैं। यह कहकर बड़े क्रोध से यमराज ने कालदंड उठाया। कालदंड कभी निष्फल नहीं होता। उसको देखने से ही प्राणियों के प्राण निकल जाते हैं, फिर उसके प्रहार से बचने की बात ही क्या है। यमराज के उठाते ही रावण को भस्म करता हुआ कालदंड प्रज्वलित हो उठा। यह देखकर सब राक्षस युद्ध से भाग गये। यमराज को कालदंड उठाये देखकर देवता भी घबराये। ३१–३६। यह देखकर पितामह ब्रह्मा यमराज के सामने आकर बोले—हे महाबाहु धर्मराज, हे अमितविक्रम, इस राक्षस को कालदंड से न मारो; क्योंकि हमने इसे वरदान दिया है। हमारे वचन असत्य न करो। हमारे वचनों को जिसने असत्य किया, उसने मानों तीनों लोकों को असत्य कर दिया। इसमें कोई सन्देह नहीं। ३७–४०। कुपित होकर जब तुम कालदंड को छोड़ते हो तो यह प्रिय-अप्रिय का विचार नहीं करता। सब प्रजाओं का विनाश करता है। यह बड़ा भयानक है, तीनों लोक इससे डरते हैं। यह कभी निष्फल नहीं होता। तीनों लोकों की मृत्यु के लिए इसकी सृष्टि हमने की है। इसलिए हे सौम्य, रावण के ऊपर इसे न चलाओ। इसके प्रहार से यदि रावण मर जायगा तो हमारा वचन

असत्य होगा और यदि न मरेगा तो भी असत्य होगा। क्योंकि इस कालदंड को भी निष्फल न होने का वचन हमने दिया है और रावण को मनुष्यों के अतिरिक्त सब प्राणियों से अवध्य कर दिया है।४१–४४। इसलिए सब लोकों की ओर ध्यान देकर रावण के ऊपर कालदंड न चलाओ और हमारे वचन सत्य करो। ब्रह्मा के यह कहने पर धर्मराज ने उत्तर दिया—आप सब लोकों के स्वामी हैं, सबको उत्पन्न करनेवाले हैं, आपकी आज्ञा से हम कालदंड को रखते हैं। क्योंकि जब आपके वरदान के प्रभाव से हम इसे मार ही नहीं सकते तो इससे युद्ध करना व्यर्थ है। इसलिए अब हम अदृश्य होते हैं, यह कहकर घोड़ों और रथ सहित यमराज अन्तर्धान हो गये।४५–४८। रावण यमराज को पराजित करके अपना नाम सुनाकर पुष्पक विमान पर सवार हुआ और यमलोक से चला। यमराज भी ब्रह्मा आदि सब देवताओं के साथ स्वर्ग को चले गये। महामुनि नारद भी हर्षित होकर चले।४९–५०।

सर्ग २३

देवताओं में श्रेष्ठ धर्मराज को जीतकर रावण ने अपने मन्त्रियों की ओर देखा। रावण को आयुधों के प्रहार से जर्जर, रुधिर से लथपथ देखकर मारीच आदि राक्षसों को बड़ा विस्मय हुआ। वे सब रावण की जय बोलने लगे। रावण ने उनको पुष्पक विमान पर बैठा लिया और सान्त्वना दी। उसके बाद वह दैत्यों और नागों को जीतने के लिए समुद्र के मार्ग से रसातल को चला। १–४। वासुकि नाग से सुरक्षित भोगवती नगरी को गया और नागों को अपने अधीन करके मणिमयी पुरी को चला। वहाँ निवातकवच जाति के दैत्य रहते थे। उनको ब्रह्मा का वरदान मिला था। रावण ने युद्ध के लिए उनको ललकारा। वे बड़े पराक्रमी, युद्ध में उत्साही और बलवान् थे। अनेक प्रकार के अस्त्र-शस्त्र धारण करते थे। राक्षसों और दानवों का युद्ध होने

लगा। दोनों ओर से शूल-त्रिशूल, कुलिश, पट्टिश, खड्ग और परशु के प्रहार होने लगे। ५—८। कुछ अधिक एक वर्ष तक संग्राम हुआ, किन्तु किसी की जय-पराजय न हुई। तब पितामह ब्रह्मा विमान पर चढ़कर वहाँ आये और युद्ध करते हुए निवातकवचों को रोककर बोले—युद्ध में इस रावण को देवता दैत्य कोई भी नहीं जीत सकता और न तुम लोगों को ही कोई परास्त कर सकता है। इसलिए राक्षसों से मित्रता कर लो। मित्रता हो जायगी तो कोई किसी को परास्त करना न चाहेगा; क्योंकि मित्रों के कोई पदार्थ बँटे नहीं होते। ब्रह्मा की आज्ञा से अग्नि को साक्षी करके निवातकवचों के साथ रावण की मित्रता हुई। रावण बड़ा प्रसन्न हुआ। निवातकवचों ने उसका बड़ा सम्मान किया और वह एक वर्ष तक अपने घर की तरह वहाँ रहा। ६—१५। उसने निवातकवचों से एक सौ प्रकार की माया सीखीं। फिर वह वरुण की पुरी ढूँढ़ने के लिए रसातल को चला। मार्ग में अश्मनगर मिला, जहाँ कालका जाति के दैत्य रहते थे। बलवान् कालकेयों को उसने मार डाला। शूर्पणखा के पति को और अपने साले विद्युज्जिह्व को भी मार डाला। एक मुहूर्त में चार सौ दैत्यों का उसने विनाश किया। आगे चलकर कैलास पर्वत और सफ़ेद बादलों के समान चमकता हुआ वरुण का नगर देखा। १६—२०। जिसके दूध से क्षीरोद समुद्र हुआ है, उस सुरभि को भी देखा। क्षीरसमुद्र को भी देखा, जहाँ से चन्द्रमा उत्पन्न हुआ है और फेनपायी नाम के महर्षि जिसके आश्रित रहते हैं। स्वधा और अमृत भी उसी से उत्पन्न हुए हैं। रावण ने सुरभि की प्रदक्षिणा की। फिर वह शरदृऋतु के बादलों के समान चमकते हुए, बहुत बड़ी सेना से सुरक्षित, वरुणालय को गया। २१—२५। वरुण के सेनापतियों ने रावण के ऊपर प्रहार तो बहुत किये, किन्तु रावण ने सबको परास्त कर दिया और उनसे बोला कि वरुण से हमारा सन्देश कहो—

करने के लिए आया है, या तो हमसे युद्ध करें, अथवा
युद्ध करने के लिए आया है, या तो हमसे युद्ध करें, अथवा
जोड़कर हार मानें। २६—२७। यह सुनकर महात्मा वरुण के
पौत्र और उनके सेनापति अपनी सेनाओं के साथ बड़े वेग से
नेवाले रथों पर सवार होकर निकले। वरुण के पुत्रों के साथ रावण
बड़ा घोर युद्ध हुआ। २८—३०। रावण के मन्त्रियों ने एक मुहूर्त
उनकी सेना का विनाश कर दिया। वरुण के पुत्रों ने बड़ी वीरता
युद्ध किया, किन्तु रावण के बाणों से पीड़ित होकर युद्ध छोड़कर
गये।३१-३२। फिर वे लोग अपने रथों सहित आकाश को चले
। पुष्पक विमान पर बैठे हुए रावण का उनके साथ देवताओं और
नवों के युद्ध के समान, आकाश में तुमुल युद्ध हुआ।३३—३४। अग्नि
समान, तीक्ष्ण बाणों से उन लोगों ने रावण को पराजित कर
और वे बड़े हर्ष से गरजे। रावण को परास्त देखकर उसका मन्त्री
होदर प्राणों का भय छोड़कर बड़े क्रोध से उनकी ओर देखने लगा।
यद्यपि वे लोग इच्छानुसार चलनेवाले रथों पर सवार थे, जो पवन
समान वेग से चलते थे, किन्तु महोदर ने बड़े क्रोध से ऐसी एक
मारी जिससे वे सबके सब सारथि, घोड़े और रथों सहित पृथिवी
गिर पड़े। इस तरह वरुण के पुत्रों को महोदर ने परास्त किया
और वह बड़े ज़ोर से गरजने लगा। विरथ हो जाने पर भी महात्मा
वरुण के बलवान् पुत्र व्यथित नहीं हुए और अपने प्रभाव से फिर
आकाश में खड़े हो गये।३५—४०। उन्होंने बाणों से महोदर को घायल
कर दिया, और क्रुद्ध होकर रावण के ऊपर बाण बरसाने लगे। रावण के
ऊपर वज्र के समान बाणों की ऐसी वर्षा कर दी, जैसे बादल पर्वत पर
पानी बरसाते हैं। ४१—४२। तब रावण को बड़ा क्रोध आया। वह
क्रोध से कालाग्नि के समान भयानक होकर उनके मर्मस्थल में बहुत
से बाण मारे। सैकड़ों मुसल, भाले, पट्टिश, शक्ति, शतघ्नि आदि
भयानक अस्त्र उनके ऊपर चलाये। इन अस्त्रों से वरुण के पुत्र बहुत

पीड़ित हुए, जैसे साठ वर्ष का हाथी दलदल में फँस जाने से पीड़ित होता है। ४३—४५। वरुण के पुत्रों को व्याकुल देखकर महाबलवान् रावण बादल के समान गरजने लगा। जैसे बादल पानी बरसाते हैं वैसे ही वह बाण बरसाने लगा। वरुण के पुत्र फिर पृथिवी पर गिर पड़े और उनके अनुचर उठाकर घर को ले गये। ४६—४८। रावण ने उन लोगों से भी पुकार कर कहा—कि हमसे युद्ध करें। यह सुनकर प्रहास नामक वरुण का मन्त्री बोला—जिनको तुम युद्ध के लिए बुलाते हो वे महाराज वरुण ब्रह्मलोक को संगीत सुनने गये हैं।४६—५०। हे वीर, महाराज वरुण तो हैं नहीं, उनके वीर पुत्रों को तुमने पराजित कर दिया। अब वृथा क्यों परिश्रम करते हो। यह सुनकर रावण बड़ा प्रसन्न हुआ, अपना नाम सुनाकर बड़े हर्ष से गरजा और वहाँ से चल दिया। जिधर से आया था, उसी ओर आकाशमार्ग से लंका को चला गया। ५१—५३।

प्रक्षिप्त सर्ग १

उसके बाद रावण राक्षसों की सेना लेकर अश्म नगर को गया। वहाँ एक दिव्य भवन था। उसके फाटक में वैदूर्य मणि और मोती जड़े थे, खम्भे सुवर्णमय थे, वेदिकाएँ शोभित थीं, स्फटिक मणियों और हीरों से जटित सीढ़ियाँ बनी थीं। वह इन्द्र-भवन के समान सुरम्य था। बहुत से आसन रक्खे थे। सुमेरु और मन्दराचल के समान रमणीय उस भवन को देखकर रावण ने प्रहस्त से कहा—तुम शीघ्र जाकर मालूम करो, यह किसका भवन है। प्रहस्त उसकी आज्ञा से उस घर के भीतर गया। द्वार पर किसी को न देखकर वह सात कक्ष्या तक चला गया। वहाँ उसे एक प्रकाश दिखाई दिया; उस प्रकाश में सूर्य के समान महातेजस्वी, सुवर्ण की माला पहने एक पुरुष देख पड़ा। वह यम के समान भयानक था। प्रहस्त को देखकर वह हँसने

गया, और प्रहस्त उसका अट्टहास सुनकर बहुत डरा, उसके रोयें खड़े हो गये। वह चुपचाप वहाँ से लौट आया और रावण से यह वृत्तान्त उसने कहा। तब काजल के ढेर के समान काला रावण पुष्पक विमान से उतरकर उस घर में प्रवेश करने की इच्छा से चला। १—१०। द्वार पर पहुँचते ही हाथ में लोहमय मुद्गर लिये, एक तेजस्वी पुरुष ने उसे रोक लिया। उस पुरुष के सिर पर चन्द्रमा शोभित था, उसकी जीभ अग्नि की ज्वाला के समान थी। उसकी आँखें लाल, होठ बिम्बफल के समान, दाँत बहुत सुन्दर, ग्रीवा शंख के समान, नासिका महाभीषण, दाढ़ी में घने बाल, शरीर मांसल और दाढ़ें विकराल थीं। उसे देखकर रावण डर गया, उसके रोयें खड़े हो गये और हृदय काँप उठा। उसे अशुभ निमित्त भी देख पड़े, तब उसे बड़ी चिन्ता हुई। रावण को चिन्तित देखकर वह पुरुष बोला—हे राक्षस, तुम किस सोच में पड़ गये। सावधान हो जाओ, हम तुम्हारा युद्ध-आतिथ्य करेंगे। अथवा यदि तुम राजा बलि से युद्ध करना चाहते हो, तो वैसा कहो। ११—१७।

उसके यह वचन सुनकर रावण और भी डर गया। फिर वह धैर्य के साथ बोला—हे बोलनेवालों में श्रेष्ठ! इस घर में कौन रहता है? हम उसी के साथ युद्ध करना चाहते हैं, अथवा जैसा तुम्हारा विचार हो। उस पुरुष ने उत्तर दिया—इस सुरम्य भवन में दानवों के स्वामी राजा बलि रहते हैं। वे परम उदार, महापराक्रमी, महाशूर, महागुण-वान्, काल-पाश लिये हुए यमराज के समान भीषण, सूर्य के समान तेजस्वी, युद्ध से न भागनेवाले, क्रोधी, दुर्जय, विजयी, प्रियवादी, सौम्य-दर्शन, धीर और स्वाध्याय-निरत हैं। युद्ध में वे किसी से नहीं डरते। यदि तुम उनसे युद्ध करना चाहते हो तो इस घर के भीतर चले जाओ। विलम्ब करने का कुछ काम नहीं है। तब रावण उस घर के भीतर गया। उसे देख-कर अग्नि के समान तेजस्वी राजा बलि हँसने लगे। फिर उन्होंने उसे पकड़कर गोद में बैठा लिया और कहा—हे दशानन! बताओ, तुम किस

प्रयोजन से आये हो। जो तुम्हारी इच्छा हो वह कहो। १८–२९।

रावण बोला—हे महाभाग, सुनते हैं कि विष्णु ने तुमको बाँध लिया है, इस बन्धन से तुमको हम छुड़ा सकते हैं, इसमें बिलकुल सन्देह नहीं है। रावण की यह बात सुनकर राजा बलि बहुत हँसे और फिर उससे बोले—हे रावण! सुनो, हम तुम्हारे प्रश्न का उत्तर देते हैं। यह जो साँवला पुरुष द्वार पर खड़ा है, इसी ने दानवों के महाबलवान् राजाओं को अपने वश में कर लिया है। इसी ने मुझको भी बाँधा है। इसे कोई नहीं जीत सकता। यह कृतान्त से भी बढ़कर भीषण है। संसार में ऐसा कौन है, जो इसे परास्त कर सके। सृष्टि की उत्पत्ति, पालन-पोषण और संहार यही करता है। यह तीनों लोकों का स्वामी है। इसे तुम नहीं जान सकते और मैं भी इसे नहीं जानता। यही कलि है, यही काल है। यही स्थावर जंगम सब प्राणियों का विनाश करता है। इसका आदि अन्त नहीं है। यज्ञ, होम और दान का विधान करनेवाला यही है। यह तीनों लोकों का स्वामी है, सबका रक्षक है, सम्पूर्ण विश्व में इसके समान और कोई प्राणी नहीं है। हमारा तुम्हारा और संसार के सभी प्राणियों का नेता यही है। ३०–४०। वृत्र, दनु, शुक्र, शम्भु, शुम्भ, निशुम्भ, कालनेमि, प्राह्लादि, कूट, वैरोचन, मृदु, यमलार्जुन, कंस और मधुकैटभ आदि बड़े बड़े बलवान् दानव हो गये हैं। वे चन्द्रमा के समान प्रकाशमान, अग्नि और सूर्य के समान तेजस्वी, पवन के समान वेगवान् और इन्द्र के समान बलवान् थे। उन लोगों ने सैकड़ों यज्ञ किये, घोर तप किया, सब ऐश्वर्य प्राप्त किये, सब प्रकार के भोग किये, याचकों को दान दिया, वेद का अध्ययन और प्रजा का पालन किया। अपने पक्षवालों की रक्षा की, शत्रुओं का विनाश किया। तीनों लोकों में ऐसा कोई न था, जो उनसे युद्ध कर सके। वे महात्मा और योग-धर्मी थे, सब विद्याओं और सब शास्त्रों के पारगामी थे। अच्छे कुल में उनका जन्म हुआ, संग्राम

वे हारकर कभी नहीं भागे, हज़ारों बार देवताओं को परास्त किया, देवताओं के समान सब लोकों के शासक थे। वे देवताओं के शत्रु और सूर्य के समान तेजस्वी थे। उन सब दानवों को इसी पुरुष ने परास्त किया है। इसने किसी न किसी उपाय से उन सबका विनाश कर दिया। ४१–५२। उसके बाद राजा बलि ने रावण से फिर कहा— हे वीर, अग्नि के समान प्रकाशित जो यह चक्र देखते हो, इसे उठाकर हमारे पास लाओ। उसके बाद मैं तुमको अनुमति दूँगा। उठो, अब विलम्ब न करो। यह सुनकर बलवान् रावण हँसता हुआ उस चक्र के पास गया। हे रघुनन्दन, अपने बल के गर्व से रावण उसे उठाने लगा, किन्तु किसी उपाय से भी वह उसके हिलाये न हिला, तब वह लज्जित होकर उसको ढकेलने लगा। उस चक्र के हिलते ही बलवान् रावण कटे हुए साल के वृक्ष के समान गिर पड़ा, और उसकी देह से रुधिर बहने लगा। यह देखकर उसके मन्त्री हाहाकार करने लगे। रावण दो घड़ी तक बेहोश पड़ा रहा। होश आने पर लज्जा से मुँह नीचे करके बैठ गया। तब राजा बलि ने उससे कहा—हे राक्षसेन्द्र, अब यहाँ आओ और हमारी बात सुनो। यह मणि-जटित कुंडल जिसे तुम उठाना चाहते थे, हमारे पूर्वज हिरण्यकशिपु के कान का आभूषण है। यह कुंडल यहाँ पृथिवी पर गिरा और दूसरा कुंडल पर्वत के शिखर पर। युद्ध करते हुए उनके मुकुट भी पृथिवी पर गिरे थे। हिरण्यकशिपु हमारे प्रपितामह थे। काल, मृत्यु, और व्याधि, कोई भी उन्हें नहीं मार सकता था। दिन में, रात्रि में अथवा सन्ध्या के समय, जल में, स्थल में, किसी भी अस्त्र-शस्त्र से उनकी मृत्यु नहीं थी। उनसे और प्रह्लाद से विवाद हो रहा था, उसी समय नृसिंह-रूपधारी एक भयानक वीर पुरुष उत्पन्न हुआ। उस पुरुष को देखकर चराचर जगत् को बड़ा भय हुआ। उस वीर पुरुष ने दोनों हाथों से हिरण्यकशिपु को पकड़ लिया और अपनी जाँघ पर रखकर उनका पेट चीर डाला। महापराक्रमी

हिरण्यकशिपु परलोक को चले गये। यह वही पुरुष है, जो हमारे द्वार पर खड़ा रहता है। यह सब देवताओं का भी पूज्य है। सब महर्षि, सब देवता और हज़ारों इन्द्र इसके वश में हैं। ५३–७१।

राजा बलि के यह कहने पर रावण बोला—मैंने मृत्यु को और प्रेतों के राजा यमराज को भी देखा है। उनका रूप बड़ा भयानक, रोयें ऊपर के खड़े और हाथ में कालपाश धारण किये हैं। दाढ़ें विकराल, जीभ चमकती हुई बिजली के समान, रोयें साँप और बिच्छू के समान हैं। उनकी लाल-लाल आँखें देखकर सब प्राणियों को भय होता है। उनका रूप प्रचंड सूर्य के समान तेजस्वी है। उनकी ओर देखने का साहस कोई नहीं कर सकता। उनको भी हमने परास्त कर दिया। उनको देखकर हमें कुछ भी भय न हुआ। हे दानवेन्द्र, जिस पुरुष की आप प्रशंसा करते हैं उसे मैं नहीं जानता। विस्तार के साथ उसका परिचय बताइए।७२–७६।

राजा बलि ने कहा—यह पुरुष तीनों लोकों को धारण करता है, यह सबका स्वामी और अन्तर्यामी है। इसका विनाश कभी नहीं है। यह सांख्य शास्त्र का उपदेशक, विजयी, नृसिंह-रूपधारी, महातेजस्वी, यज्ञों का अधिष्ठाता और पाशधारी भयानक यम-रूप है। द्वादश आदित्य के समान तेजस्वी, देवताओं में श्रेष्ठ और देवताओं का भी अधीश्वर है। सब लोकों की सृष्टि, पालन और संहार यही करता है। यही यज्ञ-रूप, याजकरूप और यही चक्रायुधधारी है। यह सर्वदेवमय, सर्वभूतमय, सर्वलोकमय और सर्वज्ञानमय है। तीनों लोकों का नायक और अविनाशी है। मोक्ष चाहनेवाले ऋषि लोग इसी पुरुष का ध्यान करते हैं। जो इस पुरुष को जानता है, उसके सब पाप छूट जाते हैं। जो इसके नामों का स्मरण और गुणों का कीर्तन करता है, उसकी सब कामनाएँ पूरी होती हैं।

राजा बलि के यह वचन सुनकर महाबलवान् रावण को बड़ा क्रोध आया। वह अपने अस्त्र उठाकर बड़ी शीघ्रता से उस पुरुष की ओर झपटा, किन्तु उस पुरुष ने यह विचारकर कि इस पापी को ब्रह्मा ने वर-

[दे]खान दिया है, अतएव उनका सम्मान करने के लिए अभी इसका वध [क]रना उचित नहीं है, यह सोचकर वह अन्तर्धान हो गया। रावण [उ]स स्थान पर उस पुरुष को न देखकर बड़े हर्ष से गरजा, और जिस मार्ग [स]े राजा बलि के पास गया था, उसी मार्ग से चला आया। ७७—८६।

प्रक्षिप्त सर्ग २

उसके बाद रावण पुष्पक विमान पर बैठकर सूर्यलोक को चला। [उ]स विमान की गति सूर्य के रथ के समान थी। वह बड़े वेग से [ज]ाकर सुमेरु पर्वत के शिखर पर पहुँचा। वहाँ एक रात ठहरकर वह [सू]र्यलोक को चला गया। सर्वतेजोमय, रत्नजटित सुवर्णमय आभूषण [सब] अंगों में धारण किये, लाल चन्दन लगाये, सहस्र किरणों से [श]ोभित, उच्चैःश्रवा घोड़े पर सवार आदित्य भगवान् को देखकर रावण [न]े प्रहस्त से कहा—हे अमात्य, तुम हमारी आज्ञा से जाकर सूर्यदेव [स]े कहो कि रावण युद्ध के लिए आया है। उनसे आप युद्ध कीजिए, [अ]थवा यदि युद्ध करने की सामर्थ्य आपमें न हो, तो पराजित होना [स्व]ीकार कीजिए। यही दो पक्ष हैं। १—८। रावण की आज्ञा से प्रहस्त सूर्य [क]े पास गया, और उनके पिंगल और दंडी नामक द्वारपालों से उसने [र]ावण का सन्देश कहा। दंडी ने सूर्य के पास जाकर प्रणाम करके यह [ह]ाल बताया। बुद्धिमान् सूर्य ने दंडी को उत्तर दिया कि तुम जाकर उसे [प]रास्त करो, अथवा यही कह दो कि पराजित हुए। अथवा तुम लोगों [क]ा जो विचार हो सो करो, पर विलम्ब करने का काम नहीं। दंडी ने [ज]ाकर वही बात राक्षसराज से कह दी। यह सुनकर वह अपनी विजय [क]ा डंका बजाता हुआ वहाँ से चल दिया। ९—१४।

प्रक्षिप्त सर्ग ३

उसके बाद रावण एक रात सुमेरु पर्वत के शिखर पर निवास करके

चन्द्रलोक को गया। मार्ग में उसे एक रथ देख पड़ा, उस रथ पर दिव्य चन्दन और दिव्य माला धारण किये एक पुरुष बैठा था। दिव्य अप्सराएँ भी उसके साथ थीं। अप्सराओं के साथ क्रीड़ा करके वह थक गया था और उनकी गोद में सो गया था। रावण कौतूहल वश उस पुरुष को देखने लगा। उसी समय पर्वत नामक ऋषि उधर से आ निकले। उनको देखकर रावण ने कहा—हे देवर्षि, आपका स्वागत है। अच्छे समय में आपके दर्शन हुए। कृपा करके यह बताइए कि यह कौन पुरुष रथ पर बैठा हुआ अप्सराओं के साथ निर्लज्ज के समान जा रहा है। यह ऐसा असावधान है कि भय के स्थान को नहीं समझता। ऋषि ने उत्तर दिया—यह बड़ा तपस्वी पुरुष है। इसने अपनी तपस्या से ब्रह्मा को सन्तुष्ट कर लिया है, सब लोकों को जीत लिया है। अब यह मोक्ष प्राप्त करने के लिए जाता है। यह आपही के समान तपोबल से तीनों लोकों को जीतकर सोमरस का पान करके जा रहा है। हे राक्षसराज, आप शूर हैं, सत्यपराक्रमी हैं। ऐसे धर्मात्मा पुरुषों पर आप-जैसे बलवान् लोग क्रोध नहीं करते। १–६। उसके बाद रावण ने एक और महातेजस्वी पुरुष को देखा, वह भी रथ पर सवार था, अपने शरीर के तेज से देदीप्यमान था। उसके साथ किन्नर और गन्धर्व नाचते-गाते थे, अनेक प्रकार के बाजा बजते थे। उसके विषय में भी रावण ने पर्वत मुनि से पूछा—हे देवर्षि, यह कौन जा रहा है। महर्षि ने उत्तर दिया—यह बड़ा वीर योद्धा है, युद्ध से कभी नहीं भागता। इसने अपने स्वामी के लिए युद्ध करके शत्रुओं को परास्त किया है, और स्वामी के ही कार्य के लिए युद्ध में अपने प्राण दे दिये हैं। उसी पुण्य के प्रताप से अब इन्द्रलोक, अथवा दूसरे पवित्र लोकों को जा रहा है। १०–१४। उसी समय रावण ने सूर्य के समान तेजस्वी एक और पुरुष को देखा और पर्वत मुनि से पूछा कि यह कौन है? मुनि ने कहा—हे राजन्, यह सुवर्णमय विमान पर, पूर्ण चन्द्रमा के

समान सुन्दर मुखवाला, विचित्र वस्त्र और आभूषणों से शोभित, महातेजस्वी कोई महाराजा है। तब रावण ने कहा—ये लोग कहाँ जाते हैं, मुझे बताइए। क्या इनमें से कोई मुझसे युद्ध करेगा? हे धर्मज्ञ, आप मेरे पिता के समान पूज्य हैं। मुनि ने कहा—ये लोग युद्ध नहीं करेंगे, ये तो स्वर्गलोक को जा रहे हैं। तुमसे युद्ध करने के लिए जो पुरुष समर्थ है उसे मैं बताता हूँ। महातेजस्वी मान्धाता सातों द्वीपों के राजा हैं। वे तुमसे युद्ध करेंगे। तुम उनके पास जाओ। १५—२२।

रावण ने पूछा—हे महर्षि, वह मान्धाता कहाँ रहता है, उसका पता बताइए तो मैं उसके पास जाऊँ। पर्वत मुनि ने कहा—वे युवनाश्व के पुत्र हैं। समुद्र पर्यन्त पृथिवी के राजा हैं। सातों द्वीपों के विजयी महाराज मान्धाता अभी यहाँ आवेंगे। थोड़ी ही देर बाद महापराक्रमी रावण ने अयोध्या के राजा मान्धाता को देखा। वे सुवर्णमय विमान पर बैठे थे। दिव्य चन्दन लगाये, पुष्पमाला धारण किये, अपने तेज से प्रकाशित हो रहे थे। उनको देखते ही रावण बड़े गर्व से बोला—तुम मुझसे युद्ध करो। मान्धाता ने हँसकर उत्तर दिया—यदि तुमको अपना जीवन प्रिय नहीं है, तो आओ युद्ध कर लो। रावण बोला—वरुण, कुवेर और यम से तो मैं डरा नहीं, फिर तुम-जैसे मनुष्य से मैं कब डरने लगा। मान्धाता से यह कहकर उसने राक्षसों को युद्ध करने की आज्ञा दी। दुरात्मा रावण के मन्त्री क्रुद्ध होकर बाण चलाने लगे। वे युद्ध-विद्या में बड़े निपुण थे। बलवान् राजा मान्धाता ने पैने बाणों से प्रहस्त, शुक, सारण, महोदर, विरूपाक्ष और अकम्पन आदि राक्षसों को घायल कर दिया। प्रहस्त ने मान्धाता के ऊपर बहुत-से बाण चलाये, किन्तु उन्होंने अपने पैने बाणों से बीच ही में उसके बाणों को काट डाला। जैसे आग फूस के घर को जला देती है, वैसे ही मान्धाता ने भुशुंडी, भाला, भिन्दिपाल और तोमर से राक्षसी सेना का

संहार कर दिया। २३—३६। फिर उन्होंने पाँच तोमरों के प्रहार से रावण को उसी प्रकार पीड़ित किया, जैसे कुमार ने अपनी शक्ति से क्रौंच पर्वत को विदीर्ण किया था। फिर यमदंड के समान मुद्गर को कई बार घुमाकर रावण के रथ पर दे मारा। वज्र के समान बड़े वेग से वह मुद्गर रावण के ऊपर गिरा और वह इन्द्रध्वज के समान रथ से गिर पड़ा। यह देखकर राजा मान्धाता वैसे ही प्रसन्न हुए जैसे पूर्ण चन्द्रमा को देखकर समुद्र प्रसन्न होता है। राक्षसी सेना में हाहाकार मच गया। सब राक्षस रावण को घेरकर खड़े हो गये। थोड़ी देर में जब वह स्वस्थ हुआ तो उसने भी अपने प्रहार से मान्धाता को मूर्च्छित कर दिया। तब राक्षस भी प्रसन्न होकर सिंह के समान गरजने लगे। किन्तु एक मुहूर्त में ही मान्धाता स्वस्थ हो गये और मन्त्रियों के साथ रावण को देखकर बड़े क्रोध से बाणों की वर्षा करने लगे। राक्षस उनकी मार न सह सके, उनकी सेना उमड़ते हुए समुद्र के समान भाग खड़ी हुई। ३७—४६। बड़ा घोर युद्ध हुआ। महात्मा मान्धाता और रावण दोनों महापराक्रमी थे। धनुष, बाण और खड्ग धारण किये हुए थे, बड़े क्रोध से प्रहार करते थे, दोनों के ही शरीर घायल हो गये थे। फिर रावण ने रौद्र बाण धनुष पर चढ़ाकर छोड़ा। राजा ने आग्नेय अस्त्र से उसे व्यर्थ कर दिया। रावण ने गान्धर्व अस्त्र का प्रहार किया, राजा ने वारुण अस्त्र से उसका निवारण कर दिया। तब रावण ने ब्रह्मास्त्र उठाया। यह देखकर मान्धाता ने पाशुपत अस्त्र निकाला, वह बड़ा ही भयानक था, वह तीनों लोकों को पीड़ित कर सकता था। कठिन तपस्या करने पर भगवान् रुद्र से वह प्राप्त हुआ था। उसे देखकर सब प्राणी घबरा गये। तीनों लोक काँपने लगे, देवता भी घबराये, नाग इधर-उधर छिप रहे। सब लोकों को पीड़ित देखकर महर्षि पुलस्त्य और गालव ने ध्यान करके देखा, और उन्होंने शीघ्र ही वहाँ आकर राजा मान्धाता को मना किया। रावण

को भी समझाया और उसकी बहुत निन्दा की। उन दोनों ऋषियों ने राजा मान्धाता और रावण की सन्धि करा दी, और वे बड़े हर्ष से अपने-अपने मार्ग से चले गये। ४७—५६।

प्रक्षिप्त सर्ग ४

पुलस्त्य और गालव भी अपने स्थान को चले गये। राक्षसराज रावण पृथिवी से दस हज़ार योजन ऊपर, जहाँ हंस रहते हैं, वायु के मार्ग से चला। फिर वह वहाँ से भी दस हज़ार योजन ऊपर चला गया। वहाँ आग्नेय पक्षी और ब्रह्म मेघों के सिवा और किसी की गति नहीं है। फिर वह उससे भी दस हज़ार योजन ऊपर चला गया, जहाँ सिद्ध और चारणगण विचरते हैं। वहाँ से वह और दस हज़ार योजन ऊपर जहाँ विनायक और भूत रहते हैं, उस वायु के मार्ग पर पहुँचा। यह वायु का चौथा मार्ग है। उससे भी दस हज़ार योजन ऊपर वायु के पाँचवें मार्ग में जहाँ नदियों में श्रेष्ठ आकाश-गंगा है और कुमुद आदि दिग्गज रहते हैं, वे गंगा में विहार करते हैं, उस स्थान में सूर्य की किरणों से उष्ण और वायु के झोंकों से स्वच्छ होकर जल बरसता है और बर्फ़ भी जम जाती है, उस मार्ग से रावण चला। १—१०। वहाँ से भी दस हज़ार योजन ऊपर गरुड़ के मार्ग में वह चला गया। फिर उससे भी दस हज़ार योजन ऊपर जहाँ सप्तऋषि रहते हैं, उस मार्ग से चला। फिर वह वायु के आठवें मार्ग में चला गया, जहाँ पवनदेव आकाश-गंगा को धारण किये हैं और गंगा का शब्द बड़े वेग से होता है। उसके ऊपर चन्द्रमा का मार्ग है, वहाँ चन्द्रमा ग्रह और नक्षत्रों के साथ भ्रमण करते हैं। चन्द्रमंडल से हज़ारों किरणें निकलकर सब लोकों में प्रकाश और सब प्राणियों को सुख देती हैं। रावण को देखकर चन्द्रमा को बड़ा क्रोध आया। उन्होंने अपनी शीतल किरणों से सब राक्षसों को पीड़ित कर दिया। प्रहस्त आदि उसके

मन्त्री व्याकुल होकर रावण से बोले—हे राजन्, हम लोग चन्द्रमा के इस शीत को नहीं सह सकते, इसलिए यहाँ से लौट जायँगे। ये सब राक्षस बहुत डर गये हैं। ११–२०। यह सुनकर रावण को बड़ा क्रोध आया, उसने अपने बाणों से चन्द्रमा को पीड़ित कर दिया। यह देखकर ब्रह्मा चन्द्रलोक को आये और रावण से बोले—हे दशानन, तुम विश्रवा मुनि के पुत्र हो और चन्द्रमा ब्राह्मणों के राजा हैं, अपने प्रकाश से सब लोकों का हित करते हैं, इसलिए तुम इनको न मारो। हम एक मन्त्र तुमको देते हैं, प्राणान्त के समय इसका स्मरण करने से मृत्यु नहीं होती। रावण हाथ जोड़कर बोला—हे लोकनाथ, यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं तो मुझे वह मन्त्र बताइए। इस मन्त्र को जपकर मैं सब देवताओं से निर्भय हो जाऊँगा। अब आपकी कृपा से देवता, दानव और पक्षी, कोई भी मुझे परास्त नहीं कर सकेगा। २१–२७। ब्रह्मा ने कहा—यह मन्त्र सदैव नहीं जपा जाता। मृत्यु का भय होने पर ही इसका जप करना चाहिए। रुद्राक्ष की माला लेकर इस मन्त्र का जप करने से तीनों लोकों में कोई भी उसे परास्त नहीं कर सकता। हे राक्षसराज, इस मन्त्र का जप किये विना तुम्हारे मनोरथ सिद्ध नहीं हो सकते। २८–३०। वह मन्त्र यह है—हे देवदेवेश, हे सुरासुर-नमस्कृत आपको नमस्कार है। हे भूतभव्य, हे महादेव, हे पिंगल-लोचन, आप बाल-वृद्ध स्वरूप हैं, व्याघ्रचर्मधारी हैं, तीनों लोकों के स्वामी, सर्वशक्तिमान्, और युगान्त के समय सबके संहारक हैं। गणों में गणेश आप ही हैं, लोकों का कल्याण करनेवाले शम्भु और सब लोकों के रक्षक आप हैं। महाभाग, महाशाली, महादंष्ट्री, महेश्वर, काल, नीलकंठ, महोदर, पशुपति, महातपस्वी और अविनाशी हैं। शूलपाणि, वृषभकेतु, नेता, गोप्ता, हर, हरि, जटी, मुंडी, शिखंडी, भूतेश्वर, गणाध्यक्ष, सर्वात्मा, सर्वभावन, सर्वग, सर्वहारी, पिनाकी, धूर्जटी, ब्रह्मचारी, गुहावासी, अमर, श्मशानवासी, उमापति,

नयननिपाती, पूषादशन, विनाशन, ज्वरनाशक, पाशधारी, कालरूपी, उल्कामुख, अग्निकेतु, वामन, वामदेव, भिक्षु, भिक्षुरूपी, त्रिजटी, ऋतुरूपी, कालरूपी, मधुरूपी, वानस्पत्य, जगद्धाता, जगत्कर्ता, शाश्वत, ध्रुव, धर्माध्यक्ष, भूतभावन, त्रिनयन, देवदेव, अतिदेव, पूर्णचन्द्रवदन, शरणागतरक्षक, सर्वबन्धविमोक्षक इत्यादि आपके नाम हैं। हे दशानन, यह पवित्र अष्टोत्तरशत नाम हमने तुमसे बताये। इन पवित्र नामों का जप करने से सब पापों का नाश और शत्रुओं का भी विनाश होता है। तुम इनका जप करो। २१—५१।

प्रक्षिप्त सर्ग ५

रावण को यह वरदान देकर पितामह ब्रह्मा ब्रह्मलोक को चले गये। रावण भी वहाँ से चला गया। थोड़े दिनों बाद वह अपने मन्त्रियों के साथ पश्चिम समुद्र के तट पर गया। उस द्वीप में अग्नि के समान तेजस्वी एक पुरुष को देखा। उसकी देह की कान्ति तपाये हुए सुवर्ण के समान थी। वह देवताओं में इन्द्र के समान, ग्रहों में सूर्य के समान, पशुओं में सिंह के समान, हाथियों में ऐरावत के समान, पर्वतों में सुमेरु के समान और वृक्षों में कल्पवृक्ष के समान था। उस महाबलवान् पुरुष को देखकर रावण ने कहा कि तुम हमसे युद्ध करो। यह सुनते ही उसने बड़े क्रोध से रावण की ओर देखा। उसके दाँतों के कटकटाने का शब्द यन्त्र के चलने के समान हुआ। यह देखकर रावण अपने मन्त्रियों के साथ गरजने लगा। उनका गरजना सुनकर उस पुरुष ने भी सिंहनाद किया। १—८। वह बड़ा भयानक पुरुष था, उसकी भुजाएँ लम्बी, दाढ़ें बहुत बड़ी, ग्रीवा शंख के समान, छाती चौड़ी, कोख कछुए के समान, मुख सिंह के समान और पद-तल रक्त कमल के समान थे। उसकी देह कैलास-शिखर के समान लम्बी-चौड़ी थी। वह मन और वायु के समान वेगवान् था, बड़ा भयानक शब्द करता था।

सुवर्ण और कमलों की माला पहने था, और सुवर्णमय पर्वत के समान प्रकाशमान था। काजल के पर्वत के समान रावण ने उस पुरुष के ऊपर त्रिशूल, शक्ति, ऋष्टि और पट्टिश आदि अस्त्रों का प्रहार किया, किन्तु वह पुरुष उसके प्रहारों से वैसे ही पीड़ित नहीं हुआ जैसे चीते से सिंह, बैल से हाथी और नदियों के वेग से समुद्र व्यथित नहीं होता। वह रावण से बोला—रे मूर्ख निशाचर, यदि तू मुझसे युद्ध करना चाहता है तो मैं तुझे मार डालूँगा। ९—१५। हे रामचन्द्र, वह पुरुष रावण से भी हज़ार गुणा वेगवान् था। उसका धर्म और तप ही इसके कारण थे। ये उसकी जाँघों में निवास करते थे। उसके लिंग में कामदेव, कमर में विश्वेदेव, बस्ति और पार्श्व में उंचासों पवन, मध्यभाग में आठों वसु, कोख में चारों समुद्र, पार्श्व में सब दिशाएँ, सब सन्धियों में पवन, पीठ में रुद्र और पितर, हृदय में ब्रह्मा और रोम-रोम में गोदान भूमिदान और सुवर्णदान विद्यमान थे। हिमवान्, मन्दराचल और सुमेरु पर्वत के समान उसकी हड्डियाँ थीं। उसके हाथ वज्र के समान दृढ़ थे। उसके शरीर में आकाश था। उसकी घाँटी में संध्या और जल बरसानेवाले मेघ थे। उसकी भुजाओं में धाता-विधाता और विद्याधर आदि निवास करते थे। शेष, वासुकि, विशालाक्ष, इरावत, कम्बल, अश्वनर, कर्कोटक, धनंजय, तक्षक और उपतक्षक, महाविषधर नाग, उसके हाथों की उँगलियों में रहते थे। उसके मुख में अग्नि और कन्धों में ग्यारहों रुद्र निवास करते थे। उसकी दोनों ओर की दाढ़ों में पक्ष-मास और ऋतु, नासिका में कुहू और अमावस्या तथा नासिका के छिद्रों में पवन-देव रहते थे। उसके कंठ में वाणी और सरस्वती, कानों में अश्विनी-कुमार और नेत्रों में सूर्य और चन्द्रमा का निवास था। चारों वेद, छहों शास्त्र, तारागण, तेज, तप और यज्ञ, उसके शरीर में स्थित थे। उस महाकाय पुरुष ने रावण को एक थप्पड़ मारा। १६—३०। वज्र के गिरने के समान उस थप्पड़ के लगते ही रावण गिर पड़ा और

उसके मन्त्री डर के मारे भाग खड़े हुए। तब वह पुरुष पाताल को चला गया। इधर जब रावण की मूर्च्छा जागी तो उसने मन्त्रियों से पूछा—वह पुरुष सहसा कहाँ भाग गया है। मन्त्रियों ने उत्तर दिया कि देव-दानव का दर्प नष्ट करनेवाला वह पुरुष पाताल को चला गया है। यह सुनकर रावण भी गरुड़ के समान वेग से उसी बिल के द्वार से पाताल को चला। वहाँ पहुँचकर उसने नीरांजन पर्वत के समान काले बड़े भयानक वीरों को देखा। वे सब लाल चन्दन और लाल मालाएँ धारण किये थे। रत्नजटित सुवर्णमय आभूषण पहने थे। अग्नि की प्रभा के समान तेजस्वी ऐसे तीन करोड़ पुरुष वहाँ नाचते थे। रावण द्वार पर खड़ा होकर वह दृश्य देखने लगा। जिस पुरुष ने उसे थप्पड़ मारा था वैसे ही आकार, वर्ण और वेश-भूषा उन पुरुषों के भी थे। ३१—४०। सबके चार-चार भुजाएँ थीं और सब महा-बलवान् और महाउत्साही थे। उन पुरुषों को देखकर रावण डर गया, उसके रोयें खड़े हो गये। ब्रह्मा के वरदान के प्रभाव से वह बड़ी शीघ्रता से वहाँ से निकलकर चला गया। उसने एक और पुरुष को देखा जो शय्या पर सोता था। उसकी शय्या, आसन और घर श्वेतवर्ण और बहुमूल्य थे। उसके पास लक्ष्मी के समान एक देवी बैठी थी। वह दिव्य माला, दिव्य चन्दन, दिव्य वस्त्र और आभूषण धारण किये थी। वह साध्वी स्त्री तीनों लोकों का आभूषण-स्वरूप थी। उसके एक हाथ में कमल और दूसरे हाथ में पंखा था। उस लोकसुन्दरी को देखकर रावण काम के वश होकर उसे पकड़ने के लिए सहसा उस घर में घुस गया। जैसे काल से प्रेरित कोई पुरुष सोते हुए विषैले साँप को जगावे, वैसे ही रावण ने उस पुरुष को जगाना चाहा। स्त्री को पकड़ने के लिए रावण को आते जानकर वह पुरुष वस्त्र से अपना मुँह खोलकर हँसने लगा। उसके तेज से रावण मूर्च्छित होकर कटे हुए वृक्ष के समान पृथिवी पर गिर पड़ा। ४१—५०। तब उस पुरुष ने कहा—हे राक्षस,

उठो, अभी तुम्हारी मृत्यु न होगी। तुमको ब्रह्मा से वरदान मिला है, इसलिए अभी तुम जीवित रहोगे। अब तुम यहाँ से चले जाओ। एक मुहूर्त के बाद रावण की मूर्च्छा जागी और वह भयभीत होकर उस पुरुष से बोला—हे देव, आप युगान्त अग्नि के समान तेजस्वी और महाबलवान् हैं। बताइए, आप कौन हैं और कहाँ से आकर यहाँ स्थित हुए हैं। वह पुरुष हँसकर मेघ के समान गम्भीर स्वर से बोला—तुम मुझे जानकर क्या करोगे। मैं अभी बहुत दिनों तक तुमको न मारूँगा। तब रावण हाथ जोड़कर बोला—मैं तो ब्रह्मा के वरदान से अवध्य हूँ। देवताओं में भी ऐसा कोई नहीं है, जो ब्रह्मा के वचन का उल्लंघन कर सके। मुझे जो वरदान मिला है, उसका कोई परिहार नहीं है। उसके विरुद्ध कोई भी प्रयत्न सफल नहीं हो सकता। तीनों लोकों में, किसी में भी ऐसी सामर्थ्य मैं नहीं देखता, जो ब्रह्मा के वरदान को व्यर्थ कर डाले। मैं अमर हूँ, इसी से आपसे भी नहीं डरता। किन्तु हे प्रभो, यदि कभी मेरी मृत्यु भी हो तो मैं आपके सिवा और किसी के हाथ से न मारा जाऊँ।५१-६०। आपके हाथ से मृत्यु होने पर मेरी कीर्ति और प्रशंसा होगी। उसके बाद महापराक्रमी रावण ने उस पुरुष के शरीर में चराचर समेत तीनों लोकों को देखा। बारह सूर्य, उंचास पवन, आठ वसु, साध्यगण, अश्विनी-कुमार, ग्यारह रुद्र, यम, कुबेर, समुद्र, पर्वत, नदियाँ, चारों वेद, चौदहों विद्या, तीनों अग्नि, नवग्रह, तारागण, आकाश, सिद्ध, गन्धर्व, चारण, महर्षिगण, गरुड़, सर्प, देवता, दैत्य, राक्षस सबको सूक्ष्मरूप से उसके शरीर में देखा।

यह कथा सुनकर धर्मात्मा रामचन्द्र ने अगस्त्य मुनि से पूछा—हे महर्षि, वह पुरुष कौन था? और जो तीन करोड़ पुरुष नाचते थे वे कौन थे? मुनि ने उत्तर दिया—वे भगवान् कपिलदेव थे और जो नाचते थे, वे उन्हीं के स्वर थे। वे स्वर भी उन्हीं के समान तेजस्वी

और प्रभावशाली थे। भगवान् कपिलदेव ने क्रोध की दृष्टि से रावण को नहीं देखा, नहीं तो उसी क्षण वह भस्म हो जाता। उन्होंने वचनरूपी बाणों से ही उसे पीड़ित किया। बहुत देर के बाद वह स्वस्थ हुआ, और मन्त्रियों के पास चला आया। ६१—७२।

सर्ग २४

दुरात्मा रावण फिर बड़े हर्ष से लंका को लौटा। मार्ग में उसने राजर्षियों, देवताओं और दानवों की कन्याओं को हर लिया। उनके बन्धुजनों को मार डाला, उनकी कन्याओं और स्त्रियों को पुष्पक विमान पर बैठाकर ले चला। नाग, राक्षस, दानव, यक्ष और मनुष्यों की कन्याएँ विमान पर बड़े भय और दुःख से रोती थीं। उनके आँसुओं से विमान भर गया, जैसे नदियों से समुद्र भरता है।१—५। वे कन्याएँ बड़ी सुन्दरी थीं। लम्बे केश, कोमल अंग, पूर्ण चन्द्रमा के समान सुन्दर मुख, पीनस्तन, पतली कमर और तपाये हुए सोने के समान उनका लावण्य था। वे शोक, दुःख और भय से व्याकुल थीं। पुष्पक विमान उनकी श्वास की उष्ण वायु से उस अग्निहोत्र-गृह के समान हो गया, जिसमें अग्नि ढकी हो। ६—१०। जैसे सिंह के वश में पड़कर मृगी व्याकुल होती है, वैसे ही वे कन्याएँ दुःखित थीं। कोई सोचती थी कि यह हमें खा लेगा, कोई सोचती थी कि मार डालेगा। वे अपने माता-पिता, पति और भाई का स्मरण करके बड़े दुःख से रोतीं और कहती थीं कि हमारे विना हमारे,पुत्र,भाई, माता-पिता और पति की क्या दशा होगी। हे मृत्यु, तुम हमारे ऊपर कृपा करो, हमको भी ले चलो। हमने पूर्व जन्म में जाने कौन पाप किया है, जिससे हमारी यह दशा हुई। ११—१५। अब इस दुःख से छुटकारा मिलने की कोई आशा नहीं है। मनुष्य ही सबसे छोटे हैं, मृत्युलोक को धिक्कार है। हमारे दुर्बल पति को इस बलवान् रावण ने मार डाला। जैसे सूर्य उदय होते

ही नक्षत्रों को अदृश्य कर देते हैं, वैसे ही इसने हमारे पति को मार डाला। यह दुष्ट ऐसा दुराचार करके भी अपनी निन्दा नहीं करता। ऐसे ही दुष्ट ऐसे काम कर सकते हैं। यह दुरात्मा पर-स्त्रीगमन करता है, इसलिए इस पापी की मृत्यु स्त्री के ही कारण होगी। पतिव्रता स्त्रियों ने जब यह शाप दिया तो आकाश में देवताओं ने नगाड़े बजाये और फूलों की वर्षा की। उनका शाप सुनकर रावण उदास हो गया, उसका पराक्रम नष्ट-सा हो गया और तेज जाता रहा। वह समझ गया कि इन पतिव्रताओं का शाप मिथ्या नहीं हो सकता। वे सब फिर रोने लगीं और वह उनका रोदन सुनता हुआ लंका को चला गया। १६—२३। निशाचरों से सम्मानित रावण जब लंका में पहुँचा तो उसकी बहन कामरूपिणी भयानक राक्षसी शूर्पणखा रोकर उसके सामने पृथिवी पर गिर पड़ी। उसने बहन को उठाया और समझाकर उससे पूछा—हे कल्याणी, तुम क्या कहना चाहती हो और रोती क्यों हो? उसकी आँखों में आँसू भरे थे, आँखें मूँदे हुए वह बोली—राजन्, तुमने हमको विधवा कर दिया। तुमने अपने पराक्रम से चौदह हज़ार जिन कालिकेय दैत्यों का विनाश किया है, उन्हीं दैत्यों में महाबलवान् हमारा पति भी मारा गया। तुम भाई कहलानेवाले हमारे शत्रु हो। हमारे पति को मारकर तुमने हमको विधवा कर दिया। तुम्हारे कारण अब हम वैधव्य भोगेंगी। तुमको बहनोई की रक्षा करनी चाहिए, किन्तु तुमने उनका वध किया और इस काम से लज्जित भी नहीं होते। रोती हुई शूर्पणखा के यह कहने पर रावण उसे समझाता हुआ बोला—वत्से, रोने से अब कोई लाभ नहीं है। तुम घबराओ नहीं, हम दान-मान से सदा तुमको सन्तुष्ट रक्खेंगे। युद्ध में प्रमत्त होने के कारण विजय की इच्छा से हम बाण चलाते थे। उस समय अपना और पराया हम नहीं समझ सके। हमने बहनोई को नहीं पहचाना, इसी से युद्ध में वह मारा गया। जो हो गया, उसके लिए शोक करना

चार्य है। अब जहाँ तक होगा, हम तुम्हारा हित करेंगे। २४—३५।
अब तुम अपने भाई खर के पास रहो। वह बड़ा ऐश्वर्यवान् है, चौदह हज़ार राक्षसों का स्वामी है। तुम्हारी मौसी का लड़का है, वह सदा तुम्हारी आज्ञा का पालन करेगा। वीर खर शीघ्र ही दंडकारण्य की रक्षा करने के लिए जायगा। इसका सेनापति दूषण होगा, वह भी बड़ा वीर है। शूर्पणखा से यह कहकर रावण ने चौदह हज़ार बलवान् राक्षसों को खर के साथ दंडकारण्य को जाने की आज्ञा दी। खर उस सेना के साथ दंडकारण्य को चला गया और वहाँ निष्कंटक राज्य करने लगा। शूर्पणखा भी दंडकवन में रहने लगी। ३६—४२।

सर्ग २५

शूर्पणखा को समझा-बुझाकर खर के साथ कर दिया और खर सेना लेकर दंडक वन को चला गया। तब रावण का चित्त स्वस्थ हुआ। लंका में निकुम्भिला नाम का एक उपवन था, वहाँ मेघनाद यज्ञ कर रहा था। यह हाल जब रावण ने सुना तो निकुम्भिला को गया। वहाँ बहुत बड़ा मंडप छाया गया था, उसमें सौ खम्भे लगे थे। मेघनाद काला मृगचर्म धारण किये, कमंडलु लिये, शिखा रखाये, यज्ञ में दीक्षित था। अपने पुत्र को यज्ञ करते देखकर रावण ने उसे छाती से लगा लिया और बोला—बेटा, यह क्या करते हो, ठीक-ठीक बताओ। यह सुनकर यज्ञ कराने के लिए आये हुए शुक्राचार्य ने कहा—राजन्, तुम्हारा पुत्र तो मौन व्रत धारण किये है। हम सब हाल बताते हैं, सुनो—तुम्हारे पुत्र ने अग्निष्टोम, अश्वमेध, बहुसुवर्णक, राजसूय, गोमेध और वैष्णव ये छः यज्ञ किये हैं। उसके बाद जब माहेश्वरयज्ञ का इन्होंने आरम्भ किया, जो बहुत ही दुर्लभ है, तो साक्षात् महादेव ने आकर इनको बहुत-से वरदान दिये। एक ऐसा दिव्य रथ इनको दिया है, जो इनकी इच्छानुसार सर्वत्र जा सकता है। आकाश में भी

उड़ सकता है। तामसी नाम की माया भी दी है, जिससे सर्वत्र अन्धकार हो जाता है। १—१०। हे राक्षसेन्द्र, युद्ध में इस माया के प्रभाव से चाहे जहाँ घूमा करे, देवता, दैत्य, राक्षस आदि उसे कोई भी नहीं देख सकते। दो तूणीर दिये हैं, जो कभी खाली नहीं होते। एक दुर्जय धनुष भी दिया है। एक अस्त्र ऐसा बलवान् इनको मिला है, जिससे युद्ध में शत्रु का अवश्य ही विनाश हो जायगा। हे रावण, तुम्हारा पुत्र यह सब वरदान पा चुका है। आज यज्ञ समाप्त हो जायगा। यज्ञ समाप्त करके तुम्हारा दर्शन करेंगे, इसीलिए हम ठहरे हुए हैं। यह सुनकर रावण बोला—इन्द्र आदि हमारे शत्रुओं की इसने पूजा की, यह काम इसने अच्छा नहीं किया। खैर, जो किया सो अच्छा ही किया, अब घर को चलो। ११—१५। विभीषण और मेघनाद को साथ लेकर रावण वहाँ से चला आया। जिन स्त्रियों को हर लाया था, वे पुष्पक विमान पर बैठी रो रही थीं। उनको विमान से उतारा। वे देवताओं, दानवों और राक्षसों की कन्याएँ और स्त्रियाँ थीं। सब लक्षणों से युक्त थीं। धर्मात्मा विभीषण ने रावण से कहा—तुम इस तरह के काम करते हो, अपने विचार से इनको दुष्कर्म नहीं समझते; किन्तु इन कामों से यश, धर्म और कुल का नाश हो जायगा। देवता, दानव और राक्षस तुम्हारे सजातीय हैं, उनका अपमान करके उनकी स्त्रियों को तुम हर लाये। हे राजन्, इस अधर्म का फल यह हुआ कि तुम्हारा भी अपमान करके मधु दैत्य कुम्भीनसी को हर ले गया। यह सुनकर रावण बोला—यह तुम क्या कहते हो, हमारी समझ में नहीं आया। मधु दैत्य कौन है और कुम्भीनसी किसका नाम है? १६—२०। विभीषण बड़े क्रोध से बोले—सुनो, तुम्हारे दुष्कर्म का जो फल हुआ है, बताता हूँ। सुमाली हम लोगों के नाना हैं, उनके बड़े भाई का नाम माल्यवान् है। वे बूढ़े हैं और बड़े बुद्धिमान् हैं। उनकी कन्या का नाम कुम्भीनसी है। वह हम लोगों की मौसी की लड़की है। हे राजन्, बलवान्

राक्षस मधु उसी को हर ले गया है। मेघनाद यज्ञ करते थे, मैं जल में बड़ा तप कर रहा था और कुम्भकर्ण सोता था। मन्त्रियों ने उससे युद्ध किया, किन्तु उसने सबको मार भगाया और उसे बलपूर्वक हर ले गया। सुरक्षित अन्तःपुर से कुम्भीनसी को लेकर जब मधु चला तो हम लोगों ने भी सोचा कि आख़िर इसका विवाह किसी के साथ तो करना ही है, यह समझकर हम लोगों ने क्षमा कर दिया। २१–२७। हे रावण, तुम्हारे इन दुष्कर्मों से ही यह बात हुई है। तुम इन पराई स्त्रियों को हर लाये हो, इसका फल तुमको इसी लोक में मिल गया। विभीषण की यह बात सुनकर उसे बड़ा क्रोध आया। वह समुद्र के समान क्षुभित हो गया। आँखें लाल हो गईं और बड़े क्रोध से बोला—शीघ्र हमारा रथ तैयार करो। कुम्भकर्ण और मुख्य-मुख्य सब राक्षस अस्त्र-शस्त्र लेकर अपने रथों पर सवार हों। सब वीर युद्ध के लिए तैयारी करें। आज हम युद्ध में मधु को मार डालेंगे, और देवताओं से युद्ध करने के लिए अपने सुहृदों के साथ देवलोक को जायँगे। २८–३२। रावण की आज्ञा से चार हज़ार अक्षौहिणी सेना तैयार हुई। अनेक प्रकार के अस्त्र-शस्त्र लेकर राक्षस युद्ध के लिए निकले। मेघनाद सेना के आगे चला। रावण सेना के बीच में और कुम्भकर्ण सेना के पीछे था। धर्मात्मा विभीषण अपने धर्म की और पुर की रक्षा करते हुए लंका में रहे। बाकी और सब राक्षस मधुपुर को चले। गधे, ऊँट, घोड़े, शिशुमार और बड़े-बड़े साँप उनके वाहन थे। राक्षसों की सेना से आकाश भर गया। वह मधुपुर में पहुँची। रावण मधु के घर में घुस गया। मधु तो वहाँ नहीं देख पड़ा, किन्तु उसने अपनी बहन कुम्भीनसी को देखा। वह हाथ जोड़कर रावण के पैरों पर गिर पड़ी। कुम्भीनसी को व्याकुल देखकर रावण ने उसे उठाया और कहा कि डर की कोई बात नहीं है। बोलो, तुम्हारा क्या प्रिय करें। ३३–४०। कुम्भीनसी बोली—हे राजन्, हे महाबाहु, यदि तुम हमारे ऊपर

प्रसन्न हो तो हमारे पति को न मारो। कुलीन स्त्रियों को संसार में विधवा होने से बढ़कर और कोई भय नहीं है। हे राजेन्द्र, आपने वचन दिया है, उसे सत्य कीजिए। हम आपसे प्रार्थना करती हैं, हमारी ओर देखिए। आपने अपने मुख से हमें निर्भय किया है।४१–४३। रावण ने कहा—तुम्हारा पति कहाँ है? उससे हमारे आने का हाल कहो। तुम्हारे कहने से अब हम उसे नहीं मारेंगे, किन्तु उसको साथ लेकर देवलोक जीतने के लिए जायँगे। ४४–४५। तब कुम्भीनसी ने सोते हुए मधु को जगाया और उससे कहा—हमारा भाई महाबली रावण आया है। वह देवलोक जीतने के लिए जा रहा है और आपकी सहायता चाहता है। आप उसकी सहायता के लिए अपने बन्धुओं के साथ जाइए; क्योंकि वह बड़े स्नेह से आपको बुलाने आया है। आपसे प्रार्थना करता है।४६–४८। मधु ने कहा—अच्छा, ऐसा ही करेंगे। फिर वह रावण से मिला और उसका यथोचित सत्कार किया। रावण सम्मानित होकर एक रात उसके घर में रहा। दूसरे दिन वहाँ से चला। वह पहले कुबेर के निवासस्थान कैलास पर्वत को गया। वहाँ अपनी सेना को ठहरने की आज्ञा दी। ४९–५२।

सर्ग २६

सूर्य के अस्त हो जाने पर कैलास पर्वत के ही समान श्वेतवर्ण चन्द्रमा उदय हुआ। बलवान् रावण सेना के साथ उस पर्वत पर ठहरा था। रात को सब सैनिक तो सो गये, और वह शैल-शिखर पर बैठा हुआ वहाँ की शोभा देख रहा था। पर्वत पर कर्णिकार, कदम्ब और बकुल के वन थे। गंगा के जल में कमलिनी फूली हुई थी। चंपा, अशोक, पुन्नाग, मंदार, आम, पाटल, लोध, प्रियंगु, अर्जुन, केतकी, तगर, नारिकेलि, चिरौंजी और कटहल आदि के वृक्षों से पर्वत शोभित था। १–६। किन्नरों के जोड़े मधुर स्वर से गा रहे थे। उनका गाना

...चित्त को प्रसन्न कर रहा था। विद्याधरों के जोड़े भी बड़े हर्ष से क्रीड़ा करते थे। कुबेर के भवन में अप्सराएँ मधुर स्वर से गाती थीं, उसे भी रावण सुन रहा था। वायु के झोंकों से वृक्षों से फूल बरसते थे। उनकी सुगन्ध से पर्वत सुगन्धित हो गया था।७–१०। फूलों का पराग लेकर वायु चलती थी और रावण को काम से पीड़ित करती थी। शीतल सुगन्धित वायु से, पुष्पों की शोभा से और चन्द्रमा के उदय होने से, महावीर्यवान् रावण काम के वश हो गया और बार-बार लम्बी साँस छोड़ता हुआ चन्द्रमा को देखने लगा।११–१३। उसी समय दिव्य वस्त्र और दिव्य आभूषण धारण किये, चन्द्रमा के समान सुन्दर मुखवाली, अप्सराओं में श्रेष्ठ रम्भा दिव्य चन्दन लगाये, मन्दार-पुष्पों से केशों का शृंगार किये उधर से निकली। उसकी आँखें मनोहर, स्तन ऊँचे, कमर में करधनी, पेड़ू चौड़ा और सब ऋतुओं के पुष्पों से अलंकृत थी। दूसरी लक्ष्मी के समान सर्वांगसुन्दरी अप्सरा को देखकर रावण काम से पीड़ित हो गया। वह बरसात के बादलों के समान नीले रंग का वस्त्र पहने थी। उसका मुँह चन्द्रमा के समान सुन्दर था, भौंहें धनुष के समान टेढ़ी, जाँघें हाथी की सूँड़ के समान चढ़ा-उतार और हाथ पल्लव के समान कोमल थे। वह रावण की सेना के बीच से होकर निकली। काम के वशीभूत रावण ने झट उठकर उसका हाथ पकड़ लिया और लजाती हुई उससे हँसकर कहा—हे सुन्दरी, कहाँ जाती हो? कौन भाग्यवान् पुरुष तुम्हारे साथ भोग करेगा? तुम्हारे अधर से कमल की-सी सुगन्ध आ रही है। इस अधरामृत का पान कराकर आज किसे तृप्त करोगी? सुवर्ण-घट के समान सुन्दर, कठोर और मोटे तुम्हारे ये स्तन किसके हृदय को स्पर्श का सुख देंगे? तुम्हारी नाभि सुवर्ण-चक्र के समान है। उसके ऊपर सुवर्ण की करधनी शोभित है। आज कौन पुरुष इसके ऊपर अधिरोहण करेगा? हे भीरु, इस समय इन्द्र, विष्णु और अश्विनीकुमार आदि कोई भी देवता हमसे

बढ़कर नहीं है। इसलिए हमको छोड़कर और कहीं जाना तुमको उचित नहीं है। हे सुन्दरी, इस शिला के ऊपर विश्राम करो। तीनों लोकों के प्रभु हमीं हैं, तीनों लोकों के विधाता और स्वामी हमीं हैं। हम हाथ जोड़कर तुमसे कहते हैं, तुम हमारी प्रार्थना स्वीकार करो। १४–२७। रावण के यह कहने पर रम्भा डर के मारे काँपने लगी। वह हाथ जोड़कर बोली——आप हमारे ससुर लगते हैं, आपको ऐसी बात न कहनी चाहिए। यदि दूसरा कोई हमारे साथ बलात्कार करना चाहे तो आप को हमारी रक्षा करनी चाहिए। क्योंकि धर्म से हम आपके भतीजे की स्त्री हैं। यह हम बिलकुल सत्य कहती हैं। २८–२९। रम्भा नीचे को मुँह किये खड़ी थी, डर के मारे उसके रोयें खड़े हो गये थे। रावण उस की ओर देखकर बोला——यदि तुम हमारे पुत्रकी भार्या हो, तबतो अवश्य हमारी स्नुषा होती हो। रम्भा ने कहा——ऐसा ही तो है। धर्म से हम तुम्हारे पुत्र की भार्या हैं। तुम्हारे भाई कुबेर के पुत्र नलकूबर हैं। वे तीनों लोकों में विख्यात हैं। धर्म से वे ब्राह्मण, बल से क्षत्रिय, क्रोध से अग्नि के समान और क्षमा से पृथिवी के समान हैं। उन्हीं के पास मैं जाती हूँ, उन्हीं के लिए मैंने सब शृंगार किये हैं, उन्हीं का प्रेम मेरे हृदय में है, उनके सिवा और किसी को मैं नहीं चाहती। ३०–३५। हे राजन्, हे शत्रुनाशन, आप हमें जाने दीजिए। धर्मात्मा नलकूबर बड़ी उत्सुकता से मेरी प्रतीक्षा करते होंगे। आपको उनके काम में विघ्न न करना चाहिए। हे राक्षसराज! आप सज्जनों के मार्ग पर चलें मुझको छोड़ दें। मुझे अपनी पुत्रबधू मानें और मेरी रक्षा करना अपना कर्त्तव्य समझें। रम्भा की यह बातें सुनकर रावण नम्रता से बोला—तुमने जो यह कहा कि तुम हमारी पुत्रबधू हो, यह विचार उन स्त्रियों के लिए है, जिनके एक ही पति होता है। देवलोक में तो बहुत दिनों से यह व्यवस्था चली आती है कि न देवताओं के कोई एक ही स्त्री होती है और न अप्सराओं के एक ही पति। रावण ने यह कहकर

उसी शिला पर रम्भा के साथ भोग किया। रम्भा के आभूषण स्थान से खिसक गये, पुष्पमालाएँ टूट गईं, हाथी से मथी हुई नदी के समान वह व्याकुल हो गई। केश-पाश छूट गया। जैसे फूली हुई लता वायु के वेग से काँपती है, वैसे ही वह काँपने लगी। वह डरती हुई नलकूबर के पास गई और हाथ जोड़कर उनके पैरों पर गिर पड़ी। रम्भा की यह दशा देखकर महात्मा नलकूबर ने पूछा—भद्रे, यह क्या बात है? तुम हमारे पैरों पर क्यों गिरीं? लम्बी साँसें छोड़ती और काँपती क्यों हो? ३६–४५। रम्भा ठीक-ठीक सब हाल कहने लगी—देव, रावण अपनी सेना के साथ स्वर्गलोक को जा रहा है। इस रात में वह कैलास पर्वत पर ही ठहरा है। हमको आती हुई देखकर उसने पकड़ लिया और पूछा कि तुम किसकी स्त्री हो। मैंने सत्य-सत्य उससे कह दिया। वह काम के वशीभूत था, उसने हमारी बात ही न सुनी। हमने यह भी कहा कि हम तुम्हारी पुत्रवधू हैं, किन्तु उसने इन बातों पर कुछ भी ध्यान न देकर बलात्कार किया। आप हमारा यह अपराध क्षमा करें। स्त्रियों में पुरुष के समान बल नहीं होता, इसलिए हम क्या कर सकती थीं। ४६–५०। यह सुनकर नलकूबर को बड़ा क्रोध आया। उन्होंने ध्यान करके रावण के इस कुकर्म को जान लिया। क्रोध के मारे उनकी आँखें लाल हो गईं। फिर उन्होंने जल लेकर विधिपूर्वक आचमन किया और कहा—हे भद्रे, तुम्हारी इच्छा के विना उसने बलपूर्वक तुम्हारे साथ भोग किया है, इसलिए हम उसे शाप देते हैं कि यदि वह अब किसी स्त्री के साथ उसकी इच्छा के विना बलपूर्वक भोग करेगा तो उसके सिर के सात टुकड़े हो जायँगे। नलकूबर के यह शाप देने पर देवताओं ने नगाड़े बजाये और फूल बरसाये। ब्रह्मा आदि सब देवता बड़े प्रसन्न हुए। रावण ने भी उस रोमहर्षण शाप को सुना, तब से वह किसी स्त्री के साथ उसकी इच्छा के विना भोग नहीं करता था। जिन पतिव्रता स्त्रियों

को वह हर लाया था, उन स्त्रियों को नलकूबर का शाप सुनकर बड़ा हर्ष हुआ। ५१—६०।

सर्ग २७

अपनी सेना के साथ रावण कैलास पर्वत को लाँघकर इन्द्रलोक में पहुँचा। उसकी सेना का शब्द समुद्र में तूफ़ान आने के समान हुआ और देवलोक में सर्वत्र फैल गया। रावण का आगमन सुनकर इन्द्र का आसन चलायमान हुआ। आदित्य, वसु, रुद्र, साध्य और मरुद्गण से वे बोले—दुरात्मा रावण के साथ युद्ध करने के लिए आप लोग तैयार हों। १—४। इन्द्र के यह कहने पर इन्द्र के ही समान महाबली वे सब देवता युद्ध करने के लिए तैयार हो गये। किन्तु रावण के डर से भयभीत इन्द्र विष्णु के पास गये और उनसे बोले—रावण बड़ा बलवान् है, उसने युद्ध करने के लिए देवलोक को घेर लिया है। ब्रह्मा ने उसे वरदान दिया है कि देवताओं के हाथ से उसकी मृत्यु न होगी। उनके वचन सत्य करना हम लोगों का कर्तव्य है। इसलिए नमुचि, वृत्रासुर, बलि, नरकासुर, शम्बरासुर आदि दैत्यों को आप का बल पाकर जिस तरह हमने परास्त किया, वैसे ही इसके वध का कोई उपाय कीजिए। हे देवेश, हे मधुसूदन, आपके सिवा और कोई इस चराचर त्रैलोक्य की गति नहीं है।५—१०। आप नारायण, पद्मनाभ, सनातन ब्रह्म हैं। आप ही ने सब लोकों की सृष्टि की है। देवराज इन्द्र और देवताओं को भी आप ही ने बनाया है। हे भगवन्, प्रलय होने पर सब प्राणी आप ही में समा जाते हैं। हे देव-देव, खड्ग और चक्र लेकर आप रावण के साथ किस उपाय से युद्ध करेंगे, यह ठीक ठीक हमें बताइए। ११—१३। इन्द्र की यह बात सुनकर विष्णु भगवान् ने कहा—डर की कोई बात नहीं है। हम जो कहते हैं, वह सुनो—यह दुष्ट रावण ब्रह्मा से वरदान पाने के कारण देवताओं

और दैत्यों से परास्त नहीं हो सकता, यह बड़ा बलवान् है। इसके प्रभाव से हमने जान लिया है कि यह अपने पुत्रों की सहायता से बड़े-बड़े दुष्कर्म करेगा। हे सुरेश्वर, तुम जो इसके साथ युद्ध करने के लिए हमसे कहते हो, सो हम अभी इसके साथ युद्ध नहीं करेंगे; क्योंकि विष्णु युद्ध में शत्रु को मारे बिना नहीं लौटते और ब्रह्मा के वरदान से सुरक्षित रावण का वध नहीं हो सकता। किन्तु हे देवेन्द्र, हम यह प्रतिज्ञा करते हैं कि इसकी मृत्यु का कारण हमीं होंगे। हम परिवार सहित रावण का वध करेंगे और देवताओं को प्रसन्न करेंगे। किन्तु समय आने पर यह काम होगा। अभी वह समय नहीं है। हे देवराज, हम बिलकुल सत्य कहते हैं, अब तुम निर्भय होकर देवताओं की सहायता से रावण से युद्ध करो। १४—२१। इधर रुद्र, आदित्य, वसु, मरुद्गण, और अश्विनीकुमार आदि देवता अस्त्र-शस्त्र लेकर युद्ध के लिए निकले। प्रातःकाल होते ही राक्षसों की सेना का शब्द सुनाई पड़ा। देवताओं की सेना राक्षसों के सामने आई, किन्तु राक्षसों को देखकर देवता काँप उठे। युद्ध होने लगा, अनेक प्रकार के अस्त्र चले। रावण के मन्त्री और सब शूर-वीर राक्षस युद्ध करने लगे। मारीच, प्रहस्त, महापार्श्व, महोदर, अकम्पन, निकुम्भ, शुक, सारण, संह्रादि, धूमकेतु, महादंष्ट्र, घटोदर, जम्बुमाली, महाह्राद, विरूपाक्ष, सुप्तघ्न, यज्ञकोप, दुर्मुख, दूषण, खर, त्रिशिरा, करवीराक्ष, सूर्यशत्रु, महाकाय, अतिकाय, देवान्तक, नरान्तक, इन बलवान् राक्षसों के साथ महापराक्रमी सुमाली देवताओं की सेना में घुसा और पैने बाणों से उसने देवताओं की सेना का उसी प्रकार विध्वंस किया, जैसे पवन बादलों का विनाश करता है। हे रामचन्द्र, राक्षसों के प्रहार से देवताओं की सेना इस तरह भागी जैसे सिंह के भय से मृग भागते हैं। यह देखकर बलवान् वसुओं में आठवें वसु, जिनका नाम सावित्र है, अपनी सेना लेकर अनेक प्रकार के अस्त्र

चलाते हुए, शत्रु की सेना में घुस गये और राक्षसों को पीड़ित करने लगे। २२—३५। त्वष्टा और पूषा नाम के दो आदित्य भी अपनी सेना लेकर राक्षसों से निर्भय होकर युद्ध करने लगे। तुमुल युद्ध हुआ। देवता कुपित राक्षसों की कीर्ति मिटा देना चाहते थे। राक्षसों ने अनेक प्रकार के आयुध चलाये। देवताओं ने भी खूब प्रहार किये। दोनों दल महापराक्रमी थे, दोनों ने एक-दूसरे का विनाश किया। हे रामचन्द्र, उसी समय सुमाली नाम के राक्षस ने क्रुद्ध होकर देवताओं की सेना पर अनेक प्रकार के अस्त्रों से प्रहार किया। जैसे पवन बादलों का विध्वंस कर देता है वैसे ही उस राक्षस ने देवताओं की सेना का विनाश कर दिया। ३६—४१। देवताओं की सेना तितर-बितर हो गई। जब सुमाली ने देवताओं की सेना को भगा दिया, तो सावित्र नाम का आठवाँ वसु क्रुद्ध होकर युद्ध करने लगा। प्रहार करते हुए सुमाली को उसने अपने पराक्रम से रोका। उन दोनों का घोर युद्ध होने लगा। दोनों युद्ध से हटनेवाले न थे। थोड़ी ही देर में महात्मा सावित्र ने पैने बाणों से सुमाली का रथ तोड़ डाला और कालदंड के समान भयानक गदा सुमाली के सिर पर मारी। ४२—४८। जैसे इन्द्र का चलाया हुआ वज्र गरजकर पर्वत के ऊपर गिरे, वैसे ही उल्का के समान चमकती हुई गदा सुमाली के सिर पर गिरी। गदा के प्रहार से वह चूर-चूर हो गया। उसका सिर, मांस और हड्डी कहीं दिखाई न पड़ी। सुमाली के मरने पर राक्षस रोते हुए भागे। सावित्र के भय से कोई राक्षस युद्ध में खड़ा न रह सका। ४९—५१।

सर्ग २८

सुमाली को मारा हुआ और अपनी सेना को भागती हुई देखकर रावण का पुत्र बलवान् मेघनाद सब राक्षसों को लौटाकर युद्ध के लिए स्वयं तैयार हुआ। वह महामूल्य, इच्छानुसार चलनेवाले, रथ पर सवार

होकर देव-सेना की ओर झपटा, जैसे वन में दावाग्नि दौड़ती है। मेघनाद को अनेक प्रकार के अस्त्र धारण किये सेना में घुसते देखकर देवता भाग खड़े हुए।१–४। कोई देवता उससे युद्ध करने का साहस न कर सका। तब डरे हुए देवताओं से इन्द्र बोले—हे देवताओ, डरकर भागो मत, युद्ध करने के लिए लौटो। हमारा पुत्र जयन्त, जो कभी युद्ध में नहीं परास्त हुआ, युद्ध करने के लिए जाता है। ५–६। इन्द्र की यह बात सुनकर देवता लौटे और जयन्त के साथ युद्ध के लिए गये। देवताओं ने मेघनाद के ऊपर अनेक प्रकार के अस्त्र चलाये। देवताओं और राक्षसों का युद्ध होने लगा। जयन्त और मेघनाद का परस्पर युद्ध छिड़ा। मातलि के पुत्र गोमुख जयन्त का सारथि था। मेघनाद ने सुवर्ण-भूषित बाण उसके ऊपर चलाये। जयन्त ने भी मेघनाद के सारथि को बाणों से मारा। मेघनाद ने क्रुद्ध होकर हज़ारों बाण जयन्त के ऊपर बरसाये। फिर उसने कुपित होकर देव-सेना के ऊपर भी बाणों की वर्षा कर दी। शतघ्नि, मुसल, प्रास, गदा, खड्ग, परशु और पर्वत के शिखर देव-सेना पर चलाये। फिर वह मायायुद्ध करने लगा, जिससे सब देवता व्याकुल हो गये। सब ओर उसने अँधेरा कर दिया और देवताओं के ऊपर प्रहार करने लगा। ७–१५। देवता जयन्त के चारों ओर खड़े थे। बाणों के प्रहार से वे व्याकुल हो गये। देवता और राक्षस युद्ध करते-करते विक्षिप्त-से हो गये। उनको अपना और पराया नहीं सूझता था। वे अपने ही पक्ष के सैनिकों पर प्रहार करने लगे। इस प्रकार जब मोहित होकर आपस में ही लड़ने लगे, तो दोनों ओर की सेना भाग खड़ी हुई। १६–१८। उसी समय पुलोमा नाम का दैत्य आया और जयन्त को लेकर समुद्र को चला गया। जयन्त उसका नाती है, क्योंकि इन्द्राणी उसी दैत्य की पुत्री हैं। १९–२०। देवताओं ने समझा कि जयन्त मारा गया, इसलिए वे व्याकुल होकर युद्ध से भाग खड़े हुए। मेघनाद क्रुद्ध होकर अपनी सेना के साथ

उनके पीछे दौड़ा और बड़े ज़ोर से गरजने लगा। अपने पुत्र को मरा हुआ और देवताओं को भागते देखकर इन्द्र ने अपने सारथि मातलि से कहा कि हमारा रथ बहुत शीघ्र ले आओ। सारथि दिव्य घोड़े जोतकर शीघ्रगामी रथ ले आया। २१—२४। जब इन्द्र रथ पर सवार होकर युद्ध करने चले तो वायु से प्रेरित बिजली सहित मेघ भी रथ के आगे बैठ गये और गरजने लगे। इन्द्र के चलते समय अनेक प्रकार के बाजे बजाये गये, गन्धर्व गाने लगे और अप्सराएँ नाचने लगीं। रुद्र, वसु, आदित्य, अश्विनीकुमार और मरुद्गण भी उनके साथ थे। अनेक अस्त्र लेकर इन्द्र ने युद्ध के लिए जब यात्रा की, उस समय प्रचंड वायु चलने लगी, सूर्य प्रभाहीन हो गये और उल्का गिरने लगीं। २५—२८। इधर महावीर रावण भी विश्वकर्मा के बनाये हुए दिव्य रथ पर सवार हुआ। उस रथ में बड़े-बड़े साँप लिपटे थे, जिनको देखने से रोयें खड़े हो जाते थे। उन साँपों की श्वास की वायु युद्धभूमि में फैल गई। २९—३०। रावण के रथ की रक्षा के लिए बहुत-से दैत्य और निशाचर उसके साथ थे। रावण का रथ इन्द्र के सम्मुख चला। उसने अपने पुत्र को युद्ध करने से रोक दिया और स्वयं युद्ध के लिए उद्यत हुआ। रावण की आज्ञा से मेघनाद युद्ध से हट गया। देवताओं और राक्षसों का युद्ध होने लगा। दोनों ओर से शस्त्रों की ऐसी वर्षा हुई, जैसे मेघ पानी बरसाते हैं। ३१—३३। हे रामचन्द्र, दुष्टात्मा कुम्भकर्ण भी अस्त्र-शस्त्र लेकर युद्ध करने लगा। उसने यह नहीं देखा कि किसके साथ हमारा युद्ध हो रहा है। दाँत, लात, थप्पड़, शक्ति, तोमर और मुद्गर से प्रहार करने लगा। जिस देवता को सामने पाया, उसी को पीड़ित किया। फिर रुद्रों के साथ उसका युद्ध होने लगा। रुद्रों के प्रहार से उसके सब अंगों में घाव हो गये। ३४—३६। मरुद्गण के साथ राक्षसों का युद्ध हुआ। उनके प्रहार से राक्षस भाग खड़े हुए। कुछ तो मर गये, कुछ

...मरे होकर पृथिवी पर लोटने लगे, कुछ अपने वाहनों में लिपट ...। रथों, हाथियों, गधों, ऊँटों, साँपों, घोड़ों, शिशुमारों, वराहों और पिशाच-वदनों को पकड़-पकड़कर लिपट रहे। कुछ घायल होने ...भी उठ खड़े हुए। इस प्रकार देवताओं के शस्त्र से बहुत बड़ी सेना ...ी गई। ३७—४०। युद्धभूमि में मारे हुए राक्षसों का एक विचित्र ...य हो गया। रुधिर की नदी बह चली, जिसमें रुधिर ही जल था, ...स का कीचड़ और जल-पक्षियों के स्थान पर कौवे और गिद्ध थे। ...नी सेना का विनाश देखकर प्रतापी रावण को बड़ा क्रोध आया। ...द्र के समान देव-सेना में वह घुस गया और देवताओं पर प्रहार ...ता हुआ इन्द्र की ओर दौड़ा। इन्द्र ने उसे देखकर धनुष की डोरी ...ाई और टंकार किया, उसका शब्द सब दिशाओं में फैल ...या। ४१—४५। इन्द्र ने अग्नि और सूर्य के समान प्रकाशित बाण ...वण के सिर पर चलाये। महाबाहु रावण ने भी इन्द्र के ऊपर बाणों की ...र्षा की। दोनों ओर की बाण-वर्षा से आकाश भर गया, सब ओर ...धेरा छा गया और कुछ दिखाई न देने लगा। ४६—४८।

सर्ग २९

उस अन्धकार में इन्द्र, रावण और मेघनाद को छोड़कर सब देवता और राक्षस मोहित हो गये, किन्तु बल से उन्मत्त वे लोग युद्ध करते ही रहे। राक्षसों की सेना नष्ट होने लगी, यह देखकर रावण बड़े ...ध से गरजा और अपने सारथि से बोला कि हमारा रथ शत्रु-...ना के बीच में ले चलो। हम अभी अपने पराक्रम से अनेक प्रकार के ...स्त्र चलाकर देवताओं का विनाश कर देंगे। १—५। हम इन्द्र, कुबेर, ...रुण और यम को मार डालेंगे। इन सबको मारकर सबसे श्रेष्ठ हमीं ...गे। घबराओ नहीं, शीघ्र हमारा रथ ले चलो। दो बार तुमसे कह ...के, अब जहाँ तक अवकाश मिले, शत्रु-सेना के बीच में हमारा रथ

पहुँचाओ। इस समय जहाँ हम लोग हैं, यह नन्दन वन है, अब तुम हमको वहाँ ले चलो जहाँ उदय नाम का पर्वत है। ६—८। रावण के यह वचन सुनकर सारथि ने मन के समान चलनेवाले घोड़ों को शत्रु-सेना के बीच में हाँका। रावण का यह इरादा जानकर इन्द्र देवताओं से बोले—हे देवताओ, इस समय हमारे जो विचार हैं, सो सुनो। इस राक्षस को जीता ही पकड़ लो। यह बड़ा बलवान् है, वायु के समान वेग से हमारी सेना में वैसे ही घुसा चला आता है जैसे समुद्र की तरंगें पूर्णमासी को बढ़ती हैं। ६—१२। ब्रह्मा के वरदान के कारण इसे हम लोग मार नहीं सकते, इसी से यह निर्भय है। इसलिए इसको पकड़ने का ही उद्योग करना चाहिए। जैसे बलि को बाँधकर हमने तीनों लोकों का राज्य किया है, वैसे ही इस पापी को बाँध लेना ही हम उचित समझते हैं। १३—१४। यह कहकर इन्द्र रावण के सामने से हटकर दूसरी ओर चले गये और राक्षसों को पीड़ित करते हुए युद्ध करने लगे। रावण उत्तर की ओर से देवताओं की सेना में घुसा और इन्द्र दक्षिण की ओर से चले। रावण सौ योजन तक बढ़ता चला गया। उसने देवताओं की सेना पर बाणों की वर्षा कर दी। इन्द्र ने जब देखा कि हमारी सेना नष्ट हुई जाती है, तो उन्होंने रावण को लौटाया। उस समय दानव और राक्षस बड़े ज़ोर से चिल्लाये कि रावण को इन्द्र ने पकड़ लिया, अब हम लोग मारे गये। यह सुनकर मेघनाद रथ पर सवार होकर बड़े क्रोध से दौड़ा। १५—२०। महादेव के वरदान से जो महामाया उसे प्राप्त हुई थी, वही माया रचकर वह देवसेना में घुसा, और अन्य देवताओं को छोड़कर वह इन्द्र के ही ऊपर झपटा। देवताओं ने उसके ऊपर बहुत प्रहार किये, उसका कवच भी टूट गया, किन्तु बलवान् देवताओं का उसे कुछ भी भय न हुआ। पहले तो उसने इन्द्र के सारथि मातलि पर प्रहार किया, फिर इन्द्र के ऊपर बाणों की वर्षा की। तब इन्द्र रथ और सारथि को छोड़कर ऐरावत पर सवार हुए

और मेघनाद को ढूँढ़ने लगे। २१—२५। किन्तु मेघनाद अपनी माया के बल से अदृश्य हो गया। वह आकाश को चला गया और वहीं से इन्द्र के ऊपर बाण चलाने लगा। जब इन्द्र थक गये तब उसने अपनी माया से उनको बाँध लिया और अपनी सेना में ले आया। मेघनाद इन्द्र को बलपूर्वक युद्ध से बाँध ले गया, यह देखकर देवता सोचने लगे कि अब क्या होगा। वह मायावी अपनी विद्या के प्रभाव से दिखाई नहीं देता, अब हम लोग क्या कर सकते हैं। देवताओं ने क्रोध करके रावण के ऊपर बाणों की वर्षा की। तब रावण युद्ध से लौट पड़ा। वह ऐसा पीड़ित हुआ कि वसु और आदित्य को सामने देखकर भी उनसे युद्ध न कर सका। २६—३१। मेघनाद अपने पिता को प्रहारों से जर्जर और व्याकुल देखकर बोला—हे तात! आओ चलें, अब युद्ध करने का क्या काम है। तुमने यह जाना होगा कि इन्द्र को हमने जीत लिया। अब स्वस्थ हो जाओ, इन्द्र ही देवताओं की सेना के और तीनों लोकों के स्वामी हैं, जब उन्हीं को हमने पकड़ लिया तो अब देवताओं का गर्व कहाँ रहा। अब वृथा परिश्रम करने से क्या लाभ। बलवान् शत्रु पकड़ लिया गया, अब युद्ध करना निष्फल है। अब तीनों लोकों का यथेष्ट भोग करो। ३२—३५। मेघनाद के यह वचन सुनकर देवताओं ने युद्ध करना बन्द कर दिया और वहां से चले गये। युद्ध बन्द हो गया, देवता भी चले गये, तब महापराक्रमी रावण बड़े आदर के साथ मेघनाद से बोला—हे पुत्र, तुम हमारे कुल की वृद्धि करनेवाले हो। अत्यन्त बलवानों में भी तुम बलवान् हो, क्योंकि तुमने सब देवताओं को परास्त किया और महापराक्रमी इन्द्र को भी जीत लिया। ३६—३८। इन्द्र को रथ पर बैठाकर सेना के बीच में करके लंका को ले चलो, हम भी अपने मन्त्रियों के साथ तुम्हारे पीछे बड़े हर्ष से आते हैं। यह सुनकर मेघनाद ने इन्द्र को रथ पर बैठा लिया और सेना के साथ लंका को ले गया। घर में

पहुँचकर युद्ध में थके हुए राक्षसों को अपने-अपने घर जाने की आज्ञा दी। ३९—४०।

सर्ग ३०

महाबलवान् इन्द्र को जीतकर मेघनाद जब लंका को चला गया तो ब्रह्मा के साथ सब देवता लंका को गये। रावण अपने भाइयों और पुत्रों के साथ बैठा था, ब्रह्मा आकाश में ही ठहरकर उसको समझाते हुए बोले—बेटा रावण, युद्ध में तुम्हारे पुत्र के पराक्रम से हम बड़े प्रसन्न हुए। वह तुम्हारे समान अथवा तुमसे भी अधिक है। तुमने अपने पराक्रम से तीनों लोकों को जीत लिया और अपनी प्रतिज्ञा पूरी की। हे वीर, तुम्हारा पुत्र मेघनाद बड़ा बलवान् है। आज से यह इन्द्रजित् नाम से विख्यात होगा। हे राजन्, इसकी सहायता से तुमने देवताओं को वश में कर लिया। यह बड़ा पराक्रमी और दुर्जय है। हे महाबाहु, अब इन्द्र को छोड़ दो और बताओ कि इन्द्र को छुड़ाने के लिए देवता तुमको क्या दें। १—७। यह सुनकर इन्द्रजित् बोला—यदि आप हमको अमर कर दें तो हम इन्द्र को छोड़ दें। ब्रह्मा ने कहा—सब प्राणियों से तो तुम अमर नहीं हो सकते, किसी एक प्राणी से तुम अमर हो सकते हो। चाहे पक्षियों से या चौपायों से या मनुष्यों से, अथवा अन्य किसी एक जाति के प्राणियों से तुम अमर हो सकते हो। ब्रह्मा की यह बात सुनकर इन्द्रजित् बोला—अच्छा, इन्द्र के छोड़ने के बदले हम जो सिद्धि चाहते हैं, वह सुनिए। जब हम युद्ध करने को चलें और अग्नि में मन्त्र पढ़कर आहुति दें तो हम शत्रु से न हारें। आहुति देने पर, जुते हुए घोड़ों के साथ रथ अग्नि से प्रकट हो जाय, और जब तक हम उस रथ पर सवार रहें तब तक हमको कोई न मार सके। बस, यही वरदान हमको चाहिए; और यदि अग्नि की पूजा और जप समाप्त न होने पावे, बीच में ही हम युद्ध करने

लगें, ता उस युद्ध में हमारा विनाश हो। हे देव! लोग तपस्या करके अमरता माँगते हैं, किन्तु हमने तो अपने पराक्रम से अमरत्व प्राप्त किया है। ८–१५। ब्रह्मा ने कहा—अच्छा, ऐसा ही होगा। तब मेघनाद ने इन्द्र को छोड़ दिया और देवता उनको साथ लेकर स्वर्ग को चले गये। इस पराजय से इन्द्र का तेज जाता रहा, वे बड़ी दीनता से चिन्ता करने लगे। उनकी यह दशा देखकर ब्रह्मा ने कहा—हे इन्द्र, क्या तुम जानते हो कि तुमने कौन-सा पाप किया था, जिससे तुम्हारी यह दशा हुई? हमने जब सृष्टि की थी तो सब प्रजा एक ही वर्ण की थी। सबकी भाषा एक थी, सबका रूप एक-सा था। देखने में और लक्षण से किसी में कोई विशेषता नहीं पाई जाती थी। तब एकाग्रचित्त होकर उनमें कुछ विशेषता लाने के लिए हम सोचने लगे। हमने एक स्त्री बनाई। प्राणियों के प्रत्येक अंग से सारांश निकालकर रूपगुणसम्पन्न अहल्या नाम की स्त्री उत्पन्न की। हल विरूप का नाम है और हल्य विरूप का भाव है। जिसमें हल्य अर्थात् विरूपता न हो उसे अहल्या कहते हैं। हमने इसीलिए उस स्त्री का नाम अहल्या रक्खा, क्योंकि उसमें किसी प्रकार की विरूपता नहीं थी। हे इन्द्र, अहल्या को जब हमने उत्पन्न किया, तब हम यह सोचने लगे कि यह किसकी भार्या हो। यह तो तुम जानते ही हो कि हमारा पद सब देवताओं से ऊँचा है, इसलिए वह हमारी पत्नी हो सकती थी, किन्तु हमने गौतम मुनि को धरोहर-स्वरूप उसे सौंप दिया था। बहुत वर्षों तक महात्मा गौतम के यहाँ वह धरोहर-रूप रही। फिर उन्होंने उसको लौटा दी। हमने ध्यान करके महामुनि गौतम की सत्यता को देखा और उनकी तपस्या की सिद्धि पर विचार किया, क्योंकि ऐसी सुन्दरी स्त्री साथ रहने पर भी उन्होंने उसका स्पर्श नहीं किया था। तब हमने गौतम को ही भार्या बनाने के लिए वह स्त्री उन्हें दे दी। धर्मात्मा गौतम उसके साथ भोग-विलास करने लगे। जब अहल्या

गौतम को मिल गई तब देवता निराश हो गये। १६–२८। तुम क्रुद्ध होकर गौतम के आश्रम पर गये और अग्नि की शिखा के समान अहल्या को देखकर काम के वश हुए। तुमने उसके साथ दुराचार किया और महर्षि गौतम ने अपने आश्रम पर तुमको देख भी लिया। महातेजस्वी मुनि ने क्रुद्ध होकर तुमको शाप दे दिया, उसी शाप के प्रभाव से तुम्हारा यह अपमान हुआ है। उन्होंने यही शाप दिया था कि हे इन्द्र, तुमने हमारी स्त्री के साथ दुराचार किया है, इसलिए तुमको युद्ध में शत्रु बलपूर्वक बाँध लेगा और हे दुर्बुद्धे, तूने परस्त्रीगमन किया है, इसलिए अब मनुष्य-लोक में भी यह दुराचार प्रचलित हो जायगा और जो मनुष्य परस्त्रीगमन करेगा, उस पाप का आधा भाग तुमको मिलेगा। तुम इस पद पर अटल भी नहीं रह सकोगे, इसमें कोई सन्देह नहीं। यह शाप केवल तुम्हारे ही लिए नहीं है, जो इस पद पर होगा, वह भी अटल नहीं रहेगा। २६–३५। तुमको यह शाप देकर गौतम अपनी स्त्री को डाटकर बोले—रे दुष्टे, तेरा विनाश हो। रूप और यौवन होने के कारण तूने यह दुष्कर्म किया है, इसलिए संसार में अब तू ही अकेली रूपवती न रहेगी, और भी स्त्रियाँ रूपवती होंगी। यदि अकेली तू ही रूपवती न होती, तो इन्द्र तेरे साथ यह दुराचार न करता। ३६–३८। तब से सब प्रजा रूपवती होने लगी। अहल्या यह शाप सुनकर गौतम से प्रार्थना करने लगी—हे महर्षि, इन्द्र ने तुम्हारा रूप धारण करके हमारे साथ भोग किया है। उसने हमें धोका दिया। हमने अपनी इच्छा से यह काम नहीं किया है। इससे आप क्षमा करें। ३९–४०। अहल्या के यह कहने पर महर्षि गौतम बोले—इक्ष्वाकु के वंश में महातेजस्वी विष्णु भगवान् अवतार लेंगे, उनका नाम राम होगा। विश्वामित्र के काम के लिए वे वन को आवेंगे। जब तू उनको देखेगी, तब पवित्र हो जायगी। तूने जो दुष्कर्म किया है, इस पाप से वही तुझको पवित्र कर सकेंगे।

तू उनका अतिथि-सत्कार करना और उसके बाद हमारे पास चली आना। फिर हमारे साथ बहुत दिनों तक रहेगी। ४१–४४। यह कहकर महर्षि गौतम उस आश्रम को छोड़कर चले गये। अहल्या उसी स्थान पर तप करने लगी। हे इन्द्र, गौतम मुनि के शाप से तुम्हारी यह पराजय हुई है। तुमने जो पाप किया था, उसका स्मरण करो। उसी दुष्कर्म का यह फल है, जो तुम शत्रु के हाथ से बाँधे गये। अब तुम एकाग्रचित्त होकर वैष्णव यज्ञ करो। उस यज्ञ के करने से पवित्र होकर फिर स्वर्ग को जाओगे। तुम्हारा पुत्र युद्ध में मारा नहीं गया, उसको उसके नाना पुलोमा ने समुद्र में छिपा रक्खा है। ब्रह्मा के यह वचन सुनकर इन्द्र ने वैष्णव यज्ञ किया, जिसके प्रभाव से वे फिर देवलोक का शासन करने लगे। ४५–५०। हे रामचन्द्र, मेघनाद के बल का हमने यह बखान किया। जब उसने इन्द्र को जीत लिया, तो अन्य प्राणियों की क्या गिनती है। अगस्त्य के यह वचन सुनकर राम-लक्ष्मण को बड़ा आश्चर्य हुआ। उनके समीप बैठे हुए वानरों और राक्षसों को भी विस्मय हुआ। विभीषण ने कहा—हे रामचन्द्र, अगस्त्य मुनि की बातें सुनकर हमको पुरानी बातों का स्मरण हो आया। मुनि जो कहते हैं, वह बिलकुल सत्य है। रामचन्द्र ने अगस्त्य से कहा—आप ठीक कहते हैं, हमने भी ऐसा ही सुना था। मुनि फिर बोले—हे राजन्, तीनों लोकों का शत्रु रावण इस प्रकार उत्पन्न हुआ और इस तरह उसने इन्द्र को परास्त किया। ५१–५४।

सर्ग ३१

रावण का वृत्तान्त सुनकर महातेजस्वी रामचन्द्र नम्रता से बोले—हे भगवन्, क्या उस समय पृथिवी पर कोई राजा नहीं थे? रावण इस तरह पृथिवी पर घूमता था, और उसे कोई परास्त न कर सका? अथवा उस समय के राजा क्या बहुत निर्बल थे, इसलिए रावण ने उनको

जीतकर नगर से निकाल दिया था ? १—४। रामचन्द्र की यह बात सुनकर भगवान् अगस्त्य हँसकर बोले—राजन्, रावण इस प्रकार राजाओं को परास्त करता हुआ पृथिवी पर घूमता था। घूमता हुआ वह माहिष्मती नगरी में पहुँचा। वह नगरी स्वर्गपुरी के समान थी। वहाँ शरकुंड में अग्नि सदा निवास करती थी। वहाँ के राजा का नाम अर्जुन था, वह महाबलवान् था। अग्नि के समान उसका प्रभाव था। ५—८। जिस समय रावण वहाँ पहुँचा, उस समय वहाँ का राजा स्त्रियों को साथ लेकर नर्मदा नदी में स्नान करने गया था। रावण ने मन्त्रियों से पूछा—राजा कहाँ हैं ? शीघ्र जाकर उनसे कहो कि रावण युद्ध करने के लिए आया है। मन्त्री बड़े चतुर थे। उन लोगों ने कहा कि राजा आज यहाँ नहीं हैं। यह सुनकर रावण विन्ध्याचल पर चला गया। वह मेघवर्ण पर्वत इतना ऊँचा था, मानों आकाश को छू रहा है। एक हज़ार शिखर थे, उसकी गुहाओं में सिंह रहते थे। झरनों से शीतल जल शब्द करता हुआ गिरता था। देवता, दानव, गन्धर्व, अप्सराएँ और किन्नर वहाँ क्रीड़ा करते थे जिससे विदित होता था कि स्वर्ग से भी बढ़ कर यहाँ सुख है। नदियों का पानी स्फटिक मणि के समान निर्मल था, कन्दराएँ बहुत सुन्दरी थीं। हिमवान् के समान उस पर्वत को देखता हुआ रावण नर्मदा नदी के तट पर पहुँचा। नर्मदा पश्चिम के समुद्र में मिली है। गर्मी से व्याकुल और प्यासे सिंह, शार्दूल, हाथी, भैंसे, रीछ और सृमर आदि जीव नहाते और पानी पीते थे। ६—२०। चकई-चकवा, बत्तख़, सारस, हंस और जल-मुर्ग़ आदि पक्षी मनोहर बोली बोलते थे। फूले हुए वृक्ष उस नदी के कानों के आभूषण, चकई-चकवा स्तन, पुलिन मानों नितम्ब, हंसों की पाँति मेखला, पुष्पों का पराग अंगराग, जल का फेन मानों निर्मल वस्त्र और जल में प्रवेश करने से उसके सब अंगों के स्पर्श का सुख मिलता था। फूली हुई कमिलिनी उसके नेत्र थे। सुन्दरी स्त्री के समान नर्मदा को देखकर रावण पुष्पक

विमान से उतर पड़ा। सिद्ध-मुनि-सेवित नर्मदा के तट पर उतरकर अपने मन्त्रियों से बोला—यह नदी गंगा के समान है। नर्मदा को देखकर वह बड़ा प्रसन्न हुआ, फिर अपने मन्त्रियों से कहने लगा—देखो, जो सूर्य अपनी हज़ारों किरणों से संसार को सुवर्ण के रंग का कर देते हैं, वे हमको यहाँ बैठे देखकर चन्द्रमा के समान शीतल हो गये हैं। पवन हमारे डर से नर्मदा के जल से शीतल और फूले हुए वृक्षों से सुगन्धित होकर श्रम को दूर करता हुआ धीरे-धीरे बहता है। यह नर्मदा नदी मगर, घड़ियाल और पक्षियों के साथ डरती हुई स्त्री के समान हमको प्राप्त हुई है। तुम लोग इन्द्र के समान पराक्रमी राजाओं से युद्ध करने के कारण घायल हुए हो। तुम्हारे अंगों में लाल चन्दन के समान रुधिर लगा है, इसलिए अब नर्मदा में स्नान करो, जैसे सार्वभौम आदि महागज गंगा में स्नान करते हैं। इस नदी में स्नान करने से सब पाप छूट जायँगे। हम भी शरद ऋतु के चन्द्रमा के समान श्वेत इस पुलिन में बैठकर फूलों से शिव की पूजा करेंगे। रावण के यह कहने पर प्रहस्त, शुक, सारण, महोदर और धूम्राक्ष नर्मदा में स्नान करने लगे। जैसे वामन, अंजन और पद्म आदि दिग्गज गंगा में स्नान करते हैं वैसे ही वे राक्षस नर्मदा में स्नान करने लगे। उनके स्नान करने से नर्मदा का पानी मथ गया। २१—३६। स्नान करके वे सब राक्षस पूजा के निमित्त फूल तोड़ने लगे। नर्मदा के पुलिन में सफ़ेद फूलों का पर्वत के समान ढेर लगा दिया। रावण भी विमान से उतरा और जैसे महागज गंगा में स्नान करे, वैसे ही उसने नर्मदा में स्नान किया। स्नान और जप करके बाहर आया और दूसरा वस्त्र पहनकर नर्मदा को हाथ जोड़कर चला। उसके मन्त्री भी उसके पीछे-पीछे चले। फिर उसने सुवर्ण की बनी हुई मूर्ति को नर्मदा के पुलिन में स्थापित किया, और सुगन्धित फूलों से उसकी पूजा करके क्लेशों का नाश करनेवाले

चन्द्रमौलि शिव के आगे हाथ फैलाकर नाचने और गाने लगा। ३७–४४।

सर्ग ३२

रावण नर्मदा के किनारे जहाँ शिव की पूजा कर रहा था वहाँ से थोड़ी ही दूर पर माहिष्मती का राजा अर्जुन नर्मदा के जल में स्त्रियों के साथ क्रीड़ा करता था। अर्जुन के हज़ार भुजाएँ थीं। उसने अपने बल की परीक्षा करने के लिए भुजाओं को फैलाकर नर्मदा का जल रोक दिया। रुकने के कारण जल किनारों को गिराता हुआ ऊपर को चढ़ने और उलटा बहने लगा। १–५। वर्षा के जल के समान नर्मदा का जल बढ़ा। मछली, मगर, घड़ियाल, फूल, कुश आदि तैरने लगे। रावण ने शिव की पूजा के लिए जो सामग्री एकत्र की थी, वह जल की बाढ़ से बह गई। उस समय पूजा समाप्त न हुई थी। रावण यह हाल देखकर बड़ा कुपित हुआ। वह बड़े आश्चर्य से नर्मदा की ओर देखने लगा। उसने देखा कि नदी का पानी उलटा बह रहा है। तट पर बैठे हुए पक्षी उड़ गये हैं। वह मौन व्रत धारण किये पूजा कर रहा था, इसलिए मुँह से न बोला, दाहिने हाथ की उँगली से नर्मदा के उलटे बहने का कारण जानने के लिए शुक और सारण को संकेत किया। ६–११। रावण की आज्ञा से वे दोनों राक्षस पश्चिम की ओर आकाशमार्ग से चले। दो कोस पर जाकर उन्होंने देखा कि एक पुरुष स्त्रियों के साथ जल में क्रीड़ा कर रहा है। वह साखू के वृक्ष के समान ऊँचा है, उसके सिर के बाल पानी में तैर रहे हैं। मद से उसकी आँखें लाल हो रही हैं और उसका चित्त भी व्याकुल-सा है। उसके एक हज़ार भुजाएँ हैं, उन भुजाओं से उसने नदी का वेग रोक दिया है। हज़ारों सुन्दरी स्त्रियों के बीच में वह वैसे ही क्रीड़ा कर रहा है, जैसे हथिनियों के बीच में मदान्ध हाथी क्रीड़ा करता

हो।१२-१६।शुक और सारण उसे देखकर लौट आये और रावण से बोले—हे राक्षसेश्वर, साखू के वृक्ष के समान लम्बा एक पुरुष अपनी भुजाओं से नर्मदा के जल को रोके है। उसके हज़ार भुजाएँ हैं, उन भुजाओं से जल को रोककर स्त्रियों के साथ क्रीड़ा करता है। उसी के रोकने से नदी का जल पूर्णमासी को समुद्र के समान उमड़ रहा है।१७-१६।शुक और सारण के मुँह से यह बात सुनकर रावण समझ गया कि वह सहस्रार्जुन है। तब युद्ध करने के लिए वह चला। उस समय बड़े ज़ोर से आँधी चली, धूलि उड़ी, बादल गरजकर रुधिर मिला हुआ पानी बरसाने लगे। रावण के मन्त्री शुक, सारण, महोदर, महापार्श्व और धूम्राक्ष आदि भी उसके पीछे-पीछे चले। वह मन्त्रियों के साथ बहुत शीघ्र वहाँ पहुँचा, जहाँ सहस्रार्जुन क्रीड़ा करता था।२०-२३। रावण मद की गन्ध से सुगन्धित हथिनियों के समान स्त्रियों के साथ हाथी के समान सहस्रार्जुन को देखकर बड़े क्रोध से लाल-लाल आँखें करके उसके मन्त्रियों से बोला—हे मन्त्रियो, राजा से कहो कि रावण नाम का प्रसिद्ध वीर तुम्हारे साथ युद्ध करने के लिए आया है। रावण की यह बात सुनकर मन्त्रियों ने अपने अस्त्र उठाये और उससे कहा—रावण, तुम बड़े बुद्धिमान् हो! युद्ध का समय तुम खूब जानते हो! मदिरा पान करके जो स्त्रियों के साथ क्रीड़ा कर रहे हैं, उनसे तुम युद्ध करने आये हो। यदि युद्ध करना ही चाहते हो तो आज रात भर ठहरो, कल प्रातःकाल युद्ध करना।२४-३०। यदि तुमको बहुत जल्दी है, अभी युद्ध करने की तुम्हारी इच्छा है, तो पहले हम लोगों को युद्ध में मारकर राजा के पास जाओ। यह कहते ही रावण के और अर्जुन के मन्त्रियों से युद्ध होने लगा। रावण के भूखे मन्त्रियों ने उन सबको मारकर खा लिया। नर्मदा के तट पर बड़ा कोलाहल मच गया।बाण, तोमर, प्रास, त्रिशूल और वज्र आदि अस्त्रों

की वर्षा हुई। अर्जुन के और भी सैनिक राक्षसों से युद्ध करने आये। घोर युद्ध हुआ। समुद्र के शब्द के समान भयानक शब्द होने लगा।३१–३५। प्रहस्त और शुक-सारण आदि रावण के मन्त्रियों ने अर्जुन की सेना का विनाश कर दिया। कुछ लोग डर के मारे भागकर अपने राजा के पास गये, और रावण का यह हाल उनसे बताया। सहस्रार्जुन ने उन लोगों से कहा कि डरो नहीं। फिर वे अपनी स्त्रियों को लेकर जल के बाहर आये, जैसे अंजन नाम का दिग्गज अपनी हथिनियों के साथ गंगा नदी से बाहर आवे। क्रोध के मारे सहस्रार्जुन की आँखें अंगार के समान हो गईं। गदा लेकर प्रलयकाल की अग्नि के समान वे रावण की ओर दौड़े, जैसे अन्धकार की ओर सूर्य दौड़ते हैं।३६–४०। गरुड़ के समान वेगवान् अर्जुन जब राक्षसों की ओर दौड़े, तो प्रहस्त मुसल लेकर उसी प्रकार उनका मार्ग रोककर खड़ा हो गया जैसे सूर्य के मार्ग में विन्ध्याचल खड़ा है। उसने यमराज के समान कुपित होकर अर्जुन के ऊपर लोहे का मुसल चलाया, किन्तु अर्जुन ने अपनी गदा से रोक लिया, वह उनके ऊपर न आने पाया। फिर उन्होंने पाँच सौ भुजाओं से बड़ी भारी गदा उठाकर प्रहस्त की छाती में मारी। गदा के प्रहार से वह पृथिवी पर गिरा, जैसे वज्र के प्रहार से पर्वत गिरे थे। प्रहस्त को गिरा हुआ देखकर मारीच, शुक, सारण, महोदर और धूम्राक्ष आदि रावण के मन्त्री भाग खड़े हुए। इस प्रकार जब प्रहस्त गिर गया और अन्य सब साथी भाग गये तो रावण बड़ी शीघ्रता से अर्जुन की ओर दौड़ा। सहस्रबाहु अर्जुन से बीस भुजा-वाले रावण का युद्ध होने लगा। यह राक्षसों का राजा था और वे मनुष्यों के।४१–५०। बड़ा रोमहर्षण युद्ध हुआ। बढ़ते हुए दो समुद्रों के समान, चलते-फिरते दो पर्वतों के समान, महातेजस्वी दो सूर्यों के समान, भस्म करते हुए दो अग्नियों के समान, बल से गर्वित दो हाथियों के समान, बलवान् दो साँड़ों के समान, गरजते हुए दो

बादलों के समान, बलवान् दो सिंहों के समान, रुद्र और काल के समान, सहस्रबाहु अर्जुन और रावण परस्पर गदा का प्रहार करते थे।५१-५३। जैसे पर्वतों ने वज्र के प्रहार सहे थे, वैसे ही इन दोनों वीरों ने गदा के प्रहार सह लिये। वज्र के ही गिरने के समान उनकी गदा के शब्द होते थे। उनका शब्द सब दिशाओं में फैल गया।५४-५५। अर्जुन की गदा के प्रहार से रावण की छाती में घाव हो गया और रुधिर बह चला, जिससे वह ऐसा जान पड़ा, मानों काले बादल में बिजली चमकती है। अर्जुन की छाती पर भी उसी प्रकार गदा के प्रहार हुए, जैसे पर्वत के ऊपर उल्का गिरती है। दोनों वीरों का समान युद्ध होता रहा, कोई भी न थका। जैसे बलि और इन्द्र का युद्ध हुआ था वैसे ही इन दोनों वीरों ने तुमुल युद्ध किया। जैसे सींगों से दो साँड़ लड़ें, दाँतों से दो हाथी युद्ध करें, वैसे ही ये दोनों वीर गदा से युद्ध करते थे। सहस्रार्जुन ने बड़े क्रोध से पूरा बल लगाकर रावण की छाती में एक गदा मारी, किन्तु वरदान के प्रभाव से, दुर्बल के समान, वह टूटकर गिर पड़ी। रावण तीन हाथ पीछे हट गया और व्याकुल होकर बैठ गया। उसे व्याकुल देखकर सहस्रार्जुन ने बड़ी शीघ्रता से वैसे ही पकड़ लिया जैसे गरुड़ साँप को पकड़ ले। बलवान् सहस्रबाहु अर्जुन ने अपनी हज़ार भुजाओं से उसको बाँध लिया, जैसे विष्णु ने बलि को बाँधा था।५६-६४। रावण को बँधा हुआ देखकर देवता, सिद्ध और चारण अर्जुन की प्रशंसा करने लगे और उनके ऊपर फूल बरसाये। जैसे बाघ मृग को और सिंह हाथी को पकड़े, वैसे ही सहस्रार्जुन ने रावण को पकड़ लिया, और बादल के समान बार-बार गरजने लगा।६५-६६। उसी समय प्रहस्त की मूर्च्छा जागी। रावण को बँधा हुआ देखकर वह बड़े क्रोध से दौड़ा। उसके साथ शुक, सारण आदि और भी राक्षस दौड़े। बरसात के बादलों के समान वेग से दौड़ते हुए राक्षस "छोड़ो-छोड़ो और खड़े रहो, खड़े

रहो" पुकारते थे। राक्षसों ने मुसल और शूल चलाये, किन्तु शत्रु-नाशन सहस्रार्जुन ने उन अस्त्रों को हाथों से पकड़ लिया और उन्हीं अस्त्रों से मारकर उन राक्षसों को उसी प्रकार भगा दिया, जैसे पवन बादलों को उड़ा देता है। ६७—७१। राक्षसों को पीड़ित करके और रावण को पकड़कर सहस्रार्जुन अपने सुहृदों के साथ नगर को गये। वहाँ ब्राह्मणों और नगर-निवासियों ने उनके ऊपर अक्षत-और फूल बरसाकर उनका सम्मान किया। जैसे इन्द्र ने बलि को बाँध लिया था, वैसे ही सहस्रार्जुन ने रावण को पकड़ लिया, और अपनी राजधानी माहिष्मती को ले गये। ७२—७३।

सर्ग ३३

वायु को पकड़ने के समान रावण का पकड़ जाना पुलस्त्य मुनि ने स्वर्ग में देवताओं से सुना। रावण उनका पौत्र था, उसके स्नेह से उसे देखने के लिए वे माहिष्मती को आये। मन और वायु के समान वेग से आकाशमार्ग से चलकर पुलस्त्य मुनि माहिष्मती में पहुँचे। हृष्ट-पुष्ट मनुष्यों से भरी हुई माहिष्मती इन्द्रपुरी के समान शोभित थी। जैसे ब्रह्मा इन्द्रपुरी में प्रवेश करें, वैसे ही पुलस्त्य मुनि माहिष्मती को गये। पैदल आते हुए सूर्य के समान मुनि को देखकर दूतों ने सहस्रार्जुन को खबर दी। १—५। सहस्रबाहु अर्जुन हाथ जोड़कर उनका स्वागत करने के लिए चले। अर्घ्य और मधुपर्क लेकर उनका पुरोहित भी उनके आगे वैसे ही चला जैसे इन्द्र के आगे बृहस्पति चलते हैं। उदय हुए सूर्य के समान मुनि को देखकर अर्जुन ने प्रणाम किया और मधुपर्क, अर्घ्य, पाद्य देकर बड़े हर्ष से गद्गद वाणी से कहा—हे द्विजराज, आपके दुर्लभ दर्शन पाकर मैं कृतार्थ हुआ। आपके आगमन से यह माहिष्मती नगरी अमरावती के समान पवित्र हो गई। देवता भी आपके चरणों में प्रणाम करते हैं, उन चरणों की

वन्दना करके आज मेरा जन्म सफल हुआ। जो व्रत और तपस्या आज तक हमने की थी, वह सब सफल हुई। यह राज्य, यह पुत्र, ये स्त्रियाँ और हम, सब आपही के हैं। हे ब्रह्मन्! क्या आज्ञा है, मुझे क्या करना चाहिए? ६–१२। मुनि ने राजा से धर्म और पुत्रों की कुशल पूछी, फिर वे उनकी प्रशंसा करने लगे——हे नरेन्द्र, हे कमलदललोचन, हे पूर्णचन्द्रानन, तुम महाबलवान् हो; क्योंकि तुमने रावण को जीत लिया है। रावण के भय से समुद्र और पवन अचल हो जाते हैं। हमारा पौत्र रावण रण में दुर्जेय है, उसे तुमने बाँध लिया, उसकी कीर्ति मिटा दी और अपना नाम संसार में प्रसिद्ध कर दिया। किन्तु हे वत्स, अब हमारे कहने से उसे छोड़ दो। १३–१६। पुलस्त्य की आज्ञा पाते ही, सहस्रबाहु अर्जुन ने उनकी बात का कुछ भी उत्तर न देकर, बड़े हर्ष से झट रावण को छोड़ दिया। उसे दिव्य वस्त्र और आभूषण पहनाया; अग्नि को साक्षी करके परस्पर अहिंसक मित्रता हुई, अर्थात् अर्जुन ने यह शर्त की कि किसी को सताने में हम तुम्हारी सहायता न करेंगे। फिर पुलस्त्य मुनि को प्रणाम करके वे अपने घर को गये। अर्जुन ने रावण को हृदय से लगाया, और अतिथि-सत्कार करके उसे बिदा किया। रावण युद्ध में परास्त होने और पुलस्त्य से छुड़ाये जाने के कारण बड़ा लज्जित हुआ। ब्रह्मा के पुत्र, मुनियों में श्रेष्ठ पुलस्त्य, रावण को छुड़ाकर ब्रह्मलोक को चले गये। १७–२०। हे रामचन्द्र, इस प्रकार महाबलवान् रावण सहस्रबाहु अर्जुन से परास्त हुआ, और पुलस्त्य मुनि के कहने पर छोड़ा गया। संसार में एक से एक बढ़कर बलवान् हैं, इसलिए जो अपना कल्याण चाहे, वह दूसरों का अपमान न करे। २१–२२। मांसाहारी राक्षसों के राजा रावण से इस प्रकार सहस्रबाहु अर्जुन से मित्रता हुई। वह अपने बल के गर्व से फिर पृथिवी में घूमने और राजाओं को पीड़ित करने लगा। २३।

सर्ग ३४

रावण सहस्रबाहु अर्जुन से इस प्रकार परास्त हुआ, किन्तु वह इस अपमान को भूलकर फिर पृथिवी में घूमने लगा और जिस किसी को बलवान् सुनता था, उसी को युद्ध के लिए ललकारता था। कुछ दिनों के बाद वह किष्किन्धा में पहुँचा और बालि को युद्ध के लिए पुकारा। उसका शब्द सुनकर तारा के पिता, बालि के श्वशुर और मन्त्री, तार नामक वानर ने रावण से कहा—हे राक्षसेन्द्र, जो तुम्हारे समान बलवान् है, वह बालि इस समय नगर में नहीं है; उसके सिवा और कौन वानर तुमसे युद्ध कर सकता है। तुम एक मुहूर्त भर ठहरो, बालि चारों समुद्रों में सन्ध्या करके अभी आता होगा। किन्तु शंखों के समान सफ़ेद हड्डियों का यह ढेर देखो। यह उन लोगों की हड्डियाँ हैं, जो बालि से युद्ध करने के लिए आये थे और उसके हाथ से मारे गये। हे राक्षस, यद्यपि तुमने अवध्य होने का वरदान पाया है, किन्तु बालि से युद्ध करके अवश्य मारे जाओगे। एक मुहूर्त और संसार की विचित्रता देख लो, उसके बाद यह संसार तुम्हारे लिए दुर्लभ हो जायगा, और यदि बहुत जल्दी मरना चाहते हो तो दक्षिण समुद्रके तट पर चले जाओ, वहाँ प्रज्वलित अग्नि के समान बालि को देखोगे। १–१०। तार की यह बातें सुनकर रावण ने उनको बहुत डाटा। फिर वह पुष्पक विमान पर चढ़कर दक्षिण समुद्र के तट पर गया। वहाँ दोपहर के सूर्य के समान प्रकाशित मुखवाले बालि सन्ध्योपासना कर रहे थे। पुष्पक विमान से उतरकर, काजल के समान काला रावण, सुवर्ण-पर्वत के समान बालि को पकड़ने के विचार से धीरे-धीरे चला, जिसमें पैर की चाप न सुनाई दे। किन्तु बालि ने उसे देख लिया और उसका अभिप्राय भी वह समझ गया। फिर भी उसे कोई भय न हुआ। जैसे खरगोश को देखकर सिंह, अथवा साँप को देखकर गरुड़ को कोई चिन्ता न हो, वैसे ही रावण को देखकर बालि ने कुछ भी चिन्ता न

[...]। उसने यह निश्चय किया कि इस पापी को पकड़कर बगल में [...] लेंगे और बाकी तीन समुद्रों में सन्ध्या करने के लिए चले जायँगे। [...] में दबने से इस शत्रु का वस्त्र खिसक जायगा और बगल में [...]कते हुए इसे लोग वैसे ही देखेंगे, जैसे गरुड़ के पंजे में लटकते हुए [...] को देखते हैं। ११—१७। बालि यह निश्चय करके वेद के मन्त्र [...]ता हुआ चुपचाप हिमवान् पर्वत के समान स्थिर रहा। दोनों [...] एक-दूसरे को पकड़ने की घात में थे; दोनों को अपने बल का गर्व [...]। रावण के पैरों की आहट से बालि ने जब जान लिया कि अब [...] लपकाकर इसे पकड़ लेंगे, तो झट पीछे को मुँह करके उसी प्रकार [...] पकड़ लिया जैसे गरुड़ साँप को पकड़ ले। १८—२०। उसे [...] में दबाकर नखों से नोचता और पीड़ित करता हुआ आकाश [...] से चला, जैसे पवन मेघ को लेकर चलता है। २१—२२। जब बालि रावण को हर ले गया, तो उसके मन्त्री उसे छुड़ाने के लिए [...]ते हुए दौड़े। पीछे दौड़ते हुए राक्षसों से बालि उसी प्रकार शोभित हुआ, जैसे सूर्य के पीछे बादल दौड़ रहे हों। किन्तु प्रहस्त आदि राक्षस बालि के पीछे उतने वेग से न दौड़ सके। बालि की जाँघों और हाथों के प्रहार से वे बहुत व्याकुल होकर लौट गये। रुधिर और मांस के शरीरवाले प्राणी, जिनको अपने प्राणों की ममता है, उनकी तो गिनती ही क्या, पर्वत भी बालि के पीछे नहीं दौड़ सकते थे। २३—२६। जहाँ पक्षी भी नहीं जा सकते, उन समुद्रों के तट पर महावेगवान् बालि सन्ध्योपासना करता था। रावण को काँख में दबाकर आकाश मार्ग से पहले वह पश्चिम समुद्र के तट पर गया, वहाँ स्नान, जप और सन्ध्या करके उत्तर के समुद्र को गया। उत्तर के समुद्र में स्नान और सन्ध्या करके पूर्व महासागर के किनारे पहुँचा। रावण को काँख में दबाये उसने यह सब काम किये। पूर्व समुद्र में भी स्नान और सन्ध्या करके रावण को बगल में दबाये किष्किन्धा को आया। पवन

और मन के समान वेग से हज़ारों योजन की यात्रा रावण को बगल में दबाये हुए बालि ने की, और कुछ भी न थका। किष्किन्धा के उपवन में रावण को छोड़कर हँसता हुआ बोला--तुम कहाँ से आये हो? बगल में दबने के कारण वह बहुत पीड़ित हो गया था। आश्चर्य के मारे उसकी आँखें चंचल हो गई थीं। उसने बालि से कहा--हे वानरेन्द्र, हम राक्षसों के राजा रावण हैं, तुमसे युद्ध करने आये थे, किन्तु तुमने परास्त कर दिया। ओह! तुम बड़े बलवान् हो, महावीर्यवान् हो, बड़े गम्भीर हो। तुमने पशु के समान हमको पकड़कर चारों समुद्रों के तट पर घुमाया। हे वीर, संसार में ऐसा कौन पुरुष है, जो हमको लेकर इतनी शीघ्रता से चारों समुद्रों के तट पर घूम आवे और फिर भी न थके। मन, पवन और गरुड़ में ही ऐसी सामर्थ्य है; इनके सिवा चौथे तुम्हीं हो जो ऐसी सामर्थ्य रखते हो। इसमें कोई सन्देह नहीं। २७–३६। हे वानरश्रेष्ठ, हमने तुम्हारा बल देख लिया, अब तुम्हारे साथ मित्रता करना चाहते हैं। मित्र का कोई पदार्थ बँटा हुआ नहीं होता। आज से हमारे और तुम्हारे भी नगर, राज्य, पुत्र, स्त्री, वस्त्र और आभूषण एक-समान हैं। फिर उन दोनों ने अग्नि को साक्षी करके परस्पर मित्रता की। हाथ मिलाये और दोनों परस्पर गले लगे। बालि उसे किष्किन्धा को ले गया। दो सिंहों के समान दोनों वीर पर्वत की कन्दरा में गये। बालि ने सुग्रीव के समान उसका प्रिय किया। एक महीने तक वह किष्किन्धा में रहा। उसके बाद प्रहस्त आदि उसके मन्त्री ढूँढ़ते-ढूँढ़ते किष्किन्धा को आये और उसे लंका को ले गये। ४०–४४। इस प्रकार बालि ने रावण को परास्त किया और अग्नि के समीप उससे मित्रता की। बालि के समान बलवान् संसार में और कोई न था। उसे भी आपने उसी प्रकार मार डाला, जैसे अग्नि पतिंगे को नष्ट कर दे। ४५–४६।

सर्ग ३५

रामचन्द्र ने हाथ जोड़कर अगस्त्य से विनयपूर्वक कहा—यद्यपि बालि और रावण महाबलवान् थे, किन्तु हमारी समझ में वे भी हनुमान् के बराबर बलवान् नहीं थे। शूरता, चतुरता, बल, धैर्य, बुद्धि, नीति, पराक्रम और प्रभाव यह सब हनुमान् में हैं। समुद्र को देखकर जब वानर बहुत व्याकुल हुए, तो महाबाहु हनुमान्, सब को आश्वासन देकर सौ योजन समुद्र लाँघ गये। लंका में जाकर अन्तःपुर की अशोक-वाटिका में सीता को देखा। उनको समझाया, तसल्ली दी। बहुत-से राक्षसों को मार डाला, मन्त्रियों के पुत्रों को, रावण के अनुचरों और एक पुत्र को भी मारा। यद्यपि राक्षसों ने उनको बाँध लिया था, किन्तु बन्धन में भी उन्होंने निर्भय होकर रावण से बातें कीं, और बन्धन से छूटकर लंका को भस्म कर दिया। हनुमान् ने जो काम किये हैं, इन्द्र, यम, कुबेर, और विष्णु भी वैसे काम नहीं कर सकते। हनुमान् के ही बाहु-बल से हमने लंका को जीता, सीता और लक्ष्मण को पाया। राज्य, मित्र और बन्धु सब इन्हीं के बाहु-बल से हमें प्राप्त हुए। यदि हनुमान् न होते तो ऐसा कौन बलवान् था, जो सीता की खबर लाता। १—१०। किन्तु जब बालि और सुग्रीव से वैर हुआ, तो इन्होंने बालि को क्यों नहीं मार डाला? अपने मित्र सुग्रीव को दुःखित देखकर बालि को जो इन्होंने नहीं मारा, इससे जान पड़ता है कि इनको अपने बल का ज्ञान नहीं था। हे भगवन्, हनुमान् का चरित्र विस्तार के साथ कहिए। ११—१३। रामचन्द्र के यह वचन सुनकर अगस्त्य मुनि हनुमान् के सामने ही बोले—हे रघुनन्दन, जो आप कहते हैं, वह सत्य है। बल, बुद्धि और वेग में इनके समान और कोई नहीं हैं। किन्तु जिनका शाप निष्फल नहीं होता, ऐसे मुनियों ने इनको शाप दिया था कि बलवान् होने पर भी तुमको अपने संपूर्ण बल का ज्ञान न रहेगा। १४—१६। यह ऐसे बलवान् हैं कि बालकपन में जो

कठिन काम इन्होंने किये हैं, उनका वर्णन नहीं किया जा सकता। हे रामचन्द्र, यदि आप जानना चाहते हैं, तो सावधान होकर इनके पराक्रम की बातें सुनिए। इनका पिता केसरी जिस पर्वत पर रहता था, वह पर्वत सूर्य के वरदान से सुवर्णमय है। उसका नाम सुमेरु पर्वत है। केसरी की भार्या का नाम अंजना था। उसके गर्भ से इनका जन्म हुआ, किन्तु इनके पिता पवन हैं। १७—२०। इनके जन्म के बाद इनकी माता फल लेने के लिए वन को गईं। माता के वियोग से और भूखे होने के कारण ये रोने लगे, जैसे शरवण में कार्त्तिकेय ने रोदन किया था। प्रातःकाल का समय था, दुपहरी के फूल के समान रक्तवर्ण सूर्य उदय हुए थे। ये भूखे तो थे ही, सूर्य को फल समझकर पकड़ने के लिए दौड़े। बालक हनुमान् को आकाश में जाते देखकर देवता, दानव और यक्ष बड़े विस्मित हुए। क्योंकि वायु, गरुड़ और मन भी उतने वेग से नहीं चलता, जितने वेग से ये दौड़े थे। २१—२६। देवता सोचने लगे कि बालकपन में जब यह ऐसा वेगवान् है, तो युवाअवस्था में इसका वेग कैसा होगा। सूर्य के तेज से ये भस्म न हो जायँ, इस भय से इनका पिता वायु इनकी रक्षा के लिए बरफ़ के समान शीतल होकर इनके साथ चला। अपने पराक्रम से और पिता की सहायता से हज़ारों योजन चलकर सूर्य के समीप पहुँचे। सूर्य ने यह सोचकर कि यह बालक है, इसे अपनी रक्षा का ज्ञान नहीं है, इसके सिवा समय आने पर यह बहुत बड़ा काम करेगा, इसलिए इनको भस्म नहीं किया। २७—३०। जिस दिन सूर्य को पकड़ने के लिए ये दौड़े थे, उस दिन राहु भी सूर्य को ग्रहण करने जा रहा था। इन्होंने सूर्य के रथ के ऊपर जाकर राहु को ऐसा धक्का दिया कि वह डर के मारे भाग खड़ा हुआ। वह बड़े क्रोध से इन्द्र के पास जाकर बोला—तुमने चन्द्रमा और सूर्य को हमारी भूख मिटाने के लिए दिया था, अब यह क्या बात है कि तुमने सूर्य को

और किसी को दे दिया। आज पर्व का दिन है, हम सूर्य को ग्रहण करते थे, उसी समय दूसरे राहु ने आकर उनको पकड़ लिया। ३१–३५। राहु की यह बात सुनकर इन्द्र बहुत घबराये, आसन छोड़कर उठ खड़े हुए। कैलास पर्वत के समान सफ़ेद, चार दाँतवाले, सब आभूषणों से भूषित ऐरावत हाथी पर सवार होकर, राहु को आगे करके उस स्थान को गये, जहाँ हनुमान् और सूर्य थे। ३६–३८। राहु बड़े वेग से आगे दौड़ा और इन्द्र के पहुँचने से पहले ही वह सूर्य के समीप पहुँच गया। इन्होंने पर्वत के शिखर के समान उसे आते देखकर सूर्य को छोड़ दिया और फल समझकर उसको पकड़ने दौड़े। ३९–४०। हे रामचन्द्र, इनको आते देखकर राहु फिर पीछे को भागा। डर के मारे इन्द्र के पास जाकर बार-बार हे इन्द्र, हे इन्द्र, कहने लगा। राहु का चिल्लाना सुनकर इन्द्र ने कहा—डरो मत, हम इसे मारते हैं। उसी समय इन्होंने ऐरावत को देखा और उसे बड़ा भारी फल समझकर पकड़ने दौड़े। इनका रूप इन्द्र आदि देवताओं से भी बढ़कर तेजस्वी था। इन्द्र ने इनको बालक समझकर बहुत क्रोध नहीं किया। धीरे से वज्र का प्रहार किया। वज्र लगते ही ये पर्वत के ऊपर गिर पड़े और बाँईं ओर की ठुड्ढी टूट गई। वज्र के प्रहार से इनको गिरा हुआ देखकर पवन को इन्द्र के ऊपर बड़ा क्रोध आया। वे प्रजा का अहित करने लगे। सब प्राणियों में जो पवन की गति है, उसे उन्होंने बन्द कर दी, और अपने पुत्र को गोद में लेकर पर्वत की कन्दरा में चले गये। शरीर में वायु की गति बन्द हो जाने से सब प्राणी व्याकुल हो गये, उनका मल-मूत्र रुक गया। सबको बड़ा दुःख हुआ। जैसे इन्द्र के पानी न बरसाने पर प्रजा पीड़ित होती है, वैसे ही उस समय सब प्राणी व्याकुल हो गये। ४१–५०। सबकी श्वास बन्द हो गई, सन्धियों में पीड़ा होने लगी, सबके शरीर काष्ठ के समान हो गये, स्वाहा, स्वधा, वषट्कार आदि सब काम बन्द हो गये, वायु के प्रकोप से तीनों

लोक नरक में पड़ने के समान विकल हुए। तब देवता, गन्धर्व, दैत्य और मनुष्य आदि सब प्राणी ब्रह्मा के पास गये। वायु के प्रकोप से उनके पेट फूल गये थे, वे हाथ जोड़कर बोले—हे भगवन्, आपने अंडज, स्वेदज, उद्भिज और जरायुज, चार प्रकार के प्राणियों की सृष्टि की है। आप ही ने हम लोगों के जीवन के लिए पवन को दिया है। अब न जाने किस कारण से हम लोगों के प्राणेश्वर पवन हमको पीड़ित कर रहे हैं। उन्होंने अपनी गति रोक दी है, अंतःपुर में स्त्रियों के समान उनकी गति बन्द हो गई है। वायु से पीड़ित होने के कारण हम लोग आपकी शरण में आये हैं, आप हमारे इस दुःख को दूर करें। ५१–५६। प्रजापति ब्रह्मा उनकी यह बातें सुनकर बोले—जिस कारण से वायु ने क्रोध किया और गति रोक दी है, वह सुनो। तुम लोगों के सुनने की बात है। आज इन्द्र ने राहु के कहने से पवन के पुत्र को मारा है, इसी से पवन ने क्रोध किया है। यद्यपि पवन शरीरधारी नहीं हैं, किन्तु सब प्राणियों के शरीर में रक्षा करते हुए घूमते हैं। पवन के विना शरीर काठ के समान हो जाते हैं। पवन ही प्राण है, पवन ही सुख है, यह संपूर्ण जगत् पवन ही है। पवन के विना जगत् सुखी नहीं रह सकता। यही जगत् को आयु देनेवाला है। आज इसने जगत् को छोड़ दिया है, इसलिए संपूर्ण जगत् काठ और जड़ के समान हो गया। इस रोग को देनेवाले पवन के पास सब लोग चलो। पवन को प्रसन्न किये विना सबका विनाश हो जायगा। ५७–६४। देवता, गन्धर्व, भुजंग, गुह्यक आदि सब प्राणियों को लेकर प्रजापति ब्रह्मा उस स्थान को गये, जहाँ इन्द्र के वज्र से आहत हनुमान् को गोद में लिये पवन बैठे थे। हनुमान् के शरीर का रंग सूर्य, अग्नि और सुवर्ण के समान था। पवन की गोद में उनको देखकर देवता, गन्धर्व, ऋषि, यक्ष और राक्षसों सहित ब्रह्मा को दया आई। ६५–६६।

सर्ग ३६

पितामह ब्रह्मा को देखकर पवन पुत्र को गोद में लिये हुए खड़े हो गये। उन्होंने ब्रह्मा को प्रणाम किया और ब्रह्मा ने अपने हाथों से उनके पुत्र का स्पर्श किया। ब्रह्मा के हाथ का स्पर्श होते ही मुरझाये हुए धान के खेत में पानी पड़ने के समान पवन-पुत्र हनुमान् फिर जीवित हो गये। अपने पुत्र को जीवित देखकर पवन सब प्राणियों में फिर पहले की तरह चलने लगे। १-५। प्रजा वैसे ही आनन्दित हो गई जैसे शीतल पवन के वेग से बची हुई कमलिनी। तीनों लोकों के स्वामी ब्रह्मा पवन का प्रिय करने की इच्छा से देवताओं से बोले—हे देवताओ, यद्यपि तुम लोग जानते हो, फिर भी तुम्हारे हित की बात कहते हैं, सुनो—यह पवन का पुत्र तुम लोगों का कार्य करेगा, इसलिए तुम लोग इसे वरदान देकर पवन को सन्तुष्ट करो। तब इन्द्र ने कमल की माला अपने गले से निकालकर हनुमान् को दी और कहा—वज्र के प्रहार से इनकी हनु (ठुड्ढी) टूट गई है, इसलिए इन का नाम हनुमान् होगा। एक और बड़ा अद्भुत वरदान इनको देते हैं, हमारे वज्र के प्रहार से इनकी मृत्यु नहीं हो सकती। ६-१२। भगवान् सूर्य ने कहा कि हम अपने तेज का सौवाँ भाग इनको देते हैं और जब ये शास्त्र पढ़ने योग्य होंगे तब इन्हें सब शास्त्र पढ़ा देंगे, जिससे ये सब शास्त्रों के विद्वान् होंगे। १३-१४। फिर वरुण ने इन को वरदान दिया कि इनकी आयु लाखों वर्ष की होगी। जल से और हमारे पाश से इनको भय न होगा। यमराज ने अपने दंड से इनको अवध्य किया और सदा नीरोग रहने का वरदान दिया। और यह भी कहा कि इनको युद्ध में विषाद कभी न होगा। १५-१६। कुबेर नें कहा कि हमारी गदा की प्रहार से इनकी मृत्यु न होगी। महादेव ने वरदान दिया कि हमारे अस्त्रोंसे इनकी मृत्यु न होगी। विश्वकर्मा इनकी ओर देखकर बोले कि ये हमारे बनाये हुए दिव्य अस्त्र-शस्त्रों से अवध्य

होंगे और इनकी आयु बहुत होगी। १७—१६। फिर ब्रह्मा ने इनको वरदान दिया कि ये दीर्घायु और महात्मा होंगे। ब्रह्मदंड से भी अवध्य होंगे। इस प्रकार देवताओं के वरदान देने पर ब्रह्मा ने प्रसन्न होकर पवन से कहा—हे पवन, तुम्हारा यह पुत्र शत्रुओं के लिए भयानक और मित्रों को अभय देनेवाला होगा। युद्ध में इससे कोई न जीत सकेगा। यह अपनी इच्छा से मनमाना रूप धारण कर सकेगा। सर्वत्र जा सकेगा। ऐसा कोई स्थान नहीं, जहाँ इसकी गति न होगी। बड़ा यशस्वी होगा। युद्ध में रावण को भयभीत करेगा। रामचन्द्र को प्रसन्न करेगा और बड़े अद्भुत काम करेगा। २०—२४। पवन से यह कहकर ब्रह्मा देवताओं के साथ अपने स्थान को गये। पवन इनको लेकर इनकी माता अंजना के पास आये और उनसे यह सब हाल कहा। हे राम, हनुमान् इस प्रकार देवताओं से वरदान पाकर बड़े वेगवान् और बलवान् हुए। फिर यह निर्भय होकर महर्षियों के आश्रम पर उपद्रव करने लगे। उनके अग्निहोत्र के पात्र तोड़ डालते थे, वल्कल-वस्त्र चीर डालते थे। ऋषिगण इनके बल को जानते थे और यह भी जानते थे कि इनको ब्रह्मदंड से अवध्य होने का वरदान मिला है। इसलिए वे लोग इनके अपराध सह लेते थे। केसरी और पवन के रोकने पर भी वानर-स्वभाव के कारण इस तरह के उत्पात ये करते ही रहे। तब भृगु और अंगिरा के वंशज ऋषियों ने क्रुद्ध होकर इनको यह शाप दिया कि हे वानर, तुम बल पाकर हम लोगों को पीड़ित करते हो, इसलिए हम लोगों के शाप से तुम अपने बल को भूल जाओ। जब कोई तुमको याद दिलायेगा, तभी तुम अपने बल को जान सकोगे। जब तुम्हारी कीर्ति का कोई स्मरण करावेगा, तब तुम्हारा बल बढ़ेगा। २५—३४। मुनियों के शाप से इनका तेज और बल जाता रहा। तब ये बड़ी नम्रता से उनके आश्रम पर विचरने लगे। बालि और सुग्रीव के पिता का नाम ऋक्षरजा था, वह उस समय वानरों का राजा था, तेज में वह सूर्य के

[स]मान था। बहुत दिनों तक वानरों का राजा रहकर जब उसकी [मृ]त्यु हुई, तो उसके मन्त्रियों ने बालि को राजा और सुग्रीव को [यु]वराज बनाया। बालि और सुग्रीव में बालकपन से ही परस्पर बड़ा [प्रे]म था। वे अग्नि और पवन के समान परस्पर मित्र थे। हे राम, जब [ब]ालि और सुग्रीव का वैर हुआ, उस समय इनको किसी ने इनकी कीर्ति [क]ा स्मरण नहीं कराया था। ये तो मुनियों के शाप के कारण अपने [ब]ल को भूल ही गये थे। बालि के भय से सुग्रीव भागते फिरते थे, [कि]न्तु अपने बल को भूल जाने के कारण हनुमान् हाथियों से घिरे [हु]ए सिंह के समान मोहित थे। यद्यपि पराक्रम, उत्साह, बुद्धि, प्रताप, [सु]शीलता, मधुरता, नीति, गम्भीरता, चतुरता, वीरता और धैर्य में [ह]नुमान् से बढ़कर तीनों लोकों में कोई नहीं है। ३५—४३।

जब यह बड़े हुए और शास्त्र पढ़ने के योग्य हुए, तो व्याकरण [प]ढ़ने के लिए सूर्य के पास जाने लगे। प्रति दिन व्याकरण पढ़ते हुए [सू]र्य के साथ-साथ उदयाचल से अस्ताचल तक चले जाते थे। सूत्रों का [अ]र्थ, वृत्तिका अर्थ, महाभाष्य और संग्रह का इन्होंने अध्ययन किया। [वे]दों का अर्थ जानने में इनके समान पंडित और कोई नहीं है। ये [स]ब शास्त्रों के पारंगत हैं। सब विद्याओं के पढ़ने और तपस्या करने में [बृ]हस्पति के समान हैं। प्रलयकाल में पृथ्वी को जलमग्न करने के लिए [ब]ढ़े हुए समुद्र के समान, सब लोकों को भस्म कर देनेवाले प्रलय की [अ]ग्नि के समान, सब लोकों का विनाश करनेवाले यमराज के समान [इ]स महावीर के सामने कौन ठहर सकता है? हे राजन्, देवताओं ने [तु]म्हारी सहायता के लिए इनको उत्पन्न किया है। इनके सिवा [सु]ग्रीव, मैन्द, द्विविद, नील, तार, अंगद, नल, गय, गवाक्ष, गवय, [सु]षेण और ज्योतिर्मुख ने भी तुम्हारी सहायता के ही लिए जन्म लिया है। तुमने जो पूछा था, वह हमने हनुमान् के बाल्यावस्था के कर्म [तु]मसे कहा। ४४—४६। अगस्त्य के यह वचन सुनकर राम, लक्ष्मण,

सब वानर और राक्षस बड़े विस्मित हुए। उसके बाद अगस्त्य ने कहा—हे रामचन्द्र, तुमने यह सब बातें सुनीं; हमने भी तुमको देखा और बातचीत की। अब हम लोग जाते हैं। रामचन्द्र ने हाथ जोड़कर महातेजस्वी अगस्त्य को प्रणाम किया और कहा—आप लोगों के दर्शन से हम लोग बड़े प्रसन्न हुए। हमारे पिता-पितामह आदि भी सन्तुष्ट हो गये। हमारी एक प्रार्थना आप लोगों से है, कृपा करके आप लोग उसे स्वीकार करें। हमने राज्य-कार्य का प्रबन्ध कर दिया है, हम एक यज्ञ करना चाहते हैं, आप लोग कृपा करके उस यज्ञ के सदस्य हों। आप लोगों के अनुग्रह से पितरों सहित हम पवित्र हो जायँगे। आप लोग हमारा यज्ञ करा दीजिए, तब अपने स्थान को जाइए। ऋषियों ने कहा—बहुत अच्छा, फिर उन लोगों ने रामचन्द्र का यज्ञ कराया। यज्ञ समाप्त होने पर अगस्त्य आदि सब ऋषि अपने-अपने आश्रम को गये। उनके चले जाने पर रामचन्द्र बड़े आश्चर्य से उनकी बातों का स्मरण करते रहे। जब सूर्य अस्त हो गये तब उन्होंने सब वानरों को बिदा किया। फिर संध्योपासना करके अन्तःपुर को चले गये। ५०—६१।

सर्ग ३७

रामचन्द्र ने यज्ञ समाप्त करके अवभृथ स्नान किया। नगर-निवासियों को बड़ा हर्ष हुआ। वह रात बड़े आनन्द से बीती। प्रातःकाल रामचन्द्र को जगाने के लिए वन्दीगण राजभवन में आये। वे किन्नरों के समान गाने में शिक्षित थे, उनके स्वर मनोहर थे। वे बड़े हर्ष से रामचन्द्र की स्तुति करने लगे। हे वीर, हे कौशल्या-प्रीतिवर्धन, हे सौम्य! जागो, तुम्हारे सोने पर सम्पूर्ण जगत् सोता है और तुम्हारे जागने पर जागता है। तुम्हारा पराक्रम विष्णु के समान है। तुम अश्विनी-कुमार के समान रूपवान्, बृहस्पति के समान बुद्धिमान्, और प्रजापति के

समान प्रजा के रक्षक हो। तुम पृथिवी के समान क्षमावान् और सूर्य के समान तेजस्वी हो। तुम्हारा वेग वायु के तुल्य है, गम्भीरता समुद्र के समान है। तुम पर्वत के समान अटल और चन्द्रमा के समान सौम्य हो। हे महाराज, तुम्हारे समान आज तक कोई राजा नहीं हुआ और न भविष्य में कभी होगा। तुम धर्मात्मा हो, दुर्धर्ष हो, प्रजा का हित करते हो, कीर्ति, लक्ष्मी, धर्म और तेज सदा तुम्हारे साथ रहते हैं। ऐसी हां और भी स्तुतियों से वन्दीगण ने स्तुति की। उसके बाद सूत लोग आये, वे भी स्तुति करके रामचन्द्र को जगाने लगे। तब रामचन्द्र जागे और वैसे ही शय्या पर उठ बैठे, जैसे भगवान् विष्णु शेष-शय्या पर बैठे हों। १–११। हज़ारों सेवक शुद्ध बर्तनों में जल लेकर आये और हाथ जोड़कर उनको प्रणाम किया। शौच आदि से निवृत्त होकर रामचन्द्र ने स्नान किया। अग्नि में आहुति दी, फिर देव-मन्दिर को गये। वहाँ देवताओं, पितरों और ब्राह्मणों की विधिपूर्वक पूजा करके राजभवन के बाहरी फाटक पर आये। फाटक के ही पास सभा-भवन था, वहाँ पुरोहित वसिष्ठ और सब मन्त्री बैठे थे। रामचन्द्र को देखकर सब लोग उठ खड़े हुए। जब रामचन्द्र आसन पर बैठे, तब उनके समीप अनेक देशों के राजा भी उसी प्रकार बैठ गये जैसे इन्द्र के पास देवता बैठे हों। रामचन्द्र के समीप भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्न यज्ञ में तीनों वेदों के समान शोभित हुए। १२–१७। सेवक लोग हाथ जोड़कर रामचन्द्र के सामने खड़े हो गये। रामचन्द्र की आज्ञा से वे भी अपने आसन पर बैठे। सुग्रीव आदि कामरूपी महाबलवान् बीस वानर भी रामचन्द्र की सभा में उपस्थित थे। चार राक्षसों के साथ विभीषण भी रामचन्द्र की सभा में वैसे ही शोभित थे जैसे कुबेर की सभा में गुह्यक बैठे हों। वृद्ध, कुलीन, विद्वान्, ऋषि, राजा, वानर और राक्षस सब अपने-अपने स्थान पर बैठे। जैसे ऋषिगण महादेव की उपासना करते हैं, देव-सभा में इन्द्र के समीप देवता बैठते हैं, वैसे ही

रामचन्द्र राज-सभा में शोभित हुए। पुराण जाननेवाले महात्मा लोग धार्मिक कथाएँ कहते थे। १८—२४।

प्रक्षिप्त सर्ग १

रामचन्द्र ने अगस्त्य मुनि से पूछा—आपने बालि और सुग्रीव के पिता का नाम ऋक्षरजा बताया है। उनकी माता का क्या नाम था, वे कहाँ रहते थे और बालि तथा सुग्रीव के ये नाम क्यों रक्खे गये? यह सब मुझे बताइए, मैं सुना चाहता हूँ। अगस्त्य ने कहा—हे रामचन्द्र, इस कथा को मैं आद्योपान्त कहता हूँ, सुनो। एक बार धर्मात्मा नारद मुनि सब दिशाओं में पर्यटन करते हुए हमारे आश्रम पर आये। हमने विधिपूर्वक उनकी पूजा की। जब वे सुख से आसन पर बैठे, तब हमने इस वृत्तान्त को पूछा। हमारे पूछने पर नारद मुनि कहने लगे—पर्वतों में श्रेष्ठ सुमेरु नाम का एक पर्वत है, वह सुवर्ण के समान चमकता है, उसके मध्य के शिखर पर सब देवता निवास करते हैं। उसी शिखर पर सौ योजन में ब्रह्मा की दिव्य सभा है। ब्रह्मा सदा वहाँ निवास करते हैं। किसी समय वे योगाभ्यास कर रहे थे, सहसा उनकी आँखों से आँसुओं की बूँदें गिरीं। ब्रह्मा ने उनको हाथ में लेकर अपनी देह में लगा लिया। १—६। फिर उन्होंने अपना हाथ झिटक दिया, जिससे एक बूँद पृथिवी पर गिर पड़ी। हे रामचन्द्र, उसी बूँद से एक वानर पैदा हो गया। ब्रह्मा ने प्रिय वचनों से उसे आश्वासन दिया और उससे कहा—यह देखो, पर्वत के इस शिखर पर देवता लोग निवास करते हैं, यह बहुत रमणीय स्थान है। कन्द-मूल-फल भी यहाँ बहुत हैं। तुम यहीं हमारे पास रहो। कुछ दिनों के बाद तुम्हारा कल्याण होगा। ब्रह्मा के यह कहने पर उस वानर ने उनके पैरों पर सिर रखकर प्रणाम किया, और हाथ जोड़कर बोला—हे देव, आप जो आज्ञा देंगे, उसका हम पालन

करों । जगतपति ब्रह्मा से यह कहकर वह वानर बड़े हर्ष से फल-पुष्पों से शोभित घने वृक्षों के समीप चला गया । वह वृक्षों के फल खाता था और अच्छे-अच्छे फल-फूल और मधु प्रतिदिन सन्ध्या के समय देवाधिदेव ब्रह्मा के चरणों में निवेदन करता था । इसी प्रकार बहुत समय बीता । एक दिन वह वानर बहुत प्यासा हुआ और पानी की तलाश में सुमेरु पर्वत के उत्तर शिखर पर चला गया।१०—२०। वहाँ एक निर्मल सरोवर था, उसमें अनेक प्रकार के पक्षी बोलते थे । वह पानी पीने के लिए जब उस सरोवर के तट पर पहुँचा तो अपनी परछाईं जल में देखकर सोचने लगा, इस जल के भीतर यह हमारा शत्रु कौन रहता है । फिर उसने बड़े ध्यान से परछाईं की ओर देखा और कहने लगा कि यह दुष्ट बड़े क्रोध से हमारी ओर देखता है और हमारा अपमान कर रहा है । मैं इस मूर्ख को मार डालूँगा और इसके घर का भी विनाश कर दूँगा । यह कहकर वह अपने चपल स्वभाव-वश उस तालाब में कूद पड़ा । हे रामचन्द्र, उसके बाद जब वह जल से बाहर आया तब उसका स्वरूप स्त्री का हो गया । उसका रूप बड़ा ही मनोहर था । उसकी जाँघें मोटी, भौंहें बहुत सुन्दर, केश बहुत काले, मोटे स्तन और सुन्दर मुसकान थी । वह सुन्दरी उस सरोवर के तट पर खड़ी हो गई । वह पद्म-रहित लक्ष्मी के समान, चन्द्रमा की निर्मल प्रभा के समान, रूप और लावण्य में पार्वती के समान थी । उसी समय इन्द्र ब्रह्मा के पास आये थे, वहाँ से जब लौटे तो उस स्त्री पर उनकी दृष्टि पड़ी । सूर्य भी भ्रमण करते हुए वहाँ आये और उन्होंने भी उस स्त्री को देखा । वे दोनों देवता काम के वश हो गये । उनके सब अंग फड़कने लगे और साँप की तरह साँस छोड़ने लगे । उसका अद्भुत रूप देखकर उनका धैर्य छूट गया । इन्द्र का वीर्य स्खलित होकर उसके सिर पर गिर पड़ा । उनके वीर्य से उस स्त्री ने एक वानर उत्पन्न किया । इन्द्र का वीर्य उसके बालों में गिरा था,

इसलिए उस पुत्र का नाम बालि हुआ। सूर्य भी उसे देखकर काम के वश हुए थे, उनका वीर्य उसकी ग्रीवा पर गिरा था। उन्होंने उस स्त्री से कुछ भी नहीं कहा। वीर्य के स्खलित हो जाने पर उनकी भी काम-पीड़ा शान्त हो गई। उस वीर्य से सुग्रीव का जन्म हुआ। स्त्री की ग्रीवा पर वीर्य गिरने के कारण उसका नाम सुग्रीव पड़ा। इन्द्र ने बालि को सुवर्ण की एक माला दी, उसमें सब गुण थे और कभी नष्ट नहीं होते थे। सूर्य ने अपने पुत्र के सब कामों में सहायता देने के लिए हनुमान् को उसके पास नियुक्त किया। फिर वे दोनों देवता अपने-अपने स्थान को चले गये। २१—४२।

हे रामचन्द्र, उसके बाद ऋक्षरजा फिर पुरुष-रूप को प्राप्त हो गया। अपने पुत्रों को अमृत के समान स्वादिष्ठ फल और मधु खाने-पीने को दिया। फिर उनको लेकर ब्रह्मा के पास गया। ब्रह्मा ने उसे आश्वासन देकर एक दूत को बुलाकर आज्ञा दी कि तुम इनको किष्किन्धापुरी को ले जाओ। वह बहुत रमणीय स्थान है, वहाँ बहुत-से वानरों के यूथ रहते हैं। हमारी आज्ञा से विश्वकर्मा ने उसे बनाया है। वहाँ चारों वर्ण के मनुष्य निवास करते हैं। बहुत अच्छा बाजार है, व्यवसाय खूब होता है। अनेक प्रकार के रत्न हैं और कामरूपी वानर निवास करते हैं। वहाँ सब वानरों को बुलाकर, सबके सामने सम्मानपूर्वक राजसिंहासन पर बैठाकर, इनका अभिषेक करो।४३—५१। ऋक्षरजा बहुत बुद्धिमान् और प्रभावशाली हैं, इनके प्रभाव से सब वानर इनके अनुगामी रहेंगे। ब्रह्मा की आज्ञा से वह दूत उनको लेकर वायु के समान वेग से किष्किन्धा को आया और विधिपूर्वक ऋक्षरजा का अभिषेक किया। वे पृथिवी भर के वानरों के शासक हुए। वही ऋक्षरजा बालि और सुग्रीव के पिता हैं, और माता भी वही हैं। हे रामचन्द्र, बालि और सुग्रीव की उत्पत्ति का यह वृत्तान्त विस्तारपूर्वक आपसे मैंने कहा, आपका कल्याण हो। इसे जो पढ़े या सुनेगा,

उसका मन प्रसन्न होगा और उसके सब कार्य सिद्ध होंगे ।५२–५६।

प्रक्षिप्त सर्ग २

यह पौराणिक दिव्य कथा सुनकर भाइयों के साथ वीर रामचन्द्र को बड़ा विस्मय हुआ। रामचन्द्र ने अगस्त्य मुनि से कहा—हे महामुनि, आपकी प्रसन्नता से इस मनोरंजक कथा को हमने बड़े आश्चर्य से सुना। बालि और सुग्रीव इन्द्र और सूर्य के पुत्र हैं, तो ऐसे बलवान् क्यों न हों! अगस्त्य ने कहा—यह बहुत पुराना वृत्तान्त है, यह ऐसा ही हुआ था! अब मैं और कथा कहता हूँ। जिस कारण से रावण सीता को हर ले गया, वह मैं तुमसे कहता हूँ, ध्यान देकर सुनो—सत्ययुग में एक बार रावण ब्रह्मा के पुत्र सनत्कुमार के पास गया। उनका तेज सूर्य के समान था। उनको प्रणाम करके हाथ जोड़कर बड़ी नम्रता से वह बोला—देवताओं में सबसे बलवान् कौन पुरुष है, जिसकी सहायता से देवता लोग युद्ध में विजय पाते हैं? १–१०। द्विज लोग किसकी पूजा करते हैं और योगी किसका ध्यान किया करते हैं। हे तपोधन, यह मुझे विस्तारपूर्वक बताइए। रावण का यह प्रश्न सुनकर, महर्षि सनत्कुमार ने योग-दृष्टि से उसके हृदय का भाव समझकर बड़े प्रेम से बोले—बेटा सुनो, मैं कहता हूँ। जो सम्पूर्ण जगत् का पालन करते हैं, जिनकी उत्पत्ति हम लोग भी नहीं जानते, देवता और दानव भी जिनको नित्य प्रणाम करते हैं, जिनकी नाभि से विश्व की सृष्टि करने-वाले ब्रह्मा उत्पन्न हुए हैं, जिन्होंने स्थावर-जंगम प्राणियों को उत्पन्न किया है, जिनके आश्रित रहकर देवता लोग यज्ञ में अमृत पीते हैं और सब देवता भी जिनकी पूजा करते हैं, योगी लोग जिसका ध्यान करते हैं, जिनके निमित्त यज्ञ किये जाते हैं, उन्हीं की सहायता से देवता लोग, दैत्य, दानव और राक्षसों को युद्ध में परास्त करते हैं ।११–१७।

महर्षि का यह वाक्य सुनकर राक्षसराज रावण फिर विनम्र वचन

बोला—देवताओं और भगवान् विष्णु ने जिन दैत्य, दानव और राक्षसों को मार डाला है, वे किस गति को प्राप्त हुए हैं? महर्षि ने कहा—वे लोग स्वर्ग को गये हैं। अपने कर्मों के अनुसार फिर पृथिवी में जन्म लेंगे और मरेंगे। हे राजन्, चक्रधर भगवान् विष्णु का क्रोध भी वरदान के समान है, क्योंकि उनके हाथ से जिनकी मृत्यु होती है, वे उनके लोक को जाते हैं। सनत्कुमार के यह वचन सुनकर रावण प्रसन्न हुआ और बड़े आश्चर्य से अपने मन में सोचने लगा कि किस उपाय से भगवान् विष्णु से हमारा युद्ध हो। १८—२३।

प्रक्षिप्त सर्ग ३

दुरात्मा रावण को इस विचार में निमग्न देखकर महामुनि सनत्कुमार फिर उससे बोले—हे महाबाहो, तुम्हारा मनोरथ सफल होगा, समय की प्रतीक्षा करो। कुछ दिनों के बाद भगवान् विष्णु से तुम्हारा युद्ध होगा और तुम सुखी होगे। तब बलवान् रावण ने फिर उनसे पूछा—उनके क्या लक्षण हैं, सो विस्तारपूर्वक हमसे कहिए। रावण के पूछने पर सनत्कुमार ने कहा—हे राक्षसेन्द्र, उनका सब वृत्तान्त मैं कहता हूँ, सुनो—वे सनातन पुरुष हैं, उनका रूप अव्यक्त और सूक्ष्म है। वे सब प्राणियों के अन्तरात्मा हैं। चराचर जगत् में व्याप्त हैं। पृथिवी, आकाश, पर्वत, वन, सब स्थावर-जंगम प्राणियों, नगरों और नदियों में सर्वत्र विद्यमान हैं। ओंकार, सत्य, सावित्री, पृथिवी, अनन्त वही हैं। दिन, रात्रि, सन्ध्या, सूर्य, यम, चन्द्रमा, काल, पवन, अग्नि, ब्रह्मा, रुद्र, इन्द्र और जल भी वही हैं। सूर्यरूप से जगत् को प्रकाशित करते हैं, अग्निरूप से प्रज्वलित होते हैं। वायुरूप से सब प्राणियों को जीवित रखते हैं, चन्द्रमारूप से पृथिवी में प्रकाश करते हैं। सब लोकों की सृष्टि, संहार और पालन करते हैं। उनका विनाश कभी नहीं है। सब लोकों के स्वामी, सर्वव्यापी और पुरातन पुरुष वही हैं। हे दशानन,

और अधिक कहाँ तक कहें, यह चराचर जगत् तीनों लोक उन्हीं की रचना है और वे सर्वत्र व्याप्त हैं। १—१०। वे नीलकमल के समान श्यामवर्ण हैं, पीताम्बर ओढ़े हैं, अतएव बिजली सहित काले मेघों के समान शोभित होते हैं। देवता, दैत्य और नाग कोई भी उनको नहीं देखता। जिसके ऊपर उनकी कृपा होती है, उसी को उनके रूप का दर्शन होता है। यज्ञ, तप, दान अथवा पूजन से उनके दर्शन नहीं मिलते। उनके दर्शन वही पाता है, जो उनका भक्त है। जो अपना मन उन्हीं में लगाये रहता है, जो अपने प्राण उन्हीं को समर्पण कर देता है, जिनके पाप ज्ञानरूपी अग्नि में भस्म हो गये हैं, वही लोग उनके रूप को देखते हैं। हे राक्षसेन्द्र, यदि तुम उनको देखना चाहते हो तो हम तुमसे सब वृत्तान्त कहते हैं—सत्ययुग के बाद त्रेतायुग के आरम्भ में देवताओं और मनुष्यों के हित के लिए वे मनुष्य के रूप में अवतार लेंगे। इक्ष्वाकुवंश में दशरथ नाम के एक राजा होंगे, उनके पुत्र का नाम राम होगा, वे महातेजस्वी, महाबुद्धिमान् और महापराक्रमी होंगे। पृथिवी के समान क्षमावान् होंगे। युद्ध में सूर्य के समान तेजस्वी होंगे। शत्रु बड़ी कठिनता से उनकी ओर देख सकेंगे। ११—२१। वे विष्णुरूपी रामचन्द्र पिता की आज्ञा से भाई और स्त्री के साथ दंडक वन को जायँगे। उनकी स्त्री का नाम सीता होगा। वह पृथिवी से उत्पन्न होगी और राजा जनक की पुत्री कहावेगी। वह अनुपम सुन्दरी होगी। उसकी देह में सब शुभ लक्षण होंगे। वह पुरुष की छाया के समान अथवा चन्द्रमा की प्रभा के समान रामचन्द्र की अनुगामिनी होगी। उस साध्वी स्त्री में शील, सदाचार, धैर्य आदि सब गुण होंगे। सूर्य की किरण के समान उसका स्वरूप होगा। हे रावण, हमने सनातन भगवान् का यह वृत्तान्त तुमसे कहा। यह कहकर अगस्त्य मुनि रामचन्द्र से बोले कि हे रघुनन्दन, सनत्कुमार का यह वचन सुनकर रावण बड़ा प्रसन्न हुआ और तुम्हारे साथ विरोध करने की

इच्छा से मन में कुछ सोचने लगा। उसके बाद उन्हीं बातों का स्मरण करता हुआ वह युद्ध के लिए पर्यटन करता रहा। इस कथा को सुनकर रामचन्द्र बड़े विस्मित हुए। फिर उन्होंने अगस्त्य मुनि से और कथा कहने की प्रार्थना की। २२–३०।

प्रक्षिप्त सर्ग ४

उसके बाद महामुनि अगस्त्य उसी प्रकार रामचन्द्र से बोले जैसे पितामह ब्रह्मा भगवान् शंकर से कहें। हे रामचन्द्र, यह वृत्तान्त जैसा मैंने सुना था, वैसा ही यथा-तथ्य आपसे वर्णन किया। आपके हाथ से मृत्यु पाने के लिए दुरात्मा रावण ने सीता का हरण किया था। सुमेरु पर्वत के शिखर पर महायशस्वी नारद ने यह कथा मुझसे कही थी। देवता, गन्धर्व, सिद्ध, ऋषि और महात्माओं ने भी इस कथा को सुना था। इस कथा के सुनने से सब पाप नष्ट हो जाते हैं। इसे सुनकर देवताओं और ऋषियों ने कहा था कि भक्तिपूर्वक जो इस कथा को कहेंगे अथवा सुनेंगे, उनके वंश की वृद्धि होगी और अन्त में स्वर्गलोक प्राप्त करेंगे। १–६।

प्रक्षिप्त सर्ग ५

महामुनि अगस्त्य ने कहा—हे रामचन्द्र, उसके बाद रावण बड़े बलवान् राक्षसों के साथ विजयके लिए पृथिवीमें घूमने लगा। देवताओं, दानवों और राक्षसों में जिसे महाबलवान् सुनता था, उसी को अपने बल के गर्व से युद्ध के लिए ललकारता था। एक दिन उसे मार्ग में नारद मुनि मिले, वे आकाश-मार्ग से दूसरे सूर्य के समान ब्रह्मलोक से लौटे आ रहे थे। रावण ने हाथ जोड़कर प्रणाम करके उनसे पूछा—हे भगवन्, आप ब्रह्मलोक से लेकर अन्य सब लोकों को जानते हैं। हमें यह बताइए कि किस लोक के निवासी बड़े बलवान् हैं, जो हमारे

साथ युद्ध कर सकें और मैं भी उनके साथ यथेष्ट युद्ध करूँ। थोड़ी देर सोचकर नारद मुनि ने उत्तर दिया—राजन्, क्षीरसागर के समीप एक महाद्वीप है। वहाँ के निवासी बड़े बलवान्, महाकाय और धैर्यवान् हैं। मेघों के गरजने के समान गम्भीर उनका स्वर है। उनकी भुजाएँ परिघ के समान और तेज चन्द्रमा के समान है। उस द्वीप का नाम श्वेत द्वीप है, जैसे बलवान् पुरुषों को तुम चाहते हो, वैसे ही वहाँ के निवासी हैं।१–१०।नारद के यह वचन सुनकर रावण ने कहा—उस द्वीप में ऐसे बलवान् पुरुष क्यों उत्पन्न होते हैं और ऐसे लोगों का निवास वहीं क्यों रहता है? इसका यथार्थ कारण आप बताइए, क्योंकि आपने संसार के सब स्थानों को अच्छी तरह देखा है। नारद ने उत्तर दिया—हे राक्षसराज, श्वेतद्वीप के निवासी सदा अनन्य मन से भगवान् विष्णु की उपासना करते हैं। वे एकाग्रभाव से उन्हीं की सेवा करते हैं, उन्हीं में मन लगाये रहते हैं। इसी से उन महात्माओं का श्वेतद्वीप में निवास है। लोकनाथ भगवान् विष्णु ने शार्ङ्गधनुष को चढ़ाकर संग्राम में जिन लोगों का विनाश किया है, वही लोग वहाँ निवास करते हैं। हे तात, यज्ञ करने से अथवा दान, तप, संयम इत्यादि से वह लोक नहीं प्राप्त हो सकता।

यह सुनकर रावण को बड़ा विस्मय हुआ। थोड़ी देर सोचकर उसने निश्चय किया कि हम उनसे युद्ध करेंगे। फिर वह नारद से आज्ञा लेकर श्वेतद्वीप को गया। नारद भी थोड़ी देर सोचकर बड़े आश्चर्य से उस युद्ध को देखने के लिए गये, क्योंकि उनको तो युद्ध देखना पसन्द ही था।११–२०। रावण अपने साथियों के साथ वहाँ पहुँचा और सिंह के समान गरजकर सब दिशाओं को प्रतिध्वनित कर दिया। किन्तु उसका पुष्पक विमान उस द्वीप के तेज से वहाँ ठहर न सका। वायु से उड़ाये हुए बादलों के समान वह उड़ता रहा। रावण के मन्त्री भी उस द्वीप को देखकर डर गये और घबराकर उससे बोले—

हम लोगों की चेतना नष्ट होती जा रही है। यहाँ हम लोग किसी प्रकार युद्ध करने के लिए समर्थ नहीं हो सकते। यह कहकर वे सब वहाँ से भाग खड़े हुए। राक्षसों के भाग जाने पर रावण पुष्पक विमान से उतर पड़ा और महाभीम रूप धारण करके अकेला ही श्वेत द्वीप को गया। उसे शीघ्रता से आते देखकर एक स्त्री ने उसका हाथ पकड़ लिया और मुस्कराकर पूछा—तुम कौन हो, किसके पुत्र हो, किसने तुम्हें भेजा है और किस प्रयोजन से यहाँ आये हो? २१-३०। रावण ने बड़े क्रोध से उत्तर दिया—हम महर्षि विश्रवा के पुत्र और राक्षसों के राजा हैं। हमारा नाम रावण है। यहाँ युद्ध करने के लिए आये हैं। किन्तु यहाँ किसी भी पुरुष को नहीं देखता। दुरात्मा रावण की यह बात सुनकर स्त्रियाँ हँसने लगीं। उनमें से एक ने क्रुद्ध होकर उसका हाथ पकड़ लिया और लड़के की तरह उसे घुमाने लगी। उसने एक दूसरी स्त्री से कहा कि देखो हमने काजल के पर्वत के समान काले एक कीड़े को पकड़ा है। इसके दस मुँह और बीस हाथ हैं। फिर वह दूसरे हाथ से पकड़कर उसे घुमाने लगी। तब रावण ने उसके हाथ में काट लिया। तब उसने उसे छोड़ दिया, किन्तु उसी समय दूसरी स्त्री उसे पकड़कर आकाश-मार्ग से उड़ गई। रावण क्रुद्ध होकर नखों से उसे नोचने लगा। तब उसने आकाश से उसे छोड़ दिया और वह समुद्र में जा गिरा। वज्र के प्रहार से विदीर्ण पर्वत के समान वह समुद्र में डूब गया। ३१-४०। हे रामचन्द्र, श्वेतद्वीप की स्त्रियों ने जब उसे पकड़कर घुमाया था उस समय महर्षि नारद यह सब लीला देख रहे थे। वे बड़े प्रसन्न और विस्मित हुए। हँसने और नाचने लगे।

हे महाबाहो, आपके हाथ से मृत्यु पाने के लिए दुरात्मा रावण सीता को हर ले गया था। आप साक्षात् नारायण हैं। शंख, चक्र, गदा, पद्म, शार्ङ्ग धारण करते हैं। सब देवताओं के पूज्य हैं। आपकी

नाभि से कमल उत्पन्न हुआ, उसी कमल से ब्रह्मा उत्पन्न हुए। आप महा-योगी और भक्तों को अभय देनेवाले हैं। रावण को मारने के लिए आपने मनुष्य का शरीर धारण किया है। क्या आप अपने को नहीं जानते? हे महाभाग, मोह त्याग दीजिए, आत्मज्ञान से अपने को स्मरण कीजिए, क्योंकि पितामह ब्रह्माने कहा है कि आप गुप्त से भी गुप्त हैं। हे रघुनन्दन, आप त्रिगुणात्मा, त्रिवेदी, त्रिधाम, त्रिकालकर्मकर्ता और देवताओं के शत्रुओं का विनाश करनेवाले हैं। आप ही ने वामन का रूप धारण करके राजा बलि को बाँधा था। आप सनातन विष्णु हैं और अदिति के गर्भ से भी आपने जन्म लिया है। सब लोकों की रक्षा करने के लिए आपने यह मनुष्य-शरीर धारण किया है। ४१—५०। पापी रावण को पुत्र-बान्धव सहित मारकर देवताओं का कार्य किया है। आपकी कृपा से देवता और ऋषि लोग प्रसन्न हुए और सम्पूर्ण जगत् में शान्ति हुई है। हे प्रभो, लक्ष्मीजी सीता का रूप धारण करके राजा जनक के घर में पृथिवी से उत्पन्न हुई हैं। रावण ने उनको लंका में ले जाकर माता के समान उनकी रक्षा की थी।

हे रामचन्द्र, इस कथा को सनत्कुमार ने रावण से कहा था और नारद मुनि ने हमसे वर्णन किया था। हमने सम्पूर्ण कथा आपको सुनाई। रावण ने इस कथा को सुनकर बहुत शीघ्र इसी के अनुसार काम भी किया था।

जो विद्वान् पुरुष श्राद्ध के समय इस कथा को सुनता या सुनाता है, उसका पितरों को दिया हुआ अन्न अक्षय होकर उनके लिए पहुँचता है। इस कथा को सुनकर भाइयों सहित रामचन्द्र को बड़ा विस्मय हुआ। मन्त्री, अन्य राजा लोग, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र, जितने मनुष्य उस समय सभा में बैठे थे, इस कथा को सुनकर उन सबको बड़ा आश्चर्य हुआ। सब लोग विस्मित होकर रामचन्द्र की ओर देखने लगे। उसके बाद महातेजस्वी अगस्त्य ने रामचन्द्र से कहा—

हम लोगों ने आपका दर्शन किया, अब आपकी आज्ञा से अपने स्थान को जाना चाहते हैं। रामचन्द्र ने सम्मानपूर्वक सबको बिदा किया और वे लोग अपने-अपने स्थान को चले गये। ५१—६१।

सर्ग ३८

रामचन्द्र इसी प्रकार प्रतिदिन राजसभा में बैठते और राजकार्य करते थे। राजा जनक बहुत दिनों से अयोध्या में आये हुए थे। रामचन्द्र ने हाथ जोड़कर उनसे कहा—आप हम लोगों के पूज्य हैं, आप ही हम लोगों के रक्षक हैं, आप ही के तेज से हमने रावण को मारा। हे राजन्, मैथिल और इक्ष्वाकुवंशियों में बहुत दिनों से प्रेम और सम्बन्ध चला आता है। आपने भी उसे निबाहा, आपको यहाँ बहुत कष्ट होता होगा, इसलिए अब जनकपुर को जाइए। भरत रत्न आदि लेकर आपको भेजने जायँगे। १—५। महाराज जनक ने कहा—बहुत अच्छा। फिर उन्होंने रामचन्द्र से कहा—न्याय से प्रजा का पालन करते हुए तुमको देखकर हम बहुत प्रसन्न हुए। जो रत्न हमारे लिए तुमने संचित किये हैं, वे सब हम अपनी पुत्री को देते हैं। उसके बाद महाराज जनक अपने नगर को गये। तब रामचन्द्र ने हाथ जोड़कर बड़ी नम्रता से मामा युधाजित् से कहा—हे राजन्, यह राज्य और हम चारों भाई तुम्हारे अधीन हैं। आपके पिता और हमारे नाना केकयराज वृद्ध हैं, वे आपकी चिन्ता करते होंगे, इसलिए अब आपको भी जाना चाहिए। लक्ष्मण बहुत-सा धन और अनेक प्रकार के रत्न लेकर आपको भेजने के लिए जायँगे। ६—११। युधाजित् ने कहा—बहुत अच्छा, अब हम अपने नगर को जायँगे। किन्तु धन-रत्न अक्षय होकर आपके यहाँ रहे। युधाजित् ने राजगद्दी की प्रदक्षिणा की। रामचन्द्र ने भी मामा की प्रदक्षिणा की और प्रणाम किया। युधाजित् अपने देश को चले और उनको भेजने के लिए

लक्ष्मण वैसे ही चले, जैसे वृत्रासुर के मारे जाने पर इन्द्र के साथ विष्णु चले थे। १२—१४। उसके बाद रामचन्द्र ने काशी के राजा प्रतर्दन से कहा—राजन्, आपने प्रेम और सौहार्द दिखलाया, भरत के समान आपने भी बड़ा उद्योग किया, अब फाटक और खाईं से सुरक्षित अति रमणीय अपनी राजधानी काशीपुरी को जाइए। यह कहकर रामचन्द्र आसन से उठे और उनको हृदय से लगाकर बिदा किया। रामचन्द्र की आज्ञा से काशिराज प्रतर्दन निर्भय होकर अपने नगर को गये। तब रामचन्द्र ने अनेक देशों से आये हुए तीन सौ राजाओं से हँसकर कहा—आप लोग हमसे अटल प्रेम करते हैं, आप सत्य और धर्म का पालन करते हैं, आप लोगों के ही प्रभाव और तेज से दुरात्मा राक्षस रावण पुत्र, बन्धु, बान्धव, मन्त्री और सेना सहित मारा गया। वह काम आप ही लोगों के प्रभाव से हुआ, हम तो कारणमात्र हैं। महात्मा भरत ने सीता का हरण सुनकर आप लोगों को युद्ध में सहायता करने के लिए बुलाया था। आप लोग रावण के साथ युद्ध करने के लिए तैयार होकर आये थे। बहुत दिन बीत गये। आप लोगों ने बड़ा कष्ट उठाया, अब आप लोग अपने-अपने देश को जावें। १५—२५। रामचन्द्र की यह बात सुनकर वे लोग बोले—बड़े भाग्य की बात है, जो आपने बलवान् शत्रु रावण को मारा। युद्ध में विजयी हुए, सीता को लाये और राजगद्दी पर बैठे। आपको विजयी और शत्रु-रहित देखकर हम लोगों को बड़ा हर्ष हुआ और हमारा मनोरथ सफल हुआ। आप हम लोगों की जो प्रशंसा करते हैं, यह तो आपका सौजन्य है। वास्तव में प्रशंसा करने योग्य तो आप ही हैं, किन्तु ऐसे उपयुक्त शब्दों में प्रशंसा करने की योग्यता हम लोगों में नहीं है, आपकी प्रशंसा कैसे करें। अब हम लोग आपकी आज्ञा चाहते हैं, आपसे बिदा होते हैं और आशा करते हैं कि आपके हृदय में हम लोगों के लिए सदा स्थान बना रहे। हे महाबाहु, आपके प्रेम के

कारण हम लोग सदा आपके आज्ञाकारी हैं। महाराज, हम चाहते हैं कि ऐसा ही प्रेम सदा हम लोगों पर बना रहे। उन राजाओं ने हाथ जोड़कर बड़े हर्ष से इस प्रकार रामचन्द्र से कहा और अपने देश को जाने के लिए तैयार हुए। रामचन्द्र ने उनका यथोचित सम्मान किया और वे अपने-अपने देश को चले गये। २६—३२।

सर्ग ३९

उनके साथ हज़ारों हाथी और घोड़े थे। कई अक्षौहिणी सेना थी। रामचन्द्र की आज्ञा पाकर पृथिवी को कँपाते हुए चले। वे लोग भरत की आज्ञा से राक्षसों के युद्ध में रामचन्द्र को सहायता देने के लिए आये थे। मार्ग में वे लोग बड़े गर्व से आपस में बातें करते जाते थे कि भरत ने हम लोगों को बहुत पीछे बुलाया। पहले बुलाया होता तो अच्छा था। राम-रावण का युद्ध देखते और राक्षसों का वध करते। राम-लक्ष्मण के बाहु-बल से सुरक्षित रहकर समुद्र के पार जाते और युद्ध करते। इसी प्रकार की बातें करते हुए बड़े हर्ष से अपने-अपने देश को गये। उनके देश धन और धान्य से समृद्ध थे। १—७। अपने नगरों को पहले की तरह धन-रत्न से परिपूर्ण देखकर उनको बड़ा हर्ष हुआ। उन लोगों ने रामचन्द्र को भेंटस्वरूप घोड़े, हाथी, रथ, धन, रत्न, आभूषण, मणि, मोती, मूँगा, सुन्दरी दासियाँ और अनेक प्रकार के कम्बल भेजे। ८—१०। भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्न उन लोगों की भेंट लेकर अयोध्या को आये और रामचन्द्र के सामने रक्खा। रामचन्द्र ने बड़े हर्ष से उनकी भेंट स्वीकार की। और, जिनकी सहायता से युद्ध में विजय मिली थी, उन सुग्रीव, विभीषण और अन्य सब वानरों और राक्षसों को दे दिया। ११—१४। वानरों और राक्षसों ने रामचन्द्र से आभूषण और रत्न लेकर पहन लिये। फिर रामचन्द्र ने हनुमान् और अंगद को गोद में बैठाकर सुग्रीव से कहा—

हे सुग्रीव, अंगद तुम्हारे पुत्र हैं और हनुमान् तुम्हारे मन्त्री हैं। इन्होंने बड़े उत्साह से हमारा हित किया है, इसलिए इनका अनेक प्रकार से सम्मान करना चाहिए। १५—१८। रामचन्द्र ने यह कहकर अपने अंगों से आभूषण उतारकर हनुमान् और अंगद को पहनाये। फिर नील, नल, केसरी, कुमुद, गन्धमादन, सुषेण, पनस, मैन्द, द्विविद, जाम्बवान्, गवाक्ष, विनत, धूम्र, बलीमुख, प्रजंघ, सन्नाद, दरीमुख, दधिमुख, इन्द्रजानु आदि यूथपों से मधुर वचन बोले—तुम लोग हमारे सुहृद् हो, हमारे अंग हो, और भाई हो। तुम्हीं लोगों ने हमको बहुत बड़े दुःख से उबारा। राजा सुग्रीव धन्य हैं, जिनके सौहार्द से तुम लोगों ने हमारी सहायता की। १९—२४। यह कहकर उन लोगों को भी अनेक प्रकार के रत्न और आभूषण दिये। एक महीने से कुछ अधिक समय उन लोगों को रामचन्द्र की भक्ति के कारण एक मुहूर्त के समान बीत गया। वानर स्वादिष्ठ फल-मूल खाते, और सुगन्धित मधु पीते थे, तथा राक्षस मांस खाते थे। रामचन्द्र उन लोगों के साथ बड़े हर्ष से मनोविनोद करते थे। उनसे बड़ा प्रेम करते थे, वे लोग रमणीय अयोध्या में बड़े आनन्द से एक वर्ष रहे। २५—३०।

सर्ग ४०

तब महातेजस्वी रामचन्द्र ने सुग्रीव से कहा—हे सौम्य, अब तुम देवताओं और दैत्यों से भी दुराधर्ष किष्किन्धा को जाओ और बुद्धिमान् मन्त्रियों के साथ निष्कंटक राज्य करो। अंगद, हनुमान, महाबलवान् नल, सुषेण, तार, कुमुद, नील, शतबलि, मैन्द, द्विविद, गज, गवाक्ष, गवय, शरभ, ऋक्षराज, जाम्बवान्, गन्धमादन इन सबके साथ प्रेम करते रहना। सुपाटल, ऋषभ, केसरी, शरभ, शुम्भ और शंखचूड़ आदि वानरों के साथ भी प्रेम का बर्ताव करना। ये लोग हमारे लिए प्राण देने को तैयार थे। १—८। यह कहकर सुग्रीव को बार-बार छाती से

लगाया। फिर विभीषण स मधुर वचन बोले—हे धर्मज्ञ, तुम भी लंका को जाओ, और वहाँ का राज्य करो । तुम बड़े धर्मात्मा हो, सब राक्षस भी तुमको धर्मात्मा समझते हैं। तुम्हारे बड़े भाई कुबेर भी तुमको धर्मज्ञ कहते हैं। अधर्म में कभी मन न लगाना, जो बुद्धिमान् और धर्मात्मा होते हैं, वही राज्य-भोग्य करते हैं। हे राजन्, अपनी नगरी को जाओ, किन्तु सदा प्रेम से हमारा स्मरण करते रहना। और सुग्रीव भी प्रेमपूर्वक हमारा स्मरण करते रहें। ६—१२। रामचन्द्र के यह वचन सुनकर वानरों और राक्षसों ने बार बार उनकी प्रशंसा की, हे महाबाहु ! आपमें अद्भुत बल और बुद्धि है, माधुर्य गुण में तो आप ब्रह्मा के समान हैं। उसी समय हनुमान् बड़ी नम्रता से बोले—राजन्, आप सदा हमारा स्नेह करते रहें। हम सदा आप ही के भक्त रहें, आपके सिवा और किसी में भक्ति न हो। और हे वीर, संसार में जब तक आपकी कथा का प्रचार रहे, तब तक हमारे शरीर में प्राण रहें। आपकी यह दिव्य कथा अप्सराएँ सदा हमें सुनाती रहें। अमृतरूपी आपकी कथा सुनकर आपके वियोग का दुःख उसी प्रकार दूर हो जायगा जैसे पवन बादल को उड़ा देता है। १३—१९। यह कहते हुए हनुमान् को रामचन्द्र ने छाती से लगा लिया और उनसे कहा—हे कपिश्रेष्ठ ! ऐसा ही होगा, इसमें सन्देह नहीं ; जब तक संसार में हमारी कथा का प्रचार रहेगा, तब तक तुम्हारे शरीर में प्राण रहेंगे और हमारी कथा उस समय तक रहेगी जब तक महाप्रलय न हो जायगी। हे हनुमान् ! तुम्हारे एक ही उपकार के लिए हम यह वरदान देते हैं। और बाक़ी जितने उपकार हैं, उनके लिए हम तुम्हारे ऋणी हैं। तुम्हारे उपकारों का बदला हम नहीं दे सकते, वे सब हमारे शरीर ही में पच जायँगे, क्योंकि बदला तो तभी दिया जा सकता है जब उपकारी के ऊपर कोई आपत्ति पड़े । तुम्हारे ऊपर कोई भी आपत्ति नहीं आ सकती, तो प्रत्युपकार कैसे करेंगे। २०—२४। रामचन्द्र ने यह

कहकर, चन्द्रमा के समान चमकता हुआ वैडूर्य मणियों का हार अपने गले से निकालकर, हनुमान् को पहना दिया। हनुमान् वह हार पहनकर वैसे ही शोभित हुए, जैसे सुमेरु पर्वत पर चन्द्रमा उदय हो रहा हो। फिर वानरों ने रामचन्द्र के चरणों में सिर रखकर प्रणाम किया और अपने-अपने स्थान को चले। चलते समय रामचन्द्र के वियोग के दुःख से वानरों और राक्षसों सहित, सुग्रीव और विभीषण की आँखों में आँसू भर आये। रामचन्द्र के वियोग का उनको वैसा ही दुःख हुआ, जैसे प्राणियों को शरीर त्यागने का दुःख होता है। रामचन्द्र ने सबके ऊपर प्रसन्नता प्रकट की, और वे लोग उनके वियोग के दुःख से रोते हुए अपने-अपने घर को गये। २५—३१।

सर्ग ४१

महाबाहु रामचन्द्र ने इस प्रकार वानरों और राक्षसों को बिदा किया और भाइयों के साथ हर्ष से अयोध्या का राज्य करने लगे। एक दिन सब भाइयों के साथ बैठे थे, दोपहर के बाद का समय था, आकाश में मधुर वाणी सुन पड़ी। वाणी यह थी—हे सौम्य, अपनी सौम्य दृष्टि से हमारी ओर देखो। हम कुबेर के भवन से आये हैं, पुष्पक विमान हैं। आपकी आज्ञा से कुबेर की सेवा में गये थे, किन्तु कुबेर ने हमसे कहा कि महात्मा रामचन्द्र ने युद्ध में दुर्धर्ष राक्षसराज रावण को मारकर तुमको जीता है, उस दुरात्मा के पुत्र-बन्धु-बान्धव समेत मारे जाने से हमको भी बड़ा हर्ष हुआ। महात्मा रामचन्द्र रावण को जीतकर तुमको लाये हैं, इसलिए हम बड़ी प्रसन्नता से तुमको आज्ञा देते हैं कि अब तुम उन्हीं की सवारी में रहो। हम चाहते हैं कि रघुनन्दन रामचन्द्र पुष्पक विमान पर बैठकर यथेच्छ यात्रा किया करें। हम महात्मा कुबेर की आज्ञा से आपके पास आये हैं। अब आप हमें स्वीकार करें। कोई भी प्राणी हमारे समान वेग से नहीं चल सकता।

हम सदा आपकी आज्ञा का पालन करेंगे और आपकी सवारी में रहेंगे। १—१०। रामचन्द्र ने पुष्पक विमान को आया हुआ देखकर कहा—हे पुष्पक, यदि कुबेर की आज्ञा से तुम आये हो तो आओ, तुम्हारा स्वागत है। अब महात्मा कुबेर के अनादर का कुछ दोष न होगा, क्योंकि उन्होंने तुमको आज्ञा दी है। रामचन्द्र ने यह कहकर पुष्प, धूप, सुगन्ध से पुष्पक की पूजा की और उससे कहा—इस समय तुम जाओ, जब कभी हम स्मरण करें, तब फिर आना। अपने शीघ्र गमन से सिद्धगण को क्लेश न पहुँचाना, और तुम्हारी यथेष्ट चाल में कभी कोई विघ्न न होगा। यह कहकर पुष्पक को बिदा किया और वह अपनी इच्छानुसार चला गया। ११—१५। पुष्पक के चले जाने पर भरत ने हाथ जोड़कर पूछा—हे वीर, जब से आप राज्य करने लगे हैं, तब से मनुष्यों के सिवा अन्य प्राणी भी बातचीत करते हैं। मनुष्यों को कोई रोग नहीं होता। जो बहुत वृद्ध थे, उनकी भी मृत्यु नहीं हुई। स्त्रियों ने जो सन्तानें उत्पन्न कीं वे भी नीरोग हैं, मनुष्य हृष्ट-पुष्ट हैं, बादल समय पर पानी बरसाते हैं, वायु मन्द-सुगन्ध चलती है, नगर और देश में सर्वत्र लोग यही कहते हैं कि हम लोगों का राजा सदा इसी तरह का हो। भरत की यह बातें सुनकर रामचन्द्र प्रसन्न हुए। १६—२२।

सर्ग ४२

महाबाहु रामचन्द्र सुवर्णभूषित पुष्पक विमान को जाने की आज्ञा देकर अशोक-वाटिका को गये। उस वाटिका में चन्दन, अगुरु, आम, देवदारु, चम्पा, पुन्नाग, महुआ, कटहल, असन, पारिजात, लोध, नीम, अर्जुन, नागकेसर, सप्तपर्ण, अतिमुक्तक, मन्दार, कदली, प्रियंगु, कदम्ब, बकुल, जामुन, अनार, कोविदार के वृक्ष फूले और फले थे। फूले हुए पारिजात के वृक्ष विना धुएँ की आग के समान शोभित

थे। सुन्दर सुगन्धित फूलों और पल्लवों से वह वाटिका बहुत रमणीय थी। भँवरे गुंजार रहे थे, आम के वृक्षों पर कोयल, भ्रमर और रंग-बिरंग के पक्षी शोभित थे। फूले हुए कोई-कोई वृक्ष सुवर्ण के समान रंग के हो गये थे। कोई अग्नि की शिखा के समान, कोई काले, कोई नीले, भाँति-भाँति के पुष्पों से शोभित थे। बड़ी-बड़ी बावलियाँ बनी थीं, उनमें निर्मल जल भरा था। चारों ओर फूले हुए वृक्ष शोभित थे। स्फटिक मणि की सीढ़ियाँ थीं और फ़र्श भी स्फटिक मणि की बनी थी। जल में कमल फूले थे, चकई, चकवा, हंस और सारस बोलते थे। वृक्षों पर कोयल और तोते बोलते थे। १—१२। उस वाटिका के चारों ओर पत्थर की चहारदीवारी थी। हरी घास, वैदूर्य मणि के समान जान पड़ती थी। वृक्षों से फूल गिर रहे थे, फूलों से पृथिवी ऐसी शोभित थी, जैसे नक्षत्रों से आकाश की शोभा होती है। रामचन्द्र की अशोक-वाटिका, इन्द्र के नन्दन वन के समान और कुबेर के चैत्ररथ वन के समान थी। लताओं से छाये हुए घर बने थे, जिनमें बैठने के लिए अनेक प्रकार के आसन रक्खे थे। रामचन्द्र उस रमणीय वाटिका में जाकर उत्तम आसन पर बैठे। सीता को अपने हाथ से मधु और मैरेयक पिलाया। फिर रामचन्द्र के भोजन के लिए अनेक प्रकार के मीठे फल और मांस आदि सेवक लेकर आये। १३—२०। किन्नरी और अप्सराएँ आईं। और भी नाचने गानेवाली स्त्रियाँ आईं। वे सब मदिरा पिये थीं। नाच और गाना होने लगा। इसी प्रकार प्रतिदिन सीता के साथ रामचन्द्र देवताओं के समान विहार करते थे। इसी प्रकार दस हज़ार वर्ष तक भोग-विलास करते रहे। शिशिर ऋतु विशेषकर भोग-विलास का समय है। इस ऋतु में विविध भोग करते थे। दिन के पहले पहर में धर्मात्मा रामचन्द्र धर्म-कर्म करते थे। उसके बाद दोपहर का समय अन्तःपुर में बिताते थे। सीता भी पहले पहर में देव-कार्य और सासुओं की सेवा करती थीं। सासुओं में किसी प्रकार का भेदभाव नहीं रखती थीं।

दोपहर को उत्तम वस्त्र-आभूषण धारण करके रामचन्द्र की सेवा में जाती थीं और इन्द्र के समीप बैठी हुई इन्द्राणी के समान शोभित होती थीं। कुछ दिनों के बाद वे गर्भवती हुईं, उनको गर्भवती देखकर रामचन्द्र को बड़ा हर्ष हुआ। २१—३०। देव-कन्या के समान सुन्दरी सीता से रामचन्द्र ने कहा——हे वैदेही, तुम गर्भवती हो, इस अवस्था में तुम्हारी जो इच्छा हो, वह बताओ। सीता ने मुसकराकर कहा—हे रघुनन्दन, गंगा-तट पर रहनेवाले महातेजस्वी ऋषियों के पवित्र तपोवन देखने की मेरी इच्छा है। फल-मूल खानेवाले ऋषियों के चरणों में प्रणाम करना चाहती हूँ। बस, यही मेरा मनोरथ है, चाहे एक ही रात वहाँ रह आऊँ। रामचन्द्र ने कहा——अच्छा, तुम्हारी इच्छा पूरी की जायगी। तुम विश्वास रक्खो, कल अवश्य तपोवन देखोगी। सीता से यह कहकर रामचन्द्र अन्तःपुर से बाहर आये, और सुहृदों के साथ दूसरे भवन को चले गये। ३१—३७।

सर्ग ४३

बुद्धिमान् सुहृद् महाराज रामचन्द्र को प्रसन्न करने के लिए मनोरंजक बातें करने लगे। विजय, मधुमत्त, काश्यप, मंगल, पुल, सुराजि, कालिय, भद्र, दन्तवक्र और सुमागध, ये लोग बड़े हास्य-कुशल थे। अनेक प्रकार की मनोरंजक बातें रामचन्द्र के सामने किया करते थे। किसी बात के प्रसंग में रामचन्द्र ने भद्र से पूछा——आजकल नगर और देश के लोग हम लोगों के विषय में क्या बातें करते हैं। हमारे विषय में; सीता, भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्न के विषय में; केकयी और अन्य माताओं के विषय में लोग क्या कहते हैं। क्योंकि लोगों का स्वभाव ही होता है, वन में और राज्य में सर्वत्र राजा के विषय की बातें किया करते हैं। १—६। रामचन्द्र के यह कहने पर भद्र हाथ जोड़कर बोला—राजन्, पुरवासी लोग आप लोगों की प्रशंसा ही करते हैं।

आपने रावण को जीतकर विजय प्राप्त की है, बहुधा उसी विषय की बातें हुआ करती हैं। रामचन्द्र ने कहा—वे लोग क्या कहते हैं; विजय की क्या बातें करते हैं? भला-बुरा जो कुछ कहते हों, ठीक-ठीक बताओ। उनकी बातों में जो करने योग्य बात होगी, उसे हम करेंगे और जो उचित न होगी, उसे न करेंगे। तुम निर्भय होकर कहो। दुष्ट लोग जो कुछ कहते हों, सो भी कहो।७—११। रामचन्द्र के यह कहने पर भद्र हाथ जोड़कर बोला—हे राजन्, सुनिए। नगर के निवासी बाज़ार में, चौराहे पर, गलियों में, वनों और उपवनों में बातें किया करते हैं कि रामचन्द्र ने बड़ा कठिन काम किया। किसी देवता, दानव या मनुष्य ने कभी समुद्र में सेतु नहीं बाँधा; ऐसा आज तक सुनने में भी नहीं आया। इन्होंने दुराधर्ष रावण को सेना सहित मार डाला। वानरों और रीछों से मित्रता की। राक्षसों को वश में किया। रावण को युद्ध में मारकर सीता को अपने घर ले आये। किन्तु सीता के साथ भोग करने में अब उनको सुख का अनुभव कैसे होता होगा! जिन सीता को रावण बलपूर्वक लेकर भाग गया, लंका में ले जाकर अशोक-वाटिका में रक्खा। सीता राक्षसों के वश में रहीं, उनसे अब क्योंकर प्रेम करते हैं! अब हम लोगों को भी स्त्रियों के विषय में ऐसी बातें सहनी पड़ेंगी। क्योंकि राजा जैसा करता है, वैसा ही प्रजा भी करती है। हे राजन्, नगर और देश में ऐसी बहुत-सी बातें लोग किया करते हैं।१२—२०। भद्र की यह बातें सुनकर रामचन्द्र को बड़ा दुःख हुआ। उन्होंने अन्य सुहृदों से पूछा—क्या ये बातें सत्य हैं? उन लोगों ने सिर झुकाकर प्रणाम किया और कहा—महाराज, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं, लोग ऐसा ही कहते हैं। शत्रु-नाशन रामचन्द्र ने यह सुनकर मित्रों को बिदा किया। २१—२३।

सर्ग ४४

सुहृदों को बिदा करके रामचन्द्र ने सीता को त्याग देने का निश्चय किया। वे समीप ही खड़े हुए द्वारपाल से बोले—लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न को शीघ्र बुला लाओ। रामचन्द्र की आज्ञा से द्वारपाल पहले लक्ष्मण के घर गया। वह हाथ जोड़कर महात्मा लक्ष्मण से बोला—आपको महाराज देखना चाहते हैं। शीघ्र चलिए, देर न कीजिए। रामचन्द्र की आज्ञा सुनते ही लक्ष्मण रथ पर सवार होकर राजभवन को चले। १—५। उनको जाते देखकर द्वारपाल भरत के पास गया, और जय-जयकार करके बड़ी नम्रता से बोला—महाराज ने आपको देखने की इच्छा की है। रामचन्द्र का सन्देश पाते ही महाबलवान् भरत उठ खड़े हुए और पैदल ही चल दिये। भरत को जाते देखकर द्वारपाल शत्रुघ्न के घर गया और हाथ जोड़कर बोला—हे रघुश्रेष्ठ! चलिए, आपको महाराज ने बुलाया है। लक्ष्मण और भरत जा चुके हैं, आप भी चलिए। ६—१०। शत्रुघ्न ने सिर झुकाकर पृथिवी को प्रणाम किया और रामचन्द्र के पास चले। द्वारपाल लौटकर शीघ्र ही रामचन्द्र के पास पहुँचा और हाथ जोड़कर निवेदन किया—आपके तीनों भाई आये हैं। चिन्ता के कारण रामचन्द्र की इन्द्रियाँ व्याकुल हो गई थीं। सिर झुकाये उदास बैठे थे। द्वारपाल से बोले—यहाँ बुला लाओ। ये लोग हमको प्राणों के समान प्रिय हैं, और इन लोगों के जीवन हमारे ही लिए हैं। रामचन्द्र की आज्ञा पाकर श्वेत वस्त्र धारण किये तीनों राजकुमार राजभवन में आये। उनका मुँह राहु से ग्रसित चन्द्रमा के समान, अस्त होते हुए सूर्य के समान और मुरझाये हुए कमल के समान उदास था। आँखों में आँसू भरे थे। तीनों भाइयों ने उनके चरणों में प्रणाम किया और हाथ जोड़कर खड़े हो गये। रामचन्द्र ने सबको हृदय से लगाया और बैठने की आज्ञा दी। जब वे लोग बैठ गये तो रामचन्द्र बोले—तुम लोग हमारा सर्वस्व हो, हमारा जीवन

हो।तुम्हीं लोगों की सहायता से हम राज्य करते हैं। बुद्धिमान् हो, और सब शास्त्र जानते हो। हम एक बात तुमसे कहते हैं, उस पर विचार करो। रामचन्द्र के यह वचन सुनते ही वे लोग घबरा गये। मन में सोचने लगे कि महाराज न जाने क्या कहें। ११—२१।

सर्ग ४५

रामचन्द्र उदास होकर बोले—तुम लोगों का कल्याण हो। अयोध्या के लोग हमारे और सीता के विषय में जो बातें करते हैं, उन्हें ध्यान देकर सुनो—नगर और देश के लोग हमारी बड़ी निन्दा करते हैं, उनकी बातें हमारे हृदय को विदीर्ण किये देती हैं। हमारा जन्म महात्मा इक्ष्वाकु के वंश में हुआ है। सीता भी अच्छे कुल में, महात्मा जनक के यहाँ उत्पन्न हुई हैं। हे सौम्य लक्ष्मण, दंडक वन में रावण जिस तरह सीता को हर ले गया, फिर हमने उसे मार डाला। सीता के विषय में हमारे यह विचार हुए कि सीता रावण के घर में रहीं, अब इनको हम अयोध्या को कैसे ले जायँ, इस सन्देह को दूर करने के लिए सीता ने अग्नि में प्रवेश किया, ये सब बातें तुम जानते ही हो। सब देवताओं के सामने अग्नि, पवन, सूर्य और चन्द्रमा ने सीता को निष्पाप कहा और इनकी प्रशंसा की। महर्षिगण भी इन बातों को सुन रहे थे। देवताओं, गन्धर्वों, राक्षसों और वानरों के सामने अग्नि ने सीता को हमारे हाथ में सौंपा। हमारी अन्तरात्मा भी यशस्विनी सीता को शुद्ध समझती है। उसके बाद सीता को हम अयोध्या में लाये। अब नगर और देश के लोग हमारी निन्दा करते हैं, इसका हमें बड़ा शोक है। लोग जिसकी निन्दा करते हैं, संसार में जिसकी अकीर्ति होती है, उसका उस समय तक अधम लोकों में निवास रहता है जब तक संसार में उसकी अकीर्ति रहती है। १—१२। जिसकी कीर्ति होती

है, उसका संसार में सम्मान होता है, और जिसकी अकीर्ति होती है, उसकी देवता भी निन्दा करते हैं। इसी से महात्मा लोग ऐसे काम करते हैं, जिनसे संसार में उनकी कीर्ति हो। हम अकीर्ति के भय से अपने प्राण छोड़ देंगे, तुम लोगों को त्याग देंगे, फिर सीता के लिए तो कहना ही क्या है। तुम लोग हमारे इस शोक की ओर ध्यान दो। किसी को इससे बढ़कर दुःख क्या हो सकता है। इस लिए हे लक्ष्मण, तुम प्रातःकाल सुमन्त्र को रथ जोतने की आज्ञा दो, उस पर सीता को बैठाकर देश के बाहर छोड़ आओ।१३-१६। गंगा के उस पार तमसा नदी के तट पर महात्मा वाल्मीकि का आश्रम है, वहीं निर्जन देश में सीता को छोड़कर तुम शीघ्र लौट आओ। हे लक्ष्मण, तुम हमारी यह आज्ञा मानो। सीता के विषय में कुछ कहना व्यर्थ है। इस विषय में अब कुछ विचार न करो। तुमको हमारे चरणों और प्राणों की शपथ है। यदि तुमने यह काम न किया तो हम बहुत अप्रसन्न होंगे। इस विषय में हम कुछ सुनना नहीं चाहते। तुम लोगों में से यदि कोई इसके विरुद्ध कुछ कहेगा तो वह हमारे अभीष्ट में विघ्न करने के कारण शत्रु समझा जायगा। यदि तुम लोग हमारा सम्मान करते हो तो हमारी आज्ञा मानो। सीता को यहाँ से ले जाओ। सीता ने कहा भी है कि वे गंगा-तट के निवासी ऋषियों के आश्रम देखना चाहती हैं। उनकी भी अभिलाषा पूरी हो जायगी। यह कहकर धर्मात्मा रामचन्द्र ने भाइयों को जाने की आज्ञा दी, और आँखों में आँसू भरे हुए अपने भवन को गये। शोक के मारे वे हाथी के समान श्वास छोड़ते थे। १७-२४।

सर्ग ४६

जब वह रात बीत गई तो प्रातःकाल लक्ष्मण ने दुःखित होकर सुमन्त्र से कहा—हे सुमन्त्र, रथ में शीघ्र चलनेवाले घोड़े जोतो,

और उसमें सीता के बैठने के लिए अच्छा बिस्तर बिछाओ। रामचन्द्र की आज्ञा से महर्षियों के आश्रम दिखाने के लिए सीता को ले जायँगे। रथ शीघ्र लाओ। सुमन्त्र 'बहुत अच्छा' कहकर चले गये और अच्छे घोड़े जोतकर, सीता के बैठने योग्य उत्तम बिछौना बिछा-कर, रथ ले आये। उन्होंने लक्ष्मण से कहा—मित्रों का सम्मान बढ़ानेवाले हे लक्ष्मण, रथ तैयार है। १—५। लक्ष्मण राजभवन में जाकर सीता से बोले—तुमने कल महाराज से जो प्रार्थना की थी, वह तुम्हारी प्रार्थना उन्होंने स्वीकार कर ली है, और हमको आज्ञा दी है कि गंगा के तट पर रहनेवाले ऋषियों के आश्रम पर सीता को ले जाओ। राजा की आज्ञा से हम आज ही तुमको वहाँ ले जाना चाहते हैं। महात्मा लक्ष्मण के यह वचन सुनकर सीता को बड़ा हर्ष हुआ। वे चलने की तैयारी करने लगीं। बहुमूल्य वस्त्र, अनेक प्रकार के रत्न, धन और आभूषण मुनि-पत्नियों को देने के लिए ले लिये। लक्ष्मण ने रथ पर सब सामान रक्खा, सीता को बैठाया और रथ हाँका गया। जब रथ चला तब सीता ने लक्ष्मण से कहा—हे रघुनन्दन, अशकुन बहुत होते हैं। हमारी दाहनी आँख फड़कती है, और भी सब दाहने अंग फड़कते हैं। चित्त अस्वस्थ है। चलने की उत्सुकता तो बड़ी है, पर चित्त घबराता है। हमको सब सूना दिखाई देता है। ६—१५। हे वीर, न जाने किस कारण के लिए ये अशकुन हो रहे हैं। तुम्हारे भाइयों और हमारी सासुओं का कल्याण हो। नगर और देश में सब प्राणियों की कुशल हो। यह कहती हुई सीता ने हाथ जोड़कर देवताओं से प्रार्थना की। लक्ष्मण ने सीता के यह वचन सुनकर उनको प्रणाम किया, शोक के मारे उनका हृदय सूखा जाता था। किन्तु हर्ष प्रकट करते हुए बोले—ईश्वर सबका कल्याण करे। उस दिन गोमती के किनारे सब लोग ठहरे। प्रातः काल लक्ष्मण ने सुमन्त्र से कहा—शीघ्र रथ जोतो, आज हम लोग

गंगाजी में स्नान करेंगे । १६–२० । सुमन्त्र ने रथ में घोड़े जोते और हाथ जोड़कर सीता से कहा—हे सीते, रथ पर बैठिए । सीता सुमन्त्र के वचन सुनकर रथ पर चढ़ीं, लक्ष्मण भी सवार हुए और सुमन्त्र ने रथ हाँका । दोपहर के समय रथ गंगा के तट पर पहुँचा । गंगा को देखकर लक्ष्मण बड़े दुःख से रोने लगे । लक्ष्मण को दुखित देखकर सीता घबराकर बोलीं—हे लक्ष्मण, तुम रोते क्यों हो ? गंगा के तट पर आकर, जहाँ आने को बहुत दिनों से हमारी इच्छा थी, इस हर्ष के समय तुम विषाद क्यों करते हो ? तुम सदा रामचन्द्र के निकट रहते हो । उनसे अलग हुए दो रात हुईं, इसी से तुम शोक करते हो । २१–२७ । हमको भी रामचन्द्र प्राणों से भी अधिक प्रिय हैं, किन्तु हम इस प्रकार शोक नहीं करतीं । इसलिए तुम लड़कपन न करो । हमको गंगा के पार उतारो, महर्षियों के दर्शन कराओ । मुनि-पत्नियों को वस्त्र-आभूषण देकर, महर्षियों को प्रणाम करके, एक रात वहाँ ठहरकर, अयोध्या को लौट चलेंगी । हमारा भी मन कमल-नयन, सिंह के समान विशाल वक्षःस्थल, रामचन्द्र को देखने के लिए जल्दी कर रहा है । सीता के यह वचन सुनकर, आँसू पोंछकर, लक्ष्मण ने मल्लाहों को बुलाया । मल्लाह नाव ले आये और हाथ जोड़कर बोले—नाव तैयार है । गंगा के पार जाने की इच्छा से लक्ष्मण सीता को नाव पर बैठाकर उस पार ले गये । २८–३४ ।

सर्ग ४७

बहुत बड़ी नौका थी, लक्ष्मण ने पहले सीता को चढ़ाया फिर स्वयं चढ़े । उनका चित्त शोक से व्याकुल हो रहा था । सुमन्त्र को रथ और घोड़ों सहित वहीं ठहरने की आज्ञा देकर मल्लाहों से नाव ले चलने को कहा । जब नाव गंगा के उस पार पहुँची तो लक्ष्मण की आँखों में आँसू भर आये । उन्होंने हाथ जोड़कर सीता से कहा—हे वैदेही,

तुमको यहाँ लाने की रामचन्द्र की आज्ञा हृदय में शल्य लगने के समान हमें पीड़ित कर रही है। लोग हमीं को दोषी कहेंगे। आज हमारी मृत्यु हो जाती, अथवा मृत्यु से भी बढ़कर कोई दंड हमें मिलता, तो बड़ा अच्छा था। जिसमें फिर कभी ऐसे लोक-निन्दित काम के लिए हम नियुक्त न किये जाते। हे कल्याणी, कृपा करके हमारे ऊपर क्रोध न करना। यह कहकर हाथ जोड़े हुए लक्ष्मण पृथिवी पर गिर पड़े। रोते हुए और अपनी मृत्यु चाहते हुए लक्ष्मण से सीता घबराकर बोलीं--हे लक्ष्मण, यह क्या बात है, हमारी समझ में नहीं आई। ठीक-ठीक बताओ, तुम्हारा चित्त क्यों अस्वस्थ है। रामचन्द्र सकुशल हैं न? १-८। रामचन्द्र ने तुमको क्या आज्ञा दी है, जिससे तुमको इतना शोक है? तुमसे हम पूछती हैं, ठीक-ठीक बताओ। सीता के यह कहने पर शोक के मारे लक्ष्मण का गला भर आया। वे सिर झुकाये हुए बोले—तुम्हारे विषय में देश और नगर के निवासियों की कही हुई निन्दा की बातें सभा में सुनकर रामचन्द्र को बड़ा दुःख हुआ। फिर वे हमको आज्ञा देकर घर को चले गये। हे देवि! वे बातें तुमसे कहना उचित नहीं हैं। उन बातों को सुनकर रामचन्द्र ने हमको आज्ञा दी, और क्रोध के मारे उन्होंने मुँह फेर लिया। यद्यपि तुम निर्दोष हो, यह हम अच्छी तरह जानते हैं। रामचन्द्र भी तुमको निर्दोष समझते हैं, किन्तु अपवाद के भय से उन्होंने तुमको त्याग दिया है। राजा की आज्ञा मानकर, अपना हृदय कठोर करके, हम मुनियों के आश्रम पर तुम्हें छोड़ जायँगे। हे कल्याणी, गंगा के किनारे यह महर्षियों का पवित्र और रमणीय तपोवन है, तुम शोक न करो। हमारे पिता महाराज दशरथ के परम मित्र, मुनियों में श्रेष्ठ, यशस्वी वाल्मीकि यहाँ रहते हैं, उन्हीं महात्मा के चरणों की छाया में, उपवास करती हुई तुम सुख से रहो। तुम पतिव्रता हो। रामचन्द्र में ही अपना मन लगाकर मुनियों की सेवा करती हुई यहाँ रहोगी तो तुम्हारा कल्याण होगा। ६-१८।

सर्ग ४८

लक्ष्मण के दारुण वचन सुनकर सीता घोर दुःख के कारण मूर्च्छित होकर गिर पड़ीं। एक मुहूर्त तक उन्हें होश न आया, फिर वे रोती हुई दीन वचन बोलीं—हे लक्ष्मण, ब्रह्मा ने हमारा शरीर दुःख सहने के ही लिए बनाया है। यह शरीर दुःख की मूर्ति हो गया। हमने पूर्व जन्म में न जाने कौन पाप किया है, अथवा किसी को स्त्री का वियोग करा दिया है, जिसके कारण पतिव्रता और शुद्ध आचरणवाली होने पर भी रामचन्द्र ने हमको त्याग दिया। पहले जब हम वन में रह चुकी हैं, तब रामचन्द्र साथ थे, उनके चरणों की सेवा करती थीं, उस समय भी दुःख ही रहा। जब उनके साथ रहने पर भी दुःख ही मिलता रहा, तो भला अब अकेली हम कैसे रह सकेंगी। अपना दुःख किससे कहेंगी। मुनियों से त्यागने का क्या कारण बतावेंगी। जब वे पूछेंगे कि महात्मा रामचन्द्र ने किस कारण से तुमको त्याग दिया, तो हम क्या उत्तर देंगी। १—७ हे लक्ष्मण, गंगा में डूबकर भी अपने प्राण नहीं दे सकतीं, क्योंकि ऐसा करने से पिता और पति के कुल की हँसी होगी। हे लक्ष्मण, तुमको जैसी आज्ञा हुई हो, वैसा करो। दुःख-भागिनी हमको त्यागो और राजा की आज्ञा का पालन करो। हमारी ओर से, हमारी सब सासुओं के चरणों में सिर रखकर, हाथ जोड़कर प्रणाम करना और हमारा हाल कह देना। राजा से भी कुशल पूछकर हमारा यह सन्देश कहना—हे रघुनन्दन! सीता जैसी शुद्ध है, तुम्हारा जैसा हित चाहती है, और जैसा तुमसे स्नेह करती है, सो तुम अच्छी तरह जानते हो। लोकापवाद के भय से तुमने हमको त्याग दिया है। जिस बात में तुम्हारी अकीर्ति हो, वह काम स्वयं हमको न करना चाहिए। क्योंकि हमारी परम गति तुम्हीं हो। राजा से यह भी कहना कि सावधानी से धर्म का पालन करते रहें। नगर-निवासियों के साथ वैसा ही बर्ताव करें, जैसा अपने भाइयों के साथ करते हैं। यही

उनका परम धर्म है, इसी में उनकी कीर्ति है। पुर-वासियों के साथ सदा धर्म का बर्ताव करें। हमको अपने शरीर के लिए शोक नहीं है। आपने पुर-वासियों के निन्दा करने पर हमको त्याग दिया है। इसलिए हमको अपने शरीर का शोक नहीं है, क्योंकि पति ही स्त्री का देवता है, पति ही बन्धु और गुरु है। इसलिए पति का कार्य स्त्री को प्राण देकर भी करना चाहिए। हे वीर, हमारी ओर से ये सब बातें रामचन्द्र से कह देना। ८—१८। हे लक्ष्मण, हम गर्भवती हैं, तुम भी गर्भ के लक्षण अच्छी तरह देखकर जाओ। सीता के यह वचन सुनकर लक्ष्मण को बड़ा दुःख हुआ। उन्होंने पृथिवी पर सिर रखकर सीता को प्रणाम किया। दुःख के मारे गला रुँध गया, मुँह से कुछ बोल न सके। बड़े ज़ोर से रोते हुए उन्होंने सीता की प्रदक्षिणा की। एक मुहूर्त तक चिन्ता के मारे व्याकुल रहे। फिर बड़े कष्ट से बोले—हे कल्याणी, गर्भ के लक्षण देखने की बात हमसे क्यों कहती हो। हमने आज तक तुम्हारा रूप नहीं देखा, केवल तुम्हारे चरण ही देखे हैं। फिर इस समय रामचन्द्र की अनुपस्थिति में तुम्हारी ओर हम कैसे दृष्टि उठा सकते हैं! लक्ष्मण ने यह कहकर सीता को प्रणाम किया और नाव पर चढ़े। मल्लाहों को नाव छोड़ने की आज्ञा दी। नाव इस पार आई, शोक और दुःख से व्याकुल लक्ष्मण नाव से उतरकर रथ पर सवार हुए। रथ अयोध्या की ओर चला। वे बार-बार सीता की ओर देखते जाते थे। सीता अपना रक्षक किसी को न देखकर बड़े दुःख से रोने लगीं। वे पृथिवी पर लोटती और छटपटाती थीं। लक्ष्मण सीता को देखते हुए चले आये। जब तक रथ देख पड़ा, तब तक सीता भी बार-बार लक्ष्मण को देखती रहीं। जब रथ दूर निकल गया तो सीता बहुत घबराईं और शोक से व्याकुल हो गईं। यशस्विनी, पतिव्रता सीता किसी को अपना रक्षक न देखकर बड़े दुःख से विलाप करने लगीं। १९—२६।

सर्ग ४६

सीता को रोती हुई देखकर मुनियों के बालक भगवान् वाल्मीकि के पास दौड़ते हुए गये, और उनके चरणों में प्रणाम करके सीता के रोने का हाल बताया। भगवन्! किसी महात्मा की स्त्री, जो साक्षात् लक्ष्मी के समान है, और जैसी स्त्री हमने कभी नहीं देखी, बड़े दुःख और शोक से रो रही है। आप चलकर उसे देखिए। वह आकाश से गिरी हुई देवता के समान है। वह बड़े दुःख में है। नदी के किनारे बैठी है। वह दुःख और शोक के योग्य नहीं है, किन्तु न जाने किस कारण अकेली अनाथा की तरह बड़े दुःख से रो रही है। हमारी समझ में वह कोई देवी है, मनुष्य की स्त्री नहीं है। आप उसका सम्मान करें, क्योंकि आप ही को अपना रक्षक समझकर, आपके आश्रम के समीप, आपकी शरण में आई है। वह साध्वी है, अपना रक्षक चाहती है। हे भगवन्, आप उसकी रक्षा करें। १—६। उनकी यह बातें सुनकर धर्मात्मा वाल्मीकि ने तप के प्रभाव से दिव्य-दृष्टि द्वारा सब हाल जान लिया और जहाँ सीता बैठी थीं, वहाँ गये। मुनि को जाते देखकर उनके शिष्य भी पीछे हो लिए। बुद्धिमान् वाल्मीकि अर्घ्य के लिए जल लेकर गंगा के तट पर गये, और वहाँ अनाथा की तरह रोती हुई सीता को देखा। अपने तेज से सीता को प्रसन्न करते हुए मधुर वचन बोले—हे पतिव्रते, तुम तो महाराज दशरथ की पुत्रवधू, रामचन्द्र की भार्या और राजा जनक की पुत्री हो। हमने दिव्य-दृष्टि से तुमको यहाँ आई हुई जान लिया है, और सब कारण भी जान लिया है। तुम्हारे विषय में देश और नगर में जो बातें होती हैं, सो भी हम जानते हैं। और हे सीते, हमने तपोबल से यह भी जान लिया है कि तुम निष्पाप हो। अब तुम शोक न करो, चलो आश्रम पर ठहरो। हे वत्से, हमारे आश्रम के निकट ही बहुत-सी तपस्विनी तप करती हैं, वे तुम्हारी रक्षा उसी प्रकार करेंगी जैसे माता पुत्री


M. L. SHUKLA

की रक्षा करती हैं। यह अर्घ्य लो, और अपने घर में पहुँचने के समान शोक और दुःख छोड़ दो। ७–१६। मुनि के यह वचन सुनकर सीता ने उनके चरणों पर सिर रखकर प्रणाम किया और हाथ जोड़कर कहा—बहुत अच्छा। फिर महर्षि अपने आश्रम को चले। सीता भी हाथ जोड़े हुए उनके पीछे चलीं। मुनि के साथ सीता को देखकर मुनियों की स्त्रियाँ बड़ी प्रसन्नता से बोलीं—हे महर्षि, आपका स्वागत है। बहुत दिनों बाद हमारे आश्रम पर आपका आगमन हुआ। हम आपको प्रणाम करती हैं, क्या आज्ञा है? वाल्मीकि ने कहा कि ये बुद्धिमान् रामचन्द्र की पत्नी सीता हैं। राजा दशरथ की पुत्रवधू और जनक की पुत्री हैं। ये पतिव्रता और निष्पाप हैं, किन्तु इनके पति ने इनको त्याग दिया है, इससे इनकी रक्षा करना हमको उचित है। तुम लोग बड़े स्नेह से इनको देखो। एक तो इनके गौरव से, दूसरे हमारे कहने से, तुम लोग इनका सत्कार करो। मुनि-पत्नियों से बार-बार यह कहकर महातपस्वी, महायशस्वी वाल्मीकि सीता को साथ लेकर अपने आश्रम पर आये। शिष्य भी उनके साथ थे। १७–२३।

सर्ग ५०

लक्ष्मण गंगा के इस पार दूर खड़े हुए यह सब हाल देखते थे। जब वाल्मीकि सीता को अपने आश्रम में ले गये, तब वे बड़े दुःख से सारथि सुमन्त्र से बोले—हे सुमन्त्र, अब अयोध्या को चलो और सीता के वियोग से दुःखित रामचन्द्र को देखो। इससे बढ़कर उनको और कौन दुःख हो सकता है। पतिव्रता सदाचारिणी पत्नी को उन्होंने त्याग दिया। दैव की गति बड़ी कठिन है, उसे कोई नहीं टाल सकता। उसी दैव ने रामचन्द्र और सीता का वियोग कराया। जो रामचन्द्र क्रुद्ध होकर देवता, गन्धर्व, असुर और राक्षसों का वध कर सकते हैं, वे भी दैव के कारण दुःख सह रहे हैं। दैव के ही कोप से

चौदह वर्ष दंडक वन में रहे। किन्तु पुर-वासियों की कही हुई बातें सुनकर निरपराध सीता का त्याग देना उससे भी कठिन दुःख हुआ। इस काम को तो हम बड़ा निर्दयतापूर्ण समझते हैं। १—७। हे सुमन्त्र, पुर-वासियों की तुच्छ बातें सुनकर सीता का त्याग देना कीर्ति को नष्ट कर देनेवाला काम है। ऐसा काम करनेवाले को धर्मात्मा कौन कह सकता है। लक्ष्मण ने ऐसी ही बहुत-सी बातें कहीं। तब सुमन्त्र बड़ी श्रद्धा के साथ बोले—हे लक्ष्मण, सीता के विषय में शोक न करो। क्योंकि रामचन्द्र के विषय में ब्राह्मणों ने तुम्हारे पिता से जो बातें कही थीं, वह हमने सुनी हैं। रामचन्द्र बार-बार दुःख पावेंगे, प्रिय लोगों का वियोग भी हो जायगा, तो भी वे दृढ़ बने रहेंगे और भाग्यवान् होंगे। धर्मात्मा रामचन्द्र तुमको, भरत और शत्रुघ्न को भी किसी समय त्याग देंगे। भरत और शत्रुघ्न आदि से कभी यह बात न कहिएगा। दुर्वासा ने बहुत लोगों के सामने तुम्हारे पिता से कहा था, वसिष्ठ भी थे, हम थे और अन्य सज्जन भी थे। दुर्वासा के यह वचन सुनकर महाराज दशरथ ने हमको मना किया था कि किसी से यह बात न कहना। ८—१५। यद्यपि महाराज दशरथ की आज्ञा का उल्लंघन हमें न करना चाहिए, किन्तु तुम्हारी सुनने की इच्छा है, इसलिए हम कहते हैं। दैव के कोप से जिस कारण यह शोक और दुःख रामचन्द्र को मिला है, वह हम तुमसे कहते हैं, किन्तु भरत और शत्रुघ्न से ये बातें कभी न कहना। यह सुनकर लक्ष्मण ने सुमन्त्र से कहा—हे सुमन्त्र, ठीक-ठीक यह सब बातें हमसे कहिए। १६—२०।

सर्ग ५१

महात्मा लक्ष्मण के पूछने पर सुमन्त्र दुर्वासा के कहे हुए वचन कहने लगे। अत्रि के पुत्र महामुनि दुर्वासा प्रतिवर्ष वसिष्ठ के आश्रम

पर आया करते थे। एक बार तुम्हारे पिता महाराज दशरथ महात्मा वाल्मीकि के दर्शन के लिए उनके आश्रम पर गये। वसिष्ठ की बाईं ओर, सूर्य के समान तेजस्वी दुर्वासा को देखकर महाराज ने दोनों तपस्वियों को प्रणाम किया और मुनियों ने भी उनका स्वागत करके, बैठने के लिए आसन और फल-मूल आदि देकर, उनका सत्कार किया। फिर परस्पर बातें होने लगीं। उसी प्रसंग में महाराज दशरथ ने हाथ जोड़कर दुर्वासा से पूछा—भगवन्, हमारा वंश कब तक रहेगा? राम की आयु कितनी होगी और अन्य पुत्र कितने समय तक जीवित रहेंगे? रामचन्द्र के जो पुत्र होंगे, उनकी कितनी आयु होगी? हे भगवन्, यह हमारी सुनने की इच्छा है, आप हमारे वंश का भविष्य बताइए। १—१०। दशरथ के यह वचन सुनकर महातेजस्वी दुर्वासा बोले—राजन्, प्राचीन इतिहास सुनिए। पूर्व समय में देवासुर-संग्राम हुआ था, दैत्य लोग देवताओं से हारकर भागे और भृगु मुनि की स्त्री की शरण में गये। उन्होंने दैत्यों को अभयदान दिया, इससे वे निर्भय होकर वहाँ रहने लगे। भृगु-पत्नी की रक्षा में दैत्यों को निर्भय देखकर विष्णु को बड़ा क्रोध आया। उन्होंने तीक्ष्ण धारवाले चक्र से भृगु-पत्नी का सिर काट डाला। अपनी पत्नी की मृत्यु देखकर भृगु ने विष्णु को शाप दिया कि हे जनार्दन, स्त्री अवध्य होती है; तुमने क्रोध करके हमारी स्त्री को मार डाला है, हमसे स्त्री का वियोग कराया है, इसलिए मनुष्य-लोक में तुम्हारा जन्म होगा और तुमको भी बहुत वर्षों तक स्त्री-वियोग का दुःख भोगना पड़ेगा। भृगु ने क्रोध में आकर यह शाप दे तो दिया, किन्तु बाद में उन्हें बड़ा पश्चात्ताप हुआ। फिर वे विष्णु की प्रार्थना करने लगे। तब भक्त-वत्सल विष्णु बोले—लोकों का प्रिय करने के लिए हम तुम्हारा शाप ग्रहण करते हैं। हे दशरथ, इस प्रकार महातेजस्वी विष्णु को भृगु ने शाप दिया था। वही विष्णु तुम्हारे पुत्र हुए हैं, जिनका

नाम रामचन्द्र है। भृगु का शाप भोगते हुए रामचन्द्र बहुत दिनों तक अयोध्या का राज्य करेंगे। इनके राज्य में प्रजा सुखी होगी, पृथिवी धन-धान्य से पूर्ण रहेगी, दस हज़ार वर्ष तक इनका राज्य रहेगा। बहुत दक्षिणा देकर अश्वमेध यज्ञ करेंगे। बहुत-से राजवंश स्थापित करेंगे। इनकी पत्नी का नाम सीता होगा, उनसे दो पुत्र उत्पन्न होंगे। उसके बाद रामचन्द्र ब्रह्मलोक को चले जायँगे।११–२४। वंश का यह भविष्य बताकर महातेजस्वी दुर्वासा चुप हो गये। उसके बाद महाराज दशरथ दोनों मुनियों को प्रणाम करके अपने नगर को चले आये। हे लक्ष्मण, दुर्वासा के कहे हुए यह वचन हमने सुने हैं। ये अन्यथा नहीं हो सकते। सीता के दो पुत्र होंगे, उनका जन्म अयोध्या में नहीं, कहीं अन्यत्र होगा। यह भी मुनि ने ही कहा था। हे लक्ष्मण, इसलिए तुम सीता और रामचन्द्र के लिए शोक न करो। अपना चित्त स्थिर करो। सुमन्त्र के यह अद्भुत वचन सुनकर लक्ष्मण का शोक दूर हुआ, वे सुमन्त्र की प्रशंसा करने लगे। इसी तरह बातें करते हुए लक्ष्मण और सुमन्त्र अयोध्या को चले आते थे। जब सूर्य अस्त हो गये तो केशिनी नदी के समीप रात को ठहर गये। २५–३१।

सर्ग ५२

लक्ष्मण उस रात को केशिनी नदी के तट पर ठहरकर प्रातःकाल अयोध्या को चले। दोपहर के समय धन-रत्न से पूर्ण, हृष्ट-पुष्ट मनुष्यों से शोभित अयोध्या में पहुँचे। वहाँ पहुँचने पर बुद्धिमान् लक्ष्मण को बड़ा दुःख हुआ। वे मन में सोचने लगे——रामचन्द्र के पास जाकर क्या कहेंगे। यही सोचते हुए राजभवन के फाटक पर आये और रथ से उतरकर दुःख के मारे सिर झुकाये हुए राजभवन को चले गये। वहाँ रामचन्द्र को देखा, उनकी आँखों में आँसू भरे थे, बड़े दुःख से

आसन पर बैठे थे। लक्ष्मण ने उनके चरणों में प्रणाम किया और हाथ जोड़कर दीन वचन कहा—आपकी आज्ञा से गंगा के किनारे वाल्मीकि के आश्रम पर सीता को छोड़कर आपकी सेवा में हम फिर हाज़िर हुए हैं। सदाचारिणी सीता को वाल्मीकि मुनि अपने आश्रम पर ले गये। हे पुरुषश्रेष्ठ, शोक न कीजिए, काल की गति ऐसी ही होती है। आप-जैसे बुद्धिमान् लोग शोक नहीं करते। १—१०। एक दिन सबका विनाश होता है। जिसकी उन्नति होती है, उसकी अवनति भी निश्चित है। जिसका संयोग होता है, एक दिन उसका वियोग अवश्य ही होगा। जिसका जन्म होता है, उसकी मृत्यु भी निश्चित है। इसी लिए पुत्र, स्त्री, मित्र और धन से अत्यन्त प्रेम न करना चाहिए; क्योंकि इन सबका वियोग अवश्य होगा। आप अपने मन को स्वयं समझा सकते हैं। अपने ही को क्यों, सब लोकों को आप समझा सकते हैं, फिर आपको शोक क्यों होगा। आपके समान श्रेष्ठ पुरुष मोहित नहीं होते। यदि आप शोक करेंगे तो आपकी निन्दा होगी। जिस निन्दा के भय से आपने सीता को त्याग दिया, शोक करने से फिर वही निन्दा होगी। अतएव चित्त सावधान कीजिए, धैर्य धारण कीजिए, दुर्बल बुद्धि को छोड़ दीजिए और सन्ताप न कीजिए। ११—१६। महात्मा लक्ष्मण के यह कहने पर मित्र-वत्सल रामचन्द्र बड़े प्रेम से बोले—हे वीर लक्ष्मण, तुम बहुत ठीक कहते हो। शोक करना वृथा है। तुम हमारी आज्ञा के अनुसार काम कर आये, हम बहुत सन्तुष्ट हैं। तुम्हारे समझाने से शोक-सन्ताप भी जाता रहा, और हम अच्छी तरह समझ भी गये। १७—१९।

सर्ग ५३

लक्ष्मण की बातों से प्रसन्न होकर रामचन्द्र फिर बोले—हे लक्ष्मण, तुम्हारे समान बन्धु दुर्लभ है, और विशेषकर दुःख के समय तो अत्यन्त

ही दुर्लभ है। हे सौम्य, तुम बड़े बुद्धिमान् हो और हमारे मन के अनुकूल काम करते हो। तुमसे कुछ और कहना है, वह सुनो, और उसका प्रबन्ध करो। चार दिन से सब राज्य-कार्य बन्द है, इसकी हमको बड़ी चिन्ता हो रही है। अब तुम मन्त्री और पुरोहित को बुलाओ, जिन लोगों का जो काम हो, उन पुरुषों और स्त्रियों को बुलाओ। राज्य-कार्य प्रतिदिन करना चाहिए। जो राजा ऐसा नहीं करता वह नरक को जाता है। १—६। इस विषय में एक दृष्टान्त सुनो। सुना जाता है कि प्राचीन समय में महायशस्वी राजा नृग हुए थे, वे बड़े सत्यवादी, पवित्र और ब्रह्मण्य थे। एक बार उन्होंने पुष्करक्षेत्र में सुवर्ण-भूषित बछड़े सहित एक करोड़ गायें ब्राह्मणों को दीं। एक अग्निहोत्री उञ्छवृत्ति करनेवाले दरिद्र ब्राह्मण को जो गाय दान में मिली थी वह बछड़े सहित किसी कारण से राजा की गायों के झुंड में चली गई। वह भूखा-प्यासा ब्राह्मण अपनी गाय ढूँढ़ने लगा। देशभर में उसने ढूँढ़ डाला, पर गाय का पता न चला। ७—१०। कई वर्षों के बाद कनखल में उस ब्राह्मण ने किसी ब्राह्मण के घर में अपनी गाय और बछड़े को देखा। बछड़ा और गाय दोनों बहुत दुबले हो गये थे। ब्राह्मण ने अपनी गाय का नाम सबला रक्खा था, उसी नाम से गाय को पुकारा। गाय अपने स्वामी का बोल पहचान गई और उसके पास चली गई। भूखा ब्राह्मण अपनी गाय लेकर चला। गाय उस ब्राह्मण के पीछे चली। यह देखकर उस ब्राह्मण ने, जिसके घर में वह रहती थी, कहने लगा—यह गाय हमारी है, हमको महाराज नृग ने दी है। जिस ब्राह्मण के साथ गाय जाती थी, उसने कहा—गाय को जो पालता है, उसी के पीछे वह जाती है। देखो, यह हमारे पीछे जा रही है, इसे तुम अपनी क्यों कहते हो? दोनों ब्राह्मणों में यह झगड़ा होने लगा। ११—१५। विवाद करते हुए दोनों ब्राह्मण राजा नृग के पास गये, किन्तु राजभवन के द्वार पर द्वारपालों ने उनको रोक

लिया और भीतर जाने की उनको राजा की आज्ञा न मिली। कई दिन तक वे द्वार पर पड़े रहे, तब उनको बड़ा क्रोध आया। दोनों महात्माओं ने कुपित होकर राजा नृग को शाप दिया कि तुम अतिथि के काम के लिए दर्शन तक नहीं देते, इसलिए मनुष्यों से अदृश्य रहनेवाले गिरगिट हो जाओ, और हज़ारों वर्ष तक अँधेरे कूप में पड़े रहो। १६—१६। जब इस लोक में भगवान् विष्णु यदुवंशियों में अवतार लेंगे तो वे तुमको इस शाप से छुड़ावेंगे। तब सब पापों से छूटकर तुम स्वर्गलोक को जाओगे। कलियुग के प्रारम्भ में पृथिवी का भार उतारने के लिए नर-नारायण का अवतार होगा। क्रुद्ध ब्राह्मणों ने राजा नृग को यह शाप दिया और उस बूढ़ी गाय को किसी अन्य ब्राह्मण को दे दिया। फिर वे अपने-अपने घर को चले गये। हे लक्ष्मण, राजा नृग ब्राह्मणों के शाप का फल अब तक भोग रहे हैं। इसलिए अर्थी मनुष्य का कार्य न करने से राजा को बड़ा दोष होता है। जिन लोगों का कोई काम हो, उनको शीघ्र बुलाओ। द्वार पर जाकर देखो, जो कोई किसी काम के लिए आया हो, उसे हमारे सामने बुला लाओ। राजा को प्रजा-पालन के धर्म का फल अवश्य मिलता है। २०—२६।

सर्ग ५४

इस कथा को सुनकर लक्ष्मण ने हाथ जोड़कर पूछा—हे पुरुषश्रेष्ठ, थोड़े-से अपराध में ब्राह्मणों ने महाराज नृग को यमदंड के समान घोर शाप क्यों दे दिया? उस शाप को सुनकर कुपित ब्राह्मणों से महाराज नृग ने क्या कहा? लक्ष्मण के यह पूछने पर रामचन्द्र ने कहा—हे सौम्य! राजा नृग ने ज़ो कुछ कहा था सो भी बताते हैं, सुनो। ब्राह्मण तो शाप देकर चले गये, राजा नृग ने अपने मन्त्रियों, पुरोहितों और प्रजाओं

से कहा—हम जैसे घोर दुःख में पड़े हैं, उसे आप सावधान होकर सुनें। दो ब्राह्मणों ने क्रुद्ध होकर हमको शाप दिया है, उस शाप को बताने के लिए नारद और पर्वत मुनि यहाँ आये थे, और हमको बताकर आकाश-मार्ग से तीनों लोकों में विचरने के लिए चले गये। १—७। वसु नाम का जो हमारा पुत्र है, आज ही उसे राजगद्दी पर बैठाओ और शिल्पियों को आज्ञा दो कि हमारे लिए तीन कूप बना दें, जिनमें सुखपूर्वक हम रहें। जाड़ा, बरसात और गर्मी से जिसमें रक्षा हो सके। ब्राह्मणों के मुँह से निकले हुए शाप को उन्हीं में रहकर हम बितावेंगे। उनके किनारे वृक्ष और लताएँ लगा दी जायँ जिनमें फल और फूल हुआ करें। बहुत तरह की झाड़ियाँ भी लगा दी जायँ, जिनसे छाया रहे। फूले हुए वृक्षों से रमणीय उन गड्ढों में सुखपूर्वक हम शाप के दिन बितावेंगे। उनके चारों ओर दो-दो कोस तक वृक्ष लगाये जायँ। हे पुत्र, इस प्रकार के गड्ढे बनवाकर उनमें हमको बैठा दो और कुछ धन भी वहाँ रख दो, फिर तुम धर्म के अनुसार प्रजा का पालन करो। प्रजा का पालन अच्छी तरह न करने से जो दशा होती है, उसे तुम प्रत्यक्ष देख रहे हो। इसी अपराध में तो ब्राह्मणों ने हमें शाप दिया है! किन्तु हमारे लिए शोक न करना, क्योंकि काल की गति बड़ी कठिन है। जिसने हमको यह दुःख दिया, वह सब कुछ कर सकता है। ८—१५। जो मिलनेवाला होता है, वह अवश्य मिलता है, जो जानेवाला होता है, वह अवश्य जाता है। दुःख और सुख जिसके मिलने का समय आता है, वह अवश्य ही मिलता है। बहुत-से कर्मों के फल इसी जन्म में मिल जाते हैं और बहुत-से दूसरे जन्म में। इसलिए हे पुत्र, इन बातों को समझकर शोक न करो। हे लक्ष्मण, महायशस्वी राजा नृग अपने दुःख को इस प्रकार समझाकर, शाप का फल भोगने के लिए गिरगिट होकर, उन गड्ढों में चले गये। वहाँ अनेक प्रकार

के धन-रत्न रख दिये गये थे। ब्राह्मणों के शाप को भोगते हुए राजा नृग उन गड्ढों में रहने लगे। १६—१९।

सर्ग ५५

रामचन्द्र ने कहा—राजा नृग के शाप की कथा विस्तार के साथ हमने कहा। यदि कुछ और सुनने की इच्छा हो, तो और कथा सुनो। यह सुनकर लक्ष्मण ने कहा—हे राजन्, ऐसी आश्चर्यजनक कथाओं से हमको कभी तृप्ति नहीं होगी। लक्ष्मण के यह कहने पर इक्ष्वाकु-कुलनन्दन रामचन्द्र ने दूसरी कथा आरम्भ की। महात्मा इक्ष्वाकु के बारहवें पुत्र का नाम निमि था। वे बड़े बलवान् और धर्मात्मा थे। उन्होंने गौतम मुनि के आश्रम के समीप इन्द्रपुरी के-समान एक उत्तम नगर बसाया, उसका नाम वैजयन्त रक्खा और वहीं रहने लगे। फिर उन्होंने सोचा कि इस नगर में एक बहुत बड़ा यज्ञ करें जिससे पिता को प्रसन्नता हो। १—७। इस विषय में उन्होंने अपने पितासे भी सलाह ली और ब्रह्मर्षियों में श्रेष्ठ वसिष्ठ मुनि से यज्ञ कराने को कहा। उसके बाद अत्रि, अंगिरा और भृगु को भी यज्ञ कराने का निमन्त्रण दिया। वसिष्ठ ने राजा निमि से कहा था कि हमको इन्द्र ने यज्ञ कराने के लिए पहले निमन्त्रित किया है, इसलिए हम वहाँ जाते हैं। वहाँ से लौटकर तुम्हारा यज्ञ करावेंगे, तब तक हमारी प्रतीक्षा करना। यह कहकर वसिष्ठ तो इन्द्र का यज्ञ कराने के लिए चले गये। इधर गौतम ने आकर राजा निमि से कहा कि तुम्हारा यज्ञ हम करा देंगे। राजा निमि ने अंगिरा, अत्रि और भृगु को भी बुला लिया और गौतम को आचार्य बनाकर हिमवान् पर्वत के समीप यज्ञ आरम्भ किया। पाँच हज़ार वर्ष तक राजा निमि का यज्ञ होता रहा। उधर वसिष्ठ जब इन्द्र का यज्ञ करा चुके तो राजा निमि का यज्ञ कराने के लिए आये। जब उन्होंने देखा कि गौतम उनका यज्ञ

करा रहे हैं तो उनको बड़ा क्रोध आया। एक मुहूर्त तक राजा से मिलने के लिए द्वार पर खड़े रहे। ८—१५। किन्तु उस समय राजा सोते थे। राजा को न देखकर उनका क्रोध और भी बढ़ गया और उन्होंने शाप दे दिया—हे राजन्, तुमने हमारा निरादर करके दूसरे से यज्ञ करा लिया है, इसलिए तुम्हारी मृत्यु हो जाय। इधर जब राजा निमि जागे और सुना कि वसिष्ठ ने हमें शाप दिया है, तो उनको भी बड़ा क्रोध आया। उन्होंने कहा कि हम तो सोते थे, हमें मालूम भी न हुआ कि आप कब पधारे। आपने कुपित होकर यमदंड के समान घोर शाप दे दिया है, इसलिए हे ब्रह्मर्षि! हम भी शाप देते हैं, कि तुम्हारी भी मृत्यु हो जाय। दोनों ने कुपित होकर एक-दूसरे को शाप दिया। दोनों शाप देने और अनुग्रह करने में समर्थ थे, इसलिए किसी का शाप मिथ्या न हुआ, दोनों की मृत्यु हो गई। १६—२२।

सर्ग ५६

रामचन्द्र के वचन सुनकर शत्रुनाशन लक्ष्मण ने हाथ जोड़कर पूछा—महाराज, शाप के कारण राजा निमि और वसिष्ठ ने शरीर छोड़कर दूसरा शरीर कैसे प्राप्त किया? लक्ष्मण के पूछने पर रामचन्द्र कहने लगे—वे दोनों तपस्वी तो थे ही, शरीर त्यागकर वायुरूप से विचरने लगे। महामुनि वसिष्ठ शरीर प्राप्त करने के लिए अपने पिता देवदेव ब्रह्मा के पास गये। उनके चरणों में प्रणाम करके बोले—हे ब्रह्मन्, राजा निमि के शाप से हमारा शरीर छूट गया है, इससे हम वायुरूप होकर विचरते हैं। देह के विना बड़ा दुःख होता है, कर्मों का भी लोप हो जाता है। कोई कर्म नहीं किये जा सकते। अतएव आप हमको दूसरा शरीर दें। यह सुनकर ब्रह्मा ने कहा—अब तुम मित्र और वरुण के वीर्य में प्रवेश करो। वहाँ भी तुम अयोनिज

पुत्र होगे। स्त्री के गर्भ से जन्म न लेना पड़ेगा, तुम धर्मात्मा होगे और फिर प्रजापति होगे। १—१०। ब्रह्मा के यह कहने पर वसिष्ठ मुनि उनको प्रणाम और प्रदक्षिणा करके बड़ी शीघ्रता से समुद्र के किनारे गये। उस समय मित्र (सूर्य) वरुण के साथ वरुण का ही कार्य कर रहे थे। उसी समय उर्वशी अप्सरा अपनी सखियों के साथ वहाँ आई और क्रीड़ा करने लगी। उस कमल-नयनी पूर्ण-चन्द्रानना, सर्वांगसुन्दरी अप्सरा को देखकर वरुण को बड़ा हर्ष हुआ और उससे संभोग करने को कहा। किन्तु उर्वशी हाथ जोड़कर प्रार्थना करने लगी कि मित्र ने पहले से ही हमसे कह रक्खा है। वरुण काम से पीड़ित होकर बोले—हे सुन्दरी, तो अब हम देवता के बनाये हुए इस कुम्भ में वीर्य छोड़ते हैं। क्योंकि तुमको देखने के कारण हमारा वीर्य स्खलित हो रहा है। तुम हमारे साथ सम्भोग करना नहीं चाहती हो, तो हम वीर्य को त्यागकर अपनी काम-पीड़ा शान्त करेंगे। ११—१८। लोकपाल वरुण की यह बात सुनकर उर्वशी प्रसन्नता से बोली—ऐसा ही कीजिए। हमारे हृदय पर आप ही का अधिकार है, केवल शरीर ही मित्र के अधीन है, क्योंकि वे पहले कह चुके हैं। १९—२०। उर्वशी के यह कहने पर वरुण ने जलती हुई आग के समान अपना वीर्य कुम्भ में त्याग दिया। उसके बाद उर्वशी मित्र के पास गई। उसे देखते ही मित्र को बड़ा क्रोध आया। वे डाटकर बोले—रे दुष्टे, हमने तुझसे पहले कहा था, किन्तु तू हमारी उपेक्षा करके दूसरे के पास क्यों चली गई? इस दुष्कर्म के कारण तुझे हमारे क्रोध का यह फल भोगना पड़ेगा कि तू कुछ दिनों तक मनुष्य-लोक में रहेगी। बुध के पुत्र काशिराज पुरूरवा के पास जा, वही तेरे पति होंगे। शाप के कारण उर्वशी प्रतिष्ठानपुर में बुध के पुत्र पुरूरवा के पास गई। उर्वशी के गर्भ से पुरूरवा के पुत्र महाबली आयु का जन्म हुआ। इन्द्र के समान तेजस्वी राजर्षि नहुष उन्हीं आयु के पुत्र थे।

वृत्रासुर को मारने पर इन्द्र को जब ब्रह्महत्या लगी थी, तब राजा नहुष ने कई हज़ार वर्षों तक देवलोक का राज्य किया था। इस प्रकार मित्र के शाप से रोती हुई उर्वशी मृत्युलोक को आई, और बहुत वर्षों के बाद शाप का समय बीतने पर देवलोक को फिर चली गई।२१–२६।

सर्ग ५७

यह अद्भुत कथा सुनकर लक्ष्मण ने फिर पूछा—वसिष्ठ और निमि ने फिर कैसे शरीर प्राप्त किया था, यह हमें विस्तारपूर्वक बताइए। लक्ष्मण के यह पूछने पर सत्यपराक्रम रामचन्द्र बोले—जिस कुम्भ में वरुण ने अपना वीर्य त्याग दिया था, मित्र ने भी उर्वशी को शाप देकर उसी कुम्भ में अपना वीर्य छोड़ दिया। उस कुम्भ से दो ऋषि उत्पन्न हुए। पहले अगस्त्य का जन्म हुआ। अगस्त्य ने मित्र से कहा कि हम केवल तुम्हारे पुत्र नहीं हैं, किन्तु वरुण के भी पुत्र हैं। यह कहकर वहाँ से चले गये। जिस कुम्भ में मित्र ने उर्वशी को देखकर वीर्य त्याग दिया था, उसी में उर्वशी के कारण वरुण पहले ही अपना वीर्य त्याग चुके थे। कुछ समय के बाद मित्र और वरुण के वीर्य से, उसी कुम्भ से, वसिष्ठ का जन्म हुआ। वही वसिष्ठ इक्ष्वाकु-वंश के पुरोहित हैं। उनका जन्म होते ही महाराज इक्ष्वाकु ने हमारे वंश के हित के लिए उनको अपना पुरोहित बनाया।१–८। हे सौम्य, वसिष्ठ की दूसरी उत्पत्ति इस प्रकार हुई। अब राजा निमि के विषय में सुनो। राजा निमि के शरीर-त्याग करने पर भी ऋषियों ने यज्ञ बन्द नहीं किया। राजा की देह को गन्ध-माला और वस्त्रों से आच्छादित करके उसकी रक्षा की। जब यज्ञ समाप्त हुआ तो महर्षि भृगु ने कहा—राजन्, हम आपसे बहुत सन्तुष्ट हुए। हम आपको चैतन्य करेंगे। यह कहकर भृगु राजा को जीवित करने लगे। तब देवताओं ने प्रसन्न होकर राजा से पूछा—राजन्, बताओ तुम्हारा

जीव कहाँ स्थापित किया जाय। तब राजा निमि की आत्मा ने कहा—हम सब प्राणियों के नेत्रों पर निवास करें। देवताओं ने कहा—अच्छा, तुम वायुरूप होकर सब प्राणियों के नेत्रों पर विचरो। हे राजन्, तुम्हारे निवास के कारण सब प्राणी विश्राम के लिए बार-बार नेत्रों के पलक मारते रहेंगे। ६–१६। यह कहकर देवता अपने लोक को चले गये। इधर ऋषियों ने राजा निमि की देह को, पुत्र उत्पन्न होने के लिए, मन्त्र पढ़कर अरणि से मथा। अरणि से मथने पर महात्मा निमि के शरीर से एक पुत्र निकला। मथने के कारण वह निकला था, इसलिए उसका नाम मिथि, और उसका जन्म हुआ, इसलिए उसका नाम जनक रक्खा गया। अचेतन शरीर से उसकी उत्पत्ति हुई, इसलिए उसका विदेह भी नाम पड़ा। विदेहराज जनक मिथि नाम से महातेजस्वी राजा हुए। उन्हीं के नाम से उस वंश के राजा मैथिल कहलाते हैं। हे सौम्य, परस्पर शाप के कारण राजा निमि और वसिष्ठ की यह गति हुई, और उनके दूसरे शरीर धारण करने की यह कथा हमने कही। १७–२१।

सर्ग ५८

उसके बाद शत्रुनाशन लक्ष्मण ने महात्मा रामचन्द्र से पूछा—महाराज, राजा निमि और वसिष्ठ का यह अद्भुत वृत्तान्त आपने कहा। अब यह बताइए कि राजा निमि क्षत्रिय थे, वीर थे और यज्ञ की दीक्षा भी लिये हुए थे। फिर उन्होंने महात्मा वसिष्ठ पर क्षमा क्यों नहीं की। लक्ष्मण के यह पूछने पर सब शास्त्रों के जानकार रामचन्द्र ने कहा—हे वीर, क्षमा प्रत्येक पुरुष नहीं कर सकता। क्रोध का रोकना बड़ा कठिन काम है। जिस प्रकार राजा ययाति ने क्षमा की है, वैसी क्षमा करना बड़ा कठिन है। सतोगुणी राजा ययाति ने जैसी क्षमा की है, वह सुनो। ययाति राजा नहुष के पुत्र थे।

उनके दो अनुपम सुन्दरी स्त्रियाँ थीं; एक का नाम शर्मिष्ठा था जो वृषपर्वा दैत्य की कन्या थी और दूसरी का नाम देवयानी था। यह शुक्राचार्य की कन्या थी। राजा ययाति देवयानी से अधिक प्रेम नहीं करते थे। उन दोनों स्त्रियों से बड़े रूपवान् दो पुत्र उत्पन्न हुए। शर्मिष्ठा के पुत्र का पुरु और देवयानी के पुत्र का यदु नाम था। १—१०। पुरु प्रिय-पत्नी का पुत्र था और गुणवान् भी था, इसलिए राजा ययाति उसका बहुत प्यार करते थे। जब यदु बड़े हुए तो यह देखकर उनको बड़ा दुःख हुआ। वे अपनी माता से बोले—तुम्हारा जन्म भृगु के कुल में हुआ है। तुम इस तरह अपमान और दुःख उठा रही हो। आओ, हम तुम दोनों अग्नि में जलकर मर जायँ, और राजा दैत्य की पुत्री के साथ विहार करें। यदि तुम सहन कर सकती हो तो सहो, किन्तु हम नहीं सह सकते। हमको आज्ञा दो, हम प्राण त्याग देंगे। ११—१४। बड़े दुःख से रोते हुए पुत्र की यह बात सुनकर देवयानी को भी बड़ा क्रोध आया और उसने अपने पिता का स्मरण किया। कन्या के मन की बात जानकर भृगु वहाँ आ पहुँचे और उसे दुःखित देखकर बोले—क्या बात है? महातेजस्वी भृगु के बार-बार पूछने पर देवयानी बड़े क्रोध से बोली—हम विष पीकर, जल में डूबकर अथवा अग्नि में जलकर मर जायँगी। अब हम जीवित नहीं रह सकतीं। क्या तुम नहीं जानते हो कि अपमानित होने के कारण हमको कैसा दुःख है, और जब हमारा अपमान हो रहा है तो क्या हमारे पुत्रों का अपमान न होगा। क्योंकि जब वृक्ष काटा जाता है, तो वृक्ष के आश्रय में रहनेवाले भी मर जाते हैं। राजा हमारा अनादर करते हैं, यह हमसे सहा नहीं जाता। देवयानी के यह वचन सुनकर शुक्राचार्य ने बड़े क्रोध से शाप दिया कि हे ययाति, हमारी कन्या का निरादर करके तुमने हमारा भी निरादर किया है, इसलिए तुम वृद्ध हो जाओ। तुम्हारा शरीर शिथिल हो जाय, स्त्री के

साथ भोग करने की सामर्थ्य तुममें न रहे। ययाति को यह शाप देकर, और अपनी कन्या को समझाकर, सूर्य के समान तेजस्वी ब्रह्मर्षि शुक्राचार्य अपने स्थान को चले गये। १५—२५।

सर्ग ५६

भृगु के शाप से राजा ययाति वृद्ध हो गये। उन्होंने अपने पुत्र यदु से कहा—पुत्र, तुम बड़े धर्मज्ञ हो। हमारी वृद्धावस्था तुम ले लो और अपनी युवावस्था हमको दे दो, जिससे हम अभी कुछ दिन और भोग-विलास कर लें, क्योंकि अभी स्त्रियों के साथ भोग करने से हमको तृप्ति नहीं हुई। कुछ दिनों के बाद अपनी वृद्धा अवस्था हम ले लेंगे और तुम्हारी युवावस्था तुमको दे देंगे। उनके यह वचन सुनकर यदु ने उत्तर दिया—तुमको तो पुरु बहुत प्रिय हैं, वही तुम्हारी वृद्धा अवस्था ग्रहण करें। हमको तो तुम अपने पास भी नहीं बैठाते और न अपने साथ भोजन ही कराते हो। जो तुमको प्रिय है और जिसको अपने साथ भोजन कराते हो, उसी को यह वृद्धा अवस्था भी दो। तब ययाति ने पुरु से कहा—हे महाबाहु, हमारे सुख के लिए यह बुढ़ापा तुम ले लो। पुरु हाथ जोड़कर बोला—हम धन्य हैं, आपने हमारे ऊपर बड़ी कृपा की जो हमको कुछ करने की आज्ञा दी। राजा ययाति प्रसन्न हो गये। अपना बुढ़ापा उसे दे दिया और उसकी जवानी लेकर आप युवा हो गये। फिर हज़ारों वर्ष तक राज्य किया और हज़ारों यज्ञ किये। उसके बाद पुरु से बोले—हे पुत्र, अब हमारा बुढ़ापा हमको दे दो। हमने अपना बुढ़ापा धरोहररूप तुमको दिया था, अब उसे हम ले लेंगे, अब तुम कष्ट न उठाओ। हे महाबाहु, हम तुमसे बहुत प्रसन्न हैं, क्योंकि तुमने हमारी आज्ञा का पालन किया है। अब तुम्हीं को हम राज्य देंगे। १—१२। राजा ययाति पुरु से यह कहकर बड़े क्रोध से यदु से बोले—तुम राक्षस हो, क्षत्रियरूप होकर हमारे कुल में

उत्पन्न हुए हो। तुमने हमारी आज्ञा नहीं मानी, इसलिए तुम और तुम्हारे वंश में कोई भी राजा न हो सकेगा। तुम्हारे पुत्र भी राक्षस होंगे और तुम्हारे ही समान दुर्विनीत होंगे। सोमवंशी राजाओं में तुम्हारी गिनती न होगी। यदु से यह कहकर, पुरु का राज्याभिषेक करके, राजा ययाति वन को चले गये। कुछ दिनों के बाद उनकी मृत्यु हुई और स्वर्ग-लोक को गये। राजा ययाति का स्वर्गवास होने पर महायशस्वी पुरु प्रतिष्ठानपुर में राज्य करने लगे। १३—१९। पिता के शाप से यदु के बहुत से राक्षस पुत्र हुए। वे क्रौञ्च वन में रहने लगे। यदु भी राजवंश से अलग कर दिये गये। हे लक्ष्मण, राजा ययाति ने इस प्रकार से शुक्राचार्य का शाप ग्रहण कर लिया और उनके ऊपर क्रोध नहीं किया। किन्तु राजा निमि ने ऐसा नहीं किया। हमने यह कथा तुमसे कही, अब तुम उन लोगों को बुलाओ जो किसी काम के लिए आये हों। हम उनके कार्य करेंगे, जिसमें राजा नृग की-सी दशा हमारी न हो। रामचन्द्र इस प्रकार लक्ष्मण से कह रहे थे; इतने में अरुण किरणों से पूर्व दिशा रक्त वर्ण हो गई, मानों कुसुम से रँगा हुआ वस्त्र उसने ओढ़ लिया। आकाश में नक्षत्र विरल हो गये। २०—२३।

प्रक्षिप्त सर्ग १

प्रातःकाल रामचन्द्र ने स्नान और संध्योपासना आदि क्रिया करके राज-सभा में बैठे। पुरोहित वसिष्ठ और कश्यप आदि मन्त्री भी आये। नीतिज्ञ, व्यवहार-कुशल सभासद और अन्य राजाओं से सभा-भवन भर गया। महेन्द्र, धर्मराज और वरुण की सभा के समान रामचन्द्र की सभा शोभित हुई। उसके बाद रामचन्द्र ने लक्ष्मण से कहा—हे महाबाहो, तुम जाकर द्वार पर देखो। यदि कोई प्रजा किसी कार्य के लिए आई हो तो उसे बुला लाओ। रामचन्द्र की आज्ञा से लक्ष्मण द्वार पर गये और पुकारकर बोले कि राजा के पास यदि किसी

का कार्य हो तो चले। किन्तु वहाँ कोई नहीं था, क्योंकि रामचन्द्र के राज्य में किसी प्राणी को कोई कष्ट नहीं था। शारीरिक या मानसिक व्यथा किसी को नहीं थी। पृथिवी में सब तरह के अन्न पैदा होते थे, इसलिए भोजन का किसी को कष्ट नहीं था। बालक, युवा अथवा मध्यम आयु में किसी की मृत्यु नहीं होती थी। धर्म के अनुसार प्रजा का शासन होता था। जब किसी को कोई कष्ट ही नहीं था, तो राजा के पास किसी कार्य के लिए कोई क्यों आता। हाथ जोड़कर लक्ष्मण ने यही निवेदन किया। १—१०।

रामचन्द्र ने कहा—एक बार तुम फिर जाकर देख आओ। यद्यपि धर्म और न्याय के अनुसार राज-कार्य हो रहा है, अधर्म कहीं नहीं होता, इसलिए राज-भय से सब लोग एक-दूसरे की रक्षा करते हैं। हमारे कर्मचारी भी धनुष से छूटे बाणों के समान बड़ी तेज़ी से प्रजा की रक्षा करते हैं। किन्तु हे महाबाहो, तुमको भी प्रजा की रक्षा के लिए तत्पर रहना चाहिए। रामचन्द्र की आज्ञा से लक्ष्मण फिर द्वार पर आये। इस बार वहाँ एक कुत्ता बैठा हुआ दिखाई दिया। वह बार-बार द्वार की ओर देखता और रोता था। लक्ष्मण ने उससे पूछा कि तुम्हारा क्या काम है? तुम निर्भय होकर मुझसे कहो। कुत्ते ने उत्तर दिया—मैं अपना हाल महाराज रामचन्द्र से ही कहना चाहता हूँ। वे सब प्राणियों को शरण देते हैं और सबको अभय करते हैं। लक्ष्मण उसका वृत्तान्त कहने के लिए रामचन्द्र के पास गये और उनकी आज्ञा से फिर कुत्ते के पास आकर बोले—तुम क्या चाहते हो, जो कुछ कहना हो, सत्य-सत्य कहो। ११—१६। कुत्ता बोला—मेरा जन्म अधम योनि में हुआ है, इसलिए मैं देवमन्दिर, राजमन्दिर और ब्राह्मणों के घर में नहीं जा सकता हूँ। राजा धर्मरूप होकर मनुष्यों का पालन करता है और युद्ध में निपुण होता है। सदा सब प्राणियों के हित में तत्पर रहता है। महाराज रामचन्द्र सर्वज्ञ और सर्वदर्शी

हैं, नीति से सब काम करते हैं। छहों गुण उनमें विद्यमान हैं। वे चन्द्रमा, मृत्यु, यम, कुबेर, अग्नि, इन्द्र, सूर्य और वरुण-रूप हैं। हे लक्ष्मण, हमारी यह प्रार्थना तुम रामचन्द्र से कहो। वे प्रजा के पालक हैं, उनकी आज्ञा के विना मैं राजभवन में नहीं जा सकता। लक्ष्मण फिर जाकर रामचन्द्र से बोले—हे महाबाहो, एक कुत्ता किसी कार्य के लिए आया है, वह आपके द्वार पर बैठा है। रामचन्द्र ने उत्तर दिया—जो कोई भी कार्यार्थी आया हो, उसे तुम शीघ्र बुला लाओ। २०—२६।

प्रक्षिप्त सर्ग २

रामचन्द्र की आज्ञा से लक्ष्मण उस कुत्ते को सभा में बुला लाये। उसे देखकर रामचन्द्र ने पूछा—तुम जो कुछ कहना चाहते हो, निडर होकर कहो। तुमको कोई भय नहीं है। कुत्ता बोला—राजा सब प्राणियों का पालन करता है और धर्म की रक्षा करता है। जो राजा ऐसा नहीं करता, उसकी प्रजा शीघ्र ही नष्ट हो जाती है। राजा सम्पूर्ण जगत् का पिता है, वही काल और युग है, वही सम्पूर्ण जगत् है। जो धारण किया जाता है, उसी का नाम धर्म है और धर्म से ही प्रजा की स्थिति है। राजा धर्मरूप होकर चराचर जगत् को धारण करता है और धर्म से प्रजा को प्रसन्न रखता है। धारण करने ही का नाम धर्म है। हे राजन्, परलोक में धर्म ही फलदायक होता है। धर्म बहुत दुर्लभ पदार्थ है, यह हमारा सिद्धान्त है। दान, दया, सज्जनों का सम्मान और व्यवहार में सत्यता, यही परमधर्म है। इन्हीं की रक्षा करने से इस लोक और परलोक में सुख मिलता है। १—१०। हे रघुनन्दन, जिस धर्म का पालन सज्जन लोग करते हैं, उसे तुम जानते हो। तुम साक्षात् धर्म रूप हो, गुणों के तो समुद्र ही हो। हे राजन्, अज्ञान-वश यदि कोई अनुचित शब्द मेरे मुँह से निकल गया हो, उसे आप क्षमा

कीजिए। मैं आपके चरणों पर सिर रखकर प्रणाम करता हूँ। कुत्ते की यह बातें सुनकर रामचन्द्र ने पूछा—तुम निर्भय होकर अपना कार्य बताओ। कुत्ते ने कहा—राजा धर्म के ही प्रभाव से राज्य पाता है, धर्म के प्रभाव से ही प्रजा का पालन करता है, धर्म के ही प्रभाव से शरण में आये हुए की रक्षा करता है। राजा सब प्रकार के भय-समूह को दूर कर सकता है। यही समझकर मैं आपकी शरण में आया हूँ। मेरा जो कार्य है, वह सुनिए—सर्वार्थसिद्ध नामक एक भिक्षुक ने मुझे एक डंडा मारा है, यद्यपि मैंने उसका कोई अपराध नहीं किया। रामचन्द्र ने दूत को भेजकर उस भिक्षुक को बुलवाया। भिक्षुक ने सभा में आकर रामचन्द्र से कहा—महाराज, मुझे क्या आज्ञा है? रामचन्द्र ने उससे पूछा—तुमने इस कुत्ते को डंडा क्यों मार दिया, इसने तुम्हारा क्या अपराध किया था? ११—२०। देखो, क्रोध बहुत बड़ा शत्रु है, बड़ी पैनी तलवार है, क्रोध सब गुणों को नष्ट कर देता है। क्रोध करने से तपस्या, यज्ञ, दान और सब धर्म नष्ट हो जाते हैं, इसलिए क्रोध को त्याग देना चाहिए। इन्द्रियाँ दुष्ट घोड़ों के समान विषयों में दौड़ती हैं, उनको सारथि-रूपी बुद्धि के द्वारा विषयों से हटाकर सन्मार्ग में लगाना चाहिए। मन, कर्म, वाणी और नेत्रों से अच्छे आचरण करना चाहिए। सबकी भलाई सोचना चाहिए। किसी के साथ शत्रुता करना अथवा किसी का बुरा चेतना उचित नहीं है। बुरे आचरणों से जैसा अनिष्ट होता है, वैसा अनिष्ट पैनी तलवार से, साँप के ऊपर पैर रख देने से, अथवा कुपित शत्रु से भी नहीं होता। जो विनीत पुरुष हैं, उनका स्वभाव छिपा नहीं रहता और जो अपने स्वभाव को छिपाना चाहते हैं, उनके कामों से उनका स्वभाव प्रकट हो जाता है। रामचन्द्र के यह कहने पर ब्राह्मण ने उत्तर दिया—महाराज, मैं भिक्षा माँगता हुआ घूम रहा था, किन्तु मुझे भिक्षा कहीं नहीं मिली थी। यह कुत्ता मार्ग में खड़ा था। मैंने कई

बार इसे हटाया, जब यह मार्ग से नहीं हटा तो मुझे क्रोध आ गया। क्योंकि मैं उस समय भूखा भी था और कहीं भिक्षा भी नहीं मिली थी। मैंने इसे एक डंडा मार दिया। हे रामचन्द्र, मुझसे यह अपराध हुआ है, आप मुझे दंड दीजिए। आपके द्वारा दंड पाने से फिर मुझे नरक का भय नहीं रहेगा। २१–३०। तब रामचन्द्र ने सभासदों से पूछा—इसे क्या दंड देना चाहिए, क्योंकि उचित दंड देने से ही प्रजा सुरक्षित रहती है। रामचन्द्र के यह पूछने पर भृगु, अंगिरस, कुत्स, वसिष्ठ और कश्यप आदि मुनियों तथा मन्त्रियों ने उत्तर दिया—ब्राह्मण को प्राणदंड देना शास्त्रकारों का मत नहीं है, इसके सिवा और कोई भी दंड दिया जा सकता है। महाराज, आप राजदंड के ज्ञाता हैं, सबके शासक हैं। आप सनातन विष्णु और सर्वव्यापी हैं। आप तीनों लोकों का शासन करते हैं, आप जो उचित समझिए, इसे दंड दीजिए। मन्त्रियों के यह कहने पर कुत्ता बोल उठा—हे रामचन्द्र, यदि आप मुझसे सन्तुष्ट हैं, यदि आप मुझे वरदान देना चाहते हैं; क्योंकि आपने मुझसे पूछा था कि तेरा क्या कार्य करूँ, इसलिए हे महाराज, मैं आपसे यह प्रार्थना करता हूँ कि आप इस ब्राह्मण को कुलपति बना दीजिए। कालंजर देश में कुलपति के पद पर इसका अभिषेक कर दीजिए। रामचन्द्र ने उसकी बात मान ली। उस ब्राह्मण को कुलपति बना दिया। वह हाथी पर सवार होकर बड़े हर्ष से कालंजर देश को चला गया। तब मन्त्रियों ने हँसकर रामचन्द्र से पूछा—महाराज, आपने तो इसे दान दिया है, इसे हम लोग दंड नहीं कह सकते। ३१–४०। रामचन्द्र ने उनको उत्तर दिया—आप लोग इस मर्म को नहीं समझ सकते। यह कुत्ता ही इस बात को जानता है। रामचन्द्र के पूछने पर कुत्ते ने कहा—मैं भी पूर्व जन्म में कुलपति था। ब्राह्मण और देवताओं की पूजा करता था, उनसे बचा हुआ अन्न खाता था, देव-द्रव्य की रक्षा करता था, सबका हित चाहता था, सुशील और विनीत भी था। इन सब

गुणों के होने पर भी मैं इस अधम गति को प्राप्त हुआ हूँ। यह क्रोधी ब्राह्मण भी अन्त में ऐसी ही अधम गति पावेगा। हे रामचन्द्र, जो मनुष्य क्रोधी, कठोरभाषी और अधर्मी होता है, वह सात पीढ़ी तक के पूर्वजों को, और सात पीढ़ी तक वंश में होनेवालों को नरक में ढकेलता है। महाराज, जिसे पुत्र-बान्धवों सहित नरक में गिराना चाहे, उसे देवमन्दिर, गोशाला अथवा ब्राह्मणों के धन का रक्षक बना दे। जो पुरुष ब्राह्मण, देवता, स्त्री अथवा बालक का धन, या दान किया हुआ धन हर लेता है, उसे नरक में अवश्य जाना पड़ता है। देवता और ब्राह्मण के धन को हड़प लेने की इच्छा से ही मनुष्य अधम हो जाता है और नरक में गिरता है। वह कुत्ता पूर्वजन्म में बड़ा बुद्धिमान् था, इस जन्म में कुत्ते की जाति होने के कारण दूषित हो गया था। उसकी यह बातें सुनकर रामचन्द्र को बड़ा विस्मय हुआ। कुत्ता वहाँ से काशी को चला गया। ४१—५३।

प्रक्षिप्त सर्ग ३

एक रमणीय वन में बहुत वर्षों से एक गिद्ध और एक उलूक दो पक्षी रहते थे। वह गिद्ध बड़ा दुष्ट था। उसने उलूक के घोंसले में अपना अधिकार जमा लिया और उससे कहा कि यह तो मेरा ही घोंसला है। उन दोनों में बड़ी लड़ाई हुई। फिर दोनों ने यह कहा कि कमल-नयन रामचन्द्र सब लोकों के राजा हैं, उन्हीं की शरण में हम लोग चलें। वे जिसको यह घोंसला दिलावेंगे, वही इस घोंसले में रहेगा। यह निश्चय करके वे दोनों बड़े क्रोध से रामचन्द्र के पास चले। मार्ग में लड़ते-झगड़ते हुए बड़ी शीघ्रता से जाकर अयोध्या में पहुँचे। रामचन्द्र को प्रणाम करके गिद्ध पहले ही बोल उठा— महाराज, आप देवताओं और दैत्यों से भी श्रेष्ठ हैं। बृहस्पति और शुक्र से भी बढ़कर बुद्धिमान् हैं। सब प्राणियों की भलाई और बुराई

को समझते हैं। आपकी कान्ति चन्द्रमा के समान, तेज सूर्य के समान, धैर्य हिमवान् के समान, गम्भीरता समुद्र के समान, क्षमा पृथिवी के समान और वेग वायु के समान है। सब लोकों की रक्षा करने में आप धर्मराज के समान हैं। आप सब प्राणियों के पूज्य, सर्वगुणसम्पन्न और यशस्वी हैं। क्रोधरहित, दुर्जय और विजयी हैं। १—१०। अस्त्र-विद्या में आपके समान और कोई नहीं है। हे रामचन्द्र, मुझे आपसे जो कहना है, वह सुनिए। बहुत दिन हुए अपने हाथ से मैंने अपना घोंसला बनाया था। उस घोंसले को अब यह उलूक मुझसे छीने लेता है। आप मेरी रक्षा कीजिए। गिद्ध के यह कह चुकने पर उलूक बोला—हे रामचन्द्र, राजा के शरीर में चन्द्रमा, इन्द्र, सूर्य, कुबेर और यम का अंश होता है। कुछ मानुषता भी होती है। किन्तु आप तो सर्वदेवमय साक्षात् नारायणरूप हैं। आप सब प्राणियों के साथ समता का बर्ताव करते हैं, सबको समान दृष्टि से देखते हैं, यह सोम (चन्द्रमा) के अंश का गुण है। क्रोध, दंड और दान से पाप और भय को दूर करते हैं। सबकी रक्षा करते हैं और सबके दुखों को दूर करते हैं, यह इन्द्र के अंश का गुण है। अपने तेज से शत्रुओं को पीड़ित करते हैं, यह सूर्य के अंश का गुण है। आप हम लोगों को धन देते हैं, राज-लक्ष्मी आपके हाथ में है, यह कुबेर के अंश का गुण है। धर्म और न्याय से प्रजा का पालन करते हैं। स्थावर-जंगम सब प्राणियों के तथा मित्रों और शत्रुओं के साथ समान दृष्टि से न्याय करते हैं, जिसके ऊपर क्रोध करते हैं, उसकी मृत्यु होती है यह गुण यमराज के अंश का है। ११—२१। आप मनुष्यभाव को प्राप्त होकर और क्षमावान् होकर सब प्राणियों की रक्षा करते हैं। आप दुर्बलों और अनाथों का बल हैं, अन्धों के नेत्र हैं और जिनका कोई रक्षक नहीं, उनके रक्षक हैं। हे राजन्, आप हमारे स्वामी हैं, इसलिए मैं अपना दुःख आपसे निवेदन करता हूँ। यह गिद्ध मेरे घोंसले में घुस

आता है और मुझे पीड़ित करता है, आप इसका न्याय कीजिए।

तब रामचन्द्र ने अपने मन्त्रियों को बुलाया। उनकी आज्ञा से धृष्टि, जयन्त, विजय, सिद्धार्थ, राष्ट्रवर्धन, अशोक, धर्मपाल और सुमन्त्र राजसभा में आये। ये लोग सब शास्त्रों के ज्ञाता थे। नीति-शास्त्र में बड़े चतुर थे। लज्जावान् और कुलीन थे, महाराज दशरथ के समयमें भी यही लोग मन्त्रीके पद पर रह चुके थे। मन्त्रियों के सामने रामचन्द्र ने गिद्ध और उलूक से पूछा—कितने दिन हुए तुमने इस घोंसले को बनाया था, यह ठीक-ठीक कहो ? २२—२९। गिद्ध बोला—महाराज, जब पृथिवी पर मनुष्यों की सृष्टि हुई थी, तभी मैंने इस घोंसले को बनाया था। उलूक ने कहा कि राजन्, जब इस पृथिवी पर वृक्षों की उत्पत्ति हुई थी, तब से यह मेरा घोंसला है। उन दोनों की यह बातें सुनकर रामचन्द्र ने सभासदों से कहा—वह सभा ही नहीं है जहाँ बुद्धिमान् न हों, वे बुद्धिमान् नहीं हैं जो धर्म की बात न कहें, वह धर्म नहीं है जिसमें सत्यता न हो और वह सत्यता नहीं है जो कपट से भरी हो। जो सभासद् किसी बात को जानते हुए भी चुप बैठे रहते हैं, समय पर नहीं बोलते, उनको भी असत्य-वादी समझना चाहिए। काम, क्रोध तथा भय से जो सभासद् जानता हुआ भी प्रश्नों का उत्तर नहीं देता, वह वरुण के हजार पाशों में बँध जाता है, और एक वर्ष के बाद एक पाश से मुक्त होता है। इसलिए सभासद् को सत्य ही बात कहनी चाहिए। मन्त्रियों ने उत्तर दिया—यह उलूक प्रसन्न मालूम होता है और गिद्ध प्रसन्न नहीं जान पड़ता, इसलिए उलूक की बात सत्य है और गिद्ध झूठा है। महाराज, आप सब प्राणियों के राजा हैं, सबकी परमगति हैं। राजा ही सबका मूल है, वही सनातनधर्म है। राजा जिसको दंड देता है, उसको नरक में नहीं जाना पड़ता। मंत्रियों के यह वचन सुनकर रामचन्द्र ने कहा—सुनो, हम एक पौराणिक कथा कहते हैं। ३०—४०। चन्द्रमा, सूर्य

और नक्षत्रों समेत आकाश, पर्वतों और वनों समेत यह पृथिवी और यह चराचर तीनों लोक समुद्र में निमग्न हो गये थे। उस समय केवल एक परमात्मा ही विद्यमान था। लक्ष्मी समेत यह पृथिवी भगवान् विष्णु के उदर में चली गई थी। भगवान् विष्णु उसे अपने उदर में लेकर लक्ष्मी के साथ शयन करते थे। सोते हुए विष्णु के उदर में महायोगी ब्रह्मा ने भी प्रवेश किया। फिर भगवान् विष्णु की नाभि से सुवर्ण-भूषित कमल उत्पन्न हुआ, उसी कमल से महाप्रभु ब्रह्मा प्रकट हुए। उन्होंने वायु और पर्वतों सहित पृथिवी की फिर सृष्टि की। उसके बाद मनुष्यों और अंडज-स्वेदज आदि सब प्राणियों को उत्पन्न किया। उसी समय भगवान् विष्णु के कान के मैल से मधु-कैटभ नाम के दो असुर उत्पन्न हुए। वे दोनों बड़े बलवान् और भयानक थे। ब्रह्मा को देखकर उन्हें बड़ा क्रोध आया। वे ब्रह्मा को मारने के लिए बड़े वेग से दौड़े और ब्रह्मा डर के मारे चिल्लाने लगे। ब्रह्मा का शब्द सुनकर भगवान् विष्णु जाग पड़े। उन्होंने चक्र के प्रहार से उन दोनों का विनाश कर दिया। ४१—५०। उनके मेद (चर्बी) से यह पृथिवी गीली हो गई थी, इसी से इसका नाम मेदिनी पड़ा। फिर भगवान् विष्णु ने इस पृथिवी को शुद्ध किया। तब शुद्ध की हुई इस पृथिवी पर अनेक प्रकार के वृक्ष, ओषधियाँ और अन्न उत्पन्न होने लगे। इसलिए उलूक की बात सत्य है, क्योंकि वह कहता है कि वृक्ष उत्पन्न होने पर उसने अपना घोंसला बनाया। इसलिए यह घोंसला उसी का है, गिद्ध का नहीं। अब इस पापी गिद्ध को दंड देना चाहिए, क्योंकि इसने उलूक को बहुत पीड़ित किया है। उसी समय आकाश-वाणी हुई कि हे रामचन्द्र, इस गिद्ध को अब आप दंड न दीजिए, इसे तो घोर दंड पहले ही मिल चुका है। यह ब्रह्मदत्त नाम का एक राजा था। बड़ा सत्यवादी, शूर और शुद्ध-हृदय था। एक दिन इसके यहाँ एक ब्राह्मण ने आकर भोजन माँगा। ब्रह्मदत्त

ने अपने हाथ से अर्घ्य और पाद्य देकर उसका यथोचित सत्कार किया। जब भोजन करने के लिए वह बैठा तब उसके सामने मांस भी परोसा गया। मांस को देखकर ब्राह्मण को बड़ा क्रोध आया। उसने राजा को शाप दे दिया कि तुम गिद्ध हो जाओ। तब राजा ने उस ब्राह्मण से प्रार्थना की—हे धर्मज्ञ, अज्ञान से ऐसा हो गया है, आप हमारे ऊपर क्षमा कीजिए। हे महाभाग, मेरे इस शाप का अन्त कब होगा, यह मुझे बता दीजिए। ब्राह्मण ने उस काम को अज्ञान से किया गया जानकर राजा से कहा कि इक्ष्वाकुवंशी राजाओं में महायशस्वी रामचन्द्र नाम के एक राजा होंगे, वे जब तुम्हारा स्पर्श करेंगे तब तुम इस पाप से छूट जाओगे। यह आकाश-वाणी सुनकर रामचन्द्र ने उस गिद्ध का स्पर्श किया। उनके स्पर्श करते ही वह गिद्ध उस रूप को त्यागकर दिव्य पुरुष हो गया और रामचन्द्र से बोला—हे धर्मज्ञ रामचन्द्र, आपकी कृपा से आज मैं इस घोर नरक से मुक्त हुआ और मेरे उस शाप का अन्त हो गया। ५१—६५।

सर्ग ६०

इस प्रकार बातें करते-करते वसन्तऋतु की वह रात, जिसमें न अधिक गर्मी थी, न अधिक सर्दी, बीत गई। प्रातःकाल नित्यक्रिया करके रामचन्द्र ने प्रजा का कार्य करने के लिए पुर-वासियों को दर्शन दिया। उसी समय सुमन्त्र ने आकर कहा—महाराज, महर्षि च्यवन के साथ कुछ तपस्वी द्वार पर खड़े हैं और आपका दर्शन करने के लिए शीघ्रता कर रहे हैं। ये लोग यमुना के तट पर रहते हैं। सुमन्त्र के यह वचन सुनकर धर्मात्मा रामचन्द्र ने कहा—च्यवन आदि सब ऋषियों को शीघ्र बुला लाओ। राजा की आज्ञा पाकर सुमन्त्र हाथ जोड़कर सब ऋषियों को बुला लाये। वे सौ से कुछ अधिक थे। तेजस्वी महात्मा

तपस्वियों ने राजभवन में जाकर तीर्थों के जल और अनेक प्रकार के फल रामचन्द्र के सामने रक्खा। महाबाहु रामचन्द्र ने उसे ग्रहण किया और मुनियों को आसन पर बैठाया। १–११। रामचन्द्र की आज्ञा से जब ऋषिगण आसन पर बैठ गये, तब रामचन्द्र ने हाथ जोड़कर पूछा—आप लोगों के आगमन का क्या प्रयोजन है और हम आप लोगों की क्या सेवा करें? हमको आज्ञा दीजिए, हम बड़े हर्ष से आपकी आज्ञा का पालन करेंगे। यह राज्य, हमारे प्राण और हमारा सब कुछ ब्राह्मणों के ही लिए है, यह हम बिलकुल सत्य कहते हैं। यह सुनकर तपस्वियों ने उनकी बड़ी प्रशंसा की और बड़े हर्ष से बोले—हे पुरुषश्रेष्ठ, आपके सिवा और कौन ऐसी बातें कह सकता है। हम लोग बहुत-से महाबलवान् राजाओं के पास गये, किन्तु हमारे कार्य को महान् समझकर किसी ने उसे पूर्ण करने की प्रतिज्ञा न की। किन्तु आपने ब्राह्मणों के कार्य का सम्मान करके, आगमन का कारण जाने विना ही, कार्य करने की प्रतिज्ञा कर ली। आप अवश्य ही हम लोगों का कार्य करेंगे, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं। कार्य यह है कि आप महाभय से हम लोगों की रक्षा करें। १२–१८।

सर्ग ६१

तब रामचन्द्र ने पूछा—बताइए, आप लोगों का क्या काम है? आप लोगों का भय दूर होगा। रामचन्द्र की यह आज्ञा पाकर च्यवन ऋषि बोले—राजन्, देश भर के भय का जो कारण है, उसे सुनिए—सत्ययुग में लोला दैत्य का ज्येष्ठ पुत्र मधु हुआ। वह बड़ा बुद्धिमान्, ब्रह्मण्य और शरणागत का रक्षक था। देवताओं से उसकी बड़ी मित्रता थी। बड़ा धर्मात्मा और बलवान् भी था। उसकी तपस्या से प्रसन्न होकर रुद्र ने उसे बड़ा अद्भुत वरदान दिया था। अपने शूल से निकाल कर एक बहुत बड़ा शूल भी इसे दिया और कहा—तुमने बड़ी

तपस्या की है, इससे हम प्रसन्न हुए और बड़े प्रेम से तुमको यह आयुध देते हैं। तुम जब तक देवताओं और ब्राह्मणों से विरोध न करोगे, तब तक यह शूल तुम्हारे पास रहेगा। तुमसे जो कोई युद्ध करेगा, उसको यह शूल भस्म करके फिर तुम्हारे पास चला आवेगा। रुद्र से यह वरदान पाकर मधु प्रणाम करके बोला——भगवन्, आप सब देवताओं के ईश्वर हैं, आप ऐसा वरदान दें कि हमारे वंश में जो कोई हो, उसके पास यह शूल बना रहे। १—११। रुद्र ने कहा——ऐसा तो नहीं हो सकता, किन्तु तुम्हारा वचन भी हम विफल न करेंगे। तुम्हारे पुत्र के पास यह शूल रहेगा, उसके बाद नहीं रह सकता। जब तक तुम्हारे पुत्र के हाथ में यह शूल रहेगा, तब तक कोई भी प्राणी उसे मार न सकेगा। महादेव से यह अद्भुत वरदान पाकर मधु ने एक उत्तम भवन बनवाया, उसकी स्त्री का नाम कुम्भीनसी है। यह विश्वावसु की कन्या है, इसकी माता का नाम अनला था। कुम्भीनसी से महाबलवान् दारुण-स्वभाव लवण उत्पन्न हुआ। यह दुष्टात्मा बालकपन से ही पाप करने लगा। पुत्र को ऐसा दुष्ट देखकर मधु को बड़ा शोक और क्रोध हुआ, किन्तु उसने पुत्र को कुछ नहीं कहा। वह इस लोक को छोड़कर वरुणालय को चला गया। रुद्र का दिया हुआ शूल वह लवण को दे गया और रुद्र से जो वरदान मिला था, वह भी बता गया। तब से लवणासुर उस शूल के प्रभाव से और अपनी दुष्टता के कारण तीनों लोकों को पीड़ित कर रहा है। १२—२०। हे रामचन्द्र, लवणासुर का ऐसा प्रभाव है, और उस शूल में भी अद्भुत तेज है। अब आप ही हम लोगों की गति हैं। ऋषियों ने लवणासुर के भय से अनेक राजाओं से अभयदान माँगा, किन्तु उनकी रक्षा कोई न कर सका। हम लोगों ने सुना है कि आपने सेना और वाहन सहित रावण को मार डाला है, इससे आपके पास आये हैं। हम लोग पृथिवी पर आपके सिवा और किसी को अपना रक्षक नहीं देखते।

लवणासुर के भय से हम लोग पीड़ित हैं, आप हमारी रक्षा कीजिए। हे रामचन्द्र, हम लोगों के आने का यही कारण है। आप ही हम लोगों के इस भय को दूर कर सकते हैं। हे महाबल, आप यह कार्य करें। २१–२४।

सर्ग ६२

ऋषियों के यह कहने पर रामचन्द्र ने हाथ जोड़कर पूछा—लवणासुर के आचरण कैसे हैं, वह क्या खाता है और कहाँ रहता है? ऋषियों ने कहा—महाराज, सब प्राणी उसका आहार हैं, किन्तु विशेषकर तपस्वियों को ही वह खाता है। मधुवन में रहता है और उसके आचरण बड़े भयानक हैं। हज़ारों सिंह, बाघ, मृग, पक्षी और मनुष्यों को प्रतिदिन वह खाता है। वह जब मुँह फैलाकर किसी को खाने के लिए दौड़ता है, तो साक्षात् यम के समान जान पड़ता है। रामचन्द्र ने ऋषियों से कहा—हम उस राक्षस को मरवा डालेंगे, आप लोग भय न करें। १–६। महातेजस्वी मुनियों से यह प्रतिज्ञा करके रामचन्द्र ने अपने भाइयों से पूछा—तुम लोगों में से लवणासुर का वध कौन करेगा, इसका वध किसके हिस्से में है; महाबाहु भरत के अथवा बुद्धिमान् शत्रुघ्न के? भरत ने कहा—यह हमारे हिस्से में है, इसका वध हम करेंगे। भरत के यह वचन सुनकर शत्रुघ्न सुवर्णमय आसन से उठ खड़े हुए और रामचन्द्र को प्रणाम करके बोले—हे रघुनन्दन, महाबाहु भरत बहुत काम कर चुके हैं। आप अयोध्या छोड़कर जब वन को चले गये थे, तब इन्होंने राज्य की रक्षा की थी। आपके आगमन के लिए इनको बहुत शोक था, इन्होंने बड़े दुःख सहे। पृथिवी पर सोते थे, फल-मूल खाते थे, जटा रखाये थे, चीर पहने रहते थे। इन्होंने बड़े-बड़े दुःख उठाये हैं। अब आपकी सेवा के लिए हम उपस्थित हैं, इनको अब कष्ट न

उठाना चाहिए । ७—१४ । शत्रुघ्न के यह कहने पर रामचन्द्र बोले—अच्छी बात है, तुम्हीं इस काम को करो । लवणासुर को मार डालो । मधु के राज्य में हम तुम्हारा अभिषेक करेंगे । भरत को तुम और क्लेश देना नहीं चाहते तो वे अयोध्या में ही रहें । तुम वीर हो, बुद्धिमान् भी हो और राज्य-स्थापन करने में भी समर्थ हो । यमुना के तट पर नगर और गाँव बसाओ और उनका शासन करो । क्योंकि जो पुरुष किसी राजा के वंश का नाश करके, उस राज्य में किसी को राजा नहीं बना देता, वह राजवंश का उच्छेद करनेवाला पुरुष नरक को जाता है । तुम मधु के पुत्र पापी लवणासुर को मारकर धर्मपूर्वक वहाँ का राज्य करो । हमारी आज्ञा का पालन करना यदि तुम उचित समझते हो तो इसका कुछ भी उत्तर न दो, क्योंकि बड़ों की आज्ञा मानना छोटों का कर्तव्य है । हमारा दिया हुआ यह राज्य ग्रहण करो । वसिष्ठ आदि ऋषि विधिपूर्वक तुम्हारा अभिषेक करेंगे । १५—२१ ।

सर्ग ६३

रामचन्द्र के यह वचन सुनकर बलवान् शत्रुघ्न लज्जित हो गये । वह बहुत धीरे से बोले—महाराज, बड़े भाइयों के रहते हुए छोटे भाई का राज्याभिषेक होना अधर्म है, किन्तु आपकी आज्ञा का पालन करना भी अवश्य कर्तव्य है । बड़े भाइयों के होते हुए छोटे भाई के राज्य करने से जो अधर्म होता है, वह हमने आपसे भी सुना है और वेद के वाक्य भी सुने हैं । जब भरत ने लवण का वध करना स्वीकार किया था तो हमको बोलना उचित न था, किन्तु उस समय हमारे मुँह से यह दुर्वचन निकल गये । हमने जो लवणासुर का बध करना स्वीकार किया, उसी बोलने का यह फल है । क्योंकि बड़ों की बात काट देना उचित नहीं है । इससे इस लोक में अधर्म होता है और परलोक भी बिगड़ता है । आपकी बात का उत्तर देना भी

उचित नहीं है। किन्तु उत्तर हमने दे ही दिया, अब इस अधर्म का भी दंड हमको मिलना चाहिए, अब आपकी जो आज्ञा हो, उसके लिए हम तैयार हैं। किन्तु जिसमें किसी प्रकार का अधर्म न हो, वैसा प्रबन्ध आप कर दें। १—८। महात्मा शत्रुघ्न इस प्रकार कह रहे थे; रामचन्द्र प्रसन्न होकर भरत और लक्ष्मण से बोले कि अभिषेक की सब सामग्री एकत्र करो। आज ही शत्रुघ्न का अभिषेक किया जायगा। पुरोहित, मन्त्री, ऋत्विक् और वेदज्ञ ब्राह्मणों को बुलाओ। रामचन्द्र की आज्ञा से भरत और लक्ष्मण ने अभिषेक की सब सामग्री एकत्र की। राजभवन में बहुत-से ब्राह्मण और राजा एकत्र हुए। महात्मा शत्रुघ्न का अभिषेक आरम्भ हुआ। रामचन्द्र को और नगर-निवासियों को बड़ा हर्ष हुआ। रामचन्द्र के अभिषेक करने पर शत्रुघ्न वैसे ही शोभित हुए, जैसे देवताओं के अभिषेक करने पर इन्द्र शोभित हुए थे। ९—१५। नगर के लोगों को बड़ा हर्ष हुआ। ब्राह्मण भी बड़े प्रसन्न हुए। कौसल्या, सुमित्रा, केकयी और महाराज दशरथ की अन्य सब स्त्रियों ने मंगलाचार किया। च्यवन आदि महात्मा ऋषियों को शत्रुघ्न के राज्याभिषेक से लवणासुर के वध का विश्वास हो गया। रामचन्द्र शत्रुघ्न को गोद में बैठाकर मधुर वचन बोले—हे सौम्य, यह दिव्य अमोघ बाण हम तुमको देते हैं, इसी से तुम लवणासुर का वध करो। महाप्रलय हो जाने पर भगवान् विष्णु जब महासमुद्र में सो गये थे, उस समय देवता-दैत्य कोई भी उन्हें नहीं देखता था। उसी समय भगवान् विष्णु ने दुरात्मा मधु और कैटभ को मारने के लिए इस बाण को उत्पन्न किया था। इस बाण से सब राक्षस मारे जा सकते हैं। इसी बाण से मधु-कैटभ का वध करके विष्णु ने त्रैलोक्य की सृष्टि की थी। रावण को मारने के लिए हमने यह बाण इसलिए नहीं चलाया कि इसके चलाने से बहुत प्राणियों की मृत्यु होगी। १६—२४। देखो, महात्मा रुद्र ने मधु को एक त्रिशूल दिया

था, जिससे वह अपने शत्रुओं का संहार कर सकता था। वही त्रिशूल अब लवणासुर के पास है। लवणासुर उसकी पूजा करके, घर में रखकर, आहार के लिए सब दिशाओं में घूमता रहता है। जब कोई युद्ध के लिए उसे ललकारता है, तो वह राक्षस उसी शूल को लेकर उसे भस्म कर देता है। इसलिए हे पुरुषसिंह, जब वह कहीं बाहर गया हो, तब तुम उसके द्वार पर जाकर खड़े हो जाओ। जिसमें वह उस शूल को न ले सके। वह घर में घुसने न पावे और तुम उसे युद्ध के लिए ललकारो, तब तुम उसे मार सकोगे। यदि वह अपना त्रिशूल पा जायगा तो उसे कोई भी नहीं मार सकेगा। इस उपाय से तुम उसे अवश्य मार डालोगे। जिस समय उसके हाथ में शूल न हो, उसी समय तुम उससे युद्ध करो, क्योंकि रुद्र के त्रिशूल को कोई व्यर्थ नहीं कर सकता। २५—३१।

सर्ग ६४

रामचन्द्र ने फिर कहा—यह चार हज़ार घोड़े, दो हज़ार रथ, और एक सौ हाथी लेकर तुम जाओ। बनिये सब सामान लेकर तुम्हारे साथ जायँ। नट और नर्तकों को भी साथ ले जाओ। दस लाख सुवर्ण-मुद्रा और सेना-वाहन आदि साथ ले जाओ। सैनिकों को धन देकर और सम्मान करके सन्तुष्ट रखना। सैनिकों के प्रसन्न रहने पर जो काम उनसे निकलते हैं, वे काम बन्धु-बान्धव, धन और स्त्री, किसी से भी नहीं हो सकते। इससे तुम सन्तुष्ट सैनिकों की बहुत बड़ी सेना पहले भेज दो। उसके बाद तुम अकेले धनुष-बाण लेकर मधुवन को जाओ। इस युक्ति से, गुप्त रूप से जाओ, जिसमें लवणासुर को यह न मालूम होसके कि युद्ध करने के लिए आये हैं। इस प्रकार तुम निर्भय होकर जाओ। उसके हाथ में जब त्रिशूल न होगा, तभी उसकी मृत्यु हो सकती है। जब वह शूल धारण कर लेता है, तब जो कोई उसके

सामने जाता है, उसको मार डालता है। ग्रीष्मऋतु बीतने पर वर्षा के आरम्भ में उसका वध करो। उस दुष्ट के मारने का यही अच्छा समय है।१—१०। सेना इन महर्षियों के साथ जाय, ग्रीष्म के अन्त में गंगा के पार उतरे, ऐसी व्यवस्था करो। गंगा के तट पर सेना को ठहरा-कर, तुम अकेले धनुष-बाण लेकर वहाँ जाना। शत्रुघ्न ने रामचन्द्र के यह कहने पर सेनापतियों को बुलाकर कहा—तुम लोगों के ठहरने के लिए कुछ स्थान हम बताये देते हैं। वहीं तुम लोग ठहरना। आपस में किसी तरह का विरोध न करना और किसी को कष्ट भी न देना। सेना को यह आज्ञा देकर शत्रुघ्न कौसल्या, सुमित्रा और केकयी को प्रणाम करने गये। फिर रामचन्द्र की प्रदक्षिणा करके उनको प्रणाम किया। लक्ष्मण, भरत और गुरु वसिष्ठ को भी प्रणाम किया। फिर उन्होंने रामचन्द्र की आज्ञा लेकर यात्रा की। ११—१८।

सर्ग ६५

सेना को आगे भेजकर एक महीने बाद शत्रुघ्न अकेले चले। मार्ग में दो रात ठहरकर तीसरे दिन वाल्मीकि के पवित्र आश्रम पर पहुँचे। वाल्मीकि को प्रणाम करके हाथ जोड़कर बोले—भगवन्, हम आज की रात यहाँ ठहरना चाहते हैं। महाराज रामचन्द्र की आज्ञा से उनके कार्य के लिए जा रहे हैं। प्रातःकाल पश्चिम दिशा को चले जायँगे। शत्रुघ्न के यह वचन सुनकर महर्षि वाल्मीकि ने हँसकर कहा—तुम्हारा स्वागत है। रघुवंशियों के लिए तो यह उन्हीं का आश्रम है। यह आसन, पाद्य, अर्घ्यादि ग्रहण करो और निःसंकोच यहाँ ठहरो। वाल्मीकि की आज्ञा से शत्रुघ्न ने फल-मूल खाये; उनका सम्मान स्वीकार किया और बहुत सन्तुष्ट हुए। फिर वे वाल्मीकि से बोले—आपके आश्रम के समीप यह यज्ञ का स्थान देख पड़ता है, यहाँ किसने यज्ञ किया है। वाल्मीकि ने कहा—सुनो, जिसने यहाँ

यज्ञ किया था। १–६। तुम्हारे पूर्वज एक राजा सुदास हुए थे, उनके पुत्र का वीरसह नाम था, वह बड़ा बलवान् और धार्मिक था। राजा सुदास एक बार शिकार के लिए वन को गये। वहाँ उन्हें दो राक्षस घूमते हुए दिखाई दिये। बाघ के समान उनके रूप थे, हज़ारों पशुओं को खाकर भी उनको तृप्ति न होती थी। उन राक्षसों ने उस वन के सब मृगों को खा डाला था। सुदास ने उनको देखकर, बड़े क्रोध से एक ही बाण से एक राक्षस को मार डाला। यह देखकर दूसरे राक्षस को बड़ा क्रोध आया। उसने सुदास से कहा—तुमने विना किसी अपराध के हमारे साथी को मार डाला है, इसलिए हे पापिष्ठ, इसका बदला हम लेंगे। यह कहकर वह राक्षस भाग गया। कुछ समय के बाद राजा सुदास ने इस आश्रम के समीप अश्वमेध यज्ञ किया। महर्षि वसिष्ठ उनके आचार्य थे। १०–१८। देव-यज्ञ के समान वह बड़ा यज्ञ बहुत वर्षों में समाप्त हुआ। यज्ञ समाप्त होने पर वह राक्षस पूर्व का वैर स्मरण करके, वसिष्ठ का रूप धारण करके, राजा के पास आकर बोला—राजन्, आपका यज्ञ समाप्त हो गया है, अब हमको सामिष भोजन कराइए। शीघ्रता कीजिए, कुछ विचार करने की आवश्यकता नहीं है। वसिष्ठ रूपी राक्षस का वचन सुनकर राजा सुदास ने चतुर रसोइयों को आज्ञा दी—सामिष स्वादिष्ठ भोजन शीघ्र तैयार करो, जिससे गुरु वसिष्ठ की तृप्ति हो। राजा की यह आज्ञा सुनकर रसोइयाँ चकित हो गया। किन्तु उस राक्षस ने रसोइएँ का रूप धारण कर लिया और शीघ्र ही मनुष्य का मांस पकाकर राजा से बोला—स्वादिष्ठ सामिष भोजन तैयार है। राजा सुदास ने अपनी पत्नी मदयन्ती के साथ गुरु वसिष्ठ को भोजन परोसा। वसिष्ठ को यह मालूम हो गया कि यह मनुष्य का मांस है। तब वे बड़े क्रुद्ध होकर बोले—राजन, तुमने हमको यह मनुष्य का मांस दिया है, इससे यही तुम्हारा भोजन हो, अर्थात् तुम राक्षस हो जाओ। १६–२८। यह सुनकर सुदास को भी बड़ा क्रोध

आया। उन्होंने भी वसिष्ठ को शाप देने के लिए हाथ में जल लिया। यह देखकर मदयन्ती ने उनको यह कहकर समझाया—राजन्, भगवान् वसिष्ठ हम लोगों के गुरु हैं, पुरोहित हैं, देवता के समान पूज्य हैं, आप इनको शाप न दीजिए। तब राजा सुदास ने क्रोध से हाथ में लिये हुए जल को अपने पैरों पर छोड़ लिया। उस जल के छोड़ते ही उनके पैर काले पड़ गये। उसी समय से उनका नाम कल्माषपाद हुआ। फिर राजा और रानी ने बार-बार वसिष्ठ को प्रणाम करके उनसे वह बात कही जो वसिष्ठ-रूपी राक्षस कह गया था। जब वसिष्ठ को यह मालूम हुआ कि यह किसी राक्षस की माया है तब उन्होंने राजा से कहा—क्रोध के वश हमारे मुहँ से जो वचन निकल गये हैं, वह वृथा नहीं हो सकते, किन्तु हम तुमको वरदान देते हैं कि बारह वर्ष के बाद इस शाप का अन्त हो जायगा। और हे राजन्, हमारी प्रसन्नता से यह समय तुमको कुछ भी न मालूम होगा। इस प्रकार राजा सुदास को शाप मिला। और शाप का समय बिताकर वे फिर अपनी प्रजा का पालन करने लगे। हे शत्रुघ्न, इस आश्रम के समीप यह यज्ञस्थल उन्हीं कल्माषपाद का है। राजा कल्माषपाद की यह कथा सुनकर, शत्रुघ्न महर्षि को प्रणाम करके, पर्णशाला में विश्राम करने के लिए गये। २६—३६।

सर्ग ६६

जिस रात में शत्रुघ्न वाल्मीकि के आश्रम पर ठहरे थे, उसी रात में सीता के दो पुत्र उत्पन्न हुए। आधी रात के समय मुनियों के बालकों ने आकर वाल्मीकि से कहा—भगवन्, रामचन्द्र की पत्नी सीता ने दो पुत्र उत्पन्न किये हैं, आप उन बालकों की भूत-विनाशिनी रक्षा कीजिए। यह सुनकर महर्षि वाल्मीकि वहाँ गये और बालचन्द्र के समान प्रकाशित, देव-पुत्र तुल्य तेजस्वी, दो कुमारों को देखकर बड़े प्रसन्न हुए। महर्षि ने कुमारों के लिए भूतविनाशिनी रक्षा कर दी। मूठी

में कुश लेकर, पहले उत्पन्न हुए बालक के ऊपर भूत-विनाशिनी मन्त्र पढ़कर, कुशों के अग्रभाग से जल छिड़का, इससे उसका नाम कुश हुआ। और जो बाद को उत्पन्न हुआ था, उसके ऊपर कुशों के मूल से जल छिड़का, इससे उसका नाम लव हुआ। १–८। इस प्रकार महर्षि वाल्मीकि ने कुश और लव उनके नाम रक्खे और कहा कि इन नामों से इनकी बड़ी ख्याति होगी। फिर मुनि-पत्नियों ने महर्षि के हाथ से रक्षा करने के कुश ले लिये और बालकों की रक्षा करने लगीं। तब महर्षि अपने आश्रम को चले गये। वे वृद्धा स्त्रियाँ रामचन्द्र, सीता और उनके गोत्र का नाम लेकर मंगलाचार करने लगीं। आधीरात को यह प्रिय शब्द सुनकर शत्रुघ्न को बड़ा हर्ष हुआ। वे सीता की पर्णशाला में जाकर उनसे बोले—हे देवि, बड़े भाग्य से पुत्रों का जन्म हुआ। इस प्रकार महात्मा शत्रुघ्न ने श्रावण-पूर्णिमा की वह रात बड़े हर्ष से बिताई। प्रातःकाल शौच-स्नान और नित्य-क्रिया करके, हाथ जोड़कर मुनि से आज्ञा ली और पश्चिम दिशा को प्रस्थान किया। मार्ग में सात रात्रि ठहरकर आठवें दिन, यमुना के तट पर निवास करनेवाले च्यवन आदि मुनियों के आश्रम में पहुँचे। उस दिन मुनियों से बातें करते हुए उन्हीं के आश्रम में ठहरे। मुनियों के साथ अनेक प्रकार की बातें होती रहीं। वह रात भी महात्मा शत्रुघ्न ने बड़े सुख से बिताई। ९–१७।

सर्ग ६७

प्रातःकाल शत्रुघ्न ने च्यवन मुनि से पूछा—हे ब्रह्मन्, लवणासुर के शूल में कितनी शक्ति है और इस शूल से उसने कितने लोगों को मारा है? महातेजस्वी च्यवन ने कहा—हे रघुनन्दन, लवणासुर ने तो असंख्य दुष्कर्म किये हैं। किन्तु उसने इक्ष्वाकु-वंशियों के साथ जो बर्ताव किया है, वह सुनो। पूर्व समय में युवनाश्व के पुत्र,

महाबलवान्, संसार में प्रसिद्ध, मान्धाता अयोध्या के राजा थे। उन्होंने सम्पूर्ण पृथिवी अपने अधिकार में कर ली थी। फिर वे देवलोक जीतने का उद्योग करने लगे। मान्धाता का यह उद्योग देखकर इन्द्र सहित सब देवताओं को बड़ा भय हुआ। यद्यपि इन्द्र ने आधा राज्य उनको दे दिया था, उनको अपने ही आसन पर अपने साथ बिठाते थे, तो भी उनको सन्तोष न हुआ। उन्होंने स्वर्ग का पूरा राज्य अपने अधिकार में करने की प्रतिज्ञा की। १–८। उनका यह अनुचित अभिप्राय इन्द्र समझ गये। उन्होंने राजा को समझाकर कहा—हे नरश्रेष्ठ, अभी तो आप पूरे मृत्युलोक के ही राजा नहीं हुए, फिर सम्पूर्ण पृथिवी को वश में किये विना देवलोक के राज्य की इच्छा क्यों करते हैं? हे वीर, जब सम्पूर्ण पृथिवी आपके अधिकार में हो जाय, तब सेना-वाहन आदि सहित यहाँ आकर सुख से देवलोक का राज्य कीजिए। ९–११। इन्द्र के यह कहने पर मान्धाता ने उत्तर दिया—पृथिवी में कहाँ हमारा शासन नहीं है? तब इन्द्र ने कहा—मधु का पुत्र लवण नाम का राक्षस मधुवन में रहता है। वह आपकी आज्ञा नहीं मानता। यह कठोर और अप्रिय वचन सुनकर राजा बहुत लज्जित हुए। सामने मुँह न कर सके और न कुछ उत्तर दे सके। इन्द्र से बिदा होकर इस लोक को चले आये। इन्द्र की उस बात पर लवणासुर को वश में करने के लिए सेना लेकर चले। लवणासुर के पास एक दूत भेजकर उसे युद्ध के लिए बुलाया। दूत लवणासुर के पास गया। उसके मुँह से अप्रिय वचन सुनकर लवणासुर ने उसे खा लिया। १२–१८। जब दूत बड़ी देर तक न लौटा तो राजा क्रुद्ध होकर बाण चलाने लगे। तब राक्षस ने हँसकर अपना शूल उठाया और उस शूल से सेना-वाहन सहित राजा मान्धाता को मार डाला। हे शत्रुघ्न, राजा मान्धाता सेना सहित इस प्रकार मारे गये। उसके शूल में अतुल शक्ति है। किन्तु हे सौम्य, कल प्रातःकाल जब कि उसके हाथ में शूल न हो, तुम उसे मार सकते हो। निश्चय

तुम्हारी विजय होगी। इस काम के करने से सब लोकों का कल्याण होगा। हे पुरुषश्रेष्ठ, दुरात्मा लवणासुर का और उसके शूल का अपरिमित बल हमने कहा। राजा मान्धाता को तो उसने यत्न से मार डाला था, किन्तु आपकी विजय अवश्य होगी। प्रातःकाल मांस लेने के लिए शूल लिये विना ही वह घर से निकल जाता है। उसी समय तुम उसका घर घेर लो और जब लौटकर आवे तब उसे मार डालो। १६—२६।

सर्ग ६८

महात्मा शत्रुघ्न की विजय चाहते हुए ऋषिगण रात भर इसी प्रकार की बातें करते रहे। शत्रुघ्न को वह रात कुछ मालूम ही न हुई। प्रातः होते ही लवणासुर मांस लेने के लिए नगर से बाहर निकल गया। उसी समय वीर शत्रुघ्न धनुष-बाण लेकर यमुना नदी के उस पार गये और राक्षस के द्वार पर खड़े हो गये। वह राक्षस हज़ारों प्राणियों को मारकर, उनको लादे हुए, दोपहर के समय लौटकर आया। शत्रुघ्न को धनुष-बाण लिये द्वार पर खड़े देखकर बोला—इस धनुष से तुम क्या कर सकते हो? हे नराधम, ऐसे धनुष लिये हुए हज़ारों मनुष्यों को हमने खा लिया है। जान पड़ता है, तुम्हारी मौत तुमको यहाँ लाई है। हे पुरुषाधम, यह जो आहार हम लाये हैं, सो हमारे लिए पर्याप्त नहीं है। तुम अपने आप हमारे मुँह में आकर अब कैसे लौटने पाओगे?। १—७। जब उसने हँसकर बार-बार ऐसे वचन कहे तो क्रोध के मारे शत्रुघ्न की आँखों से आँसू निकल आये और उनके सब अंगों से तेज प्रकट होने लगा। फिर वे बड़े क्रोध से बोले—रे मूर्ख, हम युद्ध करने के लिए आये हैं, हमारे साथ द्वन्द्व युद्ध कर। हम राजा दशरथ के पुत्र और रामचन्द्र के भाई हैं। हमारा नाम शत्रुघ्न है। हम शत्रुओं का नाश करते हैं, तुम्हारा वध करने के लिए आये

हैं। तुम सब प्राणियों के शत्रु हो, आज जीवित नहीं जाने पाओगे। ८—१२। तब राक्षस हँसकर बोला—हे नराधम, तुम आज बड़े भाग्य से मिले हो। रावण हमारा मामा था, जिसे स्त्री के कारण राम ने मार डाला है। रावण के कुल का विनाश तो हमने सह लिया था, किन्तु आज तुम सामने आकर हमारा निरादर करते हो, इसे हम नहीं सह सकते। तुम्हारे पूर्वज मान्धाता आदि को तृण के समान हमने मार डाला है। फिर तुम लोगों को मार डालना तो हमारे लिए कोई बात ही नहीं। हे मूर्ख, तुम युद्ध करना चाहते हो तो हम युद्ध करेंगे। किन्तु एक मुहूर्त भर खड़े रहो, हम भी घर से अपना आयुध लेकर युद्ध के लिए तैयार हो आवें। शत्रुघ्न ने कहा—हमारे सामने आकर अब तुम जीवित कहाँ जा सकते हो? सामने आये हुए शत्रु को न छोड़ना चाहिए; क्योंकि जो मूर्ख शत्रु को अवकाश देता है, वह कायर है और शत्रु के हाथ से मारा जाता है। इसलिए अब तुम इस संसार को अच्छी तरह देख लो। तुम पापी हो, तीनों लोकों के शत्रु हो, हमारे भी शत्रु हो, तुमको अभी पैने बाणों से यमलोक को भेज देंगे। १३—२०।

सर्ग ६९

शत्रुघ्न के ये वचन सुनकर लवणासुर बड़े क्रोध से हाथ मींजकर दाँत कटकटाकर "खड़े रहो, खड़े रहो" कहता हुआ ललकारने लगा। तब शत्रुघ्न ने उस भयानक राक्षस से कहा—तुमने जब इक्ष्वाकुवंशी राजाओं को मारा था, तब शत्रुघ्न का जन्म नहीं हुआ था। अब शत्रुघ्न तेरे सामने खड़े हैं; तू अभी बाणों से निहत होकर यमलोक को जाता है। जैसे रावण का वध देवताओं ने देखा था, वैसे ही विद्वान् ब्राह्मण और ऋषिगण आज तेरा वध देखें। आज हमारे बाणों से तेरी मृत्यु होगी। इस देश और नगर का कल्याण होगा। हमारे हाथ से छूटा

हुआ वज्र-तुल्य बाण तेरी छाती में वैसे ही प्रवेश करेगा, जैसे सूर्य की किरण कमल के ऊपर पड़ती है। १—७। यह सुनकर लवणासुर ने एक बड़ा भारी वृक्ष उखाड़कर शत्रुघ्न के ऊपर चलाया। किन्तु शत्रुघ्न ने उस वृक्ष के सौ टुकड़े कर दिये। उस प्रहार को व्यर्थ देखकर राक्षस ने और बहुत-से वृक्ष चलाये। शत्रुघ्न ने पैने बाणों से सब वृक्षों को काट डाला। राक्षस को भी बहुत-से बाण मारे; किन्तु उन बाणों के प्रहार से वह कुछ भी व्यथित न हुआ। उसने हँसकर शत्रुघ्न के सिर पर एक वृक्ष चलाया। उसके प्रहार से वे मूर्च्छित होकर गिर पड़े। उनके मूर्च्छित होने पर देवताओं, अप्सराओं और गन्धर्वों में हाहाकार मच गया। राक्षस ने समझा कि शत्रुघ्न मर गये। इसलिए वह शूल लेने के लिए अपने घर को भी न गया। जिन जीवों को मारकर लाया था और युद्ध के समय रख दिया था, उनको सावधानी से उठाया और घर को जाने की इच्छा की। ८—१५। इतने में शत्रुघ्न की मूर्च्छा जागी, वे धनुष-बाण लेकर उठ खड़े हुए। उनको द्वार पर खड़े देखकर ऋषियों ने बड़ी प्रशंसा की। शत्रुघ्न ने वह दिव्य अमोघ बाण निकाला, जिसे रामचन्द्र ने दिया था। उसका प्रकाश सब दिशाओं में फैल गया। उसका मुँह वज्र के समान था, वज्र ही के समान उसका वेग था। वह मेरु और मन्दराचल के समान दृढ़ था। युद्ध में कभी निष्फल नहीं हुआ था। रुधिर और चन्दन लगे हुए, दानवों, असुरों और पर्वतों के लिए दारुण, प्रलयकाल की अग्नि के समान प्रज्वलित, उस बाण को देखकर सब प्राणी डर गये, सम्पूर्ण जगत् व्याकुल हो गया। देवता, दैत्य, गन्धर्व, अप्सराएँ और मुनि घबराकर ब्रह्मा के पास गये। सब लोग ब्रह्मा से बोले—देवता भय से पीड़ित हो गये हैं, सब लोकों का विनाश उपस्थित है। १६—२२। ब्रह्मा देवताओं को अभय करते हुए बोले—हे देवताओ, सुनो। लवणासुर को मारने के लिए शत्रुघ्न ने बाण उठाया है, उसी के तेज से तुम लोग घबरा गये हो। यह भगवान् विष्णु का बाण है। उन्होंने

मधु-कैटभ को मारने के लिए इस बाण को बनाया था। इस बाण का प्रभाव भगवान् विष्णु ही जानते हैं। ये शत्रुघ्न भगवान् विष्णु ही का अंश हैं। सब लोग जाओ और लवणासुर का वध देखो। ब्रह्मा के ये वचन सुनकर सब लोग वहाँ आये, जहाँ शत्रुघ्न और लवणासुर का युद्ध होता था। शत्रुघ्न के हाथ में युगान्त की अग्नि के समान उस दिव्य बाण को सब लोगों ने देखा। २३—३०। आये हुए देवताओं से आकाश आच्छादित हो गया। शत्रुघ्न ने सिंह के समान गरजकर राक्षस की ओर देखा, उसे युद्ध के लिए ललकारा। लवणासुर क्रुद्ध होकर युद्ध के लिए आया। महात्मा शत्रुघ्न ने कान तक धनुष की डोरी खींचकर उसकी छाती में बाण मारा। वह बाण लवणासुर की छाती चीरकर रसातल को चला गया। सब देवताओं ने उस बाण की बड़ी प्रशंसा की। वहाँ से लौटकर वह बाण शत्रुघ्न के पास फिर चला आया। लवण राक्षस पृथिवी पर उसी प्रकार गिरा, जैसे वज्र के प्रहार से पर्वत गिरे थे। रुद्र का दिया हुआ त्रिशूल, जो लवणासुर के पास था, उसके मारे जाने पर सब देवताओं के देखते ही देखते रुद्र के पास चला गया। शत्रुघ्न ने एक ही बाण से तीनों लोकों का भय उसी प्रकार दूर कर दिया, जैसे सूर्य अन्धकार को नष्ट कर देते हैं। देवता, ऋषि, अप्सराएँ और नाग सब निर्भय हो गये। "शत्रुघ्न की विजय हुई, यह बड़े भाग्य की बात है" यह कहते हुए वे लोग शत्रुघ्न की प्रशंसा करने लगे। ३१—३६।

सर्ग ७०

लवणासुर के मारे जाने पर इन्द्र और अग्नि आदि देवता शत्रुओं को पीड़ित करनेवाले शत्रुघ्न से मधुर वचन बोले—हे वत्स, बड़े भाग्य से लवणासुर को तुमने मारा और तुम्हारी विजय हुई। हम लोग तुम्हारी विजय चाहते थे। तुम्हारी विजय देखकर हम लोग बड़े प्रसन्न

हुए। हे पुरुषश्रेष्ठ, वरदान माँगो। हम लोगों का दर्शन निष्फल नहीं होता। देवताओं के ये वचन सुनकर वीर शत्रुघ्न हाथ जोड़कर बोले—देव-निर्मित यह मधुपुरी (मथुरा) शीघ्र हमारी राजधानी हो, यही वरदान हम चाहते हैं। देवताओं ने प्रसन्न होकर कहा—बहुत अच्छा, ऐसा ही होगा। इस रमणीय नगरी में वीरों की सेना निवास करेगी। १—६। देवता यह कहकर स्वर्ग को चले गये। शत्रुघ्न ने अपनी सेना को वहाँ आने की आज्ञा दी। उनकी आज्ञा से शीघ्र ही सेना आ पहुँची। श्रावण की पूर्णमासी को उन्होंने मधुपुरी में प्रवेश किया। धीरे-धीरे उस नगरी का विस्तार होने लगा। वीर सैनिकों के रहने से वह प्रदेश निष्कंटक हो गया। बहुत-से गाँव और नगर बस गये। अन्न पैदा होने लगा। आवश्यक समय पर पानी बरसने लगा। मनुष्य नीरोग और वीर हो गये। यमुना के तट पर यह नगरी अर्धचन्द्राकार बसी थी। वहाँ बड़े ऊँचे घर थे, बहुत अच्छी बाज़ारें थीं। चारों वर्णों के मनुष्य निवास करते थे। सब प्रकार का व्यवसाय होता था। लवणासुर ने जो घर बनवाये थे, उनको शत्रुघ्न ने अनेक रंगों से शोभित किया। नगर की शोभा बढ़ गई। सुन्दर बगीचे और विहार-स्थान बनाये गये। धन-धान्य से पूर्ण समृद्ध नगरी को देखकर शत्रुघ्न बड़े प्रसन्न हुए। इस प्रकार मधुपुरी को अपनी राजधानी बनाकर उनकी इच्छा हुई कि अब अयोध्या को चलकर रामचन्द्र के चरणों का दर्शन करें। ७—१७।

सर्ग ७१

बारह वर्ष के बाद शत्रुघ्न कुछ सेवक और थोड़ी सेना लेकर अयोध्या को चले। मन्त्रियों और सेनापतियों की आवश्यकता न समझकर उनको लौटा दिया। एक सौ रथ और कुछ घुड़सवार साथ लेकर चले। सात-आठ दिन की यात्रा करके महर्षि वाल्मीकि के आश्रम

में पहुँचे। शत्रुघ्न को देखकर वाल्मीकि को बड़ा हर्ष हुआ। शत्रुघ्न ने उनको प्रणाम किया और उनका दिया हुआ पाद्य, अर्घ्य और आतिथ्य स्वीकार किया। महर्षि ने मधुर वचनों से शत्रुघ्न को प्रसन्न करते हुए कहा—लवणासुर का वध करके तुमने बड़ा कठिन काम किया है। हे सौम्य, इस राक्षस ने बड़े बलवान् राजाओं को सेना सहित युद्ध में मार डाला था। तुमने उसे अनायास ही मार डाला। तुम्हारे पराक्रम से संसार का भय दूर हुआ। १—८। रावण का वध करने के लिए बड़ा उद्योग करना पड़ा था, किन्तु इस बहुत बड़े काम को बिना किसी उद्योग के ही तुमने कर दिया। इसके मारे जाने से देवताओं को बड़ी प्रसन्नता हुई। सब प्राणियों को हर्ष हुआ। संसार भर का बड़ा प्रिय काम हुआ। जब तुम्हारा और लवणासुर का युद्ध हो रहा था, तब हम देवताओं की सभा में बैठे थे। देवताओं के साथ आकर हमने भी वह युद्ध देखा था। हे शत्रुघ्न, हमको भी उसके वध से बड़ा हर्ष हुआ है। आओ, तुम्हारा सिर सूँघ लें। स्नेह का यही श्रेष्ठ लक्षण है। यह कहकर महर्षि ने शत्रुघ्न का सिर सूँघा। फिर उनका और उनके साथ आये हुए लोगों का आतिथ्य किया। वाल्मीकि मुनि रामचरित की रचना कर चुके थे। शत्रुघ्न जब भोजन कर चुके, तब रामचरित का गान होने लगा। वह मधुर गान वीणा की ध्वनि और लय के साथ हुआ। उसका उच्चारण हृदय, कंठ और तालु इन तीन स्थानों से होता था। वे संस्कृत के वाक्य थे। उनमें काव्य और संगीत के सब लक्षण थे। वे ताल से भी युक्त थे। शत्रुघ्न रामचरित का गान सुनने लगे। उसका प्रत्येक अक्षर सत्य था। जो बातें पहले हुई थीं, उनमें कुछ भी छूटने न पाया था। उसे सुनकर आश्चर्य के मारे शत्रुघ्न की आँखों में आँसू भर आये। वे एक मुहूर्त चकित रहकर बार-बार लम्बी साँस छोड़ने लगे। ९—१७। उन्हें ऐसा मालूम हुआ, मानों बीती हुई सब बातें सामने हैं। उनके साथियों ने भी उस गान को सुनकर बड़े आश्चर्य

से सिर झुका लिया और चकित होकर कहा—बड़े आश्चर्य की बात है। वे आपस में कहने लगे—हम लोग कहाँ हैं, क्या स्वप्न देख रहे हैं? जिन बातों को पहले देखा था, उनको बिलकुल ठीक-ठीक यहाँ सुन रहे हैं। क्या हम लोगों को यह गाना स्वप्न में सुनाई देता है? बड़े विस्मय से उन लोगों ने शत्रुघ्न से कहा—राजन्, आप महर्षि वाल्मीकि से पूछिए, यह किसका बनाया हुआ है। शत्रुघ्न ने कहा—महर्षि से ऐसा पूछना उचित नहीं है। सैनिकों से यह कहकर महर्षि को प्रणाम करके वे विश्राम करने चले गये। १८—२४।

सर्ग ७२

शत्रुघ्न को रात भर नींद नहीं आई। उस मधुर गान के ही विषय में वे आश्चर्य करते रहे। जब रात बीत गई तो प्रातःकाल नित्य-क्रिया करके हाथ जोड़कर वाल्मीकि से बोले—भगवन्, आज्ञा दीजिए हम रामचन्द्र का दर्शन करने के लिए जाना चाहते हैं। वाल्मीकि ने उनको हृदय से लगाकर जाने की आज्ञा दी। रथ तैयार खड़ा था, मुनि को प्रणाम करके रथ पर सवार हुए, और रामचन्द्र को देखने की उत्सुकता से बड़े वेग से अयोध्या को चले। १—६। शीघ्र ही रमणीय अयोध्या नगरी में पहुँचकर महाबाहु महातेजस्वी रामचन्द्र के पास गये। पूर्ण-चन्द्रानन रामचन्द्र मन्त्रियों के साथ वैसे ही शोभित थे, जैसे देवताओं के बीच में बैठे हुए इन्द्र शोभित हों। शत्रुघ्न ने हाथ जोड़कर उनको प्रणाम किया और कहा—महाराज, हमने आपकी आज्ञा का पालन किया। पापी लवणासुर का वध करके मधुपुरी को अपनी राजधानी बनाई। आपसे अलग रहकर हमने बारह वर्ष वहाँ बिताये। अब हम आपके विना वहाँ रहना नहीं चाहते। आप हमारे ऊपर कृपा करें और हमको यहीं रहने की आज्ञा दें। क्योंकि जैसे गाय का बछड़ा अपनी माता से अलग नहीं रह सकता, वैसे ही हम बहुत दिनों तक आपके विना

नहीं रह सकते। ७–१२। रामचन्द्र ने उनको गले से लगाया और कहा—हे वीर, विषाद न करो। क्षत्रियों को खेद न करना चाहिए। विदेश में जाने से क्षत्रिय कभी विषाद नहीं करते। क्योंकि क्षात्रधर्म के अनुसार प्रजा का पालन करना उनका कर्तव्य है, कहीं भी रहें। हे वीर, समय-समय पर हमको देखने के लिए अयोध्या को आया करो। तुम प्राणों से बढ़कर हमको प्रिय हो। राज्य का पालन करना बड़ा आवश्यक काम है, इसलिए तुम सात रात यहाँ रहकर सेवकों और सैनिकों के साथ अपनी मधुरा नगरी को चले जाओ। रामचन्द्र के धर्मयुक्त वचन सुनकर शत्रुघ्न ने दीन वचनों से उनकी आज्ञा स्वीकार की। रामचन्द्र की आज्ञानुसार सात रात्रि अयोध्या में रहकर चलने की तैयारी की। उन्होंने सत्यपराक्रम महात्मा रामचन्द्र को प्रणाम किया। भरत और लक्ष्मण दूर तक पैदल उनके साथ गये। फिर उनको भी प्रणाम करके शत्रुघ्न रथ पर सवार हुए और मधुपुरी को चले। १३–२१।

सर्ग ७३

इस प्रकार शत्रुघ्न को बिदा करके रामचन्द्र, भरत और लक्ष्मण के साथ प्रजा का पालन करने लगे। कुछ दिनों के बाद एक वृद्ध ब्राह्मण अपने पुत्र की लाश लेकर राजद्वार पर आया। बड़े स्नेह और दुःख से रोता हुआ वह ब्राह्मण कहने लगा—हमने पूर्वजन्म में न जाने कौन पाप किया है, जिसके कारण हमको पुत्र की मृत्यु देखनी पड़ी। हमारे यही अकेला पुत्र था, अभी इसकी केवल पाँच वर्ष की आयु थी। हमको दुःख देने के लिए अकाल में इसकी मृत्यु हो गई। १–५। हे पुत्र, तुम्हारे शोक में हम और तुम्हारी माता दोनों थोड़े ही दिनों में मर जायँगे। हम न कभी झूठ बोलें, न कभी किसी को सतावें, मन से भी किसी का अहित न सोचें, फिर भी न जाने किस पाप के कारण हमारा पुत्र पितृकार्य किये विना बाल्यावस्था में ही यमलोक को चला

गया। हमने न कभी ऐसा देखा और न सुना कि अकाल में ही लड़के की मृत्यु हो जाय। रामचन्द्र के राज्य में ही ऐसा देखने में आया है। रामचन्द्र के ही पाप से हमारा पुत्र मर गया है, इसमें कोई सन्देह नहीं। क्योंकि और किसी के राज्य में बालकों की मृत्यु नहीं हुई। इसलिए हे राजन्, इस बालक को जिलाओ। नहीं तो हम स्त्री सहित, अनाथ की तरह, यहीं राजद्वार पर मर जायँगे और तुमको ब्रह्महत्या लगेगी। ६—१२। फिर तुम सुख से राज्य करोगे और अपने भाइयों के साथ बहुत दिनों तक जिओगे! तुम्हारे राज्य में जब ब्राह्मण ऐसा सुख भोगते हैं, तो तुमको भी अवश्य ही सुख मिलेगा! तुम्हारे राज्य में बसने के ही कारण हमारा पुत्र मर गया है। इससे तुम समझ सकते हो कि हम लोगों को तुम्हारे राज्य में क्या सुख है? राम के राजा होने से महात्मा इक्ष्वाकु वंशियों का यह राज्य अनाथ हो गया। अब यहाँ बालकों की ही मृत्यु होने लगी! जब न्यायपूर्वक प्रजा का पालन नहीं होता, तब राजा के ही दोष से प्रजा पीड़ित होती है। राजा के ही दुराचार से प्रजा की अकाल मृत्यु होने लगती है। प्रबन्ध ठीक न होने से ही राज्य में अनुचित काम होने लगते हैं; मृत्यु का भी भय होता है। पुर में अथवा देश में कहीं न कहीं राजा का दोष अवश्य है, यह बिलकुल ठीक है और इसी से यह बालक मरा है। इसी तरह की बहुत बातें कहता हुआ, बार-बार राजा की निन्दा करता हुआ, वह ब्राह्मण बड़े दुःख से अपने पुत्र को हृदय से लगाता और रोता था। १३—१९।

सर्ग ७४

ब्राह्मण का यह करुण-विलाप सुनकर रामचन्द्र को बड़ा दुःख हुआ। उन्होंने अपने मन्त्रियों को, वसिष्ठ, वामदेव, पुर-वासियों और भाइयों को बुलाया। वसिष्ठ के साथ मार्कंडेय, मौद्गल्य, वामदेव,

काश्यप, कात्यायन, जाबालि, गौतम और नारद ये आठ ऋषि राजसभा में आये। देव-तुल्य रामचन्द्र ने ऋषियों को आसन पर बैठाकर हाथ जोड़कर प्रणाम किया। मन्त्रियों और पुर-वासियों के यथोचित आसन पर बैठ जाने के बाद रामचन्द्र ने बड़े दुःख से कहा—एक ब्राह्मण मृत बालक को लिये द्वार पर बैठा है; आप लोग बताइए, इस बालक की अकाल मृत्यु क्यों हो गई? रामचन्द्र के यह दीन वचन सुनकर नारद ने कहा—राजन्, जिस कारण से अकाल में इस बालक की मृत्यु हुई है, सो सुनिए और इस विषय में जो उचित समझिए सो कीजिए। १—८। सत्ययुग में केवल ब्राह्मण को ही तपस्या करने का अधिकार था। ब्राह्मण के सिवा अन्य किसी वर्ण के मनुष्य तप नहीं करते थे। इसी से उस युग में किसी की अकाल मृत्यु नहीं होती थी और सब लोग दीर्घदर्शी होते थे। उसके बाद त्रेतायुग आया, उस युग में ब्राह्मण तपस्या और आत्मबल में शिथिल होने लगे। क्षत्रिय तपस्या करने लगे; तपस्या और आत्मबल से क्षत्रियों का प्रभाव बढ़ा। सत्ययुग में जो क्षत्रिय तपस्या नहीं करते थे, त्रेता में तपस्या करने के कारण, वे ब्राह्मणों के समान हो गये। त्रेतायुग में इन दोनों वर्णों की तपस्या और प्रभाव समान था। मनु आदि ऋषियों ने उस युग में ब्राह्मणों को क्षत्रियों की अपेक्षा अधिक प्रभावशाली न देखकर चारों वर्णों की मर्यादा स्थापित करने के लिए स्मृतियाँ बनाईं। सत्ययुग में धर्म के ही कार्य होते थे। किसी को किसी प्रकार की रुकावट न थी। किन्तु त्रेतायुग में परस्पर मतभेद के कारण कुछ अधर्म भी होने लगा और एक चतुर्थांश अधर्म संसार में फैल गया। ६—१५। अधर्म का कारण यह था कि त्रेतायुग में ब्रह्मज्ञान का अभाव होने लगा और यज्ञ आदि कर्मों की वृद्धि हुई। अधर्म के कारण मनुष्यों में तेज कम हो गया। सत्ययुग में रजोगुणी जीविका मल के समान त्याज्य समझी जाती थी। उस जीविका का नाम कृषि है, वही कृषिरूप

अधर्म एक पाद में पृथ्वी पर फैल गया, अर्थात् सत्ययुग में विना यत्न के जो फल-मूल प्राप्त होते थे, वही मनुष्यों का भोजन था। त्रेता में लोग खेती करके जीविका करने लगे। यही अधर्म एक पाद में पृथिवी पर फैल गया। इसी अधर्म के कारण सत्ययुग की अपेक्षा त्रेतायुग में मनुष्यों की आयु कम होने लगी। कृषिरूप अधर्म के फैलने पर लोग यज्ञ आदि कर्म करने लगे और उसी को सत्य धर्म समझने लगे। त्रेतायुग में ब्राह्मणों और क्षत्रियों को तपस्या करने का अधिकार हुआ, अन्य वर्ण उनकी सेवा करते थे। यह सेवा-धर्म वैश्यों और शूद्रों का था। किन्तु वैश्य खेती भी करते थे और ब्राह्मणों तथा क्षत्रियों की ही सेवा करते थे। तथा शूद्र ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य, तीनों वर्णों की सेवा करते थे। १६—२१। इस प्रकार त्रेतायुग में कृषिरूप अधर्म का एक पाद वैश्यों और शूद्रों ने संसार में फैलाया, तब ब्राह्मणों और क्षत्रियों का प्रभाव घट गया। अधर्म की वृद्धि होती ही रही, उसका दूसरा पाद भी संसार में फैलने लगा और द्वापरयुग की उत्पत्ति हुई। उस द्वापरयुग में अधर्म और कृषि बढ़ती गई और वैश्य भी तपस्या करने लगे। फल यह हुआ कि सत्य, त्रेता और द्वापर इन तीन युगों में ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य ये तीन वर्ण क्रम से तपस्या के अधिकारी होते गये। किन्तु इन तीनों युगों में शूद्रों को तपस्या करने का अधिकार नहीं था। भविष्य में ये लोग घोर तपस्या करेंगे। इनकी तपस्या का समय कलियुग में आवेगा। २२—२७। द्वापर में शूद्र-जाति का तपस्या करना बड़ा अधर्म है, किन्तु एक शूद्र मूर्खता के कारण तुम्हारे राज्य में तपस्या कर रहा है। इसी कारण अकाल में इस ब्राह्मण के बालक की मृत्यु हुई। जिस राजा के राज्य में प्रजा अधर्म और अनुचित काम करती है, वह राजा और प्रजा दोनों नरक में जाते हैं। जो राजा धर्म के अनुसार प्रजा का पालन करता है, वह अपनी प्रजा की तपस्या, पुण्य और अध्ययन का छठा भाग प्राप्त करता है। जो

छठे भाग का अधिकारी है, वह प्रजा का पालन क्यों न करे ? इसलिए महाराज, तुम अपने राज्य में ढूँढ़ो, जिसे अनुचित काम करते देखो, उसका दमन करो। ऐसा करने से तुमको धर्म होगा, मनुष्यों की आयु बढ़ेगी और यह ब्राह्मण का बालक फिर जीवित हो जायगा। २८—३०।

सर्ग ७५

नारद के यह मधुर वचन सुनकर रामचन्द्र बड़े प्रसन्न हुए और लक्ष्मण से बोले—हे सौम्य, तुम जाकर ब्राह्मण को समझाओ और मृत बालक का शरीर सुगन्धित तेल और अन्य सुगन्ध लगाकर, नाव में तेल भर कर रखने और उसकी रक्षा करने की आज्ञा दो जिसमें वह खराब न हो। ऐसे उपाय से उसकी रक्षा करो, जिसमें बालक का शरीर न बिगड़े। लक्ष्मण को यह आज्ञा देकर रामचन्द्र ने पुष्पक विमान का स्मरण किया। रामचन्द्र के मन की बात जानकर सुवर्ण-भूषित पुष्पक विमान एक ही मुहूर्त में उनके पास आया। वह बड़ी नम्रता से बोला—महाराज! मैं आपका सेवक हूँ, आपके वशीभूत हूँ, आपकी इच्छा से हाज़िर हुआ हूँ। १—७। तब रामचन्द्र भरत और लक्ष्मण को राज्य का काम सौंपकर, महर्षियों को प्रणाम करके, विमान पर सवार हुए। अपना धनुष, तूणीर और चमकता हुआ खड्ग लिया। वे इधर-उधर ढूँढ़ते हुए पहले पश्चिम दिशा को गये। वहाँ कोई पाप नहीं दिखाई दिया। फिर वे हिमवान् पर्वत से आच्छादित उत्तर दिशा को गये। वहाँ भी कोई दुष्कर्म दृष्टि न आया। वहाँ से पूर्व दिशा को चले, वहाँ भी सब लोगों के आचरण बहुत शुद्ध थे। किसी प्रकार का पाप न होता था। फिर वे दक्षिण दिशा को गये। वहाँ शैवल पर्वत के उत्तर ओर एक बड़ा तालाब दिखाई पड़ा। उस तालाब के किनारे एक तपस्वी एक वृक्ष में उल्टा लटका था। वह बड़ी कठिन तपस्या कर रहा था। ८—१४। रामचन्द्र

ने उसके पास जाकर पूछा—बताओ तुम कौन हो, किस जाति में तुम्हारा जन्म हुआ है, किसलिए तुम तपस्या कर रहे हो? तुम धन्य हो। क्या तुम स्वर्ग पाने के लिए तपस्या करते हो, अथवा वरदान पाने की इच्छा से अथवा और किसी प्रयोजन से? जिस प्रयोजन से तपस्या करते हो वह हमसे बताओ, हमारी सुनने की इच्छा है। सत्य-सत्य कहो, तुम ब्राह्मण हो या क्षत्रिय अथवा वैश्य हो या शूद्र? हम महाराज दशरथ के पुत्र हैं, हमारा नाम राम है। तुम्हारी कठिन तपस्या देखकर हमको बड़ा आश्चर्य हुआ। रामचन्द्र के यह पूछने पर नीचे को मुँह किये वह तपस्वी अपनी जाति और तपस्या का कारण बताने लगा। १५—१६।

सर्ग ७६

रामचन्द्र के यह पूछने पर वह तपस्वी बोला—हे राम, हमारा जन्म शूद्र वंश में हुआ है। तपस्या इसलिए करते हैं कि हम इसी शरीर से देवलोक को जायँ। हम मिथ्या नहीं कहते। सशरीर देवलोक प्राप्त करने की इच्छा से तप करते हैं। हम शूद्र हैं, नाम शम्बूक है। यह कहते ही रामचन्द्र ने चमकता हुआ खड्ग निकालकर उसका सिर काट डाला। इन्द्र और अग्नि आदि देवता रामचन्द्र की प्रशंसा करने लगे। आकाश से दिव्य सुगंधित फूलों की वर्षा हुई। देवताओं ने प्रसन्न होकर कहा—महाराज, आपने देवताओं का बड़ा कार्य किया। हे सौम्य! जो इच्छा हो वरदान माँगिए। रामचन्द्र ने हाथ जोड़कर इन्द्र से कहा—यदि आप लोग प्रसन्न हैं तो वह ब्राह्मण का पुत्र जीवित हो जाय, यही वरदान हम चाहते हैं। हमारे ही दोष से ब्राह्मण का बालक मर गया है। हमने ब्राह्मण से प्रतिज्ञा की है कि उसके पुत्र को जिला देंगे। आप जीवित करके अपना और हमारा वचन सत्य कीजिए। १—१२। देवताओं ने

प्रसन्न होकर कहा—आप चिन्ता न कीजिए, वह बालक जीवित होकर अपने माता-पिता को मिल गया। जिस समय आपने इस शूद्र को मारा, उसी समय बालक जी उठा। हे राजन्, आपका कल्याण हो। अब हम लोग महर्षि अगस्त्य को देखने जाते हैं। वे बारह वर्ष से जल के भीतर तपस्या कर रहे थे। अब उनकी दीक्षा समाप्त हुई है। आप भी उनको देखने के लिए चलिए। रामचन्द्र ने कहा—बहुत अच्छा। वे सुवर्ण-भूषित पुष्पक विमान पर सवार हुए। देवता भी अपने विमानों पर चढ़कर चले। रामचन्द्र का विमान उनके पीछे चला। १३–२०। सब लोग अगस्त्य के तपोवन में पहुँचे। देवताओं को देखकर धर्मात्मा अगस्त्य ने उनकी पूजा की। सब देवता उनका सम्मान करके, बिदा होकर, देवलोक को चले गये तब रामचन्द्र ने पुष्पक विमान से उतरकर महर्षि अगस्त्य को प्रणाम किया। महर्षि ने उनका अतिथि-सत्कार करके आसन पर बैठाया और कहा—राजन्, आपका स्वागत है। बड़े भाग्य से आपके दर्शन हुए। आप अपने गुणों के कारण सम्मान के योग्य पूजनीय अतिथि हैं और हमारे हृदय में स्थित हैं। देवताओं ने हमसे बताया था कि आपने शूद्र का वध करके ब्राह्मण के पुत्र को जिलाया है; आपका आगमन भी उन्होंने बताया था। आप साक्षात् नारायण हैं। सम्पूर्ण जगत् भी आपमें स्थित है। देवताओं के भी देवता और सनातन पुरुष हैं। आज की रात आप हमारे आश्रम पर ठहरें; प्रातःकाल पुष्पक विमान पर सवार होकर अयोध्या को चले जाइएगा। २१–२६। हे सौम्य, विश्वकर्मा का बनाया हुआ एक दिव्य आभूषण हमारे पास है, हमारा प्रिय करने के लिए इसे आप ग्रहण कीजिए। यह बहुत सुन्दर बना है और अपने तेज से चमक रहा है। यह आभूषण हमको किसी से मिला था। दी हुई वस्तु का दान करना महाफलदायक है। इसलिए आप इसे ग्रहण करें। इस आभूषण को धारण करने के योग्य आप ही

हैं। आप इन्द्र आदि देवताओं का भी कल्याण कर सकते हैं, सब प्रकार के महान् फल दे सकते हैं, इसलिए आपको यह आभूषण हम देते हैं, इसे स्वीकार कीजिए। रामचन्द्र ने कहा—भगवन्, दान लेना ब्राह्मणों का ही काम है, क्षत्रिय को दान नहीं लेना चाहिए। फिर ब्राह्मण का दान लेना तो बड़े निन्दा की बात है। ३०—३५। अगस्त्य ने कहा—सत्ययुग में जब ब्राह्मणों का ही प्राधान्य था, उस समय प्रजाओं का कोई राजा न था। देवताओं के राजा इन्द्र थे। प्रजा एक राजा की इच्छा से ब्रह्मा के पास गईं और उनसे बोली——आपने देवताओं का राजा इन्द्र को बनाया है। हम लोगों को भी एक मनुष्य राजा दीजिए, जिसकी पूजा करके हम लोग निष्पाप हों। हम लोगों ने निश्चय कर लिया है कि विना राजा के पृथिवी पर नहीं रहेंगे। तब ब्रह्मा ने लोकपालों को बुलाकर कहा——तुम लोग अपने तेज का थोड़ा-थोड़ा अंश दो। लोकपालों ने अपने तेज का कुछ अंश दे दिया। तब ब्रह्मा एक बार ज़ोर से हँसे, जिससे राजा क्षुप उत्पन्न हुए। ब्रह्मा ने लोकपालों का वह अंश राजा क्षुप को दे दिया और प्रजाओं से कहा—लो, यही तुम लोगों का राजा है। ३६—४३। क्षुप ने इन्द्र के अंश से पृथिवी का शासन किया। वरुण के अंश से प्रजा का पालन किया। कुबेर के अंश से प्रजा को धन-धान्य दिया। यम के अंश से दंड पाने योग्य प्रजा को दंड दिया। हे रामचन्द्र, राजाओं में सब लोकपालों का अंश है, इसलिए आप हमारा उद्धार करने के लिए इन्द्र के अंश से यह आभूषण ग्रहण कीजिए, आपका कल्याण हो। महात्मा अगस्त्य के यह वचन सुनकर रामचन्द्र ने वह आभूषण ले लिया। वह सूर्य के समान प्रकाशमान था। फिर उन्होंने महर्षि से पूछा—यह बड़ा अद्भुत दिव्य और सुन्दर आभूषण आपको कहाँ से मिला, किसने दिया? यह जानने की हमारी इच्छा है, इसलिए आपसे पूछता हूँ। आप आश्चर्य की बहुत-सी बातें जानते हैं। ४४—५०।

सर्ग ७७

महर्षि अगस्त्य ने कहा—हे राम ! पूर्व समय में, त्रेतायुग में सौ योजन का विस्तृत एक वन था। उस निर्जन वन में पशु और पक्षी भी न थे। एक बार हम घूमते हुए उस वन में पहुँचे। वहीं एक स्थान पर हम तपस्या करने लगे। एक बार वन में घूमने की हमारी इच्छा हुई। उस वन में स्वादिष्ठ फल-मूल बहुत थे। चार कोस का लम्बा-चौड़ा एक तालाब था, उसमें हंस, बत्तख और चक्रवाक आदि जल-पक्षी रहते थे। सब प्रकार के कमल फूले थे। सेवार नहीं दिखाई देती थी। आश्चर्य की बात तो यह थी कि उसका जल बहुत स्वादिष्ठ और निर्मल था। उस तालाब के किनारे एक बड़ा अद्भुत आश्रम बना था। यद्यपि वह बड़ा पुराना और पवित्र था, किन्तु वहाँ कोई रहता न था। ग्रीष्म-ऋतु का समय था, एक रात हम वहाँ रहे। जब प्रातः-काल हुआ, तो उस तालाब में स्नान करने गये। तालाब के निकट हमने देखा कि शरीर से हृष्ट-पुष्ट एक मुर्दा पड़ा है और वह बड़ा स्वच्छ है, उसमें तेज भी है। उसे देखकर एक मुहूर्त तक हम सोचते रहे। फिर हम तालाब में उसको देखने के लिए पैठे। थोड़ी ही देर में एक बड़ा अद्भुत दृश्य दिखाई दिया। १—१०। एक दिव्य विमान पर हज़ारों अप्सराएँ दिव्य वस्त्र-आभूषण पहने बैठी थीं। कोई गाती, कोई बजाती थी। मृदंग, वीणा और पणव आदि बजते थे। कुछ अप्सराएँ नाचती भी थीं। एक पुरुष सिंहासन पर बैठा था। कुछ स्त्रियाँ चन्द्रमा के समान श्वेतवर्ण महामूल्य चँवर लिये उसके पास खड़ी पवन करती थीं। फिर वह स्वर्गवासी पुरुष विमान से उतरा और तालाब के किनारे जो स्थूल शरीर मुर्दा पड़ा था, उसका मांस खाने लगा। उसने इच्छापूर्वक मांस खाकर तालाब में आचमन किया और फिर विमान पर जब चढ़ने को तैयार हुआ, तब हमने उससे पूछा—आप कौन हैं, ऐसा निन्दित भोजन क्यों करते हो ? देव-तुल्य आपका

रूप और यह निन्दित आहार देखकर हमको बड़ा आश्चर्य हुआ। इसलिए हम जानना चाहते हैं कि आप कौन हैं और मुर्दे का मांस क्यों खाते हैं? हम आपको मुर्दे का मांस खाने के योग्य नहीं समझते। ११—२१।

सर्ग ७८

हे रामचन्द्र, हमारे पूछने पर वह स्वर्गीय पुरुष हाथ जोड़कर बोला—हे ब्रह्मन्! हमारे सुख-दुख का हाल, जो पूर्व समय में हुआ है, सुनो। तुम्हारे पूछने पर हम बताते हैं, इसका निरादर न करना। हमारे पिता तीनों लोकों में विख्यात यशस्वी सुदेव विदर्भ देश के राजा थे। उनके दो स्त्रियाँ थीं और दोनों से एक-एक पुत्र उत्पन्न हुए। हमारा नाम श्वेत है और छोटे भाई का सुरथ। पिता का स्वर्गवास होने पर पुरवासियों ने हमको राजा बनाया। एक हज़ार वर्ष तक धर्म के साथ हमने प्रजा का पालन किया। फिर हम कुछ लक्षणों से अपनी मृत्यु समीप जानकर, छोटे भाई सुरथ को राज्य देकर, इस निर्जन और दुर्गम, पशु-पक्षियों से शून्य वन में आकर, इस सरोवर-तट पर तपस्या करने लगे। तीन हज़ार वर्ष हमने तपस्या की। तपस्या के प्रभाव से श्रेष्ठ ब्रह्मलोक हमको प्राप्त हुआ। १—१०। ब्रह्मलोक प्राप्त होने पर भी भूख और प्यास हमको पीड़ित करती रही। भूख-प्यास के मारे हमारी सब इन्द्रियाँ व्याकुल हो गईं। तब हमने पितामह ब्रह्मा से पूछा—भगवन्, यह तो ब्रह्मलोक है, यहाँ तो भूख-प्यास लगती ही नहीं, फिर यह किस कर्म का फल है, जो हमको यहाँ भी भूख-प्यास व्याकुल किये है? हे पितामह! बताइए, हम क्या भोजन करें? तब ब्रह्मा ने कहा—तुम्हारा भोजन तुम्हारा ही स्वादिष्ठ मांस है। उसी को तुम नित्य खाया करो। क्योंकि तपस्या करते समय तुम अपने ही शरीर को पुष्ट करते रहे, किसी को कुछ दान नहीं दिया। विना बीज बोये अंकुर

नहीं निकलता। तुमने दान कुछ भी नहीं दिया, इसी से हे वत्स! स्वर्ग में आने पर भी भूख-प्यास तुमको व्याकुल किये है। अब तुम अपने पुष्ट शरीर का मांस खाओ। क्योंकि तुमने उत्तम भोजनों से अपने शरीर ही को पुष्ट किया था। उसी को अब अमृत के समान भोजन करो। उसी से तुम्हारी भूख मिटेगी। जब महर्षि अगस्त्य उस महावन में आवेंगे तब तुमको इस कष्ट से छुटकारा मिलेगा। हे सौम्य, महर्षि अगस्त्य तो देवताओं का उद्धार कर सकते हैं, फिर तुम्हारा उद्धार करना उनके लिए कौन कठिन बात है। हे भगवन्, भगवान् ब्रह्मा की आज्ञा से हम यह निन्दित भोजन करते हैं। हज़ारों वर्ष अपने शरीर का मांस खाते बीत गये, किन्तु हमारी भूख नहीं मिटी। हे ब्रह्मन्, हमको यह बड़ा दुःख है; आप हमारा उद्धार कीजिए। आपके सिवा और किसी में यह सामर्थ्य नहीं, जो हमको इस कष्ट से छुड़ा सके। हे सौम्य, यह उत्तम आभूषण, सुवर्ण, धन, अनेक प्रकार के वस्त्र और भोजन आप को देते हैं। आप यह सब स्वीकार कीजिए और हमारे ऊपर कृपा कीजिए। इस क्लेश से हमारा उद्धार कीजिए। ११—२५। हे रामचन्द्र, दुःख से कहे हुए उस स्वर्गीय पुरुष के ये वचन सुनकर उसका उद्धार करने के लिए हमने वह आभूषण ले लिया। आभूषण ग्रहण करते ही उसका पूर्व का मनुष्य-शरीर नष्ट हो गया। वह बड़ा प्रसन्न और तृप्त होकर स्वर्गलोक को चला गया। हे रामचन्द्र, इस प्रकार इन्द्र-तुल्य तेजस्वी राजा श्वेत ने अपने उद्धार के लिए यह दिव्य आभूषण हमको दिया था। २६—२९।

सर्ग ७९

महर्षि अगस्त्य के ये अद्भुत वचन सुनकर रामचन्द्र ने बड़े विस्मय से फिर पूछा—भगवन्, जिस दुर्गम वन में विदर्भ के राजा श्वेत ने तप किया था, उस वन में मनुष्य और पशु-पत्ती क्यों नहीं रहते थे? वह राजा

उस वन में तपस्या करने कैसे गया? यह सब सुनने की हमारी इच्छा है। अगस्त्य ने कहा—सत्ययुग में मनु नाम के एक राजा थे, उनके पुत्र इक्ष्वाकु हुए। अपने पुत्र को राज्य देकर मनु उनसे बोले—हे पुत्र, तुम पृथिवी में राजवंश के प्रवर्तक होगे। इक्ष्वाकु ने पिता की आज्ञा स्वीकार कर ली। तब मनु प्रसन्न होकर बोले—हम तुम्हारे ऊपर बड़े प्रसन्न हैं, तुम निस्सन्देह राजवंश के प्रवर्तक होगे। अब तुम प्रजा का पालन करो, किन्तु अकारण किसी को दंड न देना। अपराधी को उचित दंड देने से ही राजा को स्वर्गलोक प्राप्त हो सकता है, अतएव सोच-समझकर दंड देना। उचित दंड देने से ही परम धर्म होगा। १—१०। राजा मनु अपने पुत्र इक्ष्वाकु को यह उपदेश देकर ब्रह्मलोक को चले गये। पिता का स्वर्गवास होने पर इक्ष्वाकु सोचने लगे कि हम किस उपाय से बहुत-से पुत्र उत्पन्न करें। उन्होंने धर्म के बहुत कार्य किये। देव-पुत्रों के समान सौ पुत्र उनके उत्पन्न हुए। हे रघुनन्दन, उनमें सबसे छोटा पुत्र बड़ा मूर्ख था। कुछ पढ़ा भी न था और अपने बड़ों की सेवा भी न करता था। इक्ष्वाकु ने सोचा कि इसको किसी समय दंड अवश्य ही देना पड़ेगा, इसलिए उस अल्प तेजस्वी पुत्र का दंड नाम रक्खा। फिर वे उसे राजा बनाने के लिए किसी भीषण देश की खोज करने लगे। विन्ध्याचल और शैवल पर्वत के बीच में एक बड़ा भयानक स्थान था, वहीं का उसे राजा बनाया। दंड ने उन पर्वतों के बीच में एक बड़ा उत्तम नगर बसाया। उस नगर का नाम मधुमन्त रक्खा। दंड ने शुक्राचार्य को अपना पुरोहित बनाया, और उनकी सहायता से दानवराज बलि के समान वह हृष्ट-पुष्ट मनुष्यों से परिपूर्ण मधुमन्त नगर में राज्य करने लगा। ११—२०।

सर्ग ८०

हे रामचन्द्र, राजा दंड ने बहुत वर्षों तक वहाँ निष्कंटक राज्य

किया। एक बार चैत्र मास के रमणीय समय में वे शुक्र के आश्रम को गये। वहाँ उन्होंने वन में विचरती हुई, अत्यन्त सुन्दरी, शुक्र की कन्या को देखा। उस कन्या को देखते ही वह दुष्ट काम के वश होगया और व्याकुल होकर कन्या के पास जाकर बोला—हे सुन्दरी, तुम कहाँ से आई हो, किसकी कन्या हो? तुमको देखकर हम काम से पीड़ित हो गये हैं, इसी से तुमसे यह पूछते हैं। तब शुक्र की कन्या मोह से उन्मत्त उस कामी राजा से विनम्र वचन बोली—राजन्, हम शुक्राचार्य की बड़ी लड़की हैं, हमारा नाम अरजा है, हम इसी आश्रम पर रहती हैं। कन्या पिता के अधीन होती है, इसलिए हम अपने पिता के वश में हैं। बलपूर्वक हमारा स्पर्श न करना। शुक्र हमारे पिता हैं और तुम उनके शिष्य हो, यदि तुमने उनको कुपित किया तो तुमको बड़ा कष्ट उठाना पड़ेगा। यदि हमको पाने की तुम्हारी इच्छा हो तो तुम धर्म के अनुसार सन्मार्ग पर चलो। तुम हमारे साथ विवाह करने के लिए हमारे पिता से प्रार्थना करो, नहीं तो परिणाम अच्छा न होगा। १—१०। हमारे पिता कुपित होकर तीनों लोकों को भस्म कर सकते हैं, फिर तुम्हारी क्या गिनती है। किन्तु यदि तुम प्रार्थना करोगे, तो वे तुम्हारे साथ हमारा विवाह कर देंगे। दंड काम के वश और मदोन्मत्त था। वह हाथ जोड़कर बोला—हे सुन्दरी, हमारे ऊपर कृपा करो। अब देर न करो। तुम्हारे लिए हमारे प्राण निकले जा रहे हैं। तुमको पाकर फिर चाहे हम मार ही डाले जायँ और चाहे जितना घोर पाप हमें लगे, वह सब हमें स्वीकार है, वह सब सहने के लिए हम तैयार हैं। हमारा मन तुम्हारे ऊपर अनुरक्त है। काम के वेग से हम पीड़ित हो रहे हैं। इसलिए हे भीरु, हमारा मनोरथ पूर्ण करो। यह कहकर उस बलवान् ने बलपूर्वक दोनों हाथों से शुक्र की कन्या को पकड़ लिया। उसे पृथिवी पर गिरा दिया और बलपूर्वक उसके साथ भोग किया। यह अनर्थ

और दारुण काम करके वह अपने नगर को चला आया। अरजा आश्रम के समीप, मारे भय के रोती हुई, देव-तुल्य अपने पिता की प्रतीक्षा करने लगी। ११—१८।

सर्ग ८१

महातेजस्वी शुक्र अरजा का हाल सुनकर शिष्यों के साथ उस स्थान पर आये। अरजा के सब अंगों में धूलि लगी थी। वह प्रातःकाल के समय ग्रहण लगी हुई चन्द्र-ज्योत्स्ना के समान मलिन हो गई थी। भृगु ने उसे देखा, उनको बड़ा क्रोध आया। एक तो क्रोध का कारण था ही, दूसरे उस समय वे भूखे भी थे, इससे और भी अधिक क्रोध हुआ। वे तीनों लोकों को पीड़ित करते हुए शिष्यों से बोले—मूर्ख अत्याचारी दंड के ऊपर, हमारे क्रोध से आई हुई अग्नि की शिखा के समान घोर विपत्ति, तुम लोग अभी देखोगे। उस दुष्ट ने जलती हुई आग की शिखा हाथ से पकड़ ली है। अभी उस दुष्टात्मा का सर्वस्व विनाश होता है। उसने घोर पाप किया है, उसका फल अभी भोगेगा। उसका सपरिवार विनाश होगा। सात दिन के भीतर उसका धन-धान्य, राज्य और वंश नष्ट हो जायगा। इन्द्र धूलि बरसाकर उसके विस्तृत राज्य को भस्म कर देंगे। उसके राज्य में स्थावर-जंगम कोई भी प्राणी जीवित न बचेगा। सात रात्रि तक प्रलय काल के समान धूलि बरसेगी और इस महाउत्पात में, सौ योजन विस्तृत उसके राज्य में, किसी प्राणी का चिह्न भी न रह जायगा। १—१०। भृगु की आँखें क्रोध के मारे लाल हो गई थीं, उन्होंने आश्रम में रहनेवालों से कहा—तुम लोग इसी समय किसी दूसरे देश को चले जाओ। वे लोग झट वहाँ से चल दिये और किसी दूसरे देश में जा बसे। उसके बाद भृगु ने अरजा से कहा—हे दुर्बुद्धे, तुम एकाग्र चित्त से इसी आश्रम पर रहो। यहाँ एक योजन लम्बा चौड़ा सुन्दर तालाब बन जायगा।

तुम उसी के तट पर निवास करती हुई अपने कर्मों का फल भोगो और अपराध मिटने के समय की प्रतीक्षा करो। उन सात दिनों तक जो प्राणी तुम्हारे निकट रहेंगे, उनका उस धूलिवृष्टि से विनाश न होगा। पिता की आज्ञा सुनकर अरजा उनकी आज्ञानुसार दुःखित हो वहीं बैठ गई, शुक्र आश्रम त्यागकर चले गये। उन्होंने जैसा कहा था वैसा ही हुआ। राजा दंड का सम्पूर्ण राज्य, जो विन्ध्याचल और शैवल पर्वत के बीच में था, धन-धान्य और सेना-वाहन सहित भस्म हो गया। हे राम! यह जो वन देखते हो, यहीं राजा दंड का राज्य था। धर्म-प्रधान सत्ययुग में ऐसा अधर्म का आचरण करने से ब्रह्मवादी शुक्र ने राजा दंड की यह दुर्दशा की थी। उसी समय से यह स्थान दंडकारण्य के नाम से प्रसिद्ध है। जब यहाँ तपस्वी रहने लगे, तब से इसका जनस्थान भी नाम पड़ा। हे राम! जो तुमने पूछा था, वह बताया। अब सन्ध्योपासना करने का समय है। वह देखो, महर्षिगण स्नान करके सूर्य की उपासना कर रहे हैं। सूर्य अस्त हो गये हैं, तुम भी जाओ और आचमन करके ब्रह्मवादी ब्राह्मणों के साथ सन्ध्योपासना करो। ११—२२।

सर्ग ८२

महर्षि की आज्ञा पाकर रामचन्द्र अप्सराओं से सेवित उस पवित्र सरोवर-तटपर सन्ध्योपासना करने गये। उन्होंने आचमन करके सन्ध्या की, और फिर अगस्त्य के पास आये। महर्षि अगस्त्य ने उनके भोजन के लिए कन्द-मूल, फल आदि पवित्र पदार्थ दिये। उन सब पदार्थों को बड़े स्वाद के साथ भोजन कर रात को वहीं निवास किया। प्रातःकाल उठकर शौच-स्नान आदि नित्य-क्रिया करके बिदा होने के लिए मुनि के पास गये और उनको प्रणाम करके बोले—हे तपोधन! आज्ञा दीजिए, अब मैं अपने नगर को जाऊँ। आपका दर्शन पाकर मैं अनुगृहीत हुआ।

मैं धन्य हूँ। आपका दर्शन करने के लिए, और अपनी आत्मा पवित्र करने के लिए, कभी-कभी आया करूँगा। तपोधन अगस्त्य बड़े प्रेम से बोले—हे राम, आपके वचन बड़े अद्भुत और पवित्र हैं। आप सब प्राणियों को पवित्र करते हैं। क्षणभर भी जो कोई आपके दर्शन करता है, वह पवित्र हो जाता है और स्वर्ग में देवताओं से पूजित होता है। १—१०। और जो कोई क्रूर दृष्टि से आपको देखता है, वह शीघ्र ही यमदंड से नष्ट होकर नरक को जाता है। हे राम, इस प्रकार सब प्राणियों को आप पवित्र करनेवाले हैं। जो आपका नाम जपेंगे, उनको सब सिद्धियाँ प्राप्त होंगी। अब आप सुख से अपने नगर को जाइए। आपका मार्ग निर्भय और निष्कंटक हो। आप संसार की परम गति हैं। अपने राज्य में जाकर धर्म से प्रजा का पालन कीजिए। रामचन्द्र ने हाथ जोड़कर सत्यशील अगस्त्य मुनि को प्रणाम किया। आश्रम पर रहनेवाले अन्य ऋषियों को भी प्रणाम करके पुष्पक विमान पर सवार हुए। चलते समय सब ऋषियों ने उनको आशीर्वाद दिया, जैसे देवता इन्द्र को आशीर्वाद दें। पुष्पक विमान आकाश को उड़ा और बादलों के समीप जा पहुँचा। वर्षाकाल में चन्द्रमा के समान आकाश में दिखाई दिया। मार्ग में अनेक स्थानों पर रामचन्द्र का सम्मान किया गया। वे दोपहर के समय अयोध्या में पहुँचे और राजभवन के बीच के फाटक पर विमान उतरा। विमान से उतरकर रामचन्द्र ने यथेच्छगामी पुष्पक से कहा—अब तुम जाओ, तुम्हारा कल्याण हो। फिर उन्होंने द्वारपाल को आज्ञा दी कि भरत और लक्ष्मण से हमारा आगमन बताओ और उनको यहाँ बुला लाओ। ११—२०।

सर्ग ८३

रामचन्द्र की आज्ञा से द्वारपाल दोनों राजकुमारों को बुला लाया और रामचन्द्र से बोला—राजन्, लक्ष्मण और भरत आये हैं। रामचन्द्र

ने दोनों भाइयों को हृदय से लगाया और कहा—ब्राह्मण का कार्य तो सिद्ध हो गया। अब एक और धर्म-कार्य हमें करना है। हम चाहते हैं कि राजसूय यज्ञ करें। यह काम धर्म का सेतु है। सब पापों का नाशक और अक्षय फल देनेवाला है। इसका नाम लेने से भी धर्म होता है। तुम हमारी आत्मा के समान हो। तुम्हारी सहायता से यह श्रेष्ठ यज्ञ हम कर सकते हैं। इससे सनातन धर्म की प्राप्ति होगी। इस यज्ञ के करने से मित्र को वरुण का पद मिला है। चन्द्रमा को भी इसी यज्ञ के प्रभाव से बड़ी कीर्ति प्राप्त हुई है। आज इस विषय में हमारे साथ परामर्श करो। उचित और हित की बात बताओ। रामचन्द्र के ये वचन सुनकर भरत हाथ जोड़कर बोले—आप परम धर्मात्मा और यशस्वी हैं, सम्पूर्ण पृथिवी आपके अधीन है।१—१०। पृथिवी भर के राजा आपका उसी प्रकार सम्मान करते हैं, जैसे देवता ब्रह्मा का और जैसे हम लोग आपसे प्रेम करते हैं, वैसे ही संसार भर के राजा आपको अपना सुहृद् समझते हैं और अपने पिता के समान मानते हैं। आप पृथिवी भर के प्राणियों की गति हैं। जिस यज्ञ के द्वारा संसार भर के,राजवंश का उच्छेद हो, ऐसा यज्ञ करने की आपने कैसे इच्छा की ? राजन्, संसार में जितने बलवान् राजा हैं, इस यज्ञ के करने से आपके क्रोध द्वारा उन सबका विनाश होगा। आपके गुणों से वे लोग आपके अधीन हैं। उनका विनाश करना आपको उचित नहीं है। भरत के ये वचन सुनकर रामचन्द्र प्रसन्न होकर बोले—भरत, यह तुमने धर्म-युक्त बात कही। क्षत्रिय-वंश की रक्षा के लिए तुमने ऐसा कहा है,कायरता से नहीं, तुम्हारी बातों से हम बड़े सन्तुष्ट हुए। अब राजसूय यज्ञ करने का विचार हमने छोड़ दिया, क्योंकि बुद्धिमान् पुरुष संसार को पीड़ित करनेवाला काम नहीं करते, और उचित बात चाहे बालकों की ही कही हो, मान लेते हैं। ११—२०।

सर्ग ८४

इस प्रकार भरत के कह चुकने पर लक्ष्मण बोले—हे रघुनन्दन, महायज्ञ अश्वमेध सब पापों का नाशक और पावन है, आप वही यज्ञ कीजिए। सुना जाता है कि देवराज इन्द्र अश्वमेध ही यज्ञ करने से ब्रह्महत्या के पाप से छूटे थे। पहले देवताओं और असुरों में शत्रुता न थी, उसी समय वृत्र नाम का एक असुर हुआ। वह बड़ा वीर, धर्मज्ञ, कृतज्ञ और बुद्धिमान् था, सबसे प्रेम करता था। प्रेम से ही उसने तीनों लोकों को वश में कर लिया था। सबको स्नेह की दृष्टि से देखता था। उस समय पृथिवी धन-धान्य से पूर्ण थी, और वह धर्म के अनुसार पृथिवी भर का शासन करता था। उसके राज्य-काल में पृथिवी सबको वांछित पदार्थ देती थी। कन्द-मूल-फल सुरस और सुस्वादु थे। विना जोते ही पृथिवी में सब अन्न पैदा होते थे। बहुत दिनों तक उसने ऐसा ही राज्य किया, फिर उसने तप करने की इच्छा की। उसने सोचा कि तपस्या से ही कल्याण हो सकता है, सुख तो मोह में फँसाने के लिए हैं। १—६। उसके ज्येष्ठ पुत्र का नाम मधुरेश्वर था। उसी को राज्य का भार सौंपकर वह तपस्या करने चला गया। उसकी तपस्या देखकर सब देवता डर गये। तब देवराज इन्द्र बड़े भय से विष्णु के पास गये और उनसे बोले—हे विष्णु, वृत्रासुर ने तपस्या के बल से सब लोकों को अपने वश में कर लिया है। वह बड़ा बलवान् और धर्मात्मा है। इसलिए हम उसे जीत नहीं सकते। यदि उसकी तपस्या सिद्ध हो गई, तो अवश्य ही तीनों लोकों को वश में कर लेगा। अब उसकी उपेक्षा करना उचित नहीं है। आपके क्रुद्ध होने पर वह एक क्षण भी जीवित नहीं रह सकता। आपकी प्रसन्नता से ही उसने सब लोकों पर अधिकार कर लिया है। अब आप सब लोकों पर कृपा कीजिए, आप ही की कृपा से संसार में शान्ति हो सकती है और सबका क्लेश दूर हो सकता है। ये सब देवता आप ही के भरोसे हैं। आप इनकी

सहायता कीजिए। आप सदा से इनकी सहायता करते आये हैं, दूसरा कोई इस काम को नहीं कर सकता। संसार में जिनको कहीं शरण नहीं मिलती, उनकी शरण आप ही हैं। १०–१८।

सर्ग ८५

लक्ष्मण के ये वचन सुनकर रामचन्द्र ने कहा कि वृत्रासुर के वध का पूरा वृत्तान्त कहो। तब लक्ष्मण फिर कहने लगे——इन्द्र के यह कहने पर विष्णु ने उत्तर दिया कि वृत्रासुर से हमारी मित्रता है, तुम लोगों का प्रिय करने के लिए हम उसका वध नहीं कर सकते। किन्तु तुम लोगों का हित करना भी हमारा कर्तव्य है। हम एक उपाय बतावेंगे, जिससे इन्द्र उसका वध कर देंगे। हम अपने तेज को तीन भागों में बाँटते हैं, उसमें एक भाग तो इन्द्र में, दूसरा इन्द्र के वज्र में और तीसरा पृथिवी में प्रवेश करेगा। इस उपाय से इन्द्र वृत्रासुर का वध कर सकेंगे। देवताओं ने कहा——अच्छी बात है, जैसा आप कहते हैं, वैसा ही कीजिए। हम लोग वृत्रासुर से युद्ध करने जाते हैं, आप अपना तेज इन्द्र के शरीर में प्रवेश कर दीजिए। विष्णु से यह कहकर इन्द्र आदि सब देवता उस वन में गये, जहाँ वृत्रासुर तप करता था। १–१०। देवताओं ने देखा कि वह तेजोमय हो गया है। वह अपने प्रभाव से तीनों लोकों को मानों खा लेगा और आकाश को भस्म कर देगा। उसे देखकर देवता डर गये। वे सोचने लगे कि हम कैसे इसका वध करेंगे और कैसे हमें विजय मिलेगी। उसी समय सहस्राक्ष इन्द्र ने वृत्रासुर के सिर पर वज्र का प्रहार किया। उनका वज्र प्रलय काल की अग्नि के समान प्रदीप्त और भयानक था। उसके प्रहार से वृत्रासुर का सिर कट गया। उसके मरते ही संसार को बड़ा भय हुआ। इन्द्र भी सोचने लगे कि हमने विना अपराध इसका वध किया है। वे बहुत डर गये और ब्रह्महत्या के भय से वहाँ से भागे। ब्रह्महत्या का

पाप उनके पीछे दौड़ा और झट उनकी देह में समा गया। तब इन्द्र को बड़ा दुःख हुआ। ११–१६। सब देवता त्रिभुवन के स्वामी विष्णु की पूजा करने और कहने लगे—हे भगवन्, आप ही हम लोगों की गति हैं, संसार के पिता हैं, और सब प्राणियों की रक्षा के ही लिए आपने विष्णु-मूर्ति धारण की है। वृत्रासुर का वध तो आपने ही अपने तेज से किया है, और ब्रह्महत्या इन्द्र को लगी। अब किसी उपाय से उनको इस पाप से छुड़ाइए। तब विष्णु ने कहा—इन्द्र हमको प्रसन्न करने के लिए यज्ञ करें। तब हम उनको पवित्र कर देंगे। अश्वमेध यज्ञ करके जब हमको प्रसन्न करेंगे तब उनको फिर इन्द्रत्व प्राप्त होगा, उनका पाप छूट जायगा, और सब भय दूर हो जायगा। देवताओं के स्तुति करने पर विष्णु भगवान् यह अमृत-तुल्य वाणी कहकर अपने स्थान को चले गये। १७–२२।

सर्ग ८६

महाबलवान् वृत्र को मारने पर इन्द्र को ब्रह्महत्या लगी। उस पाप से वे बड़े पीड़ित हुए और ताड़ित साँप की तरह छटपटाने लगे। तीनों लोक बड़ी विपत्ति में पड़ गये। सब लोग भयभीत और उद्विग्न हो गये। पानी न बरसने से वन सूख गये। नदी, नद, तालाब आदि सब जलाशय सूख गये। सब लोक नष्ट होने लगे। यह देखकर देवता घबराये और विष्णु की आज्ञानुसार अश्वमेध यज्ञ की तैयारी करने लगे। बृहस्पति और ऋषियों के साथ सब देवता उस स्थान पर गये, जहाँ इन्द्र डर के मारे मूर्च्छित पड़े थे। ब्रह्महत्या का पाप शान्त करने के लिए सब देवता इन्द्र के साथ यज्ञ करने लगे। यज्ञ समाप्त होने पर ब्रह्महत्या स्वयं आकर बोली—हे देवताओ, हमारे रहने का स्थान कहाँ बताते हो? १–१०। देवताओं ने प्रसन्न होकर कहा—तुम चार भागों में विभक्त हो जाओ। ब्रह्महत्या ने वैसा ही किया और देवताओं से फिर कहा—मैं पापियों की दर्प-नाशिनी होकर एक अंश से वर्षा के चार

महीने नदियों में रहूँगी। दूसरे अंश से ऊसर में सदैव निवास करूँगी, यह मैं बिलकुल सत्य कहती हूँ। तीसरे अंश से युवती स्त्रियों में प्रतिमास तीन दिन रहूँगी और चौथे अंश से उन दुष्टों में निवास करूँगी जो मिथ्या दोष लगाकर ब्राह्मणों का वध करेंगे। तब देवताओं ने कहा—बहुत अच्छा, जैसा कहती हो, वैसा ही करो। हम लोगों का अभीष्ट सिद्ध करो। उसके बाद इन्द्र पवित्र हो गये, देवताओं ने उनको प्रणाम किया। उनका सब क्लेश जाता रहा। जब इन्द्र अपने स्थान पर प्रतिष्ठित हुए, तब सम्पूर्ण जगत् शान्त हो गया। हे रामचन्द्र, इस प्रकार इन्द्र ने अश्वमेध यज्ञ किया और उसके प्रभाव से वे निष्पाप हुए। अश्वमेध यज्ञ का ऐसा प्रभाव है, आप भी वही यज्ञ कीजिए। लक्ष्मण के ये वचन सुनकर इन्द्र-तुल्य पराक्रमी महात्मा रामचन्द्र बड़े प्रसन्न हुए। ११—२१।

सर्ग ८७

तब रामचन्द्र ने हँसकर कहा—लक्ष्मण, तुमने वृत्रासुर का वध और अश्वमेध यज्ञ की जो कथा कही, वह बिलकुल सत्य है। सुना जाता है कि बाह्लीक देश के राजा इल प्राचीन समय में हुए थे। वे बड़े धर्मात्मा थे और प्रजापति कर्दम के पुत्र थे। यशस्वी इल ने सम्पूर्ण पृथिवी अपने अधीन कर ली और पुत्र के समान प्रजा का पालन किया। देवता, दैत्य, नाग, राक्षस और गन्धर्व सब उनसे डरते थे; सदा उनकी पूजा किया करते थे। उनके कुपित होने पर तीनों लोकों के प्राणी भयभीत हो जाते थे। बड़े धार्मिक, बलवान् और बुद्धिमान् भी थे। एक बार वे चैत्र के महीने में सेना लेकर किसी रमणीय वन में शिकार खेलने गये। वहाँ उन्होंने हज़ारों जीवों का वध किया, किन्तु उनको सन्तोष न हुआ। फिर वे उस वन में पहुँचे, जहाँ कार्त्तिकेय का जन्म हुआ था। १—१०। उस वन में भगवान्

शंकर पार्वती के साथ क्रीड़ा करते थे ; उनके गण भी थे। पार्वती का प्रिय करने के लिए, स्त्री का रूप धारण करके, वे उनके साथ एक पर्वत पर विहार करते थे। शिव के प्रभाव से उस वन के सब वृक्ष और पशु-पक्षी आदि भी, जो पुरुषवाचक थे, वे भी स्त्री-रूप हो गये थे। वहाँ जो कुछ था, सब स्त्री-रूप हो गया था। उसी समय इल महाराज शिकार खेलते हुए उस वन में पहुँचे। उन्होंने देखा कि यहाँ जितने जीव हैं, सब स्त्री ही रूप देख पड़ते हैं। फिर उन्होंने अपने को भी स्त्री-रूप में देखा, सैनिक भी स्त्री-रूप हो गये, तब राजा को बड़ा दुःख हुआ। जब उन्हें यह मालूम हुआ कि भगवान् शंकर के प्रभाव से यह सब हुआ है, तब वे और भी डरे। डर के मारे शिव की शरण में गये। तब शंकर हँसकर बोले—हे राजर्षि! उठो, पुरुषत्व के सिवा और क्या चाहते हो? जो इच्छा हो वह वर माँगो। भगवान् शंकर के यह कहने पर भी शोक से पीड़ित राजा इल ने और कोई वरदान न माँगा। वे शोक से व्याकुल होकर देवी पार्वती के पास गये और अन्तःकरण से प्रणाम करके बोले—हे देवि, तुम सब लोकों की ईश्वरी हो। तुम्हारा दर्शन निष्फल नहीं होता। हमारे ऊपर कृपादृष्टि करो। राजा इल का अभिप्राय समझकर शिव के पास बैठी हुई पार्वती बोलीं—राजन्, हम आधा वरदान तुमको दे सकती हैं और आधा देवदेव महादेव दे सकते हैं। इसलिए स्त्रीत्व और पुरुषत्व के विषय में जो चाहो आधा हमसे माँग लो। यह अद्भुत वचन सुनकर राजा इल बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने कहा—हे देवि, यदि तुम हमारे ऊपर प्रसन्न हो तो हमको यह वरदान दो कि हम एक मास स्त्री रहें और एक मास पुरुष। पार्वती ने कहा—राजन्, ऐसा ही होगा। तुम जब पुरुष-रूप रहोगे, तब तुमको स्त्री-भाव का स्मरण न रहेगा और जब स्त्री-रूप रहोगे तब पहले का पुरुष-भाव तुम्हें स्मरण न रहेगा। हे लक्ष्मण, पार्वती के वरदान से महाराज इल एक महीने

पुरुष-रूप रहते थे और दूसरे महीने में त्रैलोक्य सुन्दरी स्त्री हो जाते थे। जब पुरुष रहते थे तो इल नाम रहता था और जब स्त्री हो जाते थे तो इला नाम होता था। ११—२६।

सर्ग ८८

भरत और लक्ष्मण राजा इल की यह अद्भुत कथा सुनकर बड़े विस्मित हुए। वे हाथ जोड़कर रामचन्द्र से बोले—राजा इल क्रम से स्त्री और पुरुष का रूप धारण करके कैसी दुर्गति भोगते रहे ? विस्तार के साथ कहिए, इसको सुनने की हमें बड़ी उत्सुकता है। रामचन्द्र ने कहा—जो कुछ हुआ था वह सुनो—राजा इल प्रथम मास में अपने अनुचरों के साथ परमसुन्दरी स्त्री होकर उस वन में विहार करने लगे। अपने वाहन छोड़ दिये ; वृक्ष, गुल्म और लताओं से आच्छादित उस वन में पर्वत के ऊपर पैदल विचरने लगे। १—७। पर्वत के समीप ही एक सुन्दर तालाब था, जिसमें अनेक प्रकार के जल-पक्षी शोभित थे। वहाँ चन्द्रमा के पुत्र बुध तपस्या कर रहे थे। उनका रूप बहुत ही सुन्दर था, पूर्ण चन्द्रमा के समान उनका तेज था। इला ने उन्हें देखा। उनका रूप देखकर उनको बड़ा आश्चर्य हुआ और सहचरी स्त्रियों के साथ क्रीड़ा करने के लिए सरोवर में प्रवेश किया। उस सर्वांग-सुन्दरी स्त्री को देखकर बुध का ध्यान भंग हुआ, वे सोचने लगे कि यह देवता से भी बढ़कर सुन्दरी स्त्री कौन है ? देवी, नागी, असुरी, अथवा अप्सरा किसी को भी ऐसी रूपवती हमने नहीं देखा। ८—१४। यदि इसका विवाह किसी के साथ न हुआ हो, तो यह स्त्री सर्वथा हमारे योग्य है। यह सोचकर बुध जल के बाहर आये। सरोवर के तट पर उनका आश्रम था। उन्होंने आश्रम में जाकर उन स्त्रियों को बुलाया। स्त्रियों ने आकर उनको प्रणाम किया। तब बुध ने उनसे पूछा—यह लोक-सुन्दरी स्त्री किसकी है और किसलिए

यहाँ आई है ? इसका हाल शीघ्र हमसे बताओ। स्त्रियाँ मधुर वचन बोलीं—यह हम लोगों की स्वामिनी हैं, इनके पति नहीं है, हम लोगों के साथ इस वन में विचरती हैं। स्त्रियों के ये वचन सुनकर बुध ने पवित्र आवर्तनी-विद्या का स्मरण किया। योग-बल से राजा इल का सम्पूर्ण हाल भी जान लिया। तब उनसे बोले—तुम लोग किन्नरी होकर इस पर्वत पर रहो। रहने के लिए पर्णशाला बना लो, फल-मूल खाओ। तुम लोगों को किन्नर पति शीघ्र ही मिल जायँगे। बुध ने योग-बल से उन सबको किन्नरी बना दिया और वे उस पर्वत पर रहने लगीं। १५—२४।

सर्ग ८९

यह कथा सुनकर भरत और लक्ष्मण को बड़ा आश्चर्य हुआ। रामचन्द्र फिर कहने लगे—जब सब स्त्रियाँ पर्वत के ऊपर चली गईं तो बुध हँसकर इला से बोले—हे सुन्दरी ! हम चन्द्रमा के पुत्र हैं, हमारा नाम बुध है। तुम हमको अपना पति बनाओ और हमसे प्रेम करो। इला की सहचरी चली गई थीं, एकान्त में बुध के ये वचन सुनकर वह बोली—हे सौम्य, हम स्वाधीन हैं; आप ही की सेवा करेंगी। जो आपकी आज्ञा हो, सो करें। इला के ये वचन सुनकर बुध को बड़ा हर्ष हुआ। वे उसके साथ विहार करने लगे। चैत्र का महीना इला के साथ विहार करते-करते एक क्षण के समान बीत गया। १—८। जिस दिन महीना बीता, उसी दिन इला का स्त्रीत्व जाता रहा। पूर्ण चन्द्रमा के समान, प्रजापति कर्दम के पुत्र इल, जाग कर शय्या पर उठ बैठे। उन्होंने देखा कि उस स्थान पर, जल के भीतर, ऊपर को हाथ उठाये, एक तपस्वी निरालम्ब कठोर तप कर रहे हैं। इल उनसे बोले—भगवन्, हम अपनी सेना के साथ इस वन में आये थे, मालूम नहीं हमारे सैनिक कहाँ चले गये! शाप के कारण राजा इल

पहले का सब हाल भूल गये थे। बुध ने कहा—राजन्, तुम्हारे अनुचर ओले बरसने के कारण मर गये हैं। बड़े वेग से वायु चल रही थी, उसके भय से तुम हमारे आश्रम में सो गये थे। अब कोई घबराने की बात नहीं है, किसी बात का भय न करो। तुम्हारा कल्याण हो, फल-मूल खाओ और इसी आश्रम पर सुख से रहो। अनुचरों का विनाश सुनकर राजा इल को बड़ा दुःख हुआ। उन्होंने कहा—भगवन्, अनुचरों के नष्ट होने से हम अपना राज्य नहीं छोड़ेंगे। हम एक क्षण भी यहाँ रहना नहीं चाहते, हमको जाने की आज्ञा दीजिए। यदि हम नहीं जायँगे, तो हमारा ज्येष्ठ पुत्र धर्मज्ञ यशस्वी शशबिन्दु राजा बन बैठेगा। स्त्री-पुत्र को त्यागकर हम यहाँ नहीं रह सकते। आप ऐसे अशुभ वचन न कहिए। राजा इल के यह कहने पर बुध उनको समझाने लगे—राजन्, तुम कुछ दिन इसी आश्रम पर रहो। शोक न करो। एक वर्ष यहीं निवास करो। हम तुम्हारे हित का कोई उपाय करेंगे। ६—२०। ब्रह्मवादी बुध के अनुरोध से राजा इल वहाँ रहने लगे। वे पार्वती के वरदान के प्रभाव से एक महीना स्त्री होकर विहार करते थे और एक महीना पुरुष होकर धर्म-कार्य करते थे। नवें महीने उन्होंने एक पुत्र उत्पन्न किया। उस पुत्र का नाम पुरूरवा हुआ। पिता के समान उसका रूप था। उत्पन्न होते ही इल ने उसे बुध को सौंप दिया। इस तरह क्रमशः एक मास स्त्री और एक मास पुरुष होकर सुख-भोग और धर्म की बातें करते हुए एक वर्ष बीत गया। २१—२५।

सर्ग ९०

लक्ष्मण और भरत पुत्र के अद्भुत जन्म की कथा सुनकर बोले—इला ने एक वर्ष तक बुध के साथ रहकर फिर क्या किया था? रामचन्द्र ने कहा—एक वर्ष के बाद राजा जब फिर पुरुष हुए तब बुध ने संवर्त,

च्यवन, अरिष्टनेमि, प्रमोदन और दुर्वासा आदि ऋषियों को बुलाया और बड़े धैर्य के साथ उनसे कहा—आप लोग इनको जानते होंगे, ये कर्दम के पुत्र महाराज इल हैं। इनका जो हाल हुआ है, उसे भी आप लोग जानते ही हैं। अब इनका कल्याण कैसे हो, वह उपाय आप लोग बताइए। मुनियों में इस प्रकार की बातें हो रही थीं, उसी समय महातेजस्वी कर्दम वहाँ आये। उनके साथ पुलस्त्य, क्रतु, वषट्कार और ओंकार भी थे। परस्पर समागम होने से सब ऋषियों को बड़ा हर्ष हुआ। राजा इल के कल्याण के लिए सब लोग अपनी-अपनी सम्मति देने लगे। १—१०। कर्दम ने कहा—हे विप्रो, जिस उपाय से इनका कल्याण हो सकता है, वह हम बताते हैं, सुनो—भगवान् शंकर को प्रसन्न करने के सिवा इनके कल्याण का और कोई उपाय नहीं है। उनको अश्वमेध यज्ञ बहुत प्रिय है, इसलिए हम लोग इनके निमित्त भगवान् शंकर को प्रसन्न करने के लिए अश्वमेध यज्ञ करें। कर्दम के ये वचन सुनकर सब ऋषियों की यही सम्मति हुई। संवर्त के शिष्य राजर्षि मरुत्त ने बुध के आश्रम के समीप अश्वमेध यज्ञ किया था। वे यज्ञ की बहुत-सी सामग्री छोड़ गये थे, उसे लेकर विधिपूर्वक अश्वमेध यज्ञ किया गया। ११—१६। यज्ञ समाप्त होने पर महादेव प्रसन्न होकर ब्राह्मणों से बोले—हे विप्रगण, तुम लोगों की भक्ति से और अश्वमेध यज्ञ करने से हम बहुत सन्तुष्ट हुए। अब बताओ, राजा इल का क्या प्रिय करें। तब ऋषियों ने कहा—यदि आप प्रसन्न हैं, तो इल को सदा के लिए पुरुषत्व प्रदान करें। भगवान् शंकर इल को सदा के लिए पुरुषत्व देकर अन्तर्धान हो गये। उसके बाद सब ऋषि अपने अपने स्थान को चले गये। राजा इल ने बाह्लीक देश को छोड़कर मध्यदेश में प्रतिष्ठान नामक एक नगर बसाया। राजा इल प्रतिष्ठान पुर में और उनका ज्येष्ठ पुत्र शशबिन्दु बाह्लीक देश में राज्य करने लगा। बहुत दिनों के बाद उनकी मृत्यु हुई और वे ब्रह्मलोक को गये

उनका पुत्र पुरूरवा प्रतिष्ठान नगर का राजा हुआ। हे लक्ष्मण और भरत ! अश्वमेध यज्ञ का ऐसा प्रभाव है। इसी यज्ञ के प्रभाव से इल को पुरुषत्व प्राप्त हुआ था। १७—२५।

सर्ग ९१

उसके बाद महातेजस्वी रामचन्द्र अपने भाइयों से बोले—अब तुम वसिष्ठ, वामदेव, जाबालि और कश्यप आदि, अश्वमेध यज्ञ कराने में चतुर ब्राह्मणों को बुलाओ। उनकी सम्मति से अश्वमेध यज्ञ करने का निश्चय करके सब लक्षणों से युक्त अश्व छोड़ें। रामचन्द्र की आज्ञा से लक्ष्मण उन सब ब्राह्मणों को बुला लाये। रामचन्द्र ने उनको प्रणाम किया और ब्राह्मणों ने आशीर्वाद दिया। फिर रामचन्द्र ने हाथ जोड़कर कहा—हम अश्वमेध यज्ञ करना चाहते हैं। विप्रगण भगवान् शंकर को प्रणाम करके अश्वमेध यज्ञ की प्रशंसा करने लगे। ब्राह्मणों के मुँह से अश्वमेध यज्ञ की प्रशंसा सुनकर रामचन्द्र बड़े प्रसन्न हुए। १—८। जब रामचन्द्र ने देखा कि इस विषय में सब ब्राह्मणों की सम्मति है, तो उन्होंने लक्ष्मण से कहा—हे लक्ष्मण, महात्मा सुग्रीव के पास दूत भेजो। वे बहुसंख्यक वानरों को लेकर अश्वमेध यज्ञ का महोत्सव देखने के लिए आवें। अतुल पराक्रमी विभीषण भी इच्छानुसार चलनेवाले राक्षसों के साथ यज्ञ देखने आवें। उन राजाओं को भी निमन्त्रण दिया जाय जो हमारा हित चाहते हैं। वे भी अपने-अपने अनुचरों के साथ यज्ञ देखने के लिए आवें। देश-देशान्तर के धार्मिक ब्राह्मणों को भी बुलाओ। स्त्रियों के साथ वे लोग यज्ञ में आवें। नट, नर्तक और गाने-बजानेवालों को भी बुलाओ। गोमती नदी के किनारे नैमिषारण्य में यज्ञभूमि बनवाओ। वह बड़ा पवित्र स्थान है, सैकड़ों धर्मज्ञ पुरुषों ने वहाँ यज्ञ किये हैं। सर्वत्र शान्ति-कर्म कराओ। सबको निमन्त्रित करो। सब लोग आवें और सबका यथोचित

सम्मान किया जाय और सन्तुष्ट होकर लौटें। ६—१८। एक लाख बैल-गाड़ियों पर चावल, तिल, मूँग, चना, कुलथी, उड़द और नमक भेजो। उसी हिसाब से घी, तेल और सुगन्धित पदार्थ भी भेजो। भरत सावधानी से एक करोड़ सुवर्ण लेकर आगे चलें। उनके पीछे सब दूकानदार और बाज़ारें भेजी जायँ। नाचने-गानेवाले और रसोई बनानेवाली स्त्रियाँ भी चलें। सेना सबसे आगे भेजी जाय। बालक, वृद्ध, ब्राह्मण और बनियें सब लोग चलें। काम-काज करनेवाले सेवक और कोषाध्यक्ष भी चलें। सब माताएँ और तुम लोगों की स्त्रियाँ भी यज्ञ देखने के लिए चलें। यज्ञ की दीक्षा के लिए सीता की सुवर्ण की मूर्ति बनवाकर ले चलो। राजाओं और उनके अनुचरों के ठहरने के लिए स्थान बनाये जायँ। रामचन्द्र की आज्ञा से भरत और शत्रुघ्न यज्ञ की सब सामग्री लेकर चले। सुग्रीव आदि वानर भी निमन्त्रण पाकर आ गये। विभीषण भी राक्षसों और राक्षसियों के साथ आये और ऋषियों का आदर-सत्कार करने लगे। १९—२६।

सर्ग ९२

यज्ञ की सब सामग्री भेजने की आज्ञा देकर रामचन्द्र ने सब लक्षणों से युक्त कृष्णसार अश्व छोड़ा। कुछ ऋत्विक घोड़े के साथ चले, और उसकी रक्षा के लिए लक्ष्मण गये। रामचन्द्र अश्व छोड़कर सेना के साथ नैमिष को गये। परम अद्‌भुत यज्ञभूमि देखकर उनको बड़ा हर्ष हुआ और उन्होंने उसकी बड़ी प्रशंसा की। अनेक देशों के राजा आकर उनको भेंट देने लगे। भरत और शत्रुघ्न आये हुए राजाओं का आदर-सत्कार करते थे। भोजन और वस्त्र आदि आवश्यक चीज़ें उनको पहुँचाते थे। सुग्रीव आदि सब वानर ब्राह्मणों के लिए भोजन आदि पहुँचाते थे। राक्षसों के साथ विभीषण ऋषियों की सेवा करते थे। आये हुए राजाओं और उनके अनुचरों को ठहरने के लिए अच्छे-अच्छे स्थान

दिये गये। इस प्रकार अश्वमेध यज्ञ का आरम्भ हुआ। यज्ञ का अश्व महाबली लक्ष्मण की रक्षा में देश में घूमने लगा। यज्ञभूमि में केवल यही शब्द सुनाई देता था कि जब तक याचक सन्तुष्ट न हो जायँ तब तक बराबर देते रहो। १—११। याचकों के मुँह से निकलते ही वानर और राक्षस अनेक प्रकार के भोजन और खाण्डवरस देते थे। रामचन्द्र के यज्ञ में दीन, मलीन और दुर्बल कोई न रह गया था। सब लोग हृष्ट-पुष्ट हो गये। दीर्घायु महात्मा मुनियों ने, जिन्होंने बहुत-से यज्ञ देखे थे, वे कहते थे कि इतनी दान-दक्षिणा के साथ किसी ने यज्ञ नहीं किया। ऐसा यज्ञ हमने आज तक नहीं देखा। जो सुवर्ण चाहता था वह सुवर्ण पाता था; जो धन चाहता था उसे धन मिलता था; जो रत्न चाहता था उसे रत्न मिलते थे। यज्ञभूमि में निरन्तर दान करने के लिए पर्वत के समान धन, रत्न और वस्त्र के ढेर देख पड़ते थे। तपस्वी लोग कहते थे कि हमने इन्द्र, चन्द्रमा, यम और वरुण किसी के यहाँ ऐसा यज्ञ नहीं देखा। वानर और राक्षस हाथों में अन्न-वस्त्र लिए दान करने के लिए खड़े रहते थे। याचक के मुँह से निकलते ही उसकी इच्छानुसार अन्न-वस्त्र देते थे। इस प्रकार एक वर्ष से कुछ अधिक समय तक महाराज रामचन्द्र का यज्ञ होता रहा। किसी दिन किसी क्षण भी याचकों को दान देना बन्द न हुआ। १२—२०।

सर्ग ९३

उस परम अद्भुत यज्ञ में भगवान् वाल्मीकि भी अपने शिष्यों के साथ आये। यज्ञ देखकर, जहाँ ऋषिगण ठहरे थे, वहीं एकान्त में शिष्यों के साथ पर्णशाला में उन्होंने निवास किया। अन्न और फल-मूल से लदी हुई बहुत-सी बैल-गाड़ियाँ उनकी कुटी के सामने लगी थीं। उन्होंने अपने शिष्य कुश और लव से कहा—तुम दोनों भाई ऋषियों के स्थानों में, राजमार्ग में, आये हुए राजाओं के निवास-स्थान में,

राजद्वार पर और जहाँ ऋत्विजगण ठहरे हैं उन लोगों के समीप, रामायण-काव्य गाओ। इस पर्णशाला के पास, पर्वतों पर उत्पन्न सुस्वादु जो फल-मूल ढेर हैं, उनको खाकर रामायण का गान करो। इन फल-मूलों के खाने से तुम थकोगे नहीं और तुम्हारा स्वर भी क्षीण न होगा। यदि ऋषियों के बीच में बैठे हुए रामचन्द्र तुमको गाने के लिए बुलावें तो वहाँ भी जाकर तुम रामायण का गान करो। १—६। हमने जैसा तुमको बताया है, उसी तरह प्रतिदिन बीस श्लोक गाओ। धन का लोभ किंचिन्मात्र भी न करना। जो लोग फल-मूल खाते हैं, पर्णकुटी में रहते हैं, उनको धन से क्या प्रयोजन? यदि रामचन्द्र तुमसे पूछें कि तुम किसके पुत्र हो, तो उत्तर देना कि हम वाल्मीकि के शिष्य हैं। यह मधुर वीणा लो और अच्छे ताल-स्वर से मधुर वाणी से गाओ। राजा धर्म के अनुसार सबका पिता है, इसलिए राजा का अनादर न करना, और आदि काण्ड से गान आरम्भ करना। कल प्रातःकाल बड़ी सावधानी से वीणा की लय के साथ मधुर गान आरम्भ करना। परम उदार महामुनि वाल्मीकि कुश और लव को यह आज्ञा देकर चुप हो गये। दोनों भाइयों ने बड़े आदर से उनकी आज्ञा स्वीकार की। रात को अपनी कुटी में बड़े सुख से सोये, जैसे अश्विनी-कुमार महर्षि च्यवन के आश्रम पर रहते थे। १०—१८।

सर्ग ९४

प्रातःकाल कुश और लव ने स्नान करके होम किया और महर्षि वाल्मीकि की आज्ञानुसार रामायण का गान आरम्भ किया। रामचन्द्र दोनों बालकों के मुँह से वीणा की लय के साथ ताल-स्वर सहित अपूर्व चरित्र-गान और शब्दों का स्पष्ट उच्चारण सुनकर बड़े विस्मित हुए। जब यज्ञ का कार्य हो गया और विराम का समय आया, तो रामचन्द्र की आज्ञा से ऋषि, राजा, वेदपाठी ब्राह्मण, पण्डित, पौराणिक

वृद्ध ब्राह्मण, स्वर के जाननेवाले, संगीत-शास्त्र में निपुण, छन्द-शास्त्र के विद्वान्, पुर-वासी, ताल आदि जाननेवाले, ज्योतिषी, कल्पसूत्र जाननेवाले, यज्ञ का कार्य करनेवाले, तर्क-शास्त्र के विद्वान्, चित्र-काव्य करनेवाले और व्याकरण-शास्त्र के विद्वान् बुलाये गये। जब वे लोग सभा में बैठे तब रामचन्द्र ने कुश और लव को बुलाया। गाना सुनने के लिए श्रोताओं में कोलाहल मच गया। कुश और लव गाने लगे। १—१०। बड़ा ही मधुर और अलौकिक गान था। श्रोताओं की सुनने की इच्छा बढ़ती गई। गाना सुनने से किसी को तृप्ति न हुई। राजा और मुनिगण प्रसन्न होकर दोनों बालकों को बार-बार देखने लगे। जान पड़ता था, वे दृष्टि द्वारा उन बालकों को पी लेंगे। सब लोग परस्पर कहने लगे कि इन मुनिकुमारों का स्वरूप रामचन्द्र से मिलता है। मानों इन्हीं के रूप के प्रतिबिम्ब हैं। यदि जटा-वल्कल न धारण किये होते, तो रामचन्द्र से बिलकुल भेद न जान पड़ता। मुनि-बालकों ने आदिकाण्ड के प्रथम सर्ग नारद की उक्ति से लेकर बीस सर्ग तक गाया। उस समय दिन का तीसरा पहर हो गया था। रामचन्द्र ने लक्ष्मण से कहा—इन बालकों को अठारह हज़ार सुवर्ण-मुद्राएँ और इसके सिवा जो कुछ ये चाहें, इनको दो। लक्ष्मण ने रामचन्द्र की आज्ञा से प्रत्येक बालक को उतना सुवर्ण दिया। किन्तु कुश और लव ने उसे स्वीकार न किया और हँसकर कहा—धन लेकर हम क्या करेंगे? हम वन में रहते हैं, फल-मूल खाते हैं। धन से हमें क्या प्रयोजन है? ११—२०। बालकों का यह उत्तर सुनकर चारों भाइयों को बड़ा आश्चर्य हुआ। फिर रामचन्द्र को उस काव्य के रचयिता को जानने की बड़ी उत्सुकता हुई। वे मुनि-बालकों से बोले—यह काव्य कितना बड़ा है, किसने बनाया है और इसके बनानेवाले महर्षि कहाँ रहते हैं? मुनि-बालकों ने उत्तर दिया—राजन्, भगवान् वाल्मीकि ने इस काव्य की रचना की है, इसमें

चौबिस हज़ार श्लोक और एक सौ उपाख्यान हैं। आदि से अन्त तक पाँच सौ सर्ग और छः काण्ड हैं। इनके सिवा उत्तरकाण्ड भी है। हमारे गुरु महर्षि वाल्मीकि ने इस काव्य में आप ही के चरित्र का वर्णन किया है। आपके जीवनकाल में जो कुछ हुआ है, वह सब इसमें वर्णित है। यदि आप यह काव्य सुनना चाहते हों, तो यज्ञ कार्य से अवकाश मिलने पर अपने भाइयों के साथ सावधान होकर थोड़ी देर सुना कीजिए। रामचन्द्र ने कहा—बहुत अच्छा, मुनि-बालक बड़े हर्ष से महर्षि वाल्मीकि के पास चले गये। रामचन्द्र मुनियों और राजाओं के साथ मधुर गान सुनकर बड़ी प्रसन्नता से यज्ञशाला को गये। २१—३१।

सर्ग ९५

रामचन्द्र इसी प्रकार बहुत दिनों तक मुनियों और राजाओं के साथ कुश-लव के मुँह से रामायण का मधुर गान सुनते रहे। जब छः काण्ड समाप्त हो गए तो बालकों ने उत्तरकाण्ड गाया और रामचन्द्र को यह भी मालूम हो गया कि ये दोनों बालक सीता के पुत्र हैं। तब दो दूतों को बुलाकर उन्होंने कहा कि तुम भगवान् वाल्मीकि के पास जाकर हमारी ओर से कहो, यदि सीता के चरित्र शुद्ध हों, यदि उनमें किसी तरह का पाप न हो, तो महर्षि वाल्मीकि की आज्ञा से यहाँ आकर सब लोगों के सामने अपने सदाचार का विश्वास दिलावें। हमारा यह सन्देश उनसे कहकर, इस विषय में महर्षि वाल्मीकि का अभिप्राय, और सीता अपने सदाचार का विश्वास दिलाना चाहती हैं या नहीं, यह उनके मन की बात जानकर, शीघ्र लौटकर हमसे बताओ। यदि सीता की इच्छा हो तो कल प्रातःकाल यहाँ आकर अपने चरित्र के विषय में, और हमारा कलंक दूर करने के लिए, सभा के बीच में शपथ करें। रामचन्द्र की यह आज्ञा पाकर दूत महातेजस्वी महात्मा महर्षि वाल्मीकि के पास गये और प्रणाम करके रामचन्द्र का सन्देश कहा। महर्षि ने दूत के मुँह से रामचन्द्र

का अभिप्राय समझकर कहा—रामचन्द्र जैसा चाहते हैं, वैसा ही होगा। स्त्रियों का पति ही देवता है, इसलिए जैसा कहते हैं, सीता वैसा ही करेंगी। १–१०। दूतों ने रामचन्द्र के पास आकर वाल्मीकि का उत्तर सुनाया। रामचन्द्र ने बड़े हर्ष से ऋषियों और राजाओं से कहा—शिष्यों के साथ ऋषिगण, अनुचरों के साथ राजा लोग, कल प्रातःकाल सीता का शपथ अथवा और भी जो कुछ आवश्यक समझें, वह सब प्रत्यक्ष देख लें। रामचन्द्र के ये वचन सुनकर ऋषियों ने उनकी प्रशंसा की। राजा लोग भी बड़ी प्रशंसा करके कहने लगे—राजन्, ऐसा काम संसार में केवल आप ही ने किया है। राजसभा में यह निश्चय हुआ कि कल प्रातःकाल सीता शपथ करेंगी। उसके बाद रामचन्द्र ने सब राजाओं और मुनियों को जाने की आज्ञा दी। ११–१७।

सर्ग ९६

रात बीत गई, प्रातःकाल रामचन्द्र ने राज सभा में जाकर सब ऋषियों को बुलाया। वसिष्ठ, वामदेव, जाबालि, काश्यप, विश्वामित्र, दीर्घतमा, महातपस्वी दुर्वासा, पुलस्त्य, शक्ति, भार्गव, वामन, मार्कण्डेय, मौद्गल्य, गर्ग, च्यवन, धर्मज्ञ शतानन्द, तेजस्वी भरद्वाज, अग्नि के पुत्र सुप्रभ, नारद, पर्वत और गौतम आदि ऋषि बड़े आश्चर्य से सभा में आये। महाबली राक्षस, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, और देश-देशान्तर के ब्राह्मण भी आये। सब लोग यह अद्भुत शपथ देखने के लिए पर्वत के समान निश्चल बैठे हुए समय की प्रतीक्षा करते थे। १–८। उसी समय महर्षि वाल्मीकि सीता को साथ लिये सभा में आये। सीता की आँखों से आँसू बहते थे। उनके मन में रामचन्द्र का ही ध्यान था। वे हाथ जोड़े, सिर झुकाये महर्षि के पीछे-पीछे आईं। ब्रह्मा की अनुगामिनी श्रुति के समान महर्षि के पीछे सीता को देखकर दर्शकों ने प्रशंसा की। सभा में उपस्थित लोगों का मन शोक और दुःख से व्याकुल हो रहा था।



वाल्मीकि मुनि दो बालकों की ओर संकेत करके रामचन्द्र से बोले—
हे रघुनन्दन, ये दो जुड़वाँ पुत्र सीता के गर्भ से उत्पन्न हुए हैं।
मैं सत्य कहता हूँ, ये आप ही के पुत्र हैं।

इसलिए कोलाहल मच गया। कोई रामचन्द्र की, कोई सीता की और कोई दोनों की प्रशंसा करता था। महर्षि वाल्मीकि सीता को लेकर सभा में आये और रामचन्द्र से बोले—राजन्, यह तुम्हारी पतिव्रता धर्मचारिणी सीता हैं। तुमने लोकापवाद के भय से हमारे आश्रम के समीप इनको त्याग दिया है। अब इनको आज्ञा दो, ये तुमको अपने सदाचार के विषय में विश्वास दिलावें। ६–१६। ये दोनों जुड़वे पुत्र कुश और लव सीता के गर्भ से उत्पन्न हुए हैं। हम सत्य कहते हैं, ये तुम्हारे पुत्र हैं। देखो, हम ब्रह्मा के दसवें पुत्र हैं, हमने कभी झूठ नहीं कहा। हमारी बात का विश्वास करो, ये पुत्र तुम्हारे ही वीर्य से उत्पन्न हैं। हमने हज़ारों वर्ष तपस्या की है, यदि सीता के चरित्र में रत्ती भर भी दोष हो, तो हमारी तपस्या का फल हमें न मिले। हमने कभी मन-वचन और कर्म से कोई पाप नहीं किया है। यदि सीता निष्पाप न हों, तो मन-वचन-कर्म से न किये हुए पाप का फल हमें मिले। सीता का मन और इनकी पाँचों कर्म-इन्द्रियाँ शुद्ध जानकर हम वन से इनको अपने आश्रम पर लाये थे। यह पतिव्रता, निष्पाप और सदाचारिणी हैं, तो भी लोकापवाद से डरे हुए तुमको अपने आचरण का विश्वास दिलाएँगी। हमने दिव्यदृष्टि से भी जान लिया है कि सीता के आचरण बिलकुल शुद्ध हैं, तुम भी इनको शुद्ध समझते हो, किन्तु लोकापवाद के भय से तुमने इनको त्याग दिया था। १७–२३।

सर्ग ९७

रामचन्द्र ने सीता की ओर देखकर वाल्मीकि से हाथ जोड़कर कहा—भगवन्, आपके वचनों से यद्यपि हमें सीता के सदाचार का विश्वास हो गया, किन्तु जैसा आपने कहा है, वैसा ही हो। लंका में देवताओं के सामने सीता की परीक्षा हो चुकी है, इन्होंने शपथ

किया था, इसी लिए हम इनको यहाँ ले आये थे। किन्तु लोकापवाद बड़ा प्रबल होता है, उसी के कारण इनको त्याग देना पड़ा। हमने इनको निष्पाप जानकर भी लोकापवाद के भय से इनको त्याग दिया है। हे भगवन्, हमारा यह अपराध आप क्षमा करें। ये यमज, कुश और लव हमारे पुत्र हैं यह भी हम जानते हैं। अब शुद्ध-चारिणी सीता में हमारा पूर्ववत् प्रेम हो। सीता के शपथ के विषय में रामचन्द्र का अभिप्राय जानकर लोकपितामह ब्रह्मा और सब देवता भी वहाँ आये। आदित्य, वसु, रुद्र, विश्वेदेव, मरुद्गण, साध्यगण तथा नाग, गरुड़ और सिद्धगण भी आये। १—८। उनकी ओर देखकर रामचन्द्र फिर बोले—महर्षि वाल्मीकि के कहने से सीता के चरित्र पर हमको विश्वास है। सीता संसार में सर्वश्रेष्ठ शुद्धचारिणी हैं। अब इनके ऊपर हमको पूर्ववत् प्रेम है। उस समय सुगन्धित और शीतल वायु चलने लगी। उस वायु के स्पर्श से सभा में उपस्थित लोगों को बड़ा आनन्द हुआ। त्रेतायुग में भी सत्ययुग के समान सुख-स्पर्श वायु का अनुभव करते हुए उस अद्भुत विषय को सब लोग देखने लगे। उसी समय रँगे वस्त्र पहने नीचे को मुँह किये सीता हाथ जोड़कर बोलीं—यदि हमने रामचन्द्र के सिवा अन्य किसी को मन में भी स्थान न दिया हो तो उस पुण्य के प्रभाव से पृथिवी फट जाय और हम उसमें प्रवेश करें। यदि हमने मन, वचन, कर्म से रामचन्द्र का सम्मान किया हो, तो उस पुण्य के प्रभाव से देवी पृथिवी विदीर्ण हो जायँ और हम उसमें प्रवेश करें। हम रामचन्द्र के सिवा और किसी को नहीं जानतीं। यदि हमारा यह वचन सत्य हो, तो देवी पृथिवी विदीर्ण हो जायँ और हम उसमें प्रवेश करें। ९—१६। सीता ने जब इस प्रकार के शब्द कहे, तो उसी समय एक बड़ा अद्भुत दृश्य हुआ। सहसा पृथिवी से एक दिव्य सिंहासन निकल आया। वह दिव्य रत्नों से शोभित था। उसे बड़े बलवान् नाग सिर पर लिये थे। सिंहासन अनेक प्रकार से सुसज्जित था। उस पर

देवी पृथिवी बैठी थीं, उन्होंने दोनों हाथों से सीता को उठाकर उसी सिंहासन पर बैठा लिया और सिंहासन रसातल को चला गया। देवता सीता की प्रशंसा करके उनके ऊपर फूल बरसाने लगे। यज्ञभूमि में उपस्थित मुनियों और राजाओं को बड़ा विस्मय हुआ। पृथिवी पर, आकाश में, स्थावर-जंगम सब प्राणियों में, महाकाय दानवों और पातालवासी नागों में कोई प्रसन्न होकर कोलाहल करने लगा, कोई यह अद्भुत काम देखकर बड़ी चिन्ता में पड़ गया और कोई मूढ़-सा होकर कभी राम को और कभी सीता को देखने लगा। सारांश यह कि सीता का पृथिवी में प्रवेश देखकर एक मुहूर्त के लिए सम्पूर्ण जगत् मोहित हो गया। १७—२६।

सर्ग ९८

इस प्रकार जब सीता रसातल में प्रवेश कर गईं तो सब वानर और मुनि लोग रामचन्द्र की प्रशंसा करने लगे। रामचन्द्र को बड़ा दुःख हुआ। यज्ञ की दीक्षा में जो दंडकाष्ठ धारण किया था, उसी का आधार लेकर बड़ी व्याकुलता से सिर झुकाकर रोने लगे। बड़ी देर तक रोने के बाद बड़े शोक और क्रोध से बोले—साक्षात् लक्ष्मी के समान सीता हमारे ही सामने नष्ट हो गईं। इसलिए जो दुःख हमें इस समय हुआ है, ऐसा कभी नहीं हुआ था। जब रावण सीता को हर ले गया था, तब हम लंका से उनको ले आये थे, फिर पृथिवी के नीचे से उनको ले आना कौन बड़ी बात है। हे पृथिवी, हमारी सीता को लौटा दो। यदि हमारा अनादर करोगी, तो हम तुम्हारे ऊपर क्रोध करेंगे। तुम हमारी सास हो; राजर्षि जनक ने जब हल खींचा था, तो तुम्हीं से सीता उत्पन्न हुई थीं। अब चाहे सीता को लौटा दो अथवा फिर विदीर्ण हो जाओ और हमको भी वहीं ले चलो। सीता चाहे पाताल में हों अथवा स्वर्गलोक में, हम उन्हीं के साथ रहेंगे। तुम

उनको शीघ्र लाओ, हम उनके लिए व्याकुल हो रहे हैं। वे जैसी थीं, ठीक वैसी ही यदि तुम उनको रसातल से लाकर न दोगी तो हम पर्वत और वन सहित तुमको पीड़ित करेंगे। पृथिवी का नाश कर देंगे और सब जलमय हो जायगा ।१—१०। लोकपितामह ब्रह्मा शोक और क्रोध से व्याकुल रामचन्द्र से बोले—हे राम, शोक न करो, पूर्व-वृत्तान्त का स्मरण करो। हम यह तुमको स्मरण नहीं कराते, किन्तु तुम विष्णु का अवतार हो, यह अपने आप स्मरण करो। सीता साध्वी, सच्चरित्रा और पतिव्रता हैं। तुम्हारे आश्रयरूप तपोबल से नागलोक को गई हैं। स्वर्ग में तुम फिर उनसे मिलोगे। इस सभा के सामने हम जो कहते हैं, वह सुनो—इस सर्वश्रेष्ठ काव्य रामायण में विस्तार के साथ तुम्हारे चरित्र का वर्णन है। तुम्हारे जन्म से लेकर जो कुछ सुख-दुःख तुमको हुआ है वह, और सीता के पृथिवी में प्रवेश करने तक सम्पूर्ण चरित्र महर्षि वाल्मीकि ने इसमें लिखा है। यह आदिकाव्य है। हे राम, तुममें सम्पूर्ण गुण हैं। तुम्हारे सिवा और किसका यश इस काव्य में वर्णन करने के योग्य हो सकता था ? यह काव्य देवताओं के साथ हम पहले ही सुन चुके हैं। यह बड़ा अद्भुत काव्य है, इसकी कथा बिलकुल सत्य है, प्रलाप कुछ भी नहीं है। अब तुम मन को एकाग्र करके इसका अवशिष्ट भाग सुनो, इस अवशिष्ट भाग का नाम उत्तरकाण्ड है, उसे तुम ऋषियों के साथ सुनो ।११—२०। तुम श्रेष्ठ राजर्षि हो, इस काव्य के श्रवण करने योग्य तुम्हीं हो। त्रिभुवनपति ब्रह्मा यह कहकर देवताओं के साथ देवलोक को चले गये। सभा में उपस्थित ऋषिगण, जो ब्रह्मलोक से आये थे और ब्रह्मा के साथ चलने लगे थे, वे उत्तरकाण्ड सुनने के लिए ब्रह्मा की आज्ञा से फिर लौट आये। तब रामचन्द्र ब्रह्मा के ये वचन सुनकर महर्षि वाल्मीकि से बोले—भगवन्, ये ऋषिगण हमारे भविष्य की कथा सुनने के लिए उत्सुक हैं, अतएव कल से उस कथा का आरम्भ हो।

फिर रामचन्द्र ने सब लोगों को बिदा किया और कुश-लव को साथ लेकर वाल्मीकि की पर्णशाला में गये। वह रात सीता के शोक में बीती। २१—२८।

सर्ग ९९

प्रातःकाल रामचन्द्र ने सब मुनियों को बुलाया और अपने पुत्रों से कहा—अब तुम निःशंक होकर उत्तरकाण्ड का आरम्भ करो। महात्मा ऋषिगण अपने-अपने आसन पर बैठ गये और कुश-लव ने उत्तरकाण्ड का गान किया। सीता अपने तपोबल से रसातल को चली गईं और रामचन्द्र यज्ञ समाप्त करके बड़े दुखी हुए। सीता के विरह में उनको संसार शून्य देख पड़ने लगा। उनका शोक बढ़ता ही गया, किसी तरह मन शान्त न हुआ। उन्होंने यज्ञ में आये हुए राजाओं, वानरों, राक्षसों और अन्य सब लोगों को बड़े सम्मान के साथ धन-रत्न आदि देकर बिदा किया और अयोध्या को चले आये। सीता का शोक किसी समय उनके हृदय से न जाता था। सीता का त्याग करने के बाद उन्होंने दूसरा विवाह न किया था। प्रत्येक यज्ञ में दीक्षा लेने के समय सुवर्ण की सीता बनाई जाती थीं। दस हज़ार वर्ष तक क्रम से यज्ञ करते रहे। वाजपेय, अग्निष्टोम, अतिरात्र और गोसव आदि यज्ञ बड़ी दान-दक्षिणा के साथ किया। इस प्रकार धर्म और राज्य का पालन करते हुए बहुत समय बीत गया। १—१०। राक्षस, वानर और रीछ उनके आज्ञाकारी थे। देश-देशान्तर के राजा भी उनके अधीन थे। उनके राज्यकाल में मेघ आवश्यकता के समय पानी बरसाते थे। अन्न का कष्ट किसी को न था। सब दिशाएँ निर्मल थीं, नगर और गाँव के सब लोग हृष्ट-पुष्ट थे। किसी को कोई रोग न होता था। किसी की अकाल-मृत्यु न होती थी। बहुत वर्षों के बाद यशस्विनी कौसल्या पुत्र और पौत्र छोड़कर स्वर्गलोक को

चली गईं। उसके बाद सुमित्रा और केकयी का भी स्वर्गवास हुआ। तीनों रानियाँ स्वर्ग में राजा दशरथ के साथ सुख से निवास करने लगीं। रामचन्द्र पिता और माताओं के उद्देश से प्रतिवर्ष तपस्वी ब्राह्मणों को बहुत-सा धन दान करते थे। उन्होंने पितरों और देवताओं को तृप्त करने के लिए अनेक यज्ञ किये। ११—१६।

सर्ग १००

कुछ समय के बाद केकय देश के राजा युधाजित ने रामचन्द्र के स्नेह के कारण भेंट देने के लिए दस हज़ार घोड़े, कम्बल, चित्र-वस्त्र, अनेक प्रकार के रत्न और श्रेष्ठ आभूषण भेजे। अंगिरा के पुत्र, केकय-राज्य के गुरु, महर्षि गर्ग यह सब सामान लेकर अयोध्या को आये। महर्षि गर्ग का आगमन सुनकर रामचन्द्र ने अपने भाइयों के साथ एक कोस चलकर उनका स्वागत किया। महर्षि का यथोचित सम्मान किया और मामा की भेजी हुई भेंट लेकर उनकी कुशल पूछी—भगवन्, आप साक्षात् बृहस्पति के समान वाग्मी हैं। आपका आगमन किस प्रयोजन से हुआ है, हमारे मामा ने क्या कहा है? १—८। गर्ग ने कहा—राजन्, युधाजित ने बड़े स्नेह से जो सन्देश कहा है, वह सुनो—सिन्धु नदी के किनारे पर एक बड़ा अच्छा प्रदेश है, वहाँ फल-मूल बहुत होते हैं। गन्धर्वराज शैलूष का पुत्र तीन करोड़ युद्ध-विशारद गन्धर्वों के साथ वहाँ का शासन करता है। तुम उन गन्धर्वों को परास्त करके उस देश को अपने अधिकार में कर लो। तुम्हारे सिवा और कोई इस काम को नहीं कर सकता। वह देश बड़ा सुन्दर है। उचित समझो तो यह काम करो। हम तुम्हारा अहित नहीं चाहते। महर्षि गर्ग के मुँह से मामा का यह सन्देश सुनकर, रामचन्द्र ने भरत की ओर देखकर, हाथ जोड़कर महर्षि से कहा—भगवन्, तक्ष और पुष्कल भरत के दो पुत्र हैं। मामा युधाजित की रक्षा में ये दोनों भाई

धर्म के अनुसार उस देश का राज्य करेंगे। भरत बहुत बड़ी सेना लेकर इन कुमारों के साथ जायँगे और गन्धर्वों का नाश करेंगे। वहाँ दो नगर बसावेंगे, और दोनों पुत्रों को वहाँ का राज्य सौंपकर फिर अयोध्या को लौट आवेंगे। ६—१८। उसके बाद भरत महर्षि को आगे करके बहुत बड़ी सेना लेकर पुत्रों के साथ चले। देवताओं से भी दुर्धर्ष, देव-सेना के समान भरत की सेना उनके पीछे उसी प्रकार चली, जैसे इन्द्र के पीछे देव-सेना चले। गन्धर्वों के रुधिर के प्यासे मांसाहारी राक्षस भी भरत के पीछे चले। सिंह, बाघ और गिद्ध आदि मांसभक्षी जीव, गन्धर्वों का मांस खाने के लिए सेना के आगे-आगे चले। निर्विघ्न डेढ़ मास यात्रा करके सेना केकय राज्य में पहुँची। १९—२५।

सर्ग १०१

केकयराज युधाजित ने जब सुना कि भरत बहुत बड़ी सेना लेकर महर्षि के साथ आये हैं, तो वे बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने अपनी सेना तैयार की और भरत के साथ जाकर गन्धर्व-नगर को घेर लिया। महाबलवान् गन्धर्व भी युद्ध के लिए निकल पड़े और गरजने लगे। युद्ध छिड़ गया, सात दिन तक तुमुल युद्ध हुआ, किन्तु किसी की जय-पराजय न हुई। रक्त की नदी बह चली। शक्ति, खड्ग और धनुष आदि अस्त्रों तथा मृत-शरीरों के ढेर लग गये। तब महाबलवान् भरत ने बड़े क्रोधसे गन्धर्वों के ऊपर संवर्त नाम का कालास्त्र चलाया। तीन करोड़ गन्धर्व क्षण भर में उस कालपाश में बँधकर निहत हो गये। १—८। ऐसा अद्‌भुत युद्ध कभी देवताओं ने भी न देखा था। उसके बाद भरत ने दोनों पुत्रों के लिए दो नगर बसाये। तक्षशिला में तक्ष का और पुष्कलावत में पुष्कल का राज्याभिषेक किया। वे दोनों नगर धन-धान्य से पूर्ण और रमणीय वनों से शोभित थे। समृद्धि में मानों एक-दूसरे की स्पर्धा करते थे। दोनों नगरों में व्यवसाय

सच्चाई से होता था, बड़े सुन्दर बाज़ार थे, बहुत उत्तम सतमहले घर थे, और देव-मन्दिर भी बहुत थे। ताल, तमाल, तिलक और बकुल आदि वृक्षों से शोभित थे। भरत उन नगरों को बसाकर, दोनों पुत्रों को वहाँ का राज्य सौंपकर पाँच वर्ष तक वहाँ रहे। उसके बाद अयोध्या को लौट आये, और इन्द्र जैसे ब्रह्मा को प्रणाम करें वैसे ही साक्षात् धर्म के समान बैठे हुए रामचन्द्र को प्रणाम करके, आद्योपान्त गंधर्वों के वध का वृत्तान्त और दो नगर बसाकर वहाँ पुत्रों का राज्याभिषेक उनसे निवेदन किया। ६–१८।

सर्ग १०२

यह सुनकर रामचन्द्र को बड़ा हर्ष हुआ। फिर उन्होंने लक्ष्मण से कहा—तुम्हारे पुत्र अंगद और चन्द्रकेतु को भी हम कहीं का राज्य देना चाहते हैं। बताओ, कौन ऐसे देश हैं, जहाँ इन कुमारों का अभिषेक किया जाय। देश ऐसे हों, जहाँ इनका राज्याभिषेक करने से किसी राजा को क्लेश न हो; हमारे आश्रित रहनेवालों में से किसी को कष्ट न हो; हम लोगों को किसी का अपराधी न होना पड़े; देश रमणीय और विस्तृत भी हों। भरत ने कहा—कारुपथ देश बड़ा रमणीय है। वहाँ का जल-वायु भी बहुत अच्छा है। कुमार अंगद का वहाँ राज्याभिषेक कीजिए और चन्द्रकेतु को चन्द्रकान्त देश का राज्य दीजिए। रामचन्द्र ने भरत की बात स्वीकार की। कारुपथ देश को अपने अधिकार में कर लिया। वहाँ अंगद का राज्याभिषेक हुआ और उनके नाम से एक नगर भी बसाया गया। महाबली चन्द्रकेतु के लिए मल्लभूमि में चन्द्रकान्ता नाम की एक नगरी अमरावती के समान बसाई गई। रामचन्द्र भाइयों के साथ वहाँ गये। उन्होंने युद्ध में उन देशों को जीतकर अपने अधिकार में करके लक्ष्मण के पुत्रों का अभिषेक किया। १–१०। अंगद का नगर पश्चिम में था और

चन्द्रकेतु का उत्तर में। लक्ष्मण अंगद की सहायता के लिए और भरत चन्द्रकेतु की सहायता के लिए कुछ दिनों तक उनकी राजधानी में ठहरे रहे। लक्ष्मण एक वर्ष अंगद के नगर में रहकर अयोध्या को लौट आये और भरत भी एक वर्ष से कुछ अधिक चन्द्रकेतु के नगर में रहकर रामचन्द्र के पास लौट आये। इस प्रकार प्रजा का पालन और धर्म-कर्म करते हुए उनकी दस हज़ार वर्ष की आयु बीत गई। ११—१७।

सर्ग १०३

कुछ समय के बाद काल तपस्वी का रूप धारण करके राजद्वार पर आया। उसने लक्ष्मण से कहा—हम महर्षि अतिबल के दूत हैं, एक विशेष काम के लिए रामचन्द्र से मिलने आये हैं। लक्ष्मण शीघ्रता से जाकर रामचन्द्र से बोले—राजन्, धर्म के बल से दोनों लोकों में आपकी विजय हो। अपने तपोबल से सूर्य के समान तेजस्वी एक मुनि-दूत आपसे मिलने के लिए आया है। रामचन्द्र ने कहा—उसे यहाँ बुला लाओ। रामचन्द्र की आज्ञा से लक्ष्मण उसे बुला लाये। वह बड़ा तेजस्वी था, अपने तेज से मानों सबको भस्म किये देता था। १—६। वह रामचन्द्र के पास आकर मधुर वचन बोला—राजन्, आपकी वृद्धि हो। रामचन्द्र ने अर्घ्यादि देकर उसका यथोचित सत्कार किया; कुशल पूछकर सुवर्णमय आसन पर बैठाया। फिर उससे पूछा—तुम सुख से आये हो न? मार्ग में कोई कष्ट तो नहीं हुआ? अब उनका सन्देश कहो, जिन्होंने तुमको भेजा है? ७—१०। दूत ने कहा—महाराज, यदि आप अपना हित चाहें, तो ऐसे निर्जन स्थान में उस सन्देश को सुनें, जहाँ हमारे और आपके सिवा तीसरा कोई न हो। क्योंकि यदि तीसरा कोई सुनेगा अथवा बातें करते हुए हम लोगों को देखेगा तो वह वध करने के योग्य होगा। महर्षि ने ऐसी ही आज्ञा हमें दी है। इस बात को आप स्वीकार करें,

तो हम महर्षि का सन्देश कहें। रामचन्द्र ने उसकी बात स्वीकार की और लक्ष्मण से कहा कि तुम द्वारपाल के स्थान पर स्वयं द्वार की रक्षा करो। क्योंकि इस ऋषि के साथ निर्जन स्थान में हमारी बातचीत होगी। उस समय यदि कोई बातें सुनेगा अथवा हम लोगों को देखेगा तो उसे प्राणदंड दिया जायगा। रामचन्द्र ने यह कहकर लक्ष्मण को द्वार पर नियुक्त किया और मुनि-दूत से कहा—अब तुम कहो, जिसने तुमको भेजा है, उसका सन्देश कहो। अपना अभीष्ट और जो सन्देश लाये हो, निःशंक होकर कहो। तुम्हारी बातें सुनने के लिए बड़ी उत्सुकता हो रही है। ११–१६।

सर्ग १०४

दूत ने कहा—महाराज, जिस निमित्त हम आये हैं, वह सुनिए—हमको पितामह ब्रह्मा ने भेजा है। हम आपकी पूर्व अवस्था में आपकी इच्छामात्र से उत्पन्न हुए थे। हमारा नाम काल है, हम सबका संहार करते हैं। ब्रह्मा ने कहा है कि आपने संसार की रक्षा के लिए अवतार लिया है। आपका समय पूरा हो गया। आपने पूर्व समय में सब लोकों का संहार करके समुद्र में शयन किया था, उसी स्थान पर आपने हमको उत्पन्न किया। माया के बल से आपने अनन्त नाग को उत्पन्न किया था, उसी के ऊपर आप सो गये थे। फिर आपने दो जीव और उत्पन्न किये, वे बड़े बलवान् थे, उनका नाम मधु और कैटभ था। उन्हीं की अस्थि और मेद से यह मेदिनी (पृथिवी) बनी है। आपकी नाभि से सूर्य के समान प्रकाशमान कमल फूला था, उसी पद्म से हमको उत्पन्न करके आपने प्रजा की सृष्टि का काम हमको सौंपा। आप जगत्पति हैं, हमने आप ही के प्रभाव से प्रजापति होकर प्रजा की सृष्टि की है। प्रजा की सृष्टि करके उसका पालन करने के लिए हमने आपसे प्रार्थना की। तब आपने प्रजा का पालन करने का भार अपने ऊपर लिया। पालन

करने की शक्ति आप ही में है। सब प्राणियों की रक्षा के लिए आपने विष्णुत्व प्राप्त किया। अदिति के गर्भ से आपने जन्म लिया। इन्द्र का बल बढ़ानेवाले उपेन्द्र आप ही हैं। कोई भी कठिन काम आ पड़ता है, तो आप ही देवताओं की सहायता करते हैं। १–१०। प्रजा रावण से पीड़ित थी, उसी दुष्ट का वध करने के लिए आपने मनुष्य का रूप धारण करना स्वीकार किया था। आपने दशरथ के यहाँ अवतार लिया। ग्यारह हज़ार वर्ष पृथिवी में रहने का आपने निश्चय किया था। वह समय पूरा हो गया, इसलिए हम सर्वसंहारक काल को आपके पास भेजते हैं। यदि आप पृथिवी पर रहकर और कुछ दिन प्रजा का पालन करना चाहते हों, तो रहिए। आपका कल्याण हो। राजन्, पितामह ब्रह्मा ने यह सन्देश आपसे कहा है और यह भी कहा है कि यदि देव-लोक का पालन करने की इच्छा हो तो चले आइए। देवता आपको पाकर निश्चिन्त और सनाथ हो जायँगे। ब्रह्मा का यह सन्देश सुनकर रामचन्द्र हँसकर बोले—हे काल, ब्रह्मा के इस सन्देश से और तुम्हारे आगमन से हम बड़े प्रसन्न हुए। त्रैलोक्य का कार्य करने के लिए हमारा अवतार होता है। तुम्हारा कल्याण हो। हम जहाँ से आये हैं, वहीं को चले जायँगे। देवताओं के कार्य के लिए हम ब्रह्मा की आज्ञा सदा मानते हैं। तुम्हारी बातों से हम सहमत हैं। इस विषय में अब कुछ विचार करना नहीं है। ११–१६।

सर्ग १०५

रामचन्द्र काल से जब बातें कर रहे थे, उसी समय दुर्वासा मुनि रामचन्द्र से मिलने के लिए द्वार पर आये और लक्ष्मण से बोले—हमारा कुछ काम है, तुम शीघ्र रामचन्द्र का दर्शन कराओ। लक्ष्मण महर्षि दुर्वासा को प्रणाम करके बोले—भगवन्, आपका क्या काम है, जो आपका प्रयोजन हो, हमें आज्ञा दीजिए? इस समय रामचन्द्र

किसी काम में व्यग्र हैं, आप थोड़ी देर ठहर जाइए। लक्ष्मण के ये वचन सुनते ही दुर्वासा क्रुद्ध हो गये। लाल-लाल आँखें करके लक्ष्मण की ओर बड़े क्रोध से देखकर बोले—तुम अभी जाकर रामचन्द्र से हमारा आगमन कहो, नहीं तो तुम्हारा राज्य, नगर और भाइयों सहित परिवार का विनाश कर देंगे। हम अपने क्रोध को रोक नहीं सकते। दुर्वासा के ये भयानक वचन सुनकर लक्ष्मण ने सोचा, सबका विनाश होने की अपेक्षा हमारी ही मृत्यु होना अच्छा है। १–९। यह निश्चित करके रामचन्द्र के पास जाकर बोले—राजन्, महर्षि दुर्वासा आये हैं। रामचन्द्र ने काल को बिदा कर दिया और बाहर आकर दुर्वासा को देखा। उनको प्रणाम करके हाथ जोड़कर पूछा—भगवन्, आपका क्या काम है? दुर्वासा ने कहा—हमने हज़ार वर्ष का अनशन व्रत किया था, आज वह व्रत समाप्त हुआ, इस समय जो कुछ तुम्हारे यहाँ तैयार हो, वह हमको भोजन कराओ। दुर्वासा की आज्ञा से रामचन्द्र प्रसन्न हुए और जो उस समय तैयार था; वह भोजन उन्हें दिया। दुर्वासा ने अमृत के समान सुस्वादु भोजन किया, और रामचन्द्र की बार-बार प्रशंसा करके अपने आश्रम को चले गये। दुर्वासा के चले जाने पर रामचन्द्र काल की बातों का स्मरण करके बड़े दुःखित हुए। उनके मुँह से कोई वाक्य न निकला। बड़े दुःख से सिर झुकाकर बैठ गये। काल की बातों से उनको निश्चय हो गया कि अब भाइयों सहित उनकी मृत्यु का समय आ गया है। वे सोचने लगे—अब यहाँ हमारा कुछ नहीं है, यही सोचते हुए चुप बैठे रहे। १०–१८।

सर्ग १०६

महाराज रामचन्द्र बड़े दुःख से सिर झुकाये बैठे थे; राहु-ग्रसित चन्द्रमा के समान उदास हो गये थे। लक्ष्मण उनके मन की बात

जानकर प्रसन्न मन से बोले—आप हमारे लिए शोक न कीजिए। काल की गति ऐसी ही है। आप धैर्य के साथ हमको त्यागकर अपनी प्रतिज्ञा का पालन कीजिए। जो प्रतिज्ञा का पालन नहीं करता उसको नरक होता है। यदि आपको हमसे प्रेम है, तो हमारे ऊपर कृपा करके अपनी प्रतिज्ञा पूरी कीजिए। हमको धैर्य के साथ त्यागकर अपने धर्म की रक्षा कीजिए। यह सुनकर रामचन्द्र का मन चंचल हो गया; सब इन्द्रियाँ व्यथित हो गईं। उन्होंने पुरोहित वसिष्ठ और मन्त्रियों को बुलाकर काल के साथ की हुई प्रतिज्ञा और दुर्वासा के आगमन का वृत्तान्त कहा। यह सुनकर वसिष्ठ मुनि बोले—राजन्, लक्ष्मण का वियोग और तुम्हारी मृत्यु यह सब हमने योग के बल से जान लिया है। काल बड़ा प्रबल है, अब तुम लक्ष्मण का परित्याग करो; क्योंकि प्रतिज्ञा का भंग होना बड़ा अधर्म है। १—९। धर्म का नाश होने से चराचर जगत् का विनाश हो जायगा। अतएव तुम जगत् की रक्षा के लिए लक्ष्मण का परित्याग करो। वसिष्ठ के ये वचन सुनकर रामचन्द्र ने सबके सामने लक्ष्मण से कहा—हे लक्ष्मण, आज हम तुम्हारा परित्याग करते हैं। धर्म का त्यागना बड़ा दोष है। सज्जनों का त्याग और वध समान ही माना जाता है, बल्कि वध के स्थान में सज्जन पुरुष को त्याग देना ही उचित है। तब लक्ष्मण अपने घर को न जाकर रोते हुए बाहर चले गये। उन्होंने सरयू के तट पर जाकर आचमन करके सब इन्द्रियों को रोक लिया। श्वास को भी रोक लिया; श्वास का आना-जाना बन्द कर दिया। अप्सराओं के साथ इन्द्र आदि देवता और महर्षिगण देख रहे थे। जब लक्ष्मण ने श्वास बन्द कर लिया तो आकाश से फूलों की वर्षा होने लगी। इन्द्र अदृश्यभाव से उनको सशरीर स्वर्ग को ले गये। लक्ष्मण विष्णु का चतुर्थ अंश थे। देवता उनको पाकर बड़े प्रसन्न हुए और उनकी पूजा करने लगे। १०—१८।

सर्ग १०७

लक्ष्मण को त्यागकर रामचन्द्र को बड़ा दुःख और शोक हुआ। उन्होंने कुल-पुरोहित वसिष्ठ, मन्त्रियों और पुर-वासियों को बुलाकर उनसे कहा—हम आज धर्मवत्सल भरत को राज्य का भार सौंपकर वन को चले जायँगे। राज्याभिषेक की सब सामग्री एकत्र कीजिए, देर करने का काम नहीं है। आज ही भरत का राज्याभिषेक करके हम भी वहीं चले जायँगे, जहाँ लक्ष्मण गये हैं। रामचन्द्र के ये वचन सुनकर मन्त्रियों और पुरोहितों को बड़ा शोक हुआ। वे लोग मृतक के समान हो गये। भरत को मूर्च्छा आ गई, उन्होंने राज्य करने की अनिच्छा प्रकट करते हुए कहा—राजन्, मैं सत्य का शपथ करके कहता हूँ, आपके विना मैं राज्य नहीं करूँगा। कुश और लव का अभिषेक कीजिए। दक्षिण-कोशल का राज्य कुश को और उत्तर-कोशल का लव को दीजिए। दूत बड़ी शीघ्रता से शत्रुघ्न के पास जाकर हम लोगों के वनप्रवेश का हाल कहें। १—८। भरत के यह कहने पर और पुर-वासियों को दुःखित देखकर वसिष्ठ मुनि बोले—हे राम! देखो, शोक के मारे सब प्रजा पृथिवी पर पड़ी है। इनलोगों की इच्छा के अनुसार काम करना तुमको उचित है। रामचन्द्र ने वसिष्ठ की आज्ञा से पुर-वासियों को उठाकर कहा—तुम लोग क्या चाहते हो, बताओ हम क्या करें? पुर-वासियों ने कहा—जहाँ आप जायँगे, वहीं आपके पीछे हम लोग भी चलेंगे। यदि आप हम लोगों के ऊपर स्नेह करते हैं, तो जिस मार्ग से आप जा रहे हैं, उसी मार्ग से स्त्री-पुत्र सहित हम लोगों को भी चलने की आज्ञा दीजिए। ९—१३। यदि आप हम लोगों का परित्याग न कर रहे हों तो तपोवन, दुर्ग, नदी अथवा समुद्र, जहाँ कहीं आपकी इच्छा हो, हम लोगों को भी ले चलिए। राजन्, यही हम लोग चाहते हैं; यही हम आपसे प्रार्थना करते हैं। आपके साथ चलने की ही हम लोगों की इच्छा है। नगर-

निवासियों की यह दृढ़ भक्ति देखकर रामचन्द्र ने कहा—बहुत अच्छा, ऐसा ही होगा। उसके बाद उन्होंने दक्षिण कोशल में कुश का और उत्तर कोशल में लव का अभिषेक किया। दोनों पुत्रों को गोद में बिठाकर हज़ारों रथ, दस-दस हज़ार हाथी और दस-दस हज़ार घोड़े दिये। बहुत सा धन और रत्न देकर हृष्ट-पुष्ट मनुष्यों से बसे हुए नगरों का राज्य उनको सौंपा। उसके बाद शत्रुघ्न के पास दूत भेजा। १४—२०।

सर्ग १०८

रामचन्द्र की आज्ञा से दूत मधुरापुरी को गये। उन लोगों ने मार्ग में कहीं विश्राम नहीं किया। तीन दिन और तीन रात बराबर चलकर मधुरा में पहुँचे और शत्रुघ्न से सब वृत्तान्त कहा। लक्ष्मण का परित्याग, रामचन्द्र की स्वर्गारोहण की प्रतिज्ञा, कुश और लव का राज्याभिषेक, पुर-वासियों की भी रामचन्द्र के साथ जाने की तैयारियाँ, यह सब हाल उनसे कहा। यह भी बताया कि महाराज रामचन्द्र और भरत ने विन्ध्याचल के समीप कुश के लिए कुशावती और लव के लिए श्रावस्ती नगरी बसाई है। अयोध्या के सब लोग रामचन्द्र के साथ चले जायँगे। अयोध्या निर्जन हो जायगी। रामचन्द्र और भरत के साथ राज-परिवार के सब लोग स्वर्गारोहण करेंगे। आप भी शीघ्र चलिए। यह कहकर दूत चुप हो गये। दूतों के मुँह से अपने कुल का विनाश सुनकर शत्रुघ्न ने पुरोहित काञ्चन और नगर-निवासियों को बुलाकर यह हाल कहा। १—८। उसके बाद यह भी कहा कि भाइयों के साथ हमारा भी मृत्युकाल समीप है। उनके सुबाहु और शत्रुघाती दो पुत्र थे। सुबाहु को मधुरा और शत्रुघाती को वैदिश नगर का राज्य देकर सेना और धन-रत्न का भी विभाग करके दोनों पुत्रों को दे दिया। फिर रथ पर सवार होकर अयोध्या को चले। यहाँ आकर देखा, रामचन्द्र रेशमी वस्त्र पहने मुनियों के साथ प्रदीप्त अग्नि के समान बैठे हैं। शत्रुघ्न

ने हाथ जोड़कर प्रणाम किया और धर्म के अनुसार कहा—राजन्, हमने दोनों पुत्रों को राज्य देकर आपके साथ चलने का निश्चय किया है; इसके विरुद्ध कोई आज्ञा न दीजिएगा। क्योंकि हम यह नहीं चाहते कि आपकी आज्ञा का उल्लंघन करना पड़े। ६—१५। शत्रुघ्न का यह दृढ़ निश्चय देखकर रामचन्द्र ने कहा—अच्छी बात है, तुम भी चलो। उसी समय कामरूपी वानर, रीछ और राक्षस भी रामचन्द्र के स्वर्गारोहण की खबर पाकर उनको देखने के लिए सुग्रीव के साथ आये। उन लोगों ने भी कहा—राजन्, हम लोग भी आपके साथ चलने के लिए आये हैं। यदि आप हम लोगों को छोड़कर चले गये तो हम लोगों के ऊपर मानों यम-दण्ड का प्रहार किया। सुग्रीव रामचन्द्र को प्रणाम करके बोले—राजन्, हमने अंगद का राज्याभिषेक कर दिया है। आपके साथ चलने का निश्चय करके आये हैं। रामचन्द्र ने उन लोगों की भी बात स्वीकार कर ली। फिर वे राक्षसराज विभीषण से बोले—हे मित्र, जब तक संसार में प्राणी रहें, तब तक तुम शरीर धारण किये रहो और लंका में निवास करो। जब तक सूर्य, चन्द्रमा और पृथिवी रहे, जब तक हमारी कथा संसार में रहे, तब तक तुम राज्य करो। १६—२६। विभीषण ने रामचन्द्र की आज्ञा स्वीकार की। फिर उन्होंने हनुमान् से कहा—हे कपिराज, तुम बहुत दिनों तक संसार में रहोगे, यह निश्चित है। इस अपनी प्रतिज्ञा को वृथा न करना। जब तक संसार में हमारी कथा का प्रचार रहे, तब तक हमारी आज्ञा से तुम प्रसन्नता से यहाँ रहो। हनुमान् बड़े हर्ष से बोले—जब तक आपके चरित्र का प्रचार रहेगा, तब तक मैं आपकी आज्ञा से पृथिवी पर रहूँगा। फिर रामचन्द्र ने जाम्बवान्, मैन्द और द्विविद से कहा—तुम लोग कलियुग तक जीवित रहो। फिर अन्य वानरों और रीछों से बोले—तुम लोग हमारे साथ चलो। २७—३५।

सर्ग १०९

जब रात बीत गई, प्रातःकाल हुआ, तो महायशस्वी रामचन्द्र ने वसिष्ठ मुनि से कहा—भगवन्, ब्राह्मणों के साथ दीप्यमान अग्निहोत्र और वाजपेय छत्र आगे-आगे चले। महर्षि वसिष्ठ ने विधिपूर्वक महाप्रस्थान की सब क्रियाएँ कीं। रामचन्द्र रेशमी वस्त्र धारण करके हाथों में कुश लेकर वेद के मन्त्र पढ़ते हुए सरयू के तट पर गये। वेद-मन्त्र के सिवा और कुछ मुँह से न बोले। पैदल दीप्तिमान् सूर्य के समान घर से निकले। उनकी दाहिनी ओर लक्ष्मी, बाईं ओर पृथिवी और सम्मुख संहार करनेवाले अनेक प्रकार के बाण, धनुष और खड्ग, और सब आयुध मनुष्य का रूप धारण करके चले।१—७। ब्राह्मण का रूप धारण करके चारों वेद, सर्वरक्षिणी गायत्री, ओंकार और वषट्कार भी रामचन्द्र के पीछे चले। बालक, बूढ़े, दासी और दास, अन्तःपुर में रहनेवाली स्त्रियाँ, सपत्नीक भरत और शत्रुघ्न अग्निहोत्र सहित रामचन्द्र के पीछे चले। मन्त्री और भृत्य लोग भी पुत्र, पशु और बान्धवों सहित प्रसन्न-मन से रामचन्द्र के पीछे चले। ८—१३। उनके पीछे सब प्रजा चली। नगर के पशु-पक्षी भी चले। नगर के स्त्री-पुरुष स्नान करके बड़े हर्ष से कोलाहल करते हुए रामचन्द्र के पीछे चले। किसी को दुःख और शोक नहीं था। रामचन्द्र के साथ जाने के लिए सबको उत्साह था और सब प्रसन्न थे। कोई लज्जित और दुःखित नहीं था। बड़ा ही अद्भुत दृश्य था, रामचन्द्र को देखने के लिए देश और राज्य से जो लोग आये थे, वह भी यह दृश्य देखकर उनके साथ चल दिये। वानर, रीछ, राक्षस और पुरवासी बड़ी भक्ति से रामचन्द्र के साथ चले। अयोध्या के पशु-पक्षी और स्थावर-जंगम सब प्राणी, और वे जीव भी जिनके शरीर अत्यन्त सूक्ष्म हैं, जिन्हें मनुष्य देख नहीं सकते सब रामचन्द्र के साथ चले। १४—२२।

सर्ग ११०

इस प्रकार दो कोस चलकर पश्चिम-वाहिनी पवित्र सरयू के तट पर पहुँचे। सरयू में भँवर और तरंगें उठ रही थीं। रामचन्द्र शरीर त्यागने के लिए वहाँ गये। उसी समय लोक-पितामह ब्रह्मा देवताओं के साथ करोड़ों विमान लेकर वहाँ आये। आकाश दिव्य तेज से प्रकाशित तो था ही, किन्तु पवित्र देवताओं के पवित्र तेज से और भी तेजोमय हो गया। सुगन्धित और सुख-स्पर्श वायु चलने लगी। देवता फूलों की वर्षा करने लगे। नगाड़े भी बजने लगे। महात्मा रामचन्द्र ने सरयू नदी में प्रवेश किया। १—७। उसी समय पितामह ब्रह्मा आकाश से बोले—हे विष्णो, स्वर्ग को आओ। तुम हम लोगों के भाग्य से यहाँ आते हो, तुम्हारा कल्याण हो। देव-तुल्य भाइयों के साथ अपने शरीर में प्रवेश करो। वैष्णवी मूर्ति में अथवा आकाश में जिस शरीर में तुम्हारी इच्छा हो, प्रवेश करो। तुम सब लोकों की गति हो। तुम्हारे अचिन्त्य, अद्भुत, अजर और अमर रूप को कोई नहीं जान सकता। केवल तुम्हारी माया तुम्हारे रूप को जानती है, उसके सिवा और कोई नहीं जानता। हे महातेज, जिस शरीर में प्रवेश करने की इच्छा हो उस शरीर में प्रवेश करो। ब्रह्मा के यह वचन सुनकर भाइयों के साथ रामचन्द्र ने सशरीर विष्णु के तेज में प्रवेश किया। देवताओं ने विष्णुमय रामचन्द्र की पूजा की; साध्य, मरुत, इन्द्र आदि देवता, गन्धर्व, अप्सराएँ, गरुड़, नाग, दैत्य, दानव, राक्षस सबने उनकी पूजा की। देवताओं ने बड़ी प्रशंसा करके कहा—हे विष्णो, स्वर्ग के सब लोक तुम्हारे आगमन से पूर्ण-मनोरथ, प्रसन्न, सन्तुष्ट और निष्पाप हो गये हैं। ८—१५। उसके बाद महातेज विष्णु ने ब्रह्मा से कहा—भगवन्, हमारे साथ आये हुए इस जन-समूह को यथोचित लोक दीजिए। हमारे स्नेह से ये लोग साथ आये हैं। हमारे भक्त हैं, हमारे ही लिए शरीर त्याग दिये हैं। ब्रह्मा ने कहा—तुम्हारे साथ

आये हुए ये सब लोग सन्तानक नामक लोक को जायँ। तिर्यक् योनि में उत्पन्न प्राणी भी यदि आपका ध्यान करते-करते प्राण छोड़ते हैं, तो उनको भी सन्तानक लोक प्राप्त होता है। ये लोग तो तुम्हारे भक्त हैं, शरीर त्यागकर तुम्हारे साथ आये हैं, इनको सन्तानक लोक प्राप्त करने में सन्देह ही क्या है। सन्तानक लोक ब्रह्मलोक के समीप है। वानर और रीछ अपने-अपने देवरूप में प्रवेश करें। जिस देवता के रूप से निकले थे, उसी देवता के रूप में प्रवेश करें। सुग्रीव सूर्यमंडल में प्रवेश करें। १६—२१। ब्रह्मा के यह कहने पर सब लोगों की आँखों से आनन्द के आँसू बहने लगे। सरयू के गोप्रतार घाट पर सब लोग खड़े थे, बड़े हर्ष से सरयू के जल में पैठे और शरीर त्यागकर विमानों में बैठ गये। पशु-पक्षी आदि जितने जीव आये थे, वे सब भी सरयू में शरीर त्यागकर तेजोमय शरीर पाकर स्वर्ग को चले गये। स्थावर जंगम सब प्राणियों ने सरयू के जल में शरीर त्याग दिया और देव-लोक की यात्रा की। वानरों और राक्षसों ने भी सरयू में शरीर त्याग-कर स्वर्गलोक प्राप्त किया। वहाँ देवताओं के समान दिव्य देह प्राप्त की। भगवान् ब्रह्मा सब लोगों को इस प्रकार स्वर्गलोक देकर देवताओं के साथ बड़े हर्ष से चले गये। २२—२८।

सर्ग १११

यहीं तक वाल्मीकि मुनि का बनाया हुआ उत्तरकाण्ड सहित रामायण का आख्यान है। ब्रह्मा ने भी इसकी प्रशंसा की है। यह सब आख्यानों में श्रेष्ठ है। जो भगवान् विष्णु स्थावर-जंगमरूपी चराचर जगत् में व्याप्त हैं, जो मनुष्य का रूप धारण करके और देवताओं का कार्य करके स्वर्गलोक को चले गये हैं, उन्हीं के चरित्र का इस महाकाव्य में वर्णन है। देवता, गन्धर्व, सिद्ध और महर्षिगण देवलोक में बड़े हर्ष से इस रामायण काव्य को सुना करते हैं। आयु

बढ़ानेवाले, सौभाग्य देनेवाले, पाप का नाश करनेवाले, वेदों के समान इस रामायण महाकाव्य को पंडित लोग श्राद्ध में सुनाते हैं। इस काव्य के सुनने से निर्धन को धन मिलता है और जिनके पुत्र नहीं है, उनके पुत्र उत्पन्न होता है। जो इसके एक श्लोक का भी पाठ करता है, उसके सब पाप नष्ट हो जाते हैं। जो प्रतिदिन अनेक प्रकार के पाप करता रहता है, वह इसका एक श्लोक पाठ करने से हीं सब पापों से छूट जाता है। जो इस रामायण का पाठ करता हो, उसे वस्त्र, गौ और सुवर्ण देना चाहिए। रामायण का पाठ करनेवाले को प्रसन्न करने से सब देवता प्रसन्न होते हैं। जो मनुष्य आयु बढ़ानेवाले इस महाकाव्य का पाठ करता है, वह पुत्र-पौत्रों सहित दोनों लोकों में पूजित होता है। इस ग्रन्थ का प्रातःकाल, मध्याह्न, अपराह्न, और सायंकाल जिस समय चाहे पाठ करे। इसका पाठ करने से मनुष्य कभी विपत्ति में नहीं पड़ता। अयोध्यापुरी बहुत वर्षों तक उंजाड़ पड़ी रही, फिर एक राजा ऋषभ नामक हुए, उन्होंने फिर अयोध्या को बसाया। इस उत्तरकाण्ड सहित रामायण को प्रचेता के पुत्र वाल्मीकि ने बनाया है और ब्रह्मा ने इसकी प्रशंसा की है। १।

समाप्त



